जयधवलासहितं

कसायपाहुडं

भाग १५

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ

भारतवर्षीय दि० जैन संघ चौरासी मथुरा द्वारा प्रकाशित

श्रीयतिवृषभाचार्यरचितचूर्णिसूत्रसमन्वित्

श्रीभगवद्गुणभद्राचार्यप्रणीतम्

कसाय पाहुडं

(जयधवल, महाधवल)

तयोश्च

श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका

[पञ्चमदशमाधिकारे चारित्रमोहक्षपणानुयोगद्वारम्]

भाग–15

सम्पादकौ :

विद्वतरत्न
स्व०श्री पं० फूलचन्द्रः
सिद्धान्तशास्त्री, सिद्धान्ताचार्य, वाराणसी
सम्पादक महाबन्ध, सह सम्पादक
धवला आदि

विद्वतरत्न
स्व० श्री पं० कैलाशचन्द्रः
सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्ताचार्य
सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ,
प्रधानाचार्य स्याद्वाद महाविद्यालय
वाराणसी

द्वितीय संस्करण

प्रकाशक

भारतवर्षीय दि० जैन संघ, चौरासी–मथुरा (उत्तरप्रदेश)

प्रकाशक:

भारतवर्षीय दि० जैन संघ

चौरासी–मथुरा (उत्तरप्रदेश)

कार्यालय दूरभाष :

0565–2420711

प्रथम संस्करण : 1984

(वीर निर्वाण) : 2468

द्वितीय संस्करण : 2004

(वीर निर्वाण) : 2530

मूल्य संशोधित मूल्य 250/- रुपये

मुद्रक :

नरूला ऑफसेट प्रिन्टर्स

शाहदरा, दिल्ली

जिनवाणी के प्राचीन शास्त्र जयधवला जी के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग दीजिए

हमारे महान पुण्योदय से मूढ़विद्री (दक्षिण) के शास्त्र भण्डार से बड़ी कठिनाई से प्राप्त द्वादशांग श्रुत के मूल अंश 'कषाय पाहुड' की आचार्य वीरसेनकृत विशाल टीका जय धवला के लगभग १६ भागों में जैन संघ मथुरा द्वारा प्रकाशित किया गया था जिसके धीरे-धीरे सभी भाग समाप्त हो गये। गत् ३ वर्ष पूर्व १२ भागों को पुनः प्रकाशित कराया और अब शेष ४ भागों १, १४, १५, १६ को प्रकाशन हेतु प्रेस को भेज दिये हैं। भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ मथुरा ने अपने अनेक महत्वपूर्ण सेवा कार्यों में जैन धर्म आदि सर्वोपयोगी ग्रन्थों के साथ जयधवला के सम्पूर्ण लगभग १६ भागों में से कुछ बचे हुए भागों के एवं कुछ पूर्ण प्रकाशित भागों के पुनः प्रकाशन का भार सम्हाले रखा है। संघ की इस जिम्मेदारी को पूर्ण करने हेतु उदार दानदाताओं के आर्थिक सहयोग की महती आवश्यकता है।

अग्रायणी पूर्व के मूल अंश षटखंडागम् की धवल महाधवल टीकाओं का दो बार प्रकाशन हो चुका है। यह षटखंडागम् आचार्य धरसैन की रचना है जिसकी टीका आचार्य वीरसैन ने की है। आचार्य धरसैन से कुछ पूर्ववर्ती उक्त कषाय पाहुड के ज्ञात आचार्य गुणधर थे। इसी के आधार पर आचार्य कुन्दकुन्द ने समयसार आदि दृव्य दृष्टि प्रधान ग्रन्थों की रचना की है। संघ के संस्थापक समाज के वरिष्ठ विद्वान स्व० पं० राजेन्द्र कुमार जी सिद्धान्ताचार्य पं० कैलाशचंद जी, पं० फूलचंद जी ने ही उक्त जयधवला टीका का हिन्दी अनुवाद किया है। संघ के पूर्व प्रधान मंत्री प्रो० खुशालचंद जी गोरा वाला, पं० जगन्मोहन लाल जी शास्त्री रहे हैं। वर्तमान में अखिल भारतीय स्तर के समाजसेवी श्री ताराचंद जी प्रेमी, उक्त सभी क्रियाशील विद्वान समर्पित भाव से संघ समाज और साहित्य सेवाओं में संलग्न हैं।

अंत में जिस प्रकार समाज में पंचकल्याणकों एवं मंदिर निर्माण में उदार दानदाता अपना आर्थिक सहयोग देते हैं, उसी प्रकार उन्हें इस प्राचीन शास्त्र जयधवला जी के प्रकाशन में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान करना चाहिए।

– पं० नाथूलाल जैन शास्त्री, इन्दौर

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ

संक्षिप्त इतिहास

सन् 1933 में महामनीषी विद्वान स्व० पं० राजेन्द्र कुमार जी न्यायतीर्थ के अदम्य उत्साह और विलक्षण सूझ-बूझ ने एक नयी संस्था को जन्म दिया। नाम था शास्त्रार्थ संघ। इस संघ में स्व० लाला सिब्बामल जैन का सहयोग था। 1933 में अम्बाला में स्थापित इस संस्था के द्वारा देश के अनेक नगरों में धर्म-संरक्षण की भावना से जैन धर्म के आलोचकों से सार्वजनिक शास्त्रार्थ किये गये। उसका परिणाम यह हुआ कि आलोचकों ने जैन धर्म की आलोचना बन्द कर दी।

शास्त्रार्थ संघ को सबसे बड़ी विजय तब मिली, जब आलोचकों के प्रमुख सन्यासी स्वामी कर्मानन्द जी ने जैन धर्म को स्वीकार कर लिया और जैन धर्म की प्रमाणिकता में ''ईश्वर मीमांसा'' नाम की एक पुस्तक लिखी, जिसका प्रकाशन संघ ने किया है।

सन् 1940 के लगभग, संघ का स्थान अम्बाला की जगह मथुरा में हो गया। चौरासी स्थित भगवान् जम्बू स्वामी की निर्वाण स्थली के समीप पं० राजेन्द्र कुमार जी और उनके सहयोगियों के द्वारा भव्य-भवन का निर्माण किया गया और संघ का नाम ''शास्त्रार्थ-संघ'' के स्थान पर ''भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ'' रखा गया। अब संघ का कार्य धर्म प्रचार था।

उस समय संघ भवन में हर समय 10-12 विद्वान रहा करते थे और पूरे देश में होने वाले सामाजिक, धार्मिक उत्सवों में उन विद्वानों को आमंत्रित किया जाता था। उन्हीं दिनों संघ में एक प्रकाशन विभाग की स्थापना हुई, जिसके द्वारा अनेक समाजोपयोगी एवं धार्मिक पुस्तकों का प्रकाशन हुआ, जिनमें कैलाश चन्द्र जी शास्त्री द्वारा लिखा गया ''**जैन-धर्म**'' नाम का ग्रन्थ अब सातवें संस्करण के रूप में छप *गया है। इन्हीं के द्वारा ''**तत्वार्थ सूत्र**'' की गौरवपूर्ण हिन्दी टीका लिखी है, जिसका तीसरा संस्करण* प्रकाशित हो चुका है।

सन् 1950 के आस-पास संघ ने स्व० पंडित हीरालाल जी शास्त्री, अमरावती (महाराष्ट्र) ए.एन. उपाध्ये की प्रेरणा से ''कसायपाहुडं'' (जयधवल, महाधवल) ग्रंथराज के प्रकाशन की योजना बनायी। आर्थिक अभावों के होते हुए भी स्वर्गीय पं० फूलचन्द्र जी और पं० कैलाश चन्द्र जी शास्त्री के श्रम और सूझ-बूझ से मूल ग्रन्थ का हिन्दी में सरलीकरण किया गया। जिसे संघ ने 16 भागों में प्रकाशित कराया है।

उपरोक्त महाग्रन्थ के 12 भागों का द्वितीय संस्करण पूर्व में प्रकाशित कर चुके हैं एवं शेष चार भागों का द्वितीय संस्करण अब प्रकाशित करा रहे हैं। हमारे वर्तमान अध्यक्ष श्री स्वरूप चन्द्र जी मारसंस, आगरा का इन प्रकाशनों में हमें भरपूर सहयोग मिला है। हमारे अन्य दातारों का भी हमें आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है। आज संघ संस्थापक पं० राजेन्द्र कुमार जी तथा उनके सहयोगी पं० फूलचन्द्र जी, पं० कैलाश चन्द्र जी, पं० जगमोहन लाल जी नहीं हैं और अब संस्थानों के संचालन में वो उत्साह भी नहीं रहा, फिर भी हमारी भावना है कि संघ-भवन और उसके प्रकाशन विभाग को किसी न किसी प्रकार संचालित रखा जाये। संघ का मुख पत्र ''**जैन सन्देश**'' पिछले 6 दशक से निरन्तर प्रकाशित हो रहा है। हमारी भावना है कि समाज के उत्साहीजनों का निरन्तर सहयोग मिलता रहे और संघ भवन से यह आलोक निरन्तर प्रकाशमान होता रहे।

प्रधानमंत्री

ताराचन्द जैन 'प्रेमी'

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ

चौरासी, मथुरा

—: आभार :—

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, चौरासी, मथुरा को प्रमुख आर्ष ग्रन्थ ''कसायपाहुडं'' जयधवल महाधवल को सोलह भागों में प्रकाशित करने का गौरव प्राप्त हुआ है। इसके प्रकाशन का शुभारंभ 6 दशक पूर्व हो गया था, जिसके अन्तिम दो भाग 15 और 16 को प्रकाशित करवाने में अर्थाभाव की कमी महसूस की गई। बाद में सोलहवां भाग का प्रकाशन ब्र० श्री हीरालाल खुशालचन्द दोशी, मांडवे (सोलापुर) के आर्थिक सहयोग से किया गया। 16 भागों का वितरण क्रमशः न होने के कारण प्रथम दो और चार भाग को मथुरा में ही पुनर्प्रकाशन कराना पड़ा। जयधवला के 14 भागों का प्रकाशन अनिवार्य समझ कर श्री रतनलाल जी जैन, वन्दना पब्लिशिंग हाउस, अलवर (राज.) के सहयोग और परामर्श से इनका पुनर्प्रकाशन वर्ष 2000 में किया गया। शेष भाग 1, 14, 15 एवं 16 का पुनर्प्रकाशन अब किया जा रहा है। इनके प्रकाशन में आर्थिक योगदान के लिये हमारे निम्न दानदाताओं ने उदारतापूर्वक दान देकर इस कार्य में अपना अमूल्य सहयोग दिया है। इसके लिए संघ इन सभी सधर्मी बन्धुओं का आभार प्रकट करता है।

1. श्री बलवंत राय जैन, भिलाई (म. प्र.)
2. श्री स्वरूप चन्द जैन (मारसंस), आगरा (उ. प्र.)
3. श्री रतन लाल जैन, (वन्दना प्रकाशन) अलवर (राज.)
4. श्री ताराचन्द जैन, अलवर (राज.)
5. श्री ओमप्रकाश जैन, कोसीकलाँ (उ. प्र.)
6. श्री भोलानाथ जैन, आगरा (उ. प्र.)
7. श्री निर्मल कुमार जैन, आगरा (उ. प्र.)
8. श्री प्रदीप कुमार जैन, आगरा (उ. प्र.)
9. श्री ज्ञानचन्द जी खिन्दूका, जयपुर (राज.)
10. कान्ता बहन मनुभाई शाह, सोजीत्रा (गुजरात)
11. श्री मनुभाई छगन लाल शाह, सोजीत्रा (गुजरात)

अब भाग 1, 14, 15 एवं 16 के पुनः प्रकाशन में जैन संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री स्वरुप चन्द जी जैन, मारसंस आगरा के समर्पित सहयोग से निम्न दानदातारों से आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ। इसके लिए संघ परिवार इन सभी दानदातारों का आभार व्यक्त करता है।

62,000/- श्री स्वरूप चन्द जी जैन (मारसन्स), आगरा
62,000/- श्री भोलानाथ जी जैन, आगरा
32,000/- श्री प्रदीप कुमार जी जैन, आगरा
11,000/- श्री निर्मल कुमार जी जैन, आगरा
15,000/- श्री शाह मगनीराम पन्नालाल जी जैन, उदयपुर
1,100/- श्री गुलजारी लाल जैन, फर्म– मुरलीधर गुलजारीलाल जैन, रफीगंज (बिहार)
1,000/- श्रीमती कुसुमलता, धर्मपत्नी डॉ० श्री के० सी० भारिल्ल, सिवनी

प्रधानमंत्री
ताराचन्द जैन 'प्रेमी'

प्रस्तावना

अभी तक कषायप्राभृत जयधवलाके १४ भाग मुद्रित होकर प्रकाशित हो चुके हैं। यह चारित्रमोहकी क्षपणाका कथन करनेवाले अधिकारमें कृष्टिकरण और कृष्टिवेदनकाल का कथन करनेवाला पन्द्रहवाँ भाग है। इसके पूर्व अश्वकर्णकरण अधिकारतक इस अनुयोग द्वारकी प्ररूपणा चौदहवें भागमें सम्मिलित है। इस भागमें कृष्टिकरण और कृष्टिवेदनकी प्ररूपणा की गई है। अतः क्षपणा सम्बन्धी प्रकृत विषयको ध्यानमें रखकर क्रोधवेदक कालके ३ भाग किये गये हैं। उनके नाम हैं—१ अश्वकर्णकरणकाल, २ कृष्टिकरणकाल और ३ कृष्टिवेदककाल।

जब क्षपक श्रेणिपर आरूढ़ हुआ यह जीव पुरुषवेदके पुराने सत्कर्मके साथ छह नोकषायोंको क्रोध संज्वलनमें संक्रमित करके क्रोधसंज्वलनका वेदन करता है तब उक्त कालको तीन भागोंमें विभक्त करता है। उनमेंसे अश्वकर्णकरणका कथन चौदहवें भागमें कर आये हैं, यह हमने प्रारम्भमें ही सूचित किया है। शेष रहे दो भाग कृष्टिकरणकाल और कृष्टिवेदनकाल। उनमेंसे सर्वप्रथम कृष्टिकरणका कथन किया जाता है।

१ कृष्टिकरण विधि

आगे चूर्णिसूत्रमें कृष्टिका अर्थ करते हुए लिखा है—'किसं कम्मं कदं जम्हा तम्हा किट्टी[1]।' यतः संज्वलन कर्म अनुभागकी अपेक्षा कृश किया गया है, अतः उसका नाम कृष्टि है। यहाँ कृष्टिकरणका काल अश्वकर्णकरणके कालसे विशेष हीन है। इसीप्रकार इसके कालसे कृष्टिवेदकका काल विशेषहीन होता है। उसका कथन कृष्टिकरणकी विधिको समाप्त करके करेंगे।

जब यह जीव अश्वकर्णकरणको समाप्त करके कृष्टिकरणका प्रारम्भ करता है तब इसके स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध दोनों अन्य होते हैं।

२ कृष्टियोंके उत्तरभेद और अल्पबहुत्व

कृष्टियोंके उत्तर भेदोंकी प्ररूपणा करते हुए बतलाया है कि क्रोधादि चारों संज्वलनोंमेंसे प्रत्येककी तीन-तीन कृष्टियाँ रची जाती हैं, जो संग्रह कृष्टियाँ कहलाती हैं, क्योंकि इनमेंसे प्रत्येककी अन्तर कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। प्रकृतमें लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टि सबसे नीचे होती है। उसकी अवान्तर कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। उससे ऊपर लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टि होती है। उसकी भी अवान्तर कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। इसीप्रकार शेष संग्रह कृष्टियाँ और उनकी अवान्तर कृष्टियाँ जाननी चाहिये।

लोभकी प्रथम कृष्टि स्तोक होती है। दूसरी कृष्टि अनन्तगुणी होती है। इसीप्रकार उत्तरोत्तर अनन्तगुणे श्रेणीके क्रमसे लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक जानना चाहिए। जिस प्रकार लोभकी तीनों संग्रह कृष्टियोंके अल्पबहुत्वका कथन किया है, उसी प्रकार मायाकी तीनों संग्रह कृष्टियोंके अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिए। यहाँ मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तिम कृष्टिसे मानकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी होती है। तथा इसीप्रकार मानकी तीनों संग्रह कृष्टियों और क्रोधकी तीनों संग्रह कृष्टियोंका अल्पबहुत्व घटित कर लेना चाहिए। आगे क्रोधकी तीसरी कृष्टिकी जो अन्तिम कृष्टि होती है उससे लोभके आदि स्पर्धकको आदि वर्गणा अनन्तगुणी होती है। इस प्रकार बारह संग्रह कृष्टियों और उनकी अवयव कृष्टियोंका तीव्र-मन्दता विषयक यह अल्पबहुत्व कहा।

---

१. पृष्ठ ६२।

३ कृष्टि अन्तर

यहाँ कृष्टि अन्तर कहनेसे उसका अर्थ कृष्टिगुणकार लेना चाहिये। इन कृष्टि अन्तरोंके दो भेद हैं-- स्वस्थान गुणकार और परस्थान गुणकार। यहाँ स्वस्थान गुणकारकी कृष्टि अन्तर संज्ञा है तथा परस्थान गुणकारकी संग्रह कृष्टि अन्तर संज्ञा है। प्रकृतमें ऐसा समझना चाहिये, क्योंकि एक-एक संग्रह कृष्टिकी अनन्त अनन्त अवान्तर कृष्टियाँ होती हैं, इसलिए कृष्टि प्रकार भी अनन्त होते हैं, जो अवान्तर कृष्टियोंसे एक कम होते हैं। तथा संग्रह कृष्टियाँ बारह हैं, इसलिए उनके अन्तर (गुणकार) कुल ग्यारह होते हैं।

४ अल्पबहुत्व

लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणा करनेपर अपनी दूसरी कृष्टि उत्पन्न होती है वह गुणकार जघन्य कृष्टि अन्तर कहलाता है। उसका प्रमाण सबसे अल्प होता है। उससे दूसरी कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा होता है। यहाँ दूसरी कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणा करनेपर तीसरी कृष्टि उत्पन्न होती है, यह दूसरी कृष्टि अन्तर कहा जाता है। आगे भी अन्तिम कृष्टि अन्तरके प्राप्त होने तक अनन्तके गुणित क्रमसे अल्पबहुत्व प्राप्त कर लेना चाहिये। उसमें भी द्विचरम कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करनेपर अन्तिम कृष्टिका प्रमाण प्राप्त होता है वह अन्तिम कृष्टि अन्तर है ऐसा समझना चाहिए।

जो दूसरी संग्रह कृष्टि है उसमें और प्रथम संग्रह कृष्टिमें परस्थान गुणकार होता है जो समस्त स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा होता है। अतः उसे उल्लंघनकर दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है। अतः उसे जिस गुणकारसे गुणा करनेपर दूसरी कृष्टि प्राप्त होती है वह गुणकार अनन्तर अधस्तन प्रथम संग्रह कृष्टिके अन्तिम गुणकारसे अनन्तगुणा होता है। यह एक क्रम है। इसे ध्यानमें रखकर आगे सभी संग्रह कृष्टियों सम्बन्धी अवान्तर कृष्टियोंके स्वस्थान गुणकारोंको ले आना चाहिये।

इस प्रकार आगे चल कर क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी द्विचरम कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करनेपर वहींकी अन्तिम कृष्टिको प्राप्त होता है वह अन्तिम कृष्टिका अन्तर होता है। उसे मर्यादा करके यहाँ तक सब अन्तर कृष्टियोंका गुणकार जानना चाहिए।

५ परस्थान गुणकार अल्पबहुत्व

एक संग्रह कृष्टिसे दूसरी संग्रह कृष्टिके मध्य जो अन्तर होता है उसकी संग्रह कृष्टि अन्तर संज्ञा है। आगे इसे स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करने-पर दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टि प्राप्त होती है वह लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अन्तर है। यह गुणकार स्वस्थान गुणकारोंके अन्तिम गुणकारसे अनन्तगुणा होता है। कारण कि यह परस्थान गुणकार है। एक-एक कषायकी जो तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ कही गई हैं उसका कारण यह स्वस्थान गुणकारसे भिन्न परस्थान गुणकार ही है। यहाँपर अधस्तन कृष्टिको उपरिम कृष्टिमेंसे घटाकर जो शेष रहे एक कम वह अविभागप्रतिच्छेदके क्रमसे न बढ़ कर युगपत् बढ़ा है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि यहाँ परस्थान गुणकारमें कृष्टि अन्तर नहीं लिया गया है। अन्यथा इसे पूर्वके अन्तिम स्वस्थान कृष्टि अन्तरसे अनन्तगुणा हीन मानना पड़ेगा। यहाँ प्रथम संग्रह कृष्टि अन्तरको जिस विधिसे स्पष्ट किया है। आगे भी शेष संग्रह कृष्टि अन्तरोंको उक्त विधिको ध्यानमें रख कर घटित कर लेना चाहिए। आगे अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाका कितना प्रमाण है इसे स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि क्रोधकी अन्तिम कृष्टिसे लोभके अपूर्व स्पर्ध-कोंकी आदि वर्गणाका अन्तर अनन्तगुणा है।

६. दीयमान प्रदेश श्रेणिप्ररूपणा :

जो कृष्टिकारक जीव है वह प्रथम समयमें पूर्व और अपूर्व स्पर्धकों सम्बन्धी प्रदेश पुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके जो अपकर्षण करनेसे द्रव्य प्राप्त होता है उसके असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको सब

कृष्टियोंमें देता है और इस प्रकार देता हुआ जो लोभसंज्वलनकी जघन्य कृष्टि है उस रूपसे बहुत बहुत पुंजका निक्षेप करता है। आगे क्रोध संज्वलनकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्तवें भागप्रमाण विशेषहीन विशेषहीन द्रव्य होता है। यह अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा कथन है। परम्परोपनिधाकी अपेक्षा विचार करनेपर लोभकी जघन्य कृष्टिको जितना द्रव्य प्राप्त होता है उससे क्रोधकी उत्कृष्टिकृष्टिमें अनन्तवें भागप्रमाण विशेषहीन ही द्रव्य प्राप्त होता है। ऐसा क्यों है इसका समाधान करते हुए बतलाया है कि १२ संग्रह कृष्टियोंकी जितनी भी अवान्तर कृष्टियाँ रची हैं वे सब मिलाकर एक गुणहानि स्थानान्तर के अनन्तवें भागप्रमाण होती हैं।

आगे प्रथम समयमें जिस द्रव्यका अपकर्षण करके अवान्तर कृष्टियोंकी रचना की गई है उस अपकर्षित द्रव्यमेंसे अपूर्व स्पर्धकोंको आदि वर्गणाको कितना द्रव्य प्राप्त होता है इसे स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि क्रोधकी अन्तिम कृष्टिको जितना द्रव्य प्राप्त होता है उसके अनन्तवें भागप्रमाण द्रव्य ही अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाको प्राप्त होता है। कारणका निर्देश करते हुए बतलाया है कि क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी अनन्त आदि वर्गणाप्रमाण द्रव्यको निक्षिप्त करके पुनः अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें वहाँ पहलेसे अवस्थित द्रव्यका असंख्यातवाँ भागप्रमाण ही द्रव्य निक्षिप्त होता है। इसलिये उक्त अर्थकी उपलब्धि बिना बाधाके बन जाती है।

किन्तु दृश्यमान द्रव्य क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें बहुत है तथा उससे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणा में अनन्तगुणाहीन है। इसलिए कितने आचार्य यहाँ दोनों पुच्छाओंका निर्देश करते हैं। किन्तु टीकामें उसका निषेध करके पूर्वोक्त अर्थको ही ग्रहण करनेका विधान किया गया है। इसप्रकार कृष्टिकरण कालके प्रथम समयमें कृष्टियोंमें दीयमान प्रदेश पुंजकी श्रेणिप्ररूपणा की।

६. दूसरे समयमें कार्यभेद :

अब दूसरे समयमें किये जानेवाले कार्य भेदका कथन करते हुए बतलाया है कि प्रथम समयमें अपकर्षित किये गये द्रव्यसे दूसरे समयमें असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके उससमय कृष्टियोंको करता हुआ प्रथम समयमें की गई कृष्टियोंके नीचे अन्य अपूर्व कृष्टियोंकी रचना करता है। तथा पूर्वमें रची गई कृष्टियोंके सदृश घनरूपसे भी कृष्टियोंकी रचना करता है। किन्तु यहाँ उन अपूर्व कृष्टियोंका प्रमाण प्रथम समयमें रची गई कृष्टियों के असंख्यातवें भागप्रमाण है। यहाँ दूसरे समयमें कृष्टियोंकी रचना करनेवाला उस समय अपकर्षित किये गये सकल द्रव्यके असंख्यातवें भागको अपूर्व कृष्टियोंमें निक्षिप्त करके शेष बहुभाग द्रव्यको पूर्व कृष्टियोंमें तथा स्पर्धकमें यथाविधि निक्षिप्त करता है।

किन्तु ये सब अपूर्व कृष्टियाँ किस स्थानमें रची जाती हैं इसका समाधान करते हुए बतलाया है कि क्रोधसंज्वलनके पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमेंसे प्रदेशपुंजका आकर्षण करके अपनी-अपनी तीनों संग्रह कृष्टियोंके नीचे प्रत्येककी अपेक्षा पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण अपूर्व कृष्टियोंकी रचना करता है। इसी प्रकार मान, माया और लोभकी अपेक्षा भी जान लेना चाहिये। तात्पर्य यह है कि १२ संग्रह कृष्टियोंको जघन्य कृष्टियोंमें नीचे अलग-अलग पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भाग प्रमाण अपूर्व कृष्टियोंकी रचना करनेवाले जीवके दूसरे समयमें बारह संग्रह कृष्टियों सम्बन्धी अपूर्व कृष्टियोंकी रचना हो जाती है।

७. दूसरे समयमें दीयमान प्रदेशपुंज श्रेणीप्ररूपणा :

लोभकी जघन्य कृष्टिमें बहुत प्रदेशपुंज दिया जाता है। दूसरी कृष्टि में अनन्तवाँ भाग कम दिया जाता है। इसप्रकार लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिके नीचे अपूर्व कृष्टियोंमें अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्तवें भागहीन द्रव्य दिया जाता है। उसके बाद प्रथम समयमें रची गई जघन्य अपूर्व कृष्टिमें असंख्यातवाँ भागहीन द्रव्य दिया जाता है। उसके बाद प्रथम समयमें निष्पन्न हुई प्रथम संग्रह कृष्टिकी अपूर्व कृष्टियोंमें अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होनेतक उत्तरोत्तर अनन्तवाँ भागहीन द्रव्य दिया जाता है। पुनः सन्धिमें स्थित कृष्टियोंमें उत्तरोत्तर असंख्यातवाँ भागहीन द्रव्य दिया जाता है।

अब इसके आगे लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिके नीचे निष्पन्न हुई अपूर्व कृष्टियोंकी जो जघन्य कृष्टि है उसमें असंख्यातवाँ भागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है। उसके बाद अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर अनन्त भागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता जाता है। पुनः आगे प्रथम समयमें रची गई कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें असंख्यातवें भागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है। उसके बाद दूसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि के प्राप्त होने तक प्रत्येकमें अनन्तवें भागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है। इसके बाद दूसरी संग्रह कृष्टिकी जो विधि है वही विधि तीसरी संग्रह कृष्टिकी जाननी चाहिये। आगे माया, मान, क्रोध सम्बन्धी जो प्रत्येककी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ हैं उनमें प्रदेश विन्यासका क्रम पूर्वविधिको ध्यानमें रखकर आगमसे जान लेना चाहिये। अतः उक्त प्रकारसे द्वितीय समयमें जो सभी कृष्टियोंमें प्रदेश विन्यास बनता है उसे देखते हुए उष्ट्रकूटश्रेणिकी रचना हो जाती है। (देखो विशेषार्थ पृ० ३४)। यहाँ ११ संधिस्थान और बारह संग्रह कृष्टिस्थान हैं, अतः उनके अनुसार २३ उष्टकूटश्रेणि बन जाती हैं। (विशेष मूलमें देखो।) कृष्टियोंमें प्रतिसमय असंख्यातगुणा असंख्यात गुणा द्रव्य दिया जाता है।

यहाँ अन्तमें संज्वलनोंका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त अधिक चार माह प्रमाण होता है तथा शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है। तथा उसी समय मोहनीयका स्थिति सत्कर्म अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष प्रमाण होता है, तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है तथा नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म असंख्यात वर्ष प्रमाण होता है।

८. कृष्टिवेदक काल :

कृष्टियोंको करनेवाला क्षपकजीव पूर्व स्पर्धक और अपूर्व स्पर्धकोंका वेदन करता है। जिस समय कृष्टिकरण कालका अन्तिम समय प्राप्त होता है तब वेद्यमान उदय स्थितिको छोड़कर उसके ऊपर क्रोधसंज्वलनकी एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिके शेष रहनेपर कृष्टिकरणकी विधि समाप्त हो जाती है, क्योंकि उत्पादानुच्छेदकी अपेक्षा कृष्टिकरणके अन्तिन समयमें उसकी समाप्ति हो जाती है। परन्तु अनुत्पादानुच्छेदकी अपेक्षा तदनन्तर समयमें कृष्टियोंका वेदन करनेवाले जीवके कालकी अपेक्षा एक आवलि मात्र प्रथम स्थितिके शेष रहनेपर कृष्टिकरण काल समाप्त होता है।

इसके बाद वह जीव दूसरी स्थितिमेंसे अपकर्षण करके कृष्टियोंका उदयावलिमें निक्षेप करता है। उस समय संज्वलनोंकी स्थिति चार माह और स्थितिसत्कर्म आठ वर्ष प्रमाण होता है। तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण तथा नाम, गोत्र और वेदनीयका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण और स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्ष प्रमाण होता है। तथा क्रोधसंज्वलनका अनुभाग सत्कर्म एक समय कम जो उदयावलिमें उच्छिष्टावलि रूपसे प्रविष्ट है वह सर्वघाति है और चारों संज्वलनोंका जो नवकबन्ध दो समय कम दो आवलि प्रमाण शेष है वह देशघाति होकर भी स्पर्धकगत है। शेष सब अनुभाग कृष्टिगत है। अर्थात् कृष्टिवेदक कालके प्रथम समयमें नवकबन्ध और उच्छिष्टावलिको छोड़कर चारों संज्वलनोंका सम्पूर्ण ही प्रदेश पुंज कृष्टिरूपसे परिणम जाता है यह इस कथनका तात्पर्य है।

पुनः उसी कृष्टिवेदक कालके प्रथम समयमें कृष्टियोंको प्रवेश कराता हुआ क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है। जो क्रोधवेदक कालके साधिक तीसरे भागप्रमाण होती है। इसका वेदन करनेवाला वह जीव क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिसे लेकर अधस्तन असंख्यातवें भागको तथा उसकी उपरिम उत्कृष्ट कृष्टिसे लेकर उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर शेष मध्यम असंख्यात बहुभाग प्रमाण कृष्टियाँ उदयको प्राप्त होती हैं, क्योंकि अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागकी विषयभूत सदृश धनवाली कृष्टियोंका परिणाम विशेषका अवलम्बन लेकर मध्यम कृष्टिरूपसे परिणमकर उदय होता है।

पुनः इस जीवके क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिके असंख्यात बहुभागका बन्ध होता है। उस समय शेष दो संग्रह कृष्टियोंका न तो बन्ध ही होता है और न उदय ही, क्योंकि प्रथम संग्रह कृष्टिके उदयकालमें शेष दो संग्रह कृष्टियोंका उदय होना सम्भव नहीं। तथा जिस समय जिस कषायको जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उस समय उसका उसी रूपसे ही बन्ध होता है ऐसा नियम है। आगे इसके अल्पबहुत्वका निर्देश करनेके बाद कृष्टिवेदक कालको स्थगित करके कृष्टिकरण कालसे सम्बन्ध रखनेवाली सूचनाओंका निर्देश करते हैं।

९. गाथासूत्र प्ररूपणा :

कृष्टिकरण कालसे सम्बन्ध रखनेवाली ग्यारह मूल सूत्रगाथाएँ हैं। उनमें प्रथम मूल सूत्र गाथा है 'केवदिया किट्टीओ' इत्यादि। इसके चार अर्थ हैं। कुल कृष्टियाँ और उनकी अवयव कृष्टियाँ कितनी हैं। यह प्रथम पृच्छा है। एक-एक, कषायकी कितनी संग्रह और अवयव कृष्टियाँ हैं यह दूसरी पृच्छा है। कृष्टियोंको करनेवाला चारों संज्वलनोंके प्रदेशपुंजका क्या अपकर्षणकरण करता है या उत्कर्षणकरण करता है यह करण विषयक तीसरी पृच्छा है। तथा कृष्टियोंको करनेवालेका अनुभाग किस प्रकारका रहता है यह चौथी पृच्छा है। इस प्रकार यह मूलगाथा चार अर्थोंको स्पर्श करती है।

इसकी तीन भाष्यगाथाएँ हैं। उनमेंसे प्रथम भाष्यगाथामें दो अर्थ निबद्ध हैं। यथा—क्रोधके उदयसे जो जीव श्रेणिपर आरोहण करता है उसके १२ संग्रह कृष्टियाँ होती हैं। मानके उदयवालेके ९, मायाके उदयवालेके ६ और लोभके उदयवालेके ३ संग्रह कृष्टियाँ होती हैं। क्योंकि क्रोधके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करनेवाले जीवके चारों कषायोंकी सत्ता पाई जाती है, इसलिए वह सभी कषायों सम्बन्धी संग्रह कृष्टियाँ और उनकी अवान्तर कृष्टियाँ करता है। मान कषायके उदयसे श्रेणिपर चढ़नेवाला जीव कृष्टिकरणके पहले ही स्पर्धकरूपसे क्रोध संज्वलनका नाश कर देता है। जो मायाके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है वह माया और लोभकी छह संग्रह कृष्टियाँ करता है, क्योंकि वह कृष्टिकरणके पहले ही स्पर्धक रूपसे क्रोध और मानसंज्वलनका नाश कर देता है। जो लोभके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है वह लोभकी तीन संग्रह कृष्टियाँ करता है, क्योंकि वह कृष्टिकरणके पहले स्पर्धक रूपसे ही क्रोध, मान और मायासंज्वलनका नाश कर देता है। इससे सिद्ध है कि एक-एक कषायकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं और प्रत्येककी अनन्त अवयव कृष्टियाँ होती हैं।

कृष्टिकरणके कालमें कौन करण होता है इस अर्थ में १६४ संख्याक एक भाष्यगाथा आई है, इसका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि कृष्टिकरणके कालमें क्षपकके उसका संक्रम होने तक संज्वलन कषायकी स्थिति और अनुभागका नियमसे अपकर्षणकरण ही होता है, उत्कर्षणकरण नहीं। किन्तु यह नियम केवल संज्वलन कषायपर ही लागू होता है, ज्ञानावरणादि कर्मोंपर नहीं ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

उपशामककी अपेक्षा जो विशेषता है उसका निर्देश करते हुए लिखा है कि कषाय अवस्थाके अन्तिम समय तक संज्वलन कषायका अपकर्षण ही होता है, उत्कर्षण नहीं। यद्यपि इसके प्रथम स्थितिमें आवलि और प्रत्यावलिप्रमाण कालके शेष रहनेपर ही आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति होती है। तो भी द्वितीय स्थितिमें स्थित संज्वलन कषायका स्वस्थानकी अपेक्षा अपकर्षणकरण होता है ऐसा कहा है। इतना अवश्य है कि जब यह जीव उपशान्त कषायसे गिरता है तब उसके सकषाय अवस्थाके प्रथम समय ही सभी करण सम्भव होनेसे शक्तिकी अपेक्षा उत्कर्षण करण कहा गया है। इतनी विशेषता है कि यहाँ उत्कर्षण और अपकर्षणकी अपेक्षा ही विचार किया है। इसी न्यायसे शेष करणोंके सम्बन्धमें भी विचार कर लेना चाहिए।

आगे कृष्टिका क्या लक्षण है इस अर्थकी प्ररूपणामें १६५ संख्याक तीसरी भाष्यगाथा आई है। इसका स्पष्टीकरण करते हुए जयधवला टीकामें कृष्टिके लक्षणका तो स्पष्टीकरण किया ही है। स्पर्धक और

कृष्टिमें क्या अन्तर है इसे भी स्पष्ट करके बतलाया है। खुलासा इस प्रकार है—समान अविभाग प्रतिच्छेदोंको धरनेवाले अनन्त कर्मपरमाणुओंकी एक वर्गणा होती है। यहाँ प्रत्येक परमाणुका नाम एक वर्ग है। इनसे एक अधिक अविभाग प्रतिच्छेदोंको धरनेवाले अनन्त कर्मपरमाणुओंकी दूसरी वर्गणा होती है। इस प्रकार एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद अधिक होकर जो अनन्त वर्गणाएँ होती हैं वे सब वर्गणाएँ मिलकर एक स्पर्धक होता है। यह स्पर्धकका लक्षण है। परन्तु कृष्टिमें स्पर्धकका यह स्वरूप घटित नहीं होता, क्योंकि सबसे जघन्य जो कृष्टि होती है उसमें यद्यपि समान अविभाग प्रतिच्छेदोंको धरनेवाले अनन्त परमाणु होते हैं। परन्तु दूसरी कृष्टिमें एक अधिक अविभाग प्रतिच्छेदोंको धरनेवाले अनन्त परमाणु न होकर नियमसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेदोंको धरनेवाले अनन्त परमाणु होते हैं। इसी प्रकार तीसरी आदि सभी कृष्टियोंमें समझना चाहिए। इसलिए ही इनकी कृष्टि संज्ञा है। यह स्पर्धक और कृष्टिमें अन्तर है ऐसा यहाँ समझना चाहिए।

आगे १६६ संख्याक दूसरी मूल गाथा आई है। इस द्वारा सब कृष्टियोंके अनुभाग और स्थितिका विचार किया गया है। इसकी दो भाष्यगाथाएँ हैं। १६७ संख्याक प्रथम भाष्यगाथा द्वारा सभी कृष्टियाँ असंख्यात स्थितिविशेषोंमें और अनन्त अनुभाग विशेषोंमें पाई जाती हैं। मात्र वेद्यमान संग्रह कृष्टिकी कितनी अवयव कृष्टियाँ होती हैं उनका असंख्यात बहुभाग उदय स्थितिमें पाया जाता है इतना यहाँ विशेष जानना चाहिए। अनुभागकी अपेक्षा एक-एक कृष्टि अनन्त अनुभागोंमें पाई जाती है। परन्तु जिन अनुभागोंमें एक कृष्टि होती है उनमें दूसरी कृष्टि नहीं रहती।

१६८ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें बतलाया है कि सब संग्रह और अवयव कृष्टियाँ द्वितीय स्थितिमें होती हैं। मात्र यह जीव जिसका वेदन करता है उसका एक भाग प्रथम स्थितिमें होता है। शेष कथन प्रथम भाष्यगाथाके समान जानना चाहिए।

१६९ संख्याक तीसरी मूल गाथा प्रदेशपुंज, अनुभाग और कालकी अपेक्षा हीनाधिकपनेका निर्देश करती है। प्रदेश पुंजका निर्देश करने रूप प्रथम अर्थ में पाँच भाष्य गाथाएँ आई हैं। अनुभागका कथन करने रूप दूसरे अर्थ में एक भाष्यगाथा आई है तथा कालका निर्देश करने रूप तीसरे अर्थमें छह भाष्यगाथाएँ आई हैं।

१७० संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया है कि दूसरीसे प्रथम संग्रह कृष्टिमें प्रदेशपुंज संख्यातगुणा होता है। परन्तु दूसरीसे तीसरी आदि संग्रह कृष्टियाँ क्रमसे विशेष अधिक हैं। विशेष खुलासाके लिये मूलको देखिये।

१७१ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें बतलाया है कि क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रथम संग्रह कृष्टि वर्गणा समूहकी अपेक्षा संख्यात गुणी है। किन्तु दूसरी संग्रह कृष्टिसे तीसरी संग्रह कृष्टि वर्गणा समूहकी अपेक्षा विशेष अधिक है। इसी प्रकार मान आदिकी संग्रह कृष्टियाँ भी वर्गणा समूहकी अपेक्षा विशेष अधिक होती हैं।

१७२ संख्याक तीसरी भाष्यगाथामें वर्गणाको ध्यानमें रखकर अनुभाग और प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है। बतलाया है कि वर्गणा अनुभागकी अपेक्षा हीन होती है वह प्रदेश पुंजकी अपेक्षा अधिक होती है।

१७३ संख्याक चौथी भाष्य गाथामें बतलाया है कि क्रोधकी आदि वर्गणामें से उसीकी अन्तिम वर्गणाके घटानेपर जो अनन्तवाँ भाग लब्ध आता है वह शुद्ध शेषका प्रमाण होता है। अर्थात् अन्तिम वर्गणासे आदि वर्गणामें उतना प्रदेशपुंज अधिक होता है।

१७४ संख्याक पाँचवीं भाष्यगाथामें बतलाया है कि कृष्टियोंके विषयमें जो क्रम क्रोधसंज्वलनमें स्वीकार किया गया है वही क्रम मान, माया और लोभके विषयमें भी समझना चाहिये।

१७० संख्याक मूल गाथाका दूसरा पद 'अनुभागग्गेण' है। उसमें १७५ संख्याक एक भाष्यगाथा आई है। इसमें अनुभागकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश किया गया है। चारों कषायोंमेंसे प्रत्येक तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ हैं। उनमें प्रत्येक कषायकी अपेक्षा दूसरीसे पहली तथा तीसरीसे दूसरी संग्रह कृष्टि अनुभाग-पुंजकी अपेक्षा नियमसे अनन्तगुणी है।

१७० संख्याक मूलगाथाका तीसरा पद है—'का च कालेण'। इसमें छह भाष्यगाथाएँ हैं। उनमेंमें १७६ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें कृष्टियोंके स्थिति सम्बन्धी कालका विवेचन करते हुए बतलाया है कि जो लोभके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसके लोभ कृष्टिके वेदनके प्रथम समयमें मोहनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म एक वर्षप्रमाण होता है। जो मायाके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसके माया कृष्टियोंका वेदन करनेके प्रथम समयमें मोहनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म दो वर्ष प्रमाण होता है। जो मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसके मान कृष्टियोंके वेदनके प्रथम समयमें मोहनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म चार वर्ष प्रमाण होता है। जो क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़ता है उसके क्रोध कृष्टियोंके वेदन करनेके प्रथम समयमें मोहनीयका स्थितिसत्कर्म आठ-वर्ष प्रमाण होता है।

१७७ संख्याक दूसरी भाष्यगाथा में प्रकृतमें यवमध्य कैसे बनता है इसे स्पष्ट किया गया है। अन्तर-करण विधिके सम्पन्न हो जानेके कारण यहाँ संज्वलन कर्म दो स्थितियोंमें विभक्त हो जाता है। अन्तर-करणसे नीचेकी स्थितिका नाम प्रथम स्थिति है। और अन्तरसे ऊपरकी स्थितिका नाम द्वितीय स्थिति है। इसलिए यहाँ इस दोनों स्थितियोंमें अन्तरसहित यवमध्यकी रचना बन जाती है यह इस गाथाका भाव है।

१७८ संख्याक तीसरी भाष्यगाथामें द्वितीय स्थितिका प्रथम निषेक प्रदेशपुंजकी अपेक्षा उसी स्थितिके अन्तिम निषेककी अपेक्षा कितना अधिक है इसे स्पष्ट करते हुए वह असंख्यातवाँ भाग अधिक है यह स्पष्ट कहा गया है।

१७९ संख्याक चौथी भाष्यगाथामें यह बतलाया गया है कि यहाँ जो उदयादि गुण श्रेणि होती है उसमें असंख्यात गुणित श्रेणि रूपसे प्रदेशपुंज दिया जाता है।

१८० संख्याक पाँचवीं भाष्यगाथामें यह बतलाया है कि प्रथम स्थितिकी जितनी अवान्तर स्थितियाँ होती हैं उन सबसे आदिकी स्थितिमें सबमें थोड़ा द्रव्य पाया जाता है। तथा उसका उदय होकर निर्जरा होनेपर जो दूसरी स्थितिका उदय होता है उसमें असंख्यात गुणित श्रेणि रूपसे द्रव्य पाया जाता है। इसी प्रकार गुण श्रेणिके अन्तिम समय तक जानना चाहिये।

१८१ संख्याक ५ वीं भाष्यगाथामें बतलाया है कि अन्तिम कृष्टिसे लेकर प्रथय कृष्टि तक सब कृष्टियोंका जो वेदक काल है वह उत्तरोत्तर विशेष अधिक विशेष अधिक है। यहाँ विशेष अधिक का प्रमाण पिछली कृष्टिके कालसे उत्तरोत्तर संख्यातवाँ भाग अधिक होता जाता है।

आगे चौथो मूलगाथाका निर्देश करते हुए बतलाया गया है कि किन-किन गतियोंमें, भवों, स्थितियों, अनुभागोंमें तथा तत्सम्बन्धी कृष्टियों और उनकी स्थितियोंमें संचित हुए पूर्व बद्ध कर्म इस क्षपकके पाये जाते हैं।

इस मूल सूत्रगाथाकी तीन भाष्यगाथाएँ है। इनमेंसे १८३ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया गया है कि तिर्यंच और मनुष्य गतिमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं। किन्तु नरकगति और देवगतिमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके होते भी हैं और नहीं भी होते हैं। इसी प्रकार एकेन्द्रिय सम्बन्धी पाँच स्थावर कायिकोंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके होते भी हैं और नहीं भी होते। किन्तु पञ्चेन्द्रिय सम्बन्धी त्रसकायिकोंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाए जाते हैं। यहाँपर त्रसकायिक ऐसा सामान्य रूपसे कहनेपर संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंका ही ग्रहण करना चाहिये। शेषका नहीं, क्योंकि शेष त्रसकायिकोंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके होते भी हैं और नहीं भी होते।

जयधवला टीकामें तिर्यंच गतिमें अर्जित किया गया कर्म इस क्षपकके कैसे पाया जाता है इस बातका खुलासा करते हुए बतलाया गया है कि जो जीव तिर्यंच गतिसे निकलकर शेष दो गतियोंमें सौ पृथक्त्व सागरोपम काल तक रह कर क्षपक श्रेणिपर आरोहण करता है उसके तिर्यंच गतिमें अर्जित होकर कर्म स्थितिमें हुए संचयका पूरी तरहसे अभाव नहीं होता और मनुष्य गतिमें आये बिना इस जीवका क्षपक श्रेणिपर आरोहण करना सम्भव नहीं है, इसलिये तिर्यंचगति और मनुष्य गतिमें संचित हुआ कर्म इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है ऐसा यहाँ विशेष समझना चाहिये ।

१८४ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें बतलाया है कि असंख्यात एकेन्द्रिय सम्बन्धी भवोंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं, क्योंकि कर्म स्थितिके भीतर कमसे कम पल्योपमके असंख्यातवें भाग-प्रमाण एकेन्द्रिय सम्बन्धी भवोंका ग्रहण नियमसे पाया जाता है तथा एकसे लेकर संख्यात त्रससम्बन्धी भवोंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं । यदि एकेन्द्रियोंमेंसे आकर और मनुष्य होकर इसी पर्यायसे क्षपक श्रेणिपर चढ़ता है तो त्रससम्बन्धी एक भवमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं । इस प्रकार अधिकसे अधिक संख्यात त्रसभव ग्रहण कर लेने चाहिये । बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं ।

१८५ संख्याक तीसरी भाष्यगाथा में यह बतलाया गया है कि उत्कृष्ट अनुभाग और उत्कृष्ट स्थिति-युक्त पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अनियम से पाये जाते हैं, क्योंकि कर्म स्थितिके भीतर उत्कृष्ट अनुभाग और उत्कृष्ट स्थिति विशिष्ट यदि कर्म बाँधे गये हैं तो उनका क्षपकके कदाचित् पाया जाता सम्भव है, और कर्म स्थिति के भीतर अनुत्कृष्ट स्थिति और अनुत्कृष्ट अनुभागके साथ कर्मोंका बन्ध करता आया है तो उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागके साथ बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे नहीं पाये जाते हैं । तथा चारों कषायोंमें से प्रत्येकका काल अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं है, इसलिए चारों कषायोंके कालमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं ।

आगे १८६ संख्याक मूल गाथा में पर्याप्त अवस्था, अपर्याप्त अवस्था, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, योग और उपयोग इनमेंसे किस अवस्थामें रहते हुए बाँधे गये कर्म इस क्षपकके पाये जाते हैं यह पृच्छा की गई है ।

इस मूल सूत्रगाथाकी चार भाष्यगाथाएँ हैं । उनमेंसे १८७ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया है कि पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्था, मिथ्यात्व, नपुंसकवेद और सम्यक्त्व इन मार्गणाओंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं । कारण कि कर्मस्थितिके भीतर ये मार्गणाएँ नियमसे होती हैं, इसलिये इन मार्गणाओंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं । परन्तु कर्मस्थितिके भीतर स्त्रीवेद, पुरुषवेद और सम्यग्मिथ्यात्व ये मार्गणाएँ होती भी हैं और नहीं भी होती हैं, इसलिए इन मार्गणाओंमें पूर्वबद्धकर्म इस क्षपकके कदाचित् पाये भी जाते हैं और कदाचित् नहीं भी पाये जाते हैं ।

१८७ संख्याक प्रथम भाष्यगाथा में बतलाया है कि कर्मस्थिति कालके भीतर पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्था नियमसे होती है, क्योंकि कर्मस्थितिका काल बहुत बड़ा है, इसलिए उक्त कालके भीतर इन अवस्थाओं का प्राप्त होना अवश्यंभावी है । मिथ्यात्व, और नपुंसकवेद मार्गणाओंके विषयमें भी इसी प्रकार समझना चाहिए, क्योंकि जीव इन मार्गणाओंको प्राप्त न हो और कर्मस्थितिका काल पूरा करले यह सम्भव ही नहीं है । इसलिये पूर्वकथित मार्गणाओंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके अभजनीय कहे हैं । मात्र स्त्रीवेद, पुरुष-वेद और सम्यग्मिथ्यात्व ये अवस्थाएँ कर्मस्थिति कालके भीतर हों और नहीं भी हों । इसलिए इन मार्गणाओं में बाँधे गये कर्म इस क्षपकके भजनीय कहे हैं ।

१८८ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें यह स्पष्ट किया है कि औदारिक काययोग, औदारिक मिश्रयोग, चारों मनोयोग और चारों वचनयोग इन मार्गणाओंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं।

कारण स्पष्ट हैं। शेष रही वैक्रियिक काययोग, वैक्रियिक मिश्रकाययोग, आहारककाययोग, आहारकमिश्र-काययोग और कार्मणकाययोग मार्गणाएँ कर्मस्थिति कालके भीतर अवश्य ही होती हैं ऐसा कोई नियम नहीं है, इसलिए इन मार्गणाओंमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके भजनीय कहे हैं।

१८९ संख्याक तीसरी भाष्यगाथामें यह स्पष्ट किया है कि मतिज्ञान और श्रुतज्ञान इन दोनों उपयोगोंमें बांधे गये कर्म इस क्षपक के नियमसे पाये जाते हैं। इन्हींमें मत्यज्ञान और श्रुताज्ञानको भी सम्मिलित कर लेना चाहिये। कारण स्पष्ट है। किन्तु अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान साथ ही विभंगज्ञान कर्मस्थिति कालके भीतर हों ऐसा कोई नियम नहीं है, इसलिए इन मार्गणाओंमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके भजनीय कहा है।

१९० संख्याक चौथी भाष्यगाथामें स्पष्ट किया है कि चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन इन दोनों उपयोगोंमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं। पर यह स्थिति अवधिदर्शन की नहीं है, इसलिए इस उपयोगमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके भजनीय होते हैं यह कहा है।

आगे १९१ संख्याक छठवीं मूल गाथा है। इसमें बतलाया है कि किस लेश्यामें, किन कर्मोंमें, किस क्षेत्रमें और किस कालमें साता, असाता और किस लिंगके साथ बांधे गये कर्म इस क्षपकके पाये जाते हैं। इस प्रकार इस मूलगाथाद्वारा पृच्छा की गई है।

आगे उत्तरस्वरूप इसकी दो भाष्यगाथाएँ हैं। उनमेंसे १९२ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया है कि सभी लेश्याओंमें तथा साता और असातामें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे होते हैं, क्योंकि तिर्यञ्चों और मनुष्योंके इनका सद्भाव पाये जानेमें कोई बाधा नहीं आती। अन्तर्मुहूर्तमें ये बदलते रहते हैं। तथा सभी कार्यों और सभी लिंगोंमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके पाये भी जाते हैं और नहीं भी पाये जाते, क्योंकि कर्म स्थिति कालके भीतर इस जीवके ये नियमसे होते हैं ऐसा कोई नियम नहीं है। यहाँ कर्मसे अंगारकर्म, काष्ठकर्म और वनकर्म किये गये हैं। तथा लिंगसे तापस आदि अन्य लिंग लिये गये है। वे कर्मस्थितिकालके भीतर इस जीवके नियमसे होते है ऐसा भी कोई नियम नहीं है। इसलिये यहां सभी कर्मों और सभी लिंगोंमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके होते भी हैं और नहीं भी होते हैं, यही बात शिल्पके सम्बन्धमें भी जाननी चाहिये। यहाँ जो लिंग पदसे सभी लिंगका ग्रहण किया है तो निर्ग्रन्थता कोई लिंग नहीं है वह तो जीवका स्वरूप है, इसलिये लिंग पदसे यहाँ निर्ग्रन्थ लिंगका ग्रहण नहीं होता ऐसा यहाँ समझना चाहिये। क्षेत्र पदसे अधोलोक आदि तीनोंका ग्रहण होता है। सो यहाँ अधोलोक और ऊर्ध्वलोककी अपेक्षा भजनीयता जाननी चाहिये। क्योंकि कोई जीव तिर्यक् लोकमें पूरे कर्मस्थितिकालतक रहकर अन्तमें क्षपक होकर मोक्षवासी बन जाय, इन दोनों लोकोंमें न जाय, इसलिये इन दोनों क्षेत्रोंमें बांधे गये कर्म इस क्षपकके भजनीय कहे हैं। इसी प्रकार उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालकी अपेक्षा भी समझ लेना चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे हम यहाँ स्पष्टीकरण नहीं कर रहे हैं।

१९३ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें बतलाया गया है कि जिन तीन मूलगाथाओंमें अभजनीय पूर्वबद्ध कर्मोंकी चर्चा कर आये हैं वे इस क्षपकके सभी स्थितियोंमें, सभी अनुभागोंमें और सभी कृष्टियोंमें नियमसे पाये जाते हैं ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

आगे १९४ संख्याक सातवीं मूल गाथामें दो पृच्छाएँ की गई हैं। प्रथम यह पृछा की गई है कि एक-एक समयप्रबद्धसम्बन्धी कितने कर्मपरमाणु उदयको न प्राप्त होकर कितने स्थितिके भेदोंमें और कितने अनुभागोंमें इस क्षपकके पाये जाते हैं। तथा दूसरी पृच्छा यह की गई है कि एक एक भवमें बांधे गये कितने कर्म उदयको प्राप्त हुए बिना इस क्षपकके पाये जाते हैं। इसप्रकार ये दो पृच्छाएं हैं जो इस मूलगाथाद्वारा की गई हैं।

आगे चार भाष्यगाथाओं द्वारा इस विषयको स्पष्ट किया जाता है। उनमेंसे १९५ संख्याक पहली भाष्यगाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि अन्तरकरण करनेके बाद छह आवलियोंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके अनुदीरित होकर चारों कषायों सम्बन्धी सभी स्थितियों और सभी अनुभागोंमें पाये जाते हैं। किन्तु भवबद्ध सभी समयप्रबद्ध इस क्षपकके उदयमें संक्षुब्ध रूपसे पाये जाते हैं।

१९६ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें बतलाया है कि बाँधे गये कर्मप्रदेश बन्धावलि कालतक क्रोध संज्वलनकी प्रथम कृष्टिमें ही पाये जाते हैं, बन्धावलि कालतक उनका अपकर्षण और परप्रकृति सत्क्रम सम्भव नहीं है। हाँ बन्धावलिके बाद द्वितीयावलिमें स्थित उन नवकबन्ध कर्मप्रदेशोंका आनुपूर्वी संक्रमके कारण क्रोध संज्वलनकी प्रथम कृष्टि सहित अनन्तर चार कृष्टियोंमें संक्रम होकर उनका तद्भाव पाया जाता है। कारण कि बन्धावलि कालतक जो नया बन्ध हुआ है वह तदवस्थ रहता है। पुनः बन्धावलि कालके बाद द्वितीयावलिमें स्थित नवकबन्ध क्रोधकी दो संग्रह कृष्टियोंमें और मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है।

१९७ संख्याक तीसरी भाष्यगाथामें बतलाया गया है कि तीसरी आवलिमें स्थित वह नवकबन्ध मानकी अन्तिम दो आवलियोंमें तथा मायाकी प्रथम आवलिमें संक्रमित होकर सात आवलियोंमें दिखाई देता है। इसी प्रकार चौथी आवलिमें स्थित वह नवकबन्ध मायाकी दो और लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संक्रमित होकर दस आवलियोंमें दिखाई देता है। तथा पाँचवीं आवलिमें स्थित वह नवकबन्धी चारों कषायोंकी सभी आवलियों में दिखाई देता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

१९८ संख्याक भाष्यगाथामें यह कहा गया है कि ये अनन्तर कहे गये समयप्रबद्ध इस भवमें इस क्षपकके उदय स्थितिमें नियमसे असंक्षुब्ध रहते हैं या भवबद्ध समयप्रबद्ध नियमसे संक्षुब्ध रहते हैं।

१९९ संख्याक मूलगाथामें यह जिज्ञासा प्रगट की गई है कि कितने एक और नाना समयप्रबद्ध शेष तथा नाना भवबद्ध शेष कितने स्थितिभेदों और अनुभागभेदोंमें पाये जाते हैं। एक और नाना कितने समयप्रबद्ध भवबद्ध शेष एक स्थिति विशेषमें पाये जाते हैं। तथा एक समयप्रबद्ध सम्बन्धी एक स्थिति विशेषमें एक और नाना कितने समयप्रबद्ध शेष और भवबद्ध शेष पाये जाते हैं। यहाँ शेषसे मतलब भोगनेके बाद जो शेष रहे और तदनन्तर समयमें निर्लेपित (निर्जीर्ण) होनेवाले हैं उनसे है। यह अर्थ समयप्रबद्ध और भवबद्ध दोनोंकी अपेक्षा जान लेना चाहिये। विशेष खुलासा टीकासे कर लेना चाहिये।

इसकी चार भाष्यगाथाएँ हैं। २०० संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया है कि एक स्थिति विशेष और अनन्त अनुभागोंमें भवबद्ध शेष और समयप्रबद्ध शेष नियमसे पाये जाते हैं। यहाँ एक स्थिति विशेषसे मतलब एक समय अधिक उदयावलिसे ऊपर अन्यतर स्थिति विशेष लिया है। विशेष खुलासा टीकासे कर लेना चाहिये।

२०१ संख्याक दूसरी भाष्यगाथामें बतलाया है कि एक वे भवबद्ध शेष और समयबद्ध शेष कमसे कम एक स्थिति विशेषमें और अधिकसे अधिक असंख्याक स्थिति विशेषमें पाये जाते हैं। तथा नाना भवबद्ध शेष और समयप्रबद्ध शेष जघन्यपनेकी अपेक्षा भी असंख्यात स्थिति विशेषोंमें पाये जाते हैं।

२०२ संख्याक तीसरी भाष्यगाथामें बतलाया है कि भवबद्ध शेष और समयप्रबद्ध शेष जिन स्थितियोंमें पाये जाते हैं उन सामान्य स्थितियोंको छोड़कर जिन स्थितियोंमें ये भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष नहीं पाये जाते हैं वे स्थितियाँ असामान्य स्थितियाँ होकर भी इस क्षपकके पुनः पुनः निरन्तररूपसे कितने कालतक पायी जाती हैं। इसका समाधान करते हुए बतलाया है कि वे असामान्य स्थितियाँ अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण होती हैं और पुनः पुनः निरन्तररूपसे वर्षपृथक्त्व कालतक पायी जाती हैं।

आगे प्रकृत विषयको स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि एक-एक करके प्राप्त होनेवाली वे असामान्य स्थितियाँ थोड़ी हैं। दो दो करके प्राप्त होनेवाली वे असामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक हैं। इस प्रकार क्रमसे

जाते हुए वे असामान्य स्थितियाँ आवलिके असंख्यातवें भागमें दूनी हो जाती हैं । यह एक अर्थ है । इसी प्रकार यहाँ आये हुए 'एक्केक्केण असामण्णाओ' इत्यादि चूर्णिसूत्रका दूसरा अर्थ करते हुए बतलाया है कि एक एक सामान्य स्थितिसे अन्तरित होकर उन असामान्य स्थितियोंकी शलाकाएँ थोड़ी हैं । दो दो सामान्य स्थितियोंसे अन्तरित असामान्य स्थितियाँ मिलाकर विशेष अधिक हैं । तीन तीन सामान्य स्थितियोंसे अन्तरित असामान्य स्थितियाँ मिलाकर विशेष अधिक हैं । इस प्रकार इस प्ररूपणामें भी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर उनकी दूनी वृद्धि होती है । और इस प्रकार आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुण वृद्धि होनेपर वहाँपर पहले कर आये प्ररूपणामें और इस प्ररूपणामें दोनोंमें यवमध्य होता है । पुनः उसके बाद विशेष हानिके क्रमसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जानेपर द्विगुण हानि होती है । इस प्रकार अन्तिम विकल्पके प्राप्त होनेतक द्विगुण हानियाँ होकर जाती हैं । यहाँ जैसे असामान्य स्थितियोंको ध्यानमें रखकर यवमध्यकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार सामान्य स्थितियोंकी विवक्षामें यवमध्यकी प्ररूपणा जाननी चाहिये ।

यहाँ जिस प्रकार सामान्य और असामान्य स्थितियोंकी अपेक्षा विचार किया उसी प्रकार भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेषकी अपेक्षा भी जान लेना चाहिये । विशेष ऊहापोह मूलमें २०३ संख्याक चौथी भाष्यगाथाकी टीकामें किया ही है, इसलिये इसे वहाँसे जानना चाहिये ।

यहाँ इन चार भाष्यगाथाओंकी प्ररूपणा क्षपक श्रेणीको ध्यानमें रखकर की है । अभव्यजीवोंकी विवक्षामें भी इसी प्रकार कर लेनी चाहिये । इसी प्रसंगसे एक कर्म स्थितिके भीतर कितने निर्लेपन स्थान होते हैं इसे स्पष्ट करते हुए चूर्णिसूत्रमें बतलाया है कि इस विषयमें दो उपदेश पाये जाते हैं । एक उपदेशके अनुसार एक कर्मस्थितिके भीतर असंख्यात बहुभागप्रमाण निर्लेपन स्थान होते हैं । इतने कैसे होते हैं इसका खुलासा करते हुए लिखा है कि जो समयप्रबद्ध विवक्षित कर्मस्थितिके प्रथम समयमें बन्धको प्राप्त हुआ है उसका प्रदेशपुंज बन्ध समयसे लेकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक नियमसे रहकर उसके अन्तिम समयमें निश्शेष हो जाता है । अथवा उससे अगले समयमें वह निःशेष हो जाता है । इस प्रकार एक-एक समय अधिक होकर कर्मस्थितिके अन्तिम समयतक ये निर्लेपन स्थान होकर जाते हैं । यह एक समयप्रबद्धकी विवक्षामें कथन किया है । इसी प्रकार सभी समयप्रबद्धोंके कर्मस्थितिके भीतर निर्लेपन स्थान जानने चाहिए ।

दूसरे प्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपन स्थान होते हैं । इसका खुलासा करते हुए बतलाया है कि कर्मस्थितिके प्रथम समयमें जो समयप्रबद्ध बन्धको प्राप्त हुआ है वह कर्म स्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण कालतक नियमसे रहकर उसके बाद पल्योपमके असंख्यात भागप्रमाण कर्म स्थितिके शेष रहनेपर उदयको प्राप्त होकर नियमसे निर्लेपित हो जाता है । अथवा उसके अगले समयमें वह निर्लेपनको प्राप्त हो जाता है । इस प्रकार ये निर्लेपन स्थान एक-एककर कर्मस्थितिके अन्तिम समयतक जाते हैं । अतः ये सब मिलाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं । आगे जघन्य निर्लेपन स्थानसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपन स्थान तक जितने निर्लेपन स्थान होते हैं उनमेंसे जघन्य निर्लेपन स्थानको अतीत कालमें एक जीवने कितनी बार किया है तत्सम्बन्धी जो समुदित काल है वह सबसे थोड़ा है । एक समय अधिक दूसरे निर्लेपनमें रहकर निर्लेपितपूर्व समयप्रबद्धोंका यह काल समुदित होकर एक जीवकी अपेक्षा विशेष अधिक है । इसी प्रकार विशेष अधिक होता हुआ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थानोंके जानेपर वहाँ प्राप्त निर्लेपनस्थानका काल जघन्य निर्लेपनस्थानके कालसे दूना हो जाता है । इस प्रकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुण वृद्धियोंके प्राप्त होनेपर यवमध्यरूपसे निर्लेपनकाल उत्पन्न होता है । किन्तु यह यवमध्यस्थान उत्पन्न होता हुआ निर्लेपनस्थान सम्बन्धी समस्त स्थानोंके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर ही उत्पन्न हुआ है । पुनः इस स्थानसे आगे निर्लेपन काल घटता हुआ जाता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये ।

आगे समयप्रबद्ध शेष सम्बन्धी प्ररूपणा करके भवबद्धशेष सम्बन्धी प्ररूपणाको इसी प्रकारकी जाननेकी सूचना करनेके बाद भगवान् यतिवृषभ आचार्यने जो यह सूचना की है कि यद्यपि प्रकृतमें यवमध्य करना चाहिये। परन्तु यहाँ छद्मस्थ होनेके कारण उसे लिखनेका स्मरण नहीं रहा। इसलिये टीकाकारका कहना है कि व्याख्यानाचार्योंको उसका व्याख्यान कर लेना चाहिये।

आगे टीकाकार इसे स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि सूत्रकार पूर्वापरके परामर्श करनेमें कुशल होते हैं, इसलिए उनके द्वारा विस्मरण होना तो सम्भव नहीं। फिर भी जो यह लिखा है कि यहाँ हमें लिखनेका स्मरण नहीं रहा, इसलिए प्रकृतमें यवमध्य कर लेना चाहिए सो उनके ऐसा लिखनेका यह अभिप्राय रहा है कि प्रकृतमें यवमध्य सुबोध है, वह विस्मरण स्वरूप नहीं हैं। फिर भी उसका विस्मरण हो गया ऐसा मानकर शिष्योंको प्रकृत अर्थके समर्पण करनेमें कुशल आचार्यपर उक्त दोष लागू नहीं होता, क्योंकि सूत्रकारोंके कथन करनेकी शैली विचित्र अर्थात् अनेक प्रकारकी होती है। आगे उसे ही यहाँ दो उपदेशोंका अवलम्बन लेकर स्पष्ट किया गया है। मूलमें देखो पृ० १९८-२००।

आठवीं मूल गाथाकी २०० संख्याक प्रथम भाष्य गाथामें समय-प्रबद्धशेष और भवबद्धशेषके स्वरूपपर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि कर्मस्थितिके भीतर क्रमसे वेदन किये जानेवाले समय प्रबद्धका वेदन करनेके बाद जो प्रदेश पुंज शेष रहकर तदनन्तर समयमें निर्लेपनके अभिमुख होकर दिखाई देता है उसकी समयप्रबद्ध शेष संज्ञा है।

यहाँ 'उदय समयमें विद्यमान' ऐसा न कह कर 'निर्लेपनके अभिमुख होकर दिखाई देता है' ऐसा कहनेका कारण यह है कि यहाँ एक स्थिति विशेषमें स्थित समयप्रबद्ध शेषको ग्रहण न करके अनेक स्थिति विशेषोंमें सान्तर और निरन्तर रूपसे अवस्थित समयप्रबद्धशेषका ग्रहण किया गया है।

यह एक समयप्रबद्धशेषकी अपेक्षा कथन जानना चाहिए। नाना समयप्रबद्धोंकी अपेक्षा भी इसी प्रकार जान लेना चाहिए। इसी प्रकार एक भव या नाना भवोंकी अपेक्षा भी जानना चाहिए। अन्तर इतना है कि समयप्रबद्धशेषके विचारमें एक या नाना समयप्रबद्धोंकी अपेक्षा विचार करनेकी मुख्यता रही है किन्तु भवबद्धशेषमें एक या नाना भवोंकी विवक्षा मुख्य रही है। यह स्थितिकी अपेक्षा विचार है। अनुभागकी अपेक्षा अनन्त अनुभागोंको ध्यानमें रख कर समयप्रबद्धशेष और भवबद्ध शेषका स्वरूप जानना चाहिए।

यह समयप्रबद्धशेष कितनी स्थितियोंमें उपलब्ध होता है इसका विचार करते हुए बतलाया है कि वह कदाचित् एक स्थिति विशेषमें उपलब्ध होता है, कदाचित् दो स्थिति विशेषोंमें उपलब्ध होता है। इस प्रकार क्रमसे तीन आदि स्थिति विशेषोंसे लेकर द्वितीय स्थितिके वर्ष पृथक्त्वप्रमाण सब स्थितिविशेषोंमें विवक्षित समयप्रबद्धशेष उपलब्ध होता है। यह केवल द्वितीय स्थितिसम्बन्धी सभी स्थिति विशेषोंमें ही नहीं उपलब्ध होता है। किन्तु किसी एक संज्वलनकी प्रथम स्थिति सम्बन्धी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितियोंको छोड़ कर शेष सब स्थितियोंमें विवक्षित समयप्रबद्धशेष अवस्थित रहता है।

एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितियोंके निषेध करनेका कारण यह है कि उदयस्थितिमें तो समयप्रबद्धशेषकी प्राप्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि वह अनन्तर समयमें निर्लेप्यमानस्वरूप है। अतः उसका उसी समय निर्लेप्यमान स्वरूप माननेमें विरोध आता है। उदयावलिके बाहर प्रथम स्थितिमें भी उसका अवस्थित रहना सम्भव नहीं है, क्योंकि उस स्थितिमें रहने वाला प्रदेशपुंज अनन्तर समयमें नियमसे उदयावलिमें प्रवेश करनेवाला है। अतः उस समय उसका अपकर्षण होकर उदयमें निक्षिप्त होना सम्भव नहीं है। इसी प्रकार उदयावलिके भीतर शेष स्थितियोंमें भी उसके असम्भव होनेका नियम जानना चाहिए। इतना अवश्य है कि उदयस्थितिसे अनन्तर जो द्वितीय स्थिति है उसमें समय प्रबन्द्ध शेष अवश्य सम्भव है, क्योंकि अनन्तर समयमें वह उदयरूप होकर निर्लेपनके सन्मुख दिखाई देती है।

आगे ८वीं मूलगाथाकी २०२ संख्याक तीसरी भाष्यगाथामें सामान्यसंज्ञा और असामान्य संज्ञाका विचार करते हुए बतलाया है कि जिस किसी एक स्थिति विशेषमें जो भवबद्ध शेष और समयप्रबद्ध शेष सामान्य नहीं होते हैं उनकी असामान्य संज्ञा है। वे असामान्य स्थितिविशेष परस्पर संलग्न होकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं और वे वर्ष पृथक्त्वकालके भीतर आवलिके असंख्यातवें भाग बार पुनः पुनः निरन्तर पाये जाते हैं। इस प्रकार सामान्य संज्ञा और असामान्य संज्ञाकी अपेक्षा स्थितिविशेषका विचार करनेके बाद आगे वर्षपृथक्त्व प्रमाण स्थितिके भीतर किस रूपमें ये पाये जाते हैं और किस स्थानपर जाकर यवमध्य होता है आदिका विशेष विचार पहले ही कर आये हैं। आगे अन्य उपयोगी विचारके बाद निर्लेपन-स्थान आदिके आश्रयसे अल्पबहुत्वका विचार करनेके बाद ८वीं मूल गाथा और उसकी भाष्यगाथाओंकी व्याख्या समाप्त की गई है। आगे २०४ संख्याक ९वीं मूलगाथाका व्याख्यान करते हुए बतलाया है कि इस द्वारा कृष्टिवेदकके प्रथममें ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थिति और अनुभागसत्कर्म कितना होता है। साथ ही उनके बन्ध और उदयका भी विचार स्थिति और अनुभागकी अपेक्षा इस मूल गाथा द्वारा किया गया है।

इसकी दो भाष्यगाथाएँ हैं। २०५ संख्याक प्रथम भाष्यगाथामें बतलाया है कि कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्ष प्रमाण होता है। तथा शेष चार घाति कर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है। विशेष इतना है कि उस समय मोहनीयकर्मका स्थिति सत्कर्म आठ वर्ष प्रमाण होनेसे संख्यात वर्ष प्रमाण कहा गया है।

२०९ संख्याक दूसरी भाष्यगाथाका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया गया है, कि उस अवस्थामें सातावेदनीय, शुभनाम यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका शत सहस्र वर्ष प्रमाण स्थितिबन्ध करता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायका संख्यात हजार वर्ष प्रमाण स्थितिबन्ध करता है। तथा मोहनीय कर्मका चार माहप्रमाण स्थितिबन्ध करता है।

अनुभागबन्धका विचार करते हुए बतलाया है कि सातावेदनीय, यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका आदेश उत्कृष्ट या ईषत् उत्कृष्ट अनुभागबन्ध होता है। तथा तीन घातिकर्मों और मोहनीय कर्मका तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागबन्ध होता है।

पहले क्षपकके प्रायोग्य ११ मूल गाथाएँ कही थीं उनमेंसे ९ गाथाओंका व्याख्यान किया। प्रकृतमें अन्तकी शेष दो गाथाएँ स्थापित की जा रही हैं, क्योंकि ये कृष्टि वेदकके कालसे सम्बद्ध हैं। इन दो गाथाओंके अतिरिक्त अन्य गाथाओंका सम्बन्ध कृष्टिवेदक कालसे आता है; इसलिये उनका यहाँ व्याख्यान क्यों किया ऐसा प्रश्न होनेपर प्रकृतमें समाधान करते हुए बतलाया है कि उनका सम्बन्ध कृष्टिवेदक कालके साथ होकर भी कृष्टि वेदक कालके साथ भी आता है, इसलिये उनका सामान्य नाम कालके साथ करनेमें कोई बाधा नहीं आती।

आगे कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें स्थिति और अनुभागकी अपेक्षा सत्त्व और बन्ध कितना होता है इसका उल्लेख करनेके बाद अनुभागका विचार करते हुए बतलाया है कि यहाँसे लेकर मोहनीय कर्मोंके अनुभागकी प्रति समय अनन्त गुणहानिरूपसे अपवर्तना होने लगती है। खुलासा इस प्रकार है—

कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें क्रोधकृष्टि उदयमें उत्कृष्ट बहुत होती है। अर्थात् इस समय जिन अनन्त मध्यम कृष्टियोंका उदयमें प्रवेश होता है उनमेंसे जो सबसे उपरिम उत्कृष्ट कृष्टि है वह बहुत अर्थात् तीव्र अनुभाग वाली होती है। तथा उस समय बध्यमान जो अनन्त कृष्टियाँ होती हैं उनमें जो सबसे उत्कृष्ट होती है वह उदयकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन अनुभागवाली होती है। इसके आगे बन्धको प्राप्त होनेवाली क्रोध कृष्टिसे दूसरे समयमें उदयको प्राप्त होनेवाली प्रथम समयमें उत्कृष्ट क्रोध कृष्टि अनन्त गुणी हीन होती हैं। तथा उससे बन्धकी अपेक्षा उत्कृष्ट क्रोधकृष्टि अनन्तगुणी हीन होती है। इसी प्रकार समस्त वेदककालके भीतर जानना चाहिये।

यह उत्कृष्ट क्रोधकृष्टिकी अपेक्षा विचार है। जघन्यकी अपेक्षा विचार करते हुए बतलाया है कि प्रथम समयमें जघन्य क्रोधकृष्टि तीव्र अनुभागवाली होती है। उसकी अपेक्षा उदयमें जघन्य कृष्टि अनन्तगुणे हीन अनुभागवाली होती है। दूसरे समयमें बन्धमें जघन्य कृष्टि प्रथम समयमें उदयरूप जघन्य कृष्टिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हीन होती है। उससे उसी समय उदयमें जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी हीन होती है। इसी प्रकारका समस्त कृष्टि वेदककालके भीतर जानना चाहिये।

यहाँ जो निर्वर्गणाको भी इसी प्रकार जाननेका विधान किया है सो उसका आशय इतना ही है कि बन्ध और उदयरूप जघन्य कृष्टियोंकी अपेक्षा अनन्तगुणी हानि रूपसे जो अपसरण विकल्प होते हैं उन्हें यहाँ जघन्य निर्वर्गणा कहकर इसी प्रकार जाननेकी सूचना की है।

यह क्रोधसंज्वलन सम्बन्ध बन्ध और उदयरूप जघन्य और उत्कृष्ट कृष्टियोंकी निर्वर्गणा प्ररूपण क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अपेक्षा की गई है। यहाँ इतना विशेष जानना कि कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें मान संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका उदय नहीं होता। मात्र बन्ध ही होता है और वह भी अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम बहुभाग रूपसे प्रवृत्त होता हुआ प्रतिसमय अनन्त गुणहानि रूपसे ही प्रवृत्त होता है। यहाँ प्रथम समयमें क्रोध और मान संज्वलनकी शेष संग्रह कृष्टिका बन्ध नहीं होता। माया और लोभ संज्वलनके विषयमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। अर्थात् इन दोनों कषायोंकी प्रथम संग्रह कृष्टियोंके अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम बहुभाग रूपसे ही बन्धकी वृत्ति होती है।

यह तो बन्ध और उदयकी अपेक्षा विचार है। सत्त्वकी अपेक्षा अनुभागका विचार करनेपर वह प्रतिसमय अपवर्तनारूपसे किस प्रकार प्रवृत्त होता है इसका विचार करते हुए बतलाया है कि बारह कृष्टियोंकी जो अग्र कृष्टि है उससे लेकर एक एक संग्रहकृष्टिके असंख्यातवें भागप्रमाण अनन्त कृष्टियोंका अपवर्तनाघातके द्वारा घात करके अधस्तन कृष्टिरूपसे उन्हें स्थापित करता है। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोंमें भी यह अपवर्तना चलती ही रहती है। मात्र प्रथम समयमें जितनी कृष्टियोंका विनाश होता है उनसे आगे द्वितीयादि समयोंमें असंख्यात गुणहानिरूपसे उनका विनाश होता है।

इस प्रकार यह कृष्टियोंकी प्रतिसमय अपवर्तना करता हुआ कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें ही आरम्भ करके कृष्टिकरण कालमें पहले निष्पन्न की गई कृष्टियोंके नीचे और उनके अन्तरालोंमें अन्य अपूर्व कृष्टियोंको जिस विधिसे निष्पन्न करता है उसका खुलासा इस प्रकार जानना चाहिये—

(१) क्रोध संज्वलनकी वेद्यमान प्रथम संग्रह कृष्टिसे अपूर्व कृष्टियोंकी रचना नहीं होती।

(२) क्रोध संज्वलनकी बध्यमान प्रथम संग्रह कृष्टिसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता हुआ प्रथम संग्रह कृष्टिके अन्तरालोंमें उन्हें निष्पन्न करता है।

(३) शेष ११ संग्रह कृष्टियोंके संक्रम्यमाण प्रदेशोंके अग्रभाग से अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है।

(४) तथा मान, माया और लोभ सम्बन्धी बध्यमान, तीन संग्रहकृष्टियोंके प्रदेशके अग्रभागसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है।

इसप्रकार इन अपूर्वकृष्टियोंकी निष्पत्ति कैसे होती है इसका यह विचार है। आगे अल्पबहुत्वका विचार करते हुए बतलाया है कि—

(५) जो बध्यमान संग्रहकृष्टियोंके प्रदेशके अग्रभागसे अपूर्व कृष्टियोंकी रचना होती है वे अल्प होती हैं।

(६) तथा जो संक्रम्यमाण संग्रहकृष्टियोंके प्रदेशाग्रसे अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति होती है वे असंख्यातगुणी होती हैं।

(७) जो बध्यमान संग्रहकृष्टियोंके प्रदेशाग्रसे अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति होती है वे चारों बध्यमान संग्रहकृष्टियोंमें ही पायी जाती हैं, क्योंकि उस समय अन्यसंग्रहकृष्टियोंका बन्ध नहीं होता।

(८) बध्यमान संग्रहकृष्टियोंसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियां असंख्यात कृष्टियोंको उल्लंघन कर पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूल प्रमाण कृष्टि अन्तरालों में निष्पन्न होकर प्राप्त होती है । पुनः इतने ही अन्तरालोंको उल्लंघन कर दूसरी अपूर्व कृष्टि निष्पन्न होकर प्राप्त होती है । इस प्रकार क्रमसे इतने-इतने अंतरालोंको उल्लंघन कर ही अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति होकर प्राप्ति जानना चाहिये । यहाँ क्रोध संज्वलन की अपेक्षा विचार है, इसी प्रकार मान, माया और लोभ संज्वलन की अपेक्षा भी जानना चाहिये ।

प्रदेशोंकी अपेक्षा इन कृष्टियोंमें प्राप्त होने वाले प्रदेश-पुंजके अल्प-बहुत्वकी अपेक्षा विचार करने पर बध्यमान जघन्य कृष्टिमें बहुत प्रदेश पुंज होता है । दूसरी कृष्टिमें अनन्तवां भाग विशेष हीन प्रदेश पुंज है । तीसरी कृष्टिमें अनन्तवां भाग विशेष हीन प्रदेश पुंज होता है । इस प्रकार बध्यमान अंतिम अपूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक जानना चाहिये ।

(९) संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे जो अपूर्व कृष्टियां निपजती हैं वे कृष्टि-अंतरालोंमें और संग्रह कृष्टि-अंतरालोंमें निपजती है । जो संग्रह कृष्टि-अंतरालोंमें निपजती हैं वे थोड़ी होती हैं । जो कृष्टि-अंतरालोंमें निपजती है वे असंख्यात गुणी होती है । संग्रह कृष्टि-अंतरालों में उत्पन्न होने वाली अपूर्व कृष्टियों की बिधि कृष्टिकरणके समय निष्पन्न होने वाली अपूर्व कृष्टियोंकी विधि जैसी कही है वैसी जाननी चाहिये । कृष्टि-अंतरालोमें निष्पन्न होने वाली कृष्टियों की विधि बध्यमान प्रदेशपुंजसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंकी विधि जैसी कही है वैसी जाननी चाहिये ।

(१०) कृष्टि-वेदक के प्रथम समयमें क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके असंख्यातवें भागका विनाश होता है । जो कृष्टियां प्रथम समयमें विनाश को प्राप्त होती हैं वे बहुत होती हैं । जो कृष्टियां दूसरे समय में विनाशको प्राप्त होती है वे असंख्यात गुणी हीन होती हैं । उसीप्रकार क्रोध संज्वलन की प्रथम संग्रह कृष्टिके द्विचरम समय तक जानना चाहिये ।

(११) इस प्रकार क्रोध संज्वलन की प्रथम कृष्टि के वेदन करनेवाले जीवके जब एक समय अधिक एक आवली काल शेष रहता है उस समय यह जीव (१) क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका उदीरक होता है । (२) क्रोध संज्वलन की प्रथम कृष्टि का अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है । (३) संज्वलन चतुष्कके अनुभाग सत्कर्मकी जो अनुसमय अपवर्तना प्रवृत्त हुई थी वह उसी प्रकारसे प्रवृत होती रहती हैं (४) चार संज्वलनोंका स्थितिबंध दो महीना और अन्तर्मुहूर्त कम चालिस दिवस प्रमाण होता है । (५) चारों संज्वलनों का स्थिति सत्कर्म छह वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम आठ माह प्रमाण होता है । (६) तीन घातिया कर्मों का स्थितिबंध अन्तर्मुहूर्त कम दस वर्ष प्रमाण होता है । (७) घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है । (८) शेषकर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है ।

(१२) तदनन्तर क्रोधसंज्वलनकी दूसरी कृष्टिको प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है । उस समय क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका सत्कर्म दो समयकम दो आवलि प्रमाण नवकबन्ध शेष रहता है और जो उदयावलि प्रविष्ट द्रव्य है वह शेष रहता है । तथा उस समय यह क्षपक क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रहकृष्टिका वेदक होता है । सो इसकी विधि पहली संग्रहकृष्टिके वेदक जीवके समान जाननी चाहिये ।

अब यहाँ पर संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजकी विधिको बतलाते हुए लिखा है कि क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिमें और मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संक्रमित होता है । तथा क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें ही संक्रमित होता है ।

मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज मानकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टिमें तथा मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमिक होता है । मानकी दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज मानकी तीसरी और मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता हैं । तथा मानकी तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है ।

मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज मायाकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टिमें तथा लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है। मायाकी दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज मायाकी तीसरी और लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है। तथा मायाकी तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है।

लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज लोभकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंमें संक्रमित होता है। तथा लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है। लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज किसी अन्यमें संक्रमित न होकर उसका स्वमुखसे ही विनाश होता है।

यह संक्रमणकी परिपाटी क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदक कालके समय भी होती है ऐसा यहाँ जानना चाहिये। साथ ही यह भी एक नियम है कि जिस समय जिस कषायकी जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उस समय उस कषायकी उस संग्रह कृष्टिका बन्ध करता है तथा शेष कषायोंकी प्रथम संग्रहकृष्टिका बन्ध करता है।

क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिका वेदन करने वाले क्षपक जीवके जो ११ संग्रहकृष्टियाँ होती हैं उनमें अन्तर कृष्टियोंका अल्प बहुत्व किस प्रकार होता है इसे स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ सबसे थोड़ी होती हैं। मानकी दूसरी संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। मानकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। मायाकी दूसरी संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। मायाकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक होती हैं। क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिमें दूसरी अन्तर कृष्टियाँ संख्यातगुणी होती हैं। इनमें प्राप्त होनेवाले प्रदेशपुंजका अल्पबहुत्व भी इसी प्रकार जानना चाहिये।

क्रोधसंज्वलनका दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले जीवके जो प्रथम स्थिति होती है उसमें आवलि प्रत्यावलि प्रमाण काल शेष रहनेपर आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है। तथा उसकी एक समय अधिक प्रथम स्थितिके शेष रहने पर क्रोधकी द्वितीय कृष्टिका अन्तिम समयवृती वेदक होता है। उस समय संज्वलनोंका स्थितिबंध दो माह और कुछ कम बीस दिवस प्रमाण होता है। तीन घातिकर्मोंका स्थितिबंध बर्षपृथक्त्व प्रमाण होता है। शेष कर्मोंका स्थितिबंध संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है। संज्वलनोंका स्थिति सत्कर्म पाँच वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम चार माह प्रमाण होता है। तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है। नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है।

उसके बाद अनन्तर समयमें क्रोधकी तीसरी कृष्टिमें से प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। उस समय क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तर कृष्टियोंका असंख्यात बहुभाग उदीर्ण होता है। तथा उन्हींके असंख्यात बहुभागका बंध करता है। इसकी विधि दूसरी कृष्टिका वेदन करने वालेके समान जानना चाहिये। इसकी प्रथम स्थिति आवलि और प्रत्यावलि प्रमाण शेष रहनेपर वह अन्तिम समयवृती वेदक होता है। उस समय वह जघन्य स्थितिका उदीरक होता है। उस समय संज्वलनोंका स्थिति बन्ध पूरा दो माह प्रमाण होता है। तथा सत्कर्म पूरा चार माहप्रमाण होता है।

तदनन्तर समयमें मानकी प्रथम कृष्टिका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। यहाँपर मान वेदकका जो सम्पूर्ण काल है उस कालके तृतीय भाग प्रमाण प्रथम स्थिति होती है। उसके बाद मानकी प्रथम कृष्टिका वेदन करने वाला वह जीव उस प्रथमकृष्टिकी अन्तर कृष्टियोंके असंख्यात बहुभागका वेदन करता

है तथा जितनी कृष्टियोंका वेदन करता है उनसे कुछ हीन कृष्टियोंका बन्ध करता है। तथा शेष कषायोंकी प्रथम संग्रहकृष्टियोंका बन्ध करता है। इसकी विधि भी क्रोधकी प्रथम कृष्टिके समान जाननी चाहिये। इसकी प्रथम स्थिति जब एक समय अधिक एक आवलि प्रमाण शेष रह जाती है तब तीनों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध एक महीना और अन्तर्मुहूर्त कम बीस दिवस प्रमाण होता है। तथा स्थितिसत्कर्म तीन वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम चार माह प्रमाण होता है।

तदनन्तर समयमें मानकी दूसरी संग्रहकृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। इसकी भी विधि पूर्वके समान जानना चाहिये। जब कि इस प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है तब संज्वलनोंका स्थितिबन्ध एक माह और कुछ कम दस दिवस प्रमाण होता है। और सत्कर्म दो वर्ष तथा कुछ कम आठ माह प्रमाण होता है। उसी समय यह मानका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है। तब तीनों संज्वलनोंका स्थितिबंध पूरा एक माह प्रमाण होता है। तथा स्थिति सत्कर्म पूरा दो वर्ष प्रमाण होता है।

इसके बाद तदनन्तर समयमें मायाका प्रथम संग्रह कृष्टिके प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। इसकी प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक वही विधि जाननी चाहिये। उस समय दो संज्वलनोंका स्थितिबन्ध कुछ कम पचीस दिवस प्रमाण होता है। तथा स्थिति सत्कर्म एक वर्ष और कुछ कम आठ माह प्रमाण होता है।

तदनन्तर समयमें मायाकी दूसरी संग्रहकृष्टिका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। इसके एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक वही विधि जाननी चाहिये। उस समय इसका स्थितिबन्ध कुछ कम बीस दिवस प्रमाण होता है तथा स्थिति सत्कर्म कुछ कम सोलह माह प्रमाण होता है।

तदनन्तर मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। उसकी प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलिकाल शेष रहने तक पूर्ववत् विधि जाननी चाहिये। उस समय मायाका अन्तिम समय वेदक होता है। तब दो संज्वलनोंका स्थितिबंध पूरा आधा माहप्रमाण होता है तथा स्थिति सत्कर्म पूरा एक वर्ष प्रमाण होता। तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध माहपृथक्त्व प्रमाण होता है तथा उन्हींका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है। शेष कर्मोंका स्थिति सत्कर्म असंख्यात वर्ष प्रमाण होता है।

तदनन्तर समयमें लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमेंसे प्रदेश पुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। इसकी प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलिकाल शेष रहने तक वही विधि जाननी चाहिये। उस समय लोभ संज्वलनका स्थितिबंध अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है। तथा स्थितिसत्कर्म भी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है। इन घाति कर्मोंका स्थितिबंध दिवसपृथक्त्व प्रमाण होता है। शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध वर्षपृथक्त्व प्रमाण होता है। घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है तथा शेष कर्मोंका स्थिति-सत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है।

तदनन्तर समयमें लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टिमेंसे प्रदेश पुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थिति करता है। उसी समय लोभकी दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टियोंमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको करता है। उनको लोभकी तीसरी संग्रहकृष्टिके नीचे करता है तथा क्रोधकी प्रथम सग्रह-कृष्टि जिस प्रकारकी है उसी प्रकारकी इसे जानना चाहिये।

इसके बाद प्रथम समयमें की गई सूक्ष्मसाम्परागिक कृष्टियाँ कितनी होती हैं और प्रथमादि समयोंमें वे कितनी की जाती हैं' अल्पबहुत्वविधिसे इसका निर्देश करके उनमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजका निर्देश किया

गया है। आगे श्रेणिप्ररूपणाका कथन करते हुए बतलाया है कि अन्तिम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिसे बादरसाम्परायिक कृष्टिमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन होता है। उसके बाद सर्वत्र विशेष हीन द्रव्य देता है।

दूसरे समयोंमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको करनेवाला क्षपक असंख्यातगुणी हीन सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको करता है। उन्हें प्रथम समयमें की गई कृष्टियोंके नीचे करता है और अन्तरालमें करता है। नीचे की गई कृष्टियोंसे अन्तरालमें असंख्यातगुणी कृष्टियोंको करता है। जो दूसरे समयमें जघन्य सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि है उसमें बहुत प्रदेशपुंज देता है। दूसरी कृष्टिमें अनन्तभागहीन प्रदेशपुंज देता है। इस प्रकार जाकर प्रथम समयमें जो जघन्य सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि है उसमें असंख्यात भागहीन द्रव्यको देता है। उसके आगे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टिके प्राप्त होनेतक अनन्तभागहीन द्रव्य देता है। तथा निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टिमें असंख्यात भाग अधिक द्रव्य देता है। पहले निर्वर्तित कृष्टिमें प्रतिपद्यमान प्रदेशपुंज असंख्यात भागहीन होता है। आगे अनन्तभागहीन जानना चाहिये। दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी जो विधि बतलाई है वही विधि बादरसाम्परायिकके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक दिये जानेवाले द्रव्यकी सब समयोंमें जाननी चाहिये।

आगे इसके कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी प्ररूपणा आदि करके लोभकी अन्तिम बादरसाम्परायिक कृष्टिमेंसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें जो प्रदेशपुंज संक्रमित होता है वह सबसे थोड़ा है। लोभकी दूसरी कृष्टिमेंसे अन्तिम बादर साम्परायिक कृष्टिमें जो प्रदेशपुंज संक्रमित होता है वह संख्यातगुणा है। लोभकी दूसरी कृष्टिमेंसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है यह संख्यातगुणा है।

कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें क्रोधकी दूसरी कृष्टिमेंसे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह सबसे थोड़ा है। क्रोधकी तीसरी कृष्टिमेंसे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। मानकी प्रथम कृष्टिमेंसे मायाकी प्रथम कृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। मानकी दूसरी संग्रह कृष्टिमेंसे मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। मानकी तीसरी संग्रह कृष्टिमेंसे मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टियोंमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिमेंसे लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। मायाकी दूसरी संग्रह कृष्टिमेंसे लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिमेंसे लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। लोभकी ही प्रथम संग्रहकृष्टिमेंसे लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। लोभकी ही प्रथम संग्रह कृष्टिमेंसे उसीकी तीसरी संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक है। क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिमेंसे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह संख्यातगुणा है। क्रोधकी ही प्रथम संग्रह कृष्टिमेंसे क्रोधकी ही तीसरी संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह विशेष अधिक होता है। क्रोधकी ही प्रथम संग्रह कृष्टिमेंसे क्रोधकी ही दूसरी संग्रहकृष्टिमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह संख्यातगुणा होता है। यह प्रदेशसंक्रम यद्यपि पहले आ चुका है, परन्तु सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका आधार होनेसे यहाँ कहा गया है।

सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें प्रथम समयमें जो द्रव्य दिया जाता है वह सबसे थोड़ा है। दूसरे समयसे लेकर अन्तिम समय तक उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा द्रव्य दिया जाता है। इस क्रमसे लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपकके जब प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रह जाता है तब वह क्षपक अन्तिम समयवर्ती बादर साम्परायिक होता है। और उसी समय लोभकी अन्तिम समयवर्ती बादर साम्परायिक कृष्टि संक्रमित होती हुई संक्रमित हो जाती है। तथा लोभकी दूसरी

संग्रहकृष्टिके भी एक समय दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध और उदयावलिप्रविष्ट हुए द्रव्यको छोड़कर दूसरी संग्रहकृष्टिमें शेष सब अन्तरकृष्टियाँ संक्रमित होती हुई संक्रमित हो जाती हैं। उसी समय लोभसंज्वलनका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है। तीनघातिकर्मोंका स्थितिबन्ध दिन-रातके भीतर होता है। तथा नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका स्थितिबन्ध एक वर्षके भीतर होता है। अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिकके मोहनीयका स्थितिसत्कर्म अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है। तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है। तथा नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है।

तदनन्तर समयमें यह जीव सूक्ष्मसाम्परायिक हो जाता है। उसी समय सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंकी जो स्थितियाँ हैं उन्हें काण्डक घातके लिये ग्रहण करता है। अतः प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके उदयमें थोड़ा द्रव्य देता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त कालतक उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा देता है।

उस समय जो गुण श्रेणि निक्षेप करता है उसका काल सूक्ष्मसाम्परायिकके कालसे कुछ अधिक होता है। तथा गुणश्रेणिशीर्षसे जो अनन्तर स्थिति है उसमें असंख्यातगुणा द्रव्य देता है। उसके आगे, पूर्व समयमें अन्तर था उस अन्तरकी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होने तक विशेष ही द्रव्य देता है। उसके बाद पूर्वकी प्रथम स्थितिमें दिये जानेवाला द्रव्य संख्यातगुणा हीन होता है। उसके बाद क्रमसे विशेष हीन द्रव्य प्रत्येक स्थितिमें देता हुआ वहाँ तक देता जाता है जहाँ जाकर जो स्थिति प्राप्त होती है उससे आगे एक समय अधिक एक आवलि प्रमाण स्थिति शेष रह जाती है। अर्थात् अन्तिम जिस स्थितिके द्रव्यका अपकर्षण करता है उसमें नहीं देता और उससे नीचे अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण स्थितिमें नहीं देता। शेष सब स्थितियोंमें देता है। इस प्रकार प्रथम स्थितिकाण्डकके निर्लेपित होनेतक यही क्रम जानना चाहिये।

दूसरे स्थितिकाण्डकसे अपकर्षण करके जो प्रदेशपुंज उदयमें दिया जाता है वह सबसे थोड़ा होता है। इसके बाद गुणश्रेणीशीर्षसे उपरिम अनन्तर एक स्थितिके प्राप्त होनेतक असंख्यात गुणश्रेणीरूपसे प्रदेशपुंजको देता है। उसके बाद विशेषहीन क्रमसे देता है। यहाँसे लेकर सूक्ष्मसांपरायिक क्षपकके जबतब मोहनीय कर्मका स्थितिघात होता है तबतक यही क्रम जानना चाहिये। इसके बाद दिखाई देनेवाले प्रदेशपुंजकी प्ररूपणा करके सूक्ष्मसांपरायिक क्षपकके प्रथम स्थितिकांडकके प्रथम समयमें निर्लेपित होनेपर गुणश्रेणीको छोड़कर शेष स्थितियोंमें एक गोपुच्छा किस प्रकारसे हो गई है इसे स्पष्ट करते हुए अल्पबहुत्व द्वारा बतलाया है कि सूक्ष्मसाम्परायिकका काल सबसे थोड़ा है। उससे प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके मोहनीयका गुणश्रेणी निक्षेप विशेष अधिक है। उससे अन्तर स्थितियाँ संख्यातगुणी है। उससे सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके मोहनीयका प्रथम स्थितिकाण्डक संख्यात गुणा है। उससे प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके मोहनीयका स्थिति सत्कर्म संख्यात गुणा है।

इस प्रकार लोभकी दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपककी जो प्रथम स्थिति होती है उस प्रथम स्थितिका जब तीन आवलिप्रमाण काल शेष रहता है तबतक लोभकी दूसरी कृष्टिसे लोभकी तीसरी कृष्टिमें प्रदेशपुंज संक्रमित होता रहता है। उससे आगे संक्रमित नहीं होता किन्तु सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें समस्त प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

लोभ की दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके जो प्रथम स्थिति है उसमें एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल शेष रहनेपर उस समय जो लोभकी तीसरी कृष्टि है वह पूरी ही सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें संक्रमित हो जाती है। उस समय यह क्षपक जीव अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिक होकर मोहनीय कर्मका अन्तिम समयवर्ती बन्ध करनेवाला होता है।

तथा तदनन्तर समयमें यह क्षपक जीव प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक हो जाता है। उस समय सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके असंख्यात बहुभागकी उदीरणा करता है। आगे अल्पबहुत्वका कथन करते हुए

बतलाया है कि नीचेकी अनुदीर्ण हुई सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियाँ सबसे थोड़ी हैं। ऊपरकी अनुदीर्ण हुई सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं। मध्यमें उदीर्ण हुई सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियाँ असंख्यातगुणी है। इस प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके व्यतीत होनेपर मोहनीयका जो अन्तिम स्थितिकाण्डक है उसके उत्कीर्ण किये जानेपर मोहनीय कर्मका जो गुणश्रेणी निक्षेप है उसके अग्राग्रसे संख्यातवें भागको ग्रहण करता है। इस प्रकार उस स्थिति काण्डकके उत्कीर्ण होनेपर उसके बाद मोहनीय कर्मका स्थितिकाण्डकघात नहीं होता। तथा उस समय सूक्ष्मसाम्परायिक जितना काल शेष रहता है मोहनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म उतना ही शेष रहता है जो क्रमसे निर्जराका प्राप्त हो जाता है।

●

विषय-सूची

कृष्टिकरणद्धाकी प्ररूपणा १
क्रोधवेदगद्धाके तीन भाग करके क्रमसे उनकी प्ररूपणा १
प्रसंगसे अन्य स्थितिबन्ध आदिका निर्देश २
पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंसे कृष्टिकरण विधिका निर्देश ४
अवयव कृष्टियोंके प्रमाणका निर्देश ५
प्रथम समयमें रची गई कृष्टियोंकी तीव्र-मन्दता सम्बन्धी अल्पबहुत्वका निर्देश ५
संग्रह कृष्टियोंका निर्देश ८
कृष्टि अन्तरका निर्देश १०
इन दोनों कृष्टियोंके अल्पबहुत्वका निर्देश १२
प्रथम समय सम्बन्धी कृष्टियोंमें प्रदेशों सम्बन्धी श्रेणी प्ररूपणाका निर्देश २२
परंपरोपनिधाकी अपेक्षा श्रेणिप्ररूपणाका निर्देश २४
दृश्यमान द्रव्यकी अपेक्षा उक्त विषयका निर्देश २५
कृष्टि सम्बन्धी और स्पर्धक सम्बन्धी गोपुच्छा एक होती है या दो होती है इस विषयमें सम्प्रदाय भेदका निर्देश २५
दूसरे समयमें कितनी अपूर्व कृष्टियाँ की जाती हैं इसका निर्देश २५
एक-एक संग्रहकृष्टिके नीचे अपूर्व कृष्टियोंके किये जानेकी सूचना २६
दूसरे समयमें दीयमान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा का निर्देश २७
दूसरे समयमें दीयमान प्रदेशपुंजकी श्रेणि उत्कृष्टश्रेणिके समान होनेका निर्देश ३४
इस विधिसे सब समयोंमें तेईस उष्ट्रकूट श्रेणियाँ बन जानेका निर्देश ३५
प्रकृतमें दीयमान प्रदेशपुंजसे दृश्यमान प्रदेशपुंज कितना हीन होता है इसका निर्देश ३६
प्रकृतमें दीयमान प्रदेशपुंजके अल्पबहुत्वका निर्देश ३६
कृष्टिकरणके अन्तिम समयमें स्थितिबन्धका निर्देश ३६
प्रकृतमें स्थितिसत्कर्मका निर्देश ३७
कृष्टिकारक पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंका वेदन करता है इसका निर्देश ३७
प्रथम स्थितिमें एक आवलिकाल शेष रहनेपर कृष्टिकरणकाल समाप्तकर उसके अनन्तर समयमें कृष्टियोंको उदयावलिमें प्रवेश कराता है इसका निर्देश ३८
उस समय होनेवाले स्थितिबन्धका निर्देश ३९
प्रकृतमें क्रोधसंज्वलनके उदयावलि प्रविष्ट सत्कर्मके सर्वघाति होने का निर्देश ४०
उस समय संज्वलनोंके जो नवकबन्ध स्पर्धकगत देशघाति होते हैं उसका निर्देश ४०
इनके अतिरिक्त जो अनुभाग सत्कर्म शेष रहता है उसके दृष्टिगत होनेका निर्देश ४०
लम्बी क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके प्रथम स्थिति करनेका निर्देश ४१
इस समय क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका कितना भाग उदीर्ण होता है इसका निर्देश ४३
और कितना भाग बँधता है, इसका निर्देश ४३
उस समय इसकी दो संग्रह कृष्टियाँ न बंधती हैं और न वेदी जाती हैं इसका निर्देश ४४
आगे एतद्विषयक अल्पबहुत्वका निर्देश ४५
आगे कृष्टिवेदक कालको स्थगित करके एतद्विषयक गाथा सूत्रोंके निर्देशकी सूचना ४६
प्रथम मूलगाथाका निर्देश ४७
इसमें प्रतिपादित चार अर्थोंकी सूचनाके साथ तीन भाष्यगाथाओंके कहनेकी प्रतिज्ञा ४८
प्रथम भाष्यगाथा दो अर्थोंमें निबद्ध है इसकी सूचनाके साथ उसका निर्देश ४९
प्रत्येक कषायकी कुल संग्रह कृष्टियाँ और अन्तर कृष्टियाँ कितनी होती हैं इसका निर्देश ४९
क्रोधसे श्रेणि चढ़ने पर १२ संग्रह कृष्टियाँ होती हैं इसका निर्देश ५०
मानसे श्रेणि चढ़ने पर नौ संग्रह कृष्टियाँ होती हैं इसका निर्देश ५१

मायासे श्रेणि चढ़ने पर छह संग्रह कृष्टियाँ होती हैं इसका निर्देश ५१
लोभसे श्रेणिसे चढ़नेपर तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं इसका निर्देश ५१
एक-एक संग्रह कृष्टिकी अनन्त अवयव कृष्टियों के होनेका निर्देश ५२
कृष्टिकरणके कालमें अपकर्षणकरण होनेके नियमकी सूचक भाष्यगाथा ५४
एतद्विषयक विशेष खुलासा ५५
उपशामक लोभ वेदकके द्वितीय त्रिभागमें कृष्टियों को करता हुआ अपकर्षक ही होता है इसका निर्देश ५६
परन्तु गिरनेवाला अपकर्षक और उत्कर्षक दोनों होता है इसका निर्देश ५७
कृष्टिके लक्षणकी प्रतिपादन करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा द्वारा लक्षणका निर्देश ५८
स्पर्धकके लक्षणका निर्देश ५९
कृष्टिके लक्षणका निर्देश ६०
कृष्टिगत अनुभागके अल्प बहुत्वका निर्देश ६१
कृष्टिके निरुक्त्यर्थका निर्देश ६२
दूसरी मूल गाथाकी सूचनाके साथ उसमें प्रतिपादित अर्थका निर्देश ६२
इसमें आई हुई दो भाष्यगाथाओंकी सूचना ६३
मूल गाथाके पूर्वार्धमें निबद्ध प्रथम भाष्यगाथा द्वारा कितनी स्थितियों और अनुभागोंमें विवक्षित सभी कृष्टियाँ होती हैं इसका निर्देशपूर्वक खुलासा ६४
वेद्यमान संग्रह कृष्टिकी कितनी कृष्टियाँ उदय स्थितिमें होती हैं इसका निर्देश ६६
अवेद्यमानसंग्रहकृष्टिकी प्रत्येक कृष्टि किस स्थिति में रहती है और किसमें नहीं रहती इसका निर्देश ६६
अनुभागकी अपेक्षा प्रकृतमें विशेष विचार ६७
दूसरी भाष्यगाथा द्वारा वेद्यमान और अवेद्यमान संग्रहकृष्टि सम्बन्धी विशेष विचार ६८
तीसरी मूलगाथा द्वारा प्रदेशपुंज आदिकी अपेक्षा कृष्टियोंके हीनाधिकपनेकी सूचनाका निर्देश ७०
प्रदेशपुंजकी अपेक्षा पाँच भाष्यगाथाओंद्वारा मीमांसाका निर्देश ७१
अनुभागपुंजकी अपेक्षा एक भाष्यगाथाद्वारा मीमांसाका निर्देश ७२
कालकी अपेक्षा छह भाष्यगाथाओं द्वारा मीमांसाका निर्देश ७२
प्रकृतमें स्वस्थान और परस्थानकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा ७३
कौन संग्रह कृष्टि किससे प्रदेशपुंजकी अपेक्षा कितनी अधिक है इसका निर्देश करनेवाली दूसरी भाष्यगाथा ८१
संग्रहकृष्टियोंमें प्रदेशपुंज और अनुभागका तुलनात्मक विचार करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा ८३
आदिवर्गणामें शुद्ध शेषका विचार करनेवाली चौथी भाष्यगाथा ८६
इसी बातको परंपरोपनिधारूप श्रेणिकी अपेक्षा स्पष्ट करनेका निर्देश ८७
पूर्वमें जो क्रोधकी अपेक्षा कथन किया है वही कथन शेष कषायोंकी अपेक्षा जाननेकी सूचना करनेवाली पाँचवीं भाष्यगाथा ८८
मूलगाथाके 'अनुभागग्गेण' दूसरे पदके अनुसार क्रोधादि सम्बन्धी द्वितीयादिके अनुभागसे प्रथमादि संग्रह कृष्टियोंका अनुभाग अनन्तगुणा होता है इसका प्रतिपादन करनेवाली एक भाष्यगाथा ८९
मूल गाथाके तीसरे पदका 'च कालेण' के अनुसार कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें मोहनीय कर्मके स्थितिसत्त्वका विचार करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा ९३
क्षपक जिस कृष्टिको वेदता है उसका सान्तर यवमध्य सहित दोनों स्थितियोंमें अवस्थानकी सूचक दूसरी भाष्यगाथा ९८
चूर्णिसूत्रोंमें इसी विषयको अल्पबहुत्व द्वारा सूचित करनेका निर्देश १००
प्रकृतमें सान्तर यवमध्य किस प्रकार घटित होता है इसका निर्देश १०१
प्रकृतमें शुद्ध शेष असंख्यातवें भागका निर्देश करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा १०२
प्रथम स्थितिमें गुणश्रेणिका निर्देश करनेवाली चौथी भाष्यगाथा १०४
प्रथमादि समयोंमें उदयमें प्रवेश करनेवाला द्रव्य असंख्यात गुणित श्रेणीरूप होता है इसका निर्देश करनेवाली पाँचवीं भाष्यगाथा १०६

पश्चादानुपूर्वीसे कृष्टिवेदक कालका विचार करनेवाली छठी भाष्यगाथा १०९
किस गति आदि के पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके होते हैं इसका निर्देश करनेवाली चौथी मूलगाथा ११३
गति, इन्द्रिय और कायकी अपेक्षा प्रकृत विषयका विचार करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा ११५
कितने इन्द्रिय सम्बन्धी और कितने त्रससम्बन्धी भवों द्वारा अर्जित कार्य इस क्षपकके होते हैं इसका निर्देश करने वाली दूसरी भाष्य गाथा १२४
स्थिति, अनुभाग और कषायमेंसे किसकी अपेक्षा पूर्व बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं या नहीं हैं इसका विचार करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा १२६
अन्य मार्गणाओं आदिकी अपेक्षा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके होते हैं इसका निर्देश करनेवाली पाँचवीं मूल गाथा १२८
प्रकृतमें किस मार्गणा आदिमें बद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं और किस मार्गणा आदिमें बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं इसका विचार करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा १२९
योगोंकी अपेक्षा प्रकृत विषयका विचार करनेवाली दूसरी भाष्यगाथा १३२
ज्ञानोपयोगकी अपेक्षा प्रकृत विषयका विचार करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा १३३
दर्शनोपयोगकी अपेक्षा प्रकृत विषयका विचार करनेवाली चौथी भाष्यगाथा १३५
लेश्या, कर्म, काल और लिंग आदिकी अपेक्षा प्रकृत विषयका निर्देश करनेवाली छठी मूलगाथा १३६
लेश्या, साता, असाता और शिल्प कर्म आदिकी अपेक्षा प्रकृत विषयका विचार करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा १३७
इस क्षपकके ये पूर्व बद्ध कर्म सब स्थितियों आदिमें नियमसे पाये जाते हैं इसका निर्देश करनेवाली दूसरी भाष्यगाथा १४३
एक समय प्रबद्ध और भवबद्धकी अपेक्षा प्रकृत विषयका संकेत करनेवाली सातवीं मूलगाथा १४६
अन्तरकरणके बाद छह आवलियोंमें बद्ध प्रथम भाष्यगाथा १४८
नवकबन्धके संक्रमको किस विधिसे करता है इसका विचार करनेवाली दूसरी भाष्यगाथा १५३
इसी विषयको स्पष्ट करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा १५७
कौन समय प्रबद्ध इस क्षपकके असंक्षुब्ध रहते हैं इसका विचार करनेवाली चौथी भाष्यगाथा १५८
एक और नाना समय प्रबद्ध शेष और भवबद्ध शेष आदि इस क्षपकके पाये जाते हैं इसका संकेत करनेवाली आठवीं मूलगाथा १५९
जिस स्थिति विशेषमें और जिन अनुभागोंमें भवबद्ध शेष और समय बद्ध शेष होते हैं उसका निर्देश करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा १६२
उत्तर श्रेणिमें उक्त कर्म नियमसे पाये जाते हैं इसका निर्देश करनेवाली दूसरी भाष्यगाथा १६९
असामान्य कर्म सम्बन्धी विचार करनेवाली तीसरी भाष्यगाथा १७३
प्रकृतमें यवमध्य कहाँ होता है इसका निर्देश १७८
उत्कृष्ट अन्तरसे युक्त अन्तमें जो असामान्य स्थिति प्राप्त होती है उसके आश्रयसे विचार करनेवाली चौथी भाष्यगाथा १८४
यहाँ जिन चार भाष्य गाथाओंद्वारा क्षपकके आश्रयसे विचार किया है उनको अभव्योंके प्रायोग्य भी विवेचन करना चाहिये इस बातका निर्देश १८९
निर्लेपन स्थानोंकी प्ररूपणाके विषयमें दो उपदेशोंका निर्देश १९०
एक उपदेशके अनुसार निर्देश १९१

दूसरे उपदेशके अनुसार निर्देश १९२
प्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार निर्देश १९२
प्रकृतमें काल अल्पबहुत्वका निर्देश १९३
स्थानोंके असंख्यातवेंभागमें यवमध्य होता है इसका निर्देश १९५
नानाद्विगुणहानि आदि सम्बन्धी निर्देश १९५
एक स्थितिविशेष समयप्रबद्ध शेष व भवबद्ध शेष सम्बन्धी विचार १९७
प्रकृतमें यवमध्य सम्बन्धी विशेष सूचना १९८
दूसरी भाष्यगाथाके आधारसे ऊहापोह २००
तीसरी भाष्यगाथाके आधारसे ऊहापोह २०४
चौथी भाष्यगाथाके आधारसे ऊहापोह २०५
अभव्योंके योग्य अन्य प्ररूपणाका निर्देश २१०
क्षपक या अक्षपकके विवक्षित कर्मोंके निर्लेपन कालकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश २१८
एक समयके द्वारा निर्लेपित होनेवाले समयप्रबद्ध और भवबद्ध कम-अधिक कितने होते हैं इसका निर्देश २२४
इस विधिसे यवमध्यका निर्देश २२४
इस अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश २२४
इस अपेक्षा गुणहानि विचार २२६
अल्पबहुत्व २२६
वेदककालके प्रथम समयमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी अपेक्षा विचार करनेवाली नौवीं मूल गाथा २३१
वेदककालके प्रथम समयमें सब कर्मोंके स्थितिकर्म-का विचार करनेवाली प्रथम भाष्यगाथा २३३
उसी समय सातावेदनीय आदिके स्थिति और अनुभागबन्धका निर्देश करनेवाली दूसरी भाष्यगाथा २३४
कृष्टिवेदक सम्बन्धी दो मूलगाथाओंको स्थगित करके सर्वप्रथम कृष्टिवेदककी परिभाषारूप अर्थकी प्ररूपणा करनेकी प्रतिज्ञा २३७
कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें संज्वलन आदि किस कर्मका कितना स्थितिबन्ध और स्थिति सत्कर्म होता है इसका निर्देश २३८
कृष्टिवेदकके मोहनीयकी अनुसमय अपवर्तना किस विधिसे होती है इसका निर्देश २३९
आगे उसके क्रोध कृष्टिके बन्धोदय सम्बन्धी अल्पबहुत्वप्ररूपणा २४०
मान, माया और और लोभ संज्वलनकी अपेक्षा निर्देश २४४
क्रोधके सिवाय अन्य ११ संग्रह कृष्टियोंके सम्बन्धसे अपूर्व कृष्टियोंकी रचनाका निर्देश २४५
इन अपूर्व कृष्टियोंकी रचना किस अवकाशमें करता है इसका निर्देश २४८
कितने अन्तरके बाद अपूर्व कृष्टियोंकी रचना करता है इसका निर्देश २५०
बध्यमान प्रदेशपुंजकी निषेक प्ररूपणा २५२
संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे अपूर्व कृष्टियोंकी रचना दो अन्तरालोंमें करता है इसका निर्देश २५५
इन्हींके विषयमें विशेष खुलासा २५७
उन कृष्टि अन्तरोंकी संख्याका निर्देश २६२
प्रथमादि समयोंमें कितनी कृष्टियाँ विनष्ट होती हैं इसका निर्देश २६३
क्रोधका जघन्य स्थिति उदीरक कब होता है इसका निर्देश २६६
अनुभागसत्कर्मकी अनुसमय अपवर्तना सम्बन्धी निर्देश २६७
चार संज्वलनोंका स्थितिबन्ध और स्थिति सत्कर्म सम्बन्धी निर्देश २६७
शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म-सम्बन्धी निर्देश २६८
क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिकी प्रथम स्थिति करने-का विधान २६९
उस समय क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि कितनी शेष रहती है इसका निर्देश २६९
क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिके वेदककी विधिकी मीमांसा २७०
उस समय क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिके प्रदेश-पुंजका संक्रम किसमें होता है इसका निर्देश २७२
क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज किसमें संक्रमित होता है इसका निर्देश २७२
मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज किसमें संक्रमित होता है इसका निर्देश २७३

मानकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज किसमें संक्रमित होता है इसका निर्देश २७३
मानकी तीसरी संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज किसमें संक्रमित होता है इसका निर्देश २७३
मायाकी प्रथमादि संग्रह कृष्टियोंसे प्रदेशपुंज किसमें संक्रमित होता है इसका निर्देश २७३
क्रोधकी प्रथम और दूसरी संग्रह कृष्टियोंसे प्रदेशपुंज किसमें सक्रमित होता है इसका निर्देश २७४
क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिके समान जिस समय जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उस समय किसका बन्ध होता है एतद्विषयक प्ररूपणा २७४
११ संग्रहकृष्टियों सम्बन्धी अन्तरकृष्टियोंके अल्पबहुत्वका निर्देश २७६
प्रकृतमें प्रदेशपुंज विषयक अल्पबहुत्वका निर्देश २७८
क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टि विषयक अन्य प्ररूपणा २७९
उस समय संज्वलनोंके स्थितिबन्धका निर्देश २७९
उस समय शेष कर्मोंके स्थितिबन्धका निर्देश २८०
उक्त कर्मोंके स्थिति सत्कर्मका निर्देश २८०
क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिके वेदकभावकी प्ररूपणा आदि २८०
उस समय संज्वलन आदि सब कर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मका निर्देश २८२
मानकी प्रथम संग्रहकृष्टि विषयक विशेष प्ररूपणा २८३
प्रकृतमें उपस्थित शंका-समाधानका निर्देश २८४
उस समय शेष कषायोंके अनुभागबन्धकी प्रवृत्ति विषयक निर्देश २८६
मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिका किस प्रकार वेदन करता है इसका निर्देश २८६
प्रकृतमें अन्य आवश्यक प्ररूपणाका निर्देश २८७
जब मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी प्रथम स्थिति समयाधिक एक आवलि प्रमाण शेष रहती है तब सभी कर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म कितना होता है इसका निर्देश २८७
मानकी दूसरी संग्रहकृष्टि विषयक विशेष प्ररूपणा २८८
मानकी दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवालेके संज्वलनों स्थितिबंध और सत्त्व कितना होता है इसका निर्देश २८९
मानकी तीसरी कृष्टि विषयक विशेष प्ररूपणा २८९
उस समय तीन संज्वलनोंका स्थितिबन्ध और सत्त्व कितना होता है इसका निर्देश २९०
मायाकी प्रथम कृष्टिका प्रथम स्थितिकरण और वेदनका निर्देश २९०
उस समय दो संज्वलनोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका निर्देश २९०
मायाके दूसरे कृष्टिकरण और वेदनका निर्देश २९०
दोनों संज्वलनोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका निर्देश २९०
मायाके अन्तिम समय वेदनके दोनों संज्वलनोंके साथ शेष कर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका निर्देश २९१
लोभकी प्रथम कृष्टिकी प्रथम स्थितिकरण और वेदनका निर्देश २९२
उस समय लोभके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका निर्देश २९३
शेष कर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वका निर्देश २९४
लोभकी दूसरी कृष्टिका प्रथम स्थितिकरण और वेदनका निर्देश २९४
सूक्ष्मकृष्टिकरण विधिका निर्देश २९५
सूक्ष्म कृष्टियोंका अवस्थान कहाँ है इसका निर्देश २९६
सूक्ष्म कृष्टियोंके स्वरूपका निर्देश २९६
अन्तर कृष्टियोंके अल्प बहुत्वका निर्देश २९८
सूक्ष्म कृष्टियाँ किस समय कितनी की जाती हैं इसका निर्देश ३००
सूक्ष्म कृष्टियोंमें किस समय कितने प्रदेश दिये जाते हैं इसका निर्देश ३०१
सूक्ष्म कृष्टियोंकी श्रेणि प्ररूपणाका निर्देश ३०१
अन्तिम सूक्ष्म कृष्टिसे बादर कृष्टिमें कितना प्रदेश पुंज मिलता है इसका निर्देश ३०२

दूसरे समयमें की जानेवाली सूक्ष्म कृष्टियोंके प्रमाण और अवस्थानका निर्देश ३०३

तत्सम्बन्धी श्रेणिप्ररूपणाका निर्देश ३०३

तत्संबन्धी अल्पबहुत्व आदिका निर्देश ३०४

अन्य समयोंमें क्या विधि है इसका निर्देश ३०६

प्रकृतमें श्रेणिप्ररूपणाका निर्देश ३०७

सूक्ष्म कृष्टियोंकी रचना बादर कृष्टियोंके द्रव्यके संक्रमसे होती है इससे लेकर अल्प बहुत्व-का निर्देश ३०९

कब सक्ष्म कृष्टियोंमें कितना द्रव्य दिया जाता है इसका निर्देश ३१७

बादर साम्परायिकका अन्तिम समय क्या होनेपर प्राप्त होता है इसका निर्देश ३१७

उस समय लोभ आदि सब कर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थिति सत्त्वका निर्देश ३१८

उसके अनन्तर समयमें सूक्ष्मसाम्पराय होनेका निर्देश ३१९

तब स्थितिकाण्डकविधि और गुणश्रेणि रचनाके कालका निर्देश ३२०

गुणश्रेणिमें और अन्य स्थितियोंमें दिये जानेवाले द्रव्यका निर्देश ३२१

प्रथमादि समयोंमें श्रेणिप्ररूपणाके साथ अन्य कार्यका निर्देश ३२४

आगे गुणश्रेणिशीर्षके ऊपर एक स्थितिके प्राप्त होनेतक किस विधिसे द्रव्य दिया जाता है इसका निर्देश ३२८

उसके बाद विशेषहीन द्रव्य देता है इसका निर्देश ३२९

आगे मोहनीयकर्मका स्थितिघात होने तक यही क्रम चलता रहता है इसका निर्देश ३२९

प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके उत्कर्षण किये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणाका निर्देश ३३०

प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके उदयमें स्तोक प्रदेशपुंजका निर्देश ३३०

अन्तिम अन्तरस्थितिके प्राप्त होने तक विशेष-हीन द्रव्यका निर्देश ३३०

■

सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

कसायपाहुडं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

चारित्तमोक्खवणा णाम पंचदसमो अत्थाहियारो

□

* एत्तो से काले प्पहुडि किट्टीकरणद्धा ।

§ १. एत्तो अस्सकण्णकरणद्धासमत्तीदो उवरिमाणंतरसमयप्पहुडि किट्टीकरणद्धा होदि । तिस्से परूवणमिदाणिं कस्सामो त्ति वुत्तं होइ । संपहि एदिस्से अद्धाए पमाणावहारणट्ठमुत्तर-सुत्तावयारो—

* छसु कम्मेसु संतेसु संछुद्धेसु जा कोधवेदगद्धा तिस्से कोधवेदगद्धाए तिण्णि भागा । जो तत्थ पढमतिभागो अस्सकण्णकरणद्धा, विदियो तिभागो किट्टीकरणद्धा, तदियतिभागो किट्टीवेदगद्धा ।

§ २. पुरिसवेदचिराणसंतकम्मेण सह छसु कम्मेसु संछुद्धेसु तत्तो प्पहुडि उवरिमा कोधवेदगद्धा तिस्से तिसु भागेसु कदेसु तत्थ जो पढमतिभागो सो अस्सकण्णकरणद्धासरूवेण परूविदो, विदियतिभागो एसो किट्टीकरणद्धासरूवेण एण्हि पयट्टदे । तदियतिभागो वि उवरि

---

* यहाँसे आगे तदनन्तर समयसे लेकर कृष्टिकरण काल होता है ।

§ १. 'एत्तो' अर्थात् अश्वकर्णकरण कालके समाप्त होनेसे उपरिम अनन्तर समयसे लेकर कृष्टिकरण काल होता है । अत: इस समय उसकी प्ररूपणा करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इस कालके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

* छह नोकषायोंके संक्रमण होनेपर जो क्रोधवेदककाल है उस क्रोधवेदक कालके तीन भाग हैं । उनमें जो प्रथम त्रिभाग है वह अश्वकर्णकरणकाल है, दूसरा त्रिभाग कृष्टिकरणकाल है और तीसरा त्रिभाग कृष्टिवेदककाल है ।

§ २. पुरुषवेदके पुराने सत्कर्मके साथ छह कर्मोंके संक्रमित होनेपर उससे आगे जो क्रोध वेदककाल है उसके तीन भाग करनेपर उनमें जो प्रथम त्रिभाग है वह अश्वकर्णकरणकाल रूपसे कहा गया है, दूसरा त्रिभाग यह कृष्टिकरण काल रूपसे इस समय प्रवृत्त है तथा तीसरा त्रिभाग भी

किट्टीवेदगद्धासरूवेण पवत्तिहिदि त्ति सुत्तत्थसमुच्चओ। एवाओ तिण्णि वि अद्धाओ सरिसीओ ण होंति, किंतु पढमतिभागो बहुओ, विदियतिभागो विसेसहीणो, तदियतिभागो विसेसहीणो त्ति घेत्तव्वो।

§ ३. संपहि एवंविहाए किट्टीकरणद्धाए पढमसमए जो वावारविसेसो ट्ठिदिबंधादिविसओ तप्पदुप्पायणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* अस्सकण्णकरणे णिट्ठिदे तदो से काले अण्णो ट्ठिदिबंधो।

§ ४. अस्सकण्णकरणद्धाए चरिमसमए पुव्विल्लठिदिबंधे णिट्ठिदे तदो अण्णो ट्ठिदिबंधो तत्तो समयाविरोहेणोसरियूण किट्टीकारगपढमसमए बंधिदुमाढत्तो त्ति भणिदं होदि।

आगे कृष्टि वेदककाल रूपसे प्रवृत्त होगा यह इस सूत्रका समुच्चय रूप अर्थ है। ये तीनों ही काल सदृश नहीं हैं, किन्तु उनमेंसे प्रथम त्रिभाग बड़ा है, दूसरा त्रिभाग विशेषहीन है और तीसरा त्रिभाग विशेष हीन है। ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करनेके अनन्तर उनके अनुभागके नीचे उसे उत्तरोत्तर अनन्तगुणा-अनन्तगुणा हीन करके कृष्टिरूपसे कैसे परिणमाता है इस विषयपर सांगोपांग विचार किया जा रहा है। इस प्रसंगसे सर्वप्रथम यह जानना जरूरी है कि पूर्वस्पर्धक, अपूर्वस्पर्धक और कृष्टिकरण कहते किसे हैं। यह तो हम इसी ग्रन्थके भाग १३ में ही बतला आये हैं कि उपशम श्रेणिमें पूर्वस्पर्धकरूप रचना जो अनादि संसारसे लेकर होती आ रही है उससे नीचे यह अनिवृत्ति उपशमकजीव मात्र लोभ संज्वलनकी सूक्ष्म कृष्टिकरणकी क्रियाको ही सम्पन्न करता है। किन्तु यहाँ क्षपक श्रेणिमें यह जीव पूर्वस्पर्धकोंके नीचे अश्वकर्णकरणके कालमें चारों कषायोंके अपूर्व स्पर्धकोंकी रचना करता है और अश्वकर्णकरणका काल सम्पन्न होनेके अनन्तर समयसे लेकर कृष्टिकरणकी क्रिया सम्पन्न करता है। अतः यहाँ इनके लक्षणोंपर प्रकाश डाल देना आवश्यक प्रतीत होता है। यथा—

(१) अनादि संसार अवस्थासे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें अश्वकर्णकरण क्रियाके प्रारम्भ करनेके पूर्व तक यह जीव जो अनुभागस्पर्धकोंकी रचना करता है उन्हें पूर्वस्पर्धक कहते हैं।

(२) संसार अवस्थामें जो स्पर्धक कभी भी प्राप्त नहीं हुए, यहाँ तक कि जो स्पर्धक उपशम श्रेणिमें भी प्राप्त नहीं हुए, मात्र क्षपकश्रेणिमें ही अश्वकर्णकरणके कालमें पूर्वस्पर्धकोंमें-से उनके नीचे अनन्तगुणहानिरूपसे अपवर्तित होकर जिन स्पर्धकोंकी रचना यह जीव करता है उन्हें अपूर्व स्पर्धक कहते हैं।

(३) जिस प्रकार स्पर्धकोंमें अनुभागकी अपेक्षा क्रमवृद्धि और क्रमहानि होती है उस प्रकार जहाँ अनुभाग रचनामें क्रमवृद्धि और क्रमहानि नहीं पाई जाकर यथासम्भव क्रोधादि चारों संज्वलन कषायोंके पूर्व स्पर्धकों और अपूर्व स्पर्धकोंमें-से उनके नीचे प्रदेशपुंजका अपकर्षण कर उत्तरोत्तर अनन्तगुणित हानिरूपसे अनुभागकी रचना करना उसकी कृष्टिकरण संज्ञा है। यह कृष्टिकरण विधि अश्वकर्णकरण विधिके सम्पन्न होनेके अनन्तर समयसे प्रारम्भ होकर पूर्वोक्त कथनके अनुसार द्वितीय त्रिभागमें सम्पन्न होती है।

§ ३. अब इस प्रकारके कृष्टिकरणकालके प्रथम त्रिभागमें जो स्थितिबन्ध आदि विषयक व्यापार विशेष होता है उसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* अश्वकर्णकरणके समाप्त होनेपर उसके बाद अनन्तर समयमें अन्य स्थितिबन्ध होता है।

§ ४. अश्वकर्णकरणकालके अन्तिम समयमें पूर्वके स्थितिबन्धके समाप्त होनेपर उसके बाद अन्य स्थितिबन्ध उससे यथासमय कम होकर कृष्टिकरणके प्रथम समयमें बाँधनेके लिए ग्रहण करता

संजलणाणमेयट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तूणट्ठवस्समेत्तो। सेसाणं कम्माणं पुव्विल्लट्ठिदिबंधादो संखेज्ज-गुणहीणो। तप्पाओग्गसंखेज्जवस्ससहस्समेत्तो त्ति दट्ठव्वो।

※ अण्णमणुभागखंडयमस्सकण्णकरणेणेव आगाइदं।

§ ५. चदुण्हं संजलणाणमण्णमणुभागखंडयमेदम्मि समये आगाइज्जमाणमस्सकण्णाया-रेणेवागाइदं। तदो खंडयसरूवेणागाइदाणुभागो च लोभे थोवो होदूण मायादिपरिवाडीए जहाकममणंतगुणकमेण दट्ठव्वो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। णाणावरणादिकम्माणमणु-भागघादो पुण अस्सकण्णकरणविसेसेण विरहिदो पुव्वघादिदसेसाणुभागस्स अणंते भागे घेत्तूण पयट्टदि त्ति घेत्तव्वो, अस्सकण्णकरणणियमस्स चदुसंजलणेसु चेव पडिबद्धत्तादो।

※ अण्णं ट्ठिदिखंडयं चदुण्हं घादिकम्माणं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।

§ ६. कुदो? तेसिं संखेज्जवस्ससहस्सियट्ठिदिसंतकम्मादो संखेज्जगुणहाणीए पयट्टमाणस्स ट्ठिदिखंडयस्स तप्पमाणत्तविरोहादो।

※ णामागोदवेदणीयाणमसंखेज्जा भागा।

है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। संज्वलनोंका यह स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्ष प्रमाण होता है। शेष कर्मोंका पूर्वके स्थितिबन्धसे संख्यातगुणा होता है। अर्थात् शेष कर्मोंका तत्प्रायोग्य संख्यात हजार वर्षप्रमाण जानना चाहिए।

※ अन्य अनुभागकाण्डक अश्वकर्णकरणके आकाररूपसे ही ग्रहण किया है।

§ ५. इस समय चार संज्वलनोंके अन्य अनुभागकाण्डकको ग्रहण करते हुए अश्वकर्णकरण-के आकाररूपसे ही ग्रहण किया है, इसलिए काण्डकरूपसे ग्रहण किया गया अनुभाग लोभमें स्तोक होकर मायादिकी परिपाटीके अनुसार यथाक्रम उत्तरोत्तर अनन्तगुणित क्रमसे जानना चाहिए इस प्रकार यह यहाँ सूत्रका अर्थ है। पुनः ज्ञानावरणादि कर्मोंके अनुभागका घात अश्वकर्णकरण-विशेषसे रहित होकर पहले घात करनेसे जो अनुभाग शेष रहा है उसके अनन्त बहुभागको ग्रहण कर प्रवृत्त होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अश्वकर्णकरणका नियम चार संज्वलनोंमें ही प्रतिबद्ध है।

विशेषार्थ—उक्त सूत्र द्वारा चार संज्वलनोंका अनुभाग ही अश्वकर्णके आकाररूपसे घातके लिए ग्रहण किया जाता है यह स्पष्ट किया गया है, क्योंकि ज्ञानावरणादि कर्मोंका घात करनेके बाद जो अनुभाग शेष रहता है उसका अश्वकर्णकरणके आकाररूपसे रचना न होकर वह प्रति समय अनन्त बहुभागरूपसे घातके लिये प्रवृत्त होता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

※ चार घातिकर्मोंका संख्यात हजार वर्ष प्रमाण अन्य स्थितिकाण्डक होता है।

§ ६. क्योंकि उन कर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है, इसलिए प्रत्येक स्थितिकाण्डक संख्यातगुणी हानिरूपसे प्रवृत्त होता है ऐसा स्वीकार करनेपर उस स्थिति-सत्कर्मके तत्प्रमाण माननेमें विरोध आता है।

※ तथा नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका अन्य स्थितिकाण्डक असंख्यात बहुभागप्रमाण होता है।

---

१. आ. प्रतौ संजलणाण- इतः प्रभृति संखेजगुणहीणो इति यावत् सूत्ररूपेणोपलभ्यते।

§ ७. तिण्हमेदेसिमघादिकम्माणं ठिदिखंडयघादो तक्कालभाविओ पुव्वघादिदावसेसट्ठिदिसंतकम्मस्सासंखेज्जभागा त्ति घेत्तव्वो तेसिमसंखेज्जवस्सियट्ठिदिसंतविसये पयट्टमाणस्स तस्स तहाभावाविरोहादो। संपहि तत्थेव कोहादिसंजलणाणं किट्टीकरणमाढवेमाणो एदेण विहाणेणाढवेदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** पढमसमयकिट्टीकारगो कोधादो पुव्वफद्दएहिंतो च अपुव्वफद्दएहिंतो च पदेसग्गमोकड्डियूण कोहकिट्टीओ करेदि। माणादो ओकड्डियूण माणकिट्टीओ करेदि। मायादो ओकड्डियूण मायकिट्टीओ करेदि। लोभादो ओकड्डियूण लोभकिट्टीओ करेदि।**

§ ८. अपुव्वफद्दयकरणविसयवावारविसेसं सव्वमुवसंहरिय किट्टीकरणाहिमुहो होदूण तप्पारंभपढमसमये वट्टमाणो पढमसमयकिट्टीकारगो णाम। सो कोहादो पुव्वफद्दएहिंतो *अपुव्वफद्दएहिंतो च* पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डियूण अपुव्वफद्दयादिवग्गणादो हेट्ठा अणंतिमभागे कोहकिट्टीओ करेदि। एवं माण-माया-लोहादीणं पि अप्पप्पणो पदेसग्गमोकड्डियूण सगसगापुव्वफद्दयादिवग्गणाहिंतो हेट्ठा बादरकिट्टीओ करेदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। संपहि एवं कीरमाणाओ ताओ कोहादिसंजलणेसु पडिबद्धाओ किट्टीओ किंपमाणाओ त्ति आसंकाए तदियत्तावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** एदाओ सव्वाओ वि चउव्विहाओ किट्टीओ एयफद्दयवग्गणाणमणंतभागो पगणणादो।**

---

§ ७. इन तीन अघातिकर्मोंका तत्काल होनेवाला स्थितिकाण्डकघात पूर्वमें घात होनेसे शेष बचे स्थितिसत्कर्मके असंख्यात बहुभागप्रमाण होता है क्योंकि उनका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है, इसलिए उसके उस रूपसे प्रवृत्त होनेमें विरोधका अभाव है। अब वहीं क्रोधादि संज्वलनोंके कृष्टिकरणको आरम्भ करता हुआ इस विधिसे आरम्भ करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** प्रथम समयमें कृष्टिकारक जीव क्रोधसम्बन्धी पूर्वस्पर्धकों और अपूर्वस्पर्धकोंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके क्रोधकृष्टियोंको करता है। मानसंज्वलनसे अपकर्षण करके मानकृष्टियोंको करता है। मायासंज्वलनसे अपकर्षण करके मायाकृष्टियोंको करता है और लोभ संज्वलनसे अपकर्षित करके लोभकृष्टियोंको करता है**

§ ८. अपूर्वस्पर्धकके करने सम्बन्धी व्यापार विशेषका उपसंहार करके कृष्टिकरणके सम्मुख होकर उनके प्रारम्भ करनेके प्रथम समयमें विद्यमान यह जीव प्रथम समयवर्ती कृष्टिकारक संज्ञावाला होता है। वह क्रोधसम्बन्धी पूर्वस्पर्धकों और अपूर्वस्पर्धकोंसे प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके अपूर्वस्पर्धकोंकी आदि वर्गणासे नीचे अनन्तवें भागमें क्रोधकृष्टियोंको करता है। इसी प्रकार मान, माया और लोभसम्बन्धी भी अपने-अपने प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके अपने-अपने अपूर्वस्पर्धक सम्बन्धी वर्गणाओंसे नीचे बादर कृष्टियोंको करता है यह यहाँ इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब उन्हें इस प्रकार करता हुआ क्रोध आदि संज्वलनसे सम्बन्ध रखनेवाली वे कृष्टियाँ कितनी हैं ऐसी आशंका होनेपर उनके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** ये सभी चारों प्रकारकी कृष्टियाँ प्रकृष्ट गणनाकी अपेक्षा एक स्पर्धक सम्बन्धी वर्गणाओंके अनन्तवें भागप्रमाण होती हैं।**

§ ९. एदाओ अणंतरणिद्दिट्ठाओ सव्वाओ वि किट्टिओ होंदि कसायसंबंधेण चउव्विहत्तमुवगयाओ संगहकिट्टीभेदेण बारसधा पविभत्ताओ तदवयवकिट्टीगणणाए केत्तियाओ होंति त्ति भणिदे एयफद्दयवग्गणाणमणंतभागो पगणणादो त्ति तासिं पमाणणिद्देसो कदो।

१०. तत्थ एयफद्दयवग्गणाओ त्ति वुत्ते एगाणुभागफद्दयस्स अविभागपलिच्छेदुत्तरकमेण णिरंतरमुवलब्भमाणाओ पादेक्कमभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणमेत्तसरिसधणियपरमाणुसमूहारद्धाओ घेत्तव्वाओ। एदाओ पुण एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयसलागाहिंतो अणंतगुणाओ। कुदो एवं परिच्छिज्जदे ? अणंतरमेव परूविदतप्पडिबद्धप्पाबहुआदो। एवं च परिच्छिण्णपमाणाणमेयफद्दयवग्गणाणमणंतभागमेत्ताओ एदाओ सव्वाओ किट्टीओ होंति त्ति णिच्छयो कायव्वो, तप्पाओग्गाणंतरूवेहिं एयफद्दयवग्गणासु ओवट्टिदासु तप्पमाणागमणदंसणादो।

११. एवमेदेण सुत्तेण किट्टीणं पमाणावहारणं कादूण संपहि तासिं चेव सरूवविसेसावहारणट्ठं तिव्व-मंददाविसयमप्पाबहुअं परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

※ पढमसमए णिव्वत्तिदाणं किट्टीणं तिव्व-मंददाए अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो।

---

§ ९. अनन्तर निर्दिष्ट ये सब कृष्टियां कषायके सम्बन्धसे चार प्रकारकी होकर तथा संग्रह कृष्टियोंके भेदसे बारह भागोंमें विभक्त होकर उनसम्बन्धी अवयवकृष्टियां गणनाकी अपेक्षा कितनी होती हैं ऐसा कहनेपर प्रकृष्ट गणनाकी अपेक्षा एक स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाओंके अनन्तवें भागप्रमाण होती हैं इस प्रकार इस सूत्र द्वारा उनके प्रमाणका निर्देश किया गया है।

§ १०. वहां सूत्रमें 'एगफद्दयवग्गणाओ' ऐसा कहनेपर अनुभागसम्बन्धी एक स्पर्धकके एक-एक अविभागप्रतिच्छेदके वृद्धिक्रमसे निरन्तर प्राप्त होनेवाली तथा प्रत्येक अभव्योंसे अनन्तगुणे सदृश घनवाले परमाणु समूहसे आरम्भ की गयी वर्गणाएं ग्रहण करनी चाहिए। पुनः ये एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरप्रमाण स्पर्धकशलाकाओंसेअनन्तगुणी होती हैं।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—अनन्तर ही कहे गये उससे सम्बन्ध रखनेवाले अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

और इस प्रकार प्रत्येक वर्गणाके प्रमाणको जानकर एक स्पर्धकसम्बन्धी इनके अनन्तवें भागप्रमाण ये सब कृष्टियां होती हैं ऐसा निश्चय करना चाहिए, क्योंकि तत्प्रायोग्य अनन्त संख्यासे एक स्पर्धकसम्बन्धी वर्गणाओंके भाजित करनेपर उन कृष्टियोंके प्रमाणका आगमन देखा जाता है।

विशेषार्थ—जैसा कि टीकामें स्पष्ट किया गया है यह कृष्टिकरणकी प्रक्रिया मात्र चार संज्वलनोंकी ही होती है, सत्तामें स्थित शेष कर्मोंकी नहीं। चार संज्वलनोंकी होती हुई भी अपूर्व स्पर्धकोंमें जो सबसे जघन्य स्पर्धक है और उसकी जितनी वर्गणाएँ हैं उनके मात्र अनन्तवें भागप्रमाण होकर भी ये सब कृष्टियाँ सबसे जघन्य वर्गणाके नीचे रची जाती हैं। इस प्रकार रची गयीं ये सब कृष्टियां संग्रह कृष्टि और अन्तर कृष्टिके भेदसे दो भागोंमें विभक्त होकर नामानुरूप ही इनके लक्षण हे। क्रोधादि प्रत्येक संज्वलन कषायकी ३-३ संग्रह कृष्टियां होती हैं और एक-एक संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियां अनन्त होती हैं। यहां एक कृष्टिसे दूसरी कृष्टिका जो गुणकार है, उसकी कृष्टि अन्तर संज्ञा है और एक संग्रह कृष्टिसे दूसरी संग्रहकृष्टिके मध्य जो गुणकार है उसकी संग्रहकृष्टि अन्तर संज्ञा है इतना विशेष जानना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

§ ११. इस प्रकार इस सूत्रके द्वारा कृष्टियोंके प्रमाणका निश्चय करके अब उनके ही स्वरूप विशेषका अवधारण करनेके लिए तीव्रता और मन्दता विषयक अल्पबहुत्वका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

※ अब प्रथम समयमें निष्पन्न हुई कृष्टियोंके तीव्रता-मन्दता विषयक अल्पबहुत्वको कहेंगे।

§ १२. सुगममेदं पयदप्पाबहुअपरूवणाविसयं पइण्णासुत्तं ।

* तं जहा ।

§ १३. सुगममेदं पि पुच्छावक्कं। एत्थ ताव कोहादिसंजलणकिट्टीओ पादेक्कं तीहिं पविभागेहिं रचेदव्वाओ । एवं रचणाए कदाए एक्केक्कस्स कसायस्स तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ होदूण सव्वसमासेण बारह संगहकिट्टीओ । तत्थ सव्वहेट्ठिमा लोभस्स पढमसंगहकिट्टी णाम । तिस्से अवांतरकिट्टीओ अणंताओ जादाओ । तत्तो उवरिमा लोभस्स चेव विदियसंगहकिट्टी णाम । तिस्से वि पमाणं पुव्वं व वत्तव्वं । एवं सेस-संगहकिट्टीणं पि समयाविरोहेण विण्णासो कायव्वो जाव कोहस्स चरिमसंगहकिट्टि त्ति । एवमेदासिं किट्टीणं रचणं कादूण संपहि तिव्वमंददाए अप्पाबहुअं सुत्ताणुसारेण वत्तइस्सामो ।

* लोहस्स जहण्णिया किट्टी थोवा ।

§ १४. कुदो सव्वमंदाणुभागेण परिणदत्तादो ।

* विदिया किट्टी अणंतगुणा ।

§ १५. कोगुणगारो ? अभवसिद्धिएहिं अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो । एवमुवरि वि सव्वत्थ गुणगारपरूवणा कायव्वा ।

* एवमणंतगुणाए सेढीए जाव पढमाए संगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति ।

§ १६. एवमेदेण विहाणेण लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए अवयवकिट्टीसु चरिमकिट्टीपज्जंतासु अणंतगुणाए सेढीए अप्पाबहुअमेदं णेदव्वमिदि वुत्तं होइ । णवरि सव्वत्थ हेट्ठिमहेट्ठिमगुणगारादो

---

§ १२. प्रकृत अल्पबहुत्वका प्ररूपणाविषयक यह अल्पबहुत्व सम्बन्धी प्रतिज्ञावचन सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ १३. यह पृच्छासूत्र भी सुगम है । यहाँ सर्वप्रथम क्रोधादि संज्वलनों सम्बन्धी कृष्टियोंमेंसे प्रत्येककी तीन भागोंमें रचना करनी चाहिए । इस प्रकार रचना करनेपर एक-एक कषायकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होकर सबका योग बारह संग्रह कृष्टियाँ हो जाता है । उनमेंसे सबसे नीचे लोभ संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टि है । उसकी अवान्तर कृष्टियाँ अनन्त हैं । उससे ऊपर लोभकी ही दूसरी संग्रह कृष्टि है । उसका भी प्रमाण पहलेके समान कहना चाहिए । इसी प्रकार शेष संग्रह कृष्टियोंकी भी क्रोधसंज्वलनकी अन्तिम संग्रह कृष्टिके प्राप्त होने तक यथागम रचना करनी चाहिए । अब सूत्रके अनुसार तीव्रता-मन्दतासम्बन्धी अल्पबहुत्वको बतलायेंगे—

* लोभकी जघन्य कृष्टि सबसे स्तोक है ।

§ १४. क्योंकि वह सबसे मन्द अनुभागसे परिणत होती है ।

* उससे दूसरी कृष्टि अनन्तगुणी है ।

§ १५. गुणकार कितना है ? अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार आगे भी सर्वत्र गुणकारकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

* इस प्रकार अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि तक जानना चाहिए ।

§ १६. इस प्रकार इस विधिसे लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टि सम्बन्धी अन्तिम कृष्टि पर्यन्त अवयवकृष्टियोंमें अनन्त गुणित श्रेणिरूपसे यह अल्पबहुत्व होता है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

उवरिमउवरिमकिट्टीगुणगारो अणंतगुणो त्ति वत्तव्वो। कुदो एदं परिच्छिज्जदे? उवरि भणिस्समाणकिट्टीअप्पाबहुआदो।

*** तदो विदियाए संगहकिट्टीए जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा।**

§ १७. तदो लोभपढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टीदो तस्सेव विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टी अणंतगुणा त्ति भणिदं होदि। केम्महंतो एत्थ गुणगारो त्ति आसंकाए इदमाह—

*** एस गुणगारो बारसण्हं पि संगहकिट्टीणं सत्थाणगुणगारेहिं अणंतगुणो।**

§ १८. जेण गुणगारेण लोभपढमसंगहकिट्टीचरिमकिट्टीए गुणिदाए लोभस्स विदियसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टी समुप्पज्जदि सो परत्थाणगुणगारो त्ति भण्णदे, संगहकिट्टीभेदप्पणादो एसो बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमवयवकिट्टीसु पडिबद्धसत्थाणगुणगारेहिं सव्वेहिंतो वि अणंतगुणो, कोहतदियसंगहकिट्टिचरिमसत्थाणगुणगारादो वि एदस्साणंतगुणत्तदंसणादो। अदो चेव संगहकिट्टीभेदो वि ण विरुज्झदे, गुणगारमाहप्पमस्सियूण तदुववत्तीदो। एत्तो उवरि लोभविदियसंगहकिट्टीए अवयवकिट्टीसु[2] सत्थाणगुणगारेणाणंतगुणत्तं पढमसंगहकिट्टीभंगेण णेदव्वमिदि पदुप्पायणफलमुत्तरसुत्तं—

*** विदियाए संगहकिट्टीए सो चेव कमो जो पढमाए संगहकिट्टीए।**

§ १९. गयत्थमेदं सुत्तं।

इतनी विशेषता है कि नीचे-नीचेके गुणकारसे उपरिम-उपरिम कृष्टियोंका गुणकार अनन्तगुणा होता है ऐसा कहना चाहिए।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आगे कहे जानेवाले कृष्टिसम्बन्धी अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

*** उससे दूसरी संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है।**

§ १७. उससे अर्थात् लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तिम कृष्टिसे उसीकी दूसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी प्रथम कृष्टि अनन्तगुणी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर गुणकार कितना बड़ा है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

*** यह गुणकार बारहों संग्रह कृष्टियोंके स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा है।**

§ १८. जिस गुणकारसे लोभ संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिके गुणित करनेपर लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टि उत्पन्न होती है उसे परस्थान गुणकार कहते हैं, क्योंकि संग्रह कृष्टियोंकी भेद विवक्षासे यह गुणकार बारहों संग्रह कृष्टियोंसम्बन्धी अवयव कृष्टियोंमें प्रतिबद्ध स्वस्थान गुणकारोंकी अपेक्षा सभीसे अनन्तगुणा होता है। कारण कि क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिके अन्तिम स्वस्थान गुणकारसे भी यह गुणकार अनन्तगुणा देखा जाता है और इसीलिए संग्रह कृष्टिसम्बन्धी भेद भी विरोधको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि गुणकारके माहात्म्यका आश्रय करके उसकी उत्पत्ति होती है। इससे आगे लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिका गुणकार अवयव कृष्टियोंमें स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणापना प्रथम संग्रह कृष्टिके समान जानना चाहिए इस प्रकार इस कथनके फलस्वरूप आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** दूसरी संग्रह कृष्टिमें वही क्रम है जो प्रथम संग्रह कृष्टिमें स्वीकार किया गया है।**

§ १९. यह सूत्र गतार्थ है।

---

१. आ. प्रतौ एत्थ इति पाठः। २. ता. आ. प्रत्योः अवयवसंगहकिट्टीसु इति पाठः।

* तदो पुण विदियाए च तदियाए च संगहकिट्टीणमंतरं तारिसं चेव ।

§ २०. जारिसं पढम-विदियसंगहकिट्टीणमंतरं तारिसं चेव विदिय-तदियसंगहकिट्टीणं पि अंतरमवहारेयव्वं, परत्थाणगुणगारमाहप्पेणेदस्स वि पुव्वुत्तरासेससत्थाणगुणगारेहिंतो अणंतगुणत्तं पडि तत्तो भेदाभावादो। णवरि पुव्विल्लादो संगहकिट्टीअंतरादो एदमंतरमणंतगुणमिदि उवरिमपरूवणादो णिण्णयो कायव्वो। एत्थ गुणगारो चेव अंतरमिदि घेत्तव्वं, किट्टीगुणगारस्सेव किट्टीअंतरत्तेण विवक्खियत्तादो। एत्तो उवरि लोभस्स तदियसंगहकिट्टीए अवयवकिट्टीणं सत्थाणगुणगाराणुसारेण पुव्वं व पयदप्पाबहुअजोयणा कायव्वा, विसेसाभावादो।

* एवमेदाओ लोभस्स तिण्णि संगहकिट्टीओ ।

§ २१. णेदं सुत्तमाढवेयव्वं, अणुत्तसिद्धत्तादो त्ति णासंका कायव्वा, संगहकिट्टीविसए अगहिदसंकेदाणं सिस्साणं तव्विसयणिच्छयउप्पायणट्ठमोइण्णस्सेदस्स सुत्तस्स सयलत्तोवलंभादो।

* लोभस्स तदियाए संगहकिट्टीए जा चरिमा किट्टी तदो मायाए जहण्णकिट्टी अणंतगुणा ।

§ २२. एत्थ गुणगारो सत्थाणगुणगारेहिंतो सव्वेहिंतो अणंतगुणो परत्थाणगुणगारो।

* मायाए वि तेणेव कमेण तिण्णि संगहकिट्टीओ ।

---

* पुनः इससे आगे दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंका अन्तर वैसा ही है ।

§ २०. जैसा प्रथम और द्वितीय संग्रह कृष्टियोंका अन्तर है वैसा ही दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंका भी अन्तर है ऐसा निश्चय करना चाहिए, क्योंकि परस्थान गुणकारके माहात्म्यवश यह भी पूर्व और उत्तर समस्त स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा है इस अपेक्षा उससे इसमें कोई भेद नहीं है। इतनी विशेषता है कि पूर्वके संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तरकी अपेक्षा यह अन्तर अनन्तगुणा है इस प्रकार इसका उपरिम प्ररूपणासे निर्णय करना चाहिए। यहाँ गुणकार ही अन्तर है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि प्रकृतमें कृष्टि गुणकार ही कृष्टि अन्तररूपसे विवक्षित है। इससे आगे लोभकी तृतीय संग्रह कृष्टिसम्बन्धी गुणकारको, अवयव कृष्टियोंके स्वस्थान गुणकारके अनुसार, पहलेके समान प्रकृत अल्पबहुत्वकी योजना करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

* इस प्रकार ये लोभकी तीन संग्रह कृष्टियाँ हैं।

§ २१. शंका—इस सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए, क्योंकि बिना कहे ही इसकी सिद्धि हो जाती है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि जिन शिष्योंने संग्रह कृष्टियोंके विषयमें संकेत ग्रहण नहीं किया है उनको एतद्विषयक निश्चय उत्पन्न करके लिए आये हुए इस सूत्रकी सफलता उपलब्ध होती है।

* लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी जो अन्तिम कृष्टि है उससे मायाकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है।

§ २२. यहाँपर गुणकार सभी स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा परस्थान गुणकार है। आशय यह है कि यह परस्थान गुणकार है, इसलिए सभी स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा है।

** मायाकी भी उसी क्रमसे तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।*

§ २३ जहा लोभस्स तिण्हं संगहकिट्टीणमप्पाबहुअपरूवणा कदा तहा मायाए वि तिण्हं संगहकिट्टीणं पयदप्पाबहुअजोयणा कायव्वा त्ति वुत्तं होइ। सेसं सुगमं।

*** मायाए जा तदिया संगहकिट्टी तिस्से चरिमादो किट्टीदो माणस्स जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा।**

§ २४. परत्थाणगुणगारमाहप्पमेत्थ वि पुव्वं व वट्टव्वं।

*** माणस्स वि तेणेव कमेण तिण्णि संगहकिट्टीओ।**

*** माणस्स जा तदिया संगहकिट्टी तिस्से चरिमादो किट्टीदो कोधस्स जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा।**

*** कोहस्स वि तेणेव कमेण तिण्णि संगहकिट्टीओ।**

§ २५. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि।

*** कोधस्स तदियाए संगहकिट्टीए जा चरिमकिट्टी तदो लोभस्स अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणा अणंतगुणा।**

§ २६. कुदो ? किट्टीगदाणुभागादो फद्दयगदाणुभागस्साणंतगुणत्तसिद्धीए बाहाणुवलंभादो।

---

§ २३. जिस प्रकार लोभकी तीन संग्रह कृष्टियोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार मायाकी भी तीन संग्रह कृष्टियोंके भी प्रकृत अल्पबहुत्वकी योजना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष कथन सुगम है।

*** मायाकी जो तीसरी संग्रह कृष्टि है उसकी अन्तिम कृष्टिसे मानकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है।**

§ २४. परस्थान गुणकारके माहात्म्यका यहाँ भी पहलेके समान कथन जानना चाहिए।

*** मानकी भी उसी क्रमसे तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।**

*** मानकी जो तीसरी संग्रह कृष्टि है उसकी अन्तिम कृष्टिसे क्रोधकी जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी है।**

*** क्रोधकी भी उसी क्रमसे तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।**

§ २५. ये सूत्र सुगम हैं।

*** क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी जो अन्तिम कृष्टि है उससे लोभके अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणा अनन्तगुणी है।**

§ २६. क्योंकि कृष्टिगत अनुभागसे स्पर्धकगत अनुभाग अनन्तगुणा है ऐसा सिद्ध होनेमें बाधा नहीं पायी जाती।

विशेषार्थ—पूर्वमें जिन क्रोधादि कषाय सम्बन्धी १२ संग्रह कृष्टियों और उनमेंसे प्रत्येककी अनन्त अवान्तर या अवयव कृष्टियोंका निर्देश कर आये हैं उनमेंसे प्रत्येक कृष्टि किस अनुभागस्वरूप होती है, क्या उनमेंसे प्रत्येकको सदृश अनुभाग प्राप्त होता है या न्यूनाधिक अनुभागरूपसे उनकी रचना होती है इसी शंकाके उत्तरस्वरूप यहाँ अनुभागकी अपेक्षा तीव्र-मन्दताका निर्देश करते हुए बतलाया गया है कि सबसे नीचे लोभ संज्वलनसम्बन्धी प्रथम संग्रह कृष्टिकी जो सबसे जघन्य अवान्तर कृष्टि है उसमें प्राप्त हुआ अनुभाग सबसे स्तोक होता है। उससे दूसरी कृष्टि अनन्तगुणे अनुभागस्वरूप होती है। यहाँ गुणकार अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें

§ २७. एवमेत्तिएण पबंधेण बारसण्हं पि संगहकिट्टीणं तदवयवकिट्टीणं च तिव्व-मंददाए अप्पाबहुअं परूविय संपहि एदस्सेव थोवबहुत्तस्स फुडीकरणट्ठं किट्टीअंतराणमप्पाबहुअं परूवेमाणो उवरिमं पबंधमाढवेइ—

* किट्टीअंतराणमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो ।

§ २८. एत्थ किट्टीअंतराणि त्ति वुत्ते किट्टीगुणगारा घेत्तव्वा, किट्टीगुणगारस्सेव तदंतरत्तेण विवक्खियत्तादो। तेसिं किट्टीअंतराणमप्पाबहुअमेत्तो भणिस्सामो त्ति वुत्तं होइ। ताणि पुण किट्टीअंतराणि दुविहाणि—सत्थाण-परत्थाणगुणगारभेदेण । तत्थ सत्थाणगुणगारस्स किट्टीअंतरमिदि सण्णा। परत्थाणगुणगाराणं संगहकिट्टीणं अंतराणि त्ति सण्णा। एसो च सण्णाभेदो जाव ण जाणाविदो ताव किट्टीअंतराणमिदमप्पाबहुअं परूविज्जमाणं सुहावगम्मं ण होदि त्ति तदुभयसण्णाभेदमेव ताव परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

भाग प्रमाण है। इसका भाव यह है कि उक्त जघन्य कृष्टिको अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण गुणकारसे गुणित करनेपर दूसरी कृष्टि उत्पन्न होती है। जो यह गुणकार है उसे ही यहाँ अन्तर कहा गया है यह इसका आशय है। पुनः इस दूसरी कृष्टिसे तीसरी कृष्टि अनन्तगुणी है। यहाँ गुणकारका प्रमाण पूर्वके गुणकारसे अनन्तगुणा है। पुनः इस तीसरी कृष्टिसे चौथी कृष्टि अनन्तगुणी है। यहाँका गुणकार भी पूर्वके गुणकारसे अनन्तगुणा है। इस प्रकार इस विधिसे लोभ संज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक इस अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिए। यहाँपर प्रथम और द्वितीय संग्रह कृष्टियोंका अन्तररूप परस्थान गुणकार सब अन्तर कृष्टियोंके स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा है, इसलिए उसे उल्लंघनकर दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम अन्तर कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर अपनी दूसरी कृष्टिको प्राप्त होती है वह गुणकार अनन्तगुणा है। यह प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिसे अनन्तगुणा है। आगे इस दूसरी अन्तर कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करनेपर तीसरी कृष्टि प्राप्त होती है वह गुणकार भी पूर्वके गुणकारसे अनन्तगुणा है। यह एक क्रम है जिसके अनुसार आगे क्रोध संज्वलनकी तीसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक सर्वत्र उक्त विधिसे तीव्र-मन्दता जान लेनी चाहिए। पुनः इससे आगे अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणा अनन्तगुणी होती है। यह गुणकार भी पूर्वके गुणकारसे अनन्तगुणा है ऐसा जानना चाहिए।

§ २७. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा बारहों संग्रह कृष्टियोंकी और उनकी अवयव कृष्टियोंकी तीव्रता-मन्दताविषयक अल्पबहुत्वका कथन करके अब इसी अल्पबहुत्वका स्पष्टीकरण करनेके लिए कृष्टियोंके अन्तरोंके अल्पबहुत्वका कथन करते हुए आगेके प्रबन्धको प्रारम्भ करते हैं—

*** अब कृष्टियोंके अन्तरसम्बन्धी अल्पबहुत्वको बतलावेंगे ।**

§ २८. यहाँ सूत्रमें 'किट्टीअन्तराणि' ऐसा कहनेपर कृष्टियोंका गुणकार ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि कृष्टियोंका गुणकार ही उनके अन्तररूपसे विवक्षित है। कृष्टियोंके उन अन्तरोंके अल्पबहुत्वको आगे कहेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु वे कृष्टि अन्तर स्वस्थानअन्तर और परस्थानअन्तरके भेदसे दो प्रकारके हैं। उनमेंसे स्वस्थान गुणकारकी कृष्टि अन्तर यह संज्ञा है और परस्थान गुणकारोंकी संग्रह कृष्टि अन्तर यह संज्ञा है। इस प्रकार इस संज्ञाभेदका जब तक ज्ञान नहीं कराया जाता तब तक कृष्टि अन्तरोंके इस अल्पबहुत्वका कथन करनेपर सुखपूर्वक ज्ञान नहीं होता, इसलिए सर्वप्रथम उन दोनों संज्ञाओंमें क्या भेद (अन्तर) है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अप्पाबहुअस्स लहुआलावसंखेवपदत्थसण्णाणिक्खेवो ताव कायव्वो ।

§ २९. पयदप्पाबहुअस्स बहुवित्थरपरिहारेण लहुआलावसंखेवविहाणट्ठमेसो ताव पयदत्थस्स सण्णाविसेसणिक्खेवो कायव्वो, अण्णहा एदस्सप्पाबहुअस्स संखेवेण परूवणोवायाभावादो त्ति भणिदं होइ । एवमेदं पइण्णाय संपहि तं चेव सण्णाभेदं परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* तं जहा ।

§ ३०. सुगमं ।

* एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अणंताओ किट्टीओ । तासिं अंतराणि वि अणंताणि । तेसिमंतराणं सण्णा किट्टी-अंतराइ णाम । संगहकिट्टीए च संगहकिट्टीए च अंतराणि एक्कारस । तेसिं सण्णा संगहकिट्टीअंतराइ णाम ।

§ ३१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एक्केक्कस्स कसायस्स तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ होदूण बारस संगहकिट्टीओ भवंति । तासिमेक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अवंतरकिट्टीओ अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणसिद्धाणंतभागमेत्तीओ भवंति । तासिमंतराणि वि अणंताणि चेव, किट्टीगणणाए चेव रूवूणाए तासिमंतरभावेण समुवलंभादो । तदंतरुप्पत्तिणिमित्तगुणगारा वि अंतराणि त्ति भण्णंते, कारणे कज्जुवयारादो । तेसिमेत्थ गहणं कायव्वं । तदो तेसिमंतराणं गुणगारसरूवाणं किट्टीअंतराणि त्ति सण्णा । पुणो संगहकिट्टीए च संगहकिट्टीए च हेट्ठिमोवरिमाए जाणि अंतराणि एक्कारससंखाविसेसिदाणि तेसिं सण्णा संगहकिट्टीअंतराणि त्ति । एत्थ वि पुव्वं व तप्पडिबद्धगुणगाराणं चेव संगहो कायव्वो । तदो

---

* सर्वप्रथम अल्पबहुत्वके लघु आलापरूप संक्षेप पदोंके अर्थसम्बन्धी संज्ञाओंका निक्षेप करना चाहिए ।

§ २९. प्रकृत अल्पबहुत्वके बहु विस्तारके परिहार द्वारा लघु आलापका संक्षेपसे कथन करनेके लिए सर्वप्रथम प्रकृत अर्थसम्बन्धी संज्ञाओंमें जो भेद है उसका यह निक्षेप करना चाहिए, अन्यथा इस अल्पबहुत्वका संक्षेपसे कथन करनेका दूसरा कोई उपाय नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार इसकी प्रतिज्ञा करके अब इसी संज्ञाभेदका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* वह जैसे ।

§ ३०. यह सूत्र सुगम है ।

* एक-एक संग्रह कृष्टिकी अनन्त कृष्टियाँ हैं तथा उनके अन्तर भी अनन्त हैं । उन अन्तरोंकी कृष्टि अन्तर संज्ञा है और संग्रहकृष्टि संग्रहकृष्टिके अन्तर ग्यारह हैं । उनकी संग्रहकृष्टि अन्तर संज्ञा है ।

§ ३१. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—एक-एक कषायकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होकर बारह संग्रह कृष्टियाँ होती हैं । उनमेंसे एक-एक संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण होती हैं तथा उनके अन्तर भी अनन्त होते हैं, क्योंकि कृष्टियोंकी गणनामेंसे एक कम करनेपर उनके अन्तर उपलब्ध हो जाते हैं । अतः उन कृष्टियोंके अन्तरोंकी उत्पत्तिके निमित्तभूत गुणकार भी अनन्त कहे जाते हैं, क्योंकि यहाँ कारणमें कार्यका उपचार किया गया है । उनका यहाँ ग्रहण करना चाहिए । अतः गुणकारस्वरूप उन अन्तरोंकी कृष्टि अन्तर यह संज्ञा है । पुनः संग्रहकृष्टि संग्रहकृष्टिके आगे-पीछे ग्यारह संख्यासे

परत्थाणगुणगाराणं संगहकिट्टीअंतरसण्णा। सत्थाणगुणगाराणं च किट्टीअंतरसण्णा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो।

* एदीए णामसण्णाए किट्टीअंतराणं संगहकिट्टीअंतराणं च अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो।

§ ३२. एदीए अणंतरपरूविदाए णामसण्णाए सुणिण्णीदसरूवाणं दुविहाणं पि किट्टीअंतराण-मेण्हिमप्पाबहुअमोदारइस्सामो त्ति भणिदं होइ।

* तं जहा।

§ ३३. सुगमं।

* लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए जहण्णयं किट्टीअंतरं थोवं।

§ ३४. लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा अप्पणो विदिय-किट्टीपमाणं पावदि सो गुणगारो जहण्णकिट्टीअंतरं णाम। तं सव्वत्थोवमिदि वुत्तं होइ।

विशेषताको प्राप्त हुए जो अन्तर हैं उनकी संग्रहकृष्टि अन्तर संज्ञा है। यहाँपर भी पहलेके समान उनसे सम्बन्ध रखनेवाले गुणकारोंका संग्रह करना चाहिए। इस कारण परस्थान गुणकारोंकी संग्रहकृष्टि अन्तर संज्ञा है और स्वस्थान गुणकारोंकी कृष्टि अन्तर संज्ञा है यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

विशेषार्थ—यह पूर्वमें ही बतला आये हैं कि चारों संज्वलनोंमें से प्रत्येक कषायकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होकर भी प्रत्येक संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ अनन्त होती हैं। इस प्रकार जो ये सब कृष्टियाँ हैं उनमें दो संग्रह कृष्टियोंके मध्य जो गुणकार पाया जाता है उनके उस गुणकारको ही संग्रहकृष्टि अन्तर कहते हैं। यत: यह गुणकार गुणित क्रमसे ही प्राप्त होता है, अतः उनके गुणकार भी उतने ही जानने चाहिए। कुल संग्रह कृष्टियाँ बारह हैं अत: उनके मध्यमें प्राप्त होनेवाले इन संग्रह कृष्टियोंके अन्तरोंका प्रमाण ग्यारह होता है। अत: इनकी यह संग्रह कृष्टि अन्तर संज्ञा है। यहाँ इतना पुन: स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि एक संग्रहकृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर दूसरी संग्रहकृष्टिको प्राप्त होती है उसकी परस्थान गुणकार संज्ञा और एक अन्तर कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर दूसरी कृष्टिको प्राप्त होती है उसकी स्वस्थानगुणकार संज्ञा है। इसीलिए प्रकृतमें गुणकारको कारण और अन्तरको कार्य कहा गया है।

* इस प्रकार की गयी इस नामसंज्ञाके द्वारा कृष्टि अन्तरों और संग्रह कृष्टि अन्तरोंके अल्पबहुत्वको बतलावेंगे।

§ ३२. इस प्रकार अनन्तर पूर्व कही गयी इस नामसंज्ञाके द्वारा जिनके स्वरूपका अच्छी तरहसे निर्णय हो गया है ऐसे इन दोनों ही प्रकारके कृष्टिअन्तरोंके अल्पबहुत्वका इस समय अवतार करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* वह जैसे

§ ३३. यह सूत्र सुगम है।

* लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिका जघन्य अन्तर सबसे अल्प है।

§ ३४. लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करनेपर वह अपनी दूसरी कृष्टिके प्रमाणको प्राप्त होती है वह गुणकार जघन्य कृष्टि अन्तर संज्ञावाला होता है। वह सबसे स्तोक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* विदियं किट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ३५. एत्थ वि विदियकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा तदियकिट्टीपमाणं पावदि सो गुणगारो विदियकिट्टीअंतरमिदि भण्णदे । एसो पुव्विल्लादो अणंतगुणो, तप्पाओग्गाणंतरूवेहिं तम्मि गुणिदे एदस्स समुप्पत्तीदो ।

* एवमणंतराणंतरेण गंतूण चरिमकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ३६. एवं तदियचउत्थादिकिट्टीअंतराणं पि लोभपढमसंगहकिट्टीपडिबद्धाणमणंतराणंतरादो अणंतगुणकमेण अप्पाबहुअमेदमणुगंतव्वं जाव चरिमकिट्टीअंतरं पत्तं ति । तत्थ चरिमकिट्टीअंतरमिदि वुत्ते दुचरिमकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा चरिमकिट्टीपमाणं पावदि सो गुणगारो चरिमकिट्टीअंतरमिदि घेत्तव्वं । एत्थ सव्वत्थ गुणगारो तप्पाओग्गाणंतरूवमेत्तो ।

* लोभस्स चेव विदियाए संगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं[1] ।

§ ३७. एत्थ पढमविदियसंगहकिट्टीणमंतरभूदो परत्थाणगुणगारो सव्वेहितो सत्थाणगुणगारेहिंतो अणंतगुणो त्ति तमुल्लंघियूण विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणमिदि भणिदं । तदो विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टी[2] जेण गुणगारेण गुणिदा अप्पणो विदियकिट्टिं पावदि सो गुणगारो अणंतरहेट्टिमपढमसंगहकिट्टीचरिमगुणगारादो अणंतगुणो त्ति सुत्तत्थो ।

---

* उससे दूसरी कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ३५. यहाँपर भी दूसरी कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर तीसरी कृष्टिके प्रमाणको प्राप्त होती है उस गुणकारको द्वितीय कृष्टि अन्तर कहते हैं । यह गुणकार पूर्वके गुणकारसे अनन्तगुणा है, क्योंकि तत्प्रायोग्य अनन्त संख्यासे उसके गुणित करनेपर इसकी उत्पत्ति होती है ।

* इस प्रकार उत्तरोत्तर अनन्तर-अनन्तर क्रमसे जाकर जो अन्तमें अन्तिम कृष्टि प्राप्त होती है उसका अन्तर अपनी उपान्त्य कृष्टिके अन्तरसे अनन्तगुणा है ।

§ ३६. इस प्रकार लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे सम्बन्ध रखनेवाली तीसरी और चौथी आदि कृष्टियोंका अन्तर भी उत्तरोत्तर तदनन्तर-तदनन्तर रूपसे अनन्तगुणित क्रमसे प्राप्त करते हुए अन्तिम कृष्टिके अन्तरके प्राप्त होने तक यह अल्पबहुत्व जान लेना चाहिए । वहाँ अन्तिम कृष्टि का अन्तर ऐसा कहनेपर द्विचरम कृष्टिको जिस गुणकारसे गुणित करनेपर अन्तिम कृष्टिका प्रमाण प्राप्त होता है वह गुणकार अन्तिम कृष्टिका अन्तर है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । यहाँ सर्वत्र गुणकार तत्प्रायोग्य अनन्त संख्याप्रमाण है ।

* लोभकी ही द्वितीय संग्रह कृष्टिका प्रथम कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ३७. यहाँपर प्रथम और द्वितीय संग्रह कृष्टियोंका अन्तररूप परस्थान गुणकार सब अन्तर कृष्टियोंके स्वस्थान गुणकारोंसे अनन्तगुणा है, इसलिए उसे उल्लंघन करके 'दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रथम कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है' यह कहा है, इसलिए दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर अपनी दूसरी कृष्टि को प्राप्त होती है वह गुणकार अनन्तर अधस्तन प्रथम संग्रह कृष्टिके अन्तिम गुणकारसे अनन्तगुणा है यह इस सूत्रका अर्थ है ।

विशेषार्थ—यहाँपर प्रथम संग्रह कृष्टि और द्वितीय संग्रह कृष्टिके मध्य जो अन्तर है उसको गौण कर प्रथम संग्रह कृष्टिकी जो अन्तिम कृष्टि है उससे दूसरी संग्रह कृष्टिकी दूसरी कृष्टिका गुणकार पूर्वके गुणकारसे भी अनन्तगुणा है यह स्पष्ट किया गया है ।

---

१. ता. प्रतौ पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं इति पाठः । २. ता. प्रतौ पढमसंगहकिट्टी इति पाठः ।

§ ३८. एत्तो उवरिमाणंतराणं विदियसंगहकिट्टीविसयाणं पढमसंगहकिट्टीए भणिदविहाणेण थोवबहुत्तमणंतराणंतरादो अणंतगुणाए सेडीए णेदव्वमिदि जाणावणफलमुवरिमसुत्तं—

* एवमणंतराणंतरेण जाव चरिमादो त्ति अणंतगुणं ।

§ ३९. गयत्थमेदं सुत्तं । एत्तो लोभस्स विदियतदियसंगहकिट्टीणं परत्थाणगुणगार-मुल्लंघियूण तदियसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणं जाणि अंतराणि ताणि जहाकममणंतगुणवड्ढीए णेदव्वाणि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ —।

* लोभस्स चेव तदियाए संगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ४०. एत्थ वि पढमकिट्टीअंतरमिदि वुत्ते पढमकिट्टीदो विदियकिट्टीसमुप्पायणट्ठो गुणगारो घेतव्वो । सुगममण्णं ।

* एवमणंतराणंतरेण गंतूण चरिमकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ४१. पढम-विदियसंगहकिट्टीसु जेण कमेण किट्टीअंतराणमप्पाबहुअं णीदं तेणेव कमेण संगहकिट्टीए[1] वि णेदव्वं, विसेसाभावादो त्ति भणिदं होदि ।

* एत्तो मायाए पढमसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ४२. एत्थ वि परत्थाणगुणगारुल्लंघणं पुव्वं व वट्टव्वं । सेसं सुगमं ।

---

§ ३८. इससे आगे दूसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी जो उपरिम अनन्तर अन्तर कृष्टियाँ हैं उनका अल्पबहुत्व, प्रथम संग्रह कृष्टिकी कही गयी विधिके अनुसार, तदनन्तर-तदनन्तर क्रमसे अनन्त-गुणित श्रेणिरूपसे ले जाना चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* इस प्रकार अनन्तर तदनन्तर क्रमसे अन्तिम कृष्टिके अन्तरके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर अनन्तगुणा-अनन्तगुणा कृष्टि अन्तर जानना चाहिए ।

§ ३९. यह सूत्र गतार्थ है । इससे आगे लोभसंज्वलनकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंके परस्थान गुणकारको उल्लंघन करके तीसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तर कृष्टियोंके जो अन्तर हैं उन्हें यथाक्रम उत्तरोत्तर अनन्तगुणित वृद्धिरूपसे ले जाना चाहिए इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* लोभकी भी तीसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ४०. इस सूत्रमें भी 'प्रथम कृष्टिका अन्तर' ऐसा कहनेपर प्रथम कृष्टिसे दूसरी कृष्टिको उत्पन्न करनेके लिए गुणकार ग्रहण करना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

* इस प्रकार अनन्तर तदनन्तर क्रमसे जाकर अन्तिम कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ४१. प्रथम और दूसरी संग्रह कृष्टियोंमें जिस क्रमसे कृष्टि अन्तरोंका अल्पबहुत्व प्राप्त किया है उसी क्रमसे इस संग्रह कृष्टिका भी ले आना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* इससे आगे मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ४२. यहाँपर भी परस्थान गुणकारको उल्लंघन कर पहलेके समान कथन करना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

---

१. ता. प्रतौ पढमसंगहकिट्टीणं इति पाठः ।

*** एवमणंतराणंतरेण मायाए वि तिण्हं संगहकिट्टीणं किट्टीअंतराणि जहाकमेण अणंतगुणाए सेडीए णेदव्वाणि ।**

§ ४३. लोभस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं भणिदविहाणमवहारियूण तेणेव कमेण मायाए वि तिण्हं संगहकिट्टीणमणंतरकिट्टीसु जहाकममणंतगुणाए सेढीए किट्टीगुणगाराणमप्पाबहुअमेदं णेदव्वमिदि वुत्तं होइ ।

*** एत्तो माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।**

§ ४४. एत्थ वि पुव्वं व परत्थाणगुणगारुल्लंघणेण मायाए तदियसंगहकिट्टीचरिमंतरादो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए पढमस्स किट्टीअंतरस्साणंतगुणत्तमुवइट्ठं दट्ठव्वं ।

*** माणस्स वि तिण्हं संगहकिट्टीणमंतराणि जहाकमेण अणंतगुणाए सेढीए णेदव्वाणि ।**

§ ४५. माणस्स वि तिण्हं संगहकिट्टीणं पुध पुध णिरुंभणं काद्ण पयदप्पाबहुअं णेदव्वमिदि वुत्तं होइ ।

*** एत्तो कोधस्स पढमसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।**

§ ४६. सुगमं ।

*** कोहस्स वि तिण्हं संगहकिट्टीणमंतराणि जहाकमेण जाव चरिमादो अंतरादो त्ति अणंतगुणाए सेढीए णेदव्वाणि ।**

*** इस प्रकार अनन्तर तदनन्तर क्रमसे मायाकी तीनों संग्रहकृष्टियोंके कृष्टि अन्तरोंको यथाक्रम अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे ले आना चाहिए ।**

§ ४३. लोभकी तीनों संग्रह कृष्टियोंकी कही गयी विधिसे अल्पबहुत्वका अवधारण करके उसी क्रमसे मायासम्बन्धी तीनों ही संग्रह कृष्टियोंकी अनन्त कृष्टियोंके यथाक्रम अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे कृष्टिगुणकारोंका यह अल्पबहुत्व जान लेना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** इससे आगे मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रथम कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है ।**

§ ४४. यहाँपर भी पहलेके समान परस्थान गुणकारके उल्लंघन द्वारा मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिके अन्तिम अन्तर कृष्टि अन्तरसे मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रथम कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है यह उपदिष्ट किया गया जानना चाहिए ।

*** मानकी भी तीनों संग्रह कृष्टियोंका अन्तर यथाक्रम अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे ले जाना चाहिए ।**

§ ४५ मानकी भी तीनों संग्रह कृष्टियोंको पृथक्-पृथक् रोककर प्रकृत अल्पबहुत्व ले जाना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** इससे आगे क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रथम कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा है ।**

§ ४६. यह सूत्र सुगम है ।

*** क्रोधकी भी तीनों संग्रह कृष्टियोंका अन्तर, यथाक्रम अन्तिम कृष्टि अन्तरके प्राप्त होने तक, अनन्तगुणित श्रेणिरूपसे ले जाना चाहिए ।**

४७. कोहस्स तदियसंगहकिट्टीए दुचरिमकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा तत्थतणचरिमकिट्टीपमाणं पावदि तं सव्वपच्छिमकिट्टीअंतरमवहिं कादूणप्पाबहुअमेदमणुगंतव्वमिदि सुत्तत्थसंगहो। एदे च भणिदसव्वगुणगारा बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमंतरकिट्टीसु पयट्टमाणा सत्थाणगुणगारं णाम।

§ ४८. एत्तो उवरि परत्थाणगुणगारसण्णिदाणं संगहकिट्टीअंतराणं जहाकमेण थोवबहुत्तावहारणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो।

* तदो लोभस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं।

§ ४९. लोभस्स पढमसंगहकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टिं पावदि सो गुणगारो लोभस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरं णाम। एसो गुणगारो सत्थाणगुणगाराणं चरिमगुणगारादो अणंतगुणो भवदि, परत्थाणगुणगारमाहप्पादो। इममेव च गुणगारविसेसमस्सियूण एक्केक्कस्स कसायस्स तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ भणिदाओ,[1] अण्णहा संगहकिट्टीणं पविभागाणुववत्तीदो। एत्थ हेट्ठिमकिट्टिमुवरिमकिट्टीदो सोहिय सुद्धसेसं रूवूणमेत्तमविभागपडिच्छेदुत्तरकमवड्ढीए विणा अक्कमेण वड्ढिदत्तादो। किट्टीअंतरमिदि किण्ण घेप्पदे? ण, तहा घेप्पमाणे पुव्विल्लचरिमसत्थाणकिट्टीअंतरादो एदस्स संगहकिट्टीअंतरस्साणंतगुणहीणत्तप्पसंगादो। तं कधं?

---

§ ४७. क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी द्विचरम कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर वहांकी अन्तिम कृष्टिके प्रमाणको प्राप्त होती है उस सब अन्तिम कृष्टि अन्तरको मर्यादा करके यह अल्पबहुत्व जान लेना चाहिए यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। कहे गये ये सब गुणकार बारह संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तर कृष्टियोंमें प्रवृत्त होते हुए स्वस्थान गुणकार कहलाते हैं।

विशेषार्थ—गुणकारके स्वस्थान गुणकार और परस्थान गुणकार ये दो भेद पहले ही कह आये हैं। उनमेंसे यहां तक स्वस्थान गुणकारकी अपेक्षा अन्तर कृष्टियोंके अन्तरोंको प्राप्त किया गया है। आशय यह है कि उत्तरोत्तर अगली-अगली कृष्टिके प्रमाणको प्राप्त करनेके लिए स्वस्थान गुणकारका प्रमाण उत्तरोत्तर अनन्तगुणा-अनन्तगुणा होता जाता है और इस प्रकार उत्तरोत्तर प्रत्येक कृष्टिमें अनुभागशक्तिरूप अविभागप्रतिच्छेद प्राप्त होते जाते हैं।

§ ४८. इससे आगे परस्थान गुणकार संज्ञावाले संग्रह कृष्टि अन्तरोंके अल्पबहुत्वका क्रमसे अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* उससे लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ४९. लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर दूसरी संग्रह कृष्टियोंकी प्रथम कृष्टिको प्राप्त होती है उस गुणकारको लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टि अन्तरसंज्ञा है। यह गुणकार स्वस्थान गुणकारोंके अन्तिम गुणकारसे अनन्तगुणा है। परस्थान गुणकारके माहात्म्यवश इसी गुणकार विशेषका आलम्बन लेकर एक-एक कषायकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियां कही गयी हैं, अन्यथा संग्रह कृष्टियोंका विशेष विभाग नहीं बन सकता। यहां पर अधस्तन कृष्टिको उपरिम कृष्टियोंमेंसे घटाकर जो शेष रहता है उससे एक कम अविभाग प्रतिच्छेदोंको उत्तर क्रमवृद्धिके विना अक्रमसे वृद्धि हुई है।

शंका—यहांपर कृष्टि अन्तर क्यों नहीं ग्रहण किया जाता?

समाधान—नहीं, क्योंकि वैसा ग्रहण करनेपर पूर्वोक्त अन्तिम स्वस्थान कृष्टि अन्तरसे इस संग्रह कृष्टि अन्तरके अनन्तगुणे हीन होनेका प्रसंग प्राप्त होता है।

---

१. आ. प्रतौ णीदाओ इति पाठः।

लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टिं तस्सेव विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीदो सोहिय सुद्धसेसं रूवूणं लोहस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरं णाम होदि।

§ ५०. संपहि विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टिं तिस्से चेव विदियकिट्टीदो सोहिदे सुद्धसेस-रूवूणरासी पुव्विल्लसंगहकिट्टीअंतरणिमित्तसुद्धसेसरासीदो अणंतगुणो होइ, तेण एत्तियमेत्तरासी अविभागपलिच्छेदुत्तरकमेण विणा अक्कमेण वड्ढिदो त्ति पढम-विदियकिट्टीणमेदमंतरं जादं। एवं च संते पुव्विल्लसंगहकिट्टीअंतरादो एदं किट्टीअंतरमणंतगुणं जादं। ण च एवं सुत्ते भणिदं, एत्तो अणंतगुणकोहतदियसंगहकिट्टीचरिमकिट्टीअंतरादो वि लोभस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणमिदि सुत्तेणेदेण णिद्दिट्ठत्तादो। एवं सेससंगहकिट्टीअंतराणं पि किट्टीअंतरादो अणंतगुणहीणत्तप्पसंगादो दरिसेयव्वो। तेण जाणामो किट्टीअंतरमिदि भणिदे किट्टीगुणगारो चेव सव्वत्थ घेत्तव्वो। ण पुण हेट्ठिमकिट्टीमुवरिमकिट्टीदो सोहिय समुवलद्धसेसरासि त्ति।

* विदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं।

§ ५१. विदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा तदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टिं पावदि सो गुणगारो विदियसंगहकिट्टीअंतरं णाम। एदं पढमसंगहकिट्टीअंतरादो अणंतगुणं। को गुणगारो? तप्पाओग्गाणंतरूवमेत्तो।

* तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं।

शंका—वह कैसे?

समाधान—लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिको उसीकी द्वितीय संग्रहकृष्टिकी प्रथम कृष्टिमेंसे घटा देनेपर जो शेष रहता है एक कम वह लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अन्तर होता है।

§ ५०. अब दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिको उसीकी दूसरी कृष्टिमेंसे घटा देनेपर जो राशि शेष रहती है, एक कम वह राशि पूर्वोक्त संग्रह कृष्टिके अन्तर निमित्तरूप शुद्ध शेष राशिसे अनन्तगुणी होती है, इसलिए इतने प्रमाणरूप राशि अविभागप्रतिच्छेदोंकी उत्तर क्रमवृद्धिके बिना अक्रमसे बढ़ी है, इसलिए प्रथम और दूसरी कृष्टियोंका यह अन्तर हो गया है और ऐसा होनेपर पूर्वके संग्रह कृष्टि अन्तरसे यह कृष्टि अन्तर अनन्तगुणा हो गया है। परन्तु ऐसा सूत्रमें कहा नहीं है, क्योंकि इससे क्रोधको अनन्तगुणी तीसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तिम कृष्टि अन्तरसे भी लोभकी प्रथम कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ऐसा इस सूत्रद्वारा निर्दिष्ट किया गया है। इसी प्रकार शेष संग्रह कृष्टियोंके अन्तरके भी कृष्टि अन्तरसे अनन्तगुणे हीन होनेका प्रसंग प्राप्त होता है ऐसा यहाँ दिखलाना चाहिए। इससे हम जानते हैं कि कृष्टि अन्तर ऐसा कहनेपर कृष्टिगुणकार ही सर्वत्र ग्रहण करना चाहिए, परन्तु अधस्तन कृष्टिको उपरिम कृष्टिमेंसे घटाकर जो शेष रहे वह नहीं।

* उससे दूसरी संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ५१. दूसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर तीसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिको प्राप्त होती है वह गुणकार द्वितीय संग्रह कृष्टिका अन्तर है। यह प्रथम संग्रह कृष्टि अन्तरसे अनन्तगुणा है।

शंका—गुणकार क्या है?

समाधान—तत्प्रायोग्य अनन्त संख्या गुणकार है।

* उससे तीसरी संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है।

---

१. ता. प्रतौ पढमसंगहकिट्टीए इति पाठः।

§ ५२. एत्थ चोदगो भणइ—तदियसंगहकिट्टीअंतरमिदि वुत्ते कदमस्स अंतरस्स गहणमिह कायव्वं, किं ताव लोभस्स तदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टीदो तस्सेवापुव्वफद्दयादिवग्गणाए पविसमाणगुणगारो घेप्पइ, आहो लोभस्स तदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टीदो[1] मायाए पढमसंगहकिट्टीए आदिम्मि पविसमाणगुणगारो त्ति ? ण ताव पढमपक्खो, संगहकिट्टीअंतराणमप्पाबहुए भण्णमाणे संगहकिट्टीफद्दयंतरगुणगारस्स पवेसाणुववत्तीदो। अध केण वि संबंधेण तस्स वि पवेसो ण विरुद्धो त्ति वक्खाणिज्जदे तो वि एदम्हादो उवरि लोभस्स मायाए च अंतरमणंतगुणमिदि उवरि भण्णमाणसुत्तं ण जुज्जदे, किट्टीफद्दयंतरादो अणंतगुणहीणस्स तस्स तत्तो अणंतगुणत्तविरोहादो। ण विदिओ वि पक्खो घडंतओ, लोभ-मायाणं चरिमपढमसंगहकिट्टीणमंतरस्स तदियसंगहकिट्टीअंतरं तेणेत्थ णिद्देसावलंबणे उवरिमसुत्तेण मुत्तकंठमेव तव्विसए पडिवद्धेणेदस्स पुणरुत्तदोसप्पसंगादो। तम्हा णिव्विसयत्तादो णाढवेयव्वमेदं सुत्तमिदि ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—'लोभस्स तदियसंगहकिट्टीअंतरमिदि वुत्ते लोभस्स विदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा लोभस्स चेव तदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टिं पावेदि सो गुणगारो घेत्तव्वो। पुव्वुत्तविदियसंगहकिट्टीअंतरादो परिप्फुडमेवेदस्साणंतगुणत्तदंसणादो। को एत्थ गुणगारो ? तदियसंगहकिट्टीए पविट्ठासेससत्थाणगुणगाराणमण्णोण्णसंवग्गो। अणुत्तसिद्ध-

§ ५२. शंका—यहांपर शंकाकार कहता है कि 'तदियसंग्रहकिट्टीअंतरं' ऐसा कहनेपर यहाँ किस अन्तरका ग्रहण करना चाहिए, क्या लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिसे उसीके अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें प्रविष्ट होनेवाला गुणकार ग्रहण करते हैं या लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिसे माया संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके आदिमें प्रविष्ट होनेवाला गुणकार ग्रहण करते हैं। उन दोनों पक्षोंमेंसे प्रथम पक्ष तो ठीक नहीं है, क्योंकि संग्रह कृष्टियोंके अन्तरोंके अल्पबहुत्वके कहनेपर संग्रहकृष्टि और स्पर्धक अन्तर सम्बन्धी गुणकारका प्रवेश नहीं बन सकता। किसी भी सम्बन्धवश गुणकारका प्रवेश भी विरोधको प्राप्त नहीं होता यदि ऐसा व्याख्यान किया जाता है तो भी इससे आगे 'लोभ और मायाका अन्तर अनन्तगुणा है' इसप्रकार आगे कहा जानेवाला सूत्र नहीं बन सकता है, क्योंकि कृष्टि और स्पर्धकसम्बन्धी अन्तरसे तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा हीन है, इसलिए तीसरी संग्रहकृष्टि और स्पर्धकके अन्तरसे उसके अनन्तगुणा होनेमें विरोध आता है। तथा दूसरा पक्ष भी घटित नहीं होता, क्योंकि लोभकी अन्तिम संग्रहकृष्टि और मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिका अन्तर तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर है, इस कारण यहांपर उसके निर्देशका अवलम्बन करनेपर उपरिम सूत्र स्पष्टरूपसे उस विषयसे सम्बन्ध रखता है, इसलिए इस कथनमें पुनरुक्त दोषका प्रसंग आता है, इसलिए विषयशून्य होनेसे इस सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए ?

समाधान—यहाँ उक्त शंकाका परिहार करते हैं—'लोभस्स तदियसंगहकिट्टीअंतरं' ऐसा कहनेपर लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तिम कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर लोभकी ही तीसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तिम कृष्टिको प्राप्त करती है वह गुणकार ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त दूसरी संग्रह कृष्टिके अन्तरसे स्पष्टरूपसे यह अन्तर अनन्तगुणा देखा जाता है।

शंका—यहांपर गुणकार क्या है ?

समाधान—तीसरी संग्रह कृष्टिमें प्रविष्ट हुए समस्त स्वस्थान गुणकारोंके परस्पर गुणा करनेपर जो लब्ध आवे वह यहांपर गुणकार है।

---

१. आ. प्रतौ संगहकिट्टीए मायाए इति पाठः।

त्तादो णेदमेत्थ परूवेयव्वमिदि चे ? ण, लोभ-मायाणमंतरमाहप्पपदंसणट्ठमेदस्स णिद्देसे फलोवलंभादो। तं कथं ? लोभस्स विदियसंगहकिट्टीअंतरादो सत्थाणगुणगारसंवग्गमेत्तेणाणंतगुणमेदं तदियसंगहकिट्टीअंतरं, पुणो एदम्हादो वि लोभमायाणमंतरमणंतगुणमिदि पदुप्पाइदे सत्थाणम्हि पविट्ठासेसगुणगारसंवग्गादो अणंतगुणो परत्थाणगुणगारो त्ति जाणिज्जदे। तम्हा एवंविहत्थविसेसपडिबद्धत्तादो ण णिव्विसयमेदं सुत्तमिदि सिद्धं।

§ ५३. अथवा तदियसंगहकिट्टीए अपुव्वफद्दयादिवग्गणा च अंतरं तदियसंगहकिट्टीअंतरमिदि घेत्तव्वं, संगहकिट्टीफद्दयंतरस्स वि कथंचि संगहकिट्टीअंतरत्तेण णिद्देसे विरोहाभावादो। ण तहाब्भुवगमे एत्तो उवरि माया-लोभाणमंतरस्स अणंतगुणत्तविरोहो णेहासंकणिज्जो, लोभस्स सत्थाणप्पाबहुए भण्णमाणे एवं होदि त्ति अप्पणो अपुव्वफद्दएहिं संधाणं काढूण पुणो तत्तो णियत्तिदूण हेट्ठिमपदं चेव घेत्तूण तत्तो लोभ-मायाणमंतरस्साणंतगुणत्तेण णिद्देसावलंबणे तद्दोसाणुवलंभादो।

§ ५४. अथवा 'लोभस्स तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं' इदि वुत्ते लोभमायाणमेव तदियपढमसंगहकिट्टीणं संधिगुणगारो गहेयव्वो। ण च तहावलंबिज्जमाणे उवरिमसुत्तेण पुणरुत्तभावो वि, 'तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं' इदि सामण्णणिद्देसेणेदेण तं कदममिदि संदेहे समुप्पण्णे[1] तण्णि-

शंका—यह तो अनुक्तसिद्ध है, इसलिए यहाँपर उसका कथन नहीं करना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि लोभ और मायाके अन्तरके माहात्म्यके दिखलानेके लिए इसका निर्देश करनेपर सफलता उपलब्ध होती है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिके अन्तरसे, स्वस्थान गुणकारोंके परस्पर गुणा करनेपर जो लब्ध आवे उसकी अपेक्षा भी यह तीसरी संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है। पुनः इससे भी लोभ और मायाका अन्तर अनन्तगुणा है ऐसा कथन करनेपर स्वस्थानमें प्रविष्ट हुए समस्त गुणकारोंके परस्पर गुणित करनेपर प्राप्त हुई राशिसे परस्थान गुणकार अनन्तगुणा है ऐसा जाना जाता है, इसलिए इस प्रकारके अर्थविशेषसे प्रतिबद्ध होनेके कारण यह सूत्र विषयरहित नहीं है यह सिद्ध हुआ।

§ ५३. अथवा तीसरी संग्रह कृष्टि और अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाका अन्तर तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि संग्रहकृष्टि और स्पर्धकके अन्तरका भी किसी अपेक्षा संग्रहकृष्टि अन्तररूपसे निर्देश करनेमें विरोधका अभाव है। और ऐसा नहीं स्वीकार करनेपर इससे आगे माया और लोभके अन्तरके अनन्तगुणत्वका विरोध आता है, किसीको ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि लोभके स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन करनेपर इस प्रकार होता है, इसलिए अपने अपूर्व स्पर्धकोंसे सन्धान कर पुनः वहाँसे निवृत्त होकर और अधस्तन पदको ही ग्रहण कर उससे लोभ और मायाके अन्तरका अनन्तगुणेरूपसे निर्देशका अवलम्बन करनेपर वह दोष नहीं प्राप्त होता।

§ ५४. अथवा 'लोभकी तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है' ऐसा कहनेपर लोभकी तीसरी और मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टियोंके सन्धिविषयक गुणकारका ही ग्रहण करना चाहिए। और इस प्रकार अवलम्बन करनेपर अगले सूत्रको लक्ष्य कर पुनरुक्तपना भी नहीं होता, क्योंकि 'तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है' इस प्रकार यह सामान्य निर्देश होनेसे वह कौन-सा है

१. आ. प्रतौ समुप्पण्णो इति पाठः।

रायरणमुहेण लोभमायाणमंतरमेव तदियसंगहकिट्टीअंतरमिह विवक्खियं, ण तत्तो अण्णमिदि पदुप्पायणट्ठमुवरिमसुत्तारंभे पुणरुत्तदोसासंभवादो।

* लोभस्स मायाए च अंतरमणंतगुणं।

§ ५५. गयत्थमेदं सुत्तं; अणंतरसुत्ते चेव वक्खाणिदत्तादो।

* मायाए पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं।

§ ५६. एवं भणिदे मायाए पढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा अप्पणो चेव विदियसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीपमाणं पावदि सो गुणगारो घेत्तव्वो। सेसं सुगमं।

* विदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं।

§ ५७. सुगमं।

* तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं।

§ ५८. एत्थ वि पुव्वं व तीहि पयारेहि सुत्तत्थसमत्थणा कायव्वा, विसेसाभावादो।

* मायाए माणस्स च अंतरमणंतगुणं।

§ ५९. ण तदियसंगहकिट्टीअंतरादो एदस्स भेदो, किंतु 'तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं' इदि वुत्ते मायाए माणस्स च चरिमपढमसंगहकिट्टीणं जमंतरं तमेव घेत्तव्वं, णाण्णमिदि पुव्वसुत्तणिद्दिट्ठस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमेदं सुत्तमोइण्णमिदि वक्खाणेयव्वं। सेसं सुगमं।

ऐसा सन्देह उत्पन्न होनेपर उसके निराकरण द्वारा लोभ और मायाका अन्तर ही तीसरी संग्रह-कृष्टिका अन्तर यहाँपर विवक्षित है, उससे भिन्न नहीं इस बातका कथन करनेके लिए अगले सूत्रका आरम्भ करनेपर पुनरुक्त दोषका प्राप्त होना असम्भव है।

* लोभ संज्वलन और माया संज्वलनका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ५५ यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि इससे अनन्तर पूर्व सूत्रमें ही इसका व्याख्यान कर आये हैं।

* उससे मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ५६. ऐसा कहनेपर मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिको अन्तिम कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित की गयी अपनी ही दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम कृष्टिके प्रमाणको प्राप्त होती है उस गुणकारको ग्रहण करना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* उससे दूसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ५७. यह सूत्र सुगम है।

* उससे तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ५८. यहाँपर भी तीन प्रकारोंसे सूत्रके अर्थका समर्थन करना चाहिए, क्योंकि उक्त कथनसे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

* माया और मानका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ५९. तीसरी संग्रह कृष्टिके अन्तरसे इसमें कोई भेद नहीं है, किन्तु 'तदियसंग्रहकिट्टी-अंतरमणंतगुणं' ऐसा कहनेपर मायाकी अन्तिम और मानकी प्रथम संग्रहकृष्टियोंका जो अन्तर है उसे ही ग्रहण करना चाहिए, अन्य नहीं। इस प्रकार पूर्वसूत्रमें निर्दिष्ट किये गये ही अर्थका स्पष्टीकरण करनेके लिए यह सूत्र अवतीर्ण हुआ है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* माणस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

* विदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

* तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

* माणस्स च कोहस्स च अंतरमणंतगुणं ।

* कोहस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

* विदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ६०. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

* तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं ।

§ ६१. एवं भणिदे कोहतदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टी जेण गुणगारेण गुणिदा कोहस्स चेव अपुव्वफद्दयादिवग्गणं पावदि सो गुणगारो कोधस्स तदियसंगहकिट्टीअंतरमिदि णिद्दिट्ठं दट्ठव्वं। एवमेसो सत्थाणप्पाबहुअविही भणिदो होदि । पुणो एदं सत्थाणपदं मोत्तूण परत्थाणप्पाबहुअमुवरिमसुत्ते भणिहिदि त्ति एसो एक्को वक्खाणपयारो । अहवा 'तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं' इदि भणिदे विदियसंगहकिट्टीदो तदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टीसमुप्पायणट्ठं पविट्ठस्स गुणगारस्स गहणं कायव्वं । एवं घेत्तूण पुणो एदम्हादो उवरि लोभस्स अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए पविस्समाण-परत्थाणगुणगारस्स णिद्देसमुवरिमसुत्ते भणिहिदि त्ति एसो विदियो वक्खाणपयारो । अधवा 'तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं' इदि भणिदे कोधस्स चरिमादो किट्टीदो लोभस्स अपुव्वफद्दयादि-वग्गणाए परत्थाणगुणगारो चेव गहिदो णाण्णो त्ति पदुप्पायणफलो उवरिमसुत्तावयारो त्ति

---

* उससे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

* उससे दूसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

* उससे तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

* मान संज्वलन और क्रोध संज्वलनका अन्तर अनन्तगुणा है ।

* उससे क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

* उससे दूसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ६०. ये सूत्र सुगम हैं ।

* उससे तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है ।

§ ६१. ऐसा कहनेपर क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि जिस गुणकारसे गुणित होकर क्रोधके ही अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणाको प्राप्त होती है वह गुणकार क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिका अन्तर है ऐसा निर्दिष्ट जानना चाहिए। इस प्रकार यह स्वस्थान अल्पबहुत्व विधि कही गयी है। अब उस स्वस्थान पदको छोड़कर परस्थान अल्पबहुत्वको अगले सूत्रमें कहेंगे यह एक व्याख्यान प्रकार है। अथवा 'तीसरी संग्रहकृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है' ऐसा कहनेपर दूसरी संग्रहकृष्टिसे तीसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तिम कृष्टिको उत्पन्न करनेके लिए प्रविष्ट हुए गुणकारको ग्रहण करना चाहिए। ऐसा ग्रहण करके पुनः उससे आगे लोभके अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें प्रविष्ट होनेवाले परस्थान गुणकारका निर्देश अगले सूत्रमें कहेंगे इस प्रकार यह दूसरा व्याख्यान प्रकार है ? अथवा 'तीसरी संग्रह कृष्टिका अन्तर अनन्तगुणा है' ऐसा कहनेपर क्रोधकी तीसरी कृष्टिसे लोभके अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाका परस्थान गुणकार ही ग्रहण किया है, अन्य नहीं। इस प्रकार इस बातका

एसो तदियो वक्खाणपयारो, तिसु वि पयारेसु अवलंबिदेसु विरोहाणुवलंभादो।

* कोधस्स चरिमादो किट्टीदो लोभस्स अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणाए अंतरमणंतगुणं।

§ ६२. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमेत्तिएण पबंधेण पुव्वपरूविदकिट्टीअप्पाबहुअस्स गुणगारसाहणट्ठमेदं अप्पाबहुअं परूविय संपहि एत्तो पढमसमए णिव्वत्तिज्जमाणियासु किट्टीसु दिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* पढमसमए किट्टीसु पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो।

§ ६३. सुगममेदं पइण्णावक्कं।

* तं जहा।

§ ६४. सुगमं।

* लोभस्स जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गं बहुअं।

§ ६५. पढमसमयकिट्टीकारगो पुव्वापुव्वफद्दएहिंतो पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डियूण पुणो ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं दव्वं किट्टीसु णिक्खिवदि। एवं च णिक्खिवमाणो लोभस्स जा जहण्णिया किट्टी तिस्से सरूवेण बहुअं पदेसग्गं णिक्खिवदि, अणंतरपरूविदद्दव्वं

कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार हुआ है। इस प्रकार यह तीसरा व्याख्यान प्रकार है, क्योंकि तीनों ही प्रकारोंके अवलम्बन करनेपर कोई विरोध नहीं उपलब्ध होता।

विशेषार्थ—यहाँपर 'तदियसंग्गहकिट्टीअंतरं अणंतगुणं' इस सूत्रकी रचनाके प्रयोजनरूपमें जिन तीन प्रकारोंको ध्यानमें रखते हुए उससे अगले सूत्रकी रचना की गयी है इस तथ्यको स्पष्ट किया गया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

* क्रोधकी अन्तिम कृष्टिसे लोभके अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणाका अन्तर अनन्तगुणा है।

§ ६२. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा पूर्वमें कहे गये कृष्टियोंके अल्पबहुत्वके गुणकारोंकी सिद्धिके लिए इस अल्पबहुत्वका कथन करके अब इसके बाद प्रथम समयमें निष्पन्न हुई कृष्टियोंमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अब प्रथम समयमें कृष्टियोंमें प्रदेशपुंजके श्रेणिप्ररूपणको बतलावेंगे।

§ ६३. यह प्रतिज्ञावाक्य सुगम है।

* वह जैसे।

§ ६४. यह सूत्र सुगम है।

* लोभकी जघन्य कृष्टिमें प्रदेशपुंज बहुत है।

§ ६५. प्रथम समयमें कृष्टिकारक जीव पूर्व और अपूर्व स्पर्धकसम्बन्धी प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके पुनः अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यको कृष्टियोंमें निक्षिप्त करता है और इस प्रकार निक्षेपण करता हुआ लोभकी जो जघन्य कृष्टि है उस रूपसे बहुत प्रदेशपुंजका निक्षेपण करता है, क्योंकि अनन्तर पूर्व प्ररूपित किये गये द्रव्यको

किट्टीअद्धाणेण खंडिय तत्थेयखंडदव्वमेत्तस्स रूवूणकिट्टीअद्धाणमेत्तवग्गणविसेसेहि[1] समहियस्स जहण्णकिट्टीए णिक्खेवदंसणादो।

※ विदियाए किट्टीए विसेसहीणं।

§ ६६. केत्तियमेत्तेण ? एयवग्गणविसेसमेत्तेण[2]। एत्तो उवरिमकिट्टीसु वि जहाकममणंतभागेण विसेसहीणमेव पदेसग्गं णिक्खिवदि जाव ओघुक्कस्सियादो कोहकिट्टीदो त्ति इममत्थविसेसं जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

※ एवमणंतरोवणिधाए विसेसहीणमणंतभागेण जाव कोहस्स चरिमकिट्टि त्ति।

§ ६७. एवमेदेण विहाणेण अणंतरोवणिधाए उवरि सव्वत्थ एगेगवग्गणविसेसमेत्तं परिहीणं कादूण णेदव्वं जाव सव्वासिं संगहकिट्टीणमंतरकिट्टीओ समुल्लंघियूण सव्वुक्कस्सियं कोहचरिमकिट्टिं पत्तो त्ति। कुदो ? एदम्मि अद्धाणे अणंतराणंतरादो अणंतभागहाणिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो।

कृष्टियोंके अध्वानसे खण्डित करके वहाँ जो एक खण्डप्रमाण द्रव्य प्राप्त हो उसे एक कम कृष्टियोंके स्थानप्रमाण वर्गणा विशेषोंसे अधिक करे, क्योंकि उतने द्रव्यका जघन्य कृष्टिमें निक्षेप देखा जाता है।

※ उससे दूसरी कृष्टिमें प्रदेशपुंज विशेष हीन है।

§ ६६. शंका—कितना हीन है ?

समाधान—एक वर्गणामें विशेषका जितना प्रमाण है उतना हीन है।

इससे आगे उपरिम कृष्टियोंमें भी क्रमसे अनन्तवें भागप्रमाण विशेषसे हीन प्रदेशपुंजको ही तब तक निक्षिप्त करता है जब जाकर ओघ उत्कृष्ट क्रोधकृष्टि प्राप्त होती है इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

※ इस प्रकार अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा उत्तरोत्तर अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन प्रदेशपुंजका निक्षेप क्रोधकी अन्तिम कृष्टि तक होता है।

§ ६७. इस प्रकार इस विधिसे अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा आगे सर्वत्र एक-एक वर्गणाविशेषमात्र हीन करते हुए तब तक ले जाना चाहिए जब जाकर सब संग्रह कृष्टियोंकी अन्तर कृष्टियोंको उल्लंघन करके सबसे उत्कृष्ट क्रोधकी अन्तिम कृष्टि प्राप्त होती है, क्योंकि इस अध्वानमें अनन्तर-अनन्तररूपसे अनन्तभागहानिको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँपर लोभकी जघन्य कृष्टिसे लेकर क्रोधकी अन्तिम कृष्टि तक जितनी भी अवान्तर कृष्टियाँ, पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमेंसे द्रव्यका अपकर्षण कर, निर्वृत्त होती हैं उनमेंसे किस कृष्टिको कितना द्रव्य प्राप्त होता है और वह समस्त द्रव्य अपूर्व और पूर्व स्पर्धकोंके समस्त द्रव्यका कितने भागप्रमाण है यही तथ्य यहाँ स्पष्ट किया गया है। यथा—पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें जितना द्रव्य होता है उसमें असंख्यातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसका अपकर्षण करके उसमें भी असंख्यातका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना द्रव्य सब कृष्टियोंमें निक्षिप्त होता है। तो भी सब कृष्टियोंमें उक्त द्रव्यके निक्षिप्त होनेका क्रम यह है कि सब कृष्टियोंको एक-एक करके जितना द्रव्य प्राप्त होता है उसमेंसे लोभकी जघन्य कृष्टिको सबसे अधिक द्रव्य प्राप्त होता है। पुनः उससे आगे लोभकी दूसरी कृष्टिसे लेकर क्रोधकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक प्रत्येक कृष्टिको उत्तरोत्तर एक-एक विशेष हीन द्रव्य प्राप्त होता है। यहाँपर विशेषका प्रमाण सब कृष्टियोंको प्राप्त होनेवाले द्रव्यके अनन्तवें भागमात्र है।

---

१. ता-प्रतौ रूवूणकिट्टीअकरणद्ध-इति पाठः। २. आ-प्रतौ एयवग्गणविसेसेण इति पाठः।

§ ६८. संपहि परंपरोवणिधाए सव्वजहण्णलोभकिट्टीपदेसग्गादो सव्वुक्कस्सकोहकिट्टीए पदेसग्गं कधमवचिट्ठदि[1] त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

※ परंपरोवणिधाए जहण्णियादो लोभकिट्टीदो उक्कस्सियाए कोधट्टिकीए पदेसग्गं विसेसहीणमणंतभागेण ।

§ ६९. कुदो एवं चे ? किट्टीअद्धाणस्स एयगुणहाणिट्ठाणंतरस्साणंतिमभागपमाणत्तादो । एत्थ हीणासेसदव्वपमाणं रूवूणकिट्टिअद्धाणमेत्तवग्गणविसेसा त्ति घेत्तव्वं ।

§ ७०. संपहि कोहचरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो अपुव्वफद्दयादिवग्गणाए णिवदमाणपदेसग्गस्स पमाणाणुगमं कस्सामो । तं जहा—कोहचरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो अपुव्वफद्दयादिवग्गणाए णिवदमाणपदेसग्गमणंतगुणहीणं होदि । किं कारणं ? कोधचरिमकिट्टीए अणंताओ

---

§ ६८. अब परम्परोपनिधाकी अपेक्षा सबसे जघन्य लोभ कृष्टिके प्रदेशपुंजसे लेकर सबसे उत्कृष्ट क्रोध कृष्टिमें प्रदेशपुंज किस प्रकार अवस्थित है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

※ परम्परोपनिधाकी अपेक्षा जघन्य लोभकृष्टिसे उत्कृष्ट क्रोधकृष्टिमें प्राप्त हुआ प्रदेशपुंज अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन है ।

§ ६९. शंका—ऐसा किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि कृष्टियोंका अध्वान एक गुणहानि स्थानान्तरके अनन्तवें भागमात्र है ।

यहाँपर हीन हुआ समस्त द्रव्य एक कम कृष्टि अध्वान (आयाम) प्रमाण वर्गणाविशेषरूप है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए ।

विशेषार्थ—जहाँ अनन्तरोपनिधामें प्रथम कृष्टिके बाद दूसरी कृष्टिमें कितने हीन द्रव्यका निक्षेप हुआ है । इसी प्रकार द्वितीयादि प्रत्येक कृष्टिसे तीसरी आदि प्रत्येक कृष्टिमें उत्तरोत्तर कितने हीन द्रव्यका निक्षेप हुआ है इसका निर्देश किया गया है वहाँ परम्परोपनिधाकी अपेक्षा लोभकी जघन्य कृष्टिमे क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें सब मिला कर कितने हीन द्रव्यका निक्षेप हुआ है यह विचार किया गया है । यहाँ इतना विशेष समझना चाहिए कि जहाँ अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा एक कृष्टिसे उसके अनन्तरकी दूसरी कृष्टिमें जितना द्रव्य हीन होकर दिया गया है उस हीन द्रव्यका प्रमाण सब द्रव्यके अनन्तवें भागमात्र है वहाँ परम्परोपनिधाकी अपेक्षा भी लोभकी जघन्य कृष्टिसे क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें जितना द्रव्य हीन होकर निक्षिप्त हुआ है वह हीन द्रव्य भी सब कृष्टियोंको प्राप्त होनेवाले सब द्रव्यके अनन्तवें भागप्रमाण है । फिर भी यह एक कृष्टिसे दूसरी कृष्टिमें जितना द्रव्य हीन हुआ है उसे एक कम कृष्टि अध्वानप्रमाण वर्गणाविशेषोंसे गुणित करने पर जो लब्ध आवे उतना होता है ।

§ ७०. अब क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे अपूर्व स्पर्धकोंकी आदि वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाले प्रदेशपुंजके प्रमाणका अनुगम करेंगे । वह जैसे—क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपुंज अनन्तगुणा हीन है ।

शंका—इसका क्या कारण है ?

---

१. आ. प्रतौ कधमिव चिट्ठदि इति पाठः ।

अपुव्वफद्दयादिवग्गणाओ णिक्खिविय पुणो अपुव्वफद्दयवग्गणाए तत्थ पुव्वावट्ठिददव्वस्सासंखेज्जदि-भागमेत्तं चेव णिक्खिवमाणस्स तदुवलद्धीए बाहाणुवलंभादो। एत्थ दोण्हं पि दव्वाणमोवट्टणं ठविय पयदत्थविसये सिस्साणं पडिबोहो कायव्वो।

§ ७१. दिस्समाणदव्वं पि कोधचरिमकिट्टीए बहुअं। अपुव्वफद्दयादिवग्गणाए अणंतगुण-हीणमिदि दट्ठव्वं। तदो एत्थ दोगोवुच्छाओ जादाओ—किट्टीसु एया गोवुच्छा, पुव्वापुव्वफद्दएसु अण्णा गोवुच्छा त्ति। अण्णे पुण आइरिया किट्टीसु फद्दएसु च एया चेव गोवुच्छा होदि त्ति भणंति। तेसिमहिप्पाएण कोहचरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो अपुव्वफद्दयादिवग्गणाए णिसिच्चमाणपदे-सग्गमसंखेज्जगुणहीणं होदि, अण्णहा किट्टीसु फद्दएसु च भिण्णगोवुच्छप्पसंगादो। एदम्मि पक्खे किट्टीकरणद्धाए चरिमसमयं मोत्तूण हेट्ठिमासेससमएसु किट्टीसु दिस्समाणासेसदव्वमेयसमय-पबद्धस्साणंतिमभागमेत्तं चेव जायदे। ण चेदमिच्छिज्जदे, उवसमसेढीए एदस्सत्थस्स बाहोवलं-भादो। तम्हा पुव्वुत्तो चेव अत्थो घेत्तव्वो। एवं किट्टीकरणद्धाए पढमसमए किट्टीसु दिज्जमाण-पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं[1] कादूण संपहि विदियसमए कीरमाणकज्जभेदपदुप्पायणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* विदियसमए अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ करेदि पढमसमये णिव्वत्तिद-किट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्ताओ।

समाधान—क्योंकि क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें अपूर्व स्पर्धककी अनन्त आदि वर्गणाओंको निक्षिप्त कर पुनः अपूर्व स्पर्धककी वर्गणामें वहाँ पूर्वके अवस्थित हुए द्रव्यके असंख्यातवें भागमात्र ही द्रव्यका निक्षेप करनेवालेके उसकी उपलब्धि होनेमें बाधा नहीं पाई जाती। यहाँ पर दोनों ही द्रव्योंका अपवर्तन स्थापित करके प्रकृत अर्थके विषयमें शिष्योंको प्रतिबोधित करना चाहिए।

§ ७१. दृश्यमान द्रव्य भी क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें बहुत है तथा उससे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें अनन्तगुणा हीन है ऐसा जानना चाहिए। इसलिये यहाँ पर दो गोपुच्छाएँ हो जाती हैं—कृष्टियोंमें एक गोपुच्छा तथा पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें एक अन्य गोपुच्छा। किन्तु अन्य आचार्य कृष्टियों और स्पर्धकोंमें एक ही गोपुच्छा होती है ऐसा कहते हैं। उनके अभिप्रायसे क्रोधकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे अपूर्व स्पर्धककी आदि वर्गणामें निक्षिप्त होनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन होता है, अन्यथा कृष्टियों और गोपुच्छाओंमें भिन्न गोपुच्छाओंका प्रसंग प्राप्त होता है। परन्तु इस पक्षके स्वीकार करनेपर कृष्टिकरणके कालमें अन्तिम समयको छोड़कर अधस्तन (पूर्वके) समस्त समयसम्बन्धी कृष्टियोंमें दिखनेवाला समस्त द्रव्य एक समयप्रबद्धके अनन्तवें भागमात्र ही हो जाता है। परन्तु यह स्वीकार नहीं है, क्योंकि उपशम-श्रेणिमें इस अर्थमें बाधा पाई जाती है। इसलिए पूर्वोक्त अर्थ ही ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार कृष्टिकरणके कालके प्रथम समयमें दीयमान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब दूसरे समयमें किये जानेवाले कार्यभेदका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* दूसरे समयमें पूर्व समयमें निष्पन्न हुई कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्य अपूर्व कृष्टियोंको करता है।

---

१. आ. प्रतौ-सग्गसेढिपरूपणं इति पाठः।

§ ७२. पढमसमयमोकड्डिदव्वादो असंखेज्जगुणं दव्वमोकड्डियूण किट्टीकारगविदियसमए किट्टीओ करेमाणो पढमसमयणिव्वत्तिदकिट्टीणं हेट्ठा अण्णाओ[1] अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि। पुव्वणिव्वत्तिदाओ च सरिसधणियमुहेण णिव्वत्तेदि। तासिमपुव्वाणं किट्टीणं किंपमाणमिदि वुत्ते पढमसमए णिव्वत्तिदकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्ताओ त्ति तासिं पमाणणिद्देसो कदो। पढमसमयणिव्वत्तिदकिट्टीसु तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागेणोवट्टिदासु तत्थ भागलद्धमेत्ताणमपुव्वकिट्टीणं विदियसमए णिव्वत्ती होदि त्ति वुत्तं होदि।

§ ७३. संपहि विदियसमयकिट्टीकारगो तक्कालोकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागं घेत्तूणापुव्वकिट्टीसु णिक्खिविय सेसबहुभागदव्वं पुव्वकिट्टीसु फद्दएसु च समयाविरोहेण णिक्खिवदि त्ति घेत्तव्वं। संपहि तासिमपुव्वाणं किट्टीणं कदमम्मि ओगासे णिव्वत्ती होदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

* एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए हेट्ठा अपुव्वाओ किट्टीओ करेदि।

§ ७४. कोहसंजलणस्स पुव्वापुव्वफद्दएहिंतो पदेसग्गमोकड्डियूण अप्पणो तिण्हं संगहकिट्टीणं हेट्ठदो पादेक्कमपुव्वाओ किट्टीओ पुव्वकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ णिव्वत्तेदि। एवं माण-माया-

---

§ ७२. प्रथम समयमें अपकर्षित किये गये द्रव्यसे असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके कृष्टिकारक जीव दूसरे समयमें कृष्टियोंको करता हुआ प्रथम समयमें निष्पादित की गयी कृष्टियोंके नीचे अन्य अपूर्व कृष्टियोंको निष्पादित करता है। तथा पूर्वमें निष्पादित हुई कृष्टियोंको सदृश धनरूपसे निष्पादित करता है। उन अपूर्व कृष्टियोंका क्या प्रमाण है ऐसा कहने पर प्रथम समयमें निष्पादित की गयी कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण है इस प्रकार उनके प्रमाणका निर्देश किया है। प्रथम समयमें निष्पादित की गयी कृष्टियोंको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे अपवर्तित करने पर वहाँ जो भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण अपूर्व कृष्टियोंकी दूसरे समयमें निष्पत्ति होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—प्रथम समयमें जितनी कृष्टियोंकी निष्पत्ति होती है उनके प्रमाणमें पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो लब्ध आवे, जो कि प्रथम समयमें निष्पन्न की गयी कृष्टियों-के असंख्यातवें भागप्रमाण होता है, उतनी अपूर्व कृष्टियोंको निष्पादित करता है। इसके साथ हीं प्रथम समयमें निष्पन्न की गयी कृष्टियोंके समान धनवाली कृष्टियोंको भी निष्पादित करता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

§ ७३. अब दूसरे समयमें कृष्टिकारक जीव तत्काल अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको ग्रहण करके तथा उसे अपूर्व कृष्टियोंमें निक्षिप्त करके शेष बहुभाग-प्रमाण द्रव्यको पूर्वकी कृष्टियोंमें और स्पर्धकोंमें आगमके अविरोध पूर्वक निक्षिप्त करता है ऐसा प्रकृतमें ग्रहण करना चाहिये। अब उन अपूर्व कृष्टियोंकी किस अवकाश (स्थान) में निष्पत्ति होती है ऐसी आशंका होने पर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

* एक-एक संग्रह कृष्टिके नीचे अपूर्व कृष्टियोंको करता है।

§ ७४. क्रोध संज्वलनके पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमें से प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके अपनी तीनों संग्रह कृष्टियोंके नीचे पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रत्येक सम्बन्धी अपूर्व कृष्टियोंको निष्पादित करता है। इसी प्रकार मान, माया और लोभसंज्वलनसम्बन्धी भी अपने-अपने प्रदेश-

---

१. आ. प्रतौ-किट्टीणं अण्णाओ इति पाठः।

लोभाणं पि अप्पप्पणो पदेसग्गमोकड्डियूण सगसगसंगहकिट्टीणं [1]पढमसमयणिव्वत्तिदाणं हेट्ठा पादेक्कमसंखेज्जभागमेत्तीओ णिव्वत्तेदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। तदो बारसण्हं पि संगहकिट्टीणं जहण्णकिट्टीहिंतो हेट्ठा पादेक्कं पुव्वकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ अपुव्वकिट्टीओ णिव्वत्तेमाणस्स बारससु ट्ठाणेसु अपुव्वाणं किट्टीणं विदियसमये पादुब्भावो जादो त्ति घेत्तव्वं।

§ ७५. संपहि तत्थ दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

*** विदियसमए दिज्जमाणयस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो।**

§ ७६. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ ७७. सुगमं।

*** लोभस्स जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गं बहुअं दिज्जदि।**

§ ७८. एत्थ लोभस्स जहण्णिया किट्टी त्ति वुत्ते लोभसंजलणस्स पढमसंगहकिट्टीदो हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणाणमणंताणमपुव्वकिट्टीणमादिमकिट्टी घेत्तव्वा। तत्थ दिज्जमाणपदेसग्गमुवरिमकिट्टीसु दिज्जमाणपदेसग्गादो बहुगं होइ, अण्णहा किट्टीगदपदेसग्गस्स पुव्वाणुपुव्वीए एगगोवुच्छायारेणावट्ठाणाणुववत्तीदो।

पुंजका अपकर्षण करके प्रथम समयमें निष्पादित अपनी-अपनी संग्रह कृष्टियोंके नीचे प्रत्येक सम्बन्धी असंख्यातवें भागप्रमाण अपूर्व कृष्टियोंको निष्पादित करता है इस प्रकार यह यहाँ पर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इसलिए बारहों संग्रह कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टियोंसे नीचे प्रत्येक सम्बन्धी पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण अपूर्व कृष्टियोंको निष्पादित करनेवालेके बारहों स्थानोंमें अपूर्व कृष्टियोंका दूसरे समयमें प्रादुर्भाव हो जाता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

विशेषार्थ—सब संग्रह कृष्टियां १२ हैं। उनमें-से प्रत्येक संग्रह कृष्टिसे नीचे प्रत्येक संग्रह कृष्टि सम्बन्धी अवान्तर कृष्टियोंका जितना प्रमाण है उनके असंख्यातवें भागप्रमाण अपूर्व कृष्टियोंको दूसरे समयमें यह जीव निष्पादित करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ७५. अब उनमें दीयमान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** दूसरे समयमें दीयमान प्रदेशपुंजका श्रेणिप्ररूपण बतलावेंगे।**

§ ७६. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ ७७. यह सूत्र सुगम है।

*** लोभकी जघन्य कृष्टिमें बहुत प्रदेशपुंज दिया जाता है।**

§ ७८. यहाँ पर 'लोभकी जघन्य कृष्टि' ऐसा कहने पर लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे नीचे निष्पादित होनेवाली अनन्त अपूर्व कृष्टियोंकी आदि कृष्टि ग्रहण करनी चाहिये। उसमें दीयमान प्रदेश पुंज उपरिम कृष्टियोंमें दीयमान प्रदेश पुंजसे बहुत होता है, अन्यथा कृष्टिगत प्रदेशपुंजका पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंकी अपेक्षा एक गोपुच्छाकाररूपसे अवस्थान नहीं बन सकता।

---

१. आ. प्रतौ किट्टीओ इति पाठः।

*** विदियाए किट्टीए विसेसहीणमणंतभागेण ।**

§ ७९. एत्थाणंतभागेणेत्ति वुत्ते एयवग्गणविसेसमेत्तेणेत्ति घेत्तव्वं । तेण पढमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो विदियकिट्टीए णिसिच्चमाणपदेसग्गमेयवग्गणविसेसमेत्तेण हीणं होदि त्ति सिद्धं ।

*** ताव अणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमादो त्ति ।**

§ ८०. एगेण वग्गणविसेसमवट्ठिदपमाणमणंतराणंतरादो हीणं कादूण ताव णेदव्वं जाव विदियसमए लोहस्स पढमसंगहकिट्टीए हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं चरिमकिट्टीदो त्ति । कुदो ? एदम्मि अद्धाणे अणंतभागहाणिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो । एवमेदम्मि विसए अणंतभागहाणीए पदेसविण्णासं कादूण तदो पढमसमयणिव्वत्तिदाणं लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणं जा जहण्णिया पुव्वकिट्टी तत्थ केरिसं पदेसणिक्खेवं करेदि त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** तदो पढमसमए णिव्वत्तिदाणं जहण्णियाए किट्टीए विसेसहीणमसंखेज्जदिभागेण ।**

§ ८१. तं जहा—पढमसमए किट्टीसु णिसित्तासेसपदेसपिंडादो विदियसमए किट्टीसु णिसिच्चमाणसयलपदेसपिंडो असंखेज्जगुणो होदि । किं कारणं ? अणंतगुणविसोहीए ओकड्डियूण गहिदत्तादो । तेण कारणेण विदियसमयम्मि अपुव्वाणं चरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसपिंडो पढमसमय-

---

*** दूसरी कृष्टिमें अनन्तवें भाग प्रमाण विशेषहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है ।**

§ ७९. इस सूत्रमें 'अणंतभागेण' ऐसा कहने पर 'एक वर्गणाविशेषमात्रसे' ऐसा ग्रहण करना चाहिए । इसलिए प्रथम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे दूसरी कृष्टिमें निक्षिप्यमान प्रदेश पुंज एक वर्गणाविशेषमात्र हीन होता है यह सिद्ध होता है ।

*** इस प्रकार तब तक अनन्तवें भागप्रमाण हीन द्रव्य दिया जाता है जबतक कि लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिके नीचे निर्वर्तमान अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टि प्राप्त होती है ।**

§ ८० एक वर्गणाविशेषको अवस्थित प्रमाणरूपसे हीन करके अनन्तर तदनन्तर क्रमसे तब तक ले जाना चाहिये जब तक दूसरे समयमें लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिके नीचे निर्वर्तमान अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टि प्राप्त होती है, क्योंकि इस स्थानमें अनन्त भागहानिको छोड़कर अन्य प्रकार असम्भव है । इस प्रकार इस स्थान पर अनन्त भागहानिरूपसे प्रदेशविन्यास करके उसके बाद लोभको प्रथम संग्रह कृष्टिको प्रथम समयमें निर्वर्तमान अन्तर कृष्टियोंकी जो जघन्य पूर्व कृष्टि है उसमें किस प्रकारके प्रदेशोंका निक्षेप करता है ऐसी आशंका होने पर निर्णयका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** उससे प्रथम समयमें निर्वर्तित लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तर कृष्टियोंकी जघन्यकृष्टिमें असंख्यातवें भागप्रमाण विशेषहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है ।**

§ ८१ वह जैसे—प्रथम समयमें कृष्टियोंमें निक्षिप्त किये गये समस्त प्रदेशपिण्डसे दूसरे समयमें कृष्टियोंमे निक्षिप्यमान समस्त प्रदेशपिण्ड असंख्यातगुणा होता है ।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि अनन्तगुणी विशुद्धिवश अपकर्षित करके इस प्रदेशपिण्डका ग्रहण किया है । इस कारण दूसरे समयमें अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त किया गया प्रदेशपिण्ड

जहण्णकिट्टीए पुव्वावट्ठिदपदेसपिंडादो विसोहिपाहम्मेणासंखेज्जगुणो होदि त्ति दट्ठव्वं। पुणो पढमसमयणिव्वत्तिदजहण्णकिट्टीए उवरि संपहि णिसिंचमाणदव्वं पि पुध कादूण जोइज्जमाणं तत्थ पुव्वावट्ठिददव्वादो असंखेज्जगुणं चेव भवदि, ओकड्डिददव्वमाहप्पमस्सियूण किट्टिं पडि एण्हि णिसिंचमाणदव्वस्स तहाभावदंसणादो। एवं होदि त्ति कादूण तत्थ पुव्वावट्ठिदासंखेज्जदिभागमेत्तदव्वेण पुणो अणंतिमभागमेत्तेण च हीणो पदेसविण्णासो तत्थ इच्छियव्वो, अण्णहा पुव्वापुव्वकिट्टीणमेय-गोवुच्छायारेण समवट्ठाणाणुववत्तीदो। एदेण कारणेणासंखेज्जभागहीणो पदेसविण्णासो एदम्मि संधिविसेसे जादो त्ति घेत्तव्वं। एवमुवरि वि जत्थ जत्थ अपुव्वाणं चरिमादो पुव्वकिट्टीणं जहण्णियाए किट्टीए असंखेज्जदिभागहीणं पदेसणिक्खेवं भणिहिदि तत्थ तत्थ एसो चेव अत्थो परूवेयव्वो। एवमेदम्मि संधिविसए संखेज्जभागहीणं पदेसविण्णासं कादूण तदो एत्तो उवरिमासु सव्वासु चेव लोभसंजलणस्स पढमसंगहकिट्टीए पढमसमयणिव्वत्तिदासु किट्टीसु अणंतराणंतरादो अणंतभागहीणं चेव पदेसणिसेगमेसो कुणदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** तदो विदियाए अणंतभागहीणं। तेण परं पढमसमयणिव्वत्तिदासु लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए किट्टीसु अणंतराणंतरेण अणंतभागहीणं दिज्जमाणगं जाव पढम-संगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति।**

§ ८२. कुदो? एदम्मि विसए अणंतराणंतरं पेक्खियूण एगेगवग्गणविसेसहाणीए पदेस-णिक्खेवं कुणमाणस्स तदविरोहादो। संपहि एत्तो उवरि लोभस्स विदियसंगहकिट्टीए हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं जा जहण्णिया किट्टी तत्थ किंविधो पदेसविण्णासो होदि त्ति

प्रथम समयसम्बन्धी जघन्य कृष्टिमें पहलेके अवस्थितप्रदेश पिण्डसे विशुद्धिकी प्रधानतावश असंख्यातगुणा होता है ऐसा जानना चाहिये। पुनः प्रथम समयमें निर्वर्तित जघन्य कृष्टिके ऊपर इस समय सींचे जानेवाले द्रव्यको भी पृथक् करके देखने पर वह वहाँ पर पूर्वके अवस्थित हुए द्रव्यसे असंख्यातगुणा ही होता है, क्योंकि अपकर्षित हुए द्रव्यके महत्त्वका आश्रय कर कृष्टिके प्रति इस समय सींचा जानेवाला द्रव्य उस रूपसे देखा जाता है। ऐसा होता है ऐसा करके (समझकर) वहाँ पहलेके अवस्थित हुए असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यसे और पुनः अनन्तवें भागमात्रसे हीन प्रदेश विन्यास वहाँ पर स्वीकार करना चाहिये, अन्यथा पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंका एक गोपुच्छाकार-रूपसे अवस्थान नहीं बन सकता। इस कारण इस सन्धि विशेषमें असंख्यात भागहीन प्रदेश विन्यास हो गया है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार आगे भी जहाँ-जहाँ अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें असंख्यातवां भागहीन प्रदेशविन्यास कहेंगे वहाँ-वहाँ यही अर्थ कहना चाहिए। इस प्रकार इस सन्धिस्थानमें संख्यात भागहीन प्रदेशविन्यास करके तदनन्तर इससे उपरिम सभी, लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी, प्रथम समयमें निर्वर्तित कृष्टियोंमें अनन्तर-अनन्तर क्रमसे अनन्तभागहीन ही प्रदेश निक्षेप यह जीव करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** उससे दूसरी कृष्टिमें अनन्त भागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है। उससे आगे प्रथम समयमें निर्वर्तित लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी कृष्टियोंमें अनन्तर-अनन्तर क्रमसे प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्त भागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है।**

§ ८२. क्योंकि इस स्थानमें अनन्तर-अनन्तर कृष्टियोंको दिये जानेवाले प्रदेशपुंजको देखते हुए उत्तरोत्तर एक-एक वर्गणाविशेषकी हानि द्वारा प्रदेश निक्षेपको करनेवालेके वैसा होनेमें विरोधका अभाव है। अब इससे आगे लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टिके नीचे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व

आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

* लोभस्स चेव विदियसमए विदियसंगहकिट्टीए तिस्से जहण्णियाए किट्टीए दिज्जमाणगं विसेसाहियमसंखेज्जदिभागेण ।

§ ८३. पढमसमए णिव्वत्तिदा जा लोभस्स विदियसंगहकिट्टी तिस्से हेट्ठा विदियसमए णिव्वत्तिज्जमाणा अपुव्वकिट्टीणं पंती पुव्वकिट्टीहिं सह विवक्खिया विदियसमए विदियसंगहकिट्टी णाम । तिस्से जा जहण्णिया किट्टी तत्थ दिज्जमाणयं पदेसग्गं पढमसंगहकिट्टीचरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गं पेक्खियूण विसेसाहियं होदि । होंतं पि णियमा असंखेज्जदिभागब्भहियं चेव, अण्णहा तत्तो एदस्स एयवग्गणविसेसमेत्तेण हाइदूण एयगोवुच्छायारेण समवट्ठाणाणुववत्तीदो । तं जहा—

§ ८४. पढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टिम्मि जेत्तिओ एण्हिं पदेसणिक्खेवो कओ तेत्तियमेत्तो चेव जइ विदियसंगहकिट्टीए हेट्ठिमाणमपुव्वकिट्टीणं जहण्णकिट्टीए पदेसणिक्खेवो होज्ज तो तत्तो एदस्सासंखेज्जदिभागहीणत्तं पसज्जदे, तत्थ पुव्वावट्ठिदासंखेज्जदिभागमेत्तदव्वस्सेत्थ परिहीणत्तदंसणादो । ण चेदमिच्छिज्जदे, सव्वासु किट्टीसु एया गोवुच्छासेढि त्ति पइण्णाए विघादप्पसंगादो । तम्हा तत्थ पुव्वावट्ठिददव्वमेत्तेणाणंतभागहीणेण समहिओ पदेसणिक्खेवो एत्थ इच्छियव्वो । अण्णहा तत्तो एगवग्गणविसेसमेत्तेण हाइदूण एत्थतणपदेसग्गस्सावट्ठाणविरोहादो । तदो सिद्धमसंखेज्जदिभागुत्तरो पदेसणिसेगो एदम्मि उद्देसे जादो त्ति । एवमुवरि वि जत्थ जत्थ पुव्वकिट्टीणं चरिमादो अपुव्वाणं जहण्णकिट्टीए असंखेज्जदिभागुत्तरं पदेसणिक्खेवं भणिहिदि तत्थ तत्थ कारण-

---

कृष्टियोंमें जो जघन्य कृष्टि है उसमें किस प्रकारका प्रदेशविन्यास होता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णय करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

* लोभकी ही दूसरे समयमें उस दूसरी संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिमें असंख्यातवां भागप्रमाण विशेष अधिक प्रदेशपुंज दिया जाता है ।

§ ८३. प्रथम समयमें लोभकी जो संग्रह कृष्टि निष्पन्न हुई उसके नीचे दूसरे समयमें जो अपूर्व कृष्टियोंकी पंक्ति निष्पन्न हो रही है, पूर्व कृष्टियोंके साथ विवक्षित हुई वह दूसरे समयमें दूसरी संग्रह कृष्टि कहलाती है । उसकी जो जघन्य कृष्टि है उसमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजको देखते हुए विशेष अधिक होता है । ऐसा होता हुआ भी नियमसे असंख्यातवां भागप्रमाण ही अधिक होता है, अन्यथा उससे इसके एक वर्गणा विशेषमात्र घटकर एक गोपुच्छाके आकाररूप समवस्थान नहीं बन सकता है । वह जैसे—

§ ८४. प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमें इस समय जितना प्रदेशनिक्षेप किया है उतना ही यदि दूसरी संग्रह कृष्टिकी अधस्तन अपूर्व कृष्टियोंसम्बन्धी जघन्य कृष्टिमें प्रदेश निक्षेप होवे तो उससे इसके असंख्यातवें भागहीनपनेका प्रसंग प्राप्त होता है, क्योंकि उसमें जो पूर्वका असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्य अवस्थित है उसकी हानि देखी जाती है । परन्तु यह इष्ट नहीं है, क्योंकि समस्त कृष्टियोंमें एक गोपुच्छा पंक्ति होती है इस प्रतिज्ञाके विघातका प्रसंग प्राप्त होता है, इसलिए उसमें जो पहलेका अनन्तवां भागहीन द्रव्य अवस्थित है उससे अधिक प्रदेश निक्षेप यहाँ स्वीकार करना चाहिए, अन्यथा उससे एक वर्गणाविशेष मात्र घटकर यहांके प्रदेशपुंजके अवस्थान माननेमें विरोध आता है, इसलिए सिद्ध हुआ कि असंख्यातवां भाग अधिक प्रदेश निक्षेप इस स्थानमें हो गया है । इसी प्रकार आगे भी जहाँ-जहाँ पूर्व कृष्टियों सम्बन्धी अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें असंख्यातवां भाग अधिक प्रदेश निक्षेप कहेंगे वहाँ-वहाँ यह कारण कहना चाहिए । अब

मेदं परूवेयव्वं। संपहि एत्तो उवरिमासु अपुव्वकिट्टीसु विदियसंगहकिट्टीए हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणियासु अणंतरोवणिधाए अणंतभागहीणं चेव पदेसणिक्खेवं कुणदि त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

* तेण परमणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमादो त्ति।

§ ८५. किं कारणं? एदम्मि अद्धाणे अणंतभागहाणिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। संपहि एत्थतणाणमपुव्वकिट्टीणं चरिमादो पढमसमये णिव्वत्तिदाणं पुव्वकिट्टीणं लोभविदियसंगहकिट्टीपडिबद्धाणं जहण्णियाए किट्टीए पदेसविण्णासो एदेण सरूवेण पयट्टदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* तदो पढमसमयणिव्वत्तिदाणं जहण्णियाए किट्टीए विसेसहीणमसंखेज्जदिभागेण।

§ ८६. तत्थ पुव्वावट्ठिदासंखेज्जदिभागमेत्तेण पुणो एगवग्गणविसेसमेत्तेण च परिहीणो पदेसणिसेगो एदम्मि संधिविसेसे होदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो।

* तेण परं विसेसहीणमणंतभागेण जाव विदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति।

§ ८७. सुगमं।

* तदो जहा विदियसंगहकिट्टीए विधी तहा चेव तदियसंगहकिट्टीए विधी च।

§ ८८. जहा विदियसंगहकिट्टीए आदिम्मि अपुव्वाणं जहण्णकिट्टीए एगवारमसंखेज्जभागुत्तरपदेसविण्णासो होदूण तत्तो परमणंतभागहाणीए अपुव्वकिट्टीओ समुल्लंघियूण पुव्वकिट्टीणमादिल्ल-

---

इससे उपरिम अपूर्व कृष्टियोंमें दूसरी संग्रह कृष्टिके नीचे निष्पन्न होनेवाली कृष्टियोंमें अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तभागहीन ही प्रदेश निक्षेप करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ उससे आगे दूसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्तभागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है।

§ ८५. क्योंकि इस स्थानमें अनन्त भागहानिको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। अब यहांकी अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे प्रथम समयमें निष्पन्न हुई लोभसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें प्रदेश निक्षेप इस रूपसे प्रवृत्त होता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

❀ उससे प्रथम समयमें निष्पन्न हुई संग्रह कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें असंख्यातवें भागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है।

§ ८६. क्योंकि उसमें पूर्वके अवस्थित असंख्यातवें भागप्रमाण एक वर्गणाविशेषमात्र परिहीन प्रदेशनिक्षेप इस सन्धिविशेषमें होता है यह यहां इस सूत्रका समुच्चयार्थ है।

❀ उससे आगे दूसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि तक अनन्तवें भागप्रमाण विशेष हीन द्रव्य दिया जाता है।

§ ८७. यह सूत्र सुगम है।

❀ तदनन्तर जिस प्रकार दूसरी संग्रह कृष्टिकी विधि कही गयी है उसी प्रकार तीसरी संग्रह कृष्टिकी विधि जाननी चाहिए।

§ ८८. जिस प्रकार दूसरी संग्रह कृष्टिके आदिमें अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें एक बार असंख्यातवें भाग अधिक प्रदेश विन्यास होकर उससे आगे अनन्तभाग हानि द्वारा अपूर्व कृष्टियों-

संधीए सइमसंखेज्जभागहाणी होदूण तत्तो परमणंतभागहाणीए चेव पदेसणिसेगविही परूविदो तहा चेव लोभतदियसंगहकिट्टीए वि अणूणाहिओ परूवेयव्वो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चयो। संपहि लोभसंजलणस्स तदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टिम्मि णिसित्तपदेसग्गादो मायाए पढमसंगह-किट्टीए हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं जहण्णियाए किट्टीए णिसिच्चमाणपदेसग्गमेदेण कमेण पयट्टदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

* तदो लोभस्स चरिमादो किट्टीदो मायाए जा विदियसमए जहण्णिया किट्टी तिस्से दिज्जदि पदेसग्गं विसेसाहियमसंखेज्जदिभागेण।

§ ८९. कारणमेत्थ सुगमं, अणंतरमेव परूविदत्तादो।

* तदो पुण अणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमादो त्ति।

§ ९०. सुगमं।

* एवं जम्हि जम्हि अपुव्वाणं जहण्णिया किट्टी तम्हि तम्हि विसेसाहिय-मसंखेज्जदिभागेण अपुव्वाणं चरिमादो असंखेज्जदिभागहीणं।

§ ९१. एवमणंतरपरूविदेण कमेण उवरि वि सेढिपरूवणाए कीरमाणाए जम्हि जम्हि उद्देसे पुव्वाणं चरिमादो अपुव्वाणं जहण्णिया किट्टी भण्णदे तम्हि तम्हि तदणंतरहेट्ठिमपुव्व-किट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो असंखेज्जदिभागेण विसेसाहियं कादूण पदेसग्गं णिक्खिवदि। पुणो

को उल्लंघन कर पूर्व कृष्टियोंकी आदिम सन्धिमें एक बार असंख्यात भागहानि होकर उससे आगे अनन्तभाग हानिरूपसे ही प्रदेशनिषेकविधि कहनी चाहिए। तथा उसी प्रकार लोभकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी भी न्यूनाधिकतासे रहित विधि कहनी चाहिए, यह यहाँ पर सूत्रार्थसमुच्चय है। अब लोभसंज्वलनकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे माया संज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके नीचे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें निक्षिप्त होनेवाला प्रदेश पुंज इस क्रमसे प्रवृत्त होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* तत्पश्चात् लोभ संज्वलनकी अन्तिम कृष्टिसे माया संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके नीचे दूसरे समयमें जो जघन्य कृष्टि निष्पन्न होती है उसमें दिये जानेवाला प्रदेश पुंज असंख्यातवें भागप्रमाण विशेष अधिक होता है।

§ ८९. यहाँपर कारणका कथन सुगम है, क्योंकि वह अनन्तर पूर्व ही कह आये हैं।

* पुनः इससे आगे अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्त भागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है।

§ ९०. यह सूत्र सुगम है।

* इस प्रकार जहाँ-जहाँ पूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि कही गई है वहाँ-वहाँ असंख्यातवाँ भागप्रमाण अधिक प्रदेशपंज दिया जाता है और जहाँ-जहाँ अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि कही गई है वहाँ-वहाँ असंख्यातवाँ भागहोन प्रदेशपुंज दिया जाता है।

§ ९१. इस प्रकार अनन्तर पूर्व कहे गये क्रमके अनुसार आगे भी श्रेणिप्ररूपणा करनेपर जिस-जिस स्थानपर पूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि कही जाती है उस-उस स्थानपर तदनन्तर अधस्तन पूर्व कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे असंख्यातवें भागप्रमाण

जम्हि जम्हि अपुव्वाणं चरिमकिट्टीदो पुव्वाणं जहण्णिया किट्टी भण्णदे तम्हि तम्हि पुव्वणिसित्ता-संखेज्जदिभागमेत्तदव्वेण परिहीणं कादूण पदेसग्गं णिसिंचदि। तदण्णत्थ पुण अणंतराणंतरादो अणंतभागहाणीए पदेसणिसेगं कुणदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवं च सेढिपरूवणं कादूण जोइज्जमाणे केत्तिएसु उद्देसेसु असंखेज्जभागहीणो पदेसविण्णासो जादो, केत्तिएसु वा उद्देसेसु असंखेज्जदिभागुत्तरो पदेसणिक्खेवो जादो त्ति इममत्थविसेसं परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एदेण कमेण विदियसमए णिक्खिवमाणगस्स पदेसग्गस्स बारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागहीणं। एक्कारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागुत्तरं दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स।**

§ ९२. एवमणंतरपरूविदकमेण सेढिपरूवणं कादूण पुणो आदीदो प्पहुडि तम्हि जोइज्जमाणे विदियसमए णिसिंचमाणगस्स पदेसग्गस्स बारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागहीणं समवट्ठाणं होदि, बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमादिमसंधीसु अपुव्वाणं चरिमकिट्टीदो पुव्वजहण्णकिट्टीए णिसिंचमाणपदेसग्गस्स परिप्फुडमेव तहाभावोवलंभादो। पुणो एक्कारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जभागुत्तरं दिज्जमाणपदेसग्गावट्ठाणं होइ, पुव्वकिट्टीणं चरिमसंधीदो अपुव्वाणं जहण्णकिट्टीसु णियमा असंखेज्जदिभागुत्तरं पदेसणिक्खेवं कुणमाणस्स तहाभावसिद्धीए बाहाणुवलंभादो। पुणो एदाणि तेवीससंधिट्ठाणाणि मोत्तूण सेसासेसकिट्टिट्ठाणेसु अणंतभागहीणो चेव पदेसविण्णासो होइ, ण तत्थ पयारंतरसंभवो[1] त्ति जाणावणफलमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

विशेष अधिक करके प्रदेशपुंज निक्षिप्त करता है। तथा जिस-जिस स्थान पर अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि कही जाती है उस-उस स्थान पर पूर्वमें निक्षिप्त हुए असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको हीन करके प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। पुनः उससे अन्यत्र अनन्तर-अनन्तररूपसे अनन्त भागहानि द्वारा प्रदेश निषेकको करता है यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार श्रेणिप्ररूपणाको करके देखनेपर कितने ही स्थानोंमें असंख्यात भागहीन प्रदेश विन्यास हो गया है तथा कितने ही स्थानोंमें असंख्यातवां भाग अधिक प्रदेश निक्षेप हो गया है इस प्रकार इस अर्थ विशेषका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस क्रमसे दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजका बारह स्थानोंमें असंख्यातवें भाग-हीन अवस्थान होता है तथा दिये जानेवाले प्रदेशपुंजका ग्यारह स्थानोंमें असंख्यातवें भाग अधिक अवस्थान होता है।**

§ ९२. इस प्रकार अनन्तर कहे गये क्रमके अनुसार श्रेणिकी प्ररूपणा करके पुनः प्रारम्भसे लेकर उसके देखने पर दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजका बारह कृष्टिस्थानोंमें असंख्यातवें भागहीन अवस्थान होता है, क्योंकि बारह ही संग्रह कृष्टियोंकी प्रारम्भिक सन्धियोंमें अपूर्व अन्तिम कृष्टिसे पूर्वकी जघन्य कृष्टिमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज स्पष्ट रूपसे उस प्रकार उपलब्ध होता है। तथा ग्यारह कृष्टि स्थानोंमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजका असंख्यातवें भाग अधिक अवस्थान होता है, क्योंकि पूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टियोंमें नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक प्रदेशोंका निक्षेप करनेवालेके उस प्रकारसे सिद्धि होनेमें बाधा नहीं पायी जाती है। पुनः इन तेईस सन्धि स्थानोंको छोड़कर शेष समस्त कृष्टिस्थानोंमें उत्तरोत्तर अनन्तवें भागहीन ही प्रदेशविन्यास होता है, क्योंकि उन स्थानोंमें प्रकारान्तर सम्भव नहीं है इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके फलस्वरूप आगेका सूत्र आया है—

---

१. ता. आ. प्रत्योः पयारंतरासंभवो इति पाठः।

* सेसेसु किट्टिट्ठाणेसु अणंतभागहीणं दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स ।

§ ९३. कुदो ? एगेगवग्गणविसेसमेत्तेण अणंतराणंतरादो हीणं कादूण तत्थ पदेसणिसेगं कुणमाणस्स पयारंतराणुवलंभादो ।

* विदियसमए दिज्जमाणयस्स पदेसग्गस्स एसा उट्टकूडसेढी ।

§ ९४. जदो एवं बारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागहाणीए परिहाइदूण एक्कारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जभागुत्तरवड्ढीए वड्ढिदूण पुणो सेसासेसकिट्टिट्ठाणेसु अणंतभागहाणीए विदियसमए दिज्जमाणपदेसग्गस्स समवट्ठाणणियमो तदो एसा दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढी उट्टकूडसरिसी जादा । जहा उट्टस्स पुट्ठी पच्छिमभागे उच्चा होदूण पुणो मज्झे णीचा भवदि, पुणो उवरि वि णीचुच्चसरूवेण गच्छदि, एवमिहावि पदेसणिसेगो आदिम्मि बहुगो होदूण पुणो थोवो भवदि पुणो वि संधिविसेसेसु थोवो बहुओ च होदूण गच्छदि त्ति तेण कारणेण उट्टकूडसमाणा सेढी दिज्जमाणपदेसग्गस्स जादा त्ति भणिदं होइ ।

§ ९५. संपहि एत्थेव दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणट्ठमिदमाह—

* शेष कृष्टिस्थानोंमें दीयमान प्रदेशपुंजका अनन्त भागहीन अवस्थान होता है ।

§ ९३. क्योंकि एक-एक वर्गणाविशेषको अनन्तर-तदनन्तर क्रमसे हीन करके उन कृष्टि-स्थानोंमें प्रदेशनिषेकको करनेवालेके अन्य प्रकार नहीं उपलब्ध होता ।

* इस प्रकार दूसरे समयमें दीयमान प्रदेशपुंजकी यह उष्ट्रकूटश्रेणि है ।

§ ९४. यतः इस प्रकार बारह कृष्टि स्थानोंमें असंख्यातवें भागहीनप्रमाण घटकर और ग्यारह कृष्टिस्थानोंमें असंख्यात भाग वृद्धि प्रमाण बढ़कर पुनः शेष सम्पूर्ण कृष्टि स्थानोंमें अनन्त-भागहानिरूपसे दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजके अवस्थानका नियम है, इसलिए दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी यह श्रेणि उष्ट्रकूटके समान हो जाती है । जिस प्रकार ऊँटकी पीठ पिछले भागमें ऊँची होकर पुनः मध्यमें नीची हो जाती है । पुनः आगे भी ऊँची और नीची होकर जाती है इसी प्रकार यहाँ इस श्रेणिमें भी प्रदेशनिषेक प्रारम्भमें बहुत होकर पुनः स्तोक होता है तथा फिर भी सन्धि-विशेषोंमें कम-अधिक होता जाता है, इस कारण दीयमान प्रदेशपुंजकी श्रेणि उष्ट्रकूटके समान हो गयी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—संग्रहकृष्टियाँ बारह हैं, अतः उनके सन्धिस्थान ग्यारह होते हैं तथा इस कारण अन्तर कृष्टियोंके सन्धिस्थान बारह हो जाते हैं । इन सन्धिस्थानोंको ध्यानमें रखकर निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजका अवस्थान जिस-जिस स्थानपर पूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि कही गयी है वहाँ-वहाँ तदनन्तर अधस्तन कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे असंख्यातवें भाग प्रमाण अधिक होता है तथा जिस-जिस स्थानपर अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे पूर्व-कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि कही गयी है वहाँ-वहाँ पूर्व निक्षिप्त हुए द्रव्यसे असंख्यातवें भागहीन द्रव्य होता है । तथा इन तेईस स्थानोंको छोड़कर शेष रहे सभी स्थानोंमें अनन्तवें भागहीन प्रदेश विन्यास होता है । इस कारण दूसरे समयमें पूरा प्रदेश विन्यास ऊँटकी पोठके समान हो जाता है । जिस प्रकार ऊँटकी पीठ पिछले भागमें ऊँची होकर मध्यमें नीची होती है । पुनः नीची-ऊँची होकर जाती है । उसी प्रकार प्रदेशविन्यास भी आदिमें बहुत होकर पुनः स्तोक होता है । तथा इसके बादमें पुनः स्तोक बहुत होकर जाता है । इस कारण दूसरे समयमें दिये जानेवाले इस प्रदेश विन्यासको प्रकृतमें उष्ट्रकूटश्रेणि कहा गया है ।

§ ९५. अब यहीं पर दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** जं पुण विदियसमए दीसदि किट्टीसु पदेसग्गं तं जहण्णियाए बहुअं, सेसासु सव्वासु अणंतरोवणिधाए अणंतभागहीणं ।**

§ ९६. जहा दिज्जमाणपदेसग्गस्स उट्टकूडागारेण णिसेगविण्णासो जादो ण तहा दिस्समाणग्गस्स पदेसग्गस्स; किंतु जहण्णियाए किट्टीए बहुअं होदूण सेसासु सव्वासु किट्टीसु जहाकममणंतराणंतरादो अणंतभागहाणीए चेव दिस्समाणपदेसग्गस्सावट्ठाणं होइ, पयारंतरपरिहारेणेगेगवग्गणविसेसहाणिपदेसग्गावट्ठाणस्स तत्थ परिप्फुडमुवलंभादो । एवमेत्तिएण पबंधेण विदियसमए दिज्जमाण-दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं समाणिय संपहि तदियादिसमएसु वि एवं चेव सेढिपरूवणा कायव्वा त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** जहा विदियसमए किट्टीसु पदेसग्गं तहा सव्विस्से किट्टीकरणद्धाए दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स तेवीसमुट्टकूडाणि ।**

§ ९७. जहा विदियसमए दिज्जमाणपदेसग्गस्स तेवीसमुट्टकूडाणि जादाणि तहा सव्विस्से चेव किट्टीकरणद्धाए परूवेयव्वाणि, विसेसाभावादो त्ति भणिदं होइ ।

§ ९८. संपहि दिस्समाणयं सव्वत्थोवाणंतभागहाणीए एयगोवुच्छायारेण वट्टव्वं, तत्थ पयारंतरासंभवो[1] त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** पुनः दूसरे समयमें कृष्टियोंमें जो प्रदेशपुंज दिखाई देता है वह जघन्य कृष्टिमें बहुत होता है, शेष सब कृष्टियोंमें अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तवें भागहीन होता है ।**

§ ९६. जिस प्रकार दीयमान प्रदेशपुंजका उष्ट्रकूटके आकारके समान निषेक विन्यास हो जाता है, दिखनेवाले प्रदेशपुंजका उस प्रकारसे प्रदेशविन्यास नहीं होता है । किन्तु जघन्य कृष्टिमें बहुत होकर शेष सभी कृष्टियोंमें यथाक्रम अनन्तर-अदनन्तररूपसे अनन्त भागहानि होकर ही दिखनेवाले प्रदेशपुंजका अवस्थान होता है, क्योंकि प्रकारान्तरपनेके परिहार द्वारा एक-एक वर्गणा विशेषकी हानि होकर प्रदेशपुंजका अवस्थान वहाँपर स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है । इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा दूसरे समयमें दीयमान और दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा समाप्त करके अब तीसरे आदि समयोंमें भी इसी प्रकार श्रेणिप्ररूपणा करनी चाहिए इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जिस प्रकार दूसरे समयमें कृष्टियोंमें दीयमान प्रदेशपुंजकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार समस्त कृष्टिकरणके कालमें दीयमान प्रदेशपुंजकी प्ररूपणा करनेपर तेईस उष्ट्रकूट होते हैं ।**

§ ९७. जिस प्रकार दूसरे समयमें दीयमान प्रदेशपुंजके तेईस उष्ट्रकूट हो जाते हैं उसी प्रकार पूरे कृष्टिकरणके कालमें कथन करना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कथनसे इसमें कोई विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—कुल सन्धिस्थान तेईस हैं, इसलिए दूसरे समयमें जिस प्रकार दीयमान प्रदेशपुंजकी तेईस उष्ट्रकूटश्रेणियां हो जाती हैं उसी प्रकार आगे भी कृष्टिकरणका जितना काल शेष रहा है उसके प्रत्येक समयमें दीयमान प्रदेशपुंजकी उष्ट्रकूटके समान रचना जान लेनी चाहिए ।

§ ९८. अब दिखनेवाला प्रदेशपुंज सर्वत्र अनन्त भागहानि द्वारा एक गोपुच्छाके आकारसे सबसे स्तोक जानना चाहिए, वहाँ अन्य प्रकार सम्भव नहीं है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

---

१. ता. प्रती-संभवादो इति पाठः ।

* दिस्समाणयं सव्वम्हि अणंतभागहीणं ।

§ ९९. गयत्थमेदं सुत्तं । संपहि किट्टीकरणद्धाए समयं पडि ओकड्डिज्जमाणदव्वविसेस-जाणावणट्ठमुवरिममप्पाबहुअसुत्तमाह—

* जं पदेसग्गं सव्वसमासेण पढमसमए किट्टीसु दिज्जदि तं थोवं । विदियसमए असंखेज्जगुणं । तदियसमये असंखेज्जगुणं । एवं जाव चरिमादो त्ति असंखेज्जगुणं ।

§ १००. पडिसमयमणंतगुणाए विसोहीए वड्ढमाणो सव्विस्से चेव किट्टीकरणद्धाए असंखेज्जगुणमसंखेज्जगुणं पदेसग्गमोकड्डियूण किट्टीसु णिक्खिवदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स समुदायत्थो । एवमंतोमुहुत्तं किट्टीकरणद्धमणुपालिय कमेण किट्टीकारगचरिमसमये वट्टमाणस्स जो परूवणाविसेसो ट्ठिदिबंधादिविसओ तव्विहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा अंतोमुहुत्त-ब्भहिया । सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ १०१. पुव्वुत्तसंधीए संजलणाणं ट्ठिदिबंधो अट्ठवस्सपमाणो होंतो कमेण तत्तो परिहाइदूण एत्थुद्देसे अंतोमुहुत्ताहियचदुमासमेत्तो संजादो । सेसाणं पुण कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जवस्ससहस्सि-यादो पुव्विल्लट्ठिदिबंधादो संखेज्जगुणहाणीए संखेज्जेहि ट्ठिदिबंधोसरणसहस्सेहि ओहट्टिदो वि संतो संखेज्जवस्ससहस्समेत्तो चेव होदूण पयट्टदि त्ति सुत्तत्थसंगहो ।

* तम्हि चेव किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि हाइदूण अट्ठवस्सिगमंतोमुहुत्तब्भहियं जादं । तिण्हं घादिकम्माणं

---

* परन्तु दिखनेवाला प्रदेशपुंज सभी कालोंमें अनन्त भागहीन है ।

§ ९९. यह सूत्र गतार्थ है । अब कृष्टिकरण कालके प्रत्येक समयमें अपकर्षित होनेवाले द्रव्य विशेषका ज्ञान करानेके लिए आगेके अल्पबहुत्व सूत्रको कहते हैं—

* प्रथम समयमें जो प्रदेशपुंज समस्तरूपसे कृष्टियोंमें दिया जाता है वह सबसे स्तोक है । दूसरे समयमें असंख्यातगुणा है । तीसरे समयमें असंख्यातगुणा है । इसी प्रकार अन्तिम समय तक दिया जानेवाला प्रदेशपुंज उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा है ।

§ १०० प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी विशुद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होता हुआ यह जीव समस्त कृष्टिकरणके कालमें प्रति समय असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके कृष्टियोंमें निक्षिप्त करता है यह इस सूत्रका समुदायरूप अर्थ है । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त तक कृष्टिकरणकाल-का पालन करके क्रमसे कृष्टिकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान जीवके स्थितिबन्धादिका जो प्ररूपणाविशेष है उसका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* कृष्टिकरण कालके अन्तिम समयमें संज्वलनोंका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त अधिक चार माह होता है तथा शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्ष होता है ।

§ १०१ पूर्वोक्त सन्धिमें संज्वलनोंका स्थितिबन्ध आठ वर्षप्रमाण होता हुआ क्रमसे उससे घटकर इस स्थानमें अन्तर्मुहूर्त अधिक चार माह हो गया है । परन्तु शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षरूप बन्धसे संख्यात गुणहानि द्वारा संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरणरूपसे घटकर भी संख्यात हजार वर्षप्रमाण ही होकर प्रवृत्त रहता है यह इस सूत्रका समुच्चयार्थ है ।

* उसी कृष्टिकरणके कालके अन्तिम समयमें मोहनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष घटकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष हो जाता है । तथा तीन घातिकर्मोंका स्थिति-

ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्म-मसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ १०२. पुव्वुत्तसंधीए चदुण्हं संजलणाणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जवस्ससहस्समेत्तं होदूण ट्ठिदं, तत्तो कमेण हाइदूण एण्हिमंतोमुहुत्ताहियअट्ठवस्सपमाणं संजादं। सेसाणं तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममज्ज वि संखेज्जवस्ससहस्सियं चेव, मोहणीयस्सेव तेसिं सुट्ठु विसेसघादाभावादो। तिण्हमघादिकम्माणं पुण ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जगुणहाणीए जहाकममोवट्टमाणं पि अज्ज वि असंखेज्जवस्ससहस्सपमाणं चेव होइ, तेसिमेदम्मि विसये पयारंतरासंभवादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थविणिच्छओ। एवमेदीए परूवणाए किट्टीकरणद्धाचरिमसमए वट्टमाणस्स पुणो वि अइक्कंतत्थविसये किंचि परूवणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** किट्टीओ करेंतो पुव्वफद्दयाणि अपुव्वफद्दयाणि च वेदेदि, किट्टीओ ण वेदयदि ।**

§ १०३. जहा अपुव्वफद्दयाणि करेमाणो तदवत्थाए चेव पुव्वफद्दएहिं सह अपुव्वफद्दयाणि वेदेदि ण एवमेसो किट्टीकारगो किट्टीओ वेदेदि, किन्तु किट्टीकरणकालब्भंतरे सव्वत्थेव पुव्वा-पुव्वफद्दयाणि चेव पुव्वुत्तेण कमेण वेदेदि त्ति भणिदं होदि। संपहि किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए पुव्वापुव्वफद्दयाणमसंखेज्जदिभागमेत्तं दव्वं दुचरिमसमयोकड्डिददव्वादो असंखेज्जगुणपमाण-मोकड्डिय पुव्वुत्तेणेव कमेण किट्टीसु णिक्खिवदि। पुव्वापुव्वफद्दयाणि च ताधे अविणट्ठसरूवाणि

सत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण तथा नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म असंख्यात हजार वर्ष प्रमाण हो जाता है ।

§ १०२. पूर्वोक्त सन्धिमें चार संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होकर स्थित रहता है। पुनः उससे क्रमशः घटकर इस समय अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष प्रमाण हो जाता है। शेष तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म अभी भी संख्यात हजार वर्ष प्रमाण ही रहता है, क्योंकि मोहनीय कर्मके समान उनका अच्छी तरह विशेष घात नहीं होता। परन्तु असंख्यात गुणहानि द्वारा क्रमशः अपवर्तनको प्राप्त हुए तीन अघाति कर्मोंका स्थितिसत्कर्म अभी भी असंख्यात हजार वर्षप्रमाण ही रहता है, क्योंकि उनका इस स्थानपर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है यह यहाँपर सूत्रके अर्थका निश्चय है। इस प्रकार इस प्ररूपणा द्वारा कृष्टिकरण कालके अन्तिम समयमें विद्यमान हुए जीवके फिर भी व्यतीत हुए अर्थके विषयमें किंचित् प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** कृष्टियोंको करनेवाला जीव पूर्व स्पर्धकों और अपूर्व स्पर्धकोंका वेदन करता है, कृष्टियों-का वेदन नहीं करता ।**

§ १०३. जिस प्रकार अपूर्व स्पर्धकोंको करनेवाला जीव उस अवस्थामें ही पूर्व स्पर्धकोंके साथ अपूर्व स्पर्धकोंका वेदन करता है उस प्रकार कृष्टिकारक यह जीव कृष्टियोंका वेदन नहीं ही करता है। किन्तु कृष्टिकरणके कालके भीतर सभी समयोंमें ही पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंका ही पूर्वोक्त क्रमसे वेदन करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब कृष्टिकरणके कालके अन्तिम समयमें पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंके असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्य, जो कि उपान्त्य समयमें अपकर्षित किये गये द्रव्यसे असंख्यातगुणा है, उसे अपकर्षित करके पूर्वोक्त क्रमके अनुसार कृष्टियोंमें निक्षिप्त करता है तथा पूर्व और अपूर्व स्पर्धक उस समय अविनष्टरूपसे अवस्थित रहते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण

चिट्ठंति त्ति घेत्तव्वं। संपहि एदम्मि चेव समए किट्टीकरणद्धा समप्पदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** किट्टीकरणद्धा णिट्ठायदि पढमट्ठिदीए आवलियाए सेसाए।**

§ १०४. किट्टीकरणद्धाचरिमसमए वेदिज्जमाणमुदयट्ठिदिं मोत्तूण तत्तो उवरि आवलियमेत्ताए कोहसंजलणपढमट्ठिदीए सेसाए किट्टीकरणद्धा कमेण णिट्ठायमाणा णिट्ठिदा त्ति वुत्तं होइ, उप्पादाणुच्छेदमस्सियूण किट्टीकरणद्धाचरिमसमए चेव तिस्से परिसमत्तिदंसणादो। अणुप्पादाणुच्छेदविवक्खाए पुण से काले किट्टीओ वेदेमाणस्स पढमसमए कालं पेक्खिदूणावलियमेत्तसेसाए पढमट्ठिदीए किट्टीकरणद्धा समप्पदि त्ति घेत्तव्वं। णवरि सुत्ते एसा विवक्खा ण कया, उप्पादाणुच्छेदस्सेव तत्थ विवक्खियत्तादो।

§ १०५. एवमेत्थ किट्टीकरणद्धाए णिट्ठिदाए तदो से काले जो पवुत्तिविसेसो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** से काले किट्टीओ पवेसेदि।**

करना चाहिए। अब इसी समय कृष्टिकरण काल समाप्त होता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** प्रथम स्थितिमें एक आवलिप्रमाण काल शेष रहने पर कृष्टिकरण काल समाप्त होता है।**

§ १०४. कृष्टिकरण कालके अन्तिम समयमें वेदन की जानेवाली उदय स्थितिको छोड़कर उससे ऊपर क्रोध-संज्वलनकी एक आवलि प्रमाण प्रथम स्थितिके शेष रहनेपर कृष्टिकरण काल क्रमसे समाप्त होता हुआ समाप्त हो गया यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि उत्पादानुच्छेदका आलम्बन लेकर कृष्टिकरण कालके अन्तिम समयमें ही उसकी परिसमाप्ति देखी जाती है। परन्तु अनुत्पादानुच्छेदकी विवक्षा करनेपर तदनन्तर समयमें कृष्टियोंका वेदन करनेवाले जीवके प्रथम समयमें कालकी अपेक्षा एक आवलिमात्र प्रथम स्थितिके शेष रहनेपर कृष्टिकरण काल समाप्त होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। परन्तु सूत्रमें यह विवक्षा नहीं की गयी है, क्योंकि उत्पादानुच्छेद ही उसमें विवक्षित है।

विशेषार्थ—नय दो प्रकारके हैं—द्रव्यार्थिक नय और पर्यायार्थिक नय। उनमेंसे द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा यहाँ उसे उत्पादानुच्छेदरूप स्वीकार किया गया है। यह नय सत्त्व अवस्थामें ही विनाशको स्वीकार करता है, क्योंकि असत्त्व बुद्धिका विषय नहीं होनेसे वह वचनके अगोचर है, इसलिए इस अपेक्षा उसमें अभाव व्यवहार करना अशक्य है। यही कारण है कि प्रकृतमें कृष्टिकरण कालके अन्तिम समयमें ही इस नयसे उसका अभाव कहा गया है। तथा पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा उसे अनुत्पादानुच्छेदरूप स्वीकार किया गया है। इस नयकी अपेक्षा भाव अभाव नहीं हो सकता, क्योंकि भाव और अभाव परस्पर विरुद्ध होनेसे उनमें एकपनेका व्यवहार नहीं किया जा सकता। अतः यह नय असत्त्व अवस्थामें ही अभावको स्वीकार करता है। यही कारण है कि प्रकृतमें कृष्टि वेदनके प्रथम समयमें ही इस नयसे कृष्टिकरणके कालकी समाप्ति स्वीकार की गयी है।

§ १०५. इस प्रकार यहाँपर कृष्टिकरणकालके समाप्त होने पर तत्पश्चात् अनन्तर समयमें जो प्रवृत्तिविशेष होता है उसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** तदनन्तर समयमें कृष्टियोंको उदयावलिमें प्रवेश कराता है।**

§ १०६. किट्टीकरणद्धाए णिट्ठिदाए तदणंतरसमए चेव विदियट्ठिदीदो ओकड्डियूण किट्टीओ उदयावलियब्भंतरं पवेसेदि, अण्णहा विदियट्ठिदिसमवट्ठिदाणं तासिं वेदगभावाणुववत्तीदो। एदम्मि समए पढमट्ठिदिसेसमावलियपमाणं होदि, कालपहाणत्ते विवक्खिये तहोवलंभादो। णिसेगपहाणत्ते पुण समयूणावलियमेत्ती होदि, उदयावलियपढमणिसेयस्स त्थिवुक्कसंकमेण तक्कालमेव किट्टीसरूवेण परिणदत्तादो।

* ताधे संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा।

§ १०७. पुव्विल्लसमए ट्ठिदिबंधपमाणं चत्तारि मासा अंतोमुहुत्तब्भहिया। एण्हिं पुण तत्तो अंतोमुहुत्तमोसरियूण अण्णं ट्ठिदिबंधं कुणमाणस्स संजलणाणं ट्ठिदिबंधो संपुण्णचत्तारि-माससेत्तो संजादो त्ति सुत्तत्थसमुच्चओ।

* ट्ठिदिसतकम्ममट्ठ वस्साणि।

§ १०८. पुव्विल्लसमए अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्सपमाणं ट्ठिदिसंतकम्मं होदूण तत्थेव ट्ठिदिखंडयचरिमफालीए अंतोमुहुत्तपमाणाए णिवदिदाए एण्हिमट्ठवस्समेत्तं संजलणाणं ट्ठिदि-संतकम्मं जादमिदि वुत्तं होइ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधा ट्ठिदिसंतकम्मं च संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।

§ १०६. कृष्टिकरणकालके समाप्त होनेपर तदनन्तर समयमें ही द्वितीय स्थितिमेंसे अपकर्षित कर कृष्टियोंको उदयावलिमें प्रवेश कराता है, अन्यथा द्वितीय स्थितिमें अवस्थित हुई उनका वेदकपना नहीं बन सकता है। इस समय प्रथम स्थिति शेष आवलिप्रमाण होती है, क्योंकि कालकी प्रधानताकी विवक्षा करनेपर इसकी उस प्रकारसे उपलब्धि होती है। परन्तु निषेकोंकी प्रधानतामें एक समय कम आवलि प्रमाण होती है, क्योंकि उदयावलिका प्रथम निषेक स्तिवुक संक्रमणके द्वारा उसी समय कृष्टिरूपसे परिणत हो जाता है।

विशेषार्थ—जिस समय क्रोध संज्वलनकी एक आवलि प्रमाण प्रथम स्थिति शेष रहती है उसी समय कृष्टिकरणका काल समाप्त होता है और अगले समयमें जब द्वितीय स्थितिमेंसे अपकर्षित होकर कृष्टियाँ उदयावलिमें प्रवेश करती हैं तब वह कृष्टियोंका वेदन काल है। उस समय यद्यपि प्रथम स्थिति कालकी अपेक्षा एक आवलि प्रमाण अवश्य है पर उदयावलिका जो प्रथम निषेक है वह द्वितीय स्थितिमें-से अपकर्षित हुई कृष्टिका सम्बन्धी न होकर स्तिवुक संक्रम-द्वारा निष्पन्न हुआ है, अतः कृष्टियोंके वेदन कालके प्रथम समयमें निषेकोंकी प्रधानतासे कृष्टियोंकी प्रथम स्थिति एक समय कम एक आवलि प्रमाण ही बनती है।

* उस समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध चार माह प्रमाण होता है।

§ १०७. पिछले समयमें स्थितिबन्धका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त अधिक चार माह था। परन्तु इस समय उसमें-से अन्तर्मुहूर्त कम करके अन्य स्थितिबन्ध करनेवाले जीवके संज्वलनोंका स्थिति-बन्ध सम्पूर्ण चार माह प्रमाण हो जाता है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

* स्थिति सत्कर्म आठ वर्ष प्रमाण है।

§ १०८. क्योंकि पिछले समयमें अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष प्रमाण स्थिति सत्कर्म होकर उसी समय स्थितिकाण्डककी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण अन्तिम फालिका पतन हो जाने पर इस समय संज्वलनोंका स्थिति सत्कर्म आठ वर्ष प्रमाण हो जाता है।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्ष प्रमाण है।

* णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

* ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ १०९. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि। संपहि एदम्हि चेव समए संजलणाणमणुभाग-संतकम्मं केरिसं होदि त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधो—

* अनुभागसंतकम्मं कोहसंजलणस्स जं संतकम्मं समयूणाए उदयावलियाए च्छुट्ठिदल्लिगाए तं सव्वघादी ।

§ ११०. कोहसंजलणस्स जमणुभागसंतकम्मं समयूणाए उदयावलियाए उच्छिट्ठावलिय-भावेण च्छुट्ठिदाए सेसं तं सव्वघादि चेवेत्ति दट्ठव्वं। किं कारणं? उदयावलियब्भंतरे सव्वघादि-सरूवेणावट्ठिदपुव्वाणुभागसंतकम्मस्सेव संभवदंसणादो।

* संजलणाणं जे दोआवलियबंधा दुसमयूणा ते देसघादी । तं पुण फद्दयगदं ।

§ १११ चदुण्हं संजलणाणं जे णवकबंधसमयपबद्धा दुसमयूणदोआवलियमेत्ता तेसिमणु-भागो णियमा देसघादी, एयट्ठाणियसरूवत्तादो। होंतो वि सो फद्दयसरूवो चेव दट्ठव्वो। किं कारणं? किट्टीकरणद्धाए फद्दयगदस्सेवाणुभागस्स बंधदंसणादो।

* सेसं किट्टीगदं ।

---

* नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण है।

* तथा इन तीन कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात हजार वर्ष प्रमाण है।

§ १०९. ये सूत्र सुगम हैं। अब इसी समय संज्वलनोंका अनुभागसत्कर्म किस प्रकारका होता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* क्रोधसंज्वलनका जो अनुभाग सत्कर्म एक समयकम उदयावलिमें निक्षिप्त है वह सर्वघाति है।

§ ११०. क्रोध संज्वलनका जो अनुभाग सत्कर्म एक समय कम उदयावलिमें उच्छिष्टावलि रूपसे निक्षिप्त होकर शेष रहा है वह सर्वघाति ही है ऐसा जानना चाहिए।

शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि उदयावलिके भीतर सर्वघातिरूपसे अवस्थित पहलेका अनुभागसत्कर्म ही सम्भव देखा जाता है। तात्पर्य यह है कि उदयावलिके भीतर जो अनुभाग सत्कर्म शेष रहा है वह पहलेका होनेसे सर्वघाति ही है ऐसा यहाँ जानना चाहिए।

* संज्वलनोंके जो दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध हैं वे देशघाति हैं। परन्तु वे स्पर्धकस्वरूप हैं।

§ १११. चारों संज्वलनोंके जो दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध समयप्रबद्ध हैं उनका अनुभाग नियमसे देशघाति है, क्योंकि वे एक स्थानीयस्वरूप हैं। ऐसा होते हुए भी वह अनुभाग स्पर्धकस्वरूप ही जानना चाहिए।

शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि कृष्टिकरणके कालमें स्पर्धक स्वरूप ही अनुभागका बन्ध देखा जाता है।

विशेषार्थ—जबतक यह जीव पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंमेंसे कृष्टियोंको निष्पन्न करता है तबतक चारों संज्वलनोंका बन्ध स्पर्धकस्वरूप ही होता रहता है ऐसा नियम है ।

* चारों संज्वलनोंका शेष सब अनुभावसत्त्व कृष्टिस्वरूप है।

§ ११२. चदुण्हं संजलणाणं दुसमयूणदोआवलियमेत्तणवकबंधाणुभागं कोहसंजलणस्सा-वळियपविट्ठाणुभागं च मोत्तूण सेसं चदुण्हं संजलणाणमणुभागसंतकम्मं सव्वमेव किट्टीसरूवेणेण्हि परिणदमिदि वुत्तं होइ। तदो किट्टीकरणद्धाए जाव चरिमसमओ ताव किट्टीगदसयलपदेसपिंडादो फद्दयगदसव्वपदेसपिंडमसंखेज्जगुणं होदूण दीसइ तदसंखेज्जदिभागस्सेव तत्थ किट्टीसरूवेण परिणमणदंसणादो। पुणो किट्टीवेदगद्धाए पढमसमयम्हि णवकबंधुच्छिट्ठावलियवज्जं सव्वमेव चदुसंजलणपदेसग्गं किट्टीसरूवेण परिणदमिदि एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। किट्टीकरणद्धा जाव समप्पदि ताव दिस्समाणे पेक्खिदूण किट्टीओ सत्थाणे एयगोवुच्छायारेण अच्छंति, फद्दयगदं पि पदेसग्गमप्पणो सत्थाणं एयगोवुच्छं होदूण चिट्ठदि। पुणो किट्टीकरणद्धाए समत्ताए दिस्समाणावेक्खाए सव्वं पि पदेसग्गमेयगोवुच्छसरूवेण परिणमिय चिट्ठदि त्ति घेत्तव्वं।

*** तम्हि चेव पढमसमए कोहस्स पढमसंगहकिट्टीदो[1] पदेसग्गमोकड्डियूण पढम-ट्ठिदिं करेदि।**

§ ११३. तम्हि चेव किट्टीवेदगद्धापढमसमए किट्टीओ पवेसेमाणो कोहसंजळणस्सेव ताव पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण सगवेदगकालादो आवलियब्भहियं कादूण पढमट्ठिदि-

---

§ ११२. चारों संज्वलनोंके दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्धस्वरूप अनुभागको और क्रोधसंज्वलनके उदयावलिप्रविष्ट अनुभागको छोड़कर शेष चारों संज्वलनोंका अनुभाग-सत्कर्म सम्पूर्ण ही इस समय कृष्टिस्वरूप परिणत हो गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिए कृष्टिकरण कालका जबतक अन्तिम समय प्राप्त होता है तब तक कृष्टिगत सम्पूर्ण प्रदेश-पिण्डसे स्पर्धकस्वरूप सम्पूर्ण प्रदेशपिण्ड असंख्यातगुणा दिखाई देता है, क्योंकि उसके असंख्यातवें *भागप्रमाण प्रदेशपिण्डका ही वहाँपर* कृष्टिरूपसे परिणमन देखा जाता है। पुनः कृष्टिवेदक-कालके प्रथम समयमें नवकबन्ध और उच्छिष्टावलिको छोड़कर चारों संज्वलनोंका सम्पूर्ण ही प्रदेशपुंज कृष्टिरूपसे परिणत हो गया है यह इस सूत्रका भावार्थ है। कृष्टिकरणकाल जबतक समाप्त होता है तबतक दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी अपेक्षा कृष्टियाँ स्वस्थानमें एक गोपुच्छाकार-रूपसे अवस्थित रहती हैं तथा स्पर्धकगत प्रदेशपुंज भी अपने स्वस्थानमें एक गोपुच्छारूप होकर अवस्थित रहता है। परन्तु कृष्टकरणकालके समाप्त होनेपर दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी अपेक्षा समस्त ही प्रदेशपुंज एक गोपुच्छाकाररूपसे परिणमन करके अवस्थित रहता है यह यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—कृष्टिकरण कालके अन्तिम समय तक चारों संज्वलनोंका अनुभाग स्पर्धकरूप-में भी अवस्थित रहता है और जो अनुभाग कृष्टिरूप परिणम गया है वह भी अपने रूपमें अवस्थित रहता है। इसलिए यहाँपर पूरे अनुभागको दो गोपुच्छाएँ बन जाती हैं। इन दोनों गोपुच्छाओंके स्वरूपका निर्देश पहले ही कर आये हैं। किन्तु जिस समय कृष्टिवेदन काल प्रारम्भ होता है उसी समय जितना भी स्पर्धकस्वरूप अनुभाग है वह सब एक गोपुच्छाकाररूपसे परिणत होकर दिखाई देने लगता है यह सूत्रका तात्पर्य है।

*** उसी कृष्टिवेदक कालके प्रथम समयमें क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।**

§ ११३. उसी कृष्टिवेदक कालके प्रथम समयमें कृष्टियोंको प्रवेशित करता हुआ सर्वप्रथम क्रोधसंज्वलनकी ही प्रथम संग्रह कृष्टिमें से प्रदेशपुंजको अपकर्षित करके अपने वेदक कालसे एक

---

१. ता. आ. प्रत्योः 'पढमसमयकिट्टीदो' इति पाठः।

मुप्पाएदि त्ति भणिदं होइ। एसा पढमट्ठिदी एत्तो उपरि जा कोहवेदगद्धा तिस्से सादिरेय-तिभागमेत्ता त्ति दट्ठव्वा। एवं पढमट्ठिदिं करेमाणो उदए थोवं देदि। तदणंतरट्ठिदीए असंखेज्जगुणं देदि। एवमसंखेज्जगुणाए सेढीए णिक्खिवमाणो गच्छदि जाव पढमसंगहकिट्टीवेदगकालादो आवलियमेत्तेणब्भहियं जादे त्ति। तत्तो विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिम्मि असंखेज्जगुणं णिक्खिवदि। तत्तो उवरि सव्वत्थ विसेसहीणमसंखेज्जदिभागेण। गुणसेढिणिक्खेवो पुण गलिदसेसो सव्वत्थ णादव्वो। एत्थ कोहस्स पढमसंगहकिट्टि त्ति भणिदे जा कारयस्स तदियसंगहकिट्टी सा वेदगस्स पढमसंगहकिट्टि त्ति घेत्तव्वा, तत्तो प्पहुडि पच्छाणुपुव्वीए जहाकममेव संगहकिट्टीणमेत्थ वेदगभावदंसणादो।

§ ११४. जइ पुण किट्टीकारयस्स पढमसंगहकिट्टी एत्थ घेप्पइ तो को तत्थ दोसो ? वे वुच्चदे—वेदिज्जमाणियाए संगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा बज्झंति वेदिज्जंति च। बंधोदया वि समयं पडि अणंतगुणहीणा होदूण गच्छंति त्ति एसो णियमो। संपहि एदम्हि णियमे संते जा अणुभागेण बहुगी संगहकिट्टी सा चेव पुव्वमुदयमागच्छदि त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा घेप्पमाणे पढम-संगहकिट्टीवेदगकाले णिट्ठिदे तदणंतरसमए विदियसंगहकिट्टिं वेदेमाणो तिस्से असंखेज्जे भागे बंधदि वेदेदि च। तहा च संते तक्काले बंधोदया पुव्विल्लबंधोदएहिंतो अणंतगुणो पावेंति। एदं च णेच्छिज्जदे, पडिसमयमणंतगुणकमेण विसोहिपरिणामेसु वड्ढमाणेसु तेसिं तहा पवुत्तिविरोहादो। तम्हा कारगस्स तदियसंगहकिट्टी एत्थ वेदगस्स पढमसंगहकिट्टि त्ति घेत्तव्वा। एवं माणादीणं

आवलिप्रमाण अधिक करके प्रथम स्थितिको उत्पन्न करता है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है। यह प्रथम स्थिति इससे आगे जो क्रोधवेदक काल है उसके साधिक तृतीय भाग प्रमाण जाननी चाहिए। इस प्रकार प्रथम स्थितिको करता हुआ अपकर्षित किये गये प्रदेशपुंजको उदयमें स्तोक देता है, उससे अगली स्थितिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है। इस प्रकार उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे निक्षेप करता हुआ प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदक कालसे एक आवलि प्रमाण अधिक करके निक्षिप्त करता है। उससे द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। उससे ऊपर सर्वत्र असंख्यातवाँ भागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है। तथा गुणश्रेणिनिक्षेप सर्वत्र गलित शेष जानना चाहिए। यहाँपर क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टि ऐसा कहनेपर जो कृष्टिकारककी तीसरी संग्रह कृष्टि है वह कृष्टिवेदककी प्रथम संग्रह कृष्टि है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि कृष्टिवेदककालके प्रथम समयसे लेकर पश्चादानुपूर्वीके अनुसार क्रमसे ही संग्रह कृष्टियोंका यहाँपर वेदकपना देखा जाता है।

§ ११४. पुनः यदि कृष्टिकारककी प्रथम संग्रह कृष्टिको यहाँपर ग्रहण किया जाता है तो उसमें क्या दोष है ऐसा पूछनेपर कहते हैं कि वेदी जानेवाली संग्रहकृष्टिके असंख्यात बहुभाग प्रमाण बँधती हैं और वेदी जाती हैं। तथा बन्ध-उदय दोनों ही प्रतिसमय अनन्तगुणे हीन होते जाते हैं ऐसा नियम है। अब इस नियमके होने पर जो संग्रहकृष्टि अनुभागकी अपेक्षा बड़ी है वही पहले उदयमें आती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, इससे अन्यथा ग्रहण करनेपर प्रथम संग्रह-कृष्टिका वेदक काल समाप्त होनेपर तदनन्तर समयमें दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाला उसके असंख्यात बहुभागको बाँधता और वेदता है, और ऐसा होनेपर उस कालमें होनेवाले बन्ध और उदय पूर्वके बन्ध और उदयसे अनन्तगुणे प्राप्त होते हैं। किन्तु यह इष्ट नहीं है, क्योंकि प्रत्येक समयमें अनन्तगुणित क्रमसे विशुद्धिरूप परिणामोंकी वृद्धि होनेपर उन बन्ध और उदयके उसरूप प्रवृत्ति होनेमें विरोध आता है। अतएव कृष्टिकारकके जो तीसरी संग्रहकृष्टि है

पि जत्थ जत्थ वेदगस्स पढमसंगहकिट्टि भणिहिदि तत्थ तत्थ किट्टीकरणद्धाए जा तदियसंगहकिट्टी सा चेव घेत्तव्वा, अण्णहा अणंतरपरूविददोसप्पसंगादो। एवं च पढमसंगहकिट्टिमोकड्डियूण वेदेमाणो किमविसेसेण सव्वाओ चेव तदंतरकिट्टीओ उदयं पवेसेदि आहो अत्थि कोइ विसेसो त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** ताहे कोहस्स पढमाए संगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा उदिण्णा।**

§ ११५. कोहपढमसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टिप्पहुडि हेट्ठिमासंखेज्जदिभागं पुणो तिस्से चेव उक्कस्सकिट्टिप्पहुडि उवरिमासंखेज्जदिभागं च मोत्तूण सेसमज्झिमा असंखेज्जा भागा तक्काल-मुदयमागदा त्ति भणिदं होदि। हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभागविसयाणं सरिसधणियकिट्टीणं परिणाम-विसेसमस्सियूण मज्झिमकिट्टिसरूवेणेव उदयपरिणामो होदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो। एवमुदयपरूवणं कादूण संपहि कोहसंजलणस्स अणुभागबंधो कधं पयट्टदि त्ति आसंकाए णिण्णय-विहाणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** एदिस्से चेव कोहस्स पढमाए संगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा बज्झंति।**

§ ११६. कुदो? उदयादो अणंतगुणहीणसरूवेण पयट्टमाणस्स बंधस्स तहा पवुत्तीए विरोहा-भावादो। तदो उदिण्णाओ किट्टीओ बहुगीओ, एदाओ बज्झमाणकिट्टीओ विसेसहीणाओ त्ति घेत्तव्वं, उदिण्णाणं किट्टीणं हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभागं मोत्तूण सेसमज्झिमबहुभागसरूवेण

वह यहाँ कृष्टिवेदकके प्रथम संग्रहकृष्टि है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार मानादिककी अपेक्षा भी जहाँ-जहाँ कृष्टिवेदकके प्रथम संग्रह कृष्टि कहेंगे वहाँ-वहाँ कृष्टिकरणके कालमें जो तीसरी संग्रह कृष्टि है वही ग्रहण करना चाहिए, अन्यथा अनन्तर पूर्व कहे गये दोषका प्रसंग प्राप्त होता है। इसी प्रकार प्रथम संग्रह कृष्टिका अपकर्षण करके वेदन करनेवाला जीव क्या सामान्य-रूपसे अपनी सभी अन्तर कृष्टियोंको उदयमें प्रविष्ट कराता है या कोई विशेषता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णय करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** उस कृष्टिवेदक कालके प्रथम समयमें इसी क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके असंख्यात बहुभागप्रमाण वह उदयको प्राप्त होती हैं।**

§ ११५. क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी जघन्य कृष्टिसे लेकर अधस्तन असंख्यातवें भागमाण तथा उसीकी उत्कृष्ट कृष्टिसे लेकर उपरिम असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोंको छोड़कर शेष बीचकी असंख्यात बहुभाग प्रमाण कृष्टियाँ उस समय उदयको प्राप्त होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागकी विषयभूत सदृश धनवाली कृष्टियोंका परिणाम विशेषका अवलम्बन लेकर मध्यम कृष्टिरूपसे ही उदयपरिणाम होता है इस प्रकार यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार उदयका कथन करके अब क्रोधसंज्वलनका अनुभाग बन्ध किस प्रकार प्रवृत्त होता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णय करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** तथा इसी क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके असंख्यात बहुभाग बन्धको प्राप्त होते हैं।**

§ ११६. क्योंकि उदयसे अनन्तगुणे हीनरूपसे प्रवृत्त होनेवाले बन्धकी उस रूपसे प्रवृत्ति होनेमें विरोधका अभाव है। इसलिए उदयको प्राप्त हुई कृष्टियाँ बहुत हैं। उनसे ये बन्धको प्राप्त होनेवाली कृष्टियाँ विशेष हीन हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उदयको प्राप्त हुई कृष्टियोंके अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर शेष मध्यम बहुभागस्वरूपसे बँधने-

बज्झमाणकिट्टीणं पवुत्तिणियमदंसणादो।

✻ सेसाओ दोसंगहकिट्टीओ ण बज्झंति ण वेदिज्जंति।

§ ११७. कुदो? जहाकममेव संगहकिट्टीओ वेदेमाणस्स पढमसंगहकिट्टी वेदगावत्थाए सेसदोसंगहकिट्टीणमुदयासंभवादो, जस्स कसायस्स जं किट्टिं वेदयदि तस्स तदायारेणेव बंधो होइ त्ति णियमदंसणादो च। माण-माया-लोभाणं पि अप्पप्पणो पढमसंगहकिट्टीणं वेदग-संबंधिणीणमसंखेज्जा भागा बज्झंति, सेसदोसंगहकिट्टीओ ण बज्झंति। तेसिं चेव सव्वाओ संगहकिट्टीओ ताव ण वेदिज्जंति चेव, कोहवेदगकालब्भंतरे तदुदयपवुत्तीए विरोहादो त्ति एसो वि अत्थो एत्थेव सुत्ते णिलीणो त्ति घेत्तव्वं।

§ ११८. संपहि कोहसंजलणस्स पढमाए संगहकिट्टीए हेट्ठिमोवरिमाणमसंखेज्जदिभागाण-मबज्झमाणावेदिज्जमाणाणं थोवबहुत्तपरूवणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

वाली कृष्टियोंकी प्रवृत्तिका नियम देखा जाता है।

✻ क्रोध संज्वलनकी शेष दो संग्रहकृष्टियाँ न बँधती हैं और न वेदी जाती हैं।

§ ११७. क्योंकि यथाक्रम ही संग्रह कृष्टियोंका वेदन करनेवाले जीवके प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदन करनेकी अवस्थामें शेष दो संग्रह कृष्टियोंका उदय होना असम्भव है। कारण कि जिस कषायको जिस कृष्टिका वेदन करता है उसके उस रूपसे ही बन्ध होता है ऐसा नियम देखा जाता है। मान, माया और लोभ कषायोंका अपेक्षा भी अपनी-अपनी प्रथम संग्रह कृष्टियोंका वेदन करते समय उन कृष्टियोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण वे बन्धको प्राप्त होती हैं, शेष दो संग्रहकृष्टियाँ नहीं बंधती हैं। तथा प्रकृतमें उन्हींकी समस्त संग्रह कृष्टियाँ तब तक नहीं ही वेदी जाती हैं, क्योंकि क्रोधके वेदककालके भीतर उनका उदय प्रवृत्ति होनेमें विरोध है इस प्रकार यह अर्थ भी इसी सूत्रमें लीन है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—अश्वकर्णकरण कालके सम्पन्न होनेपर दूसरा त्रिभाग कृष्टिकरणका है। जब पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंका वेदन करते हुए प्रथम स्थितिमें एक आवलि काल शेष रहता है तब कृष्टिकरणका काल समाप्त होकर अगले समयमें यह जीव क्रोध संज्वलनको प्रथम संग्रह कृष्टि-मेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके उसकी प्रथम स्थिति करता है और यहींसे क्रोधको प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन काल प्रारम्भ हो जाता है। क्रम यह है—क्रोधका प्रथम संग्रह कृष्टि सम्बन्धी जघन्य और उत्कृष्ट कृष्टियोंको छोड़कर बीचकी असंख्यात बहुभाग प्रमाण कृष्टियोंका उदय होता है तथा इसी क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टि सम्बन्धी जो कृष्टियाँ उदयरूप होती हैं उनसे विशेष हीन कृष्टियाँ बन्धको प्राप्त होती है। यहाँ प्रथम समयमें न तो क्रोध संज्वलनको शेष रहीं दो संग्रह कृष्टियोंका उदय होता है और न बन्ध होता है और न ही इस समयमें मान, माया और लोभ संज्वलन सम्बन्धी संग्रह कृष्टियोंका ही उदय और बन्ध होता है। ऐसा नियम है कि क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए इस जीवके प्रत्येक समयमें परिणामोंमें अनन्तगुणी विशुद्धि बढ़ती जाती है, इसलिए कृष्टिकारकके क्रोध संज्वलनकी जिसे तीसरी संग्रह कृष्टि कहा गया है, वेदन कालके समय वह पहली हो जाती है। कारणका निर्देश मूल टीकामें किया ही है। इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिए।

§ ११८. अब क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टि सम्बन्धी असंख्यातवें भाग प्रमाण अधस्तन और उपरिम नहीं बँधनेवाली और नहीं उदयको प्राप्त होनेवाली कृष्टियोंके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** पढमाए संगहकिट्टीए हेट्ठदो जाओ किट्टीओ ण बज्झंति ण वेदिज्जंति ताओ थोवाओ ।**

§ ११९. कोहसंजलणपढमसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टिप्पहुडि हेट्ठिमासंखेज्जदिभागविसए जाओ किट्टीओ अबज्झमाणावेदिज्जमाणसरूवाओ ताओ थोवाओ त्ति भणिदं होदि ।

*** जाओ किट्टीओ वेदिज्जंति ण बज्झंति ताओ विसेसाहियाओ ।**

§ १२०. एदं भणिदे पुव्विल्लाबज्झमाणावेदिज्जमाणकिट्टीणमुवरिमकिट्टिप्पहुडि जाव बंधजहण्णकिट्टीए हेट्ठिमाणंतरकिट्टि त्ति ताव एदम्मि अद्धाणे जाओ किट्टीओ केवलमुदयपाओग्गाओ चेव ताओ सयलकिट्टीअद्धाणस्सासंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण पुव्विल्लकिट्टीहिंतो विसेसाहियाओ त्ति वुत्तं होदि । केत्तियमेत्तो विसेसो ? हेट्ठिमद्धाणस्सासंखेज्जदिभागमेत्तो । तस्स को पडिभागो ? तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जदिभागो । कुदो एदं परिच्छिज्जदे ? सुत्ताविरुद्धपरमगुरूवएसादो ।

*** तिस्से चेव पढमाए संगहकिट्टीए उवरि जाओ किट्टीओ ण बज्झंति ण वेदिज्जंति ताओ विसेसाहियाओ ।**

§ १२१. एदाओ वि सयलकिट्टीअद्धाणस्सासंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण पुव्विल्लकिट्टीहिंतो विसेसाहियाओ जादाओ । एत्थ विसेसाहियपमाणं पुव्वं व वत्तव्वं ।

प्रथम संग्रह कृष्टिकी अधस्तन जो कृष्टियाँ न बँधती हैं और न उदयको प्राप्त होती हैं वे अल्प हैं ।

§ ११९. क्रोध संज्वलन संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिसे लेकर अधस्तन असंख्यातवें भाग प्रमाण सम्बन्धी जो कृष्टियाँ अबन्ध रूप और अनुदयस्वरूप हैं वे अल्प हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** जो कृष्टियाँ उदयको प्राप्त होती हैं किन्तु बँधती नहीं हैं वे विशेष अधिक हैं ।**

§ १२०. ऐसा कहनेपर इससे पूर्व सूत्रमें कही गयी नहीं बंधनेवाली और उदयको नहीं प्राप्त होनेवाली कृष्टियोंके उपरिम कृष्टिसे लेकर बन्धको प्राप्त होनेवाली जघन्य कृष्टि सम्बन्धी अधस्तन अनन्तर कृष्टिके प्राप्त होने तक इस स्थानमें जो केवल उदयप्रायोग्य कृष्टियाँ हैं वे समस्त कृष्टिअध्वानके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर पूर्व सूत्रमें कही गयी कृष्टियोंसे विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—अधस्तन स्थानके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

शंका—उसका प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—तत्प्रायोग्य पल्योपमका असंख्यातवाँ भागप्रमाण उसका प्रतिभाग है

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सूत्रके अविरुद्ध परम गुरुके उपदेशसे जाना जाता है ।

*** उसी प्रथम संग्रह कृष्टिके ऊपर जो कृष्टियाँ न बँधती हैं और न उदयको प्राप्त होती हैं वे विशेष अधिक हैं ।**

§ १२१. ये कृष्टियाँ भी समस्त कृष्टिस्थानके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर पूर्व दो सूत्रोंमें कही गयी कृष्टियोंसे विशेष अधिक हो जाती हैं । यहाँ पर विशेष अधिकका प्रमाण पहलेके समान कहना चाहिए ।

* उवरि जाओ वेदिज्जंति ण बज्झंति ताओ विसेसाहियाओ ।

§ १२२. सुगमं ।

* मज्झे जाओ किट्टीओ बज्झंति च वेदिज्जंति च ताओ असंखेज्जगुणाओ ।

§ १२३. पुव्वुत्तहेट्टिमोवरिमासंखेज्जभागविसयाओ किट्टीओ मोत्तूण सेसासेसमज्झिमकिट्टीओ वज्झमाणवेदिज्जमाणाओ णाम, तदायारेण बंधोदयाणं पवुत्तीए पडिसेहाभावादो । तदो ताओ असंखेज्जगुणाओ जादाओ । एत्थ गुणगारो तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तो । एवं किट्टीवेदगद्धाए पढमसमए इमं परूवणं कादूण संपहि किट्टीवेदगद्धं तत्थ ताव थप्पं कादूण किट्टीकरणद्धाए पडिबद्धगाहासुत्ताणमत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

* किट्टीवेदगद्धा ताव थवणिज्जा ।

§ १२४. कुदो ? किट्टीकरणद्धापडिबद्धसुत्तफासे अकदे तिस्से परूवणावसराभावादो । तदो तमेव ताव सुत्तफासं जहावसरपत्तं कुणमाणो इदमाह—

* किट्टीकरणद्धाए ताव सुत्तफासो ।

§ १२५. पुव्वं गाहासुत्ताणि हियए कादूण तदुच्चारणाए विणा किट्टीकरणद्धा विसेसिदा । इदाणिं पुण तव्विसयो सुत्तफासो कायव्वो, तेण विणा पुव्वपरूवणाविसये णिण्णयाणुप्पत्तीदो त्ति वुत्तं होइ ।

---

* (पूर्व में कही गयी कृष्टियोंसे) ऊपर स्थित जो कृष्टियाँ उदयको प्राप्त होती हैं किन्तु बँधती नहीं हैं वे विशेष अधिक हैं ।

§ १२२. यह सूत्र सुगम है ।

* बीच में जो कृष्टियाँ बँधती हैं और उदयको प्राप्त होती हैं वे असंख्यातगुणी हैं ।

§ १२३. पूर्वोक्त अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोंको छोड़कर मध्यकी शेष समस्त कृष्टियाँ बन्धरूप और उदयरूप हैं, क्योंकि उसरूपसे अर्थात् वे कृष्टियाँ जिस अनुभागस्वरूप हैं उसरूपसे उनके बन्ध और उदयकी प्रवृत्ति होनेका निषेध नहीं है, इसलिए वे असंख्यातगुणी हो गयी हैं । यहाँपर गुणकार तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इस प्रकार कृष्टि वेदक कालके प्रथम समयमें इस प्ररूपणाको करके अब कृष्टि वेदक कालको सर्वप्रथम स्थगित करके कृष्टिकरण कालसे सम्बन्ध रखनेवाले गाथासूत्रोंके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* अब कृष्टिवेदक कालको स्थगित रखना चाहिए ।

§ १२४. क्योंकि कृष्टिकरण कालसम्बन्धी सूत्रोंका स्पर्श (व्याख्यान) नहीं किये जानेपर आगे उनके कथनके अवसरका अभाव है, इसलिए यहाँपर सर्वप्रथम उसी अवसरप्राप्त सूत्रोंका स्पर्श (व्याख्यान) करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

* सर्वप्रथम कृष्टिकरण कालके सूत्रोंका स्पर्श करते हैं ।

§ १२५. पहले गाथासूत्रोंको हृदयमें करके उनका उच्चारण किये बिना कृष्टिकरण कालका व्याख्यान किया है । परन्तु इस समय तद्विषयक सूत्रोंका स्पर्श करना चाहिए, क्योंकि उसके बिना पूर्वमें की गयी प्ररूपणाविषयक निर्णय नहीं हो सकता यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* तत्थ एक्कारस मूलगाहाओ ।

§ १२६. तत्थ किट्टीकरणद्धाए पडिबद्धाओ एक्कारस मूलगाहाओ होंति, तासिमेत्तो विहासा अहिकीरदि त्ति वुत्तं होदि । चरित्तमोहक्खवणाए अट्ठावीसमूलगाहासु पडिबद्धासु तत्थ पट्ठवगे चत्तारि मूलगाहाओ पढममेव विहासिदाओ । तदणंतरं संकामगे चत्तारि मूलगाहाओ, ओवट्टणाए तिण्णि मूलगाहाओ त्ति एवमेदाओ एक्कारस मूलगाहाओ जहासंभवमप्पप्पणो भासगाहाहिं सह विहासिदाओ । एण्हिं पुण किट्टीकरणद्धाए पडिबद्धाणमेक्कारसण्हं मूलगाहाणं सभासगाहाणमत्थ-विहासणं जहावसरपत्तं वत्तइस्सामो त्ति एसो एदस्स भावत्थो । तासिं च जुगवं वोत्तुमसक्कियत्तादो जहाकममेव विहासणं कुणमाणो पढममूलगाहाए ताव समुक्कित्तणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

* पढमाए मूलगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ १२७. तासिमेक्कारसण्हं मूलगाहाणं मज्झे पुव्वमेव ताव पढममूलगाहाए समुक्कित्तणा कीरदि त्ति वुत्तं होइ ।

(१०९) केवदिया किट्टीओ कम्हि कसायम्हि कदि च किट्टीओ ।
किट्टीए किं करणं लक्खणमध किं च किट्टीए ॥१६२॥

§ १२८. एदिस्से गाहाए अत्थो वुच्चदे । तं जहा—'केवदिया किट्टीओ' एवं भणिदे चउण्हं कसायाणं भेदविवक्खमकादूण सामण्णेण केत्तियमेत्तीओ संगहावयवकिट्टीओ होंति त्ति पुच्छा कदा होइ । एवमेसो पढमो अत्थो । पुणो चउण्हं कसायाणं भेदविवक्खं कादूण तत्थ एक्केक्कस्स कसायस्स केवडियाओ किट्टीओ होंति त्ति विदिओ अत्थो । एदम्मि पडिबद्धो सुत्तस्स विदियावयवो

---

* उस विषयमें ग्यारह मूल गाथाएँ हैं ।

§ १२६. वहाँ कृष्टिकरण कालसे सम्बद्ध ग्यारह मूल गाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । चारित्रमोहकी क्षपणासम्बन्धी अट्ठाईस मूल गाथाएँ कही हैं । उनमेंसे प्रस्थापक सम्बन्धी चार मूल गाथाओंका पहले ही व्याख्यान कर आये हैं । तदनन्तर संक्रामकसम्बन्धी चार मूल गाथाएँ तथा अपवर्तना सम्बन्ध तीन मूल गाथाएँ इस प्रकार इन ग्यारह मूल गाथाओंका यथा-सम्भव अपनी-अपनी भाष्य-गाथाओंके साथ व्याख्यान कर आये हैं । परन्तु इस समय कृष्टिकरण कालसे सम्बन्ध रखनेवाली ग्यारह मूल गाथाओंका अपनी भाष्यगाथाओंके साथ यथावसर प्राप्त व्याख्यान करेंगे यह इस सूत्रका भावार्थ है । किन्तु उनका एक साथ कथन करना अशक्य होनेसे यथाक्रम ही व्याख्यान करते हुए सर्वप्रथम प्रथम मूल गाथाकी समुत्कीर्तना करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* उनमें-से प्रथम मूल गाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ १२७. उन ग्यारह मूल गाथाओंमेंसे सबसे पहले प्रथम मूल गाथाको समुत्कीर्तना की जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* कृष्टियाँ कितनी हैं और किस कषायमें कितनी कृष्टियाँ हैं । कृष्टिके कौनसा करण होता है तथा कृष्टिका लक्षण क्या है ।

§ १२८. अब इस गाथाका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—'केवडिया किट्टीओ' ऐसा कहनेपर चारों कषायोंकी भेदविवक्षा किये बिना सामान्यसे कितनी संग्रह कृष्टियाँ तथा कितनी अवयव कृष्टियाँ होती हैं यह पृच्छा की गयी है । इस प्रकार यह प्रथम अर्थ है । पुनः चारों कषायोंकी भेदविवक्षा करके उनमें-से एक-एक कषायकी कितनी कृष्टियाँ होती हैं इस प्रकार दूसरे अर्थसे युक्त

'कम्हि कसायम्हि कदि च किट्टीओ' त्ति। एसा दुविहा पुच्छा संगहकिट्टीणमंतरकिट्टीणं च पमाण-विसेसमुवेक्खदे। पुणो किट्टीओ करेमाणो ट्ठिट्टि-अणुभागेहि चदुण्हं संजलणाणं पदेसग्गं किमोकड्डदि, आहो उक्कड्डदि त्ति करणविसेसावहारणलक्खणो तदिओ अत्थो। तम्हि पडिबद्धो सुत्तस्स तदिया-वयवो 'किट्टीए किं करणं' इदि। किट्टीकरणावत्थाए कदमं करणं होदि, किमोकड्डणाकरणमाहो उक्कड्डणाकरणं तदुभयं वा त्ति पुच्छामुहेण तहाविहत्थविसए एदस्स पडिबद्धत्तदंसणादो। पुणो किट्टीगदाणुभागस्स केरिसं लक्खणं, किमविभागपडिच्छेदुत्तरकमवड्डीए फद्दयगदाणुभागस्सेव तदवट्ठाणसंभवो आहो अणंतगुणवड्डिसरूवेण तदवट्ठाणणियमो त्ति एवंविह पुच्छामुहेण किट्टीणं सरूवणिद्देसविसओ चउत्थो अत्थो एदम्मि पडिबद्धो, सुत्तस्स चरिमावयवो 'लक्खणमथ किं च किट्टीए' त्ति। तदो एवं विहाणं चउण्हमत्थविसेसाणं किट्टीकरणद्धापडिबद्धाणं णिण्णयविहाणट्ठमेदं पढमगाहासुत्तं पुच्छामेत्तेण सूचिदासेसविसेसपरूवणं समोइण्णमिदि घेत्तव्वं। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थविसेसं विहासेमाणो चुण्णिसुत्तयारो उवरिमं पबंधमाढवेइ—

* एदिस्से गाहाए चत्तारि अत्था।

§ १२९. चउण्हं कसायाणमभेदेण किट्टीणं पमाणावहारणं पुणो एक्केक्कस्स कसायस्स णिरुंभणं कादूण किट्टीणं पमाणावहारणं किट्टीकारयस्स करणविसेसावहारणं किट्टीणं लक्खणविहाणं चेदि एवमेदे चत्तारि अत्थविसेसा किट्टीकरणद्धा संबंधिणो एदम्मि पढमगाहासुत्तम्मि णिबद्धा त्ति।

इस गाथामें प्रतिबद्ध यह दूसरा पाद है—'कम्हि कसायम्हि कदि च किट्टीओ'। इस प्रकार यह दोनों प्रकारकी पृच्छा संग्रहकृष्टियों और अन्तरकृष्टियोंसम्बन्धी प्रमाण विशेषकी अपेक्षा रखती है। पुनः कृष्टियोंको करनेवाला स्थिति और अनुभागकी अपेक्षा चारों संज्वलनोंके प्रदेशपुंजको क्या अपकर्षित करता है या उत्कर्षित करता है इस प्रकार करण विशेषके अवधारणरूप लक्षणवाला तीसरा अर्थ उस गाथामें प्रतिबद्ध तीसरा पाद है—'किट्टीए किं करणं'। कारण कि कृष्टिकरणकी अवस्थामें कौन करण होता है, क्या अपकर्षणकरण होता है या उत्कर्षणकरण होता है या वे दोनों करण होते हैं इस प्रकार पृच्छामुखसे उस प्रकारके अर्थके विषयमें यह तीसरा पाद प्रतिबद्ध देखा जाता है। पुनः कृष्टिगत अनुभागका किस प्रकारका लक्षण है? क्या अविभागप्रतिच्छेदोंकी उत्तर-क्रम वृद्धिरूपसे स्पर्धकगत अनुभागका ही वहाँ अवस्थान सम्भव है या अनन्तगुणवृद्धिरूपसे अनुभागके अवस्थानका नियम वहाँ पाया जाता है इस तरह इस प्रकारके पृच्छामुखसे कृष्टियोंके स्वरूपका निर्देश करनेवाला चौथा अर्थ इसमें प्रतिबद्ध है। सूत्रका वह अन्तिम पाद है—'लक्खणमथ किं च किट्टीए'। इसलिए कृष्टिकरणके कालसे सम्बन्ध रखनेवाले इस प्रकारके चौथे अर्थ सम्बन्धी विशेषोंका निर्णय करनेके लिये पृच्छामुखसे सूचित हुए समस्त विशेषोंका सूचन करनेवाला प्रथम गाथासूत्र अवतीर्ण हुआ है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थविशेषकी विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके प्रबन्धका आरम्भ करते हैं—

* इस गाथाके चार अर्थ हैं।

§ १२९. चारों कषायोंका अभेद करके कृष्टियोंके प्रमाणका अवधारण करना, पुनः एक-एक कषायको विवक्षित कर कृष्टियोंके प्रमाणका अवधारण करना, कृष्टिकारकके करणविशेषका अवधारण करना तथा कृष्टियोंके लक्षणका विधान करना। इस प्रकार कृष्टिकरणकालसे सम्बन्ध रखनेवाले ये चारों अर्थविशेष इस प्रथम गाथासूत्रमें निबद्ध हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

वुत्तं होइ ।

* तिण्णि भासगाहाओ ।

§ १३०. एदिस्से पढममूलगाहाए अत्थविहासणट्ठमेत्थ तिण्णि भासगाहाओ होंति, तासिमिदाणिमवयारं कस्सामो त्ति वुत्तं होइ, भासगाहाहिं विणा मूलगाहाणमत्थविहासणोवायाभावादो । तत्थ मूलगाहा णाम पुच्छादुवारेण सूचिदासेसपयदत्थपरूवणा संगहरुइसत्ताणुग्गहकारिणी । तिस्से सूचिदत्थविवरणे पडिबद्धाओ वित्थररुइसत्ताणुग्गहकारिणीओ भासगाहाओ त्ति दट्ठव्वाओ । एवमेत्थ तिण्हं भासगाहाणमत्थित्तं परूविय संपहि जहाकममेव तासिं विवरणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो तत्थ पढमभासगाहाए पुव्वमवयारं करेदि—

* पढमभासगाहा वेसु अत्थेसु णिबद्धा । तिस्से समुक्कित्तणा ।

§ १३१. तिण्हं भासगाहाणं मज्झे पढमा भासगाहा मूलगाहाए पुव्वद्धपडिबद्धेसु वेसु अत्थेसु णिबद्धा । तिस्से समुक्कित्तणा एसा दट्ठव्वा त्ति वुत्तं होदि ।

(११०) बारस णव छ तिण्णि य किट्टीओ होंति अध व अणंताओ
एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग अधवा अणंताओ ॥१६३॥

§ १३२. एदिस्से पढमभासगाहाए अत्थविवरणं कस्सामो । तं जहा—'बारस णव छ तिण्णि य' एवं भणिदे संगहकिट्टीओ पेक्खियूण ताव कोहोदएण चडिदस्स बारस संगहकिट्टीओ भवंति, पुव्वुत्ताणं बारसण्हं पि संगहकिट्टीणं तत्थ संभवोवलंभादो । माणोदएण चडिदस्स णव

---

* इसकी तीन भाष्यगाथाएँ हैं ।

§ १३०. इस प्रथम मूल गाथाके अर्थकी विशेष व्याख्या करनेके लिए इस विषयमें तीन भाष्यगाथाएँ हैं, उनका इस समय अवतार करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि भाष्यगाथाओंके बिना मूल गाथाओंकी विशेष व्याख्या करनेका अन्य कोई उपाय नहीं है । जिससे संग्रह रुचिवाले जीवोंका उपकार होता है और जिसके पृच्छा द्वारा सूचित हुए समस्त प्रकृत अर्थोंकी प्ररूपणा की जाती है वह मूल गाथा कहलाती है । तथा जो उस मूल गाथा द्वारा सूचित हुए अर्थोंके विवरण करनेमें प्रतिबद्ध हैं और जिनके द्वारा विस्तार रुचिवाले जीवोंका अनुग्रह होता है उन्हें भाष्यगाथाएँ कहते हैं ऐसा जानना चाहिए । इस प्रकार प्रकृतमें तीन भाष्यगाथाओंके अस्तित्वका कथन करके अब क्रमसे ही उनका विवरण करते हुए चूर्णिसूत्रकार उनमेंसे प्रथम भाष्यगाथाका सर्वप्रथम अवतार करते हैं—

* प्रथम भाष्यगाथा दो अर्थोंमें निबद्ध है । उसकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ १३१. तीन भाष्यगाथाओंमेंसे प्रथम भाष्यगाथा मूल गाथाके पूर्वार्धसम्बन्धी दो अर्थोंमें निबद्ध है । उसकी यह समुत्कीर्तना जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

(११०) क्रोधादि चारों कषायोंकी क्रमसे बारह, नौ, छह और तीन कृष्टियाँ होती हैं अथवा अनन्त कृष्टियाँ होती हैं । तथा एक-एक कषायमें तीन-तीन कृष्टियाँ होती हैं अथवा अनन्त कृष्टियाँ होती हैं ॥१६३॥

§ १३२. अब इस भाष्यगाथाके अर्थका व्याख्यान करते हैं । वह जैसे—'बारस णव छ तिण्णि य' ऐसा कहनेपर संग्रह कृष्टियोंको देखते हुए जो जीव क्रोध संज्वलनके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसके बारह संग्रह कृष्टियाँ होती हैं, क्योंकि पूर्वोक्त बारह ही संग्रह कृष्टियां वहाँ सम्भव

संगहकिट्टीओ भवंति, तत्थ किट्टीकरणद्धावो पुव्वमेव फद्दयसरूवेण विणस्संतस्स कोहसंजलणस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं संभवाणुवलंभादो। मायोदएण चडिदस्स पुण छच्चेव संगहकिट्टीओ होंति, कोह-माणसंजलणाणं तत्थ फद्दयसरूवेण पुव्वमेव खविज्जमाणाणं किट्टीकरणासंभवादो। तहा लोभोदएण सेढिमारूढस्स तिण्णि चेव संगहकिट्टीओ होंति, कोह-माण-मायासंजलणाणं फद्दय-सरूवेण विणासिज्जमाणाणं तत्थ किट्टीसंबंधाणुवलंभादो। एक्केक्किस्से पुण संगहकिट्टीए अवयवकिट्टीओ अणंताओ होंति त्ति जाणावणट्ठं 'अधवा अणंताओ' त्ति तप्पमाणणिद्देसो कदो। एवमव्वोगाढसरूवेण चउण्हं संजलणाणमेत्तियाओ संगहकिट्टीओ तदवयवकिट्टीओ च होंति त्ति पुव्वद्धेणेदेण जाणाविय संपहि चउण्हं संजलणाणं पुध पुध णिरुंभणं काढूण तत्थ एक्केक्कस्स कसायस्स केत्तियाओ किट्टीओ होंति त्ति मूलगाहाविदियावयवमस्सियूण विहासणट्ठं गाहापच्छद्धो समोइण्णो 'एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग' कोहादीणमण्णदरे कसाए णिरुद्धे पादेक्कं तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ होंति। तदवयवकिट्टीओ पुण अणंताओ होंति त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थविहासेमाणो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ १३३. सुगमं।

* जइ कोहेण उवट्ठायदि तदो बारस संगहकिट्टीओ होंति।

हैं। जो मान संज्वलनके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसके नौ संग्रह कृष्टियाँ होती हैं, क्योंकि इसके कृष्टिकरण कालके पूर्व ही स्पर्धकरूपसे विनाशको प्राप्त हुए क्रोध संज्वलनकी तीन संग्रह कृष्टियाँ वहाँ सम्भव नहीं हैं। परन्तु जो मायाके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है उसके छह ही संग्रह कृष्टियाँ होती हैं, क्योंकि इसके (कृष्टिकरण कालके) पूर्व ही स्पर्धकरूपसे क्षयको प्राप्त हुए क्रोध और मान संज्वलनोंके कृष्टिकरण असम्भव है। तथा लोभके उदयसे जो श्रेणिपर आरोहण करता है उसके तीन ही संग्रह कृष्टियाँ होती हैं, क्योंकि इसके क्रोध, मान और माया संज्वलनका स्पर्धकरूपसे विनाश हो जाता है, इसलिए वहाँ उक्त कषायसम्बन्धी कृष्टियाँ नहीं पायी जाती हैं। परन्तु एक-एक संग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टियाँ अनन्त होती है इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'अधवा अणंताओ' इस पद द्वारा उनके प्रमाणका निर्देश किया है। इस प्रकार अव्वोगाढ़-स्वरूपसे अर्थात् विभक्त किये बिना चारों संज्वलनोंकी इतनी संग्रह कृष्टियाँ और उनकी इतनी अवयव कृष्टियाँ होती हैं इस प्रकार इस गाथासूत्रके पूर्वार्ध द्वारा ज्ञान कराकर अब चारों संज्वलनों को पृथक्-पृथक् विवक्षित कर उनमेंसे एक-एक कषायकी कितनी कृष्टियाँ होती हैं इस प्रकार मूल गाथाके दूसरे अवयव अर्थात् उत्तरार्धका आलम्बन लेकर व्याख्या करनेके लिए गाथाका उत्तरार्ध अवतीर्ण हुआ है—'एक्केक्कम्हि तिग तिग' अर्थात् क्रोधादि संज्वलनोंमेंसे किसी एक कषायके विवक्षित होनेपर प्रत्येकको तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं। तथा उनकी अवयव कृष्टियाँ अनन्त होती हैं यह यहाँ इस गाथासूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस प्रकार इस गाथासूत्रके अर्थका विशेष व्याख्यान करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

* अब उक्त गाथा सूत्रकी विभाषा करते हैं।

§ १३३. यह सूत्र सुगम है।

* यदि क्रोध कषायके उदयसे क्षपकश्रेणिपर उपस्थित होता है तो उसके बारह संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।

§ १३४. कोहोदएण जइ खवगसेढिमुवट्ठायदि तो तस्स बारह संगहकिट्टीओ होंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो। सेसं सुगमं।

※ माणेण उवट्ठिदस्स णव संगहकिट्टीओ।

§ १३५. कुदो? कोहसंजलणस्स तिण्हं संगहकिट्टीणमेत्थ संभवाणुवलंभादो। कुदो एवं चे? कोहसंजलणाणुभागस्स फद्दयसरूवेणेव तत्थ विणासदंसणादो।

※ मायाए उवट्ठिदस्स छ संगहकिट्टीओ।

§ १३६. कोह-माणसंजलणाणं तत्थ किट्टीपरिणामेण विणा फद्दयसरूवेणेव विणासदंसणादो।

※ लोभेण उवट्ठिदस्स तिण्णि संगहकिट्टीओ।

§ १३७. किं कारणं? लोभसंजलणं मोत्तूण तत्थ सेससंजलणाणं किट्टीकरणद्धो हेट्ठा चेव जहाकमं फद्दयगदाणुभागसरूवेण खविज्जमाणाणं किट्टिसंबंधाणुवलंभादो। संपहि इममेव सुत्तत्थमुवसंहरेमाणो उवरिमं सुत्तावयवमाह—

※ एवं बारस णव छ तिण्णि च।

---

§ १३४. यदि क्रोध संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर उपस्थित होता है तो उसके बारह संग्रह कृष्टियाँ होती हैं यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। शेष कथन सुगम है।

※ मान संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर उपस्थित हुए जीवके नौ संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।

§ १३५. क्योंकि क्रोध संज्वलनसम्बन्धी तीन संग्रह कृष्टियाँ यहाँपर सम्भव नहीं हैं।

शंका—ऐसा किस कारणसे है?

समाधान—क्योंकि क्रोध संज्वलन सम्बन्धी अनुभागका यहाँ पर स्पर्धकरूपसे ही विनाश देखा जाता है।

※ माया संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर उपस्थित हुए जीवके छह संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।

§ १३६. क्योंकि क्रोध और मान संज्वलनोंका वहाँपर कृष्टिरूप परिणाम हुए बिना स्पर्धकरूपसे ही विनाश देखा जाता है।

※ लोभ संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर उपस्थित हुए जीवके तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।

§ १३७. क्योंकि लोभसंज्वलनको छोड़कर वहाँपर शेष संज्वलनोंका कृष्टिकरणके कालके पूर्व ही क्रमसे स्पर्धकगत अनुभागरूपसे क्षय करनेवाले जीवोंके कृष्टिरूपसे उक्त अनुभागका सम्बन्ध नहीं पाया जाता। अब सूत्रसम्बन्धी इसी अर्थका उपसंहार करते हुए आगे उक्त गाथा सूत्रके प्रथम चरणको कहते हैं—

※ इस प्रकार उक्त भाष्यगाथाके प्रथम चरणके अनुसार क्रमसे बारह, नौ, छह और तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं।

§ १३८. सुगमं। संपहि 'अधवा अणंताओ' त्ति इमं सुत्तावयवं विहासिदुकामो इदमाह—

* एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अणंताओ किट्टीओ त्ति एदेण कारणेण 'अधवा अणंताओ' त्ति।

§ १३९. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमेदम्मि गाहापुव्वद्धे विहासिदे मूलगाहापढमावयवपडिबद्धो अत्थो समप्पदि त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

* केवडियाओ किट्टीओ त्ति अत्थो समत्तो।

§ १४०. सुगमं। संपहि मूलगाहाए विदियावयवमस्सियूण पढमभासगाहापच्छिमद्धं विहासेमाणो उवरिमं पबंधमाह—

* कम्हि कसायम्हि कदि च किट्टीओ त्ति एदं सुत्तं।

§ १४१. सुगममेदं। मूलगाहाविदियावयवसंभालणफलं सुत्तं, ण तस्स संभालणं णिरत्थयं; अण्णहा सोदाराणं सुहेण तव्विसयपडिबोहाणुववत्तीदो।

* एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग अधवा अणंताओ त्ति विहासा।

§ १४२. अणंतरणिद्दिट्ठमूलगाहाविदियावयवपडिबद्धत्थविहासणट्ठमेदस्स गाहापच्छद्धस्स विवरणं कस्सामो त्ति भणिदं होइ।

---

§ १३८. यह सूत्र सुगम है। अब उक्त सूत्रगाथाके 'अधवा अणंताओ' इस दूसरे चरणकी विशेष व्याख्या करनेकी इच्छासे इस चूर्णिसूत्रको कहते हैं—

* अथवा एक-एक संग्रह कृष्टिकी अनन्त कृष्टियाँ होती हैं, इस कारण उक्त भाष्यगाथासूत्रमें 'अथवा अनन्त होती हैं' यह वचन कहा है।

§ १३९. यह सूत्रवचन गतार्थ है। इस प्रकार इस गाथासूत्रके पूर्वार्ध की व्याख्या करनेपर मूलगाथाके प्रथम चरणसे सम्बन्ध रखनेवाला अर्थ समाप्त हुआ इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* इस प्रकार मूल गाथाके 'कृष्टियाँ कितनी होती हैं' इस प्रश्नार्थक प्रथम पादका अर्थ समाप्त हुआ।

§ १४० यह वचन सुगम है। अब मूल गाथाके दूसरे पादका आलम्बन लेकर प्रथम भाष्यगाथाके उत्तरार्धकी विभाषा करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

* 'किस कषायमें कितनी कृष्टियाँ होती हैं' यह मूलगाथाके दूसरे पादका निर्देश करनेवाला सूत्र है।

§ १४१. यह सूत्रवचन सुगम है। मूलगाथाके दूसरे पादकी सँभाल करना इस सूत्रवचनका फल है। और उसकी सँभाल करना निरर्थक नहीं है, अन्यथा श्रोताओंको उक्त सूत्र द्वारा तद्विषयक प्रतिबोध नहीं हो सकता।

* अब प्रथम भाष्यगाथाके 'एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग अधवा अणंताओ' उत्तरार्धकी विभाषा करते हैं।

§ १४२. अनन्तर पूर्व कही गयी मूलगाथाके दूसरे पादसे सम्बन्ध रखनेवाले अर्थकी विभाषा करनेके लिए इस भाष्यगाथाके उत्तरार्धका विवरण करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** 'एक्केक्कम्हि कसाये तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ' त्ति एवं तिग तिग।**

§ १४३. जदो एक्केक्कम्हि कसायम्हि तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ होंति तदो 'एक्केक्कम्हि कसाए तिग तिग' इदि गाहापच्छद्धे भणिदमिदि वुत्तं होदि।

*** एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अणंताओ किट्टीओ त्ति एदेण 'अधवा अणंताओ' जादा।**

§ १४४. एक्केक्कस्स कसायस्स एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अवयवकिट्टीओ अणंताओ अत्थि, तदो 'अधवा अणंताओ' त्ति गाहासुत्तचरिमावयवो भणिदो त्ति वुत्तं होइ। णेदमेत्थासंकणिज्जं, 'अधवा अणंताओ' त्ति गाहापुव्वद्धचरिमावयवेणेदस्स सुत्तावयवस्स पुणरुत्तभावो किण्ण पसज्जदि त्ति। किं कारणं? अव्वोगाढसरूवचदुकसायविसयेण तेण णिरुद्धेगकसायविसयस्सेदस्स अत्थभेदसंभवेण पुणरुत्तदोसासंभवादो।

संपहि 'किट्टीए किं करणं' ति मूलगाहातदियावयवस्स अत्थविवरणं कुणमाणो तत्थ पडिबद्धविदियभासगाहाए अवसरकरणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** एक-एक कषायमें तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं इस प्रकार भाष्यगाथाके उत्तरार्धमें 'तिग तिग' यह वचन आया है।**

§ १४३. यतः एक-एक कषायमें तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ होती हैं, इसलिए एक-एक कषायमें 'तिग तिग' यह वचन गाथाके उत्तरार्धमें कहा है यह उक्त वचनका तात्पर्य है।

*** एक-एक संग्रह कृष्टिकी अनन्त अवयव कृष्टियाँ होती हैं इस कारण उक्त भाष्यगाथाके उत्तरार्धमें 'अधवा अणंताओ' यह पद निर्दिष्ट किया गया है।**

§ १४४. एक-एक कषायकी एक-एक संग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टियाँ अनन्त होती हैं, इस कारण 'अधवा अणंताओ' इस प्रकार उक्त भाष्यगाथा सूत्रका अन्तिम पाद कहा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—इसी भाष्यगाथाके पूर्वार्धके अन्तिम पादमें 'अध व अणंताओ' यह वचन आया है, अतः उसके साथ उत्तरार्धके 'अधवा अणंताओ' इस सूत्रवचनका पुनरुक्तपना क्यों नहीं प्राप्त होता है अर्थात् अवश्य प्राप्त होता है?

समाधान—सो यहाँ ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसी भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें जो 'अध व अणंताओ' पाठ आया है वह अव्वोगाढरूपसे चारों कषायोंको विषय करता है, इसलिए विवक्षित एक-एक कषायका विषय करनेवाले उत्तरार्धसम्बन्धी 'अधवा अणंताओ' इस वचनमें अर्थभेद सम्भव होनेसे पुनरुक्त दोष सम्भव नहीं है।

विशेषार्थ—उक्त भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें जो 'अध व अणंताओ' पाठ आया है वह चारों कषायोंमें सब मिलाकर अवयव कृष्टियाँ अनन्त होती हैं इसकी सिद्धिके लिए आया है और इसी भाष्यगाथाके उत्तरार्धमें पुनः जो 'अधवा अणंताओ' पाठ आया है वह एक-एक कषायमें भी अनन्त-अनन्त अवयव कृष्टियाँ होती हैं यह द्योतित करनेके लिए आया है, इसलिए उक्त भाष्यगाथामें उक्त वचन आनेसे पुनरुक्त दोष नहीं प्राप्त होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

अब 'किट्टीए किं करणं' इस प्रकार मूलगाथाके तीसरे पादके अर्थका खुलासा करते हुए उक्त पादमें निबद्ध दूसरी भाष्यगाथाको अवसर देनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

* 'किट्टीए किं करणं' त्ति एत्थ एक्का भासगाहा ।

§ १४५. 'किट्टीए किं करणं' इच्चेदम्मि बीजपदे णिबद्धो जो अत्थो तम्हि विहासिज्जमाणे तत्थ पडिबद्धा एक्का भासगाहा दट्ठव्वा त्ति भणिदं होदि ।

* तिस्से समुक्कित्तणा ।

§ १४६. सुगमं ।

(१११) किट्टी करेदि णियमा ओवट्टेंतो ठिदी य अणुभागे ।
वड्ढेंतो किट्टीए अकारगो होदि बोद्धव्वो ॥१६४॥

§ १४७. एदिस्से विदियभासगाहाए अत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—'किट्टी करेदि णियमा ओवट्टेंतो०' एवं भणिदे चउण्हं संजलणाणं ट्ठिदीओ अणुभागे च ओकड्डमाणो चेव किट्टीओ करेदि णाण्णहा त्ति वुत्तं होदि । एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठं गाहापच्छद्धमोइण्णं—'वड्ढेंतो किट्टीए अकारगो०' ठिदि-अणुभागे उक्कड्डमाणो णियमा किट्टीए कारगो ण होदि त्ति भणिदं होदि । कुदो एस णियमो त्ति चे ? किट्टीकारगपरिणामाणमुक्कड्डणाकरणविरुद्धसहावेणावट्ठाणणियमादो । एवं च मोहपयडीओ पेक्खिदूण भणिदं, णाणावरणादिकम्मेसु एदम्हि विसए

---

* मूल गाथाके 'किट्टीए किं करणं' प्रश्नरूप इस अर्थके उत्तरस्वरूप एक भाष्यगाथा आयी है ।

§ १४५. 'किट्टीए किं करणं' अर्थात् कृष्टिकरणके कालमें कौन करण होता है इस प्रकार इस बीजपदमें जो अर्थ निबद्ध है उसका व्याख्यान करते हुए उक्त अर्थमें प्रतिबद्ध एक भाष्यगाथा जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* अब उसकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ १४६. यह वचन सुगम है ।

(१११) चारों संज्वलन कषायोंकी स्थिति और अनुभागका नियमसे अपवर्तना करता हुआ ही कृष्टियोंको करता है तथा उक्त कषायोंके स्थिति और अनुभागको बढ़ाता हुआ कृष्टियोंका अकारक होता है ऐसा जानना चाहिए ॥१६४॥

§ १४७. अब इस दूसरी भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणा करेंगे । वह जैसे—'किट्टी करेदि णियमा ओवट्टेंतो' ऐसा कहनेपर चारों संज्वलनोंकी स्थिति और अनुभागका अपकर्षण करता हुआ ही कृष्टियोंको करता है, अन्य प्रकारसे नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

इसी अर्थका स्पष्टीकरण करनेके लिए गाथाका उत्तरार्ध अवतीर्ण हुआ है 'वड्ढेंतो किट्टीए अकारगो' स्थिति और अनुभागका उत्कर्षण करनेवाला जीव नियमसे कृष्टिका कारक नहीं होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—यह नियम किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि कृष्टियोंको करनेवाले जीवोंके परिणामोंका अवस्थान उत्कर्षणाकरणके विरुद्ध स्वभावरूप होता है ऐसा नियम है ।

किन्तु यह सब मोहनीय कर्मकी प्रकृतियोंको देखकर कहा है, क्योंकि ज्ञानावरणादि कर्मोंकी अपेक्षा इस विषयमें इस प्रकारका नियम करना सम्भव नहीं है । यद्यपि इस अर्थका अपवर्तना-

तहाविहणियमासंभवादो। जइ वि एसो अत्थो ओवट्टणतदियमूलगाहाविहासणावसरे पुव्वं जाणाविदो तो वि तस्सेवत्थस्स किट्टीकरणाहियारसंबंधेण विसेसियूण परूवणट्ठं पुणरुवण्णासो त्ति ण एत्थ पुणरुत्तदोसासंका कायव्वा।

§ १४८. संपहि एदिस्से गाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ १४९. सुगमं।

* जहा।

§ १५०. एदं पि सुगमं।

*** जो किट्टीकारगो सो पदेसग्गं ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा ओकड्डदि, ण उक्कड्डदि।**

§ १५१. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि एदस्सेवत्थस्स विसयविभागमुहेण विसेसियूण परूवणं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाढवेइ—

*** खवगो किट्टीकरणप्पहुडि जाव संकमो ताव ओकड्डगो पदेसग्गस्स ण उक्कड्डगो।**

विषयक तीसरी मूलगाथाके कथनके समय पहले ही ज्ञान करा आये हैं तो भी उसी अर्थका कृष्टिकरण अधिकारके सम्बन्धसे विशेषरूपसे कथन करकेके लिए पुनः उपन्यास किया है, इसलिए प्रकृतमें पुनरुक्त दोषकी आशंका नहीं करनी चाहिए।

विशेषार्थ—'बंधो व संकमो वा उदयो वा' इत्यादि तीसरी मूलगाथा है। उसके उत्तरार्धमें 'अधिगो समो व हीणो' पाठ आया है। उसकी व्याख्या करते हुए सामान्यरूपसे अपकर्षणाविषयक विशेष ऊहापोह पहले ही कर आये हैं। परन्तु यहाँ कृष्टिकरण अधिकार अवसरप्राप्त है, इसलिए इस प्रसंगसे प्रकृतमें उत्कर्षण और अपकर्षणविषयक क्या व्यवस्था है यह दिखलाना क्रमप्राप्त था, मात्र इसीलिए यहाँपर कृष्टिकरणमें एक अपकर्षणकरण ही घटित होता है यह दिखलानेके लिए उसका पुनः व्याख्यान किया गया है जो उपयुक्त ही है, अतः प्रकृतमें पुनरुक्त दोषकी आशंका ही नहीं की जा सकती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ १४८ अब इस गाथाके अर्थका व्याख्यान करते हुए आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

*** अब उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ १४९. यह वचन सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ १५०. यह वचन भी सुगम है।

*** जो कृष्टियोंको करनेवाला है वह संज्वलन कषायोंके प्रदेशपुंजका स्थिति और अनुभागकी अपेक्षा अपकर्षण ही करता है, उत्कर्षण नहीं करता।**

§ १५१. यह सूत्र गतार्थ है। अब इसी अर्थका विषयविभाग द्वारा विशेषरूपसे कथन करते हुए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** क्षपक जीव कृष्टिकरणके प्रथम समयसे लेकर उनके संक्रम होनेके अन्तिम समय तक संज्वलन कषायोंके प्रदेशपुंजका अपकर्षक ही होता है, उत्कर्षक नहीं होता।**

§ १५२. किट्टीकारगो उवसामगो वि अत्थि, खवगो वि अत्थि। तत्थ खवगो किट्टीकारयपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमयसंकामओ ताव मोहणीयपदेसग्गस्स ओकड्डगो चेव होदि, ण पुण उक्कड्डगो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। एत्थ 'जाव संकमो' त्ति भणिदे जाव समयाहियावलियसुहुमसांपराइओ ताव ओकड्डणाकरणं पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं—

*** उवसामगो पुण पढमसमयकिट्टीकारगमादिं कादूण जाव चरिमसमयसकसायो ताव ओकड्डगो, ण पुण उक्कड्डगो।**

§ १५३. कसाये उवसामेमाणो लोभवेदगद्धाए विदियतिभागम्मि किट्टीओ करेमाणो तदवत्थाए लोभसंजलणस्स ट्ठिदिअणुभागाणमोकड्डगो चेव होदि, किट्टीकरणद्धादो हेट्ठा सव्वत्थेव पयट्टमाणस्स उक्कड्डणाकरणस्स किट्टीकरणपढमसमए मोहणीयविसए वोच्छेदुवलंभादो। तदो पढमसमयकिट्टीकारगमादिं कादूण जाव चरिमसमयसकसायो ताव ट्ठिदि-अणुभागेहिं मोहणीयकम्मपदेसाणमोकड्डगो चेव एसो उवसामगो ण पुणो उक्कड्डगो त्ति एसो एदस्स भावत्थो। जइ वि सुहुमसांपराइयपढमट्ठिदीए आवलिय-पडिआवलियमेत्तसेसाए आगाल-पडिआगालो वोच्छिज्जदि तो वि विदियट्ठिदिसमवट्ठिदपदेसग्गस्स सत्थाणे ओकड्डणा संभवो अत्थि त्ति सुहुमसांपराइयचरिमसमओ एत्थ ओकड्डणाकरणस्स मज्जादाभावेण णिद्दिट्ठो। तत्तो परं सव्वोवसामणाए उवसंतस्स मोहणीयस्स सव्वेसिं करणाणं वोच्छेदणियमदंसणादो। उवसंतकसाए वि दंसणमोहणीयस्स ओकड्डणाकरणमत्थि त्ति णासंकणिज्जं, तेणेत्थ अहियारा-

---

§ १५२. कृष्टियोंको करनेवाला उपशामक भी होता है और क्षपक भी होता है। उनमेंसे जो क्षपक है वह कृष्टियोंको करनेके प्रथम समयसे लेकर उनका संक्रम करनेके अन्तिम समय तक मोहनीय कर्मके प्रदेशपुंजका अपकर्षक ही होता है, परन्तु उत्कर्षक नहीं होता यह यहाँ इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इस सूत्रमें 'जाव संकमो' ऐसा कहनेपर सूक्ष्मसाम्परायिकके कालमें एक समय अधिक एक आवलि कालके शेष रहने है तक अपकर्षणाकरण प्रवृत्त रहता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

*** परन्तु उपशामक जीव कृष्टिकरणके प्रथम समयसे लेकर कषायभावके अन्तिम समय तक अपकर्षक ही होता है, उत्कर्षक नहीं होता।**

§ १५३. कषायोंको उपशमानेवाला जीव लोभवेदक कालके दूसरे त्रिभागमें लोभसम्बन्धी अनुभागकी कृष्टियोंको करता हुआ उस अवस्थामें लोभ संज्वलनकी स्थिति और अनुभागका अपकर्षक ही होता है, क्योंकि कृष्टिकरणसम्बन्धी कालके पूर्वमें सर्वत्र ही प्रवृत्त हुए मोहनीय-विषयक उत्कर्षणकरणकी कृष्टिकरणके प्रथम समयमें व्युच्छित्ति हो जाती है। इसलिए कृष्टिकारकके प्रथम समयसे लेकर सकषायभावके अन्तिम समय तक यह उपशामक स्थिति और अनुभागकी अपेक्षा मोहनीयके कर्मप्रदेशोंका अपकर्षक ही होता है, परन्तु उत्कर्षक नहीं होता यह इस सूत्रका भावार्थ है। यद्यपि सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम स्थितिमें आवलि और प्रत्यावलिमात्र कालके शेष रहनेपर आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति हो जाती है तो भी द्वितीय स्थितिमें अवस्थित प्रदेशपुंजकी स्वस्थानमें अपकर्षणा सम्भव है, इसलिए सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक यहाँपर अपकर्षणाकरणका मर्यादारूपसे निर्देश किया है। उसके बाद सर्वोपशामनाके द्वारा उपशान्त हुए मोहनीयके सभी करणोंकी व्युच्छित्तिका नियम देखा जाता है।

शंका—उपशान्तकषायमें भी दर्शनमोहनीयका अपकर्षणाकरण होता है?

भावादो। संपहि एदस्सेव उवसामगस्स ओदरमाणावत्थाए ओकड्डुक्कडुणाकरणाणं पवुत्ति-विसेसावहारणट्ठं उत्तरसुत्तावयारो—

*** पडिवदमाणगो पुण पढमसमयसकसायप्पहुडि ओकड्डगो वि उक्कड्डगो वि।**

§ १५४. ओदरमाणगस्स पढमसमयसुहुमसांपराइयप्पहुडि सव्वत्थेवावत्थाविसेसे ओकड्डु-क्कडुणाकरणाणं णत्थि पडिसेहो; सव्वेसिं करणाणं तत्थ पुणरुप्पत्तिदंसणादो त्ति वुत्तं होइ। जइ वि एत्थ सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणे मोहणीयस्स बंधाभावेण उक्कडुणाए णत्थि संभवो तो वि सत्ति पडुच्च तत्थुक्कडुणाकरणस्स संभवो परूविदो। जहा ओकड्डुक्कडुणाकरणाणमेत्थ मोहणीयसंबंधेण किट्टीकारगमहिकिच्च मग्गणा कदा तहा सेसकरणाणं पि जहासंभवं मग्गणा कायव्वा, विरोहाभावादो। एवं मग्गणाए कदाए 'किट्टीए किं करणं' त्ति मूलगाहाए तदिओ अत्थो समत्तो।

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उसका यहाँपर अधिकार नहीं है।

अब इसी उपशामकके उतरनेकी अवस्थामें अपकर्षण-उत्कर्षणकरणकी प्रवृत्ति विशेषका निश्चय करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** परन्तु गिरनेवाला उपशामक सकषाय होनेके प्रथम समयसे लेकर अपकर्षक भी होता है और उत्कर्षक भी होता है।**

§ १५४. उपशमश्रेणिसे उतरनेवाले जीवके सूक्ष्मसाम्परायिक होनेके प्रथम समयसे लेकर सर्वत्र ही अवस्थाविशेषमें अपकर्षणकरण और उत्कर्षणकरणका प्रतिषेध नहीं है, क्योंकि वहाँ सभी करणोंकी पुनरुत्पत्ति देखी जाती है यह उक्त कथनका आशय है। यद्यपि यहाँ सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें मोहनीयकर्मका बन्ध नहीं होनेसे उत्कर्षणाकरण सम्भव नहीं है तो भी शक्तिकी अपेक्षा वहाँ उत्कर्षणाकरण सम्भव है यह कहा है। तथा जिस प्रकार यहाँपर मोहनीय-कर्मके सम्बन्धसे कृष्टिकरणको अधिकृत करके अपकर्षणाकरण और उत्कर्षणाकरणकी मार्गणा की है, उसी प्रकार शेष करणोंकी भी यथा-सम्भव मार्गणा कर लेनी चाहिए, क्योंकि इसमें कोई विरोध नहीं है। इस प्रकार मार्गणा करनेपर 'कृष्टिकरणमें कौन करण होता है' इस प्रकार मूल गाथाका तीसरा अर्थ समाप्त होता है।

विशेषार्थ—प्रतिपात दो प्रकारका है—उपशामनाक्षयनिमित्तक और भवक्षयनिमित्तक। जो भवक्षयनिमित्तक प्रतिपात होता है उसमें तो आठों ही करण उद्घाटित हो जाते हैं। किन्तु उपशामनाक्षयनिमित्तक प्रतिपातमें अपकर्षणाकरण और उदीरणाकरण ये दोनों करण वहाँ उद्घाटित हो जाते हैं। तथा इसी प्रकार अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण भी उद्घाटित हो जाते हैं। मात्र उत्कर्षणाकरण और संक्रमकरणका शक्तिकी अपेक्षा ही वहाँ सद्भाव स्वीकार किया गया है। अब रहा बन्धनकरण सो मोहनीय कर्मका नौवें गुणस्थान तक ही बन्ध होता है। अतः वहाँ इसे व्युच्छिन्न जानना चाहिए। यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि बन्धन करणके अभावमें उत्कर्षणाकरण और संक्रमकरणको भी शक्ति अपेक्षा नहीं स्वीकार करना चाहिए। सो इस शंकाका समाधान यह है कि जिन कर्मोंका बन्धके समय उत्कर्षण और संक्रमण होता है वे कर्म सत्तारूपमें बन्धके अभावमें उस समय भी पाये जाते हैं, अतः वहाँ शक्ति अपेक्षा इन दोनों करणोंको स्वीकार किया गया है।

संपहि मूलगाहाचरिमावयवमस्सियूण चउत्थमत्थं विहासेमाणो तत्थ पडिबद्धाए तदिय-भासगाहाए अवसरकरणट्ठमुवरिमं सुत्तमाह—

* 'लक्खणमध किं च किट्टीए' त्ति एत्थ एक्का भासगाहा। तिस्से समुक्कित्तणा।

§ १५५. 'लक्खणमध किं च किट्टीए' त्ति एदम्मि मूलगाहाचरिमावयवबीजपदे णिबद्धस्स चउत्थस्स अत्थस्स विहासणट्ठमेक्का भासगाहा होदि। तिस्से समुक्कित्तणा एसा दट्ठव्वा त्ति वुत्तं होइ।

(११२) गुणसेढि अणंतगुणा लोभादी कोधपच्छिमपदादो।
कम्मस्स य अणुभागे किट्टीए लक्खणं एदं ॥१६५॥

§ १५६. एदिस्से तदियभासगाहाए किट्टीलक्खणपरूवणट्ठमोइण्णाए अत्थविवरणं कस्सामो। तं जहा—'गुणसेढि अणंतगुणा' गुणस्स सेढी गुणसेढी सा अणंतगुणा भवदि। कम्हि पुण विसए एसा गुणसेढी अणंतगुणा त्ति वुत्ते 'लोभादी कोधपच्छिमपदादो' लोभ-जहण्णकिट्टिमादिं कादूण जाव कोहसंजलणसव्वपच्छिमउक्कस्सकिट्टि त्ति जहाकममवट्ठिद-चदुसंजलणकम्माणुभागविसए एसा अणंतगुणा गुणओली दट्ठव्वा' त्ति वुत्तं होदि। 'किट्टीए लक्खणं एदं' लोभसंजलणजहण्णकिट्टिमादिं कादूण जाव कोधुक्कस्सकिट्टि त्ति एदासिमणुभागस्स अण्णोण्णं पेक्खियूणाविभागपडिच्छेदुत्तरकमवड्ढीए विणा जमणंतगुणवड्ढीए पुव्वापुव्वफद्दयाणुभागादो अणंत-

---

अब मूल गाथाके अन्तिम चरणका अवलम्बन करके चौथे अर्थकी विभाषा करते हुए उसमें प्रतिबद्ध तीसरी भाष्यगाथाका अवसर उपस्थित करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* 'लक्खणमध किं च किट्टीए–कृष्टिका क्या लक्षण है' इस अर्थमें एक भाष्यगाथा आयी है।

§ १५५. 'कृष्टिका क्या लक्षण है' इस मूल गाथाके बीजपदस्वरूप चौथे चरणमें निबद्ध चौथे अर्थकी विभाषा करनेके लिए एक भाष्यगाथा है उसकी यह समुत्कीर्तना जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(११२) लोभ संज्वलनकी जघन्य कृष्टिसे लेकर क्रोध संज्वलनकी सबसे पश्चिम पद अर्थात् विलोमक्रमसे अन्तकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक चारों संज्वलनोंके अनुभागमें गुणश्रेणि उत्तरोत्तर अनन्तगुणी होती है यह कृष्टिका लक्षण है ॥१६५॥

§ १५६. कृष्टिके लक्षणका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई इस तीसरी भाष्यगाथाके अर्थका खुलासा करेंगे। वह जैसे—'गुणसेढि अणंतगुणा' गुण अर्थात् गुणकारको जो श्रेणि अर्थात् पंक्ति है वह अनन्तगुणी होती है। परन्तु किस विषयमें यह गुणश्रेणि अनन्तगुणी होती है ऐसी पृच्छा होनेपर कहते हैं—'लोभादी कोधपच्छिमपदादो' अर्थात् लोभकी जघन्य कृष्टिसे लेकर क्रोध संज्वलनकी सबसे पश्चिम (पीछेकी) उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक क्रमसे अवस्थित चारों संज्वलन कर्मोंके अनुभागमें यह अनन्तगुणी गुणश्रेणि जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'किट्टीए लक्खणमेदं' अर्थात् लोभ संज्वलनकी जघन्य कृष्टिसे लेकर क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक इन सब कृष्टियोंका जो अनुभाग एक-दूसरी कृष्टिको देखते हुए अविभागप्रतिच्छेदोंकी उत्तरोत्तर क्रमवृद्धिके बिना अनन्तगुणी वृद्धिरूपसे तथा पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंके अनुभागसे

गुणहाणीए परिणमिय समवट्ठाणं तमेदं किट्टीए लक्खणमवहारेयव्वमिदि वुत्तं होइ ।

संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमिमा परूवणा कीरदे । तं जहा—फद्दयलक्खणं णाम अणंता परमाणू जहण्णाविभागपडिच्छेदपरिणामेण परिणदा लब्भंति, सा एगा वग्गणा होदि । पुणो पुव्विल्लकम्मपरमाणूहिंतो एगाविभागपडिच्छेदब्भहिया अणंता कम्मपदेसा लब्भंति, सा बिदिया वग्गणा णाम भवदि । जहण्णवग्गणादो पुण एसा वग्गणा एयवग्गणविसेसमेत्तेण परिहीणा होदि । एवमेगेगाविभागपडिच्छेदेण अहिया होदूण कम्मपदेसा च जहाकमं हीयमाणा होदूण उवरिम-उवरिमवग्गणासु गच्छंति जाव अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणं सिद्धाणंतभागमेत्तद्धाणं गंतूण अविभागपडिच्छेदुत्तरकमवड्ढीए पज्जवसाणं जादं ति । तदो एदम्मि उद्देसे अविभाग-पडिच्छेदुत्तरा अण्णा वग्गणा ण लब्भदि त्ति तत्थेयं फद्दयं होदि । पुणो सेसकम्मपदेसपुंजादो अण्णमेगं परमाणुमादेसजहण्णसत्तिसंजुत्तमणंतसरिसधणियपरमाणूहिं सह गदं घेत्तूणा-विभागपडिच्छेदे कदे सव्वजीवेहिंतो अणंतगुणमंतरं होदूण पुव्विल्लजहण्णफद्दयादिवग्गणादो विदियफद्दयादिवग्गणा दुगुणसत्तिजुत्ता समुप्पज्जदि । एवमेदीए दिसाए णेदव्वं जाव उक्कस्स-

---

अनन्तगुणहानिरूपसे परिणमन करके अवस्थित है वह यह कृष्टिका लक्षण है ऐसा अवधारण करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

विशेषार्थ—इस भाष्यगाथामें कृष्टिके ऊपर स्पष्ट प्रकाश डाला गया है । उसे स्पष्ट करते हुए परस्पर कृष्टियोंमें उत्तरोत्तर अनन्तगुणवृद्धिको दिखलानेके लिए पश्चादानुपूर्वीका सहारा लिया गया है । लोभ संज्वलनकी जो सबसे जघन्य कृष्टि है उसमें सबसे कम अनुभाग होता है । उससे उपान्त्य कृष्टिमें अनन्तगुणा अनुभाग पाया जाता है । इसी प्रकार लोभसंज्वलनकी सबसे उत्कृष्ट कृष्टि तक प्रत्येक कृष्टिमें क्रमसे उत्तरोत्तर अनन्तगुणा-अनन्तगुणा अनुभाग जानना चाहिए । उससे माया मान और क्रोधकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक यह प्रक्रिया समझ लेनी चाहिए । परन्तु पूर्व और अपूर्व स्पर्धकोंके अनुभागमें अविभागप्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा जैसी क्रमवृद्धि स्वीकार की गयी है एक तो वह क्रमवृद्धि इन कृष्टियोंमें घटित नहीं होती, दूसरे क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट कृष्टिमें भी जघन्य स्पर्धकके अनुभागसे भी अनन्तगुणा हीन अनुभाग पाया जाता है । इस प्रकार उक्त विधिसे परिणमन करके अवस्थित हुए अनुभागको ही यहाँ पर कृष्टि कहा गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए यह प्ररूपणा करते हैं । वह जैसे, स्पर्धकका लक्षण—अनन्त परमाणु जघन्य अविभाग-प्रतिच्छेद परिणामरूप परिणत होकर प्राप्त हैं । उन सबके समुदायरूप यह एक वर्गणा है । पुनः पहलेके कर्मपरमाणुओंसे एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदवाले अनन्त कर्मप्रदेश प्राप्त होते हैं । यह दूसरी वर्गणा है । किन्तु जघन्य वर्गणासे यह वर्गणा एक वर्गणा विशेषमात्र परमाणुओंसे हीन होती है । इस प्रकार एक-एक अविभागप्रतिच्छेदरूपसे अधिक होकर और कर्मप्रदेश क्रमसे हीन होकर अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण आगेकी वर्गणाएँ प्राप्त होकर जहाँ अविभागप्रतिच्छेदोंकी उत्तर क्रमवृद्धिका अन्त हो जाता है । इस कारण उस स्थानमें एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदवाली अन्य वर्गणा नहीं प्राप्त होती है, अतः वहाँ तककी वर्गणाओंको मिलाकर एक स्पर्धक होता है । पुनः शेष रहे कर्मप्रदेशोंके पुंजमेंसे आदेशरूप जघन्य शक्तिसे संयुक्त तथा अनन्त सदृश धनवाले परमाणुओंके साथ एक परमाणुको ग्रहणकर अविभागप्रतिच्छेद करनेपर सब जीवोंसे अनन्तगुणा अन्तर होकर पूर्वके जघन्य स्पर्धककी आदि वर्गणासे दूसरे स्पर्धकको आदि वर्गणा दूनी शक्तिसे युक्त उत्पन्न होती है । इस प्रकार इस विधिसे उत्कृष्ट स्पर्धककी अन्तिम वर्गणाके प्राप्त होने तक यह क्रम जान लेना चाहिए । इस

फद्दयचरिमवग्गणा त्ति। एवं णीदे जत्थ जत्थ अंतरं भवदि तत्थ तत्थ अंतरस्स हेट्ठा फद्दयमिदि गहेयव्वं। तदो एवंविहो अणुभागविण्णासविसेसो फद्दयलक्खणमिदि घेत्तव्वं।

संपहि किट्टीलक्खणे भण्णमाणे जहण्णकिट्टीए सरिसघणियअणंतपरमाणूहिंतो बिदियकिट्टीए अविभागपलिच्छेदुत्तरा होदूण ट्ठिदा कम्मपरमाणवो णत्थि णियमा अणंतगुणाविभागपडिच्छेदसत्ति-संजुत्ता होदूणच्छंति। एवं चेव बिदियकिट्टिसरिसधणियसव्वाविभागपडिच्छेदपुंजादो तदियकिट्टीए सरिसधणियसव्वाविभागपडिच्छेदपुंजो णियमा अणंतगुणो चेव होदूण चिट्ठदि। पुणो वि अणंत-राणंतरादो एवं चेव होदूण गच्छदि जाव कोधुक्कस्सकिट्टि त्ति। एवमविभागपडिच्छेदुत्तरकमवड्ढीए विणा णियमा अणंतगुणसरूवेण जमवट्ठाणं तं किट्टीए लक्खणमिदि घेत्तव्वं।

प्रकार लाते समय जहाँ-जहाँ अन्तर प्राप्त होता है वहाँ-वहाँ अन्तरके पूर्वतक स्पर्धक ग्रहण करना चाहिए। इसलिए इस प्रकारका जो अनुभागका विन्यास विशेष होता है वह स्पर्धकका लक्षण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रकृतमें स्पर्धकके लक्षणपर प्रकाश डालते हुए जो स्पष्टीकरण किया है उसका आशय यह है—पहले ऐसे अनन्त परमाणु लो जिनमेंसे प्रत्येक परमाणुमें सबसे जघन्य अविभाग-प्रतिच्छेदोंसे परिणत सदृश अनुभागशक्ति पायी जावे इसका नाम एक वर्गणा है और प्रत्येक परमाणुका नाम वर्ग है। यह सबसे जघन्य शक्तिसे युक्त प्रथम वर्गणा है। पुनः जिसमें एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदोंसे परिणत प्रत्येक परमाणु हो ऐसे अनन्त परमाणुके समुदायरूप दूसरी वर्गणा होती है। मात्र इस वर्गणामें पूर्वकी वर्गणासे एक वर्गणाविशेषमात्र परमाणु हीन पाये जाते हैं। इस प्रकार इस विधिसे अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण वर्गणाएँ जिसमें होती हैं उसे एक स्पर्धक कहते हैं। इसी प्रकार सब जीवोंसे अनन्तगुणा अन्तर देकर इसी क्रमसे दूसरा स्पर्धक प्राप्त कर लेना चाहिए। मात्र प्रथम स्पर्धककी आदि वर्गणामें जितने अविभाग-प्रतिच्छेद पाये जाते हैं उनसे दूसरे स्पर्धककी आदि वर्गणामें दूने अविभागप्रतिच्छेद होते हैं। तथा आगे भी यही क्रम जान लेना चाहिए।

अब कृष्टिका लक्षण कहने पर जघन्य कृष्टिके सदृश धनवाले अनन्त परमाणुओंसे दूसरी कृष्टिमें एक अधिक अविभागप्रतिच्छेदोंसे युक्त कर्म परमाणु नहीं होते, किन्तु नियमसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेदरूप शक्तिसे संयुक्त परमाणु होते हैं। इसी प्रकार दूसरी कृष्टिके सदृश धनवाले सब अविभागप्रतिच्छेद पुंजसे तीसरी कृष्टिमें सदृश धनवाले सब अविभागप्रतिच्छेदोंका पुंज नियमसे अनन्तगुणा होकर ही अवस्थित है। इसके आगे भी क्रोधकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक आगे-आगे इसी प्रकार होकर सब कृष्टियाँ प्राप्त होती हैं। इस प्रकार एक अधिक अविभाग प्रतिच्छेदको क्रम वृद्धिके विना जिनमें नियमसे अनन्तगुणेके क्रमसे अविभागप्रतिच्छेदोंका सद्भाव पाया जाता है वह कृष्टिका लक्षण है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—एक स्पर्धककी जितनी वर्गणाएँ होती हैं उनकी प्रत्येक वर्गणामें उत्तरोत्तर एक-एक अधिक प्रतिच्छेदोंके समुदायरूप परमाणुपुंज पाया जाता है। जब कि कृष्टियोंकी यह स्थिति नहीं है। किन्तु लोभ संज्वलनकी जो जघन्य कृष्टि है उसके प्रत्येक परमाणुमें जितने अविभागप्रति-च्छेदरूप अनुभागशक्ति होती है उससे दूसरी कृष्टिके प्रत्येक परमाणुमें अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद रूप अनुभागशक्ति होती है। यह क्रम लोभ, माया, मान और क्रोधके क्रमसे क्रोधकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक समझ लेना चाहिए। यही स्पर्धक और कृष्टिके लक्षणमें अन्तर है।

§ १५७. संपहि एवंविहमेदिस्से तदियभासगाहाए अत्थं विहासेमाणो उवरिमविहासागंथमाह—

* विहासा ।

§ १५८. सुगमं ।

* लोभस्स जहण्णिया किट्टी अणुभागेहिं थोवा । विदियकिट्टी अणुभागेहिं अणंतगुणा । तदिया किट्टी अणुभागेहिं अणंतगुणा । एवमणंतराणंतरेण सव्वत्थ अणंतगुणा जाव कोधस्स चरिमकिट्टि त्ति ।

§ १५९. कुदो एवं ? किट्टीगदाणुभागस्स पुव्वाणुपुव्वीए अणंतगुणवड्डि मोत्तूण पयारंतरासंभवादो । संपहि किट्टीगदाणुभागस्स सत्थाणे अणंतगुणवड्डिदस्स वि फद्दयाणुभागं पेक्खियूणाणंतगुणहीणत्तमेवेत्ति इममत्थविसेसं जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* उक्कस्सिया वि किट्टी आदिफद्दयआदिवग्गणाए अणंतभागो ।

§ १६०. सव्वुक्कस्सिया वि कोहसंजलणचरिमकिट्टी अविभागपडिच्छेदेहिं अपुव्वफद्दयादिवग्गणाए अणंतभागमेत्तो चेव होदि । तत्तो अणंतगुणहाणीए परिणमिदूण किट्टीगदाणुभागस्सावट्ठाणणियमदंसणादो । तदो चेव एदासिं किट्टीसण्णा वि अत्थाणुगया दट्ठव्वा त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

---

§ १५७. अब इस प्रकार इस तीसरी भाष्यगाथाके अर्थका स्पष्टीकरण करके आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

* अब उक्त भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ १५८. यह सूत्र सुगम है ।

* लोभ संज्वलनकी जघन्य कृष्टि अनुभागकी अपेक्षा सबसे कम है । दूसरी कृष्टि अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी है । तीसरी कृष्टि अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी है । इस प्रकार क्रोध संज्वलनकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक सर्वत्र कृष्टियाँ अनन्तर अनन्तररूपसे अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी होती हुई चली गयी हैं ।

§ १५९. शंका—ऐसा किस कारणसे है ।

समाधान—क्योंकि कृष्टियोंके अनुभागमें पूर्वानुपूर्वीसे अनन्तगुणी वृद्धिको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है । इस प्रकार यद्यपि कृष्टियोंका अनुभाग स्वस्थानमें उत्तरोत्तर अनन्तगुणी वृद्धिरूप होकर अवस्थित है तो भी स्पर्धकमें रहनेवाले अनुभागको देखते हुए कृष्टिगतअनुभाग अनन्तगुणा हीन ही है इस प्रकार इस अर्थ विशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* किन्तु संज्वलन क्रोधकी उत्कृष्ट भी कृष्टि प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तवें भागप्रमाण है ।

§ १६०. संज्वलन क्रोधकी सबसे उत्कृष्ट अन्तिम कृष्टि भी अविभागप्रतिच्छेदोंकी अपेक्षा अपूर्व स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके अनन्तवें भागप्रमाण ही होती है । यही कारण है कि कृष्टिगत अनुभाग अनन्त गुणहानिरूपसे परिणत होकर अवस्थित है ऐसा नियम देखा जाता है । और इसीलिए इसकी कृष्टि संज्ञा भी अर्थानुगत—सार्थक जाननी चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* एवं किट्टीसु थोवो अणुभागो ।

§ १६१. सुगमं ।

* किसं कम्मं कदं जम्हा तम्हा किट्टी ।

§ १६२. जम्हा संजलणाणमणुभागसंतकम्मं किसं थोवयरं कदं तम्हा एदस्साणुभागस्स किट्टीसण्णा जादा त्ति भणिदं होइ। 'कृश तनूकरणे' इत्यस्य धातोः कृशिशब्दस्य व्युत्पत्त्यव-लम्बनात् ।

* एदं लक्खणं ।

§ १६३. एदमणंतरपरूविदं किट्टीणं लक्खणमिदि वुत्तं होइ। एवं पढममूलगाहाए तिण्हं भासगाहाणमत्थविहासा समत्ता ।

* एत्तो विदियमूलगाहा ।

§ १६४. पढममूलगाहाए विहासिय समत्ताए तदणंतरमेत्तो विदियमूलगाहा विहासियव्वा त्ति वुत्तं होदि ।

* तं जहा ।

§ १६५. सुगमं ।

(११३) कदिसु च अणुभागेसु च ट्ठिदीसु वा केत्तियासु का किट्टी ।
सव्वासु वा ट्ठिदीसु च आहो सव्वासु पत्तेयं ॥१६६॥

---

* इस प्रकार कृष्टियोंमें अनुभाग सबसे अल्प होता है ।

§ १६१. यह सूत्र सुगम है ।

* यतः संज्वलन कर्म अनुभागकी अपेक्षा कृश किया गया है अतः उसका नाम कृष्टि है ।

§ १६२. यतः चारों संज्वलनोंका अनुभागसत्कर्म कृश अर्थ सबसे अल्प किया गया है इसलिए इस अनुभागकी कृष्टि संज्ञा हो गयी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है कृशधातु सूक्ष्म करने रूप अर्थमें आयी है। इस प्रकार इस धातुसे व्युत्पादित कृश शब्दका अवलम्बन लेकर कृष्टि शब्द निष्पन्न किया गया है ।

* यह कृष्टिका लक्षण है ।

§ १६३. यह अनन्तर पूर्व कहा गया कृष्टियोंका लक्षण है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार प्रथम मूलगाथासम्बन्धी तीन भाष्यगाथाओंके अर्थोंकी विभाषा समाप्त हुई ।

* इससे आगे दूसरी मूल गाथाकी विभाषा की जाती है ।

§ १६४. प्रथम मूल गाथाकी विभाषा समाप्त होनेपर तदनन्तर दूसरी मूलगाथाकी विभाषा करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* वह जैसे ।

§ १६५. यह सूत्र सुगम है ।

* ११३. कितने अनुभागोंमें और कितनी स्थितियोंमें कौन कृष्टि अवस्थित है। क्या सब स्थितियोंमें सब कृष्टियाँ सम्भव हैं या सब स्थितियोंमेंसे प्रत्येक स्थितिपर एक-एक कृष्टि सम्भव है ॥१६६॥

§ १६६. किमट्ठमेसा विदियमूलगाहा समोइण्णा त्ति चे ? वुच्चदे—किट्टीणं ठिदि-अणुभागेसु अवट्ठाणविसेसगवेसणट्ठमेसा गाहा समोइण्णा। तं जहा—'कदिसु य अणुभागेसु च, एवं भणिदे केत्तियमेत्तेसु अणुभागाविभागपडिच्छेदेसु कदमा किट्टी वट्टदे, किं संखेज्जेसु आहो असंखेज्जेसु किं वा अणंतेसु त्ति पुच्छा कदा होदि। एसा च पुच्छा संगहकिट्टीसु तदवयवकिट्टीसु च जोजेयव्वा। 'ट्ठिदीसु वा केत्तियासु का किट्टी' एवं भणिदे केत्तियमेत्तीसु वा ट्ठिदीसु कदमा किट्टी होदि, किमेक्किस्से दोसु तिसु वा एवं गंतूण किं संखेज्जासु असंखेज्जासु वा त्ति पुच्छा कदा होदि। एत्थ वि संगहकिट्टीणं तदवयवकिट्टीणं च पादेक्कमेसो पुच्छाहिसंबंधो जोजेयव्वो।

एवमेदेण सुत्तावयवेण णिद्दिट्ठाए ट्ठिदिविसयपुच्छाए पुणो वि विसेसियूण परूवणट्ठं गाहापच्छद्धमोइण्णं—'सव्वासु वा ट्ठिदीसु च०' चदुण्हं संजलणाणं जहासंभवं पढमविदिय-किट्टीट्ठिदीसु संभवंतीसु तत्थ किं सव्वासु चेव तदवयट्ठिदीसु अविसेसेण सव्वा किट्टी संभवइ, आहो ण सव्वासु ट्ठिदीसु सव्वासिं किट्टीणमत्थि संभवो। किंतु एक्केक्किस्से ट्ठिदीए एक्केक्का चेव किट्टी होदूण पादेक्कमसंकिण्णसरूवेण तत्थ तदवट्ठाणसंभवादो त्ति। एवमेसा गाहा पुच्छासुत्तं होदूण सेसासेसणिण्णयपरूवणाए भासगाहाए पडिबद्धाए बीजपदभावेणावट्ठिदा दट्ठव्वा। संपहि एदीए सुत्तगाहाए सूचिदत्थविहासणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो तत्थ पडिबद्धाणं दोण्हं भासगाहाणमत्थित्त-परूवणट्ठमुत्तरं पबंधमाह—

*** एदिस्से बे भासगाहाओ।**

§ १६६. शंका—यह दूसरी मूल गाथा किस लिए अवतीर्ण हुई है ?

समाधान कहते है—स्थितियोंमें और अनुभागोंमें कृष्टियोंके अवस्थानविशेषका अनुसन्धान करनेके लिए यह गाथा अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'कदिसु अणुभागेसु च' ऐसा कहनेपर अनु-भागके कितने अविभागप्रतिच्छेदोंमें कौन कृष्टि अवस्थित है, क्या संख्यात अविभागप्रतिच्छेदोंमें या असंख्यात अविभागप्रतिच्छेदोंमें या अनन्त अविभागप्रतिच्छेदोंमें इस प्रकार यह पृच्छा की गयी है। और यह पृच्छा संग्रहकृष्टियोंमें और उनकी अवयव कृष्टियोंमें योजित कर लेनी चाहिए। 'ट्ठिदीसु वा केत्तियासु का किट्टी' ऐसा कहनेपर कितनी स्थितियोंमें कौन कृष्टि अवस्थित है ? क्या एक स्थितिमें, दो स्थितियोंमें या तीन स्थितियोंमें इस प्रकार जाकर क्या संख्यात स्थितियोंमें या असंख्यात स्थितियोंमें यह पृच्छा की गयी है। यहाँपर भी संग्रह कृष्टियों और उनकी अवयव कृष्टियोंमेंसे प्रत्येकके साथ इस पृच्छाका सम्बन्ध कर लेना चाहिए।

इस प्रकार इस सूत्र वचन द्वारा स्थितिविषयक पृच्छाके निर्दिष्ट किये जानेपर फिर भी विशेष कथन करनेके लिए गाथाका उत्तरार्ध अवतीर्ण हुआ है—'सव्वासु वा ट्ठिदीसु च०' संज्वलनोंकी यथासम्भव कृष्टिसम्बन्धी प्रथम स्थिति और द्वितीयस्थिति सम्भव होनेपर उनमेंसे उनकी सभी अवयव स्थितियोंमें भेद किये बिना क्या सब कृष्टियाँ सम्भव हैं या सब स्थितियोंमें सब कृष्टियाँ सम्भव नहीं हैं, किन्तु एक-एक स्थितिमें एक-एक ही होकर कृष्टि रहती है, क्योंकि अलग-अलग असंकीर्णरूपसे ही उन स्थितियोंमें उन कृष्टियोंका अवस्थान सम्भव है। इस प्रकार यह गाथा पृच्छासूत्र होकर भाष्यगाथासे प्रतिबद्ध शेष समस्त निर्णयकी प्ररूपणाके द्वारा बीजपद-रूपसे अवस्थित जाननी चाहिए। अब इस सूत्रगाथा द्वारा सूचित हुए अर्थका विशेष व्याख्यान करते हुए चूर्णिसूत्रकार उससे सम्बन्ध रखनेवाली दो भाष्यगाथाओंके अस्तित्वका कथन करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** इस मूल गाथाकी दो भाष्य गाथाएँ हैं।**

§ १६७. सुगमं।

✽ मूलगाहापुरिमद्धे एक्का भासगाहा।

§ १६८. मूलगाहापुरिमद्धे पडिबद्धा तत्थ इमा पढमा भासगाहा दट्ठव्वा त्ति भणिदं होदि।

✽ तिस्से समुक्कित्तणा।

§ १६९. सुगमं।

(११४) किट्टी च ट्ठिदिविसेसेसु असंखेज्जेसु णियमसा होदि।
णियमा अणुभागेसु च होदि हु किट्टी अणंतेसु ॥१६७॥

§ १७०. संपहि मूलगाहा पुरिमद्धविहासणट्ठमोइण्णाए एदिस्से पढमभासगाहाए अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—'किट्टी च०' किट्टी खलु ट्ठिदिविसेसेसु ठिदिभेदेसु असंखेज्जेसु असंखेज्जपमाणावच्छिण्णेसु णियमसा णिच्छयेणेव होदि, चदुण्हं संजलणाणं विदियट्ठिदी संखेज्जावलियपमाणा अत्थि, तत्थ एक्केक्किस्से ट्ठिदीए अप्पप्पणो सव्वासिमेव संगहकिट्टीणं तदवयवकिट्टीणं च संभवे पडिसेहो णत्थि, तेण कारणेण सव्वा किट्टी सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु णियमा समवट्ठिदा दट्ठव्वा त्ति वुत्तं होइ। एत्थ वेदिज्जमाणसंगहकिट्टीए पढमट्ठिदीए वि सव्वासु ट्ठिदीसु संभवो एदेणेव सुत्तावयवेण संगहिदो त्ति दट्ठव्वो।

'णियमा अणुभागेसु य' एवं भणिदे एक्केक्का संगहकिट्टी तदवयवकिट्टी वा अणंतसंखावच्छिण्णेसु अणुभागाविभागपडिच्छेदेसु वट्टदि त्ति घेत्तव्वं। किं कारणं? एक्केक्किस्से किट्टीए अणंत-

---

§ १६७. यह सूत्र सुगम है।

✽ मूल गाथाके पूर्वार्धसे सम्बन्ध रखनेवाली एक भाष्य गाथा है।

§ १६८. मूलगाथाके पूर्वार्धसे सम्बन्ध रखनेवाली प्रकृतमें यह प्रथम भाष्यगाथा है।

✽ अब उसकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ १६९. यह सूत्र सुगम है।

✽ ११४. असंख्यात स्थितिविशेषोंमें सभी कृष्टियाँ नियमसे होती है। उसी प्रकार अनन्त अनुभागोंमें प्रत्येक संग्रह कृष्टि और अवयव कृष्टि नियमसे होती है ॥१६७॥

§ १७०. अब मूल गाथाके पूर्वार्धकी विभाषा करनेके लिए अवतीर्ण हुई इस प्रथम गाथाके अर्थका कथन करेंगे। वह जैसे—'किट्टी च०' प्रत्येक कृष्टि 'असंखेज्जेसु' असंख्यात संख्यासे युक्त 'ट्ठिदिविसेसेसु' स्थितिभेदोंमें 'णियमसा' नियमसे होती है। चारों संज्वलनोंकी द्वितीय स्थिति संख्यात आवलिप्रमाण होती है। उनमेंसे एक-एक स्थितिमें अपनी-अपनी सभी संग्रह कृष्टियाँ और उनकी अवयव कृष्टियाँ सम्भव हैं इसमें निषेध नहीं है। इस कारण सभी कृष्टियाँ सभी स्थितिविशेषोंमें नियमसे अवस्थित जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर वेदी जानेवाली संग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थिति भी सभी स्थितियोंमें सम्भव है इस बातका इसी सूत्रवचन द्वारा संग्रह कर लिया गया जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जिस समय जिस संज्वलन कषायका उदय होता है उस समय उसकी प्रथम स्थिति होकर उसका उदय होता है। अन्य कालमें वह मात्र द्वितीय स्थितिमें ही अवस्थित रहती है। शेष कथन सुगम है।

'णियमा अणुभागेसु य' ऐसा कहनेपर एक-एक संग्रह कृष्टि और उनकी अवयव कृष्टि अनुभागके अनन्त संख्यासे युक्त अविभागप्रतिच्छेदोंमें रहती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए,

सरिसधणियपरमाणुसमूहारद्धाए परमाणुं पडि अणंताणमविभागपडिच्छेदाणमुवलंभादो। तदो जहण्णिया वि किट्टी अविभागपडिच्छेदगणणं पेक्खियूण अणंतसंखावच्छिण्णाणुभागविसेसमवट्ठिदा। एवं सेसाओ वि किट्टीओ दट्ठव्वाओ त्ति गाहापच्छद्धे सुत्तत्थसमुच्चओ। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुवरिमं भणइ—

*** विहासा।**

§ १७१. सुगमं।

*** कोधस्स पढमसंगहकिट्टिं वेदेंतस्स तिस्से संगहकिट्टीए एक्केक्का किट्टी विदियट्ठिदीसु सव्वासु पढमट्ठिदीसु च उदयवज्जासु एक्केक्का किट्टी सव्वासु ट्ठिदीसु।**

§ १७२. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे। तं जहा—कोहपढमसंगहकिट्टिं वेदेमाणस्स तदवत्थाए कोहसंजलणस्स पढम-विदियट्ठिदिभेदेण दो ट्ठिदीओ भवंति। तत्थ ताव विदियट्ठिदीए सव्वासु अवयवट्ठिदीसु तिस्से वेदिज्जमाणकोहपढमसंगहकिट्टीए एक्केक्का अवयवकिट्टी अविसेसेण दीसइ, तत्थ तदवट्ठाणस्स पडिसेहाभावादो। पढमट्ठिदीए पुण उदयवज्जासु सव्वासु ट्ठिदीसु तिस्से संगह—किट्टीए एक्केक्का अवंतरकिट्टी समुवलब्भदे। एत्थ 'एक्केक्का किट्टी' त्ति भणिदे कोहसंजलणस्स जहण्णिया किट्टी एदासु णिरुद्धठिदीसु भवदि। एवं विदियकिट्टी तदियकिट्टी च जाव पढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति एदाओ सव्वाओ किट्टीओ पादेक्कं तत्थ समुवलब्भंति त्ति वुत्तं होइ।

क्योंकि सदृश धनवाले परमाणुसमूहसे निष्पन्न हुई एक-एक कृष्टिके प्रत्येक परमाणुके प्रति अनन्त अविभागप्रतिच्छेद उपलब्ध होते हैं, इसलिए जघन्य भी कृष्टि अविभागप्रतिच्छेदोंकी गणनाको देखते हुए अनन्त संख्यासे युक्त अनुभाग विशेषरूपसे अवस्थित है। इसी प्रकार शेष कृष्टियोंके विषयमें भी जानना चाहिए। इस प्रकार यह गाथाके उत्तरार्धका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

*** अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ १७१. यह सूत्र सुगम है।

*** क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले जीवके उस संग्रह कृष्टिकी एक-एक अवयव कृष्टि सब द्वितीय स्थितियोंमें और उदय रहित प्रथम स्थितियोंमें इस प्रकार एक-एक अवयव कृष्टि सब स्थितियोंमें अवस्थित रहती है।**

§ १७२. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले जीवके उस अवस्थामें क्रोध संज्वलनकी प्रथम और द्वितीय स्थितिके भेदसे दो स्थितियां होती हैं। उनमेंसे सर्वप्रथम द्वितीय स्थितिकी सब अवयव स्थितियोंमें उस वेद्यमान क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी एक-एक अवयव कृष्टि अविशेषरूपसे दिखाई देती है, क्योंकि उन स्थितियोंमें उनके अवस्थानका निषेध नहीं है। परन्तु प्रथम स्थितिकी उदयरहित सब स्थितियोंमें उस संग्रह कृष्टिकी एक-एक अवयव कृष्टि उपलब्ध होती है। यहाँपर 'एक्केक्का किट्टी' ऐसा कहनेपर क्रोध संज्वलनकी जघन्य अवयव कृष्टि इन विवक्षित स्थितियोंमें पायी जाती है। इसी प्रकार दूसरी अवयव कृष्टि और तीसरी अवयव कृष्टिसे लेकर प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम अवयव कृष्टि तक जानना चाहिए। ये सब कृष्टियां अलग-अलग उन स्थितियोंमें उपलब्ध होती हैं

संपहि उदयट्ठिदीए किमट्ठमेत्थ परिवज्जणं कीरदे ? को वा तत्थ विसेससंभवो त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** उदयट्ठिदीए पुण वेदिज्जमाणियाए संगहकिट्टीए जाओ किट्टीओ तासिमसंखेज्जा भागा ।**

§ १७३. णिरुद्धसंगहकिट्टीए हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जभागं मोत्तूण मज्झिमकिट्टीसरूवेणेव उदयाणुभागो परिणमदि त्ति एदेण कारणेण उदयट्ठिदीए वेदिज्जमाणियाए संगहकिट्टीए अवयवकिट्टीणमसंखेज्जा भागा संभवंति त्ति सुत्तेणेदेण णिद्दिट्ठं ।

§ १७४. संपहि सेसाणमवेदिज्जमाणियाणमेक्कारसण्हं पि संगहकिट्टीणमेत्थ पढमट्ठिदिसंबंधाभावादो तासिमेक्केक्का किट्टी विदियट्ठिदीए चेव सव्वासु ट्ठिदीसु दट्ठव्वा, ण पढमट्ठिदीए त्ति इममत्थविसेसं जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** सेसाणमवेदिज्जमाणिगाणं संगहकिट्टीणमेक्केक्का किट्टी सव्वासु विदियट्ठिदीसु, पढमट्ठिदीसु णत्थि ।**

§ १७५. गयत्थमेदं सुत्तं ।

यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब उदय स्थितिका यहाँपर किसलिए निषेध किया है अथवा उसमें क्या विशेष सम्भव है ऐसी आशंका होनेपर निर्णय करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** किन्तु वेद्यमान संग्रह कृष्टिकी जितनी अवयव कृष्टियाँ हैं उनका असंख्यात बहुभाग उदय स्थितिमें पाया जाता है ।**

§ १७३. विवक्षित संग्रह कृष्टिके अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भाग प्रमाण अवयव कृष्टियोंको छोड़कर मध्यकी जो असंख्यात बहुभागप्रमाण अवयय कृष्टियाँ हैं उस रूपसे ही उदयरूप अनुभाग परिणत होता है, इस कारण वेद्यमान संग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टियोंका असंख्यात बहुभाग उदय स्थितिमें सम्भव है यह बात इस सूत्र द्वारा निर्दिष्ट की गयी है ।

विशेषार्थ—तात्पर्य यह है कि क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका उदय होनेपर न तो असंख्यातवें भागप्रमाण अधस्तन अवयव कृष्टियाँ अपने स्वरूपसे उदयको प्राप्त होती हैं और न ही असंख्यातवें भाग प्रमाण उपरिम अवयव कृष्टियाँ अपने स्वरूपसे उदयको प्राप्त होती हैं । किन्तु मध्यकी असंख्यात बहुभागप्रमाण अवयव कृष्टियाँ ही उदयरूपसे परिणत होती हैं, इसलिए पूर्व सूत्रमें उदयस्थितिको छोड़कर यह वचन कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ १७४. अब अवेद्यमान शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंका प्रथम स्थितिके साथ सम्बन्ध न होनेसे उनकी एक-एक अवयव कृष्टि द्वितीय स्थितिकी ही सब स्थितियोंमें जानना चाहिए, प्रथम स्थितिमें नहीं इस प्रकार इस अर्थ विशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** शेष अवेद्यमान ग्यारह संग्रह कृष्टियोंकी एक-एक अवयव कृष्टि द्वितीय स्थितिकी सब अवान्तर स्थितियोंमें पायी जाती है, किन्तु प्रथम स्थितिकी अवान्तर स्थितियोंमें नहीं पायी जाती ।**

§ १७५. यह सूत्र गतार्थ है।

§ १७६. एवमेत्तिएण पबंधेण 'ट्ठिदीसु वा केत्तियासु का किट्टि' त्ति एदं मूलगाहावयवमस्सियूण 'किट्टीसु च ट्ठिदिविसेसेसु असंखेज्जेसु०' त्ति एदस्स पढमभासगाहापुव्वद्धस्स विहासणं काढूण संपहि 'कदिसु च अणुभागेसु च' इच्चेदं मूलगाहावयवमस्सिदूण 'णियमा अणुभागेसु च अणंतेसु.' त्ति एदस्स भासगाहापच्छद्धस्स विहासणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* एक्केक्का किट्टी अणुभागेसु अणंतेसु ।

§ १७७. एक्केक्का संगहकिट्टी तदवयवकिट्टी वा णियमा अणंतेसु अणुभागेसु वट्टदि त्ति वुत्तं होइ । एदेण संखेज्जासंखेज्जाणुभागेसु किट्टीणं संभवो णत्थि त्ति जाणाविदं, सव्वजहण्णियाए किट्टीए सव्वजीवेहिंतो अणंतगुणमेत्ताणमविभागपडिच्छेदाणमुवलंभादो । संपहि एक्केक्का किट्टी असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु वट्टदि त्ति वुत्ते जहा सव्वासिं किट्टीणं सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु अवट्ठाणसंभवो जादो एवमेत्थ वि एक्केक्का किट्टी अणंतेसु अणुभागेसु वट्टदि त्ति एदेण वयणेण एक्किस्से णिरुद्धकिट्टीए अप्पणो अणुभागेसु सेसकिट्टीणमणुभागेसु च संभवो पसज्जदि त्ति एवंविहविप्पडिवत्तीए णिरायरणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

* जेसु पुण एक्का ण तेसु विदिया ।

विशेषार्थ—क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदनके समय शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियों सम्बन्धी अवान्तर कृष्टियोंका वेदन नहीं होता और इसलिए तत्सम्बन्धी द्वितीय स्थितिमेंसे प्रदेशपुंजका प्रथम स्थितिके साथ सम्बन्ध नहीं पाया जाता । इसी कारण प्रकृतमें उक्त ग्यारह संग्रह कृष्टियोंसम्बन्धी प्रदेशपुंजका प्रथम स्थितिमें निषेध किया है ।

§ १७६. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा 'ट्ठिदीसु वा केत्तियासु का किट्टी' इस प्रकार मूल गाथाके इस वचनका आश्रयकर 'किट्टी च ट्ठिदिविसेसेसु असंखेज्जेसु०' इस प्रथम भाष्यगाथा सम्बन्धी पूर्वार्धकी प्ररूपणा कर अब 'कदिसु अणुभागेसु च' मूलगाथाके इस वचनका आश्रय कर 'णियमा अणुभागेसु च अणंतेसु०' भाष्यगाथासम्बन्धी इस उत्तरार्धकी प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* एक-एक संग्रह कृष्टि अनन्त अनुभागोंमें रहती है ।

§ १७७. एक-एक संग्रह कृष्टि अथवा उनकी अवयव कृष्टि नियमसे अनन्त अनुभागोंमें रहती है । इस वचन द्वारा संख्यात और असंख्यात अनुभागोंमें कृष्टियाँ सम्भव नहीं हैं इस बातका ज्ञान करा दिया है, क्योंकि सबसे जघन्य कृष्टिमें सब जीवोंसे अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं । अब एक-एक कृष्टि असंख्यात स्थितिविशेषोंमें रहती है ऐसा कहनेपर जिस प्रकार सब कृष्टियोंका सब स्थिति विशेषोंमें अवस्थान सम्भव हो जाता है इसी प्रकार प्रकृतमें भी 'एक-एक कृष्टि अनन्त अनुभागोंमें रहती है' इस प्रकार इस वचनसे एक विवक्षित कृष्टिका अपने-अपने अनुभागोंमें जिस प्रकार रहना सम्भव है उसी प्रकार शेष कृष्टियोंके अनुभागोंमें भी रहना सम्भव प्राप्त होता है इस प्रकार इस तरहको विप्रतिपत्तिका निराकरण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* किन्तु जिन अनुभागोंमें एक कृष्टि रहती है उनमें दूसरी कृष्टि नहीं रहती ।

§ १७८. जेसु पुण अणुभागेसु एक्का णिरुद्धकिट्टी वट्टदे ण तेसु चेवाणुभागेसु अण्णा किट्टी वट्टदे। किंतु तत्तो भिण्णसहावेसु चेवाणुभागेसु वट्टदि त्ति घेत्तव्वं, किट्टीगदाणुभागस्स जहण्ण-किट्टिप्पहुडि अणंतगुणवड्ढीए वड्ढिदस्स परोप्परपरिहारेण समवट्ठाणणियमदंसणादो। तम्हा ण तासिमणुभागस्स अण्णोण्णविसयसंकरप्पसंगो त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

§ १७९. एवमेत्तिएण पबंधेण पढमभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि विदियभास-गाहाए समुक्कित्तणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो इदमाह—

*** विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ १८०. सुगमं।

(११५) सव्वाओ किट्टीओ विदियट्ठिदीए दु होंति सव्विस्से।
जं किट्टिं वेदयदे तिस्से अंसो च पढमाए ॥१६८॥

§ १८१. एसा विदियभासगाहा मूलगाहाए पच्छद्धविहासणट्ठमोइण्णा। तं जहा—मूलगाहा-पच्छद्धे किं सव्वासु ट्ठिदीसु एक्केक्का किट्टी होदि आहो ण होदि त्ति पुच्छा णिद्दिट्ठा। संपहि तहा पयट्टाए पुच्छाए पढमविदियट्ठिदिभेदविवक्खं कादूण तदवयवट्ठिदीसु किट्टीणमवट्ठाणमेदेण सरूवेण

---

§ १७८. परन्तु जिन अनुभागोंमें एक विवक्षित कृष्टि रहती है उन्हीं अनुभागोंमें अन्य कृष्टि नहीं रहती। किन्तु उस अनुभागसे भिन्न स्वभाववाले ही अनुभागोंमें वह दूसरी कृष्टि रहती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक कृष्टिका अनुभाग जघन्य कृष्टिसे अनन्तगुणवृद्धि-रूप वृद्धिको प्राप्त हुआ है, इसलिए परस्परके परिहाररूपसे ही कृष्टियोंमें अनुभागके अवस्थानका नियम देखा जाता है। इसलिए उन कृष्टियोंके अनुभागके विषयमें परस्पर संकरका प्रसंग नहीं प्राप्त होता इस प्रकार यह इस सूत्रका भावार्थ है।

विशेषार्थ—लोभ संज्वलनकी जो जघन्य कृष्टि है उसमें जो अनुभाग अर्थात् (फलदान शक्ति) पाया जाता है उससे दूसरी कृष्टिमें अनन्त गुणवृद्धिको लिये हुए अन्य ही अनुभाग (फलदानशक्ति) पाया जाता है। आशय यह है कि कृष्टियोंका विभागीकरण ही अनुभागभेदसे किया गया है, इसलिए उक्त सूत्रमें यह कहा है कि जिन अनुभागोंमें एक कृष्टि रहती है उनमें दूसरी कृष्टि नहीं रहती। किन्तु स्थितिके विषयमें ऐसा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि प्रत्येक कृष्टिमें अनन्त परमाणु होते हैं, इसलिए उनका अपनी सभी स्थितियोंमें पाया जाना सम्भव है। अतः अनुभागके समान स्थितिके विषयमें ऐसा विभाग नहीं किया जा सकता।

§ १७९. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा प्रथम भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणा समाप्त करके अब दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हुए चूर्णिसूत्रकार इस सूत्रको कहते हैं—

*** अब दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ १८०. यह सूत्र सुगम है।

(११५) सब संग्रह और अवयव कृष्टियाँ समस्त द्वितीय स्थितिमें होती हैं। किन्तु यह जीव जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उसका एक भाग प्रथम स्थितिमें होता है ॥१६८॥

§ १८१. यह दूसरी भाष्यगाथा मूलगाथाके उत्तरार्धको प्ररूपणा करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—मूलगाथाके उत्तरार्धमें सब स्थितियोंमें एक-एक कृष्टि रहती है अथवा नहीं रहती यह पृच्छा निर्दिष्ट की गयी है। अब उक्त पृच्छाके उस प्रकारसे प्रवृत्त होनेपर प्रथम स्थिति

होदि त्ति पदुप्पायणट्ठमेदं गाहासुत्तमोइण्णमिदि। संपहि एदस्स किंचि अवयवत्थपरूवणं कस्सामो—'सव्वाओ किट्टीओ विदिय०' एवं भणिदे सव्वाओ संगहकिट्टीओ तदवयवकिट्टीओ च विदियट्ठिदीए सव्वत्थ चेव होंति, ण तत्थ एक्किस्से वि किट्टीए पडिसेहो अत्थि त्ति भणिदं होदि। 'जं किट्टि वेदयदे०' जमेव खलु संगहकिट्टि वेदेदि, तिस्से चेव अंसो भागो पढमट्ठिदीए दट्ठव्वो, अवेदिज्जमाणकिट्टीणं पढमट्ठिदीए संभवाभावादो त्ति वुत्तं होइ। वेदिज्जमाणसंगहकिट्टीए वि अंसो पढमट्ठिदीए होंतो उदयवज्जासु सव्वासु ट्ठिदीसु अविसेसेण सव्वकिट्टीसरूवो होदूण लब्भदे। उदयट्ठिदीए पुण वेदिज्जमाणकिट्टीए असंखेज्जा भागा चेव होंति त्ति एसो विसेसो एत्थेव सुत्ते अंतब्भूदो दट्ठव्वो।

§ १८२. एवंविहो च एदिस्से गाहाए अत्थो पढमभासगाहाविहासावसरे चेव विहासिदो, तदो ण पुणो परूवेयव्वो त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

*** एदिस्से विहासा वुत्ता चेव पढमभासगाहाए।**

§ १८३. पढमभासगाहाविहासावसरे चेव एदेसिं विहासा परूविदा, तत्थ 'किट्टी च ट्ठिदिविसेसेसु असंखेज्जेसु णियमसा होदि' त्ति एदेणेवत्थसंबंधेण पढमविदियट्ठिदीसु किट्टीणमवट्ठाणस्स

और द्वितीय स्थितिके भेदकी विवक्षा करके उन अवयवरूप स्थितियोंमें कृष्टियोंका अवस्थान इस रूपसे है इस बातका कथन करनेके लिए यह गाथासूत्र अवतीर्ण हुआ है। अब इस भाष्यगाथाके अवयवोंके अर्थकी किंचित् प्ररूपणा करेंगे—'सव्वाओ किट्टीओ विदिय०' ऐसा कहनेपर सब संग्रह कृष्टियाँ और उनकी अवयव कृष्टियाँ द्वितीय स्थितिकी सभी स्थितियोंमें पायी जाती हैं, उनमें एक भी कृष्टिके होनेका निषेध नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। किन्तु 'जं किट्टि वेदयदे०' अर्थात् नियमसे जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उसीका कुछ भाग प्रथम स्थितिमें जानना चाहिए, क्योंकि अवेद्यमान कृष्टियोंका प्रथम स्थितिमें होना सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। वेद्यमान संग्रह कृष्टिका भी कुछ अंश प्रथम स्थितिमें होता हुआ उदयरहित सब स्थितियोंमें अविशेषरूपसे समस्त कृष्टिस्वरूप होकर प्राप्त होता है। परन्तु उदयस्थितिमें वेद्यमान कृष्टिका असंख्यात बहुभाग ही होता है इस प्रकार इतना विशेष इसी सूत्रमें अन्तर्भूत जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जिस समय इस जीवके जिस संग्रह कृष्टिका उदय होता है उस समय उसका असंख्यात बहुभाग ही उदयरूपसे परिणत होता है, शेष एक भाग उस समय प्रथम स्थितिमें होता हुआ भी उदयरूपसे परिणत न होकर उदय रहित सब स्थितियोंमें सर्व कृष्टिरूपसे अवस्थित रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ?

§ १८२. इस गाथाका इस प्रकारके अर्थका प्रथम भाष्य गाथाकी विभाषाके समय ही व्याख्यान कर आये है, इसलिए उसका पुनः कथन नहीं करना चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इस भाष्यगाथाकी विभाषा प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते समय ही कही गयी है।**

§ १८३. प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषाके समय ही इसकी विभाषा कही गयी है, क्योंकि वहाँपर 'किट्टी च ट्ठिदिविसेसेसु असंखेज्जेसु णियमसा होदि' अर्थात् असंख्यात स्थितिविशेषोंमें कृष्टि नियमसे रहती है इस प्रकार इस अर्थके सम्बन्धसे प्रथम और द्वितीय स्थितियोंमें कृष्टियोंके

सवित्थरमणुमग्गिदत्तादो। तम्हा णेदाणिमेदिस्से विहासा कीरदि त्ति वुत्तं होदि। जइ एवं, णारंभणिज्जमेदं गाहासुत्तं, पढमगाहासुत्तेणेव गयत्थत्तादो त्ति णासंकणिज्जं, तत्थासंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु एक्केक्का किट्टी होदि त्ति सामण्णेण णिद्दिट्ठस्स अत्थस्स पढमविदियट्ठिदीहिं विसेसियूण वेदिज्जमाणावेदिज्जमाणकिट्टीसंबंधेण परूवणट्ठमेदस्स गाहासुत्तावयारस्स सहलत्तदंसणादो।

§ १८४. एवमेत्तिएण पबंधेण विदियमूलगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि जहावसरपत्ताए तदियमूलगाहाए अवयारं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाह—

*** एत्तो तदियाए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ १८५. सुगमं।

(११६) किट्टी च पदेसग्गेणणुभागग्गेण का च कालेण।
अधिगा समा व हीणा गुणेण किं वा विसेसेण ॥१६९॥

§ १८६. किमट्ठमेसा तदियमूलगाहा समोइण्णा? पढममूलगाहाए णिद्दिट्ठलक्खणाणमवहारिदपमाणविसेसाणं च किट्टीणं पुणो विदियमूलगाहाए ट्ठिदीसु अणुभागेसु च अवट्ठाणविसेसं परूविय

अवस्थानका विस्तारके साथ अनुसन्धान कर आये हैं, इसलिए इस समय इसकी विभाषा नहीं करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यदि ऐसा है तो इस भाष्यगाथा सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए, क्योंकि प्रथम भाष्यगाथा सूत्रसे ही उक्त अर्थका ज्ञान हो जाता है।

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि वहांपर असंख्यात स्थिति विशेषोंमें एक-एक कृष्टि रहती है इस प्रकार सामान्यरूपसे निर्दिष्ट किये गये अर्थका प्रथम और द्वितीय स्थितियोंके द्वारा विशेषताको प्राप्त हुई वेद्यमान और अवेद्यमान कृष्टियोंके सम्बन्धसे कथन करनेके लिए इस भाष्यगाथा सूत्रका अवतार सफल देखा जाता है।

विशेषार्थ—प्रथम भाष्यगाथामें इतना ही कहा था कि एक-एक कृष्टि असंख्यात स्थिति विशेषोंमें रहती है, परन्तु यहांपर स्थितिके प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थिति ऐसे भेद करके वेद्यमान संग्रह कृष्टिका कुछ अंश प्रथम स्थितिमें रहता है और अवेद्यमान कृष्टियां द्वितीय स्थितिमें रहती हैं इस बातका विशेषरूपसे ज्ञान करानेके लिए इस भाष्यगाथा सूत्रका अवतार हुआ है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ १८४. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा दूसरी मूलगाथाके अर्थकी विभाषा समाप्त करके अब क्रमसे अवसरप्राप्त तीसरी मूलगाथाका अवतार करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** अब इससे आगे तीसरी मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ १८५. यह सूत्र सुगम है।

(११६) कौन कृष्टि किस कृष्टिसे प्रदेशपुंजकी अपेक्षा, अनुभागसमूहकी अपेक्षा और कालकी अपेक्षा अधिक है, समान है, या हीन है। इस प्रकार गुणकारकी अपेक्षा या विशेषकी अपेक्षा कौन कृष्टि किस कृष्टिसे हीन या अधिक है ॥१६९॥

§ १८६. शंका—यह मूल गाथा किसलिए अवतीर्ण हुई है?

समाधान—प्रथम मूल गाथा द्वारा जिनका लक्षण कहा गया है और जिनके प्रमाणविशेषका अवधारण किया है उन कृष्टियोंका पुनः दूसरी मूल गाथा द्वारा स्थितियों और अनुभागोंमें

संपहि तासिं चेव पदेसग्गेणाणुभागग्गेण कालविसेसेण च हीणाहियभावगवेसणट्ठमेसा तदियमूलगाहा समोइण्णा। तं जहा—'किट्टी च पदेसग्गेण०' एवं भणिदे कदमा किट्टी कम्हादो किट्टीदो पदेसग्गेण अहिया हीणा समा वा होदि ? का वा किट्टी कम्हादो किट्टीदो अणुभागग्गेण अहिया हीणा समा वा होदि, कालविसेसेण वा णिहालिज्जमाणा कदमा किट्टी कम्हादो किट्टीदो अहिया हीणा समा वा होदि त्ति पादेक्कमभिसंबंधं काद्रूण सुत्तत्थसमत्थणा एत्थ कायव्वा। तदो तिण्णि पुच्छाओ तिसु अत्थविसेसेसु पडिबद्धाओ एत्थ णिद्दिट्ठाओ दट्ठव्वाओ। एदासिं चेव पुच्छाणं पुणो वि विसेसियूण परूवणट्ठं 'गुणेण किं वा विसेसेणेत्ति' भणिदं। एत्थ 'कालेणेत्ति' वुत्ते बारसण्हं संगहकिट्टीणं वेदगकालो घेत्तव्वो, कोह-माण-माया-लोभोदएहिं चडिदाणं पढमसमयकिट्टीवेदगाणं मोहणीयस्स ट्ठिदिकालो तत्थतणपदेसग्गविसयजवमज्झादिपरूवणा च एत्थेवंतब्भूदा दट्ठव्वा। एवमेदासिं तिण्हं पुच्छाणं णिण्णयकरणट्ठमेसा तदियमूलगाहा समोइण्णा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। संपहि एवंविहत्थपडिबद्धाए एदिस्से सुत्तगाहाए विहासणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो उवरिमं पबंधमाह—

* एदिस्से तिण्णि अत्था।

§ १८७. एदिस्से मूलगाहाए तिण्णि अत्थविसेसा णिबद्धा त्ति वुत्तं होइ। संपहि के ते तिण्णि अत्था, कम्हि वा अत्थे केत्तियाओ भासगाहाओ पडिबद्धाओ त्ति इममत्थविसेसंपदुप्पाइयवुकामो उवरिमं पबंधमाढवेदि—

* किट्टी च पदेसग्गेणेत्ति पढमो अत्थो। एदम्मि पंच भासगाहाओ।

अवस्थान विशेषका कथन करके अब उन्हींके प्रदेशपुंज, अनुभागपुंजकी अपेक्षा और काल विशेषकी अपेक्षा हीनाधिकभावकी गवेषणा करनेके लिए यह तीसरी मूल गाथा अवतीर्ण हुई है।

वह जैसे—'किट्टी च पदेसग्गेण०' ऐसा कहनेपर कौन कृष्टि किस कृष्टिसे प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अधिक, हीन या समान होती है। अथवा कौन कृष्टि किस कृष्टिसे अनुभागसमूहकी अपेक्षा अधिक, हीन या समान होती है। अथवा कालविशेषकी अपेक्षा देखी गयी कौन कृष्टि किस कृष्टिसे अधिक, हीन या समान होती है। इस प्रकार प्रत्येकके साथ सम्बन्ध करके यहाँपर सूत्रार्थका समर्थन करना चाहिए। इसलिए तीन पृच्छाएँ इस मूल सूत्रगाथामें तीन अर्थविशेषोंमें प्रतिबद्ध निर्दिष्ट जाननी चाहिए। अतः इन्हीं पृच्छाओंका फिर भी विशेषकर कथन करनेके लिए 'गुणेण किं वा विसेसेण' यह वचन कहा है। यहाँपर 'कालेण' ऐसा कहने पर बारहों संग्रह कृष्टियोंका वेदककाल ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि क्रोध, मान, माया और लोभके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़कर कृष्टियोंका वेदन करनेवाले जीवोंका प्रथम समयमें मोहनीय कर्मका स्थितिकाल और वहाँ सम्बन्धी प्रदेशपुंजविषयक यवमध्य आदिकी प्ररूपणा इसीमें अन्तर्भूत जाननी चाहिए। इस प्रकार इन तीनों पृच्छाओंका निर्णय करनेके लिए तीसरी मूलगाथा अवतीर्ण हुई है इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस प्रकारके अर्थोंमें प्रतिबद्ध इस सूत्रगाथाकी विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार उपरिम प्रबन्धको कहते हैं—

* इस सूत्रगाथाके तीन अर्थ हैं।

§ १८७. इस मूल गाथामें तीन अर्थविशेष निबद्ध हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब वे तीन अर्थ कौन हैं और कौन अर्थमें कितनी भाष्यगाथाएँ प्रतिबद्ध हैं इस प्रकार इस अर्थविशेष का कथन करनेकी इच्छासे आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* 'किट्टी च पदेसग्गेण' अर्थात् कौन कृष्टि किस कृष्टिसे प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अधिक, हीन या समान है यह प्रथम अर्थ है। इस अर्थमें पाँच गाथाएँ निबद्ध हैं।

§ १८८. 'किट्टी च पदेसग्गेणेत्ति' एदम्मि मूलगाहापढमावयवे किट्टीसु पदेसग्गस्सावट्ठाण-परूवणालक्खणो पढमो अत्थो णिबद्धो। तत्थ य पंच भासगाहाओ होंति, ताहि विणा पयदत्थ-विसयणिण्णयपरूवणाणुववत्तीदो त्ति वुत्तं होइ।

*** अणुभागग्गेणेत्ति विदियो अत्थो। एत्थ एक्का भासगाहा।**

§ १८९. 'अणुभागग्गेणेत्ति' एदम्मि गाहासुत्तविदियावयवकिट्टीसु अणुभागस्स थोवबहुत्त-परूवणप्पओ विदियो अत्थो णिबद्धो। तम्हि विहासिज्जमाणे एक्का भासगाहा होदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। सेसं सुगमं।

*** का च कालेणेत्ति तदिओ अत्थो। एत्थ छब्भासगाहाओ।**

§ १९०. 'का च कालेणेत्ति' एदम्मि मूलगाहातदियावयवभूदबीजपदे तदिओ अत्थो किट्टीणं कालविसेसावहारणलक्खणो णिबद्धो। तत्थ य छब्भासगाहाओ पडिबद्धाओ। तासिं समुक्कित्तणं विहासणं च जहाकममेव कस्सामो त्ति वुत्तं होइ। 'गुणेण किं वा विसेसेणेत्ति' एसो चरिमो सुत्तावयवो तिण्हमेदेसिमत्थाणं विसेसणभावेण णिद्दिट्ठो, अण्णहा सुत्तत्थस्सासंपुण्णत्तप्पसंगादो। संपहि जहाकममेदेसिं तिण्हमत्थाणमप्पप्पणो भासगाहाहिं विहासणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुत्तरं भणइ।

*** पढमे अत्थे भासगाहाणं समुक्कित्तणा।**

---

§ १८८. 'किट्टी च पदेसग्गेण' मूल गाथाके इस प्रथम वचनमें कृष्टियोंमें प्रदेशपुंजके अवस्थान-की प्ररूपणा करनेरूप लक्षणवाला प्रथम अर्थ निबद्ध है। इस अर्थमें पांच भाष्यगाथाएँ हैं, क्योंकि उनके बिना प्रकृत अर्थविषयक निर्णयकी प्ररूपणा नहीं हो सकती यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** 'अणुभागग्गेण' अर्थात् कौन कृष्टि किस कृष्टिसे अनुभागपुंजकी अपेक्षा अधिक, हीन या समान है यह दूसरा अर्थ है। इस अर्थमें एक भाष्यगाथा निबद्ध है।**

§ १८९. 'अणुभागग्गेण' इस गाथासूत्रके दूसरे अवयवसम्बन्धी कृष्टियोंमें अनुभागके अल्प-बहुत्वका प्ररूपणा करनेवाला दूसरा अर्थ निबद्ध है। उसको विभाषा करनेके अर्थमें एक भाष्यगाथा आयी है इस प्रकार यहांपर यह सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। शेष कथन सुगम है।

*** 'का च कालेण' अर्थात् कौन कृष्टि किस कृष्टिसे कालकी अपेक्षा अधिक, हीन या समान है यह तीसरा अर्थ है। इस अर्थमें छह भाष्यगाथाएँ प्रतिबद्ध हैं।**

§ १९०. 'का च कालेण' मूल गाथाके तीसरे अवयवभूत इस बीजपदमें कृष्टियोंके काल-विशेषका अवधारण करनेरूप लक्षणवाला तीसरा अर्थ निबद्ध है। उस अर्थमें छह भाष्यगाथाएँ प्रतिबद्ध हैं। उनकी समुत्कीर्तना और विभाषा क्रमानुसार ही करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'गुणेण किं वा विसेसेण' यह अन्तिम सूत्रवचन है जो इन तीन अर्थोंमेंसे प्रत्येकमें विशेषता दिखलानेके प्रयोजनसे निर्दिष्ट किया गया है अन्यथा सूत्रार्थकी असम्पूर्णताका प्रसंग प्राप्त होता है। अब क्रमानुसार इन तीन अर्थोंका अपनी-अपनी भाष्यगाथाओंके साथ विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

*** अब प्रथम अर्थमें निबद्ध भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ १९१. पढमे अत्थे पडिबद्धाणं भासगाहाणं पंचसंखाविसेसियाणं पुव्वमेव ताव समुक्कित्तणा कायव्वा त्ति वुत्तं होदि, यथोद्देशस्तथा निर्देश इति न्यायात् ।

(११७) विदियादो पुण पढमा संखेज्जगुणा भवे पदेसग्गे ।
विदियादो पुण तदिया कमेण सेसा विसेसहिया ॥१७०॥

§ १९२. एसा पढमभासगाहा संगहकिट्टीसु बारसधापविभत्तासु सत्थाणपरत्थाणेहिं विसेसियूण पदेसग्गस्स थोवबहुत्तपरूवणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'विदियादो पुण पढमा०' एवं भणिदे कोहस्स विदियादो संगहकिट्टीदो तस्सेव पढमसंगहकिट्टीपदेसग्गेण संखेज्जगुणा होदि त्ति भणिदं होइ। एत्थ कारणं गुणगारपमाणं च पुरदो चुण्णिसुत्तसंबंधेण वत्तइस्सामो। 'विदियादो पुण तदिया' एवं भणिदे विदियसंगहकिट्टीए सयलपदेसपिंडादो तदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं होदि त्ति सुत्तत्थसंबंधो। उवरिमविसेसाहियग्गहणस्सेत्थाहिसंबंधादो तदो कोहस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं सत्थाणप्पाबहुअमेदेण सुत्तावयवकलावेण णिद्दिट्ठं होदि। कोहग्गहणमेत्थाणिद्दिट्ठमणहिकयं च कथमुवलब्भदि त्ति णासंका कायव्वा, अत्थवसेण तदहिसंबंधोववत्तीदो। 'कमेण सेसा विसेसहिया' एवं भणिदे जहाकमेण वुत्तसेसाणं माण-माया-लोभाणं तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ सत्थाणे विसेसाहियाओ होंति त्ति वुत्तं होदि। अप्पप्पणो वेदगपढमसंगहकिट्टिमादिं कादूण तत्थ

§ १९१. अब प्रथम अर्थमें प्रतिबद्ध पाँच संख्याक भाष्यगाथाओंकी सर्वप्रथम पहले ही समुत्कीर्तना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि उद्देश्यके अनुसार निर्देश किया जाता है ऐसा न्याय है।

(११७) क्रोध संज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रथम संग्रह कृष्टि प्रदेशपुंजकी अपेक्षा संख्यातगुणी है। परन्तु दूसरीसे तीसरी व क्रमसे शेष सभी संग्रह कृष्टियाँ आगे-आगे विशेष अधिक हैं ॥१७०॥

§ १९२. यह प्रथम भाष्यगाथा बारह प्रकारसे विभक्त संग्रह कृष्टियोंमें अवस्थित प्रदेशपुंजके स्वस्थान और परस्थान दोनों प्रकारसे अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'विदियादो पुण पढमा' ऐसा कहनेपर क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे उसीकी प्रथम संग्रह कृष्टि प्रदेशपुंजकी अपेक्षा संख्यातगुणी होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर कारण और गुणकारका प्रमाण आगे चूर्णिसूत्रके सम्बन्धसे बतलावेंगे। 'विदियादो पुण तदिया' ऐसा कहनेपर दूसरी संग्रह कृष्टिके समस्त प्रदेशपिंडसे तीसरी संग्रह कृष्टिका समस्त प्रदेशपुंज विशेष अधिक होता है यह उक्त सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। आगे विशेष अधिक पदका ग्रहण किया है उसका यहाँ सम्बन्ध हो जाता है। इस कारण क्रोध संज्वलनकी तीनों संग्रह कृष्टियोंका स्वस्थान अल्पबहुत्व इस समुदायरूप सूत्रवचन द्वारा निर्दिष्ट किया गया है।

शंका—इस गाथासूत्रमें एक तो क्रोधपदका ग्रहण नहीं किया गया है और उसका अधिकार भी नहीं है, अतः उसका ग्रहण कैसे प्राप्त होता है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि अर्थवश प्रकृतमें उसका सम्बन्ध बन जाता है।

'कमेण सेसा विसेसाहिया' ऐसा कहनेपर यथाक्रम कही गयी शेष मान, माया और लोभकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ स्वस्थानमें विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि वेदकके अपनी-अपनी प्रथम संग्रह कृष्टिसे लेकर उनमें विशेष अधिकके क्रमसे प्रदेशपुंजका

विसेसाहियकमेण पदेसग्गावट्ठाणस्स किट्टीवेदगपढमसमए परिप्फुडमुवलंभादो। एदेण चेव परत्थाणप्पाबहुअं पि सूचिदं दट्ठव्वं। संपहि एवंविहमेदिस्से पढमभासगाहाए अत्थविसेसं विहासिदुकामो चुण्णिसुत्तयारो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

※ विहासा।

§ १९३. सुगमं।

※ तं जहा।

§ १९४. सुगमं।

※ कोहस्स विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं थोवं।

§ १९५. किं कारणं? मोहणीयसयलदव्वस्स किंचूणचउवीसभागपमाणत्तादो।

※ पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं संखेज्जगुणं तेरसगुणमेत्तं।

§ १९६. एत्थ 'पढमसंगहकिट्टि' त्ति वुत्ते वेदगपढमसंगहकिट्टीए गहणं कायव्वं। तेण पुव्वुत्तकोहविदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गादो कोहस्स चेव पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गं संखेज्जगुणमिदि सुत्तत्थसंबंधो। तत्थ 'संखेज्जगुणं' इदि सामण्णणिद्देसेण गुणगारविसए विसेसणिण्णओ ण जादो त्ति तव्विसयणिण्णयजणणट्ठं 'तेरसगुणमेत्तं' इदि विसेसियूण भणिदं। एवमेदेण मुत्तकंठ—मुवइट्ठस्स तेरसरूवमेत्तगुणगारस्स साहणट्ठमिमा परूवणा कीरदे। तं जहा—मोहणीयसव्वदव्वं

अवस्थान कृष्टियोंका वेदन करनेवालेके प्रथम समयमें स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है। तथा इसीसे परस्थान अल्पबहुत्वका भी सूचन कर दिया है ऐसा जानना चाहिए। अब इस प्रथम भाष्यगाथाके अर्थविशेषकी विभाषा करनेकी इच्छासे चूर्णिसूत्रकार आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

※ अब प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ १९३. यह सूत्र सुगम है।

※ वह जैसे।

§ १९४. यह सूत्र सुगम है।

※ क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज सबसे स्तोक है।

§ १९५. क्योंकि वह मोहनीय कर्मसम्बन्धी समस्त द्रव्य कुछ कम चौबीसवें भागप्रमाण है।

※ उससे प्रथम संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज संख्यातगुणा अर्थात् तेरहगुणा है।

§ १९६. इस सूत्रमें 'प्रथम संग्रह कृष्टि' ऐसा कहनेपर उसका वेदन करनेवाले जीवके प्रथम संग्रह कृष्टिका ग्रहण करना चाहिए। इस कारण पूर्वोक्त क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिके प्रदेशपुंजसे क्रोधकी ही प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज संख्यातगुणा है यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। उसमें 'संख्यातगुणा' ऐसा सामान्य निर्देश करनेसे गुणकारके विषयमें विशेष निर्णय नहीं हो पाता, इसलिए तद्विषयक निर्णयको उत्पन्न करनेके लिए 'तेरहगुणा है' ऐसा विशेषरूपसे कहा है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा मुक्तकण्ठ कहे गये तेरहगुणे प्रमाणरूप गुणकारका साधन करनेके लिए

संदिट्ठीए एत्तियमिदि घेत्तव्वं ४९। पुणो एदं बे भागे कादूण तत्थेगभागो असंखेज्जभागब्भहियो कसायदव्वं भवदि। तस्स पमाणमेदं २५। पुणो सेसभागो असंखेज्जभागेण णोकसायदव्वं होदि। तं च एदं २४। संपहि कसायभागो बारससु संगहकिट्टीसु जहापविभागमवचिट्ठदि त्ति कसायदव्वस्स बारसमभागो कोधपढमसंगहकिट्टीए दिस्सदि। सो पुण मोहणीयसयलदव्वावेक्खाए थोवूणचउवीसभागमेत्तो होदि। संदिट्ठीए तस्स पमाणमेत्तियं होदि २। पुणो णोकसायदव्वं पि सव्वं कोहसंजलणे संकामिदमत्थि, तं च सव्वमेव किट्टीओ करेमाणस्स कोहपढमसंगहकिट्टीसरूवेणेव परिणमिय चिट्ठदि। किं कारणं? तस्स सेसकिट्टीपरिहारेण वेदगपढमसंगहकिट्टीसरूवेणेव परिणामणियमदंसणादो। तदो णोकसायदव्वमेदं पुव्विल्लभागपमाणेण कीरमाणं बारसण्हं गुणगाररूवाणमुप्पत्तीए णिमित्तं होदि। संपहि पुव्वुत्तबारसमभागमेत्तकोहपढमसंगहकिट्टीपदेसग्गमेत्थेव पक्खिविय हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्मि ओवट्टिदे कोहविदियसंगहकिट्टीदो पढमसंगहकिट्टी पदेसग्गेण तेरसगुणा जादा। एदेण कारणेण सुत्ते 'तेरसगुणमेत्तं' इदि भणिदं।

यह प्ररूपणा करते हैं। वह जैसे—मोहनीय कर्मका समस्त द्रव्य संदृष्टिकी अपेक्षा इतना ग्रहण करना चाहिए—४९। पुनः इन द्रव्यके दो भाग करके उनमेंसे असंख्यातवां भाग अधिक एक भागप्रमाण कषायसम्बन्धी द्रव्य होता है। उसका प्रमाण यह है २५। पुनः शेष असंख्यातवां भाग कम नोकषायसम्बन्धी द्रव्य होता है। उसका प्रमाण यह है २४। अब कषायसम्बन्धी बारह भाग संग्रह कृष्टियोंमें यथाविभाग अवस्थित है, इसलिए कषायसम्बन्धी द्रव्यका बारहवां भाग क्रोधकषायको प्रथम संग्रह कृष्टिमें दिखाई देता है। परन्तु वह द्रव्य मोहनीय कषायके समस्त द्रव्यकी अपेक्षा चोबीसवां भागमात्र होता है। संदृष्टिसे उसका प्रमाण इतना है–२। पुनः नोकषाय द्रव्य भी सम्पूर्ण क्रोधसंज्वलनमें संक्रमित हुआ है और वह सभी द्रव्य कृष्टियोंको करनेवालेके क्रोध-संज्वलनको प्रथम संग्रह कृष्टिरूपसे ही परिणमकर अवस्थित रहता है।

शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि उस नोकषायसम्बन्धी द्रव्यके शेष कृष्टियोंके परिहार द्वारा वेदक जीवके प्रथम संग्रह कृष्टिरूपसे ही परिणमनका नियम देखा जाता है।

इसलिए इस नोकषायके द्रव्यको पहलेके भागप्रमाणसे करते हुए वह बारह गुणकाररूप अंकोंकी उत्पत्तिका कारण होता है। अब पूर्वोक्त बारहवें भागप्रमाण क्रोधकषायसम्बन्धी प्रथम संग्रह कृष्टिके प्रदेशपुंजको इसीमें प्रक्षिप्त करके अधस्तन राशिसे उपरिम राशिके भाजित करनेपर क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रथम संग्रह कृष्टि प्रदेशपुंजकी अपेक्षा तेरहगुणी हो जाती है। इस कारणसे सूत्रमें 'तेरहगुणीप्रमाण' ऐसा कहा है।

विशेषार्थ—यहाँ क्रोध संज्वलनसे श्रेणिपर आरोहण करनेवाला जीव विवक्षित है। अतः उसके १२ संग्रह कृष्टियां नियमसे पायी जाती हैं। अब प्रकृतमें यह देखना है कि जो जीव क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिका प्रथम समयमें वेदन कर रहा है उसमें उस दूसरी संग्रह कृष्टिकी अपेक्षा कितना अधिक द्रव्य पाया जाता है, हीन या समान पूरा द्रव्य तो पाया नहीं जा सकता, क्योंकि उस प्रथम कृष्टिके वेदन करनेके समय ही उसमें नोकषायोंका द्रव्य भी संक्रमित हो चुकता है। अतः वह दूसरी कृष्टिकी अपेक्षा अधिक ही होना चाहिए। कितना अधिक होता है इसी बातका स्पष्टीकरण करते हुए क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे तेरहगुणा अधिक होता है यह बतलाया है। वह तेरहगुणा कैसे घटित होता है इस बातका स्पष्टीकरण करते हुए वीरसेन स्वामी लिखते हैं कि चारित्रमोहनीयकर्मका कुल द्रव्य अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा ४९ स्वीकार करनेपर

§ १९७. संपहि विदियसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टिप्पहुडि अणंतगुणकमेण गदकिट्टीओलीदो पढमसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टिमादिं कादूणाणंतगुणकमेण गदाकिट्टीओली वि संखेज्जगुणा चेव होदि। किं कारणं? कोहविदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टिसरिसधणियपदेसपिंडादो पढमसंगहकिट्टीए जहण्णकिट्टिसरिसधणियपदेसग्गमणंतभागहीणं होदि त्ति पुव्वमणंतरोवणिधाए भणिदं। तेण जाणिज्जदे तेरसगुणमेत्तपदेसपिंडेण विदियसंगहकिट्टीए सह एयगोवुच्छासेढीए णिव्वत्तिज्जमाण-पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणं पंती विदियसंगहकिट्टीए सयलकिट्टीआयामादो णियमा तेरसगुणा चेव होदि त्ति, अण्णहा तासिमेयगोवुच्छत्ताणुववत्तीदो।

§ १९८. संपहि एदेण सुत्तेण परूविदकोहसंजलणसत्थाणप्पाबहुअस्सुच्चारणक्कमो वुच्चदे। तं जहा—सव्वत्थोवं कोहस्स विदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं। तदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। केत्तियमेत्तेण? पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडमेत्तेण। कुदो एदं

असंख्यातवां भाग अधिक आधा भाग २५ कषायसम्बन्धी द्रव्य होता है और शेष असंख्यातवां भाग हीन आधा २४ नोकषायसम्बन्धी द्रव्य होता है। यतः चारों संज्वलनोंकी संग्रह कृष्टियाँ १२ हैं, अतः कषायसम्बन्धी द्रव्यको इन १२ संग्रह कृष्टियोंमें विभाजित करनेपर क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिको साधिक २ अंक प्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार आगेकी प्रत्येक संग्रह कृष्टिको भी साधिक २ अंक प्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है। पुनः नोकषायोंके समस्त द्रव्यके क्रोधसंज्वलनके प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होनेपर उसका कुल द्रव्य सब मिलाकर २४+२=२६ अंक प्रमाण होता है। अब इसमें क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिके २ अंक प्रमाण द्रव्यका भाग देनेपर क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका कुल द्रव्य २६÷२=१३ अंक प्रमाण प्राप्त होता है जो क्रोधसंज्वलनकी द्वितीय संग्रह कृष्टिके २ अंक प्रमाण द्रव्यसे तेरहगुणा सिद्ध होता है।

§ १९७. अब दूसरी संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिसे लेकर अनन्त गुणितक्रमसे प्राप्त कृष्टि-सम्बन्धी पंक्तिसे प्रथम संग्रह कृष्टिकी जघन्य कृष्टिसे लेकर अनन्त गुणितक्रमसे प्राप्त कृष्टिसम्बन्धी पंक्ति संख्यातगुणी ही होती है।

शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तिम कृष्टिके सदृश धनवाले प्रदेशपिण्डसे प्रथम संग्रह कृष्टिसम्बन्धी जघन्य कृष्टिका सदृश धनवाला प्रदेशपुंज अनन्त भागहीन होता है यह पहले अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा कह आये हैं। इससे जानते हैं कि तेरहगुणे प्रदेश पिण्डकी अपेक्षा दूसरी संग्रह कृष्टिके साथ एक गोपुच्छा श्रेणिरूपसे निष्पद्यमान प्रथम संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तर कृष्टियोंकी पंक्ति दूसरी संग्रह कृष्टि सम्बन्धी समस्त कृष्टिआयामसे नियमसे तेरहगुणी ही होती है, अन्यथा उनकी एक गोपुच्छा नहीं बन सकती।

विशेषार्थ—पूर्वमें दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रथम संग्रह कृष्टि तेरहगुणी है यह सिद्ध कर आये हैं सो उससे ऐसा समझना चाहिए कि दूसरी संग्रह कृष्टिकी जितनी अन्तर कृष्टियोंकी पंक्ति है उससे प्रथम संग्रह कृष्टिसम्बन्धी अन्तर कृष्टियोंकी पंक्ति तेरहगुणी है।

§ १९८. अब इस सूत्र द्वारा कहे गये क्रोधसंज्वलनके स्वस्थान अल्पबहुत्वके उच्चारण क्रमका कथन करते हैं। वह जैसे—क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज सबसे अल्प है। उससे तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है।

शंका—कितना अधिक है?

परिच्छिज्जदे ? उवरिमपरत्थाणप्पाबहुए सुत्तणिबद्धतप्परूवणोवलंभादो। कोधतदियसंगहकिट्टीदो उवरि तस्सेव पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गं संखेज्जगुणं। पुव्वुत्तेण णाएण तस्स तेरसगुणत्तदंसणादो। किट्टीओलीगुणगारो वि एदम्हादो चेव साहेयव्वो।

§ १९९. संपहि एदेणेव सुत्तेण सूचिदं माणादीणं पि सत्थाणप्पाबहुअं वत्तइस्सामो। तं जहा—माणस्स पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गं थोवं। विदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। तदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। विसेसो पुण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागिओ। एवं मायालोभाणं पि सत्थाणप्पाबहुअं कायव्वं, विसेसाभावादो। एवमेदं सत्थाणप्पाबहुअं परूविय संपहि 'कमेण सेसा विसेसाहिया' त्ति गाहासुत्तचरिमावयवमस्सियूण परत्थाणप्पाबहुअपरूवणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं थोवं।**

§ २००. एत्थ 'माणस्स पढमसंगहकिट्टि' त्ति वुत्ते कारगस्स तदियसंगहकिट्टी घेत्तव्वा, वेदगपढमसंगहकिट्टीए एत्थ पयदत्तादो। तदो तिस्से पदेसग्गमुवरि भणिस्समाणासेससंगहकिट्टीणं पदेसग्गादो थोवमिदि वुत्तं होइ।

समाधान—क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिमें पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आता है उतना अधिक है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—उपरिम परस्थान अल्पबहुत्वसम्बन्धी सूत्रमें निबन्ध उक्त अल्पबहुत्वसम्बन्धी प्ररूपणाके उपलब्ध होने से यह जाना जाता है।

क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिसे ऊपर उसीकी प्रथम संग्रह कृष्टिसम्बन्धी प्रदेशपुंज संख्यातगुणा है, क्योंकि पूर्वोक्त न्यायसे वह तेरहगुणा देखा जाता है। कृष्टियोंकी पंक्तिसम्बन्धी गुणकार भी इसीसे साध लना चाहिए।

§ १९९. अब इसी सूत्रसे सूचित हुआ मानादिक कषायसम्बन्धी स्वस्थान अल्पबहुत्व भी बतलावेंगे। वह जैसे—मानकषायको प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज सबसे अल्प है। उससे दूसरी संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है। उससे तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है। परन्तु विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाणका भाग देनेपर एक भागप्रमाण है। इसी प्रकार मायाकषाय और लोभकषायका भी स्वस्थान अल्पबहुत्व करना चाहिए, क्योंकि इस अल्पबहुत्वसे माया और लोभकषायके अल्पबहुत्वमें कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार इस स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन करके अब 'कमेण सेसा 'विसेसाहिया' इस प्रकार गाथासूत्रके अन्तिम चरणका आश्रय लेकर परस्थान अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज सबसे अल्प है।**

§ २००. इस सूत्रमें 'मानकी प्रथम संग्रह कृष्टि' ऐसा कहनेपर कृष्टिकारककी तीसरी संग्रह कृष्टि ग्रहण करनी चाहिए, क्योंकि यहाँपर वेदककी प्रथम संग्रह कृष्टि प्रकृत है। इसलिए उसका प्रदेशपुंज ऊपर (आगे) कहे जानेवाले समस्त संग्रह कृष्टियोंके प्रदेशपुंजसे अल्प है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०१. माणस्स विदियसंगहकिट्टीए पदेसपिंडो तस्सेव पढमसंगहकिट्टीए पदेसपिंडादो विसेसाहिओ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। कुदो एदस्स तत्तो विसेसाहियत्तमवगम्मदे ? ण, तिव्वयराणुभाग-परिणदपदेसपिंडादो मंदयराणुभागपरिणदपदेसपिंडस्स तहाभावसिद्धीए णाइयत्तादो। एत्थ विसेसा-हियपमाणं हेट्ठिमदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तमिदि घेत्तव्वं। तस्स पडिभागो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

* तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०२. एत्थ वि विसेसपमाणं हेट्ठिमदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तमिदि घेत्तव्वं। संपहि एदस्सेव विसेसाहियभावस्स फुडीकरणट्ठमेत्थ को पडिभागो त्ति आसंकाए उत्तरसुत्तमाह—

* विसेसो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागो ।

§ २०३. जो एसो सत्थाणे विसेसो परूविदो सो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण हेट्ठिमदव्वे खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तो त्ति वुत्तं होइ। एवमुवरिमपदेसु वि विसेसाहियप्पमाणमेदेणेव पडिभागेण परूवेयव्वं। णवरि परत्थाणविसेसो सव्वत्थावलियाए असंखेज्जदिभागपडिभागिओ गहेयव्वो, तत्थ पयडिविसेसेण विसेसाहियत्तं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो।

---

* उससे दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है।

§ २०१ मानसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपिण्ड उसीकी प्रथम संग्रह कृष्टिके प्रदेशपिण्डसे विशेष अधिक है यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है।

शंका—मानकी यह संग्रह कृष्टि उसीकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे विशेष अधिक है यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि तीव्रतर अनुभागसे परिणत प्रदेशपिण्डसे मन्दतर अनुभागसे परिणत प्रदेशपिण्डकी उस रूपसे सिद्धि होना न्यायप्राप्त है।

यहांपर विशेषाधिकका प्रमाण अधस्तन द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। उसका प्रतिभाग पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

* उससे तीसरी संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है।

§ २०२ यहां भी विशेषका प्रमाण अधस्तन द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अब इसी विशेषाधिकपनेका स्पष्टीकरण करनेके लिए यहांपर क्या प्रतिभाग है ऐसी आशंका होनेपर आगेके सूत्रको कहते हैं—

* विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी है।

§ २०३. जो यह स्वस्थानमें विशेषका प्रमाण कहा है वह पल्योपमके असंख्यातवें भागसे अधस्तन द्रव्यके भाजित करनेपर उसमेंसे एक भागप्रमाण है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार उपरिम पदोंमें भी विशेष अधि प्रमाणको इसी प्रतिभागके अनुसार कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि परस्थानसम्बन्धी विशेषका प्रमाण सर्वत्र आवलिके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि वहांपर प्रकृतिविशेषकी अपेक्षा विशेष अधिकपनेको छोड़कर प्रकारान्तर असम्भव है।

* कोहस्स विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०४. एत्थ विसेसपमाणमावलियाए असंखेज्जदिभागपडिभागियं, परत्थाणविसेसत्तादो ।

* तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०५. केत्तियमेत्तेण ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियसत्थाणविसेसमेत्तेण ।

* मायाए पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०६. केत्तियमेत्तेण ? आवलियाए असंखेज्जदिभागखंडिदेयखंडमेत्तेण । कारणं सुगमं ।

* विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

* तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०७. एदेसु दोसु वि सुत्तेसु विसेसपमाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागिय- मिदि घेत्तव्वं । सेसं सुगमं ।

* लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ २०८. केत्तियमेत्तेण ? आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडमेत्तेण । एत्थ सत्थाणविसेसो व्व परत्थाणविसेसो वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागिओ त्ति के वि

---

* उससे क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ।

§ २०४. यहाँ पर विशेषका प्रमाण परस्थान विशेषके कारण आवलिके असंख्यातवें भागका प्रतिभागीस्वरूप है ।

* उससे तीसरी संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ।

§ २०५. शंका—कियत्प्रमाण अधिक है ?

समाधान—स्वस्थान विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागीस्वरूप है, अतः उतना अधिक है ।

* उससे मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ।

§ २०६. शंका—कियत्प्रमाण अधिक है ?

समाधान—तीसरी संग्रह कृष्टिमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है । कारणका कथन सुगम है ।

* उससे दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ।

* उससे तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ।

§ २०७. इन दो सूत्रोंमें भी विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी- स्वरूप है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । शेष कथम सुगम है ।

* उससे लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ।

§ २०८. शंका—कियत्प्रमाण अधिक है ?

समाधान—मायासंज्वलनकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें आवलिके असंख्यातव भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है ।

भणंति ? णेदं समंजसं, तहाब्भुवगमस्स जुत्तिबाहियत्तादो। ण च विसेसो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागिओ त्ति एदेण सुत्तेण तस्स तहाभावसिद्धी, सत्थाणविसेसमुद्देसिय तस्स पयट्टत्तादो। तम्हा परत्थाणे सव्वत्थ पयडिविसेसो चेव आवलियाए असंखेज्जदिभागपडिभागिओ घेत्तव्वो।

* विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं।

* तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं।

§ २०९. एदेसु दोसु सुत्तेसु विसेसो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागिओ घेत्तव्वो, सत्थाणे पयारंतरासंभवादो।

शंका—इस अल्पबहुत्वमें स्वस्थान विशेषके प्रमाणके समान परस्थान विशेषका प्रमाण भी पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागीस्वरूप होता है ऐसा कितने ही आचार्य व्याख्यान करते हैं ?

समाधान—किन्तु उनका यह कथन समंजस नहीं है, क्योंकि उस प्रकारसे स्वीकार करना युक्तिसे बाधित है। यदि कहा जाय कि 'विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी-स्वरूप होता है' इस प्रकार इस सूत्र द्वारा विशेषके प्रमाणकी उसरूपसे सिद्धि हो जायगी सो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि उक्त सूत्र स्वस्थानविशेषको लक्ष्य कर प्रवृत्त हुआ है। इसलिए परस्थानमें सर्वत्र प्रकृति विशेषका प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागका प्रतिभागीस्वरूप होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रकृतमें अल्पबहुत्वके दो भेद हैं—१. स्वस्थान अल्पबहुत्व और २. परस्थान अल्पबहुत्व। प्रत्येक कषायकी तीन-तीन संग्रह कृष्टियाँ हैं। उनमेंसे प्रत्येक कषायकी अपनी संग्रह कृष्टियोंमें प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका विचार करना स्वस्थान अल्पबहुत्व है और विवक्षित कषायकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी अपेक्षा दूसरी कषायकी प्रथम संग्रह कृष्टिके मध्य अल्पबहुत्वका विचार करना परस्थान अल्पबहुत्व है। स्वस्थान अल्पबहुत्वमें विशेषका प्रमाण लानेके लिए पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देकर एक भागप्रमाण विशेषका प्रमाण प्राप्त किया जाता है और परस्थान अल्पबहुत्वमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर एक भागप्रमाण विशेषका प्रमाण प्राप्त किया जाता है। यहाँ मानसंज्वलनकी तीनों संग्रह कृष्टियोंमें स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन करते समय मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे दूसरी संग्रह कृष्टि और दूसरीसे तीसरी संग्रह कृष्टि कितनी विशेष अधिक है इसका 'विसेसो पलिदोवमस्स०' इत्यादि सूत्र द्वारा स्पष्ट रूपसे जैसे उल्लेख कर दिया है वैसे ही परस्थान अपल्पबहुत्वमें पिछली कषायकी तीसरी संग्रह कृष्टिसे अगली कषायकी प्रथम संग्रह कृष्टि विशेष अधिक होते हुए भी कितनी विशेष अधिक है इसका किसी सूत्र द्वारा प्रकृतमें उल्लेख नहीं किया गया है। इसलिए शंकाकार दोनों स्थलोंपर विशेषका प्रमाण लानेके लिए एक ही भागहार स्वीकार करता है। किन्तु वीरसेन स्वामीने इस कथनको युक्तिसे बाधित स्वीकार करके परस्थान अल्पबहुत्वमें विशेषका प्रमाण प्राप्त करनेके लिए भागहार आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्वीकार किया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

* उससे दूसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है।

* उससे तीसरी संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज विशेष अधिक है।

§ २०९. इन दोनों सूत्रोंमें विशेष पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागीस्वरूप ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि स्वस्थानमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

* कोहस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं संखेज्जगुणं ।

§ २१०. तेरसगुणमेत्तमिदि वुत्तं होदि । कुदो ? णोकसायसव्वदव्वेण सहकसायदव्व-बारसमभागस्स कोहपढमसंगहकिट्टीसरूवेण परिणदत्तादो । एवमेत्तिएण पबंधेण पढमभासगाहाए अत्थविहासणं कादूण संपहि जहावसरपत्तं विदियभासगाहाए विहासणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ २११. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ २१२. सुगमं ।

(११८) विदियादो पुण पढमा संखेज्जगुणा दु वग्गणग्गेण ।
विदियादो पुण तदिया कमेण सेसा विसेसहिया ॥१७१॥

§ २१३. एसा विदियभासगाहा पुव्वुत्तपदेसग्गाणुसारेणेव बारसण्हं संगहकिट्टीणं वग्गणग्गस्स वि सत्थाण-परत्थाणप्पाबहुअपरूवणट्ठमोइण्णा । संपहि एदिस्से किंचि अवयवत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—'विदियादो पुण पढमा०' एवं भणिदे कोहविदियसंग्रहकिट्टीए सव्व-वग्गणाहिंतो पढमसंगहकिट्टीए वग्गणासमूहो संखेज्जगुणो त्ति भणिदं होदि, पुव्वुत्तविहाणेण

---

* उससे क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज संख्यातगुणा है ।

§ २१०. तेरहगुणा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि नोकषायके समस्त द्रव्यके साथ कषायसम्बन्धी द्रव्यका बारहवां भाग क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिरूपसे परिणत हुआ है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा प्रथम भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणा करके अब यथावसर प्राप्त दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अब दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ २११. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ २१२. यह सूत्र सुगम है ।

(११८) क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रथम संग्रह कृष्टि वर्गणा समूहकी अपेक्षा संख्यातगुणी है । किन्तु उसीकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे तीसरी संग्रह कृष्टि वर्गणासमूहकी अपेक्षा विशेष अधिक है । इसी प्रकार मान आदिकी भी संग्रह कृष्टियाँ क्रमसे वर्गणासमूहकी अपेक्षा विशेष अधिक हैं ॥१७१॥

§ २१३. यह दूसरी भाष्यगाथा पूर्वोक्त प्रदेशपुंजके अनुसार ही बारह संग्रह कृष्टियों सम्बन्धी वर्गणासमूहके भी स्वस्थान और परस्थान अल्पबहुत्वके प्ररूपण करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । अब इसके अवयवोंकी किंचित् अर्थप्ररूपणा करेंगे । वह जैसे—'विदियादो पुण पढमा०' ऐसा कहनेपर क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिके समस्त वर्गणासमूहसे प्रथम संग्रह कृष्टिका वर्गणासमूह संख्यातगुणा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि पूर्वोक्त विधिसे उसमें तेरहगुणे वर्गणा-

तत्थ तेरसगुणसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो। एत्थ 'वग्गणा' त्ति वुत्ते एक्केक्का अंतरकिट्टी चेव अणंतसरिसधणियपरमाणुसमूहारद्धा एगेगा वग्गणा त्ति घेत्तव्वा। तासिं समूहो वग्गणग्गमिदि भण्णदे। तदो विदियसंगहकिट्टीए सव्ववग्गणासमूहादो पढमसंगहकिट्टीए सव्वो वग्गणाकलावो अप्पणो किट्टीअद्धाणपरिच्छिण्णपमाणो संखेज्जगुणो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ।

§ २१४. 'विदियादो पुण तदिया' एवं भणिदे कोहस्स विदियसंगहकिट्टीए सव्ववग्गणाहिंतो तस्सेव तदियसंगहकिट्टीसयलवग्गणासमूहो विसेसाहिओ होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। विसेसपमाणमेत्थ दव्वाणुसारेणेव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियमिदि घेत्तव्वं। एवमेदेण सुत्तावयवकलावेण कोहसंजलणस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं वग्गणग्गमस्सियूण सत्थाणप्पाबहुअमुवइट्ठं। संपहि 'कमेण सेसा विसेसहिया' एवं भणिदे जहाकममेव माणादीणं पि तिण्हं संगहकिट्टीणं पादेक्कं वग्गणग्गमस्सियूण विसेसाहियकमेण सत्थाणप्पाबहुअं कायव्वं। तदो परत्थाणप्पाबहुअं च णेदव्वमिदि वुत्तं होइ। सेसं जहा पढमभासगाहाए वुत्तं तहा वत्तव्वं, विसेसाभावादो। तदो चेव पढमभासगाहाणुसारेणेवेदिस्से विभासा कायव्वा त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ २१५. सुगमं।

* जहा पदेसग्गेण विहासिदं तहा वग्गणग्गेण विहासिदव्वं।

समूहकी सिद्धि निर्बाध पायी जाती है। इस भाष्यगाथामें 'वग्गणा' ऐसा कहनेपर एक-एक अन्तर कृष्टि ही अनन्त सदृश धनवाले परमाणुसमूहसे आरम्भ की गयी एक-एक वर्गणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। और उनका समूह वर्गणासमूह कहा जाता है। अतएव दूसरी संग्रह कृष्टिके समस्त वर्गणासमूहसे प्रथम संग्रह कृष्टिका समस्त वर्गणासमूह अपनी कृष्टिके आयामरूपसे परिच्छिन्न प्रमाणवाला होकर संख्यातगुणा है इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

§ २१४. 'विदियादो पुण तदिया' ऐसा कहनेपर क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिकी सब वर्गणाओंसे उसीकी तीसरी संग्रह कृष्टिका समस्त वर्गणासमूह विशेष अधिक है इस प्रकार सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। विशेषका प्रमाण यहाँ द्रव्यके अनुसार ही पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागरूप है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार भाष्यगाथाके इस अवयवसमूहसे क्रोधसंज्वलनकी तीनों संग्रह कृष्टियोंके वर्गणासमूहका आलम्बन लेकर स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन किया। अब 'कमेण सेसा विसेसाहिया' ऐसा कहनेपर क्रमानुसार ही मान आदि तीनों संग्रह कृष्टियोंसम्बन्धी प्रत्येकके वर्गणासमूहका आलम्बन लेकर विशेष अधिकके क्रमसे स्वस्थान अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिए। तत्पश्चात् परस्थान अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष कथन जिस प्रकार प्रथम भाष्यगाथामें किया है उसी प्रकार कथन करना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। और इसीलिए प्रथम भाष्यगाथाके अनुसार ही इसकी विभाषा करनी चाहिए इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ २१५. यह सूत्र सुगम है।

* जिस प्रकार प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अल्पबहुत्वकी विभाषा की उसी प्रकार वर्गणासमूहकी अपेक्षा उसकी विभाषा करनी चाहिए।

§ २१६. जहा पदेसग्गमस्सियूण सत्थाण-परत्थाणप्पाबहुअं पढमभासगाहाए विहासिदं तहा चेव वग्गणग्गमहिकिच्च एत्थ वि विहासेयव्वं, पदेसप्पाबहुआणुसारेणेव वग्गणप्पाबहुअस्स वि णाणत्तेण विणा पवुत्तिदंसणादो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवं विदियभासगाहाए विहासा समत्ता। संपहि तदियभासगाहाए विहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ २१७. सुगमं।

* तं जहा।

§ २१८. सुगमं।

(११९) जा हीणा अणुभागेणहिया सा वग्गणा पदेसग्गे।
भागेणणंतिमेण दु अधिगा हीणा च बोद्धव्वा ॥१७२॥

§ २१९. एसा तदियभासगाहा बारसण्हं पि संगहकिट्टीणं जहण्णकिट्टिमादिं कादूण जावुक्कस्स-किट्टि त्ति जहाकममवट्ठिदाणमंतरकिट्टीणमणंतरोवणिधाए पदेसग्गेण हीणाहियभावगवेसणट्ठ-मवइण्णा। संपहि एदिस्से अत्थो वुच्चदे। तं जहा—'जा हीणा अणुभागेण०' जा वग्गणा अणुभागेण हीणा सा पदेसग्गेण अहिया होदि त्ति गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसंबंधो। तत्थ 'वग्गणा' त्ति वुत्ते जहण्ण-किट्टीए सरिसधणियसव्वपरमाणुसमूहो एगा आदिवग्गणा त्ति घेत्तव्वा। एवं विदियादिकिट्टीणं

---

§ २१६. जिस प्रकार प्रथम भाष्यगाथा द्वारा प्रदेशपुंजकी अपेक्षा स्वस्थान और परस्थान अल्पबहुत्वकी विभाषा की उसी प्रकार वर्गणासमूहका आलम्बन लेकर यहाँपर भी विभाषा करनी चाहिए, क्योंकि प्रदेश-अल्पबहुत्वके अनुसार ही वर्गणा अल्पबहुत्वकी भी नानापनके बिना प्रवृत्ति देखी जाती है इस प्रकार यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त हुई। अब तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अब आगे तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ २१७. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ २१८. यह सूत्र सुगम है।

(११९) जो वर्गणा अनुभागकी अपेक्षा हीन है वह प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अधिक होती है। इस प्रकार इन वर्गणाओंमेंसे प्रत्येक वर्गणा अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तवें भागसे हीन या अधिक जाननी चाहिए ॥१७२॥

§ २१९. यह तीसरी भाष्यगाथा बारह ही संग्रह कृष्टियोंमेंसे जघन्य कृष्टिसे लेकर उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक यथाक्रम अवस्थित अन्तर कृष्टियोंकी अनन्तरोपनिधाके अनुसार प्रदेशपुंजकी अपेक्षा हीनाधिकभावकी गवेषणा करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। अब इसका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—'जा हीणा अणुभागेण०' जो वर्गणा अनुभागकी अपेक्षा हीन है वह प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अधिक होती है इस प्रकार गाथाके पूर्वार्धमें सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। उसमें 'वर्गणा' ऐसा कहनेपर जघन्य कृष्टिमें सदृश धनवाला समस्त परमाणुसमूहरूप एक आदि वर्गणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार द्वितीयादि कृष्टियोंकी अपेक्षा भी अपनी-अपनी कृष्टिके सदृश धनवाले परमाणुओंकी एक पंक्तिमें रचना करके उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने

पि अप्पप्पणो सरिसधणियपरमाणूणमेगावलियाए विरयणं कादूण पादेक्कमेगेगा वग्गणा समुप्पाए-यव्वा जाव उक्कस्सकिट्टि त्ति। एवं च विरचणाए कदाए किट्टीअद्धाणमेत्तिओ चेव वग्गणाओ जादाओ। एवं कयविण्णासाणमेदासिं हेट्ठिमहेट्ठिमा वग्गणा अणुभागेण हीणा होदि। उवरिम उवरिमा अणुभागेणहिया होदि, अणंतगुणवड्ढिकमेणेव तासिमवट्ठाणणियमदंसणादो। एवमवट्ठि-दाणमेदासिमेण्हि पदेसग्गमस्सियूण सेढिपरूवणाए कीरमाणाए विदियवग्गणं पेक्खियूणादिवग्गणा पदेसग्गेण अहिया होदि, जहण्णसत्तीए परिणमंताणं परमाणूणं सुलहत्तदंसणादो। एवमणंतरोव-णिधाए सव्वासिं किट्टीवग्गणाणं पदेसग्गेण हीणाहियभावो जोजेयव्वो। संपहि हेट्ठिमवग्गणा उवरिमवग्गणं पेक्खियूण केत्तियमेत्तेण अहिया होदि त्ति एदस्स णिण्णयकरणट्ठं गाहापच्छद्धमोइण्णं 'भागेणणंतिमेण दु०'। अणंतिमभागेणेव हेट्ठिमादो उवरिमा हीणा होदि त्ति भणिदं होइ, एगेग-वग्गणविसेसमेत्तेण सव्वासिं किट्टीणमणंतराणंतरादो हीणत्तणियमदंसणादो। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ २२०. सुगमं।

* तं जहा।

§ २२१. सुगमं।

* जहण्णियाए वग्गणाए पदेसग्गं बहुअं।

तक पृथक्-पृथक् एक-एक वर्गणा उत्पन्न करनी चाहिए। इस प्रकार रचना करनेपर कृष्टियोंके आयामप्रमाण ही वर्गणाएँ हो जाती हैं। इस प्रकार एक पंक्तिमें रचित इन वर्गणाओंमेंसे नीचे-नीचेकी वर्गणा अनुभागकी अपेक्षा हीन होती है और उपरिम-उपरिम वर्गणा अनुभागकी अपेक्षा अधिक-अधिक होती है, क्योंकि अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी वृद्धिरूपसे ही उनके अवस्थानका नियम देखा जाता है। इस प्रकार इस समय अवस्थित हुई इन वर्गणाओंके प्रदेशपुंजका आलम्बन लेकर श्रेणिप्ररूपणा करनेपर दूसरी वर्गणाको देखते हुए आदि वर्गणा प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अधिक होती है, क्योंकि जघन्य शक्तिरूपसे परिणमन करनेवाले परमाणुओंकी सुलभता देखी जाती है। इस प्रकार अनन्तरोपनिधाके अनुसार सब कृष्टिवर्गणाओंके प्रदेशपुंजकी अपेक्षा हीनाधिकपनेकी योजना कर लेनी चाहिए। अब अधस्तन वर्गणा उपरितन वर्गणाको देखते हुए कितने प्रमाणमें अधिक होती है इस प्रकार इस तथ्यका निर्णय करनेके लिए भाष्यगाथाका उत्तरार्ध अवतीर्ण हुआ है— 'भागेणणंतिमेण दु०' अनन्तवें भागप्रमाण ही अधस्तन वर्गणासे उपरिम वर्गणा हीन होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि अनन्तर-अनन्तर क्रमसे सभी वर्गणाओंमें एक-एक विशेषप्रमाण हीनताका नियम देखा जाता है। अब इस प्रकार इस गाथाके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ २२०. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ २२१. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य वर्गणामें प्रदेशपुंज बहुत है।

§ २२२. एत्थ 'जहण्णिया' वग्गणा त्ति वुत्ते जहण्णकिट्टी सगाणंतसरिसधणियपरमाणुसहिदा गहेयव्वा। एदिस्से पदेसग्गमुवरिमासेसकिट्टीणं पदेसग्गादो बहुगमिदि वुत्तं होदि।

*** विदियाए वग्गणाए पदेसग्गं विसेसहीणमणंतभागेण।**

§ २२३. एत्थ वि विदियकिट्टी चेव सरिसधणियाणंतपरमाणुसहिदा विदिया वग्गणा त्ति घेत्तव्वा। अणंतभागेणेत्ति वुत्ते एगवग्गणविसेसमेत्तेणेत्ति घेत्तव्वं। सुगममण्णं।

*** एवमणंतराणंतरेण विसेसहीणं सव्वत्थ।**

§ २२४. एवमणंतराणंतरादो विसेसहीणं कादूण उवरिमवग्गणासु वि सव्वत्थ एसा सेढिपरूवणा णेदव्वा त्ति वुत्तं होदि। एसा च सेढिपरूवणा सव्वासिं संगहकिट्टीणं सत्थाणे परत्थाणे च जोजेयव्वा, लोभजहण्णकिट्टिमादिं कादूण जाव कोधुक्कस्सवग्गणा त्ति। परत्थाणे वि अणंतभागहाणिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। एवमणंतरोवणिधाए किट्टीवग्गणासु पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि तत्थेव परंपरोवणिधापरूवणट्ठं चउत्थभासगाहाए अवयारं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाह—

*** एत्तो चउत्थी भासगाहा।**

§ २२५. सुगमं।

---

§ २२२. इस सूत्रमें 'जघन्य वर्गणा' ऐसा कहनेपर अपने सदृश धनवाले अनन्त परमाणुओंसे युक्त जघन्य कृष्टि ग्रहण करनी चाहिए। इसका प्रदेशपुंज उपरिम समस्त कृष्टियोंके प्रदेशपुंजकी अपेक्षा बहुत होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** उससे दूसरी वर्गणामें प्रदेशपुंज अनन्तवें भागरूप एक वर्गणाविशेषसे हीन है।**

§ २२३. यहाँपर भी दूसरी कृष्टि ही सदृश धनवाले अनन्त परमाणुओंसे युक्त दूसरी वर्गणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। 'अणंतभागेण' ऐसा कहनेपर पिछली वर्गणासे अगली वर्गणामें विशेषरूप हीनका जितना प्रमाण हो उतना ग्रहण करना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

*** इस प्रकार अनन्तर-अनन्तर-रूपसे सब वर्गणाओंमें विशेष हीन प्रदेशपुंज जानना चाहिए।**

§ २२४. इस प्रकार अनन्तर-अनन्तररूपसे विशेष हीन करके उपरिम वर्गणाओंमें भी सर्वत्र यह श्रेणिप्ररूपणा जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसी प्रकार इस श्रेणिप्ररूपणाकी सभी संग्रह कृष्टियोंकी अपेक्षा स्वस्थान और परस्थानमें योजना कर लेनी चाहिए, क्योंकि लोभसंज्वलनकी जघन्य कृष्टिसे लेकर क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट वर्गणाके प्राप्त होने तक परस्थानमें भी अनन्त भागहानिको छोड़कर अन्य प्रकार असम्भव है। इस प्रकार अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा कृष्टि वर्गणाओंमें प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब उन्हीं वर्गणाओंमें परम्परोपनिधाकी प्ररूपणा करनेके लिए चौथी भाष्यगाथाका अवतार करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** अब आगे चौथी भाष्यगाथा का कथन करते हैं।**

§ २२५. यह सूत्र सुगम है।

(१२०) कोधादिवग्गणादो सुद्धं कोधस्स उत्तरपदं तु ।
सेसो अणंतभागो णियमा तिस्से पदेसग्गे ॥१७३॥

§ २२६. एदस्स गाहासुत्तस्सत्थो वुच्चदे । तं जहा—कोहस्स आदिवग्गणा कोहादिवग्गणा । कारगपढमसंगहकिट्टीए[1] जहण्णकिट्टि त्ति वुत्तं होदि । तत्तो कोहादिवग्गणादो सुद्धं सोहिदं कायव्वं । किमेत्थ सोहेयव्वमिदि चे ? वुच्चदे—'कोधस्स उत्तरपदं तु' कोधस्सेव चरिमकिट्टीए पदेसग्गमेत्थ सोहेयव्वमिदि वुत्तं होदि । एवं सोहिदसेसो अणंतभागो तिस्से जहण्णकिट्टीए पदेसग्गस्स सुद्धसेसो णियमा अणंतभागे चेव होदि, रूवूणकिट्टीसलागमेत्ताणं चेव वग्गणविसेसाणमेत्थ सुद्धसेसाणमुवलंभादो । तदो परंपरोवणिधाए वि जोइज्जमाणे कोहादिवग्गणाए पदेसग्गं कोधचरिमवग्गणापदेसग्गादो अणंतभागब्भहियमेव जहण्णकिट्टीपदेसग्गादो वि उक्कस्सकिट्टीपदेसग्गमणंतभागहीणं चेव दट्ठव्वमिदि एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो ।

---

(१२०) क्रोधसंज्वलनका आदि वर्गणामेंसे क्रोधसंज्वलनके उत्तरपद अर्थात् अन्तिम वर्गणाको घटावे । इस प्रकार घटानेपर जो अनन्तवाँ भाग शेष रहता है उतना उस आदि वर्गणामें शुद्ध शेषका प्रमाण होता है ॥१७३॥

§ २२६. अब इस गाथासूत्रका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—क्रोधकी आदि वर्गणा क्रोधादि वर्गणा है । कृष्टिकारकके प्रथम संग्रहकृष्टिसम्बन्धी जघन्य कृष्टि यह उक्त पदका अर्थ है । उस क्रोधसम्बन्धी आदि वर्गणामेंसे शुद्ध अर्थात् शोधित करना चाहिए ।

शंका—इसमेंसे किसे शोधित करना चाहिए ?

समाधान—कहते हैं 'कोधस्स उत्तरपदं तु' क्रोधकी ही अन्तिम कृष्टिके प्रदेशपुंजको इसमेंसे अर्थात् आदि वर्गणामेंसे शोधित करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

इस प्रकार शोधित करनेके बाद जो अनन्तवां भाग शेष बचता है वह उस जघन्य कृष्टिके प्रदेशपुंजसम्बन्धी शुद्ध शेष नियमसे अनन्तवें भागमें अर्थात् अनन्तवें भागप्रमाण ही होता है, क्योंकि एक कम कृष्टिशलाका प्रमाण ही वर्गणाविशेषरूप शुद्ध शेष इस आदि वर्गणामें पाये जाते हैं । इसलिए परम्परोपनिधाकी अपेक्षासे भी देखनेपर क्रोधकी आदि वर्गणाका प्रदेशपुंज क्रोधकी अन्तिम वर्गणाके प्रदेशपुंजसे अनन्तवें भागमात्र ही अधिक जानना चाहिए और क्रोधकी जघन्य कृष्टिके प्रदेशपुंजसे भी उत्कृष्ट कृष्टिका प्रदेशपुंज अनन्तवें भागप्रमाण ही हीन जानना चाहिए यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है ।

विशेषार्थ—पहले अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा पूर्वकी वर्गणासे उसके आगेकी वर्गणामें कितना प्रदेशपुंज हीन होता है इसका कथन करते हुए यह स्पष्ट कर आये है कि पहलेकी वर्गणासे अगली वर्गणामें अनन्तवें भागरूप एक विशेषप्रमाण प्रदेशपुंज हीन हुआ है । इसी प्रकार आगे सर्वत्र जानना चाहिए । अब यहाँपर परम्परोपनिधासे विचार करनेपर क्रोधसंज्वलनसम्बन्धी प्रथम संग्रह कृष्टिकी आदि वर्गणामेंसे अन्तिम वर्गणाके घटानेपर कितना शेष बचता है इसे स्पष्ट करते हुए उसे अनन्तवें भागप्रमाण ही शेष रहता है यह सूचित किया है । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि परम्परोपनिधाकी अपेक्षा भी क्रोधसंज्वलनकी जघन्यकृष्टिके प्रदेशपुंजसे उसीकी उत्कृष्ट कृष्टिका प्रदेशपुंज अनन्तवें भागप्रमाण ही हीन होता है । इसीको इन शब्दोंमें भी कह सकते हैं कि क्रोधसंज्वलनसम्बन्धी प्रथम संग्रह कृष्टिकी उत्कृष्ट कृष्टिके प्रदेशपुंजसे उसीकी जघन्य कृष्टिका प्रदेशपुंज अनन्तवें भागप्रमाण अधिक है ।

---

१. ता. प्रतौ कारण-इति पाठः ।

§ २२७. संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए समुदायत्थं विहासेमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* विहासा ।

§ २२८. सुगमं ।

* एदीए गाहाए परंपरोवणिधाए सेढीए भणिदं होदि ।

§ २२९. एदीए चउत्थभासगाहाए किट्टीगदवग्गणासु परंपरोवणिधाए सेढीए पदेसग्गस्स हीणाहियत्तं भणिदं होदि त्ति सुत्तत्थसंबंधो । एवमेदिस्से गाहाए परंपरोवणिधाए पडिबद्धत्तमेदेण जाणाविय संपहि तिस्से चेव परंपरोवणिधाए परूवणा एवंविहा होदि त्ति विहासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

* कोहस्स जहण्णियादो वग्गणादो उक्कस्सियाए वग्गणाए पदेसग्गं विसेसहीणमणंतभागेण ।

§ २३०. गयत्थमेदं सुत्तं । एवं ताव कोहसंजलणस्स परंपरोवणिधापरूवणमेदेण गाहासुत्तेण विहासिय संपहि माणादिसंजलणाणं पि एवं चेव परंपरोवणिधा परूवेयव्वा त्ति जाणावणट्ठं पंचमीए भासगाहाए अवयारो कीरदे—

* एत्तो पंचमीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ २३१. सुगमं ।

---

§ २२७. अब इस गाथाके इस प्रकार समुदायरूप अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अब इस चौथी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ २२८. यह सूत्र सुगम है ।

* इस भाष्यगाथा द्वारा परम्परोपनिधारूप श्रेणिकी अपेक्षा प्रदेशपुंजकी हीनाधिकता कही गयी है ।

§ २२९. इस चौथी भाष्यगाथा द्वारा कृष्टिगत वर्गणाओंमें परम्परोपनिधारूप श्रेणिकी अपेक्षा प्रदेशपुंजकी हीनाधिकता कही गयी है यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है । इस प्रकार यह गाथा परम्परोपनिधासे प्रतिबद्ध है इसका इस कथन द्वारा ज्ञान कराकर अब उसी परम्परोपनिधाकी प्ररूपणा इस प्रकार होती है इस बातकी विभाषा करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* क्रोध संज्वलनकी जघन्य वर्गणासे उत्कृष्ट वर्गणाका प्रदेशपुंज अनन्तवें भागरूपसे विशेष हीन होता है ।

§ २३०. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार सर्वप्रथम क्रोध संज्वलनसम्बन्धी परम्परोपनिधाकी प्ररूपणाका इस गाथासूत्र द्वारा विशेषरूपसे कथन कर अब मानादि संज्वलनोंकी भी परम्परोपनिधका इसी प्रकार कथन करना चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए पाँचवीं भाष्यगाथाका अवतार करते हैं—

* अब आगे पाँचवीं भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ २३१. यह सूत्र सुगम है ।

* तं जहा ।

§ २३२. सुगमं ।

(१२१) एसो कमो च कोधे माणे णियमा च होदि मायाए ।
लोभम्हि च किट्टीए पत्तेगं होदि बोद्धव्वो ॥१७४॥

§ २३३. जो एसो कमो कोधे परूविदो सो चेव णिरवसेसो माण-माया-लोभेसु वि अप्पप्पणो किट्टीओ णिरुंभियूण पादेक्कं जोजेयव्वो त्ति वुत्तं होदि । संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाह—

* विहासा ।

§ २३४. सुगमं ।

* जहा कोहे चउत्थीए गाहाए विहासा तहा माण-माया-लोभाणं पि णेदव्वा ।

§ २३५. जहा चउत्थीए भासगाहाए कोहसंजलणमहिकिच्च परंपरोवणिधा परूविदा तहा चेव माण-माया-लोभाणं पि परंपरोवणिधा णेदव्वा त्ति सुत्तत्थसंगहो । संपहि माणादिसु पयदत्थजोजणा एवं कायव्वा त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

* माणादिवग्गणादो सुद्धं माणस्स उत्तरपदं तु ।
सेसो अणंतभागो णियमा तिस्से पदेसग्गे ॥

---

* वह जैसे ।

§ २३२. यह सूत्र सुगम है ।

(१२१) जो यह क्रम क्रोधसंज्वलनकी कृष्टियोंके विषयमें कहा है वही क्रम नियमसे मान, माया और लोभ इनमेंसे प्रत्येक कषायकी कृष्टियोंके विषयमें जानना चाहिए ॥१७४॥

§ २३३. जो यह क्रम क्रोध संज्वलनके विषयमें प्ररूपित किया है निश्शेषरूपसे वही क्रम मान, माया और लोभसंज्वलनोंके विषयमें भी अपनी-अपनी कृष्टियोंको विवक्षित कर प्रत्येककी योजना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस पाँचवीं भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ २३४. यह सूत्र सुगम है ।

* जिस प्रकार चौथी भाष्यगाथामें क्रोधसंज्वलनकी प्ररूपणा की उसी प्रकार मान, माया और लोभसंज्वलनकी भी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

§ २३५. जिस प्रकार चौथी भाष्यगाथामें क्रोधसंज्वलनको अधिकृत करके परम्परोपनिधाकी प्ररूपणा की उसी प्रकार मान, माया और लोभकी अपेक्षा भी परम्परोपनिधाका कथन करना चाहिए यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है । अब मानादिकमें प्रकृत अर्थकी योजना इस प्रकार करनी चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* मानसंज्वलनकी आदि वर्गणामेंसे मानसंज्वलनके उत्तरपद अर्थात् अन्तिम वर्गणाको घटावे । इस प्रकार घटानेपर जो अनन्तवाँ भाग शेष रहता है उतना उसकी आदि वर्गणामें शुद्ध शेषका प्रमाण होता है ।

* एवं चेव मायादिवग्गणादो० ।

* लोभादिवग्गणादो० ।

§ २३६. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि त्ति ण एत्थ किंचि वक्खाणेयव्वमत्थि, जाणिदजाणावणे फलाभावादो । एवमेदासु पंचसु भासगाहासु विहासिदासु मूलगाहाए' किट्टी च पदेसग्गेणेत्ति' पढमो अत्थो समत्तो भवदि । संपहि 'अणुभागग्गेणेत्ति' मूलगाहाविदियावयवमस्सियूण विदियस्स अत्थस्स विहासणं कुणमाणो तत्थ पडिबद्धा एक्का भासगाहा अत्थि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

* मूलगाहाए विदियपदमणुभागग्गेणेत्ति । एत्थ एक्का भासगाहा ।

§ २३७. 'अणुभागग्गेणेत्ति' जं मूलगाहाए विदियं बीजपदं संगहकिट्टीणमणुभागग्गेण हीणाहियभावगवेसणट्ठमोइण्णं तस्स विहासणट्ठमेत्थ एक्का भासगाहा होदि । तिस्से समुक्कित्तण-मिदाणिं कस्सामो त्ति भणिदं होदि ।

* तं जहा ।

§ २३८. सुगमं ।

(१३२) पढमा च अणंतगुणा विदियादो णियमसा दु अणुभागो ।
तदियादो पुण विदिया कमेण सेसा गुणेणहिया ॥ १७५ ॥

इसी प्रकार माया संज्वलनकी आदि वर्गणामेंसे मायासंज्वलनके उत्तर पद अर्थात् अन्तिम वर्गणाको घटावे । इस प्रकार घटानेपर जो अनन्तवाँ भाग शेष रहता है उतना उसकी आदि वर्गणामें शुद्ध शेषका प्रमाण होता है ।

तथा इसी प्रकार लोभसंज्वलनकी आदि वर्गणामेंसे लोभ संज्वलनके उत्तरपद अर्थात् अन्तिम वर्गणाको घटावे । इस प्रकार घटानेपर जो अनन्तवाँ भाग शेष रहता है उतना उसकी आदि वर्गणामें शुद्ध शेषका प्रमाण होता है ।

§ २३६. ये सूत्र सुगम हैं, इसलिए यहाँपर कुछ व्याख्यातव्य नहीं है, क्योंकि जिनका ज्ञान करा दिया गया है उनका पुनः ज्ञान करानेमें फलका अभाव है। इस प्रकार इन पाँच भाष्यगाथाओं-की विभाषा करनेपर मूलगाथाके 'किट्टी च पदेसग्गेण' इस चरणका प्रथम अर्थ समाप्त होता है । अब मूलगाथाके 'अणुभागग्गेण' इस दूसरे पदका अवलम्बन लेकर दूसरे अर्थकी विभाषा करते हुए उस अर्थमें प्रतिबद्ध एक भाष्यगाथा है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* मूलगाथाका जो दूसरा पद 'अणुभागग्गेण' है उसमें एक भाष्यगाथा आयी है।

§ २३७. मूलगाथाका जो 'अणुभागग्गेण' दूसरा बीजपद है वह संग्रह कृष्टियोंके अनुभाग-पुंजकी अपेक्षा हीनाधिक भावकी गवेषणा करनेके लिए अवतीर्ण हुआ है । उसकी विभाषा करनेके लिए प्रकृतमें एक भाष्यगाथा है । प्रकृतमें उसकी समुत्कीर्तना करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* वह जैसे ।

§ २३८. यह सूत्र सुगम है ।

(१२२) क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रथम संग्रह कृष्टि अनुभागपुंजकी अपेक्षा नियमसे अनन्तगुणी अधिक है । पुनः तीसरी संग्रहकृष्टिसे दूसरी संग्रहकृष्टि अनुभागपुंजकी अपेक्षा अनन्तगुणी है । इसी प्रकार मान, माया और लोभ संज्वलनकी तीनों संग्रह कृष्टियाँ तीसरीसे दूसरी और दूसरीसे पहली क्रमसे अनन्तगुणी अधिक हैं ।

§ २३९. कोहसंजलणस्स पढमसंगहकिट्टी तस्सेव विदियादो संगहकिट्टीदो णिच्छएणेव अणुभागग्गेण अणंतगुणा होदि त्ति गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसमुच्चओ। 'तदियादो पुण विदिया' एवं भणिदे कोहसंजलणस्स तदियसंगहकिट्टीदो विदियसंगहकिट्टी अणुभागग्गेण णियमा अणंतगुणा दट्ठव्वा त्ति भणिदं होदि। एदस्स भावत्थो—कोधवेदगतदियसंगहकिट्टीए सव्वाविभागपडिच्छेद-पुंजादो विदियसंगहकिट्टीए सव्वाविभागपडिच्छेदपुंजो अणंतगुणो। तत्तो पुण पढमसंगहकिट्टीए सव्वाविभागपडिच्छेदपुंजो अणंतगुणो। गुणगारो अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणमेत्तो, सत्थाण-परत्थाणेसु अविभागपडिच्छेदगुणगाराणं तहाभावसिद्धीए बाहाणुवलंभादो त्ति।

§ २४०. 'कमेण सेसा गुणेणहिया' एवं भणिदे माण-माया-लोभाणं पि तिण्णि संगहकिट्टीओ अप्पप्पणो तदियसंगहकिट्टिमादिं कादूण जहाकममणंतगुणसरूवेण अहिया होंति त्ति भणिदं होदि। एवमेदेण गाहासुत्तेण कोह-माण-माया-लोभाणमप्पप्पणो तिण्हं संगहकिट्टीणमप्पाबहुअं उवइट्ठं दट्ठव्वं। एदम्हादो चेव परत्थाणप्पाबहुअमंतरकिट्टी अप्पाबहुअं किट्टीअंतरप्पाबहुअं च सूचिदमिदि गहेयव्वं। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थे विहासमाणो चुण्णिसुत्तयारो विहासागंथमुत्तर-माढवेइ—

* विहासा।

§२४१. सुगमं।

* संगहकिट्टिं पडुच्च कोहस्स तदियाए संगहकिट्टीए अणुभागो थोवो।

---

§ २३९. क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टि उसीकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे अनुभागपिंडकी अपेक्षा निश्चयसे ही अनन्तगुणी होती है यह इस भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। 'तदियादो पुण विदिया' ऐसा कहनेपर क्रोधसंज्वलनकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे दूसरी संग्रहकृष्टि अनुभागपिण्डकी अपेक्षा नियमसे अनन्तगुणी जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसका भावार्थ—क्रोधवेदकके तीसरी संग्रह कृष्टिके समस्त अविभागप्रतिच्छेदपुंजसे दूसरी संग्रह-कृष्टिका समस्त अविभाग प्रतिच्छेदपुंज अनन्तगुणा है। पुनः उससे प्रथम संग्रह कृष्टिका अविभाग-प्रतिच्छेदपुंज अनन्तगुणा है। गुणकार अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा है, क्योंकि स्वस्थान और पर-स्थानमें अविभागप्रतिच्छेदके गुणकारकी उसरूपसे सिद्धि होनेमें बाधा नहीं पायी जाती।

§ २४०. 'कमेण सेसा गुणेणहिया' ऐसा कहनेपर मान, माया और लोभसंज्वलन प्रत्येककी ये तीनों ही संग्रह कृष्टियाँ अपनी-अपनी तीसरी संग्रह कृष्टिसे लेकर दूसरी और दूसरीसे पहली संग्रह कृष्टियाँ क्रमसे अनन्तगुणस्वरूपसे अधिक-अधिक होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इस गाथा सूत्र द्वारा क्रोध, मान, माया और लोभसंज्वलनसम्बन्धी अपनी-अपनी तीनों संग्रह कृष्टियोंका अल्पबहुत्व कहा हुआ जानना चाहिए। तथा इसी भाष्यगाथासे ही परस्थान अल्पबहुत्व, अन्तरकृष्टि अल्पबहुत्व और कृष्टि अन्तर अल्पबहुत्व सूचित किया गया है ऐसा जानना चाहिए। अब इस प्रकार इस गाथाके अर्थकी विभाषा करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ २४१. यह सूत्र सुगम है।

* संग्रहकृष्टिकी अपेक्षा क्रोधसंज्वलनकी तीसरी संग्रह कृष्टिका अनुभाग सबसे स्तोक है।

§ २४२. एत्थ 'संगहकिट्टिं पडुच्चेत्ति' णिद्देसो संगहकिट्टीओ अस्सियूण एदमप्पाबहुअं परूविज्जदि त्ति पदुप्पायणफलो। 'तदियाए संगहकिट्टीए' त्ति वुत्ते कारगपढमसंगहकिट्टीए गहणं कायव्वं। सेसं सुगमं।

* विदियाए संगहकिट्टीए अणुभागो अणंतगुणो।

§ २४३. सुगमं।

* पढमाए संगहकिट्टीए अणुभागो अणंतगुणो।

§ २४४. सुगममेदं पि। णवरि उहयत्थ वि गुणगारमभवसिद्धिएहिं अणंतगुणं सिद्धाण-मणंतभागमेत्तमिदि घेत्तव्वं। कुदो एदं णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धपरमगुरूवएसादो।

* एवं माण-माया-लोभाणं पि।

§ २४५. जहा कोहसंजलस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं सत्थाणप्पाबहुअमेदं परूविदं तहा चेव माण-माया-लोभसंजलणाणं पि वत्तव्वं, विसेसाभावादो त्ति। संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदो परत्था-णप्पाबहुआलावो सुगमो। अंतरकिट्टीणं किट्टीअंतराणं च अप्पाबहुअं पुव्वमेव पवंचिदमिदि ण पुणो तप्पवंचो कीरदे, जाणिदजाणावणे फलाणुवलंभादो। एवमेदीए परूवणाए समत्ताए तदो मूलगाहाए विदिओ अत्थो समत्तो।

§ २४२. इस सूत्रमें 'संगहकिट्टिं पडुच्च' यह निर्देश संग्रह कृष्टियोंका आलम्बन लेकर इस अल्पबहुत्वको कहते हैं यह इस कथनका फल है। 'तदियाए संगहकिट्टीए' ऐसा कहनेपर कृष्टि-कारककी प्रथम संग्रहकृष्टिका ग्रहण करना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* उससे दूसरी संग्रह कृष्टिका अनुभाग अनन्तगुणा है।

§ २४३. यह सूत्र सुगम है।

* उससे प्रथम संग्रहकृष्टिका अनुभाग अनन्तगुणा है।

§ २४४. यह सूत्र भी सुगम है। इतनी विशेषता है कि दोनों ही स्थलोंपर गुणकार अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण ग्रहण करना चाहिए।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सूत्रके अविरुद्ध परम गुरुके उपदेशसे जाना जाता है।

* इसी प्रकार मान, माया और लोभ संज्वलनके अनुभाग-सम्बन्धी अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिए।

§ २४५. जिस प्रकार क्रोध संज्वलनकी तीनों संग्रह कृष्टियोंका यह स्वस्थान अल्पबहुत्व कहा उसी प्रकार मान, माया और लोभसंज्वलनोंका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। अब इस सूत्र द्वारा सूचित किये गये परस्थान अल्पबहुत्वका आलाप सुगम है तथा अन्तरकृष्टियों और कृष्टिअन्तरोंके अल्पबहुत्वका पहले ही विस्तारसे कथन कर आये हैं, इसलिए पुनः उनका विस्तारसे कथन नहीं करते, क्योंकि जिनका पूर्वमें ज्ञान करा दिया है उनका पुनः ज्ञान करानेमें कोई फल नहीं पाया जाता। इस प्रकार इतनी प्ररूपणाके समाप्त होनेके पश्चात् मूलगाथाका दूसरा अर्थ समाप्त होता है।

§ २४६. *संपहि मूलगाहाए तदियावयवमस्सियूण तत्थ पडिबद्धस्स तदियस्स अत्थस्स विहासणं कुणमाणो उवरिमसुत्तपबंधमाढवेइ—

*** मूलगाहाए तदियपदं 'का च कालेणे'त्ति ।**

§ २४७. जं मूलगाहाए तदियमत्थपदं तस्सेदाणिमत्थविहासणं कस्सामो त्ति वुत्तं होइ। संपहि एत्थ पडिबद्धाणं भासगाहाणं पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** एत्थ छब्भासगाहाओ ।**

§ २४८. एदम्हि पदे पडिबद्धस्स अत्थस्स विहासणट्ठमेत्थ छब्भासगाहाओ णादव्वाओ त्ति भणिदं होइ। जइ एवं, णाढवेयव्वमिदं सुत्तं, पुव्वमेव तत्थ छण्हं भासगाहाणमत्थित्तस्स परूविदत्तादो ? ण एस दोसो, तासिमेण्हि विहासणट्ठं पुव्वुत्तस्सेवत्थस्स संभालणे दोसाभावादो। संपहि जहाकममेव तासिं समुक्कित्तणं विहासणं च कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

विशेषार्थ—प्रकृतमें क्रोधसंज्वलनकी तीनों संग्रह कृष्टियोंका अनुभागकी अपेक्षा स्वस्थान अल्पबहुत्व कहा है। उसके क्रमका निर्देश मूलमें किया ही है। तथा मान, माया और लोभसंज्वलनमेंसे प्रत्येककी तीनों संग्रहकृष्टियोंके अनुभागसम्बन्धी स्वस्थान अल्पबहुत्वको इसी प्रकार जाननेकी सूचना की है। यद्यपि यहांपर परस्थान अल्पबहुत्वका निर्देश नहीं किया है फिर भी उसे उसी प्रकारसे जान लेना चाहिए, क्योंकि जिस प्रकार स्वस्थान अल्पबहुत्वमें गुणकारका प्रमाण अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण होता है वैसे ही परस्थान अल्पबहुत्वमें भी सामान्यरूपसे गुणकारका यही प्रमाण जानना चाहिए। अन्तरकृष्टियोंके मध्य एक अन्तरकृष्टिसे दूसरी अन्तरकृष्टि कितनी बड़ी या छोटी है तथा अन्तरकृष्टियोंके मध्य परस्पर जो अन्तराल है वह कितना है इसको प्राप्त करनेके लिए भी गुणकारका सामान्यरूपसे यही प्रमाण जानना चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ २४६. अब मूलगाथाके तीसरे अवयवका आलम्बन लेकर उसमें प्रतिबद्ध तीसरे अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धका आरम्भ करते हैं—

*** मूलगाथाका तीसरा पद है—'का च कालेण'।**

§ २४७. जो मूलगाथाका तीसरा अर्थपद है उसकी इस समय अर्थसम्बन्धी विभाषा करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस अर्थमें प्रतिबद्ध भाष्यगाथाओंके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस अर्थमें छह भाष्यगाथाएँ हैं।**

§ २४८. इस पदमें प्रतिबद्ध अर्थकी विभाषा करनेके लिए प्रकृतमें छह भाष्यगाथाएँ जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यदि ऐसा है तो इस सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसके पूर्व ही इस अर्थमें छह भाष्यगाथाओंका अस्तित्व कह आये हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि उनकी यहांपर विभाषा करनेके लिए पूर्वोक्त अर्थकी सम्हाल की गयी है, इसलिए कोई दोष नहीं है।

अब क्रमसे ही उनकी समुत्कीर्तना और विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* तासिं समुक्कित्तणा चे विहासा च ।

§ २४९. सुगमं ।

(१३३) पढमसमयकिट्टीणं कालो वस्सं व दो व चत्तारि ।
अट्ठ च वस्साणि ट्ठिदी विदियट्ठिदीए समा होदि ॥१७६॥

§ २५०. एसा पढमभासगाहा किट्टीवेदगस्स पढमसमए मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठमोइण्णा । संपहि एदस्स गाहासुत्तस्सत्थो वुच्चदे । तं तहा—'पढमसमए किट्टीणं कालो' एवं भणिदे किट्टीकारगपढमसमयं मोत्तूण किट्टीवेदगपढमसमए एसो कालणिद्देसो कीरदि त्ति घेत्तव्वं[1] । सुत्ते तहाणिद्देसाभावे कथमेसो विसेसो लब्भदि त्ति णासंकणिज्जं, वक्खाणादो तहाविहविसेसपडिवत्तिसिद्धीदो । अण्णं च किट्टीणं कालपमाणमेत्थ परूवेदुमाढत्तं । ण च किट्टीकारगस्स पढमसमए परूविज्जमाणं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं किट्टीणं कालो त्ति वोत्तुं सक्किज्जदे, किट्टीफद्दयसाहारणस्स तस्स किट्टीणं चेव कालो त्ति वोत्तुमसक्कियत्तादो । तम्हा विणट्ठेसु वि फद्दएसु किट्टीओ चेव सुद्धाओ घरेदूण ट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टिवेदगस्स तदवत्थाए पढमसमयकिट्टीओ णाम भणंति । तासि पढमसमयकिट्टीणं कालो किंपमाणो त्ति आसंकिय 'वस्सं व दो व चत्तारि अट्ठ य वस्साणि ट्ठिदी' त्ति तस्स पमाणणिद्देसो कदो । एगवस्सपमाणो दोवस्सपमाणो चत्तारिवस्सपमाणो अट्ठवस्सपमाणो च तासि ट्ठिदिकालो होदि त्ति वुत्तं होदि ।

---

* अब उन भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना और विभाषा करते हैं ।

§ २४९. यह सूत्र सुगम है ।

(१३३) कृष्टियोंके वेदन करनेके प्रथम समयमें द्वितीय स्थितिके साथ प्रथम स्थितिका काल एक वर्ष, दो वर्ष, चार वर्ष या आठ वर्षप्रमाण होता है ।

§ २५०. यह प्रथम भाष्यगाथा कृष्टि वेदकके प्रथम समयमें मोहनीयकर्मके स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । अब इस गाथासूत्रका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—प्रथम समयमें कृष्टियोंका काल ऐसा कहनेपर कृष्टिकारकके प्रथम समयको छोड़कर कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें इस कालका निर्देश करते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए ।

शंका—सूत्रमें उस प्रकारके निर्देशके अभावमें यह विशेष कैसे प्राप्त होता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि व्याख्यानसे उस प्रकारके विशेषकी प्रतिपत्ति सिद्ध है । दूसरी बात यह है कि कृष्टियोंके कालका प्रमाण यहांपर कहनेके लिए आरम्भ किया है । कृष्टिकारकके प्रथम समयमें कहे जानेवाले स्थितिसत्कर्मके प्रमाणको कृष्टियोंका काल कहना शक्य नहीं है, क्योंकि जो काल कृष्टियों और स्पर्धकोंमें साधारणरूपसे अवस्थित है उसे मात्र कृष्टियोंका काल कहना अशक्य है । इसलिए स्पर्धकोंके विनष्ट हो जानेपर भी शुद्ध (केवल) कृष्टियोंका ही आश्रय लेकर जो प्रथम समयवर्ती कृष्टियोंका वेदन करनेवाला जीव अवस्थित है उस प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदकके उसकी उस अवस्थामें प्रथम समयवर्ती कृष्टियाँ कहलाती हैं ।

प्रथम समयमें स्थित उन कृष्टियोंके कालका क्या प्रमाण है ऐसी आशंका करके 'वस्सं व दो व चत्तारि अट्ठ य वस्साणि ट्ठिदी' अर्थात् उनकी स्थिति एक वर्ष है, दो वर्ष है, चार वर्ष है और आठ वर्ष है—इस प्रकार उस कालका निर्देश किया है । एक वर्षप्रमाण, दो वर्षप्रमाण, चार वर्षप्रमाण और आठ वर्षप्रमाण उन कृष्टियोंका स्थितिकाल है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

---

१. आ. प्रतौ वत्तव्वं इति पाठः ।

§ २५१. तत्थ लोभोदएण चडिदस्स सेससंजलणेसु फद्दयसरूवेण विणट्ठेसु संतेसु लोभसंजलणस्स किट्टीवेदगभावपढमसमए वट्टमाणस्स लोभसंजलणकिट्टीणं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणमेगवस्समेत्तं होदि। मायोदएण चडिदस्स माया-लोभकिट्टीणं ट्ठिदिसंतकम्मं वेवस्सपमाणं होदि। माणोदएण चडिदस्स माण-माया-लोभसंजलणाणं किट्टीविसेसिदट्ठिदिसंतकम्मं चत्तारिवस्सपमाणं होदि। कोहोदएण चडिदस्स चउण्हं संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं पढमसमयकिट्टीविसेसिदमट्ठवस्सपमाणं होदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। 'विदियट्ठिदीए समा होदि' त्ति एवं भणिदे विदियट्ठिदीए सह पढमट्ठिदिं घेत्तूण एसो अणंतरो कालपमाणणिद्देसो कदो। ण केवलं विदियट्ठिदीए चेवेत्ति वुत्तं होइ, पढम-विदियट्ठिदीओ अंतरट्ठिदीओ च घेत्तूण णिरुद्धसमयविसयट्ठिदिसंतकम्मस्स तप्पमाणत्तदंसणादो।

§ २५२. संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमोदारइस्सामो—

* विहासा।

§ २५३. सुगमं।

---

§ २५१. लोभसंज्वलनके उदयसे क्षपक श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके शेष संज्वलनोंके स्पर्धकरूपसे नष्ट हो जानेपर लोभसंज्वलनसम्बन्धी कृष्टियोंके वेदकभावके प्रथम समयमें विद्यमान हुए जीवके लोभसंज्वलनसम्बन्धी कृष्टियोंके स्थितिसत्कर्मका प्रमाण एक वर्ष मात्र होता है। मायासंज्वलनके उदयसे क्षपक श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके माया और लोभ संज्वलनसम्बन्धी कृष्टियोंका स्थितिसत्कर्म दो वर्ष प्रमाण होता है। मानसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके मान, माया और लोभसंज्वलनोंका कृष्टिसम्बन्धी स्थितिसत्कर्म चार वर्ष प्रमाण होता है। तथा क्रोधसंज्वलनके उदयसे क्षपक श्रेणि पर चढ़े हुए जीवके चारों संज्वलनोंका प्रथम समयवर्ती स्थितिसत्कर्मका काल आठ वर्षप्रमाण होता है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। 'विदियट्ठिदीए समा होदि' इस प्रकार कहनेपर द्वितीय स्थितिके साथ प्रथम स्थितिको ग्रहण करके यह अनन्तर पूर्वकालका निर्देश किया है। यह केवल द्वितीय स्थितिका काल नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है क्योंकि प्रथम स्थिति, द्वितीय स्थिति और अन्तर कृष्टियोंको ग्रहण कर विवक्षित समयको विषय करनेवाला स्थितिसत्कर्म तत्प्रमाण देखा जाता है।

विशेषार्थ—लोभसंज्वलनके उदयसे जो जीव क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है वह मात्र लोभसंज्वलनसम्बन्धी तीनों संग्रह कृष्टियोंका कारक होता है। इसी प्रकार मायासंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़नेवाला जीव माया और लोभसंज्वलनसम्बन्धी छह कृष्टियोंका कारक होता है। मानसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़नेवाला जीव मान, माया और लोभसम्बन्धी नौ संग्रह कृष्टियोंका कारक होता है तथा क्रोधसंज्वलनके उदयसे क्षपक श्रेणिपर चढ़नेवाला जीव चारों संज्वलनोंसम्बन्धी बारह कृष्टियोंका कारक होता है। साथ ही ऐसा भी नियम है कि जब यह जीव उक्त कृष्टियोंका कारक होता है उस समय उसके विवक्षित कृष्टिगत स्थितिसत्कर्मके साथ स्पर्धकगत स्थितिसत्कर्म भी पाया जाता है और प्रकृतमें कृष्टिगत स्थितिसत्कर्मका ही काल कहा जा रहा है, इसलिए इसे कृष्टियोंके उदयके प्रथम समयका ही जानना चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ २५२. अब इसी अर्थका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ २५३. यह सूत्र सुगम है।

*** जदि कोधेण उवट्ठिदो किट्टीओ वेदेदि तदो तस्स पढमसमए वेदगस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठवस्साणि ।**

§ २५४. कोहोदएण खवगसेढिमुवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगावत्थाए वट्टमाणस्स मोहणीयट्ठिदिसंतकम्मपमाणमट्ठवस्समेत्तं होदि त्ति सुत्तत्थसंगहो। एसो कालणिद्देसो चदुण्हं पि संजलणाणं सव्वासिमेव संगहकिट्टीणं पढम-विदियट्ठिदीओ संपिंडियूण अट्ठवस्समेत्तो त्ति गहेयव्वो। होउ णाम कोहसंजलणपढमसंगहकिट्टीए एसो कालणिद्देसो, वेदिज्जमाणाए तिस्से पढमट्ठिदिसंभवेण पढमविदियट्ठिदिसमूहारद्धस्स ट्ठिदिसंतस्स तत्थ तप्पमाणत्तोवलंभादो। ण सेसाणं संगहकिट्टीणं, तासिं पढमट्ठिदिसंभवाभावेण अंतोमुहुत्तूणट्ठवस्समेत्तविदियट्ठिदीए चेव गहणे कीरमाणे संपुण्णट्ठवस्समेत्तट्ठिदिसंतकम्मपमाणाणुवलंभादो त्ति ? ण एस दोसो; वेदिज्जमाणकोहसंजलणपढमसंगहकिट्टीए पढमट्ठिदिपढमसमए वट्टमाणस्स सेससंगहकिट्टीणं पि तत्तो प्पहुडि जाव विदियट्ठिदिचरिमसमयो त्ति संपुण्णट्ठवस्समेत्तट्ठिदिसंतकम्मसिद्धीए णिप्पडिबंधमुवलंभादो। ण च णिसेगसुण्णाणमंतरट्ठिदीणमेत्थ ट्ठिदित्तासंभवो, कालपहाणत्तावलंबणे तासिं पि तदंतब्भावदंसणादो।

---

* यदि क्रोधसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़कर कृष्टियोंका वेदन करता है तब प्रथम समयमें वेदन करनेवाले उसके मोहनीय कर्मका स्थिति सत्कर्म आठ वर्षप्रमाण होता है।

§ २५४. क्रोधके उदयसे जो क्षपकश्रेणि पर आरोहण करता है प्रथम समयमें कृष्टियोंका वेदन करनेवाले उस जीवके विद्यमान मोहनीयकर्मके स्थितिसत्कर्मका प्रमाण आठ वर्षमात्र होता है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। यह कालका निर्देश चारों ही संज्वलनोंसम्बन्धी सभी संग्रहकृष्टियोंकी प्रथम और द्वितीय स्थितिको मिलाकर आठ वर्षप्रमाण होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

शंका—क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका यह कालनिर्देश भले ही होवे, क्योंकि वेद्यमान उसकी प्रथम स्थिति सम्भव होनेसे प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थितिके समूहसे आरम्भ किये गये स्थितिसत्कर्मकी वहाँपर तत्प्रमाण स्थिति उपलब्ध होती है, शेष संग्रह कृष्टियोंकी यह स्थिति नहीं हो सकती, क्योंकि उनकी प्रथम स्थिति सम्भव नहीं होनेसे अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्ष प्रमाण द्वितीय स्थितिके ही ग्रहण करनेपर उनकी सम्पूर्ण आठ वर्षप्रमाणमात्र स्थितिसत्कर्मका प्रमाण नहीं उपलब्ध होता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि क्रोधसंज्वलनकी वेद्यमान प्रथम संग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थितिके प्रथम समयमें विद्यमान हुए जीवके शेष संग्रह कृष्टियोंकी भी उस समयसे लेकर द्वितीय स्थितिसत्कर्मके अन्तिम समयतक सम्पूर्ण आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मकी सिद्धि बिना बाधाके पाई जाती है। और निषेकोंसे शून्य अन्तर स्थितियोंका स्थितिपना यहाँपर असम्भव नहीं है, क्योंकि कालकी प्रधानताका अवलम्बन करनेपर निषेकोंसे शून्य अन्तर स्थितियोंका भी उस कालमें अन्तर्भाव देखा जाता है।

विशेषार्थ—ऐसा नियम है कि जिस समय जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उस समय उस संग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थिति अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है, शेष संग्रह कृष्टियोंकी प्रथम स्थिति नहीं होता। अतः यहाँ शंकाकारका यह कहना है कि जिस समय यह जीव क्रोध संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन प्रारम्भ करता है उस समय शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंकी प्रथम स्थिति न होनेसे उनका स्थितिसत्कर्म अन्तर्मुहूर्तकम आठ वर्षप्रमाण कहना चाहिए। इसका समाधान यह है कि यहाँपर कालप्रधान स्थितिसत्कर्मका निर्देश किया गया है, निषेकप्रधान स्थिति-

§ २५५. जदि वि सुत्ते दव्वट्ठियणयमस्सियूण 'मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं' इदि सामण्णणिद्देसो कदो तो वि चदुण्हं संजलणाणं संगहकिट्टीभेदेण पादेक्कं तिधाविभिण्णाणमेसो कालणिद्देसो जोजेयव्वो, सामण्णणिद्देसेण सव्वेसिमेव विसेसाणं संगहेविरोहादो। 'संगृहीताशेषविशेषलक्षणं सामान्यं' इति वचनात्।

*** माणेण उवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स ट्ठिदिसंतकम्मं चत्तारि वस्साणि।**

§ २५६. कोहेण उवट्ठिदो जम्हि उद्देसे कोहकिट्टिओ वेदेदि तम्हि उद्देसे माणोदयक्खवगो तिण्हं संजलणाणं किट्टीकारगो होदूण पुणो कोहोदयक्खवगो जम्हि उद्देसे माणकिट्टीओ वेदेदुमाढवेदि तम्हि चेव उद्देसे पढमसमयकिट्टीवेदगो होदि। तत्थ ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं तिण्हं संजलणाणं संपुण्णचत्तारिवस्समेत्तं होइ त्ति सुत्तत्थसंगहो।

*** मायाए उवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स वेवस्साणि मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं।**

सत्कर्मका निर्देश नहीं किया गया है, अतः द्वितीय स्थितिके कालमें अन्तर स्थितियोंका काल सम्मिलित हो जानेसे शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके स्थितिसत्कर्मका काल भी पूरा आठ वर्षप्रमाण बन जाता है। यहाँ यह शंका निषेकस्थितिको ध्यानमें रखकर की गई है। कारण कि प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन प्रारम्भ करते समय शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके अन्तरायामप्रमाण निषेक नहीं होते, इसलिए शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंकी आठ वर्षप्रमाण स्थितिमेंसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थिति कम हो जानी चाहिए। यह शंकाकारका कहना है, किन्तु सभी संग्रह कृष्टियोंके द्वितीय स्थितिसम्बन्धी जो उपरितन निषेक हैं वे कितने काल प्रमाण स्थितिको लिये हुए है इसका यदि विचार किया जाता है तो क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिके उदयके प्रथम समयमें वह उनका स्थितिकाल पूरे आठ वर्षप्रमाण प्राप्त होता है, कारण कि अन्तरायामका अन्तर्मुहूर्त काल उसमें सम्मिलित है ही। इसलिए यहाँ सभी संग्रह कृष्टियोंका काल पूरा आठ वर्षप्रमाण कहा है।

§ २५५. यद्यपि सूत्रमें द्रव्यार्थिकनयका आलम्बन लेकर 'मोहनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म' ऐसा सामान्य निर्देश किया है तो भी चार संज्वलनोंसम्बन्धी संग्रह कृष्टियोंके भेदसे प्रत्येक तीन भेदोंको प्राप्त हुई संग्रह कृष्टियोंका यह काल निर्देश योजित करना चाहिए, क्योंकि सामान्य निर्देश करनेसे सभी विशेषोंका संग्रह हो जाता है इसमें कोई विरोध नहीं है क्योंकि जिसमें अशेष विशेषोंका संग्रह होता है वह सामान्यका लक्षण है ऐसा वचन है।

*** मानसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए कृष्टिवेदक जीवके प्रथम समयमें मोहनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म चार वर्षप्रमाण होता है।**

§ २५६. क्रोधसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ जीव जिस स्थानपर क्रोधसम्बन्धी कृष्टियोंका वेदन करता है उस स्थानपर मानसंज्वलनके उदयवाला क्षपक जीव मानादि तीन संज्वलनोंकी कृष्टियोंको करनेवाला होकर पुनः क्रोधसंज्वलनके उदयवाला क्षपक जीव जिस स्थानपर मानसंज्वलनसम्बन्धी कृष्टियोंके वेदनका आरम्भ करता है उसी स्थानपर यह जीव प्रथम समयवर्ती मानकृष्टिका वेदक होता है। इस प्रकार वहाँपर तीनों संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्मका प्रमाण पूरा चार वर्षप्रमाण होता है।

*** मायासंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए प्रथम समयवर्ती कृष्टि वेदकके मोहनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म दो वर्षप्रमाण होता है।**

§ २५७. कोहेण उवट्ठिदो जम्हि उद्देसे माणकिट्टीओ वेदेदि तम्हि मायोदयक्खवगो दोण्हं संजलणाणं किट्टीकारगो होदूण पुणो कोधोदयक्खवगस्स मायावेदगपढमसमये चेव मायाकिट्टीओ ओकड्डियूण पढमसमयकिट्टीवेदगो होदि। तत्थ दोण्हं संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं संपुण्णदोवस्समेत्तं होइ त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ।

*** लोभेण उवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममेकं वस्सं।**

§ २५८. कोहेण उवट्ठिदो जम्हि उद्देसे मायाकिट्टीओ वेदेदि तम्हि उद्देसे लोभोदयक्खवगो लोभसंजलणस्स तिण्णि संगहकिट्टीओ कादूण पुणो कोहोदयक्खवगस्स लोभकिट्टीवेदगावत्थाए चेव लोभकिट्टीओ ओकड्डेमाणो पढमसमयकिट्टीवेदगभावेण परिणमइ।

---

§ २५७. क्रोध संज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ जीव जिस स्थानपर मानसंज्वलनकी कृष्टियोंका वेदन करता है उस स्थानपर मायासंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ जीव मायादि दो संज्वलनोंका कृष्टिकारक होकर पुनः क्रोधके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ क्षपक जीव मायासंज्वलनके वेदन करनेके प्रथम समयमें ही मायासंज्वलनसम्बन्धी कृष्टियोंका अपकर्षण करके प्रथम समयवर्ती मायाकृष्टिका वेदक होता है। वहाँपर दोनों संज्वलनोंके स्थितिसत्कर्मका प्रमाण पूरा दो वर्षमात्र होता है। यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

विशेषार्थ—क्रोध या मानसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ जीव जिस स्थानपर मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अपकर्षण करके उसका प्रथम समयमें वेदक होता है, मायासंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव भी उसी स्थानपर मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अपकर्षण करके उसका प्रथम समयमें वेदक होता है इस तथ्यको ध्यानमें रखकर ही चूर्णिसूत्रके साथ उसकी टीकाकी संगति बिठा लेनी चाहिए, क्योंकि चाहे क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़े, चाहे मानके उदयसे श्रेणिपर चढ़े और चाहे मायाके उदयसे श्रेणिपर चढ़े इन तीनोंके मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन एक ही कालमें प्राप्त होता है।

*** लोभसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदकके मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म एक वर्षप्रमाण होता है।**

§ २५८. क्रोधसंज्वलनके उदयसे श्रेणिपर आरूढ़ हुआ जीव जिस स्थानपर मायाकृष्टियोंका वेदन करता है उस स्थानपर लोभसंज्वलनके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव लोभसंज्वलनकी तीन संग्रह कृष्टियोंको करके पुनः क्रोधसंज्वलनके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव लोभसंज्वलनकी कृष्टियोंके वेदन करनेकी अवस्थामें ही लोभसंज्वलनसम्बन्धी कृष्टियोंका अपकर्षण करते हुए प्रथम समयमें कृष्टियोंके वेदकपनेसे परिणत होता है।

विशेषार्थ—कोई जीव क्रोधसंज्वलनके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है और कोई जीव मान, माया और लोभसंज्वलनमेंसे किसी एकके उदयसे श्रेणिपर आरोहण करता है। यहाँ यह बतलाया गया है कि कोई एक जीव क्रोधसंज्वलनके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा है और कोई दूसरा जीव लोभसंज्वलनके उदयसे श्रेणिपर चढ़ा है। उनमेंसे पहला जीव जिस स्थानपर मायासंज्वलनकी संग्रह कृष्टियोंका अपकर्षण करके उसका वेदन करते हुए लोभसंज्वलनकी तीन संग्रह कृष्टियोंका कारक होता है उसी स्थानपर लोभसंज्वलनसे श्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव लोभसंज्वलनकी तीन संग्रह कृष्टियोंका कारक होता है। और इस प्रकार भले ही यहाँपर क्रोधके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवकी मुख्यतासे कथन किया गया हो, फिर भी किसी भी कषायके उदयसे श्रेणिपर

§ २५९. तत्थ ट्ठिदिसंतकम्मपमाणमेदं सुत्तुवइट्ठमवहारेयव्वं, तदवत्थाए संपुण्णेगवस्समेत्त-ट्ठिदिसंतकम्मं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता। संपहि विदियभासगाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो तिस्से समुक्कित्तणट्ठमिदमाह—

* एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ २६०. सुगमं।

(१३४) जं किट्टिं वेदयदे जवमज्झं सांतरं दुसु ट्ठिदीसु।
पढमा जं गुणसेढी उत्तरसेढी य विदिया दु ॥१७७॥

§ २६१. एसा विदियभासगाहा किट्टीवेदगस्स पढमविदियट्ठिदीसु पदेसग्गस्स समवट्ठाण-मेदीए सेढीए होदि त्ति पदुप्पायणट्ठमागदा। ण च एवंविहो अत्थणिद्देसो मूलगाहाए णत्थि त्ति आसंकणिज्जं, किट्टीणं कालपरूवणावसरे तव्विसेसिदपदेसग्गस्स वि परूवणाए दोसाणुवलंभादो। संपहि एदिस्से विदियभासगाहाए अवयवत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—अवेदिज्जमाणाणं संगह-किट्टीणं विदियट्ठिदीए चेव एयगोवुच्छायारेण समवट्ठाणादो। तत्थ दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढि-परूवणा सुगमा। तदो जं किट्टिं वेदयदे तिस्से पढम-विदियट्ठिदिभेदसंभवादो तव्विसए पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कस्सामो त्ति जाणावणट्ठं 'जं किट्टिं वेदयदे' इदि पढमो सुत्तावयवो। तत्थ पदेसग्गस्स जवमज्झसरूवेण समवट्ठाणं होदि, णाण्णहा त्ति जाणावणट्ठं 'जवमज्झं'—इदि सुत्तस्स विदिया-

---

चढ़ा हुआ जीव क्यों न हो उन सबके लोभसंज्वलनकी संग्रह कृष्टियोंके वेदनका एक काल प्राप्त हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ २५९. वहाँपर स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका सूत्रमें कहे गयेके अनुसार इस प्रकार अवधारण करना चाहिए, क्योंकि उस अवस्थामें पूरे एक वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई। अब दूसरी भाष्यगाथा-की अर्थविभाषा करते हुए उसकी समुत्कीर्तना करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* यह दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना है।

§ २६०. यह सूत्र सुगम है।

(१३४) यह क्षपक जीव जिस कृष्टिका वेदन करता है उसका सान्तर यवमध्य सहित दोनों स्थितियोंमें अवस्थान होता है। उनमेंसे जो प्रथम स्थिति है वह गुणश्रेणिरूप है। परन्तु द्वितीय स्थिति उत्तरश्रेणि अर्थात् हीयमान श्रेणिरूप है।

§ २६१. कृष्टिवेदकके प्रथम और द्वितीय स्थितिमें प्रदेशपुंजका अवस्थान इस श्रेणिरूपसे होता है इस बातका कथन करनेके लिए यह दूसरी गाथा आयी है। और इस प्रकारके अर्थका निर्देश मूल गाथामें नहीं है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि कृष्टियोंके कालसम्बन्धी प्ररूपणाके अवसरपर कृष्टियोंके कालसे युक्त प्रदेशपुंजकी भी प्ररूपणा कर आये हैं, इसलिए उक्त कथनमें कोई दोष नहीं है। अब इस दूसरी भाष्यगाथाके अवयवोंके अर्थकी प्ररूपणा करेंगे। वह जैसे—अवेद्यमान संग्रह कृष्टियोंका द्वितीय स्थितिमें ही एक गोपुच्छाके आकारसे अवस्थान होता है। इसलिए उनके दृश्यमान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा सुगम है। इस कारण जिस कृष्टिका वेदन करता है उसकी प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थिति सम्भव होनेसे तद्विषयक प्रदेशपुंजकी श्रेणि-प्ररूपणा करेंगे इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'जं किट्टिं वेदयदे' मूल गाथासूत्रका यह प्रथम अवयव कहा है। उस कृष्टिके प्रदेशपुंजका यवमध्यरूपसे अवस्थान होता है, अन्य प्रकारसे नहीं इस बातका ज्ञान करानेके लिए उक्त मूल गाथासूत्रके 'जवमज्झं' इस दूसरे अवयवका निर्देश

वयवणिद्देसो। तं च जवमज्झं पढम-विदियट्ठिदीसु वट्टमाणमंतरट्ठिदीहिं अंतरिदत्तादो सांतरमिदि जाणावणट्ठं 'सांतरं दुसु ट्ठिदीसु' त्ति सुत्तस्स तदियावयवणिद्देसो। एदस्स भावत्थो—

§ २६२. पढमट्ठिदीए आदिमट्ठिदिम्हि पदेसग्गं थोवं होदूण पुणो जहाकममसंखेज्जगुणाए सेढीए जाव पढमट्ठिदिचरिमसमओ त्ति ताव वड्ढिदूण तदो अंतरमुल्लंघियूण विदियट्ठिदीए पढम-णिसेयम्मि असंखेज्जगुणवड्ढीए सइं वड्ढिदूण तत्तो परं सव्वत्थेव विसेसहाणीए गंतूण परिसमप्पदि त्ति एदेण कारणेण दोसु ट्ठिदिविसेसेसु पदेसग्गस्साणंतरमेदं जवमज्झं होदि, अंतरस्स उभयपेरंतेसु थूलं होदूण दोसु ट्ठिदिविसेसेसु जहाकमेण पदेसग्गस्स समयाविरोहेण परिहाणिदंसणादो त्ति।

§ २६३. संपहि एदस्सेव जवमज्झसण्णिवेसस्स फुडीकरणट्ठं गाहापच्छद्धणिद्देसो 'पढमा जं गुणसेढी' 'पढमाए' पढमट्ठिदी 'जं' जम्हा 'गुणसेढी' गुणसेढिसरूवा होदूण चरिमट्ठिदीए थूला जादा। 'उत्तरसेढी य विदिया दु' विदियट्ठिदीए जम्हा मूले थूला होदूण उत्तरसेढीए हीयमाणा गच्छदि, तम्हा दोण्हमेदेसिं ट्ठिदीणं चरिम-पढमट्ठिदीसु सांतरमेदं जवमज्झमवहारेयव्वमिदि वुत्तं होइ।

किया है। और वह यवमध्य प्रथम और द्वितीय स्थितिमें विद्यमान होकर अन्तर स्थितियोंसे अन्तरित होकर अन्तर सहित होता है, इसलिए उसके अन्तर सहितपनेका ज्ञान करानेके लिए 'सांतरं दुसु ट्ठिदीसु' इस प्रकार गाथासूत्रके इस तीसरे अवयवका निर्देश किया है। इसका भावार्थ इस प्रकार है—

§ २६२. प्रथम स्थितिकी सबसे पहली स्थितिमें प्रदेशपुंज सबसे थोड़ा होकर पुनः जो क्रम है उसके अनुसार असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्रथम स्थितिके अन्तिम समय तक बढ़कर, पश्चात् अन्तरका उल्लंघन करके द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें एक बार असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे बढ़कर तत्पश्चात् आगे सभी स्थितियोंमें विशेष हानिरूपसे जाकर समाप्त होता है। इस कारण दो स्थितिविशेषोंमें प्रदेशपुंजका अनन्तर कहा गया यह यवमध्य होता है, क्योंकि अन्तरके उभय पर्यन्त भागोंमें यवमध्य स्थूल होकर दोनों स्थितिविशेषोंमें क्रमानुसार प्रदेशपुंजकी आगमके अविरोधपूर्वक हानि देखी जाती है।

§ २६३. अब इसी यवमध्यकी रचनाको स्पष्ट करनेके लिए मूल गाथाके उत्तरार्धका निर्देश किया है—'पढमा जं गुणसेढी' इस सूत्रका अर्थ है 'पढमाए' का अर्थ है प्रथम स्थिति, 'जं' पदका अर्थ है जिसकी और 'गुणसेढी' पदका अर्थ है गुणश्रेणि अर्थात् प्रथम स्थिति गुणश्रेणि-स्वरूप होकर अन्तिम स्थितिमें स्थूल हो गयी है। 'उत्तरसेढी य विदिया दु' अर्थात् द्वितीय स्थिति यतः मूलमें स्थूल होकर आगे श्रेणिरूपसे हीयमान होकर जाती है, इस कारण इन दोनों स्थितियोंकी अन्तिम और प्रथम स्थितिके मध्य सान्तर होकर यह यवमध्य जान लेना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—यहाँपर कृष्टियोंके वेदनकालके समय जिस समय जिस कृष्टिका वेदन करता है उस समय उसका प्रदेशविन्यास किस प्रकारका दिखाई देता है। इसी तथ्यका यहाँ स्पष्टीकरण किया गया है। ऐसा नियम है कि जिस कृष्टिका वेदन करता है उसकी अन्तर सहित प्रथम और द्वितीय स्थिति होती है। प्रथम स्थिति उदयरूप निषेकसे लेकर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होती है। उसके बाद उस कृष्टिके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण निषेक अन्तररूप होते हैं। अर्थात् प्रथम स्थितिके अन्तर्मुहूर्त कालप्रमाण निषेकोंके ऊपर अन्तर्मुहूर्त कालप्रमाण निषेकोंका अभाव होता है। पुनः उसके बाद जितनी उस कृष्टिकी स्थिति हो वहाँ तक द्वितीय स्थितिके निषेक अवस्थित रहते हैं। यह तो स्थितिकी अपेक्षा विवक्षित कृष्टिके निषेकोंकी रचनाका क्रम है। अब विवक्षित कृष्टिके उदयके समय उस प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थितिमें स्थित प्रदेशपुंजकी रचना किस प्रकार दिखाई देती

§ २६४. संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमोदारइस्सामो—

* विहासा ।

§ २६५. सुगमं ।

* जहा ।

§ २६६. सुगमं ।

* जं किट्टिं वेदयदे तिस्से उदयट्ठिदीए पदेसग्गं थोवं । विदियाए ट्ठिदीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं । एवमसंखेज्जगुणं जाव पढमट्ठिदीए चरिमट्ठिदि त्ति ।

§ २६७. कुदो एवं चे ? पढमट्ठिदीए उदयादिगुणसेढीणिक्खेवं काढूण किट्टीओ वेदेमाणस्स तत्थ दिज्जमाण-दिस्समाणपदेसग्गस्स संखेज्जगुणकमेणावट्ठाणं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो ।

* तदो विदियट्ठिदीए जा आदिट्ठिदी तिस्से असंखेज्जगुणं ।

§ २६८. किं कारणं ? दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धेसु संखेज्जावलियाहिं खंडिदेसु तत्थेय-खंडमेत्तदव्वस्स विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिम्मि समुवलब्भमाणस्स पुव्विल्लगुणसेढिसीसयदव्वादो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियादो असंखेज्जगुणत्तसिद्धीए परिप्फुडमुवलंभादो ।

है इसे स्पष्ट करते हुए वह यवमध्यके समान दिखाई देती है यह स्पष्ट किया है । यव बीचमें स्थूल होकर दोनों ओर घटता हुआ होता है ठीक इसी प्रकार वेद्यमान कृष्टि भी प्रदेशपुंजकी अपेक्षा प्रतीत होती है । शेष स्पष्टीकरण मूलमें किया ही है ।

§ २६४. अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थका अवतार करेंगे—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ २६५. यह सूत्र सुगम है ।

* जैसे ।

§ २६६. यह सूत्र सुगम है ।

* जिस कृष्टिका वेदन करता है उसकी उदयस्थितिमें प्रदेशपुंज सबसे स्तोक होता है । उससे दूसरी स्थितिमें प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होता है । इस प्रकार प्रथम स्थितिसम्बन्धी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होने तक प्रदेशपुंज उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा होता है ।

§ २६७. शंका—ऐसा किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि प्रथम स्थितिमें उदयादि गुणश्रेणिका निक्षेप करके कृष्टियोंका वेदन करनेवाले जीवके उसमें दिये जानेवाले और दिखनेवाले प्रदेशपुंजके संख्यातगुणे अवस्थानको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है ।

* उससे द्वितीय स्थितिकी जो प्रथम स्थिति है उसमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अवस्थान होता है ।

§ २६८. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंके संख्यात आवलियोंसे भाजित करनेपर वहाँ एक भागप्रमाण लब्ध हुए द्रव्यका द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमें अवस्थान होता है, इसलिए पूर्वके गुणश्रेणिशीर्षसम्बन्धी द्रव्यसे यह पल्योपमके असंख्यातवें भागके प्रतिभागरूप असंख्यागुणा सिद्ध होकर स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है ।

* तदो सव्वत्थ विसेसहीणं।

§ २६९. तदो विदियट्ठिदियपढमणिसेगादो उवरि सव्वत्थ जाव विदियट्ठिदिचरिमणिसेगो त्ति ताव एगेगगोवुच्छविसेसहाणीए दिस्समाणपदेसग्गस्सावट्ठाणं होइ, णाण्णहा त्ति भणिदं होदि। एवं चेव दिज्जमाणपदेसग्गस्स वि सेढिपरूवणा कायव्वा। णवरि विदियट्ठिदीए विसेसहीणं० पदेसग्गं णिसिंचमाणो गच्छदि जाव समयाहियावलिय अपत्ता विदियट्ठिदीए अग्गट्ठिदि त्ति। तत्तो परमइच्छावणावलियब्भंतरे दिज्जमाणपदेसग्गस्स संभवाणुवलंभादो।

§ २७०. जदो एवं पढमविदियट्ठिदीसु पदेसग्गस्स कमवड्ढिहाणीहिं अवट्ठाणणियमो तदो पढमविदियट्ठिदिविसए जवमज्झमेदं जादमिदि जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* जवमज्झं पढमट्ठिदीए चरिमट्ठिदीए च विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदीए च।

---

* उस द्वितीय स्थितिकी प्रथम स्थितिसम्बन्धी द्रव्यसे आगे सर्वत्र प्रदेशपुंज उत्तरोत्तर विशेषहीन होता है।

§ २६९. 'तदो' अर्थात् द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकसे ऊपर सर्वत्र द्वितीय स्थितिके अन्तिम निषेकके प्राप्त होने तक एक-एक गोपुच्छाविशेषकी हानि होनेसे उसरूपमें दिखनेवाले प्रदेशपुंज-का अवस्थान होता है, अन्य प्रकारसे नहीं होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तथा इसी प्रकार दीयमान प्रदेशपुंजकी भी श्रेणिप्ररूपणा करनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि द्वितीय स्थितिमें विशेष हीन प्रदेशपुंजका सिंचन करता हुआ, द्वितीय स्थितिकी अग्र स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण निषेक शेष रहनेके पूर्व तक सिंचन करता है क्योंकि उससे आगे अतिस्थापनावलिके भीतर दीयमान प्रदेशपुंजकी सम्भावना नहीं पायी जाती।

विशेषार्थ—यह प्रत्येक कृष्टिका वेदन करते समय उसमें दीयमान और दृश्यमान प्रदेशपुंज-की अपेक्षा किस प्रकार यवमध्य बनता है इसे स्पष्ट किया गया है। वेद्यमान कृष्टिकी द्वितीय स्थितिमें स्थित जो अन्तिम निषेक है उसमेंसे प्रत्येक समयमें अपकर्षणके योग्य प्रदेशपुंजकी अपेक्षा द्वितीय स्थितिमेंसे एक समय कम किया गया है और उसके नीचे एक आवलिप्रमाण निषेकोंको अतिस्थापनावलिमें रखा गया है। इस प्रकार एक स्थितिकाण्डकके पतन होनेतक अन्तिम निषेकमेंसे प्रतिसमय विवक्षित प्रदेशपुंजका अपकर्षण होनेपर उसका उदयनिषेकसे लेकर प्रथम और द्वितीय स्थितिमें उपरितन एक निषेक अधिक एक आवलिप्रमाण निषेकोंको छोड़कर अन्तरके अतिरिक्त शेष सत्त्वस्थितिके सब निषेकोंमें यथाविधि निक्षेप होता है। यह अन्तिम निषेकमेंसे प्रदेशपुंजके अपकर्षणकी अपेक्षा कथन किया है। इसी प्रकार उपान्त्य आदि निषेकोंकी अपेक्षा भी अपकर्षणके नियमको ध्यानमें रखकर कथन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि विवक्षित जिस निषेकमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण इष्ट हो उसे और उससे नीचे एक आवलिप्रमाण निषेकोंको छोड़कर शेष सत्त्वस्थितिमें अपकर्षित प्रदेशपुंजका निक्षेप होता है ऐसा यहाँ समझना चाहिए।

§ २७०. यतः इस प्रकार प्रथम और द्वितीय स्थितिमें प्रदेशपुंजके क्रमवृद्धि और क्रमहानि-रूपसे अवस्थानका नियम है, अतः प्रथम और द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपुंजमें यह यवमध्य घटित हो जाता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* प्रथम स्थितिकी अन्तिम स्थितिमें और द्वितीय स्थितिकी आदि स्थितिमें यह यवमध्य होता है।

§ २७१. किं कारणं ? एदेसु दोसु ट्ठिदिविसेसेसु हेट्ठदो उवरिदो च पेक्खमाणे पदेसग्गस्स थूलभावेणावट्ठाणदंसणादो। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवसंहारवक्कमाह—

* एदं तं जवमज्झं सांतरं दुसु ट्ठिदीसु।

§ २७२. गाहासुत्तम्मि सांतरं दुसु ट्ठिदीसु त्ति जं परूविदं जवमज्झं तमेदमवहारेयव्वमिदि वुत्तं होइ।

§ २७३. एवमेत्तिएण पबंधेण विदियभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि तदियभासगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं कुणमाणो तदवसरकरणट्ठमुवरिमसुत्तमाह—

* एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ २७४. सुगमं।

(१३५) विदियट्ठिदिआदिपदा सुद्धं पुण होदि उत्तरपदं तु।
सेसो असंखेज्जदिमो भागो तिस्से पदेसग्गे ॥१७८॥

§ २७५. एसा तदियभासगाहा विदियट्ठिदीए पदेसग्गस्स उत्तरसेढीए चिट्ठमाणस्स परम्परोवणिधापरूवणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'विदियट्ठिदिआदिपदा' एवं भणिदे विदियट्ठिदिपढम-

---

§ २७१. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि इन दोनों स्थितिविशेषोंको क्रमशः नीचेसे और ऊपरसे देखनेपर प्रदेशपुंजका स्थूलरूपसे अवस्थान देखा जाता है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए उपसंहार-वाक्यको कहते हैं—

* वह यह यवमध्य दोनों स्थितियोंमें सान्तर होता है।

§ २७२. गाथासूत्रमें जो यवमध्य दोनों स्थितियोंमें सान्तर कहा है वह यह है ऐसा अवधारण करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—अन्तरके पूर्व प्रथम स्थितिमें उदयादि गुणश्रेणिरूप निक्षेप होनेसे उसका अन्तिम निषेक नीचसे देखनेपर प्रदेशपुंजकी अपेक्षा स्थूल होता है। इसी प्रकार अन्तरके ऊपर द्वितीय स्थितिमें प्रथम निषेक ऊपरसे देखनेपर वह भी प्रदेशपुंजकी अपेक्षा स्थूल होता है। इस प्रकार दोनों ओरसे निषेक सन्निवेशके देखनेपर वह मध्यमें यवके मध्य भागके समान स्थूल दिखाई देता है, इसीलिए इसे यवमध्य शब्द द्वारा अभिहित किया गया है।

§ २७३. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा द्वितीय भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा करके अब तृतीय भाष्यगाथाकी अवसरप्राप्त अर्थविभाषा करते हुए उसका अवसर करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अब इससे आगे तीसरे भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ २७४. यह सूत्र सुगम है।

(१३५) द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमेंसे अन्तिम निषेकको घटावें। ऐसा करनेपर द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकसम्बन्धी प्रदेशपुंजमें शुद्ध शेष असंख्यातवें भागप्रमाण होता है ॥१७८॥

§ २७५. यह तीसरी भाष्यगाथा द्वितीय स्थितिमें स्थित उत्तर श्रेणीसम्बन्धी प्रदेशपुंजकी परम्परोपनिधाकी प्ररूपणाके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'विदियट्ठिदिआदिपदा' ऐसा कहने-

णिसेगादो त्ति वुत्तं होदि । पडियतलोवं कादूण सुत्तें विदियट्ठिदिआदिपदा त्ति णिद्दिट्ठत्तादो । 'सुद्धं पुण उत्तरपदं होदि तु' तस्स उत्तरपदं णाम विदियट्ठिदिचरिमणिसेगपदेसग्गमिदि घेत्तव्वं । तं सुद्धं सोधिदं कायव्वं । एवं सोहिदे 'सेसो असंखेज्जदिमो भागो' सुद्धसेसो 'तिस्से' विदियट्ठिदिपढमट्ठिदीए पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागो होदि । विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिपदेसग्गमसंखेज्जे भागे कादूण तत्थेयखंडमेत्तमेव सुद्धसेसदव्वस्स पमाणमिदि वुत्तं होइ । कुदो एदमिदि चे ओइण्णद्धाणमेत्ताणं चेव गोवुच्छविसेसाणमेत्थ समहियत्तदंसणादो । एवमेसा परंपरोवणिधा विदियट्ठिदिपदेसग्गविसये परूविदा होदि । अणंतरोवणिधा वि एदेणेव सूचिदा त्ति घेत्तव्वं । संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

* विहासा ।

§ २७६. सुगमं ।

* विदियाए ट्ठिदीए उक्कस्सियाए पदेसग्गं तिस्से चेव जहण्णियादो ट्ठिदीदो सुद्धं सुद्धसेसं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियं ।

§ २७७. एत्थ सुद्धसेसं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियं इदि वुत्ते संखेज्जावलियोवट्टिदणिसेगभागहारेण विदियट्ठिदिपढमणिसेगे खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तं सुद्धसेसदव्वमिदि घेत्तव्वं । एदस्स भावत्थो—विदियट्ठिदिआयामो जेण वासपुधत्तपमाणो तेण तत्थतणचरिमणिसेगपदेसग्गादो

पर द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमेंसे यह उक्त कथनका तात्पर्य है । 'पडियत' अर्थात् विभक्तिका लोप करके गाथासूत्रमें 'विदियट्ठिदिआदिपदा' इस प्रकार निर्देश किया है । 'सुद्धं पुण उत्तरपदं होदि' ऐसा कहनेपर उस द्वितीय स्थितिका 'उत्तरपद' अर्थात् द्वितीय स्थितिके अन्तिम निषेकका प्रदेशपुंज ग्रहण करना चाहिए उसे शुद्ध अर्थात् शोधित करना चाहिए । इस प्रकार शोधित करनेपर 'सेसो असंखेज्जदिमो भागो' शुद्ध शेष 'तिस्से' द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रथम स्थितिके प्रदेशपुंजका असंख्यातवां भाग होता है । द्वितीय स्थितिसम्बन्धी आदि स्थितिके असंख्यात भाग करनेपर उनमेंसे एक भागमात्र ही शुद्ध शेष द्रव्यका प्रमाण होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—यह किस कारणसे प्राप्त होता है ?

समाधान—क्योंकि गोपुच्छविशेषोंका यहाँपर अधिकपना देखा जाता है । इस प्रकार यह परम्परोपनिधा द्वितीय स्थितिके प्रदेशपुंजके विषयमें कही गयी है । अनन्तरोपनिधा भी इसीसे सूचित की गयी है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ २७६. यह सूत्र सुगम है ।

* द्वितीय स्थितिसम्बन्धी उत्कृष्ट स्थितिके प्रदेशपुंजको उसीकी जघन्य स्थितिमेंसे घटावे । घटानेपर शुद्ध शेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी होता है ।

§ २७७. यहाँपर 'सुद्धसेसं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियं' ऐसा कहनेपर संख्यात आवलियोंसे भाजित निषेक भागहारके द्वारा द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रथम निषेकके भाजित करनेपर वहाँ एक भागप्रमाण शुद्ध शेष द्रव्य होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । इसका भावार्थ—द्वितीय स्थितिका आयाम यतः वर्षपृथक्त्वप्रमाण है, इसलिए उसके अन्तिम निषेकसम्बन्धी

पढमणिसेगपदेसपिंडो संखेज्जगुणो असंखेज्जगुणो अण्णारिसो वा अहोदूण णियमा असंखेज्जभागब्भहिओ चेव होदि, उवरीदो पहुडि अणंतरोवणिधाए एगेगगोवुच्छविसेसमेत्तेण वड्ढिदूणागदपदेसग्गस्स णिरुद्धट्ठिदीए पलिदोवमासंखेज्जदिभागपडिभागियत्तं मोत्तूण पयारंतरसंभवाणुवलंभादो त्ति ।

§ २७८. एवं तदियभासगाहाए विहासणं समाणिय संपहि जहावसरपत्ताए चउत्थभासगाहाए अवयारं कुणमाणो इदमाह—

*** एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ २७९. सुगमं।

*** तं जहा ।**

§ २८०. सुगमं।

(१३६) उदयादि या ट्ठिदीओ णिरंतरं तासु होइ गुणसेढी ।
उदयादिपदेसग्गं गुणेण गणणादियंतेण ॥१७९॥

प्रदेशपुंजसे प्रथम निषेकसम्बन्धी प्रदेशपिण्ड संख्यातगुणा, असंख्यातगुणा या दूसरे रूप न होकर नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक ही होता है, क्योंकि ऊपरसे लेकर अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा एक-एक गोपुच्छविशेष मात्र बढ़कर प्राप्त हुआ प्रदेशपुंज विवक्षित स्थितिमें पल्योपमके असंख्यातवें भागके प्रतिभागीपनेको छोड़कर वहाँ अन्य प्रकार सम्भव नहीं है ।

विशेषार्थ—द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें जितना प्रदेशपुंज प्राप्त होता है उससे उसके दूसरे निषेकमें एक विशेषमात्र द्रव्य कम होता है। इसी प्रकार आगे-आगे प्रत्येक निषेकमें एक-एक विशेषमात्र द्रव्य कम होता जाता है। यहाँ द्वितीय स्थितिका स्थितिसत्कर्म वर्ष पृथक्त्वप्रमाण है। उसमें एक आवलिप्रमाण कालका भाग देनेपर संख्यात आवलियाँ प्राप्त होती हैं। इसीलिए यहाँपर संख्यात आवलियोंसे निषेक भागहारको भाजित करनेपर प्राप्त हुए लब्ध एक भागसे द्वितीय स्थितिके प्रदेशपुंजको भाजित करनेपर जो एक भाग लब्ध आया उतना द्वितीय स्थितिके अन्तिम निषेकके प्रदेशपुंजसे उसीके प्रथम निषेकके प्रदेशपुंजमें अधिक द्रव्यका प्रमाण होता है। इस प्रकार परम्परोपनिधाकी अपेक्षा देखनेपर द्वितीय स्थितिके अन्तिम निषेकके द्रव्यसे उसीके प्रथम निषेकका द्रव्य असंख्यातवाँ भाग अधिक होता है यह सिद्ध हुआ।

§ २७८. इस प्रकार तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त करके अब यथावसरप्राप्त चौथी भाष्यगाथाका अवतार करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** यह चौथी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना है।**

§ २७९. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ २८०. यह सूत्र सुगम है।

(१३६) उदयसे लेकर प्रथम स्थितिसम्बन्धी जितनी स्थितियाँ हैं उनमें निरन्तररूपसे गुणश्रेणि होती है। उसकी अपेक्षा एक-एक स्थितिमें उदयसे लेकर असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्रदेशपुंज दिया जाता है ॥१७९॥

§ २८१. एसा चउत्थभासगाहा पुव्वुत्तजवमज्झसण्णिवेसस्सेव फुडीकरणट्ठं पढमट्ठिदीए पदेसग्गस्सावट्ठाणमेदेण सरूवेण होदि त्ति जाणावणणिमित्तमोइण्णा, परिप्फुडमेवेत्थ तहाविहत्थस्स पडिबद्धत्तदंसणादो। एत्थ पुव्वद्धे पदसंबंधो एवं कायव्वो—'उदयादि०' उदयप्पहुडि जाओ ट्ठिदीओ पढमट्ठिदिसंबंधिणीओ तासु णिरंतरसरूवेण गुणसेढी होइ त्ति। एदस्स चेव फुडीकरणट्ठं गाहापच्छद्धो समोइण्णो। तत्थ पदसंबंधो—उदयप्पहुडि जं पदेसग्गं विज्जदि दिस्सदि वा तं गणणादियंतेण गुणगारेण दट्ठव्वं, असंखेज्जगुणसेढीए तत्थ पदेसग्गस्स समवट्ठाणमवहारियव्वमिदि वुत्तं होदि। णेदमेत्थासंकणिज्जं, 'पढमा जं गुणसेढी' इदि भणंतेण विदियभासगाहाए चेव एसो अत्थविसेसो जाणाविदो, तदो किमेदेण पुणरुत्तगाहाणिद्देसेणेत्ति ? कुदो ? तत्थ सूचणामेत्तेण णिद्दिट्ठस्स गुणसेढिविण्णासस्स विसेसियूण परूवणे पुणरुत्तदोसाणवयारादो। संपहि एदिस्से भासगाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* विहासा।

§ २८२. सुगमं।

* उदयट्ठिदिपदेसग्गं थोवं।

§ २८३. सुगमं।

* विदियाए ट्ठिदीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं।

§ २८४. को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

---

§ २८१. यह चौथी भाष्यगाथा पूर्वोक्त यवमध्यके सन्निवेशको ही स्पष्ट करनेके लिए प्रथम स्थितिमें प्रदेशपुंजका अवस्थान इस क्रमसे होता है, इस बातका ज्ञान करानेके लिए अवतीर्ण हुई है, क्योंकि इसमें सुस्पष्टरूपसे ही उस प्रकारका अर्थ प्रतिबद्ध देखा जाता है। प्रकृतमें पूर्वार्धका पदसम्बन्ध इस प्रकार करना चाहिए—'उदयादि०' उदयसे लेकर प्रथम स्थितिसम्बन्धी जो स्थितियाँ हैं उनमें निरन्तररूपसे गुणश्रेणि होती है। इस प्रकार इसी अर्थके स्पष्ट करनेके लिए गाथाका उत्तरार्ध अवतीर्ण हुआ है। प्रकृतमें पदसम्बन्ध इस प्रकार है—उदयसे लेकर जो प्रदेशपुंज दिया जाता है या दिखाई देता है वह गुणकारकी अपेक्षा असंख्यातगुणित जानना चाहिए। वहाँ असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे प्रदेशपुंजका अवस्थान अवधारित करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए कि 'पढमा जं गुणसेढी' ऐसा कथन करते हुए कषायप्राभृतकारने दूसरी भाष्यगाथा द्वारा ही इस अर्थविशेषका ज्ञान करा दिया है, इसलिए पुनरुक्त इस गाथाके निर्देश करनेसे क्या प्रयोजन है, क्योंकि उक्त दूसरी भाष्यगाथामें सूचनामात्ररूपसे निर्दिष्ट किये गये गुणश्रेणिनिर्देशका इस भाष्यगाथामें विशेषरूपसे प्ररूपणा करनेपर पुनरुक्त दोषका अवतार नहीं होता। अब इस भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ २८२. यह सूत्र सुगम है।

* उदयस्थितिमें प्रदेशपुंज थोड़ा है।

§ २८३. यह सूत्र सुगम है।

* उससे दूसरी स्थितिमें प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा है।

§ २८४. शंका—गुणकार क्या है ?

* एवं सव्विस्से पढमट्ठिदीए ।

§ २८५. किं कारणं ? उदयादिगुणसेढिसरूवेणावट्ठिदाणं पढमट्ठिदिणिसेयाणमसंखेज्जगुणत्तं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो । एवमेदिस्से भासगाहाए विहासणं समाणिय संपहि पंचमभासगाहाए समुक्कित्तणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* एत्तो पंचमीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ २८६. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ २८७. सुगमं ।

(१२७) उदयादिसु ट्ठिदीसु य जं कम्मं णियमसा दु तं हरस्सं ।
पविसदि ट्ठिदिक्खएण दु गुणेण गणणादियंतेण ॥१९०॥

§ २८८. एसा पंचमी भासगाहा पढमट्ठिदिपदेसग्गमाहारं कादूण तत्थ समये समये वेदिज्जमाणपदेसग्गस्स थोवबहुत्तपरूवणट्ठमोइण्णा, ण च एसो अत्थो पुव्विल्लभासगाहाए चेव णिरत्थयत्तमासंकणिज्जं, तत्थ पुव्वमपरूविदउदयविसेसणेण विसेसियूण समयं पडि उदयं पविसमाणपदेसग्गस्स थोवबहुत्तपरूवणे एदिस्से गाहाए पडिबद्धत्तदंसणादो । संपहि एदिस्से अवयवत्थपरूवणं

समाधान—पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग गुणकार है ।

* इस प्रकार सम्पूर्ण प्रथम स्थितिमें जानना चाहिए ।

§ २८५. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि उदयादि गुणश्रेणिरूपसे अवस्थित प्रथम स्थितिसम्बन्धी निषेकोंमें असंख्यातगुणेपनको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है ।

इस प्रकार इस भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त करके अब पाँचवीं भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अब आगे पाँचवीं भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ २८६ यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ २८७. यह सूत्र सुगम है ।

(१२७) उदयसे लेकर प्रथम स्थितिकी अवान्तर स्थितियोंसे उदय स्थितिमें जो कर्मद्रव्य उपलब्ध होता है वह नियमसे अल्पतर होता है। तथा उदय स्थितिके क्षय होनेसे उपरिम अनन्तर स्थितिका असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे कर्मद्रव्य उदयमें प्रवेश करता है ॥१८०॥

§ २८८. यह पाँचवीं भाष्यगाथा प्रथम स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपुंजको आधार करके वहाँ समय-समयमें वेद्यमान प्रदेशपुंजके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । और यह अर्थ पिछली भाष्यगाथामें ही कह आये हैं, इसलिए निरर्थक है सो ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उस भाष्यगाथामें पहले नहीं कहे गये उदयविशेषण सहित प्रत्येक समयमें उदयमें प्रवेश करनेवाले प्रदेशपुंजके अल्पबहुत्वके प्ररूपण करनेमें यह गाथा प्रतिबद्ध देखी जाती है ।

कस्सामो। तं जहा—'उदयादिसु ट्ठिदीसु य०' एवं भणिदे उदयप्पहुडि जहाकममवट्ठिदासु पढमट्ठिदीए अवयवट्ठिदीसु जं दव्वमुदयट्ठिदीए एण्हिमुवलब्भइ तं 'णियमसा दु' णिच्छयेणेव हरस्सं थोवयरं होदि, वट्टमाणसमए जं पदेसग्गमुदिण्णं तं सव्वत्थोवमिदि वुत्तं होदि। 'पविसदि ट्ठिदिक्खएण दु' एवं भणिदे उदयट्ठिदीदो उवरिमाणंतरट्ठिदीए जं पदेसग्गं से काले ठिदिक्खएण उदयं पविसदि तं 'गुणेण गणणादियंतेण' असंखेज्जगुणसरूवेण पविसदि त्ति भणिदं होदि, असंखेज्जगुणकमेणा-वट्ठिदगुणसेढिगोवुच्छाओ वेदेमाणस्स पमाणंतरासंभवादो। एवंविहो च एदिस्से गाहाए अवयवत्थ-परामरसो सुगमो त्ति समुदायत्थमेव विहासेमाणो विहासागंथमुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ २८९. सुगमं।

* तं जहा।

§ २९०. सुगमं।

* जं अस्सि समए उदिण्णं पदेसग्गं तं थोवं।

§ २९१. वट्टमाणसमए उदयट्ठिदिम्मि जं दिस्सदि पदेसग्गं तं सवत्थोवमिदि वुत्तं होदि।

* से काले ट्ठिदिक्खएण उदयं पविसदि पदेसग्गं तमसंखेज्जगुणं।

अब इस भाष्यगाथाके अवयवोंके अर्थका प्ररूपण करेंगे। वह जैसे—'उदयादिसु ट्ठिदीसु य०' ऐसा कहनेपर उदयसे लेकर प्रथम स्थितिसम्बन्धी क्रमसे अवस्थित अवयव स्थितियोंमेंसे जो द्रव्य उदयस्थितिमें इस समय उपलब्ध होता है वह 'णियमसा दु' निश्चयसे ही 'हरस्सं' स्तोकतर होता है। वर्तमान समयमें जो द्रव्य उदीर्ण होता है वह सबसे थोड़ा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'पविसदि ट्ठिदिक्खएण दु' ऐसा कहनेपर उदयस्थितिसे उपरिम अनन्तर स्थितिका जो प्रदेशपुंज तदनन्तर समयमें स्थितिक्षयसे उदयमें प्रवेश करता है वह 'गुणेण गणणादियंतेण' असंख्यात गुणित-स्वरूपसे प्रवेश करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि असंख्यातगुणित क्रमसे अवस्थित गुणश्रेणि गोपुच्छाओंका वेदन करनेवालेके अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। और इस भाष्यगाथाका इस प्रकारका अवयवार्थपरामर्श सुगम है, इसलिए समुदायार्थकी ही विभाषा करते हुए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ २८९. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ २९०. यह सूत्र सुगम है।

* इस समय जो प्रदेशपुंज उदीर्ण होता है वह सबसे स्तोक है।

§ २९१. वर्तमान समयमें जो प्रदेशपुंज उदयमें दिखाई देता है वह सबसे स्तोक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* अगले समयमें स्थितिक्षयसे जो प्रदेशपुंज उदयमें प्रवेश करता है वह असंख्यातगुणा होता है।

§ २९२. तदणंतरसमए ट्ठिदिक्खएण उदयं पविसदि जं पदेसग्गं तं पुव्विल्लादो असंखेज्जगुणमिदि वुत्तं होदि। एत्थ गुणगारो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। एवं किट्टीवेदगपढमसमए एदमप्पाबहुअं परूविदमुवरिमसमयेसु वि जोजेयव्वमिदि जाणावणट्ठमिदमाह—

* एवं सव्वत्थ किट्टीवेदगद्धाए।

§ २९३. सव्वत्थेव उदयं पविसमाणपदेसग्गस्स थोवबहुत्तमेवं चेव णेदव्वं, विसेसाभावादो त्ति वुत्तं होइ।

§ २९४. एवं पंचमीए भासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि छट्ठभासगाहाए अवयारकरणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

* एत्तो छट्ठीए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ २९५. सुगमं।

* तं जहा।

---

§ २९२. तदनन्तर समयमें स्थितिक्षयसे जो प्रदेशपुंज उदयमें प्रवेश करता है वह पूर्वसमयसम्बन्धी प्रदेशपुंजसे असंख्यातगुणा होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहांपर गुणकारका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें यह अल्पबहुत्व कहा है। इसी प्रकार अगले समयोंमें भी इसकी योजना करनी चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिए।

§ २९३. सर्वत्र ही उदयमें प्रवेश करनेवाले प्रदेशपुंजका अल्पबहुत्व इसी प्रकार जानना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई भेद नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—यहां गुणश्रेणिके द्वारा प्रतिसमय कृष्टिसम्बन्धी कितने कर्मपरमाणु द्वितीय स्थितिसे अपकर्षित होकर तथा उदयमें प्रवेश करके निर्जरित होते हैं इस तथ्यका निर्देश करते हुए बतलाया गया है कि क्रोधसंज्वलनकी प्रथम कृष्टिके जितने कर्मपरमाणु उदीर्ण होकर निर्जरित होते हैं, उनसे दूसरे समयमें असंख्यातगुणे कर्मपरमाणुओंकी निर्जरा होती है। इसी प्रकार सर्वत्र इसी विधिसे सभी कृष्टियोंकी गुणश्रेणिनिर्जरा जान लेना चाहिए। यहां जो गुणकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है सो उसका आशय यह है कि प्रथम समयमें उदयमें प्रवेश करके जितने कर्मपुंजकी निर्जरा होती है उसे पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित करनेपर जो कर्मपुंज प्राप्त हो उतना कर्मपुंज दूसरे समयमें उदयमें प्रवेश करके निर्जरित होता है। इस प्रकारकी निर्जराका निर्देश जहां-जहां किया है उसका ही नाम गुणश्रेणिनिर्जरा है।

§ २९४. इस प्रकार पांचवीं भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब छठी भाष्यगाथाका अवतार करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* इससे आगे छठी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ २९५. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ २९६. सुगमं।

(१२८) वेदगकालो किट्टीय पच्छिमाए दु णियमसा हस्सो।
संखेज्जदिभागेण दु सेसग्गाणं कमेणधिगो ॥१८१॥

§ २९७. एसा छट्ठी भासगाहा 'का च कालेणेत्ति' इममेव सुत्तावयवमस्सियूण बारसण्हं संगहकिट्टीणं वेदगकालविसयप्पाबहुअपरूवणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'वेदगकालो किट्टीय पच्छिमाए दु०' एवं भणिदे पच्छिमकिट्टी णाम लोभस्स तदियसंगहकिट्टी सुहुमसांपराइयकिट्टीसरूवमावण्णा घेत्तव्वा, सव्वपच्छा वेदिज्जमाणत्तादो। तिस्से वेदगकालो त्ति वुत्ते जेत्तियं कालं तिस्से वेदगो होदूणच्छइ सो कालो घेत्तव्वो। सो च सहुमसांपराइयद्धामेत्तो होदूण 'णियमसा' णिच्छएणेव 'हस्सो' थोवयरो होदि त्ति वुत्तं होइ।

§ २९८ 'संखेज्जदिभागेण दु०' एवं भणिदे सेसिगाणं संगहकिट्टीणं वेदगकालो जहाकममेव पच्छाणुपुव्वीए संखेज्जदिभागेणब्भहिओ द दट्ठव्वो, हेट्ठिमकिट्टीवेदगद्धाणमुवरिमकिट्टीवेदगद्धाहिंतो संखेज्जावलियमेत्तेणब्भहियत्तदंसणादो। एत्थ गाहापुव्वद्धे 'तु' सद्दणिद्देसो पादपूरणट्ठे दट्ठव्वो। गाहापच्छद्धे च ''तु' सद्दो अवहारणट्ठे वट्टदे, संखेज्जदिभागेणेव विसेसाहिओ णाण्णहा त्ति अवहारणफलत्तादो। अथवा समुच्चयट्ठे दट्ठव्वो. तेण किट्टीकरणद्धा अस्सकण्णकरणद्धा छण्णोकसायक्खवणद्धा इत्थीवेदक्खवणद्धा णवुंसयवेदक्खवणद्धा अंतरकरणद्धा अट्ठकसायक्खवणद्धा त्ति एदासिं पि अद्धाणमेत्थ गहणं कायव्वं। संपहि एदासिमद्धाणमेसा संदिट्ठी—

---

§ २९६. यह सूत्र सुगम है।

(१२८) अन्तिम कृष्टिका वेदक काल नियमसे सबसे अल्प है। तथा शेष कृष्टियोंका क्रमसे उत्तरोत्तर संख्यातवाँ भाग अधिक है ॥१८१॥

§ २९७. यह छठी भाष्यगाथा 'का च कालेण' सूत्रके इसी अवयवका आलम्बन लेकर बारह संग्रह कृष्टियोंके वेदक कालविषयक अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'वेदककालो किट्टीय पच्छिमाए दु०' ऐसा कहनेपर यहाँ अन्तिम कृष्टिसे सूक्ष्मसाम्पराय कृष्टिस्वरूपको प्राप्त हुई लोभसंज्वलनकी तीसरी संग्रहकृष्टि ग्रहण करनी चाहिए, क्योंकि उसका सबसे अन्तमें वेदन होता है। उसका वेदककाल ऐसा कहनेपर जितने काल तक उसका वेदक अवस्थित रहता है उस कालको ग्रहण करना चाहिए। और वह सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके कालप्रमाण होकर 'णियमसा' निश्चयसे ही 'हस्सो' अल्पतर होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ २९८. 'संखेज्जदिभागेण दु०' ऐसा कहनेपर शेष संग्रह कृष्टियोंका वेदककाल यथाक्रम ही उत्तरोत्तर पश्चादानुपूर्वीसे संख्यातवाँ भाग अधिक जानना चाहिए, क्योंकि अधस्तन कृष्टियोंका वेदककाल, उपरिम कृष्टियोंके वेदककालसे संख्यात आवलि अधिक देखा जाता है, यहाँ उक्त भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें 'तु' शब्दका निर्देश पादपूरणरूप अर्थमें जानना चाहिए और गाथाके उत्तरार्धमें 'तु' शब्द अवधारणरूप अर्थमें आया है, क्योंकि उपरिम संग्रहकृष्टिसे अधस्तन प्रत्येक संग्रह कृष्टिका काल संख्यातवाँ भाग ही विशेष अधिक होता है, अन्य प्रकारसे अधिक नहीं होता इस प्रकार अवधारणा करना ही दूसरे 'तु' शब्दके निबद्ध करनेका फल है। अथवा यह दूसरा 'तु' शब्द समुच्चयरूप अर्थमें जानना चाहिए। उससे कृष्टिकरणकाल, अश्वकरणकाल, छह नोकषायक्षपणाकाल, स्त्रीवेदक्षपणाकाल, नपुंसकवेदक्षपणाकाल, अन्तरकरणकाल, आठ कषायक्षपणाकाल इस प्रकार इन कालोंको भी यहाँपर ग्रहण करना चाहिए। इन कालोंकी यह संदृष्टि है—

१	२	३	४	५
o o o o	o o o o	o o o o	o o o o	o o o o
अट्ठकसायक्खवणद्धा	अंतरकरणद्धा	णवुंसयवेदक्खवणद्धा	इत्थिवेदक्खवणद्धा	छण्णोकसायक्खवणद्धा

६	७	८	९	१०
o o o o	o o o o	o o o o	o o o o	o o o o
अस्सकण्णकरणद्धा	किट्टीकरणद्धा	कोहपढमकिट्टीवेदगद्धा	कोहविदियकिट्टीवेदगद्धा	कोहतदियकिट्टीवेदगद्धा

११	१२	१३	१४	१५
o o o o	o o o o	o o o o	o o o o	o o o o
माणपढमकिट्टीवेदगद्धा	माणविदियकिट्टीवेदगद्धा	माणतदियकिट्टीवेदगद्धा	मायापढमकिट्टीवेदगद्धा	मायाविदियकिट्टीवेदगद्धा

१६	१७	१८	१९
o o o o	o o o o	o o o o	o o o o
मायातदियकिट्टीवेदगद्धा	लोभपढमकिट्टीवेदगद्धा	लोभविदियकिट्टीवेदगद्धा	लोभतदियकिट्टीवेदगद्धा

१	२	३	४	५
oooo	oooo	oooo	oooo	oooo
आठकषाय क्षवणद्धा	अन्तरकरणद्धा	नपुंसकवेद क्षवणद्धा	इत्थीवेद क्षवणद्धा	छण्णोकाय क्षवणद्धा

६	७	८	९	१०
oooo	oooo	oooo	oooo	oooo
अस्सकण्ण करणद्धा	किट्टीकरणद्धा	कोहपढम किट्टीवेदगद्धा	कोहविदिय किट्टीवेदगद्धा	कोहतदिय किट्टीवेदगद्धा

११	१२	१३	१४	१५
oooo	oooo	oooo	oooo	oooo
माणपढम किट्टीवेदगद्धा	माणविदिय किट्टीवेदगद्धा	माणतदिय किट्टीवेदगद्धा	मायागढ़म किट्टीवेदगद्धा	मायाविदिय किट्टीवेदगद्धा

१६	१७	१८	१९	
oooo	oooo	oooo	oooo	
मायातदिय किट्टीवेदगद्धा	लोभपढम किट्टीवेदगद्धा	लोभविदिय किट्टीवेदगद्धा	लोभतदिय किट्टीवेदगद्धा	

२९९. एवमेदेण गाहासुत्तेण सूचिदप्पाबहुअस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाह—

* विहासा ।

§ ३००. सुगमं ।

* पच्छिमकिट्टीमंतोमुहुत्तं वेदयदि, तिस्से वेदगकालो थोवो ।

§ ३०१. किं कारणं ? सुहुमसांपराइयद्धापमाणत्तादो। एसो च अंतरकरणद्धादो संखेज्जगुणो त्ति घेत्तव्वो, संखेज्जट्ठिदिबंधसहस्सगब्भत्तादो ।

* एक्कारसमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

§ ३०२. एसो लोभविदियबादरसांपराइयकिट्टीए वेदगकालो, तेण विसेसाहिओ जादो। केत्तियमेत्तो विसेसो ? संखेज्जावलियमेत्तो । कुदो एदमवगम्मदे ? 'संखेज्जदिभागेण दु सेसिगाणं कमेणहिया त्ति गाहासुत्तावयवादो । एवमुवरिमपदेसु वि सव्वत्थ विसेसपमाणमेदं णायव्वं ।

* दसमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

§ ३०३. एसो लोभपढमसंगहकिट्टीवेदगघालो [1]दट्ठव्वो ? सेसं सुगमं ।

---

§ २९९. इस प्रकार इस गाथासूत्र द्वारा सूचित हुए अल्पबहुत्वका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ३००. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्तिम कृष्टिका अन्तर्मुहूर्त काल तक वेदन करता है । उसका वेदनकाल अल्प है ।

§ ३०१. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि वह सूक्ष्मसाम्परायके गुणस्थानके काल-प्रमाण है और यह काल अन्तरकरणके कालसे संख्यातगुणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि इसमें संख्यात हजार स्थितिबन्ध अपसरणकाल गर्भित हैं।

* ग्यारहवीं कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

§ ३०२. यह लोभसंज्वलनकी दूसरी बादरसम्पराय कृष्टिका वेदककाल है, इसलिये विशेष अधिक हो गया है !

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—संख्यात आवलिप्रमाण विशेष है ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—'संखेज्जदिभागेण दु कमेणहिया' इस गाथासूत्र वचनसे जाना जाता हैं ।

इस प्रकार उपरिम पदोंमें भी यह विशेषका प्रमाण जानना चाहिए ।

* दसवीं कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

§ ३०३. यह लोभसंज्वलनकी प्रथमसंग्रह कृष्टिका वेदककाल जानना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

---

१. आ. प्रतौ ठवेयव्वो इति पा. ।

* णवमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* अट्ठमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* सत्तमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* छट्ठीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* पंचमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* चउत्थीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* तदियाए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* विदियाए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

* पढमाए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ ।

§ ३०४. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । संपहि एत्थ सव्वत्थ विसेसो किंपमाणो त्ति आसंकाए इदमाह—

* विसेसो संखेज्जदिभागो ।

§ ३०५. गयत्थमेदं सुत्तं । एदम्हादो कोहपढमसंगहकिट्टीवेदगकालादो उवरि किट्टीकरणद्धा संखेज्जगुणा, सादिरेयतिगुणपमाणत्तादो । अस्सकण्णकरणद्धा विसेसाहिया । छण्णोकसायक्खवणद्धा विसेसाहिया । इत्थिवेदक्खवणद्धा विसेसाहिया । णवुंसयवेदक्खवणद्धा विसेसाहिया । अंतरकरणद्धा विसेसाहिया । अट्ठकसायक्खवणद्धा संखेज्जगुणा । एवं तदियमूलगाहाए अत्थविहासा समत्ता ।

---

* नववीं कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* आठवीं कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* सातवीं कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* छटी कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* पाँचवीं कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* चौथी कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* तीसरी कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* दूसरी कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

* पहली कृष्टिका वेदककाल विशेष अधिक है ।

§ ३०४. ये सूत्र सुगम हैं । अब यहाँ सर्वत्र विशेषका प्रमाण क्या है ऐसी आशंका होनेपर इस सूत्रको कहते हैं—

* विशेषका प्रमाण संख्यातवाँ भाग है ।

§ ३०५. यह सूत्र गतार्थ है । इस क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदककालसे ऊपर कृष्टिकरणका काल संख्यातगुणा है, क्योंकि यह साधिक तिगुना है । उससे अश्वकर्णकरणका काल विशेष अधिक है । उससे छह नोकषायोंके क्षपणाका काल विशेष अधिक है । उससे नपुंसकवेदका क्षपणाकाल विशेष अधिक है ! उससे अन्तरकरणकाल विशेष अधिक है । उससे आठ कषायोंका क्षपणाकाल संख्यातगुणा है । इस प्रकार तीसरी मूलगाथाकी अर्थ विभाषा समाप्त हुई ।

* एत्तो चउत्थीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ ३०६. तदियमूलगाहाविहासणाणंतरमेत्तो चउत्थीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा कायव्वा त्ति वुत्तं होइ ।

* तं जहा ।

§ ३०७. सुगमं ।

(१२९) कदिसु गदीसु भवेसु य ट्ठिदि-अणुभागेसु वा कसाएसु ।
कम्माणि पुव्वबद्धाणि कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु ॥१८२॥

§ ३०८. एत्तो प्पहुडि तिण्णि मूलगाहाओ गदियादिमग्गणासु जत्थतत्थाणुपुव्वीए पुव्वबद्धाणं कम्माणं खवगसेढीए भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेणत्थित्तगवेसणट्ठमोइण्णाओ । तत्थ ताव किट्टीओ करेमाणस्स वेदेमाणस्स च खवगस्स गदि-इंदिय-काय-कसायमग्गणासु संचिदाणं पुव्वबद्धाणमुक्कस्साणुक्कस्सट्ठिदि-अणुभागसंचिदाणं च संभवासंभवणिण्णयविहाणट्ठमेसा चउत्थी मूलगाहा समोइण्णा । तं जहा—'कदिसु गदीसु' केत्तियमेत्तीसु गदीसु पुव्वबद्धा कम्मपदेसा एदस्स खवगस्स संभवंति, किमेक्किस्से दोसु तिसु चदुसु वा त्ति एसो पढमो पुच्छाणिद्देसो गदिमग्गणाविसये पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जाभयणिज्जभावगवेसणे पडिबद्धो । तत्थ चदुण्हं गदीणमेग-दु-ति-चदुसंजोगेण पण्णारसपण्हभंगा वत्तव्वा ।

---

* अब इससे आगे चौथी मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ ३०६. तीसरी मूलगाथाकी विभाषा करनेके बाद चौथी मुलगाथाकी समुत्कीर्तना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* वह जैसे ।

§ ३०७. यह सूत्र सुगम है ।

(१२९) कितनी गतियों, भवों, स्थितियों, अनुभागों और कषायोंमें तथा तत्सम्बन्धी कृष्टियों और उनकी स्थितियोंमें संचित इस पूर्वबद्ध कर्म क्षपकके पाये जाते हैं ॥१८२॥

§ ३०८. इससे आगे तीन मूलगाथाएँ गति आदि मार्गणाओंमें यत्र-तत्रानुपूर्वीसे पूर्वबद्ध कर्मोंके क्षपकश्रेणिमें भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे अस्तित्वकी गवेषणा करनेके लिए अवतीर्ण हुई हैं । वहाँ सर्वप्रथम कृष्टियोंको करनेवाले और वेदन करनेवाले क्षपकके गति, इन्द्रिय, काय और कषाय मार्गणाओंमें संचित हुए पूर्वबद्ध उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशों तथा स्थिति और अनुभागोंके सम्भव और असम्भवका निर्णय करनेके लिए यह चौथी मूल गाथा अवतीर्ण हुई है । वह जैसे—'कदिसु गदीसु' कितनी गतियोंमें पूर्वबद्ध कर्मप्रदेश इस क्षपकके सम्भव हैं, क्या एक गतिसम्बन्धी, दो गतिसम्बन्धी, तीन गतिसम्बन्धी या चारों गतिसम्बन्धी कर्मप्रदेश इस क्षपकके सम्भव हैं इस प्रकार यह प्रथम पृच्छानिर्देश गतिमार्गणाके विषयमें पूर्वबद्ध कर्मोंके भजनीय और अभजनीयपनेकी गवेषणा करनेमें प्रतिबद्ध है । वहाँ चारों गतियोंके एक संयोग, दो संयोग, तीन संयोग और चार संयोगसे प्रश्नरूपमें पन्द्रह भंग कहने चाहिए ।

विशेषार्थ—नियम यह है कि चार बार २ अंक रखकर परस्पर गुणा करके लब्ध १६ में से १ अंक कम करनेपर कुल १५ भंग उत्पन्न होते हैं । उनमें एकसंयोगी ४, द्विसंयोगी ६, तीनसंयोगी ४ और चारसंयोगी १ भंग होते हैं । इस प्रकार उक्त विधिसे १५ विकल्प उत्पन्न करके यहाँ पृच्छा करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

§ ३०९. तहा केत्तिएसु भवेसु संचिदाणि पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स संभवंति, किमेक्कम्हि भवग्गहणे, आहो दोसु तिसु चदुसु संखेज्जेसु असंखेज्जेसु वा त्ति एसो विदिओ पुच्छाणिद्देसो। काइंदियमग्गणापडिबद्धेसु भवग्गहणेसु पुव्वबद्धाणं कम्माणं परूवणाए पडिबद्धो। ट्ठिदि-अणुभागेसु वा केत्तिएसु पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स किट्टीकरणप्पहुडि उवरिमावत्थाए वट्टमाणस्स संभवंति त्ति एसो तदिओ पुच्छाणिद्देसो। एदेण किमुक्कस्सट्ठिदीए उक्कस्साणभागेण च सह बद्धाणि कम्माणि एदस्स संभवंति आहो अणुक्कस्सट्ठिदि-अणुभागेहि सह बद्धाणि त्ति एवंविहो अत्थणिद्देसो सूचिदो दट्ठव्वो।

§ ३१०. केत्तियमेत्तेसु वा कसाएसु पुव्वबद्धा कम्मपरमाणवो एदस्स दीसंति, किमेक्कम्हि दोसु तिसु चदुसु वा त्ति एसो चउत्थो पुच्छाणिद्देसो। एदेण कसायमग्गणमस्सियूण पुव्वबद्धाणं संभवासंभवादिणिण्णयपरूवणा सूचिदा दट्ठव्वा। एत्थ वि कोह-माण-माया-लोभाणमेग-दु-ति-चदुसंजोगे पण्णारसपण्हभंगा अणुगंतव्वा। एसो च सव्वो पुच्छाणिद्देसो गदि-इंदिय-कायमग्गणावयवेसु ट्ठिदि-अणुभागवियप्पेसु कसायभेदेसु च पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जा-भयणिज्जसरूवेण संभवतदियत्तावहारणं च उवेक्खदे। सव्वेसु च पुच्छाणिद्देसेसु 'कम्माणि पुव्वबद्धाणि' त्ति एसो सुत्तावयवो पादेक्कमभिसंबंधणिज्जो।

---

§ ३०९. उसी प्रकार कितने भवोंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके सम्भव हैं। क्या एक भवग्रहणमें या दो भवोंमें, तीन भवोंमें, चार भवोंमें या संख्यात और असंख्यात भवोंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके सम्भव हैं इस प्रकार यह दूसरा पृच्छानिर्देश है। कौन काय और इन्द्रियमार्गणासम्बन्धी भवग्रहणोंमें संचित पूर्वबद्ध कर्मोंकी प्ररूपणा इस क्षपकके है। तथा कितनी स्थितियों और अनुभागोंमें संचित पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके कृष्टिकरणसे लेकर उपरिम अवस्थामें विद्यमान जीवके सम्भव है इस प्रकार यह तीसरा पृच्छानिर्देश है। इससे क्या उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागरूपसे बद्ध कर्म इस क्षपकके सम्भव हैं या अनुत्कृष्ट स्थिति और अनुत्कृष्ट अनुभाग रूपसे बद्ध कर्म इस क्षपकके सम्भव हैं इस प्रकारका अर्थनिर्देश सूचित जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ कितनी गतियों और कितने भवों आदिको आलम्बन बनाकर कृष्टिकारक और कृष्टिवेदक जीवके कितनी स्थितिसे युक्त, कितने अनुभागसे युक्त और कितने प्रदेशोंसे युक्त पूर्वबद्ध कर्म पाये जाते हैं। इस विषयमें क्या सम्भव है यह पृच्छा की गयी है ऐसा यहाँ समझना चाहिए।

§ ३१०. अथवा कितनी कषायोंमें संचित पूर्वबद्ध कर्मपरमाणु इस जीवके दिखाई देते हैं। क्या एक कषायमें, दो कषायोंमें, तीन कषायोंमें या चार कषायोंमें संचित पूर्वबद्ध कर्म इस जीवके दिखाई देते हैं इस प्रकार यह चौथा पृच्छानिर्देश है। इससे कषायमार्गणाका आलम्बन लेकर इस जीवके पूर्वबद्ध कर्मोंके सम्भव और असम्भव आदिके निर्णयविषयक प्ररूपणा सूचित की गयी जाननी चाहिए। यहाँ पर भी क्रोध, मान, माया और लोभके एकसंयोग, द्विसंयोग, तीनसंयोग और चारसंयोगसे पन्द्रह भंग जानने चाहिए। यह समस्त पृच्छानिर्देश गति, इन्द्रिय और कायमार्गणा-के भेदोंमें और कषायमार्गणाके भेदोंमें स्थिति और अनुभागके विकल्पोंकी अपेक्षा पूर्वबद्ध कर्मोंके भजनीय और अभजनीयपनेरूपसे सम्भव और असम्भवके अवधारणाकी अपेक्षा रखता है। अतः समस्त पृच्छाओंके कथनमें 'कम्माणि पुव्वबद्धाणि' इस सूत्रवचनका प्रत्येकके साथ सम्बन्ध कर लेना चाहिए।

§ ३११. 'कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु' एसो गाहासुत्तस्स चरिमावयवो गदियादिसंचिदाणं पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेण लब्भमाणाणं केत्तियासु किट्टीसु ट्ठिदीसु च संभवो, किमविसेसेण सव्वासु आहो पडिणियदासु चेव किट्टीसु ट्ठिदीसु च तेसिमवट्ठाणणियमो त्ति इममत्थविसेसं जाणावेदि।

§ ३१२. एदस्स चरिमावयवस्स अत्थणिद्देसे भासगाहा एत्थ णत्थि, छट्ठमूलगाहा-विदियभासगाहाए एदस्स अत्थं भणिहिदि, तत्थेव तस्स णिण्णयं कस्सामो। संपहि एदिस्से मूलगाहाए पुव्वद्धणिबद्धाणं चउण्हमत्थविसेसाणं जहाकमं णिण्णयं कुणमाणो तत्थ पडिबद्धाणं भासगाहाणमियत्तावहारणट्ठमिदमाह—

*** एदिस्से तिण्णि भासगाहाओ।**

§ ३१३. एदिस्से मूलगाहाए अत्थविहासणट्ठमेत्थ तिण्णि भासगाहाओ होंति त्ति भणिदं होदि।

*** तं जहा।**

§ ३१४. सुगमं।

(१३०) दोसु गदीसु अभज्जाणि दोसु भज्जाणि पुव्वबद्धाणि।
एइंदियकाएसु च पंचसु भज्जा ण च तसेसु ॥१८३॥

---

§ ३११. 'कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु' यह गाथासूत्रका अन्तिम अवयव है जो—गति आदि मार्गणाओंमें संचयरूपसे प्राप्त हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय और अभजनीयरूपसे कितनी कृष्टियों और उनकी स्थितियोंमें सम्भव हैं, क्या अविशेषरूपसे सभी कृष्टियों और उनकी स्थितियोंमें उनके अवस्थानका नियम है या प्रतिनियत कृष्टियों और उनकी स्थितियोंमें ही अवस्थानका नियम है—इस अर्थविशेषका ज्ञान कराता है।

§ ३१२. इस गाथासूत्रके अन्तिम अवयवका अर्थनिर्देश करनेवाली भाष्यगाथा प्रकृतमें नहीं है, किन्तु छठी मूलगाथाकी दूसरी भाष्यगाथा द्वारा इसका अर्थ कहेंगे, इसलिए वहींपर उसका निर्णय करेंगे। अब इस मूलगाथाके पूर्वार्धमें निबद्ध चार अर्थविशेषोंका क्रमसे निर्णय करते हुए उन अर्थोंमें प्रतिबद्ध भाष्यगाथाओंकी इयत्ताका अवधारण करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इस चौथी मूल सूत्रगाथाकी तीन भाष्यगाथाएँ हैं।**

§ ३१३. इस मूलगाथाके अर्थकी विभाषा करनेके लिए इसके अर्थके प्रतिपादनमें तीन भाष्यगाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** वह जैसे।**

§ ३१४. यह सूत्र सुगम है।

(१३०) दो गतियोंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय नहीं हैं और दो गतियोंकी अपेक्षा भजनीय हैं। तथा एकेन्द्रियसम्बन्धी पाँच कायमार्गणाओंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं। किन्तु त्रसमार्गणामें भजनीय नहीं हैं ॥१८३॥

§ ३१५. एसा पढमभासगाहा गदिमग्गणाविसयपढमपुच्छाए भवग्गहणविसयविदियपुच्छाए च णिण्णयविहाणट्ठमोइण्णा। संपहि एदिस्से अत्थो वुच्चदे। तं जहा—'दोसु गदीसु अभज्जाणि' एवं भणिदे दोगदीसु संचिदाणि पुव्वबद्धाणि एदस्स खवगस्स णियमा अत्थि, तदो ताणि ण भयणिज्जाणि त्ति घेत्तव्वं, तत्थ तेसिं भयणिज्जत्ते कारणाणुवलंभादो। 'दोसु भज्जाणि पुव्वबद्धाणि' एवं भणिदे णिरय-देवगदीसु संचिदाणि पुव्वबद्धाणि एदस्स खवगस्स सिया अत्थि सिया णत्थि त्ति भजिदाणि, तेसिमवस्संभाविणियमाभावादो। 'एइंदिय-काएसु च' एवं भणिदे पुढवि०-आउ०-तेउ०-वाउ०-वणप्फदि०सण्णिदेसु पंचसु थावरकाएसु एइंदियजादिपडिबद्धेसु जाणि पुव्वबद्धाणि ताणि एदस्स खवगस्स भजिदव्वाणि, तेसिं पि पयदविसये अवस्संभाविणियमाणुवलंभादो। तदो एदेसु पंचसु काएसु पादेक्कं णिरुद्धेसु पुव्वबद्धाणि भयणिज्जाणि त्ति घेत्तव्वं। 'ण च तसेसु' एवं भणिदे तसकाइयसंचिदाणि पुव्वबद्धाणि णियमा अत्थि, ण तेसु भयणिज्जत्तसंभवो त्ति वुत्तं होदि। कुदो एवं चे? तसपज्जायमणागंतूण खवगसेढिसमारोहणोवायाभावादो। एत्थ तसकाइयसामण्णणिद्देसे वि तसकाइयविसेसेसु सण्णिपंचिदिएसु पुव्वबद्धाणि ण भयणिज्जाणि, बि-ति-चदुरिंदियासण्णिपंचिदियेसु सण्णिपंचिदियलद्धिअपज्जत्तेसु च पुव्वबद्धाणि भयणिज्जाणि चेवेत्ति एसो वि अत्थविसेसो एत्थेव सुत्तपदे णिलीणो त्ति दट्ठव्वो।

§ ३१५. यह प्रथम भाष्यगाथा, गतिमार्गणाविषयक प्रथम पृच्छा और भवग्रहणविषयक दूसरी पृच्छाका निर्णय करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। अब इसका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—'दोसु गदीसु अभज्जाणि' ऐसा कहनेपर दो गतियोंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे होते हैं, इसलिए वे भजनीय नहीं हैं ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि वहाँपर उनके भजनीयपनेका कारण नहीं पाया जाता। 'दोसु भज्जाणि पुव्वबद्धकम्माणि' ऐसा कहनेपर नरकगति और देवगतिमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके किसीके होते हैं और किसीके नहीं होते हैं, इसलिए भजनीय हैं, क्योंकि उनके अवश्य ही होनेके नियमका अभाव है। 'एइंदिय-काएसु च' ऐसा कहनेपर पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक संज्ञावाले एकेन्द्रिय जातिसे प्रतिबद्ध पाँच स्थावरकायिक जीवोंमें संचित जो पूर्वबद्ध कर्म होते हैं वे इस क्षपकके भजनीय हैं, क्योंकि उनके भी प्रकृत विषयमें अवश्य होनेका नियम नहीं पाया जाता। इसलिए इन पाँच कायोंमेंसे प्रत्येक विवक्षित कायमें संचित पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। और 'ण च तसेसु' ऐसा कहनेपर त्रसकायिक जीवोंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे हैं, इसलिए उनकी अपेक्षा भजनीयपना सम्भव नहीं है।

शंका—ऐसा किस कारणसे है?

समाधान—क्योंकि त्रसपर्यायमें आये बिना क्षपकश्रेणिपर आरोहण करनेका अन्य कोई उपाय नहीं है।

गाथासूत्रमें त्रसकायिक ऐसा सामान्य निर्देश करनेपर भी त्रसकायिकके एक भेद संज्ञीपंचेन्द्रियोंमें संचित पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय नहीं हैं, किन्तु द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञीपंचेन्द्रिय और संज्ञीपंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय ही होते हैं इस प्रकार यह अर्थविशेष भी इसी सूत्रपदमें निलीन है ऐसा जानना चाहिए।

१. ता. प्रतौ भणिदे गदीसु इति पाठः।

§ ३१६. एत्थ जाणि भयणिज्जपदाणि तेसिमेक्को वि परमाणू सव्वासु किट्टीसु सव्वेसु च ट्ठिदिविसेसेसु अहोदूण लब्भइ, तेसिमसंभवपक्खे तदविरोहादो। संभव पक्खे पुण सिया एक्को परमाणू सिया दो परमाणू एवं गंतूण उक्कस्सेणाणंता परमाणू सव्वासिं किट्टीणं सरिसधणिएसु सव्वेसु च ट्ठिदिविसेसेसु होदूण लब्भंति। जाणि पुण ण भयणिज्जाणि पुव्वबद्धाणि तेसिमणंता पदेसा सव्वासु ट्ठिदीसु सव्वासिं किट्टीणं सरिसधणियसरूवा होदूण णियमा लब्भंति त्ति एदं भयणिज्जाभयणिज्जाणमत्थपदं सव्वत्थ जोजेयव्वं।

---

§ ३१६. यहाँ प्रकृतमें जिन मार्गणाओंके पूर्वबद्ध कर्म इस जीवके भजनीय कहे हैं उनका एक भी परमाणु सभी कृष्टियों और उनके स्थितिविशेषोंमें नहीं प्राप्त होते हैं, क्योंकि उनको असम्भावनारूप पक्षके स्वीकार करनेमें कोई विरोध नहीं आता। सम्भव पक्षमें तो किसी क्षपकके एक परमाणु पाया जाता है, किसी क्षपकके दो परमाणु पाये जाते हैं। इस प्रकार जाकर सभी कृष्टियोंके सदृश धनवाले सभी स्थितिविशेषोंमें उत्कृष्टरूपसे अनन्त परमाणु होकर प्राप्त होते हैं। परन्तु जो पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय नहीं हैं उनके अनन्त परमाणु सभी कृष्टियोंकी सभी स्थितियोंमें सदृश धनरूपसे होकर इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं। यह भजनीय और अभजनीय पूर्वबद्ध कर्मोंका अर्थपद सर्वत्र योजित कर लेना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रकृतमें कृष्टिकारक और कृष्टिवेदक क्षपक जीवके किन गति आदि मार्गणाओं सम्बन्धी भवोंमें बाँधे हुए चारित्रमोहनीय आदि कर्म नियमसे पाये जाते हैं और किन गति आदि मार्गणाओंसम्बन्धी भवोंमें बाँधे हुए कर्म पाये भी जाते हैं और नहीं भी पाये जाते हैं इस तथ्यका सांगोपांग विचार किया गया है। यह विचार करते हुए पहले मनुष्य और तिर्यंच इन दो गतियोंकी अपेक्षा विचार किया गया है। क्षपकके मनुष्यगति तो होती ही है, क्योंकि उसके बिना संयत आदि पदोंकी प्राप्ति ही सम्भव नहीं है। अब रहीं शेष तीन गतियाँ सो ऐसा कोई नियम तो है नहीं कि जो कर्मस्थिति कालके भीतर देवगति और नरकगतिको नियमसे प्राप्त हुआ हो वही जीव आगे कर्मस्थिति कालके भीतर मनुष्य भवको प्राप्त कर क्षपक श्रेणीपर आरोहण करनेका अधिकारी होता है, इसलिए तो इन दो गतियोंकी अपेक्षा क्षपक जीवके पूर्वबद्ध कर्मोंको भजनीय कहा है। शेष रही तिर्यंच गति, सो मनुष्यगतिकी कायस्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपमप्रमाण है और इसमें देवगति और नरकगतिकी सम्भव भवस्थितिको भी सम्मिलित कर लिया जाय तो भी वह कर्मस्थिति कालप्रमाण नहीं हो पाती। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वह क्षपक जीव विवक्षित मनुष्य पर्यायको प्राप्त करनेके पहले कर्मस्थिति कालके भीतर तिर्यंचगतिमें अवश्य हो रहा होगा। उसमें भी तिर्यंचगतिका ऐसा कौन-सा भेद है जिसमें वह अवश्य रहा होगा, क्योंकि असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक जितनी भी पर्यायें हैं वे सब तिर्यंचगति सम्बन्धी ही हैं। अतः यहाँ कर्मस्थितिके कालको देखते हुए इतना तो सुनिश्चित कहा जा सकता है कि वह पहले एकेन्द्रिय पर्यायमें अवश्य रहा होगा। और यह तथ्य सुनिश्चित है कि कतिपय ऐसे भी जीव होते हैं जो सीधे एकेन्द्रिय पर्यायसे आकर और मनुष्य पर्याय धारण करके मुक्तिगामी होते हैं। अतः त्रस पर्यायमें द्वीन्द्रियसे लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय और लब्ध्यपर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यायमें जिन कर्मोंका बन्ध होता है वे कर्म इस क्षपक जीवके नियमसे होते ही हैं ऐसा कोई नियम नहीं है। परन्तु एकेन्द्रिय पर्यायमें जिन कर्मोंका बन्ध होता है वे इस क्षपक जीवके नियमसे पाये जाते हैं। इतना अवश्य है कि पृथिवीकायिक आदि उत्तर भेदोंमेंसे विवक्षित किसी एक कायवाले जीवकी अपेक्षा एकान्तसे ऐसा नियम नहीं किया जा सकता है। शेष कथन मूल टीकामें स्पष्ट किया ही है।

§ ३१७. संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो उवरिमं विहासागंथमाह—

* विहासा।

§ ३१८. सुगमं।

*** एदस्स खवगस्स दुगदिसमज्जिदं कम्मं णियमा अत्थि। तं जहा—तिरिक्खगदिसमज्जिदं च मणुसगदिसमज्जिदं च।**

§ ३१९. एदस्स खवगस्स किट्टीकरणप्पहुडि उवरिमावत्थाए वट्टमाणस्स दुगदिसमज्जिदं कम्मं णियमा अत्थि त्ति एदेण सामण्णणिद्देसेण विसेसणिण्णयो ण जादो त्ति तत्थेव विसेसणिण्णयजणणट्ठं 'तिरिक्खगदिसमज्जिदं च मणुसगदिसमज्जिदं च' इदि विसेसियूण णिद्देसो कदो। कथं पुण 'दोसु गदीसु अभज्जाणि' त्ति एदेण सामण्णणिद्देसेण तिरिक्खमणुसगदिविसेसपज्जाओ जायदि त्ति? ण एवमवट्ठाणमिह कायव्वं, वक्खाणदो विसेसपडिवत्ती होदि त्ति णायेण तहाविहविसेससिद्धीए। तत्थ तिरिक्खगदिसमज्जिदं णियमा अत्थि त्ति वुत्ते तिरिक्खेहिंतो आगंतूण मणुस्सेसु चेव समुप्पज्जिय खवगसेढिमारूढस्स ताव तिरिक्खगदिसंचओ णिच्छएण लब्भदे। जो पुण तिरिक्खगदीदो णिस्सरिदूण सेसगदीसु सागरोवमसदपुधत्तमेत्तकालमच्छिय खवगसेढिमारुहदि तस्स वि तिरिक्खगदिसंचिदं णियमा अत्थि, सागरोवमसदपुधत्तमेत्तकालब्भंतरे तिरिक्खगदिसमज्जिदस्स कम्मट्ठिदिसंचयस्स सुट्ठु णिल्लेवणाणुवलंभादो। मणुसगदिसमज्जिदं

---

§ ३१७. अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इसकी विभाषा करते हैं।

§ ३१८. यह सूत्र सुगम है।

* इस क्षपकके दो गतियोंमें अर्जित किया हुआ कर्म नियमसे है। वह जैसे—तिर्यंचगतिमें अर्जित किया गया कर्म भी है और मनुष्य गतिमें अर्जित किया गया कर्म भी है।

§ ३१९. कृष्टिकरणसे लेकर उपरिम अवस्थामें विद्यमान इस जीवके दो गतियोंमें अर्जित किया हुआ कर्म नियमसे है। इस प्रकार ऐसा सामान्य निर्देश करनेसे विशेषका निर्णय नहीं होता इसलिए वहींपर विशेषका निर्णय करनेके लिए 'तिर्यंचगतिमें अर्जित किया गया कर्म भी है और मनुष्यगतिमें अर्जित किया गया कर्म भी है' ऐसा विशेषरूपसे निर्देश किया है।

शंका—'दो गतियोंमें अर्जित किया गया कर्म इस क्षपकके भजनीय नहीं है' इस प्रकार भाष्यगाथा द्वारा ऐसा सामान्य निर्देश करनेसे तिर्यंचगति और मनुष्यगति विशेष पर्यायका ग्रहण कैसे होता है?

समाधान—यहाँ ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि व्याख्यानसे विशेषका ज्ञान होता है इस न्यायके अनुसार उस प्रकारके विशेषकी सिद्धि होती है।

वहाँ तिर्यंचगतिमें समर्जित किया गया कर्म नियमसे है ऐसा कहनेपर तिर्यंचगतिसे आकर मनुष्यगतिमें ही उत्पन्न होकर क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवके तिर्यंचगतिमें संचित हुआ कर्म निश्चयसे प्राप्त होता है। परन्तु जो तिर्यंचगतिसे निकलकर शेष गतियोंमें सौ पृथक्त्व सागरोपम काल तक रहकर क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उसके भी तिर्यंचगतिमें अर्जित किया गया कर्म इस क्षपकके नियमसे है, क्योंकि तिर्यंचगतिमें अर्जित होकर कर्मस्थितिमें हुए संचयका पूरी तरहसे निर्लेपन नहीं होता। परन्तु मनुष्यगतिमें संचित हुआ कर्म जिस किसी गतिमें कर्मस्थितिका पालन

पुण जत्थ वा तत्थ वा कम्मट्ठिदिमणुपालियूणागदस्स खवगस्स णिच्छएण अत्थि, मणुस-पज्जाएणापरिणदस्स खवगसेढिसमारोहणासंभवादो। एवमेदेण सुत्तेण 'दोसु च गदीसु अभज्जाणि' त्ति एवं गाहासुत्तावयवं विहासिय संपहि 'दोसु भज्जाणि' त्ति इमं सुत्तावयवं विहासेमाणो इदमाह—

* देवगदिसमज्जिदं च णिरयगदिसमज्जिदं च भजियव्वं।

§ ३२०. किं कारणं? देव-णिरयगदीओ अगंतूण तिरिक्ख-मणुस्सेसु चेव कम्मट्ठिदिमेत्त-कालमच्छिय खवगसेढिं चढिदस्स ताव तदुभयगदिसमज्जिदं णियमा णत्थि। जो च देव-णेरइएसु पविसिय तत्थ केत्तियं पि कालमच्छिय पुणो तिरिक्खेसु पविसिय कम्मट्ठिदिमेत्तेण कालेण तत्तो अहिययरकालावट्ठाणेण वा णिरयदेवगदिसंचयं णिग्गालिय पुणो मणुसेसु आगंतूण खवगसेढिमारुहदि तस्स वि णिरय-देवगदीसु पुव्वबद्धस्स एगो वि परमाणू णत्थि, कम्मट्ठिदीदो परं तत्थतणसंचयस्सावट्ठाणविरोहादो। जो पुण णिरय-देवगदीओ पविसिय तत्थ केत्तियं पि कालमच्छियूण णिस्सरिदो कम्मट्ठिदिकालब्भंतरे चेवाविणट्ठेण तेण संचएण खवगसेढिं चढदि तस्स णिरयदेवगदिसमज्जिदं णियमा अत्थि त्ति वट्टव्वं, अगालिदेणेव तत्थतणसंचएण खवग-सेढिमागयत्तादो। तम्हा देव-णिरयगदिसंचिदस्स भयणिज्जत्तं सिद्धं।

करके आये हुए क्षपक जीवके निश्चयसे है, क्योंकि मनुष्यपर्यायसे अपरिणत हुए जीवके क्षपकश्रेणि-पर आरोहण करना सम्भव नहीं है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा 'दोसु च गदीसु अभज्जाणि' गाथासूत्रके इस अवयवकी विभाषा करके अब 'दोसु भज्जाणि' सूत्रके इस अवयवकी विभाषा करते हुए इस सूत्र को कहते हैं—

* देवगतिमें अर्जित हुआ और नरकगतिमें अर्जित हुआ कर्म इस क्षपकके भजनीय है।

§ ३२०. शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि देवगति और नरकगतिमें न जाकर तिर्यंच और मनुष्यगतिमें ही कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहकर क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवके उन दोनों गतियोंमें अर्जित हुआ कर्म नियमसे नहीं पाया जाता।

अतः जो जीव देवगति और नरकगतिमें प्रवेश करके और वहाँ कितने ही काल तक रहकर पुनः तिर्यंचोंमें प्रवेश करके कर्मस्थितिप्रमाण काल द्वारा या उससे अधिक काल द्वारा नरक-गति और देवगतिसम्बन्धी संचयको गलाकर पुनः मनुष्योंमें आकर क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उसके भी नरकगति और देवगतिमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्मका एक भी परमाणु इस क्षपकके नहीं पाया जाता, क्योंकि कर्मस्थितिके बाद उसके भीतर हुए संचयका क्षपकके अवस्थान होनेका विरोध है। परन्तु जो जीव नरकगति और देवगतिमें प्रवेश करके वहाँ कितने ही काल तक रह-कर निकला तथा कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर ही अविनष्ट हुए उस संचयके साथ क्षपकश्रेणिपर चढ़ता है उसके नरकगति और देवगतिमें संचित हुआ कर्म इस क्षपकके नियमसे होता है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि नरकगति और देवगतिमें जो संचय किया था उसे गलाये बिना ही वह जीव क्षपकश्रेणि पर आरूढ़ हुआ है। इसलिए देवगति और नगरकगतिमें संचित हुआ कर्म इस क्षपकके भजनीय है यह सिद्ध हुआ। यहाँपर तिर्यंचगति और मनुष्यगतिमें हुए संचयको ध्रुव करके शेष दो गतियोंमें हुए संचयोंके एकसंयोग और द्विसंयोगकी अपेक्षा तीन भंग उत्पन्न करने चाहिए। तथा ध्रुवपदके साथ चार भंग होते हैं।

एत्थ तिरिक्ख—मणुसगदिसंचयस्स धुवभावं काढूण सेसदोगदिसंचयाणमेगदुसंजोगेण तिण्णि भंगा समुप्पाएयव्वा । धुवपदेण सह चत्तारि भंगा ४ ।

§ ३२१. एवमेदं विहासिय संपहि 'एइंदिय-कायेसु च पंचसु भज्जा' त्ति इमं सुत्तावयवं विहासेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** पुढविकाइय-आउकाइय-तेउकाइय वाउकाइय-वणप्फदिकाइएसु तत्तो एक्केक्केण काएण समज्जिदं भजियव्वं ।**

§ ३२२. एदेसु पंचसु थावरकाएसु एक्केक्केण काएण समज्जिदं कम्ममेदस्स खवगस्स सिया अत्थि, सिया णत्थि त्ति वुत्तं होदि । एत्तो 'एक्केक्केण काएणेत्ति विसेसणं पादेक्क-भेदेसि कायाणं णिरुंभणं काढूण भयणिज्जत्तमेदं जोजेयव्वमिदि पदुप्पायणफलं, समुदायप्पणाए तत्थतणसंचयस्स अण्णदरकायसंबंधेण खवगम्मि अवस्संभाविणियमदंसणादो । तम्हा एक्केक्कं थावरकायमहिकिच्च तत्थतणसंचयस्स भयणिज्जत्तमेवमणुगंतव्वं । तं जहा—

§ ३२३. अप्पिदकायादो णिप्फिडियूण जाव कम्मट्ठिदी समप्पदि ताव सेसकाएसु चिट्ठिदूण पुणो मणुस्सेसु आगंतूण खवगसेढिं चढिदस्स अप्पिदकायम्मि संचिदकम्मपदेस-

---

विशेषार्थ—कोई जीव पहले नरकगतिमें था । पुन: वहाँसे निकलकर तिर्यंचगतिमें होता हुआ मनुष्यगतिमें आया । यह एक भंग है । कोई जीव पहले देवगतिमें था । पुन: वहाँसे निकलकर तिर्यंचगतिमें होता हुआ मनुष्यगतिमें आया । यह दूसरा भंग है । तथा कोई जीव नरकसे निकलकर तिर्यंच या मनुष्य होकर देवपर्यायमें उत्पन्न हुआ । पुनः वहाँसे आकर तिर्यंचगतिमें उत्पन्न होकर मनुष्य हो गया । इस प्रकार तिर्यंचगति और मनुष्यगतिको ध्रुव करके नरकगति और देवगतिका अवलम्बन करके उक्त तीन भंग उत्पन्न होते हैं । इन तीन भंगोंमें ध्रुव भंगके मिला देनेपर कुल चार भंग होते हैं । ये चारों भंग दोनों अपेक्षाओंसे बन जाते हैं । यह यहाँ विशेष समझना चाहिए ।

§ ३२१. इस प्रकार इसकी विभाषा करके अब 'एकन्द्रिय और पाँचों कायमार्गणाओंमें संचितकर्म इस क्षपकके भजनीय है' इस सूत्रके अवयवकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक इन पाँचोंमें से एक-एक कायके द्वारा समर्जित किया गया कर्म इस क्षपकके भजनीय है ।**

§ ३२२. इन पांच स्थावरकायिकोंमेंसे एक-एक कायिक जीवके द्वारा समर्जित कर्म इस क्षपकके स्यात् है और स्यात् नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसपरसे 'एक्केक्केण कायेण' यह विशेषण इन कायवाले जीवोंमेंसे प्रत्येकके साथ विवक्षित करके इस भजनीयपनेकी योजना कर लेनी चाहिए यह उक्त कथनका फल है, क्योंकि समुदायकी मुख्यतासे वहाँ हुए संचयका अन्यतर कायके सम्बन्धसे क्षपक जीवके अवश्य ही पाये जानेरूप नियम देखा जाता है । इसलिए एक-एक स्थावरकायिक जीवको अधिकृत करके वहाँ हुए संचयकी भजनीयता इस प्रकार जाननी चाहिए । वह जैसे—

§ ३२३. विवक्षित कायमेंसे निकलकर जबतक कर्मस्थिति समाप्त होती है तबतक शेष कायोंमें रहकर पुनः मनुष्योंमें आकर क्षपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके विवक्षितकायमें संचित हुए

पिंडस्स एगो वि परमाणू णत्थि। जो पुण अप्पिदथावरकायादो णिस्सरिदूण कम्मट्ठिदिअब्भंतरे चेव मणुसेसुप्पज्जिय खवगसेढिमारुहदि तस्स अप्पिदथावरकायम्मि पुव्वबद्धं कम्मपदेसग्गं णियमा किट्टीसु अत्थि त्ति घेत्तव्वं। होंतं पि एक्को वा दो वा परमाणू जाव उक्कस्सेणाणंता परमाणू सव्वासु किट्टीसु सव्वेसु च ट्ठिदिविसेसेसु होदूण लब्भंति त्ति वत्तव्वं।

§ ३२४. संपहि 'ण च तसेसु' इच्चेदस्स सुत्तावयवस्स विहासणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** तसकाइयं समज्जिदं णियमा अत्थि।**

§ ३२५. जाव तसकाइयो ण जादो ताव खवगो ण होदि त्ति तेण कारणेण तसकाइयसमज्जिदमेदस्स खवगस्स णियमा अत्थि त्ति घेत्तव्वं। एत्थ तसकाइयसमज्जिदं धुवं कादूण पुणो सेसकाएहिं सह एगसंजोगादिकमेण लद्धभंगा एक्कत्तीसं होंति ॥३१॥

§ ३२६. एवमेत्तिएण पबंधेण गदीसु कायेसु च पुव्वणिबद्धस्स कम्मस्स भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेणत्थित्तगवेसणं कादूण संपहि तत्थेव विसेसणिण्णयसमुप्पायणट्ठमेगेगगदिसंचियस्स कायसंचिदस्स च जहण्णुक्कस्सपदेसग्गस्स पमाणविणिण्णयमप्पाबहुअपरूवणं च कुणमाणो तण्णिबंधण-

---

कर्मप्रदेशपिण्डका एक भी परमाणु नहीं पाया जाता। परन्तु जो जीव विवक्षित स्थावरकायमेंसे निकलकर कर्मस्थितिके भीतर ही मनुष्योंमें उत्पन्न होकर क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उसके विवक्षित स्थावरकायमें पूर्वबद्ध कर्मप्रदेशपुंज कृष्टियोंमें नियमसे पाया जाता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। पूर्वबद्ध प्रदेशपुंज होता हुआ भी एक परमाणु होता है, दो परमाणु होते हैं इस प्रकार उत्कृष्टरूपसे अनन्त परमाणु तक होते हैं जो सभी स्थितियोंमें सभी कृष्टियोंमें और उनके सब स्थितिविशेषोंमें प्राप्त होते हैं ऐसा यहाँ कहना चाहिए।

विशेषार्थ—यद्यपि प्रत्येक कायवाले जीवकी उत्कृष्ट कायस्थिति असंख्यात लोकोंके समयप्रमाण है। परन्तु यहाँ प्रत्येक कायवाले जीवमें संचित हुए पूर्वबद्ध कर्मका क्षपक जीवके भजनीयपना कैसे घटित होता है इस तथ्यको ध्यानमें रखकर मूल टीकामें उक्त प्रकारसे स्पष्टीकरण किया गया है ऐसा यहाँ समझना चाहिए।

§ ३२४. अब 'ण च तसेसु' इस प्रकार उक्त भाष्यगाथाके इस अवयवकी विभाषा करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** त्रसकायिक जीवोंमें समर्जित कर्म इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है।**

§ ३२५. जबतक त्रसकायमें जन्म नहीं लेता तबतक क्षपक नहीं होता ऐसा नियम है। इस कारण त्रसकायिकमें समर्जित कर्म इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। यहाँपर त्रसकायिकमें समर्जित कर्मको ध्रुव करके पुनः शेष कायोंके साथ एक संयोगी आदिके क्रमसे प्राप्त हुए भंग ३१ होते हैं।

विशेषार्थ—यहाँ त्रसकायिकमें अर्जित कर्म ध्रुव है। उसका अन्वय सब भंगोंमें होगा, इसलिए उसे ध्रुव रखकर शेष पृथिवीकायिक आदि पाँचकी अपेक्षा क्रमसे एक संयोगी ५, द्विसंयोगी १०, तीनसंयोगी १०, चारसंयोगी ५ और पाँचसंयोगी १ इस प्रकार कुल ३१ भंग प्राप्त होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ३२६. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा चार गतियों और पाँच कायोंमें पूर्वनिबद्ध कर्मके इस क्षपकके भजनीय और अभजनीयरूपसे अस्तित्वका ऊहापोह करके अब वहाँपर विशेष निर्णयको उत्पन्न करनेके लिए एक-एक गतिमें संचित हुए जघन्य और उत्कृष्ट प्रदेशपुंजके तथा

मुत्तरसुत्तमाह—

* एत्तो एक्केक्काए गदीए कायेहिं च समज्जिदल्लग्गस्स जहण्णुक्कस्सपदेसग्गस्स पमाणाणुगमो च अप्पाबहुअं च कायव्वं।

§ ३२७. एत्तो उवरि एक्केक्काए गदीए तसथावरकायेहिं य जं समज्जिदं कम्मं खवगसेढीए भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेण समुवलब्भमाणं तस्स पदेसग्गस्स जहण्णुक्कस्सपदविसेसिदस्स पमाणाणुगमो कायव्वो। तदो तव्विसयमप्पाबहुअं च कायव्वं, अण्णहा तव्विसयविसेसणिण्णयाणुप्पत्तीदो त्ति भणिदं होदि। संपहि एदेण सुत्तेण समप्पिदाणं पमाणप्पाबहुआणमेत्थमणुगमो कायव्वो।

§ ३२८. तं जहा—गदीसु कायेसु च जेसु समज्जिदं कम्मं भयणिज्जं जादं तेसु समज्जिदस्स पदेसपिंडस्स पमाणं जहण्णेण एगपरमाणू भवदि, उक्कस्सेण अणंता कम्मपदेसा लब्भंति। जेसु संचिददव्वं णियमा अत्थि तेसु जहण्णुक्कस्सेण अणंता कम्मपदेसा भवंति। एसो पमाणाणुगमो।

§ ३२९. संपहि अप्पाबहुअं वुच्चदे—भयणिज्जाणं जहण्णपदेसग्गं थोवं। उक्कस्सयं पदेसग्गमणंतगुणं। अभयणिज्जाणं जहण्णओ पदेसपिंडो थोवो। उक्कस्सओ पदेसपिंडो असंखेज्जगुणो। को गुणगारो? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

एक-एक कायमें संचित हुए जघन्य और उत्कृष्ट प्रदेशपुंजके प्रमाणका निर्णय और अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा करते हुए उसको निमित्त कर आगेके सूत्रको कहते हैं—

* इससे आगे एक-एक गति द्वारा और एक-एक काय द्वारा समर्जित होकर सम्बद्ध जघन्य और उत्कृष्ट कर्मप्रदेशपुंजके प्रमाणका अनुगम और अल्पबहुत्व करना चाहिए।

§ ३२७. इससे आगे एक-एक गति द्वारा तथा त्रस और स्थावर काय द्वारा जो अर्जित किया गया कर्म क्षपकश्रेणिमें भजनीय और अभजनीयरूपसे उपलभ्यमान है उस जघन्यपद और उत्कृष्टपदसे विशेषित प्रदेशपुंजके प्रमाणका अनुगम करना चाहिए। तदनन्तर तद्विषयक अल्पबहुत्व करना चाहिए, अन्यथा तद्विषयक विशेष निर्णय नहीं उत्पन्न होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस सूत्र द्वारा विवक्षित किये गये प्रमाण और अल्पबहुत्वका यहाँपर अनुगम करना चाहिए।

§ ३२८. वह जैसे—गतियोंमें और कायोंमेंसे जिस गति और कायमें अर्जित हुआ कर्म इस क्षपकके भजनीय होता है उस गति और कायमें अर्जित हुए प्रदेशपिण्डका प्रमाण जघन्यरूपसे एक परमाणु प्राप्त होता है और उत्कृष्टरूपसे अनन्त कर्मप्रदेश पाये जाते हैं। परन्तु जिस गति और कायमें संचित हुआ कर्मद्रव्य इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है उस गति और कायमें जघन्य और उत्कृष्टरूपसे अनन्त कर्मप्रदेश पाये जाते हैं। यह प्रमाणानुगम है।

§ ३२९. अब अल्पबहुत्वका कथन करते हैं। भजनीय पदोंका जघन्य प्रदेशपुंज सबसे अल्प होता है। उससे उत्कृष्ट प्रदेशपुंज अनन्तगुणा होता है। अभजनीय पदोंका जघन्य प्रदेशपिण्ड सबसे अल्प होता है। उससे उत्कृष्ट प्रदेशपिण्ड असंख्यातगुणा होता है। गुणकार क्या है? पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग गुणकार है।

§ ३३०. तत्थ तिरिक्खगदीए बद्धजहण्णदव्वे इच्छिज्जमाणे एइंदिएसु खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिमणुपालिय तत्तो णिप्फिडियूण सेसगदीसु सागरोवमसदपुधत्तं परिभमिय खवणाए अब्भुट्ठिदस्स तिरिक्खगदिसंचिददव्वं जहण्णं भवदि। उक्कस्सं पुण गुणिदकम्मंसियलक्खणेण तिरिक्खगदीए कम्मट्ठिदिं सव्वमणुपालियूण कयसंचएण सह खवगसेढिं चडिदस्स भवदि।

§ ३३१. मणुसगदीए बद्धजहण्णदव्वे इच्छिज्जमाणे अण्णगदीदो मणुसेसु आगंतूण वासपुधत्तेण सव्वलहुमेव खवगसेढिं चडिदस्स जहण्णं भवदि। उक्कस्सयं पुण मणुसगदीए तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्महियाणि भवट्ठिदिमणुपालियूण समयाविरोहेण खवगसेढिं चढिदस्स दट्ठव्वं।

§ ३३२. तसकाइएसु जहण्णदव्वे इच्छिज्जमाणे थावरकायादो आगंतूण तसेसु वासपुधत्तमच्छिय खवगसेढिं चढिदस्स जहण्णं होदि। उक्कस्सं पुण गुणिदकम्मंसियलक्खणेण तसट्ठिदिं सव्वं परिभमिय खवगसेढिमारूढस्स भवदि। तेण जहण्णदव्वादो उक्कस्सदव्वमसंखेज्जगुणं जादं। एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि बिदियभासगाहाए जहावसरपत्तमत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाढवेइ—

*** एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ ३३३. सुगमं।

---

§ ३३०. वहाँ तिर्यंचगतिमें बद्ध जघन्य द्रव्यकी विवक्षा करनेपर एकेन्द्रियोंमें क्षपित कर्मांशिक लक्षणसे कर्मस्थितिका पालन करके और वहाँसे निकलकर शेष गतियोंमें सौ पृथक्त्व सागरोपम काल तक परिभ्रमण करके क्षपकश्रेणिको प्राप्त हुए जीवके तिर्यंचगतिमें संचित हुआ द्रव्य जघन्य होता है। परन्तु गुणितकर्मांशिक लक्षणसे तिर्यंच गतिमें पूरी कर्मस्थितिका पालन करके संचयरूप कर्मके साथ क्षपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके संचित द्रव्य उत्कृष्ट होता है।

§ ३३१. मनुष्यगतिमें पूर्वबद्ध जघन्य द्रव्य इच्छित होनेपर जो जीव अन्य गतिसे आकर वर्षपृथक्त्व कालके द्वारा अतिशीघ्र क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ है उस क्षपकके जघन्य होता है। परन्तु जो पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम काल तक मनुष्यगतिसम्बन्धी भवस्थितिका पालन करके समयके अविरोधपूर्वक क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ है उस क्षपकके मनुष्यगति सम्बन्धी पूर्वबद्ध कर्म उत्कृष्ट होता है ऐसा प्रकृतमें जानना चाहिए।

§ ३३२. त्रसकायिकोंमें जघन्य द्रव्य इच्छित होनेपर जो जीव स्थावरकायमेंसे आकर त्रसोंमें वर्षपृथक्त्व काल तक रहकर क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ है उसके जघन्य होता है। परन्तु गुणितकर्मांशिक लक्षणसे पूरी त्रसस्थिति तक परिभ्रमण करके क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवके पूर्वबद्ध कर्म उत्कृष्ट होता है। इसलिए जघन्य द्रव्यसे उत्कृष्ट द्रव्य असंख्यातगुणा होता है। इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब दूसरी भाष्यगाथाकी अवसरप्राप्त अर्थविभाषा करते हुए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** इससे आगे दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ ३३३. यह सूत्र सुगम है।

(१३१) एइंदियभवग्गहणेहिं असंखेज्जेहिं णियमसा बद्धं।
एगादेगुत्तरियं संखेज्जेहि य तसभवेहिं ॥१८४॥

§ ३३४. एसा विदियभासगाहा 'कदिसु गदीसु भवेसु च' इच्चेदं सुत्तावयवमस्सिऊण भवसंचिदस्स पदेसग्गस्स तस-थावरभवेहिं विसेसियूण परूवणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'एइंदियभवग्गहणेहिं। एवं भणिदे एइंदियभवग्गहणेसु असंखेज्जेसु बद्धं कम्मं णिच्छयेणेव खवगम्मि अत्थि। कुदो कम्मट्ठिदिअब्भंतरे जहण्णदो वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणमेइंदियभवग्गहणाणमुवलंभादो। ण चेदमसिद्धं, णिल्लेवणकालमब्भहियतसट्ठिदीए परिहीणकम्मट्ठिदिम्मि संखेज्जावलियमेत्तेगिंदियभवग्गहणपमाणेणोवट्टिदाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणमेइंदियभवग्गहणाणमागमणदंसणादो। उक्कस्सदो पुण संखेज्जावलियूणकम्मट्ठिदीए अंतोमुहुत्तेणोवट्टिदाए तत्थ भागलद्धमेत्ताणि एइंदियभवग्गहणाणि कम्मट्ठिदिअब्भंतरे होंति त्ति घेत्तव्वं। तदो सिद्धमसंखेज्जेहिं एइंदियभवग्गहणेहिं संचिदं कम्मं णियमदो एदस्स खवगस्स संभवदि त्ति।

§ ३३५. 'एगादेगुत्तरियं' एवं भणिदे थावरकायादो आगंतूण मणुसेसुववज्जिय खवणाए अब्भुट्ठिदस्स एगतसभवसंचिददव्वं खवगसेढीए लब्भदि। एवं दो-तिण्णआदिकमेण एगेगुत्तरवड्ढीए णिरंतरं तसभवग्गहणाणि वड्ढावेयव्वाणि जाव उक्कस्सेण तप्पाओग्गसंखेज्जमेत्तेसु तसभवेसु बद्धपदेसपिंडो खवगम्मि संचयसरूवेण लद्धो त्ति। तेण एगादिएगुत्तरकमेण णिरंतरं वड्ढिदेहिं तसभवग्गहणेहिं संखेज्जेहिं चेव बद्धकम्ममेदस्स खवगस्स लब्भदि, णाविरित्तमिदि सुत्तत्थणिच्छओ।

---

(१३१) असंख्यात एकेन्द्रियसम्बन्धी भवग्रहणोंके द्वारा बद्ध कर्म क्षपक जीवके नियमसे पाया जाता है। तथा एक त्रसभवसे लेकर उत्तरोत्तर संख्यात त्रसभवोंके द्वारा बद्ध कर्म क्षपक जीवके नियमसे पाया जाता है ॥१८४॥

§ ३३४. यह दूसरी भाष्यगाथा 'कदिसु गदीसु भवेसु च' इस प्रकार इस सूत्रके अवयवका आश्रय कर त्रस और स्थावर भवोंसे विशिष्ट भवसंचित प्रदेशपुंजका इस क्षपकके प्ररूपण करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'एइंदियभवग्गहणेहिं' ऐसा कहनेपर असंख्यात एकेन्द्रिय भवग्रहणोंमें बद्ध कर्म क्षपकके निश्चयसे ही है, क्योंकि कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर जघन्यसे भी पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण एकेन्द्रियसम्बन्धी भवोंका ग्रहण उपलब्ध होता है। और यह कथन असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि निर्लेपन कालसे अधिक त्रसपर्यायसम्बन्धी स्थितिसे हीन कर्मस्थितिको संख्यात आवलिप्रमाण एकेन्द्रिय भवग्रहणके द्वारा भाजित करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण एकेन्द्रिय भवग्रहणोंका आगमन देखा जाता है। उत्कृष्टसे तो संख्यात आवलि कम कर्मस्थितिको अन्तर्मुहूर्तसे भाजित करनेपर वहाँ जितना भाग लब्ध आवे उतने एकेन्द्रिय भवग्रहण कर्मस्थितिके भीतर होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इसलिए असंख्यात एकेन्द्रिय भवग्रहणोंके द्वारा संचित कर्म इस क्षपकके नियमसे होते हैं यह सिद्ध हुआ।

§ ३३५. 'एगादेगुत्तरियं' ऐसा कहनेपर स्थावरकायिकोंमेंसे आकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवके एक त्रसभवमें संचित हुआ द्रव्य क्षपकश्रेणिमें पाया जाता है। इसी प्रकार दो, तीन भव आदिके क्रमसे आगे एक-एकको वृद्धि द्वारा निरन्तर उतने त्रसभवग्रहणोंको बढ़ाना चाहिए जहाँ जाकर उत्कृष्टसे तत्प्रायोग्य संख्यात त्रसभवोंमें बद्ध पूर्वसंचित प्रदेशपिण्ड क्षपकके संचयरूपसे पाया जाता है। इसलिए एकसे लेकर उत्तरोत्तर एक-एककी वृद्धिके क्रमसे निरन्तर वृद्धिको प्राप्त हुए संख्यात त्रसभवग्रहणोंके द्वारा ही बद्ध कर्म इस

एत्तो अहिययराणं भवग्गहणाणं तसट्ठिदीए अब्भंतरे संभवाणुवलंभादो। कम्मट्ठिदिअब्भंतरे एइंदियभवग्गहणेसु पुणो पुणो अंतराविय तसकाइएसु उप्पाइज्जमाणे असंखेज्जेसु तसभवेसु संचिददव्वमेदम्मि लब्भदे। ण चेदमसिद्धं, जहण्णपदेसविहत्तिसामित्तसुत्ते खविदकम्मंसियलक्खणे भण्णमाणे एइंदिएहिंतो आगंतूण संजमासंजमादिगुणसेढिणिज्जराकरणट्ठं तसकाइएसु उप्पण्ण-भववारा पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता लब्भंति' त्ति परूविदत्तादो। तम्हा असंखेज्जेसु तसकाइयभवग्गहणेसु कम्मट्ठिदीए अब्भंतरे लब्भमाणेसु तेसिं संखेज्जभवपमाणत्तावहारणमेदं कथं घडदि त्ति ? ण एस दोसो, एगादिएगुत्तरकमेण णिरंतरमुवलब्भमाणाणं तसभवग्गहणाणं सुत्ते विवक्खियत्तादो।

§ ३३६. संपहि एवंविहो एदिस्से गाहाए अत्थो सुगमो त्ति काढूण सिस्साणमत्थसमप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एदिस्से गाहाए विहासा चेव कायव्वा।**

§ ३३७. एदिस्से गाहाए अत्थविहासा समुक्कित्तणाए चेव साहेयूण भाणियव्वा सुबोहत्तादो। तदो ण तत्थ विहासंतरमाढवेयव्वं, जाणिदजाणावणे फलाभावादो त्ति वुत्तं होइ। एवमेदिस्से

क्षपकके प्राप्त होते हैं, अधिक नहीं यह इस सूत्रके अर्थका निश्चय है, क्योंकि इनसे अधिक भव-ग्रहणोंकी त्रसस्थितिके भीतर सम्भावना नहीं पायी जाती है।

शंका—कर्मस्थितिके भीतर एकेन्द्रिय भवग्रहणोंका पुनः-पुनः अन्तर कराकर त्रसकायिकोंमें उत्पन्न करानेपर असंख्यात त्रसभवोंमें संचित हुआ द्रव्य इस क्षपकके पाया जाता है। और यह कथन असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि जघन्य प्रदेशविभक्तिके स्वामित्वविषयक सूत्रमें क्षपित कर्मांशिक लक्षणका कथन करनेपर एकेन्द्रियोंमेंसे आकर संयमासंयमादि गुणश्रेणिनिर्जराको करनेके लिए त्रसकायिकोंमें उत्पन्न होनेके भवबार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होते हैं ऐसा प्ररूपण किया गया है। इसलिए जब कि असंख्यात त्रसकायिकसम्बन्धी भवग्रहण कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त होते हैं ऐसी अवस्थामें यहाँपर उनके संख्यात भवोंका यह अवधारण करना कैसे घटित होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे निरन्तर उपलभ्यमान त्रससम्बन्धी भवग्रहणोंको यहाँ सूत्रमें विवक्षित किया है।

विशेषार्थ—यद्यपि पूरे कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर अन्तर देकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण त्रस भव प्राप्त होते हैं। परन्तु यहाँ गाथासूत्रमें 'एगादिएगुत्तरकमेण' पद होनेसे एक साथ क्रमसे यदि हों तो त्रसोंके संख्यात भव ही होंगे यह स्पष्ट किया गया है, इसलिए प्रदेश-विभक्तिके स्वामित्वविषयक सूत्रसे इस कथनमें कोई विरोध नहीं आता। शेष कथन सुगम है।

§ ३३६. अब इस गाथाका इस प्रकारका अर्थ सुगम है ऐसा निश्चय करके शिष्योंको अर्थका समर्पण करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस गाथासूत्रके अर्थकी समुत्कीर्तनाकी ही विभाषा कर लेनी चाहिए।**

§ ३३७. इस गाथासूत्रकी अर्थविभाषा समुत्कीर्तनासे ही साधकर कहनी चाहिए, क्योंकि वह सुबोध है। इसलिए उस विषयमें दूसरी विभाषा आरम्भ नहीं करनी चाहिए, क्योंकि जिसका ज्ञान करा दिया गया है उसका पुनः ज्ञान करानेमें फलका अभाव है यह उक्त कथनका तात्पर्य

विदियभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि 'ट्ठिदि-अणुभागेसु वा कसायेसु' त्ति एवं मूलगाहावयवमस्सियूण तदियभासगाहाए विहासणं कुणमाणो तदवसरकरणट्ठमुवरिमं सुत्तमाह—

* एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ ३३८. सुगमं ।

(१३२) उक्कस्सयअणुभागे ट्ठिदिउक्कस्साणि पुव्वबद्धाणि ।
भजियव्वाणि अभज्जाणि होंति णियमा कसाएसु ॥१८५॥

§ ३३९. एसा गाहा उक्कस्सट्ठिदि-अणुभागविसेसिदाणं पुव्वबद्धाणं खवगम्मि भयणिज्जत्तपदुप्पायणट्ठं पुणो कोह-माण-माया-लोभकसाएहिं पुव्वबद्धाणमभयणिज्जभावपदुप्पायणट्ठं च समोइण्णा । तं जहा—'उक्कस्सयअणुभागे०' एवं भणिदे उक्कस्साणुभागविसेसिदाणि उक्कस्सट्ठिदिविसेसिदाणि च पुव्वबद्धाणि एदम्मि खवगम्मि सिया अत्थि सिया णत्थि त्ति भजियव्वाणि । किं कारणं ? उक्कस्सट्ठिदिमुक्कस्साणुभागं च बंधियूण कम्मट्ठिदिअब्भंतरे चेव खवगसेढिं चढिदस्स तव्विसेसिदाणं कम्मपदेसाणं संभवदंसणादो, कम्मट्ठिदिअब्भंतरे सव्वत्थेव अणुक्कस्सट्ठिदिमणुभागं च बंधिदूणागदस्स खवगस्स उक्कस्सट्ठिदिअणुभागविसेसिदाणं पुव्वबद्धाणं संभवाणुवलंभादो च । 'अभज्जाणि होंति णियमा कसायसु, एवं भणिदे कोह-माण-माया-लोभकसाएसु पुव्वबद्धाणि एदस्स खवगस्स णियमा अत्थि, तदो ण ताणि भयणिज्जाणि, अंतोमुहुत्तेण चदुकसायोवजोगेसु

है । इस प्रकार इस दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब 'ट्ठिदि-अणुभागेसु वा कसायेसु' इस मूलगाथाके अवयवका आलम्बन लेकर तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हुए उसका अवसर करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* इससे आगे तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ ३३८. यह सूत्र सुगम है ।

(१३२) उत्कृष्ट अनुभागविशिष्ट और उत्कृष्ट स्थितिविशिष्ट पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं । परन्तु क्रोधादि चारों कषायों द्वारा बद्ध पूर्व संचित कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं ॥१८५॥

§ ३३९. यह भाष्यगाथा उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागविशिष्ट पूर्वबद्ध कर्म क्षपकके भजनीय हैं इस बातका कथन करनेके लिए तथा क्रोध, मान, माया और लोभकषायों द्वारा बद्ध पूर्वसंचित कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं इस बातका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । वह जैसे—'उक्कस्सयअणुभागे०' ऐसा कहनेपर उत्कृष्ट अनुभागविशिष्ट और उत्कृष्ट स्थितिविशिष्ट पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके स्यात् हैं और स्यात् नहीं हैं, इसलिए भजनीय हैं ।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागको बाँधकर कर्मस्थितिके भीतर ही क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुए जीवके तद्विशिष्ट कर्मप्रदेश इस क्षपकके सम्भव देखे जाते हैं । किन्तु कर्मस्थितिके भीतर सर्वत्र ही अनुत्कृष्ट स्थिति और अनुभागको बाँधकर आये हुए क्षपकके उत्कृष्ट स्थिति और अनुभागविशिष्ट पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नहीं पाये जाते ।

'अभज्जाणि होंति णियमा कसायेसु' ऐसा कहनेपर क्रोध, मान, माया और लोभकषायोंमें बन्धको प्राप्त हुए पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं, इसलिए वे इस क्षपकके भजनीय नहीं हैं, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त काल द्वारा चारों कषायोंस्वरूप उपयोगोंके परिवर्तमान होनेपर उनमें

परियत्तमाणेसु तेसिं भयणिज्जत्ते कारणाणुवलंभादो त्ति भणिदं होदि। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

* विहासा।

§ ३४०. सुगमं।

* उक्कस्सट्ठिदिबद्धाणि उक्कस्सअणुभागबद्धाणि च भजिदव्वाणि।

§ ३४१. सुगमं एत्थ कारणं, अणंतरमेव परूविदत्तादो।

* कोह-माण-माया-लोभोवजुत्तेहिं बद्धाणि अभजियव्वाणि।

§ ३४२. कुदो? अंतोमुहुत्तेण परियत्तमाणेसु चदुकसायोवजोगेसु तत्थ बद्धाणं कम्माणं णियमा अत्थित्तसिद्धीए विसंवादाणुवलंभादो। 'कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु' त्ति एदस्स मूलगाहाचरिमावयवस्स अत्थविहासा एत्थ ण परूविदा, छट्ठमूलगाहापडिबद्धबिदियभासगाहाए सव्वेसिमभयणिज्जाणमेक्कवारेणेव ट्ठिदि-अणुभागेसु अवट्ठाणक्कमं जाणावेमि त्ति एदेणाहिप्पाएण, तदो तत्थेव तस्स णिण्णओ दट्ठव्वो।

संचित हुए कर्मोंके इस क्षपकके भजनीय होनेमें कोई कारण नहीं पाया जाता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ३४०. यह सूत्र सुगम है।

* उत्कृष्ट स्थितिबद्ध और उत्कृष्ट अनुभागबद्ध पूर्वसंचित कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं।

§ ३४१. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इस विषयमें कारणका कथन अनन्तर पूर्व ही कर आये हैं।

* क्रोध, मान, माया और लोभमें उपयुक्त होनेसे बद्ध पूर्वसंचित कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं।

§ ३४२. क्योंकि चारों कषायोंसम्बन्धी उपयोग अन्तर्मुहूर्तमें परिवर्तमान हैं, इसलिए उनके सद्भावमें बद्ध पूर्वसंचित कर्मोंका अस्तित्व इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है उसमें किसी प्रकारका विसंवाद नहीं उपलब्ध होता। 'कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु' इस प्रकार मूलगाथाके इस अन्तिम अवयवकी अर्थविभाषा यहाँ नहीं कही गयी है। छठीं मूलगाथामें प्रतिबद्ध दूसरी भाष्यगाथा द्वारा स्थिति और अनुभागोंमें सभी अभजनीयोंके एक बारमें ही अवस्थानक्रमका ज्ञान करानेवाले हैं, इसलिए इस अभिप्रायसे वहींपर उसका निर्णय जान लेना चाहिए।

विशेषार्थ—जो जीव उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागसे युक्त कर्मोंका बन्ध कर कर्मस्थिति कालके भीतर ही क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उस क्षपकके उक्त विधिसे पूर्वबद्ध कर्म नियमसे पाये जाते हैं। किन्तु जो कर्मस्थिति कालके भीतर अनुत्कृष्ट स्थिति और अनुत्कृष्ट अनुभागसे युक्त कर्मका बन्ध कर उस कालके भीतर ही क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उसके उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागसे युक्त पूर्वबद्ध कर्म नियमसे नहीं पाये जाते हैं ऐसा यहाँ समझना चाहिए। अब रहीं चार कषायें सो उनमेंसे प्रत्येक कषायका काल ही अन्तर्मुहूर्त है, ऐसी अवस्थामें किसी भी कषायके साथ बद्ध पूर्वसंचित कर्म इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है, अतः इस अपेक्षासे उसे अभजनीय कहा है।

§ ३४३. एवमेत्तिएण पबंधेण चउत्थमूलगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि पंचमीए मूलगाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाह—

*** एत्तो पंचमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ ३४४. सुगमं ।

*** तं जहा—**

§ ३४५. सुगमं ।

(१३३) पज्जत्तापज्जेत्तेण तधा त्थी-पुण्णवुंसयमिस्सेण ।
सम्मत्ते मिच्छत्ते केण व जोगोवजोगेण ॥१८६॥

§ ३४६. एसा मूलगाहा पज्जत्तापज्जत्तावत्थासु वेद-सम्मत्त-जोग-णाण-दंसणोवजोगमग्गणासु च पुव्वबद्धाणं कम्माणं खवगसेढीए भयणिज्जाभयणिज्जभावपदुप्पायणट्ठमोइण्णा । तं जहा—'पज्जत्तापज्जत्तेण०' एवं भणिदे पज्जत्तावत्थाए अपज्जत्तावत्थाए च वट्टमाणेण जीवेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि किमेदस्स खवगस्स अत्थि आहो णत्थि त्ति पुव्वगाहासुत्तणिद्दिट्ठाणं चेव गदि-इंदिय-कायमग्गणाणं पज्जत्तापज्जत्तावत्थाहि विसेसियूण पुच्छा कदा दट्ठव्वा । 'तधा त्थी-पुण्णवुंसये' एवं भणिदे इत्थिवेदपुरिसवेद-णवुंसयवेदपज्जाएसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि किमत्थि आहो णत्थि त्ति पुच्छाहिसंबंधो कायव्वो । एदेण वेदमग्गणाविसए पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेण अत्थित्त-णत्थित्तपरिक्खा पुच्छादुवारेण णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा ।

---

§ ३४३. इस प्रकार इतने प्रबन्धद्वारा चौथी मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब पाँचवीं मूलगाथाकी अर्थविभाषा करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** इससे आगे पाँचवीं मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।**

§ ३४४. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ ३४५. यह सूत्र सुगम है ।

(१३३) पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थाके साथ, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदके साथ, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और मिथ्यात्वके साथ तथा किस योग और किस उपयोगके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके पाये जाते हैं ॥१८६॥

§ ३४६. यह मूल सूत्रगाथा पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थाओंमें तथा वेद, सम्यक्त्व, योग, ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग मार्गणाओंमें पूर्वबद्ध कर्मके क्षपकश्रेणिमें भजनीय और अभजनीयपनेका कथन करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । वह जैसे—'पज्जत्तापज्जत्तेण' ऐसा कहनेपर पर्याप्त अवस्था और अपर्याप्त अवस्थामें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म क्या इस क्षपकके पाये जाते हैं या नहीं पाये जाते हैं इस प्रकार पूर्वगाथा सूत्रमें जो गति, इन्द्रिय और काय मार्गणा कह आये हैं उन्हें ही पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थासे विशिष्ट करके यह पृच्छा की गयी जाननी चाहिए । 'तधा त्थी-पुं-णंवुसए' इस प्रकार कहनेपर स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद पर्यायोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म क्या इस क्षपकके पाये जाते हैं या नहीं पाये जाते हैं इस प्रकार पृच्छाके साथ सम्बन्ध करना चाहिए । इस प्रकार इससे वेदमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्मोंके भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे इस क्षपकके अस्तित्वकी परीक्षा पृच्छाद्वारा निर्दिष्ट की गयी जाननी चाहिए ।

§ ३४७. 'मिस्सेण सम्मत्ते मिच्छत्ते' एवं भणिदे सम्मामिच्छाइट्ठि-सम्माइट्ठि-मिच्छाइट्ठीसु पुव्वबद्धाणि किमेदस्स खवगस्स अत्थि आहो णत्थि त्ति पुच्छाहिसंबंधेण सम्मत्तमग्गणाविसये पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेण गवेसणा सूचिदा दट्ठव्वा। 'केण व जोगोवजोगेण' एदेण वि सुत्तावयवेण जोगमग्गणाए णाणदंसणोवजोगमग्गणाविसए च पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जभावपरिक्खा णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा। पण्णारसस जोगभेदेसु तत्थ केण जोगेण बद्धाणि पुव्वबद्धाणि भयणिज्जाणि केण वा ण भयणिज्जाणि। तहा सत्तसु छदुमत्थणाणेसु तिसु दंसणेसु च कदरेण णाणोवजोगेण च दंसणोवजोगेण च पुव्वबद्धाणि भजियव्वाणि केण वा अभयणिज्जाणि त्ति पुच्छादुवारेणेदस्स तहाविहत्थणिद्देसे पडिबद्धत्तदंसणादो। संपहि एदीए गाहाए सूचिदाणमत्थविसेसाणं विहासणट्ठमेत्थ चत्तारि भासगाहाओ अत्थि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

* एत्थ चत्तारि भासगाहाओ।

§ ३४८. सुगमं।

* तं जहा।

§ ३४९. सुगमं।

(१३४) पज्जत्तापज्जत्ते मिच्छत्त णवुंसए च सम्मत्ते।
कम्माणि अभज्जाणि दु थी पुरिसे मिस्सगे भज्जा॥१८७॥

---

§ ३४७. 'मिस्सेण सम्मत्ते मिच्छत्ते' ऐसा कहनेपर सम्यग्मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टियोंमें पूर्वबद्ध कर्म क्या इस क्षपकके हैं या नहीं हैं इस प्रकार पृच्छाके सम्बन्धसे सम्यक्त्वमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्मोंके भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे इस क्षपकके गवेषणा सूचित की गयी जाननी चाहिए। 'केण व जोगोवजोगेण' इस प्रकार सूत्रके इस अवयवसे भी योगमार्गणामें तथा ज्ञान और दर्शनोपयोगमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीयरूपसे हैं या अभजनीयरूपसे हैं यह परीक्षा निर्दिष्ट की गयी जाननी चाहिए। योगके पन्द्रह भेदोंमेंसे वहाँ किस योगके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं और किस योगके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय नहीं हैं यह परीक्षा की गयी जाननी चाहिए। उसी प्रकार सात छद्मस्थ ज्ञानोंमें और तीन दर्शनोंमें किस ज्ञानोपयोग और किस दर्शनोपयोगके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं तथा किस ज्ञानोपयोगके साथ और किस दर्शनोपयोगके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं इस प्रकार पृच्छाद्वारा यह गाथासूत्र इस प्रकारके अर्थका निर्देश करनेमें प्रतिबद्ध देखा जाता है। अब इस गाथाद्वारा सूचित हुए अर्थविशेषोंकी विभाषा करनेके लिए चार भाष्यगाथाएं हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* इस मूलगाथाके अर्थकी प्ररूपणामें चार भाष्यगाथाएँ निबद्ध हैं।

§ ३४८. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ ३४९. यह सूत्र सुगम है।

(१३४) पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थामें तथा मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, और सम्यक्त्वमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं। किन्तु स्त्रीवेद, पुरुषवेद और मिश्रमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं॥१८७॥

§ ३५०. एसा पढमभासगाहा पज्जत्तापज्जत्तजीवसमासेसु वेदगसम्मत्तमग्गणासु च पयदत्थ-णिण्णयकरणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'पज्जत्तापज्जत्ते' एवं भणिदे पज्जत्तेण अपज्जत्तेण च पुव्वबद्धाणि कम्माणि णियमा अत्थि त्ति सुत्तत्थसंबंधो; कम्मट्ठिदिअब्भंतरे पज्जत्तापज्जत्तपज्जा-याणं दोण्हमवस्संभावणियमादो। पुव्वबद्धाणमेत्थाभयणिज्जत्तमवहारेयव्वं। 'मिच्छत्त णवुंसये च सम्मत्ते' एवं भणिदे मिच्छत्तपज्जाए णवुंसयवेदपज्जाये सम्मत्तपज्जाये च वट्टमाणेण जीवेण पुव्वपबद्धाणि कम्माणि अभज्जाणि त्ति सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो।

§ ३५१. तत्थ मिच्छत्तपज्जाओ णवुंसयवेदपज्जाओ च कम्मट्ठिदिअब्भंतरे अवस्संभाविओ, तप्परिहारेण कम्मट्ठिदिसमाणणोवायाभावादो। सम्मत्तपज्जाओ वि एत्थवस्संभाविओ चेव, तेण विणा खवगसेढिसमारोहणासंभवादो। तदो एदेसु पज्जाएसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स णियमा अत्थि त्ति सिद्धमभयणिज्जत्तं।

§ ३५२. 'त्थी पुरिसे मिस्सए भज्जा' एवं भणिदे इत्थीपुरिसवेदसम्मामिच्छत्तपज्जाएसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि भयणिज्जाणि त्ति घेत्तव्वं, कम्मट्ठिदिअब्भंतरे एदेसिमवस्संभावणियमाणुव-

---

§ ३५०. यह प्रथम भाष्यगाथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवसमासोंमें तथा वेद और सम्यक्त्वमार्गणामें प्रकृत अर्थका निर्णय करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'पज्जत्तापज्जत्ते' ऐसा कहनेपर पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थाके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं ऐसा इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है, क्योंकि कर्मस्थितिके भीतर पर्याप्त और अपर्याप्त इन दोनों पर्यायोंके अवश्य ही होनेका नियम है। इसलिए पूर्वबद्ध कर्म यहाँपर अभजनीय हैं ऐसा निश्चय करना चाहिए। 'मिच्छत्त णवुंसये च सम्मत्ते' ऐसा कहनेपर मिथ्यात्व पर्यायमें, नपुंसक-वेद पर्यायमें और सम्यक्त्व पर्यायमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं। ऐसा इस सूत्र और अर्थका परस्पर सम्बन्ध करना चाहिये।

§ ३५१. उनमेंसे मिथ्यात्वपर्याय और नपुंसकवेदपर्याय कर्मस्थितिके भीतर अवश्यंभावी हैं, क्योंकि इनकी प्राप्तिके बिना कर्मस्थितिकी समाप्तिका अन्य कोई उपाय नहीं है। सम्यक्त्व-पर्याय भी यहाँपर अवश्यंभावी ही है, क्योंकि उसके बिना क्षपकश्रेणिपर आरोहण करना असम्भव है। इसलिए इन पर्यायोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं। इस प्रकार उक्त मार्गणाओंमें पूर्वबद्ध कर्म क्षपकके अभजनीय हैं यह सिद्ध हो गया।

विशेषार्थ—कर्मस्थिति कालके भीतर यह जीव अनेक बार पर्याप्त भी हुआ है और अपर्याप्त भी हुआ है। साथ ही त्रसपर्यायकी कायस्थिति साधिक दो हजार सागरोपम है, अतः उसका कर्मस्थितिके भीतर नपुंसकवेद और मिथ्यात्वके साथ एकेन्द्रियपर्यायमें रहना भी अवश्यंभावी है। इस प्रकार तो पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थाके साथ नपुंसकवेद मार्गणा और मिथ्यात्वगुणस्थानमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं। साथ ही यह भी नियम है कि सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके बाद ही इस जीवका संयमपूर्वक क्षपकश्रेणिपर आरोहण करना बन सकता है, इसलिए सम्यक्त्वमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्म इस जीवके नियमसे पाये जाते हैं।

§ ३५२. 'त्थी पुरिसे मिस्सए भज्जा' ऐसा कहनेपर स्त्रीवेद, पुरुषवेद और सम्यग्मिथ्यात्व पर्यायमें इस जीवके द्वारा बाँधे गये कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि कर्मस्थितिके भीतर इन मार्गणाओंके अवश्य होनेका नियम नहीं पाया जाता। सासादन-

लंभादो। सासणसम्माइट्ठिणा च बद्धाणि भयणिज्जाणि त्ति एसो वि अत्थो एत्थ वक्खाणेयव्वो, मिस्सणिद्दे सस्सेदस्स देसामासयभावेण पवुत्तिअब्भुवगमादो।

§ ३५३. संपहि एदस्सेव गाहासुत्तत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

*** विहासा।**

§ ३५४. सुगमं।

*** पज्जत्तेण अपज्जत्तेण मिच्छाइट्ठिणा सम्माइट्ठिणा णवुंसयवेदेण च एवंभावभूदेण बद्धाणि णियमा अत्थि।**

*** इत्थीए पुरिसेण सम्मामिच्छाइट्ठिणा च एवंभावभूदेण बद्धाणि भज्जाणि।**

§ ३५५. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि। णवरि 'एवंभावभूदेणेत्ति' भणिदे एवंविहभावपरिणदेण जीवेण बद्धाणि कम्माणि एदस्स खवयस्स भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेण अत्थि त्ति घेत्तव्वं। एवं पढमभासगाहाए विहासा समत्ता।

सम्यग्दृष्टिके द्वारा बद्ध कर्म भी इस क्षपकके भजनीय हैं इस अर्थका भी यहाँ व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि यहाँपर इस मिश्रपदके निर्देशकी देशामर्षकरूपसे प्रवृत्ति स्वीकार की गयी है।

विशेषार्थ—कर्मस्थितिके भीतर कोई जीव एकेन्द्रिय पर्यायसे स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी हुए बिना सीधा नपुंसकवेदके साथ मनुष्य और सम्यग्दृष्टि होकर तथा सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सासादन-सम्यग्दृष्टि न होकर संयमपूर्वक क्षपकश्रेणिपर आरोहण करे यह सम्भव है। यही कारण है कि उक्त मार्गणाओंमें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके अभजनीय कहे हैं, क्योंकि जो कर्मस्थितिके भीतर उक्त मार्गणाओंमेंसे विवक्षित किसी मार्गणाको प्राप्त कर क्रमशः क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उसके तो पूर्वोक्त विवक्षित मार्गणामें बाँधे गये कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं और जो कर्मस्थितिके भीतर शेष मार्गणाओंमेंसे किसी भी मार्गणाको प्राप्त हुए बिना क्षपकश्रेणिपर आरोहण करता है उस क्षपकके उक्त मार्गणामें बाँधा गया कर्म इस क्षपकके नियमसे नहीं पाया जाता है। इसीलिए शेष मार्गणाओंकी अपेक्षा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय कहे हैं।

§ ३५३. अब इसी गाथासूत्रका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

*** अब प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ३५४. यह सूत्र सुगम है।

*** पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्थासे युक्त मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि और नपुंसकवेद इस प्रकार इन भावोंसे परिणत जीवके द्वारा बद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं इसलिए अभजनीय हैं।**

*** स्त्रीवेद, पुरुषवेद और सम्यग्मिथ्यादृष्टि इस प्रकार इन भावोंसे परिणत जीवके द्वारा बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं।**

§ ३५५. ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं। इतनी विशेषता है कि 'एवंभावभूदेण' ऐसा कहनेपर इस प्रकारके भावोंसे परिणत जीवके द्वारा बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे पाये जाते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त हुई।

* एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ ३५६. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ ३५७. सुगमं ।

(१३५) ओरालिये सरीरे ओरालियमिस्सए च जोगे दु ।
चदुविधमण-वचिजोगे च अभज्जगा सेसगे भज्जा ॥१८८॥

§ ३५८. एसा विदियभासगाहा जोगमग्गणाविसये पयदत्थगवेसणट्ठमोइण्णा । तं जहा—'ओरालिये सरीरे०' एवं भणिदे ओरालियकायजोगेण ओरालियमिस्सकायजोगेण चउव्विहमण-जोग-चउव्विहवचिजोगभेदेसु च वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि एदस्स खवगस्स णियमा अत्थि, तदो ण ताणि भजियव्वाणि त्ति सुत्तत्थसंगहो। एदेसिमभज्जत्ते कारणं सुगमं। 'सेसगे भज्जा' एवं भणिदे सेसजोगेसु वेउव्विय-वेउव्वियमिस्स-आहार-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगसण्णिदेसु पुव्वबद्धकम्मपदेसा भजियव्वा, तेसिं कम्मट्ठिदिअब्भंतरे अवस्संभावणियमाणुवलंभादो त्ति घेत्तव्वं। संपहि एदस्सेव सुत्तत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमो विहासागंथो—

* विहासा ।

§ ३५९. सुगमं ।

---

* इससे आगे दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ ३५६. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ ३५७. यह सूत्र सुगम है ।

(१३५) औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, चारों मनोयोग और चारों वचन-योगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं तथा शेष योगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ॥१२९॥

§ ३५८. यह दूसरी भाष्यगाथा योगमार्गणामें प्रकृत अर्थकी गवेषणा करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । वह जैसे 'ओरालिये सरीरे०' ऐसा कहनेपर औदारिककाययोग, औदारिकमिश्र-काययोग, चारों प्रकारके मनोयोग और चारों प्रकारके वचनयोगके भेदोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं, इसलिए वे भजनीय नहीं हैं इस प्रकार यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इन योगोंमें बद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं इस विषयमें कारणका कथन सुगम है। 'सेसगे भज्जा' ऐसा कहनेपर वैक्रियिककाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, आहारककाययोग, आहारकमिश्रकाययोग और कार्मणकाययोगसंज्ञक इन योगोंमें पूर्वबद्ध कर्मप्रदेश इस क्षपकके भजनीय हैं, क्योंकि ये योग कर्मस्थितिके भीतर अवश्य ही होते हैं ऐसा नियम नहीं पाया जाता ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। अब इसी सूत्रके अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेका विभाषाग्रन्थ आया है—

* अब दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ३५९. यह सूत्र सुगम है ।

*** ओरालिएण ओरालियमिस्सएण चउव्विहेण मणजोगेण चउव्विहेण वचिजोगेण बद्धाणि अभज्जाणि।**

*** सेसजोगेसु बद्धाणि भज्जाणि।**

§ ३६०. गयत्थमेवं सुत्तद्दयं। णवरि गाहासुत्ते 'ओरालिये सरीरे' इच्चादि सत्तमी विहत्तिणिद्देसो चुणिसुत्ते पुण 'ओरालिएण ओरालियमिस्सेणेत्ति' एवमादिओ तदियाविहत्तिणिद्देसो कदो। कथमेदेसिं दोण्हमविरोहो त्ति पुच्छिदे णत्थि विरोहो, विवक्षातः कारकाणि भवन्तीति न्यायात्। एवं विदियभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता।

*** एत्तो तदियभासगाहा।**

§ ३६१. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ ३६२. सुगमं।

(१३६) अध सुद-मदिउवजोगे होंति अभज्जाणि पुव्वबद्धाणि।
भज्जाणि च पच्चक्खेसु दोसु छदुमत्थणाणेसु ॥१८९॥

§ ३६३. एसा तदियभासगाहा णाणमग्गणाए पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जभावगवेसणट्ठमोइण्णा। तं जहा 'अध सुद-मदिउवजोगे' एवं भणिदे सुदणाणोवजोगे मदिणाणोवजोगे च वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि अभयणिज्जाणि होंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो। मदि-सुदअण्णाणं पि एत्थेव

*** औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, चार प्रकारके मनोयोग और चार प्रकारके वचनयोगके साथ बद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं। तथा शेष योगोंमें बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं।**

§ ३६०. ये दोनों सूत्र गतार्थ हैं। इतनी विशेषता है कि गाथासूत्रमें 'ओरालिये सरीरे' इस प्रकार सप्तमी विभक्तिका निर्देश किया है परन्तु चूर्णिसूत्रमें तो 'ओरालिएण ओरालियमिस्सेण' इस प्रकार तृतीया विभक्तिका निर्देश किया है, इसलिए इन दोनों वचनोंमें अविरोध किस प्रकार है ऐसी पृच्छा होनेपर कहते हैं कि इसमें कोई विरोध नहीं है, क्योंकि विवक्षाके अनुसार कारकोंकी प्रवृत्ति होती है ऐसा न्याय है। इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई।

*** इससे आगे तीसरी भाष्यगाथा कहते हैं।**

§ ३६१. वह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ ३६२. यह सूत्र सुगम है।

(१३६) मतिज्ञान और श्रुतज्ञान इन दोनों उपयोगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं तथा छद्मस्थके दो प्रत्यक्ष उपयोगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ॥१८९॥

§ ३६३. यह तीसरी भाष्यगाथा ज्ञानमार्गणामें पूर्वबद्ध कर्मोंके इस क्षपकके भजनीय और अभजनीय भावकी गवेषणाके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'अध सुद-मदिउवजोगे' ऐसा कहनेपर श्रुतज्ञानोपयोगमें और मतिज्ञानोपयोगमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय

संगहो कायव्वो, मदि-सुदोवजोगत्तेण भेदाभावादो। तदो एदेसु चदुसु उवजोगेसु पुव्वबद्धाणि खवगस्स णियमा अत्थि त्ति घेत्तव्वं, एदेसिमुवजोगाणमेदस्स खवगस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरे णिच्छएण संभवदंसणादो। 'भज्जाणि च पच्चक्खेसु दोसु०' एवं भणिदे छदुमत्थविसये जाणि पच्चक्खाणि अवहिमणपज्जवणाणाणि तेसु पुव्वबद्धाणि भजियव्वाणि त्ति सुत्तत्थो, मदि-सुदणाणाणं व दोण्हमेदेसिं खवगस्स पुव्वावत्थाए अवस्संभाविणियमाणुवलंभादो। एत्थ अवहिणाणणिद्देसेणेव विहंगणाणस्स वि गहणं कायव्वं; तस्स वि तदंतब्भावत्तादो। संपहि एदस्सेव फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाह—

* विहासा।

§ ३६४. सुगमं।

* **सुदणाणे अण्णाणे मदिणाणे अण्णाणे एदेसु चदुसु उवजोगेसु पुव्वबद्धाणि णियमा अत्थि।**

* **ओहिणाणे अण्णाणे मणपज्जवणाणे एदेसु तिसु उवजोगेसु पुव्वबद्धाणि भजियव्वाणि।**

§ ३६५. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि। एवं तदियभासगाहाए विहासा समत्ता।

* **एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा।**

हैं यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। मत्यज्ञान और श्रुताज्ञानका भी यहींपर संग्रह कर लेना चाहिए, क्योंकि मतिज्ञान और श्रुतज्ञान उपयोग सामान्यकी अपेक्षा उनसे इनमें कोई भेद नहीं है, इसलिए इन चार उपयोगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि ये चारों उपयोग इस क्षपकके कर्मस्थितिके भीतर नियमसे सम्भव देखे जाते हैं। 'भज्जाणि च पच्चक्खेसु दोसु०' ऐसा कहनेपर छद्मस्थके जो प्रत्यक्ष अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान रूप दो उपयोग होते हैं उनमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं यह इस सूत्रका अर्थ है, क्योंकि मतिज्ञान और श्रुतज्ञानके समान ये दोनों उपयोग इस क्षपकको पूर्वावस्थामें अवश्य ही होते हैं ऐसा कोई नियम नहीं उपलब्ध होता। यहाँ इस सूत्रमें अवधिज्ञानका निर्देश करनेसे ही विभंगज्ञानका भी ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उसका भी उसमें अन्तर्भाव हो जाता है। अब इसी अर्थका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

* **अब इस तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ३६४. यह सूत्र सुगम है।

* **श्रुतज्ञान, श्रुतअज्ञान, मतिज्ञान और मत्यज्ञान इन चार उपयोगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं।**

* **अवधिज्ञान, अवधिअज्ञान और मनःपर्ययज्ञान इन तीन उपयोगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं।**

§ ३६५. ये दोनों सूत्र सुगम हैं। इस प्रकार तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त हुई।

* **इससे आगे चौथी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ ३६६. सुगमं।

(१३७) कम्माणि अभज्जाणि दु अणगार-अचक्खुदंसणुवजोगे।
अध ओहिदंसणे पुण उवजोगे होंति भज्जाणि ॥१९०॥

§ ३६७. एसा चउत्थी भासगाहा दंसणमग्गणाविसये पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जा-भयणिज्जसरूवेण अत्थित्तगवेसणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'कम्माणि अभज्जाणि दु०' एवं भणिदे चक्खुदंसणोवजोगे अचक्खुदंसणोवजोगे च वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स णियमा अत्थि त्ति वुत्तं होइ, दोण्हमेदेसिमुवजोगाणमेदस्स खवगस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरे णिच्छएण संभवदंसणादो। एत्थ अणगारोवजोगे त्ति सामण्णणिद्देसे वि पारिसेसियणाएण चक्खुदंसणोव जोगस्सेव गहणं कायव्वं, सेसाणं दोण्हं छदुमत्थदंसणोवजोगाणं सुत्ते पुध णिद्देसदंसणादो। 'अध ओहिदंसणे पुण०' एवं भणिदे ओधिदंसणोवजोगे वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि एदस्स खवगस्स भयणिज्जाणि त्ति घेत्तव्वं, ओहिदंसणावरणक्खओवसमस्स सव्वजीवेसु संभवाणुवलंभादो। संपहि एवंविहो एदिस्से गाहाए अत्थो सुगमो त्ति कादूण ण तत्थ विहासंतरमाढवेयव्वमिदि पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* विहासा एसा।

§ ३६८. एसा चेव समुक्कित्तणा एदिस्से गाहाए विहासासरूवेण पयट्टा, सुबोहत्तादो। तम्हा ण एदिस्से विहासंतरमेण्हिमाढविज्जदि त्ति एसो एदस्स भावत्थो। एवमेत्तिएण पबंधेण पंचमीए मूलगाहाए विहासणं समाणिय संपहि जहावसरपत्ताए छट्ठमूलगाहाए विहासणं कुणमाणो

---

§ ३६६. यह सूत्र सुगम है।

* अनाकार चक्षुदर्शनोपयोग और अचक्षुदर्शनोपयोगमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं। तथा अवधिदर्शनोपयोगमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं।

§ ३६७. यह चौथी भाष्यगाथा दर्शनमार्गणाके विषयमें पूर्वबद्ध कर्मोंके इस क्षपकके भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे अस्तित्वकी गवेषणा करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे'—कम्माणि अभज्जाणि दु' ऐसा कहनेपर चक्षुदर्शनोपयोग और अचक्षुदर्शनोपयोगमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि इन दोनों उपयोगोंका इस क्षपकके कर्मस्थितिके भीतर निश्चयसे सम्भव देखा जाता है। इस सूत्रमें 'अणगारोवजोगो' ऐसा सामान्य निर्देश करनेपर भी परिशेषन्यायसे चक्षुदर्शनोपयोगका ही ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि शेष दो छद्मस्थ उपयोगोंका सूत्रमें पृथक् निर्देश देखा जाता है। 'अध ओहिदंसणे पुण' ऐसा कहनेपर अवधिदर्शनोपयोगमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अवधिदर्शनावरणका क्षयोपशम सब जीवोंमें सम्भवरूपसे नहीं उपलब्ध होता। अब इस प्रकारका इस भाष्यगाथाका अर्थ सुगम है ऐसा करके उसके विषयमें अन्य दूसरी विभाषा आरम्भ नहीं करनी चाहिए ऐसा कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* यह समुत्कीर्तना ही इसकी विभाषा है।

§ ३६८. यह समुत्कीर्तना ही इस भाष्यगाथाकी विभाषारूपसे प्रवृत्त है, इसलिए इस समय इसकी दूसरी विभाषा आरम्भ नहीं की जाती है यह इसका भावार्थ है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा पांचवीं मूल गाथाकी विभाषा समाप्त करके अब यथावसर प्राप्त छठी मूल गाथाकी विभाषा

उवरिमं पबंधमाढवेइ—

* एत्तो छट्ठी मूलगाहा ।

§ ३६९. एत्तो उवरि छट्ठी मूलगाहा विहासियव्वा त्ति ।

(१३८) किं लेस्साए बद्धाणि केसु कम्मेसु वट्टमाणेण ।
सादेण असादेण च लिंगेण च कम्हि खेत्तम्हि ॥१९१॥

§ ३७०. एसा मूलगाहा लेस्सामग्गणाए सिप्पकम्मभेदेसु सादासादोदये तावसादिलिंगग्गहणेसु खेत्त-कालविभागेसु च वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणं कम्माणं खवगसंबंधेण भयणिज्जाभयणिज्जसरूवेण संभवगवेसणट्ठमोइण्णा । तं जहा—'किंलेस्साए बद्धाणि' एवं भणिदे छव्विहाए लेस्साए बद्धाणि कम्माणि किमेदस्स खवगस्स भयणिज्जाणि आहो ण भयणिज्जाणि त्ति पुच्छाहिसंबंधो । तदो एसो सुत्तावयवो लेस्सामग्गणाए पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जाभयणिज्जभावगवेसणट्ठमुवणिबद्धो दट्ठव्वो ।

§ ३७१. 'केसु व कम्मेसु वट्टमाणेण' जीवनोपायभूताः क्रियाविशेषाः कर्माणि कृष्यादीनि । तत्थ केसु कम्मेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स भज्जाणि केसु वा ण भज्जाणि त्ति पुच्छा एदेण कदा होइ ।

§ ३७२. 'सादेण असादेण च' एदेण सुत्तावयवेण सादासादोदयविसेसिदेण जीवेण पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जाभयणिज्जभावमग्गणा पुच्छामुहेण णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा ।

करते हुए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* अब इससे आगे छठी मूलगाथाका अवतार करते हैं ।

§ ३६९. इससे आगे छठी मूलगाथाकी विभाषा करनी चाहिए ।

(१३९) किस लेश्यामें, किन कर्मोंमें, किस क्षेत्र और कालमें वर्तमान जीवके द्वारा तथा साता, असाता और किस लिंगके साथ बद्ध कर्म इस क्षपकके पाये जाते हैं ॥१९१॥

§ ३७०. यह मूल सूत्रगाथा लेश्या मार्गणामें, शिल्पकर्मके भेदोंमें, साता और असाताके उदयमें, तापस आदि लिंगग्रहणोंमें तथा क्षेत्र और कालके भेदोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्मोंके क्षपकके सम्बन्धसे भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे सम्भवकी गवेषणा करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । वह जैसे—'किंलेस्साए बद्धाणि' ऐसा कहनेपर छह प्रकारकी लेश्याओंमें बद्ध कर्म क्या इस क्षपकके भजनीय हैं या भजनीय नहीं हैं इस प्रकार इस पृच्छका प्रकृतमें सम्बन्ध है । इसलिए यह सूत्रका अवयव लेश्यामार्गणामें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं या अभजनीय हैं इस बातकी गवेषणा करनेके लिए निबद्ध की गई जाननी चाहिए।

§ ३७१. 'केसु व कम्मेसु वट्टमाणेण'—जीवन संचालनके उपायभूत क्रियाविशेष कृषी आदि कर्म हैं । उनमेंसे किन कर्मोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं तथा किन कर्मोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय नहीं हैं यह पृच्छा इस वचन द्वारा की गयी है ।

§ ३७२. तथा इस सूत्रके 'सादेण असादेण च' इस अवयवद्वारा सातावेदनीय और असातावेदनीयके उदयसे युक्त जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं या अभजनीय हैं यह मार्गणा उक्त पृच्छाद्वारा की गयी जाननी चाहिए।

§ ३७३. 'लिंगेण च' एव भणिदे लिंगग्गहणेसु तावसादिवेसग्गहणलक्खणेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि किमेदस्स खवगस्स अत्थि आहो णत्थि त्ति पुच्छाणिद्देसो कदो होइ।

§ ३७४. 'कम्हि खेत्तम्हि' एवं भणिदे उड्ढाधोतिरियलोयभेयभिण्णेसु खेत्तवियप्पेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जाभयणिज्जभावविसया पुच्छा णिद्दिट्ठा त्ति घेत्तव्वा। एदेणेव देसामासयभावेण कालविभागेसु वि ओसप्पिणि-उस्सप्पिणिभेयभिण्णेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणं कम्माणं भयणिज्जाभयणिज्जभावविसओ पुच्छाणिद्देसो संगहेयव्वो। वुत्तसेसाणं संजमादिमग्गणाणं च एत्थेव संगहो वट्ठव्वो; सुत्तस्सेदस्स देसामासयत्तादो। एवमेदीए मूलगाहाए पुच्छामेत्तेण सूचिदाणमत्थविसेसाणं विहासणं कुणमाणो तत्थ पडिबद्धाणं भासगाहाणमियत्तावहारणट्ठमिदमाह—

* एदिस्से दो भासगाहाओ।

§ ३७५. सुगमं।

* तासिं समुक्कित्तणा।

§ ३७६. तासिं दोण्हं भासगाहाणं जहाकममेसा समुक्कित्तणा वट्ठव्वा त्ति वुत्तं होइ।

(१३९) लेस्सा साद असादे च अभज्जा कम्म सिप्प लिंगे च।
खेत्तम्हि च भज्जाणि दु समाविभागे अभज्जाणि ॥१९२॥

---

§ ३७३. 'लिंगेण च' ऐसा कहनेपर तापस आदि लिंगग्रहणलक्षण लिंगग्रहणोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके हैं या नहीं हैं यह पृच्छानिर्देश किया गया है।

§ ३७४. 'कम्हि खेत्तम्हि' ऐसा कहनेपर ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यग्लोकके भेदसे भेदको प्राप्त हुए क्षेत्रविशेषोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म भजनीय हैं या अभजनीय हैं यह पृच्छा निर्दिष्ट की गयी जाननी चाहिए। तथा इसी वचनके द्वारा देशामर्षकरूपसे ग्रहण किये गये अवसर्पिणी और उत्सर्पिणीके भेदसे भेदको प्राप्त हुए कालके विभागोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं या अभजनीय हैं इस पृच्छानिर्देशका संग्रह करना चाहिए। तथा पूर्वमें जिन मार्गणाओंकी अपेक्षा निर्देश कर आये हैं उनसे शेष रहीं संयम आदि मार्गणाओंका संग्रह भी यहींपर कर लेना चाहिए। इस प्रकार इस मूलगाथामें पृच्छाद्वारा सूचित हुए अर्थविशेषकी विभाषा करते हुए उक्त विषयमें प्रतिबद्ध भाष्यगाथाओंकी इयत्ताका अवधारण करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* इस छठी मूलगाथाकी दो भाष्यगाथाएँ हैं।

§ ३७५. यह सूत्र सुगम है।

* अब उनकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ ३७६. उन दोनों भाष्यगाथाओंकी यथाक्रमसे समुत्कीर्तना जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(१३९) सभी लेश्याओंमें तथा साता और असातामें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं। असि आदि सभी कर्मोंमें, सभी शिल्पोंमें, सभी लिंगोंमें और सभी क्षेत्रोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं। तथा कालके सभी विभागोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ॥१९२॥

§ ३७७. एसा पढमभासगाहा पुव्वुत्ताणं सव्वासिमेव पुच्छाणं णिण्णयविहाणट्ठमोइण्णा। संपहि एदिस्से किंचि अवयवत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—'लेस्सा साद असादे च' एवं भणिदे छसु लेस्सासु सादासादोदएसु च वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि अभज्जाणि णियमा ताणि अत्थि त्ति वुत्तं होदि। कुदो एदेसिमभज्जत्तणियमो त्ति चे ? लेस्साभेदाणं सादासादोदयाणं च तिरिक्ख-मणुस्सेसु अंतोमुहुत्तेण परावत्तणणियमदंसणादो। ण चावट्ठिदलेस्सेसु देव-णेरइएसु पविट्ठस्स अण्णहाभाव-संभवो आसंकणिज्जो, कम्मट्ठिदिमेत्तकालं तत्थावट्ठाणासंभवेण तिरिक्ख-मणुस्सेसुप्पज्जिय छसु लेस्सासु परावत्तमाणस्स सव्वलेस्सासंचयाणं खवगसेढीए अवस्संभावणियमदंसणादो।

§ ३७८. 'कम्म सिप्प लिंगे च' एवं भणिदे सव्वेसु कम्मेसु सव्वेसु सिप्पेसु सव्वेसु च लिंगग्गहणेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि भजिदव्वाणि त्ति सुत्तत्थसंबंधो। कुदो एदेसिं भयणिज्जत्तमिदि चे ? तेसिमवस्संभावणियमाभावादो। णिग्गंथलिंगसंचयस्स अवस्संभावणियमदंसणादो ण

---

§ ३७७. यह प्रथम भाष्यगाथा पूर्वोक्त सभी पृच्छाओंका निर्णय करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। अब इसमें आये हुए पदोंके किंचित् अर्थकी प्ररूपणा करेंगे। वह जैसे—'लेस्सा साद असादे च' ऐसा कहनेपर छहों लेश्याओं और साता-असातावेदनीयके उदयोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं। उक्त स्थानोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—उक्त स्थानोंमें पूर्वबद्ध कर्मोंके इस क्षपकके अभजनीयपनेका नियम किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि तिर्यंचों और मनुष्योंमें लेश्याके भेदोंका और साता-असाताके उदयका अन्तर्मुहूर्तमें परिवर्तनका नियम देखा जाता है। तथा अवस्थित लेश्यावाले देव और नारकियोंमें प्रविष्ट हुए जीवकी अपेक्षा अन्यथाभाव सम्भव है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि कर्मस्थितिमात्र काल तक उन गतियोंमें अवस्थान असम्भव होनेसे तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर छहों लेश्याओंमें परावर्तन करनेवाले जीवके सब लेश्याओंमें संचित हुए कर्मोंका क्षपक-श्रेणिमें अवश्य ही पाये जानेरूप नियम देखा जाता है।

विशेषार्थ—देवगति और नरकगतिमें यद्यपि अवस्थित लेश्याएँ पायी जाती हैं, परन्तु कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर जो जीव इन गतियोंमें जन्म न लेकर मात्र तिर्यंचगति और मनुष्यगतिमें ही रहे और अन्तमें उसी कालके भीतर क्षपकश्रेणिपर आरोहण करे यह नियमसे सम्भव है। साथ ही इन गतियोंमें यथायोग्य छहों लेश्याएँ नियमसे पायी जाती हैं, क्योंकि इन गतियोंमें उनमेंसे प्रत्येक लेश्याका काल ही अन्तर्मुहूर्त है। इसलिए तो छहों लेश्याओंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं यह निश्चित होता है। इसी न्यायसे सातावेदनीय और असातावेदनीयके उदयकी अपेक्षा भी समझ लेना चाहिए।

§ ३७८. 'कम्म सिप्प लिंगे च' ऐसा कहनेपर सब कर्मोंमें, सब शिल्पोंमें और सभी लिंगग्रहणोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं यह सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है।

शंका—इन स्थानोंमें बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय किस कारणसे हैं ?

समाधान—क्योंकि इन स्थानोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अवश्य ही होते हैं ऐसा नियम नहीं है।

सव्वलिंगसंचयस्स भयणिज्जत्तावहारणमेदं घडदि त्ति णासंकणिज्जं; पासंडिलिंगाणमेव सवियारवेसाणमेत्थ विवक्खियत्तादो। ण च जिणलिंगग्गहणे सवियारवेसग्गहणमत्थि; तस्स जादरूवसरूवत्तादो। तदो सव्वेसु परपासंडिलिंगेसु पुव्वबद्धाणं भयणिज्जत्तमेवेत्ति सिद्धं।

§ ३७९. 'खेत्तम्हि य भज्जाणि दु' एवं भणिदे तिरियलोयसंचयं धुवं कादूण सेसखेत्तम्हि अधोलोगे उड्ढलोगे च वट्टमाणेण संचिदकम्मस भज्जत्तं होइ त्ति सुत्तत्थो। सुत्ते एवंविहविसेसणिद्देसाभावे कधमेसो विसेसो विण्णादुं सक्किज्जदे ? ण, वक्खाणादो तहाविहविसेसपडिवत्तीदो।

§ ३८०. 'समाविभागे अभज्जाणि' एवं भणिदे समाविभागो णाम कालविभागो। सो पुण दुविहो ओसप्पिणि-उस्सप्पिणिभेदेण। तत्थ एक्केक्को सुसमसुसमादिभेदेण छव्विहो होदि। तत्थ सव्वत्थ वट्टमाणेण बद्धाणि कम्माणि णियमा अत्थि, तदो ताणि ण भयणिज्जाणि त्ति सुत्तत्थो। कुदो पुण तेसिमभयणिज्जत्तमिदि चे ? कम्मट्ठिदिअब्भंतरे ओसप्पिणि-उस्सप्पिणिकालाणं सांतब्भेदाणं परियत्तणणियमदंसणादो। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो उवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

शंका—इस क्षपकके निर्ग्रन्थ लिंग अवश्य ही सम्भव देखा जाता है, इसलिए सब लिंगोंमें संचित हुआ कर्म इस क्षपकके भजनीय है यह नियम नहीं घटित होता ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि विकारी वेशवाले पाखण्डी लिंग ही यहां विवक्षित हैं। और जिनलिंगके ग्रहणमें विकारी वेशका ग्रहण होता नहीं, क्योंकि वह यथाजातस्वरूप होता है, इसलिए सब परमतोंद्वारा स्वीकृत पाखण्डी लिंगोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं यह सिद्ध हुआ।

§ ३७९. 'खेत्तम्हि य भज्जाणि दु' ऐसा कहनेपर तिर्यग्लोकके संचयको ध्रुव करके शेष अधोलोक और ऊर्ध्वलोकमें विद्यमान जीवके संचित हुआ कर्म इस क्षपकके भजनीय है यह इस सूत्रवचनका अर्थ है।

शंका—सूत्रमें इस प्रकारके विशेषका निर्देश नहीं किया, अतः इस विशेषको जानना कैसे शक्य है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि व्याख्यानसे इस प्रकारके विशेषका ज्ञान हो जाता है।

§ ३८०. 'समाविभागे अभज्जाणि' ऐसा कहनेपर समाविभागका अर्थ कालका विभाग है। और वह अवसर्पिणी और उत्सर्पिणीके भेदसे दो प्रकारका है। उनमेंसे एक-एक काल सुषमा-सुषमा आदिके भेदसे छह प्रकारका है। उन सब कालोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म नियमसे हैं। इसलिए वे भजनीय नहीं हैं यह इस सूत्रवचनका अर्थ है।

शंका—इन कालोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय कैसे हैं ?

समाधान—क्योंकि कर्मस्थितिके भीतर अपने अन्तर्भेदोंके साथ अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी कालोंके परिवर्तनका नियम देखा जाता है। इसलिए इन कालोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं यह सिद्ध हो जाता है।

अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

* विहासा ।

§ ३८१. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ ३८२. सुगमं ।

* छसु लेस्सासु सादेण असादेण च बद्धाणि अभज्जाणि ।

§ ३८३. छसु लेस्सासु सादासादोदयेसु च पुव्वबद्धाणि कम्माणि णियमा अत्थि, तेसिं भयणिज्जत्ते कारणाणुवलंभादो ।

* कम्म सिप्पेसु भज्जाणि ।

§ ३८४. कम्मेसु च सिप्पेसु च वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि भजियव्वाणि त्ति वुत्तं होदि । एत्थ भयणिज्जत्ते कारणं सुगमं । संपहि काणि ताणि कम्माणि जेसु वट्टमाणेण बद्धाणं कम्माणं भयणिज्जत्तमेवं परूविज्जदि त्ति आसंकाए कम्मभेदाणं णिद्देसं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* कम्माणि जहा—अंगारकम्मं वण्णकम्मं पव्वदकम्ममेदेसु कम्मेसु भज्जाणि ।

§ ३८५. एत्थ 'अंगारकम्मं इदि भणिदे अंगारसंपायणट्ठा कट्ठदहणकिरिया घेत्तव्वा, कट्ठंगारसमाणणेण बहूणं कम्मकराणं जीवणोवलंभादो । अथवा तेहि तहा णिव्वत्तिदेहि अंगारेहि

---

* अब इस प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ३८१. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ ३८२. यह सूत्र सुगम है ।

* छह लेश्याओंमें तथा सातोदय और असातोदयके साथ पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं ।

§ ३८३, इन छहों लेश्याओंमें तथा सातोदय और असातोदयमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं, क्योंकि उनके भजनीयपनेमें कारण नहीं पाया जाता ।

* कर्मों और शिल्पोंमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ।

§ ३८४. कर्मोंमें और शिल्पकार्योंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । यहाँ भजनीयपनेमें कारण सुगम है । अब वे कर्म कौन हैं जिनमें विद्यमान जीवके द्वारा बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं यह कहा जाता है ऐसी आशंका होनेपर इन कर्मोंका निर्देश करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* कर्म यथा—अंगारकर्म, वर्णकर्म और पर्वतकर्म इन कर्मोंमें बद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं ।

§ ३८५. इस सूत्रमें 'अंगारकम्मं' ऐसा कहनेपर अंगारकार्यको सम्पादन करनेके लिए लकड़ीके जलानेरूप क्रियाको ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यहाँ काष्ठांगारसे बने भोजनसे बहुतसे कर्मकरोंका जीवन उपलब्ध होता है । अथवा अंगारकर्मसे जो उसी प्रकारके अन्य अंगार

जो सुवण्णसंभारणादिवावारो[1] सो वि अंगारकम्ममिदि घेत्तव्वं। वण्णकम्मं णाम, चित्तकम्मं वत्थ-रंजणादि घेत्तव्वं, हरियाल-हिंगुलुआदिवण्णाणमण्णोण्णसंजोगजणिदवण्णभेदेहिं पड-कुड्डादिसु विचित्तचित्तकम्मसंपादणेण खोमंसुअ-दुगुलादिवत्थविसेसरंजणेण च जीवंताणं बहुआणमुवलंभादो। 'पव्वदकम्मं' इदि वुत्ते लयण-खणण-सिलाथंभघडण-तलउडभसमारणादिसेलकम्मस्स गहणं कायव्वं। एवंपयारा अण्णे वि कम्मविसेसा मूसाकम्मादयो[2] एदेण देसामासयसुत्तेण णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा। तदो एदेसु कम्मभेदेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स भजिदव्वाणि, सव्वेसु जीवेसु एदेसिमवस्संभाविणियमाभावादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। एदेणेव देसामासयसुत्तेण सिप्पभेदाणं पि पत्तछेदादीणं संगहो कायव्वो, 'हस्तनैपुण्यं शिल्पमिति' वचनात्।

* सव्वलिंगेसु च भज्जाणि।

§ ३८६. णिग्गंथलिंगवदिरित्तसेसाणं सलिंगग्गहणेसु वट्टमाणेण पुव्वबद्धाणि कम्माणि एदस्स खवगस्स भयणिज्जाणि त्ति वुत्तं होइ। किं कारणं? तावसादिवेसग्गहणाणं सव्वजीवेसु संभवणियमाणुवलंभादो। तदो सिद्धमेदेसिं भयणिज्जत्तं।

निष्पन्न किये जाते हैं उनसे जो स्वर्णका संस्कृत करना आदि व्यापार किया जाता है वह भी अंगारकर्म है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। वर्णकर्मसे वस्त्रका रँगना आदि चित्रकर्मको ग्रहण करना चाहिए। हरताल, हिंगुल आदि रंगोंके परस्पर संयोगसे उत्पन्न हुए नाना प्रकारके रंगोंद्वारा वस्त्र, दीवाल आदि पर नाना प्रकारके चित्रकर्मसम्पादन द्वारा तथा कपाससे बना हुआ वस्त्र और वृक्षकी छालसे बना हुआ वस्त्र आदि वस्त्रविशेषके रँगने द्वारा जीविका करनेवाले बहुत प्रकारके मनुष्य पाये जाते हैं। 'पव्वदकम्मं' ऐसा कहनेपर गुफाका खोदना, शिला व स्तम्भका घड़ना और तलगृहका निर्माण करना आदि शैलकर्मका ग्रहण करना चाहिए। तथा इसी प्रकारके मूसाकर्म (धातु गलानेका कर्म) आदि और भी कर्मविशेष इस पदद्वारा देशामर्षकरूपसे निर्दिष्ट किये गये जानने चाहिए। इसलिए कर्मके इन भेदोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय होते हैं। क्योंकि जो जीव क्षपकश्रेणिपर चढ़ते हैं उन सबके ये कर्म अवश्य ही होते हैं ऐसा कोई नियम नहीं है। इस प्रकार यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। तथा इसी सूत्र द्वारा ही देशामर्षकभावसे शिल्पकर्मके भेद पत्रच्छेदन आदि कर्मोंका भी संग्रह करना चाहिए, क्योंकि हस्तकी निपुणताका नाम ही शिल्प है ऐसा वचन है।

* सब लिंगोंमें पूर्वबद्धकर्म इस क्षपकके भजनीय हैं।

§ ३८६. निर्ग्रन्थ लिंगके अतिरिक्त शेष सब लिंगग्रहणोंमें विद्यमान जीवके द्वारा पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके भजनीय हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि तापस आदि वेशोंका ग्रहण सब जीवोंमें सम्भव हो ऐसा नियम नहीं पाया जाता। इसलिए इन लिंगोंमें पूर्वबद्ध कर्मोंकी भजनीयता सिद्ध हो जाती है।

* क्षेत्रकी अपेक्षा अधोलोक और ऊर्ध्वलोकमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके स्यात् पाये जाते हैं। किन्तु तिर्यग्लोकमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं।

---

१. ता० प्रतौ —समारणादिवावारो इति पाठः। २. ता० प्रतौ मासा (मसि) कम्मादयो।

*** खेत्तम्हि सिया अधोलोगिगं सिया उड्ढलोगिगं णियमा तिरियलोगिगं ।**

§ ३८७. अधोलोगसंबंधेण उड्ढलोगसंबंधेण च जं बद्धं कम्मं तं सिया अत्थि सिया णत्थि त्ति भयणिज्जं । तिरियलोगियं तु कम्मं णियमा अत्थि त्ति वुत्तं होइ । तं कधं ? कम्मट्ठिदिकालब्भंतरे उड्ढलोगमगंतूण अधोलोगे चेव अच्छियूणागदस्स उड्ढलोगसंचओ ण लब्भदे । एवमधोलोगपरिहारेण उड्ढलोगे चेव कम्मट्ठिदिमेत्तकालमच्छियूणागदस्स अधोलोगसंचओ ण लब्भदि त्ति 'दोण्णमेदेसिं' भयणिज्जत्तं जादं उड्ढाधोलोगपरिहारेण तिरियलोगे चेव कम्मट्ठिदिमणुपालेदूणागदस्स वा खवगस्स तदुभयसंचओ ण लब्भदि त्ति भजियव्वो जादो । तिरियलोयसंचयो पुण ण भजियव्वो । कम्मट्ठिदिमेत्तकालमुड्ढाधोलोगेसु चेव समयाविरोहेणावट्ठिदस्स वि पुणो तिरियलोगखेत्तमणागंतूण खवगसेढिसमारोहणे संभवाणुवलंभादो । एत्थ तिरियलोयसंचयं धुवं कादूण उड्ढाधोलोयसंचयस्स भयणिज्जभावेण चत्तारि भंगा वत्तव्वा । संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** अधोलोगमुड्ढलोगिगं च सुद्धं णत्थि ।**

§ ३८८. अधोलोगसंचयो उड्ढलोगसंचयो च खवगसेढीए भयणिज्जभावेण संभवंतो जम्हि काले संभवइ तम्हि सुद्धो होदूण ण लब्भइ, किंतु तिरियलोगसंचयसम्मिस्सो चेव दीसइ । किं कारणं ? जहण्णदो वि संखेज्जावलियमेत्ततिरियलोयसंचयस्स मणुसपज्जाएण संचिदस्स तत्थाव-

---

§ ३८७. अधोलोकके सम्बन्धसे और ऊर्ध्वलोकके सम्बन्धसे जो कर्म बन्धको प्राप्त होता है वह इस क्षपकके स्यात् है और स्यात् नहीं है, इसलिए भजनीय है । परन्तु तिर्यग्लोकके सम्बन्धसे पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाया जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि कर्मस्थिति सम्बन्धी कालके भीतर ऊर्ध्वलोकमें न जाकर अधोलोकमें ही रहकर वहाँसे आये हुए इस क्षपक जीवके ऊर्ध्वलोकमें किया गया संचय नहीं पाया जाता। इसी प्रकार अधोलोकमें न जाकर कर्मस्थितिसम्बन्धी कालके भीतर ऊर्ध्वलोकमें ही रहकर वहाँसे आये हुए इस क्षपक जीवके अधोलोकमें किया गया कर्मोंका संचय इस क्षपकके नहीं पाया जाता, इसलिए इन दोनों लोकोंमें बद्ध कर्मोंकी भजनीयता इस क्षपकके बन जाती है। अथवा ऊर्ध्वलोक और अधोलोकका परिहार करके तिर्यग्लोकमें ही कर्मस्थितिका पालन करके आये हुए इस क्षपकके ऊर्ध्वलोक और अधोलोक उन दोनोंमें हुआ कर्म संचय इस क्षपकके नहीं पाया जाता, इसलिए भजनीय हो जाता है। परन्तु तिर्यग्लोकमें हुआ संचय इस क्षपकके भजनीय नहीं है, क्योंकि कर्मस्थितिसम्बन्धी कालके भीतर ऊर्ध्वलोक और अधोलोकमें समयके अविरोधपूर्वक रहे हुए जीवका तिर्यग्लोकसम्बन्धी क्षेत्रमें गये बिना क्षपकश्रेणिपर आरोहण करना सम्भव नहीं है। यहाँपर तिर्यग्लोकमें हुए संचयको ध्रुव करके ऊर्ध्वलोक और अधोलोकमें हुए संचयके भजनीयपनेके कारण चार भंग कहने चाहिए। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** अधोलोक और ऊर्ध्वलोकमें हुआ संचय इस क्षपकके शुद्ध नहीं पाया जाता।**

§ ३८८. अधोलोकमें हुआ संचय और ऊर्ध्वलोकमें हुआ संचय क्षपकश्रेणिमें भजनीयरूपसे सम्भव है, अतः जिस कालमें इस क्षपक जीवके सम्भव है उस कालमें शुद्ध होकर नहीं प्राप्त होता, किन्तु उक्त संचय तिर्यग्लोकमें हुए संचयके साथ सम्मिश्र होकर ही दिखाई देता है, क्योंकि जघन्यरूपसे भी संख्यात आवलिप्रमाण कालके भीतर तिर्यग्लोकमें जो संचय हुआ है

स्संभावणियमदंसणादो। तिरियलोयसंचयो पुण सुद्धो वि लब्भइ, कम्मट्ठिदिमेत्तकालं तिरियलोगे चेव अच्छियूण पुणो मणुसपज्जाए पडिलंभेण कम्मक्खयं कुणमाणस्स परिप्फुडमेव तदुवलंभादो। ण एत्थ मणुसगदिसंचयस्स तत्तो पुधभूदस्स संभवो आसंकणिज्जो; माणुसखेत्तस्स वि तिरियलोगंतब्भूदत्तणेण तत्तो पुधभूदाणुवलंभादो।

§ ३८९. संपहि 'समाविभागे अभज्जाणि' त्ति एदं सुत्तावयवमस्सियूण कालविभागे पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जभावगवेसणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** ओसप्पिणीए च उस्सप्पिणीए च सुद्धं णत्थि।**

§ ३९०. कुदो? कम्मट्ठिदिअब्भंतरे दोण्हमेदासिं परावत्तणणियमदंसणादो। तदो ओसप्पिणि-उस्सप्पिणिसंचओ अण्णोण्णसम्मिस्सो चेव होदूणेदस्स खवगस्स लब्भइ, ण सुद्धसरूवो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवमेत्तिएण पबंधेण पढमभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि जहावसरपत्ताए विदियभासगाहाए विहासणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

*** एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ ३९१. सुगमं।

(१४०) एदाणि पुव्वबद्धाणि होंति सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु।
सव्वेसु चाणुभागेसु णियमसा सव्वकिट्टीसु ॥१९३॥

वह मनुष्यपर्यायसम्बन्धी संचित कर्मद्रव्य है जो कि अवश्यंभावी होनेसे उस क्षपकके नियमसे पाया जाता है। परन्तु तिर्यग्लोकमें हुआ संचय इस क्षपकके शुद्ध भी पाया जाता है, क्योंकि कर्मस्थिति काल तक तिर्यग्लोकमें ही रहकर पुनः मनुष्यपर्यायके प्राप्त हो जानेसे कर्मक्षय करनेवाले जीवके स्पष्टरूपसे ही कर्मस्थितिके भीतर हुआ संचय पाया जाता है। यहाँ मनुष्यगति सम्बन्धी संचय उससे पृथग्भूत सम्भव है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि मनुष्यक्षेत्र भी तिर्यग्लोकके अन्तर्भूत है, इसलिए यह उससे पृथक् उपलब्ध नहीं होता।

§ ३८९. अब 'समाविभागे अभज्जाणि' इस सूत्रावयवका आश्रय कर कालके विभागोंमें पूर्वबद्ध कर्मोंके भजनीय और अभजनीयपनेकी गवेषणा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अवसर्पिणीमें और उत्सर्पिणीमें पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके शुद्ध नहीं पाया जाता।**

§ ३९०. क्योंकि कर्मस्थितिके भीतर इन दोनों कालोंके परावर्तनका नियम देखा जाता है, इसलिए अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी कालके भीतर परस्पर मिलित होकर ही इस क्षपकके प्राप्त होता है, शुद्धस्वरूप होकर प्राप्त नहीं होता यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार इतने प्रबन्धद्वारा प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा सम्पन्न करके अब यथावसरप्राप्त दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** यह दूसरी भाष्यगाथा समुत्कीर्तना है।**

§ ३९१. यह सूत्र सुगम है।

(१४०) ये पूर्वबद्ध कर्म स्थितिके सब भेदोंमें, सब अनुभागोंमें और सब कृष्टियोंमें नियमसे पाये जाते हैं॥१९३॥

§ ३९२. एसा बिदियभासगाहा 'कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु' त्ति चउत्थमूलगाहाए चरिमाव-यवमस्सियूण तीहिं मूलगाहाहिं समुद्दिट्ठाणमभयणिज्जाणं पुव्वबद्धाणं कम्मपदेसाणं ट्ठिदि-अणुभागेसु अवट्ठाणक्कमजाणावणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'एदाणि पुव्वबद्धाणि' जाणि इमाणि पुव्वबद्धाणि अभयणिज्जसरूवाणि तीसु मूलगाहासु समुद्दिट्ठाणि ताणि 'णियमसा' णिच्छयेणेव सव्वेसु ट्ठिदि-विसेसेसु दट्ठव्वाणि; सव्वेसिं कम्माणं जहण्णट्ठिदिमादिं कादूण जावुक्कस्सट्ठिदि त्ति तेसिमवट्ठाण-दंसणादो। 'सव्वेसु च अणुभागेसु' त्ति भणिदे चदुण्हं संजलणाणं सव्वसरिसघणियकिट्टीणं गहणं कायव्वं।

§ ३९३. 'सव्वकिट्टीसु' त्ति भणिदे सव्वासिं संगहकिट्टीणमवयवकिट्टीणं च एगोलीए गहणं कायव्वं। तेण कोहादिसंजलणाणमेक्केक्किस्से किट्टीए अणंतेसु सरिसघणियकिट्टीसु संभवंतीसु तत्थ लोभसव्वजहण्णकिट्टिमादिं कादूण जाव कोधुक्कस्सकिट्टि त्ति ताव सव्वकिट्टीणं सरिसघणिय-

---

§ ३९२. यह दूसरी भाष्यगाथा 'कदीसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु' इस चौथी मूलगाथाके अन्तिम चरणका अवलम्बन करके तीन मूलगाथाओं द्वारा निर्दिष्ट किये गये अभजनीय पूर्वबद्ध कर्म-प्रदेशोंके स्थिति और अनुभागोंमें अवस्थानक्रमका ज्ञान करानेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'एदाणि पुव्वबद्धाणि' अर्थात् जो ये पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके तीन मूलगाथाओंमें अभजनीय कहे गये हैं उन्हें 'णियमसा' निश्चयसे ही इस क्षपकके सब स्थितिविशेषोंमें जानना चाहिए, क्योंकि सभी कर्मोंकी जघन्य स्थितिसे लेकर उत्कृष्ट स्थिति तक स्थितिके सभी भेदोंमें उनका अवस्थान देखा जाता है। 'सव्वेसु च अणुभागेसु' ऐसा कहनेपर चारों संज्वलनोंकी सदृश धनवाली सभी कृष्टियोंका ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ 'सब स्थिति' ऐसा कहनेसे प्रथम और द्वितीय स्थितिका ग्रहण किया गया है, क्योंकि जब जिस कषायका उदय रहता है तब उसकी प्रथम स्थिति और द्वितीय स्थिति नियमसे होती है। अतः जितने भी पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं वे इस क्षपकके प्रत्येक कषायकी सभी सम्भव स्थितियोंमें पाये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तथा इस क्षपकके कृष्टिकरणकी क्रिया सम्पन्न होनेपर जितना भी सम्भव संज्वलन कषायोंका अनुभाग अवशिष्ट रहता है वह इस क्षपकके कृष्टिरूपमें ही पाया जाता है। यही कारण है कि यहाँपर 'सव्वेसु च अणुभागेसु' इस पदका स्पष्टीकरण करते हुए उसे सदृश धनवाली कृष्टियों-स्वरूप ही कहा गया है। तात्पर्य यह है कि पूर्वबद्ध कर्मोंका अभजनीयस्वरूपसे जो अनुभाग अवशिष्ट रहता है वह इस क्षपकके सम्भव सभी कृष्टियोंमें पाया जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ सर्वत्र इतना विशेष जानना चाहिए कि प्रकृतमें क्रोध संज्वलनके उदयसे क्षपक-श्रेणीपर आरूढ़ हुआ जीव विवक्षित हुआ है, इसलिए १२ ही संग्रह कृष्टियाँ और उनकी अन्तर कृष्टियाँ पायी जाती हैं। किन्तु यदि क्रोध संज्वलनको छोड़कर मानादि किसी एक कषायके उदयसे क्षपकश्रेणिपर आरूढ़ हुआ जीव विवक्षित हो तो उसकी अपेक्षा उस क्षपकके जितनी संग्रह और अन्तर कृष्टियाँ सम्भव हों उस अपेक्षासे निर्णय लेना चाहिए। यहाँ जो यह विशेष सूचना की गयी है वह इस क्षपकके पूर्वबद्ध कर्मोंके भजनीय और अभजनीयस्वरूपसे विचार करते समय सर्वत्र समझ लेनी चाहिए।

§ ३९३. 'सव्वकिट्टीसु' ऐसा कहनेपर सब संग्रह कृष्टियोंका और उनकी अवयव कृष्टियों-का एक पंक्तिरूपसे ग्रहण करना चाहिए। इससे क्रोधादि संज्वलनों सम्बन्धी एक-एक कृष्टिकी अनन्त सदृश धनवाली कृष्टियाँ सम्भव होनेपर उनमें लोभ संज्वलनकी सबसे जघन्य कृष्टिसे

किट्टिअब्भंतरे एदाणि अभयणिज्जसरूवेणोवट्ठाणि पुव्वबद्धाणि णियमा अत्थि त्ति भणिदं होइ। अधवा सव्वासु किट्टीसु जे अणुभागा अविभागपडिच्छेदसरूवा तेसु सव्वेसु चेव सरिसधणियभावेण अभयणिज्जा पुव्वबद्धकम्मपदेसा अत्थि त्ति सुत्तत्थो गहेयव्वो। एदेणेव सुत्तेण देसामासयभावेण[1] भयणिज्जाणं पि कम्मपदेसाणं संभवपक्खे एगादिएगुत्तरकमेण सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु सव्वेसु चाणुभागेसु सव्वासु च किट्टीसु समवट्ठाणसंभवो अणुमग्गियव्वो, विरोहाभावादो।

§ ३९४. संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ ३९५. सुगमं।

* जाणि अभज्जाणि पुव्वबद्धाणि ताणि णियमा सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु णियमा सव्वासु किट्टीसु।

§ ३९६. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं छट्ठमूलगाहाए अत्थविहासा समत्ता। एत्तमेत्तिएण पबंधेण

लेकर क्रोधसंज्वलनकी सबसे उत्कृष्ट कृष्टि तककी सब कृष्टियोंसम्बन्धी सदृश धनवाली कृष्टियोंके भीतर ये अभजनीय स्वरूप कहे गये पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके नियमसे पाये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अथवा सब कृष्टियोंमें जो अनुभाग अविभागप्रतिच्छेदस्वरूपसे विद्यमान हैं उन सबमें ही सदृशधनरूपसे अभजनीय पूर्वबद्ध कर्मप्रदेश पाये जाते हैं ऐसा इस सूत्रका अर्थ ग्रहण करना चाहिए। तथा इसी सूत्रसे देशमार्षकभावसे भजनीय कर्मप्रदेशोंका भी, सम्भव पक्षके स्वीकार करनेपर एक परमाणुसे लेकर एक-एक अधिक परमाणु क्रमसे, सब स्थितिविशेषोंमें सब अनुभागोंमें और सब कृष्टियोंमें अवस्थान सम्भव है यह मार्गणा कर लेनी चाहिए, क्योंकि ऐसा स्वीकार करनेमें कोई विरोध नहीं है।

विशेषार्थ—जिस मार्गणा आदि सम्बन्धी पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय है वे तो सभी कृष्टियोंमें पाये जाते हैं। अथवा सभी कृष्टियोंमें अविभागप्रतिच्छेदस्वरूप जो अनुभाग पाया जाता है उन सबमें सदृश धनरूप अनुभागवाले अभनीय कर्मप्रदेश नियमसे पाये जाते हैं ऐसा इस सूत्रका अर्थ करना चाहिए। साथ ही जो पूर्वबद्ध कर्मप्रदेश भजनीयरूपसे इस क्षपकके पाये जाते हैं उनका सम्भव पक्षमें कमसे कम एक परमाणु और अधिकसे अधिक अनन्त परमाणु इस क्षपकके पाये जाते हैं। इसलिए उनका भी सब स्थितियों, सब अनुभागों और सब कृष्टियोंमें होनेका इसी विधिसे विचार कर लेना चाहिए।

§ ३९४. अब इस गाथाके इस प्रकारके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अब इस दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ३९५. यह सूत्र सुगम है।

* जो पूर्वबद्ध कर्म इस क्षपकके अभजनीय हैं वे स्थितिके सब भेदोंमें और सब कृष्टियोंमें नियमसे पाये जाते हैं।

§ ३९६. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार छठी मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई। इस

१. ता. प्रतौ देसामासयेण इति पाठः।

तीहि मूलगाहाहि गदिआदिमग्गणासु पुव्वबद्धाणं भयणिज्जाभयणिज्जभावगवेसणं काढूण संपहि सत्तमीए मूलगाहाए अवयारं कुणमाणो इदमाह—

* एत्तो सत्तमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।

§ ३९७. जहावसरपत्ताए सत्तमीए मूलगाहाए अत्थविहासणट्ठमेत्तो समुक्कित्तणा कायव्वा त्ति वुत्तं होइ।

(१४१) एगसमयपबद्धा पुण अच्छुत्ता केत्तिगा कहिं ट्ठिदीसु।
भवबद्धा अच्छुत्ता ट्ठिदीसु कहिं केत्तिया होंति ॥१९४॥

§ ३९८. एसा सत्तमी मूलगाहा अंतरकदपढमसमयप्पहुडि उवरिमावत्थाए वट्टमाणस्सेदस्स खवगस्स समयपबद्धा भवबद्धा वा केत्तिया उदये असंछुद्धा संभवंति। संभवंताणं तेसिं केत्तिएसु ट्ठिदिविसेसेसु अणुभागभेदेसु अवट्ठाणं होइ त्ति एवंविहस्स अत्थविसेसस्स णिण्णयविहाणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'एगसमयपबद्धा पुण' एवं भणिदे एक्कम्हि समये जेत्तिया कम्मपदेसा बंधमागया एत्ति समूहो एगसमयपबद्धो णाम। तस्स पुण समयभेदसंपण्णाए बहुत्तसंभवो अत्थि त्ति बहुवयणंतणिद्देसो कओ 'एगसमयपबद्धा' त्ति। अधवा एगेगसमयपबद्धा त्ति विच्छाणिद्देसावलंबणेण बहुवयणणिद्देसो एसो घडावेयव्वो।

§ ३९९. तदो एवं पयारा एगसमयपबद्धा केत्तिया एदस्स खवगस्स अच्छुत्तसरूवा अत्थि किमेक्को वा, दो वा, तिण्णि वा एवं गंतूण संखेज्जा असंखेज्जा वा त्ति पढमपुच्छाणिद्देसो। एत्थ

प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा तीन मूलगाथाओंका अवलम्बन लेकर गति आदि मार्गणाओंमें पूर्वबद्ध कर्मोंकी इस क्षपकके भजनीय और अभजीयभावकी गवेषणा करके अब सातवीं मूलगाथाका अवतार करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

* आगे सातवीं मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते है।

§ ३९७. यथावसरप्राप्त सातवीं मूलगाथाके अर्थकी विभाषा करनेके लिए यहाँसे आगे उसकी समुत्कीर्तना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(१४१) एक समयमें बाँधे गये कितने कर्मप्रदेश स्थितिके कितने भेदोंमें असंक्षुब्ध रहते हैं, तथा कितने भवबद्ध कर्मप्रदेश स्थितिके कितने भेदोंमें असंक्षुब्ध रहते हैं ॥१९४॥

§ ३९८. अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न करनेके प्रथम समयसे लेकर उपरिम समयमें विद्यमान इस क्षपकके कितने समयप्रबद्ध तथा कितने भवबद्ध कर्मप्रदेश उदयमें असंक्षुब्धरूपसे सम्भव हैं तथा सम्भव उनका कितने स्थितिभेदोंमें और अनुभागभेदोंमें अवस्थान होता है इस प्रकार इस तरहके अर्थविशेषका निर्णय करनेके लिए यह सातवीं मूलगाथा अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'एगसमयपबद्धा पुण' ऐसा कहनेपर एक समयमें जितने कर्मप्रदेश बन्धको प्राप्त होते हैं इनके समूहका नाम एक समयप्रबद्ध है। परन्तु उसके समयभेदसे सम्पन्न होनेपर बहुत्व सम्भव है, इसलिए उनका 'एगसमयपबद्धा' इस प्रकार बहुवचनरूपसे निर्देश किया है। अथवा 'एक एक समयप्रबद्ध' इस प्रकार वीप्सानिर्देशके अवलम्बनद्वारा यह बहुवचनरूप निर्देश घटित हो जाता है।

§ ३९९. इसलिए इस प्रकार कितने एकसमयप्रबद्ध इस क्षपकके अछूते रहते हैं। क्या एक समयप्रबद्ध, दो समयप्रबद्ध या तीन समयप्रबद्ध इस प्रकार जाकर क्या संख्यात समयप्रबद्ध या

'अच्छुत्ता' त्ति वुत्ते जीवेण अच्छिक्का उदयट्ठिदिमणाणिदा त्ति वुत्तं होइ। अथवा अच्छुत्ता त्ति वुत्ते उदये असंछुद्धा त्ति अत्थो घेत्तव्वो, उवरि चुण्णिसुत्ते तहाणिद्देसदंसणादो। ते पुण असंछुद्धसरूवा समयपबद्धा 'कदिसु ट्ठिदीसु' केत्तिएसु ट्ठिदिभेदेसु वट्टंति किमेक्कम्हि, आहो दोसु तिसु वा त्ति एवंविहविसेसणिद्देसावेक्खो विदिओ पुच्छाणिद्देसो। एदेणेव देसामासयभावेण अणुभागविसयो वि पुच्छाणिद्देसो एत्थाणुगंतव्वो, उवरिमभासगाहाए तस्स वि विहासणोवलंभादो। तदो समयपबद्धाण-मच्छुद्धसरूवाणं संखाविसेसो तेसिं चेवावट्ठाणपाओग्गट्ठिदि-अणुभागवियप्पा च गाहापुव्वद्धे पुच्छिदा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ।

§ ४००. संपहि गाहापच्छद्धमस्सियूण भवबद्धविसयो पुच्छाणुगमो कीरदे। तं जहा—'भवबद्धा अच्छुत्ता' एवं भणिदे एक्कम्मि भवग्गहणे जेत्तिओ कम्मपोग्गलो संचिदो तस्स भवबद्धसण्णा। सो पुण भवभेदेण एगभवविसयसमयपबद्धभेदेण च बहुत्तमावण्णो त्ति बहुवयणेण णिद्दिट्ठो। तदो एवमेत्थ सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो—केत्तिया भवबद्धा एदस्स खवगस्स उदयट्ठिदीए असंछुद्धसरूवा भवंति, किमेक्कभवसंबंधिणो आहो दो तिण्णि आदि संखेज्जासंखेज्जभवग्गहण-संबंधिणो, किं वा सव्वे वि भवबद्धा उदयपज्जाएण संछुत्ता चेव। ण एक्को वि भवबद्धो तदच्छुत्तसरूवो संभवदि, छुत्ताणमच्छुत्ताणं वा तेसिं केत्तिएसु ट्ठिदिविसेसेसु केत्तिएसु वा अणुभाग-भेदेसु अवट्ठाणसंभवो त्ति एत्थ वि अणुभागविसयाए पुच्छाए पुव्वं व अंतब्भावो दट्ठव्वो।

असंख्यात समयप्रबद्ध अछूते रहते हैं। इस प्रकार यह प्रथम पृच्छानिर्देश है। इस मूलगाथा सूत्रमें 'अच्छुत्ता' ऐसा कहनेपर जीवके द्वारा अस्पृष्ट अर्थात् उदयस्थितिको नहीं प्राप्त कराये गये रहते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अथवा 'अच्छुत्ता' ऐसा कहनेपर उदयमें असंक्षुब्ध रहते हैं यह अर्थ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि आगे चूर्णिसूत्रमें उस प्रकारका निर्देश देखा जाता है। किन्तु वे असंक्षुब्धस्वरूप समयप्रबद्ध 'कदिसु ट्ठिदीसु' स्थितिके कितने भेदोंमें पाये जाते हैं? क्या एक स्थितिमें, दो स्थितियोंमें या तीन स्थितियोंमें पाये जाते हैं इस प्रकार विशेष निर्देशकी अपेक्षा रखनेवाला यह दूसरा पृच्छानिर्देश है। इस प्रकार इस कथनद्वारा देशामर्षकरूपसे अनुभाग-विषयक भी पृच्छानिर्देश यहाँपर करना चाहिए, क्योंकि उपरिम भाष्यगाथामें उसकी भी विभाषा उपलब्ध होती है। इस प्रकार असंक्षुब्धस्वरूप समयप्रबद्धोंकी संख्याविशेषकी और उन्हींके अवस्थानप्रायोग्य स्थिति और अनुभागके भेदोंकी इस गाथासूत्रके पूर्वार्धमें पृच्छा की गयी है यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

§ ४००. अब उक्त गाथासूत्रके उत्तरार्धका अवलम्बन लेकर भवबद्ध विषयक पृच्छाका अनुगम करते हैं। वह जैसे—'भवबद्धा अच्छुत्ता' ऐसा कहनेपर एक भवग्रहणमें जितना कर्म-पुद्गल संचित किया गया उसकी भवबद्ध संज्ञा है। परन्तु वह भवके भेदसे और एक भवविषयक समयप्रबद्धोंके भेदसे बहुतपनेको प्राप्त हो जाता है, इसलिए बहुवचनका निर्देश किया है। इसलिए यहाँपर सूत्रका अर्थके साथ इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिए कि कितने भवबद्ध समयप्रबद्ध इस क्षपकके उदयस्थितिमें असंक्षुब्धस्वरूप होते हैं? क्या एक भवसम्बन्धी या दो-तीन आदि संख्यात और असंख्यात भवग्रहणसम्बन्धी समयप्रबद्ध उदयरूपसे असंक्षुब्ध होते हैं। अथवा क्या सभी भवबद्ध समयप्रबद्ध उदयरूपमें संक्षुब्ध होते हैं या एक भी भवबद्ध समयप्रबद्ध उदयरूपसे अक्षुब्ध-स्वरूप नहीं पाया जाता। इस प्रकार क्षुब्धस्वरूप और अक्षुब्धस्वरूप उन समयप्रबद्धोंका कितने स्थितिके भेदोंमें अथवा कितने अनुभाग विशेषोंमें अवस्थान सम्भव है। इस प्रकार यहाँपर भी अनुभागविषयक पृच्छाका पहलेके समान अन्तर्भाव जान लेना चाहिए।

§ ४०१. अथवा कम्हि त्ति वुत्ते कम्हि उद्देसे समयपबद्धा भवबद्धा च केत्तिया असंछुद्धसरूवा लब्भंति त्ति पुच्छाहिसंबंधो कायव्वो। एसो च पुच्छाणिद्देसो अंतरकरणादो पुव्वुत्तरावत्थाओ उवेक्खदे।

§ ४०२. संपहि एवमेदीए सुत्तगाहाए सूचिदत्थविसये णिण्णयविहाणट्ठमेत्थ चत्तारि भासगाहाओ अत्थि त्ति तासिं समुक्कित्तणं विहासणं च जहाकममेव कुणमाणो उत्तरसुत्तपबंधमाढवेइ—

* एदिस्से चत्तारि भासगाहाओ।

§ ४०३. सुगमं।

* तासिं समुक्कित्तणा।

§ ४०४. सुगमं।

(१४२) छण्हमावलियाणं अच्छुत्ता णियमसा समयपबद्धा।
सव्वेसु ट्ठिदिविसेसाणुभागेसु च चउण्हं पि॥१९५॥

---

§ ४०१. अथवा 'कम्हि' ऐसा कहनेपर किस स्थानपर भवबद्ध कितने समयप्रबद्ध असंक्षुब्धस्वरूप प्राप्त होते हैं इस प्रकार पृच्छाका सम्बन्ध करना चाहिए। और यह पृच्छाका निर्देश अन्तरकरणसे पूर्व अवस्था और उत्तर अवस्थाकी अपेक्षासे प्रवृत्त हुआ है।

विशेषार्थ—एक समयमें एक जीवके द्वारा जितने कर्मप्रदेश बन्धको प्राप्त होते हैं उनकी एक समयप्रबद्ध संज्ञा है। तथा भवके भीतर जितने समयप्रबद्ध बन्धको प्राप्त होते हैं उनकी भव बद्ध संज्ञा है। इन दोनोंको लेकर यहाँ जो पृच्छाएँ की गयी हैं उनका आशय यह है—(१) अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न होनेपर उसके प्रथम समयसे लेकर एक या एक-एक कर जो अनेक समयप्रबद्ध बँधते हैं वे कितनी स्थिति और कितने अनुभागके कितने भेदोंमें पाये जाकर उदयमें दिखाई देते हैं या नहीं दिखाई देते। इस प्रकार भवबद्ध कर्म पुंजके विषयमें भी यह पृच्छा कर लेनी चाहिए। 'भवबद्धा' पदको लेकर अन्तरकरणसे पूर्वकी अवस्था तथा अन्तरकरणके बादकी अवस्थाको लेकर भी उक्त पृच्छा की गयी है यह इस पूरे कथनका तात्पर्य है।

§ ४०२. अब इस प्रकार इस सूत्रगाथा द्वारा सूचित किये गये अर्थके विषयमें निर्णयका विधान करनेके लिए इस विषयमें चार भाष्यगाथाएँ आयी हैं, इसलिए यथाक्रमसे ही उनकी समुत्कीर्तना और विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* इस सातवीं मूल सूत्रगाथाकी चार भाष्यगाथाएँ हैं।

§ ४०३. यह सूत्र सुगम है।

* अब उनकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ ४०४. यह सूत्र सुगम है।

(१४२) अन्तरकरणके बाद उपरिम अवस्थामें विद्यमान क्षपकके छह आवलियोंके भीतर, बँधे हुए समयप्रबद्ध, असंक्षुब्ध (अनुदीरित) रहते हैं। वे समयप्रबद्ध चारों ही कषायोंसम्बन्धी सभी स्थितिभेदोंमें और सब अनुभागोंमें पाये जाते हैं॥१९५॥

§ ४०५. एसा पढमभासगाहा मूलगाहाए पुरिमद्धमस्सियूण अंतरकरणादो उवरिमावत्थाए चदुण्हं संजलणाणमेत्तिया समयपबद्धा अच्छुत्तसरूवा लब्भंति, तेसिं च ट्ठिदि-अणुभागेसु अवट्ठाण-भेदेण सरूवेण होदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिण्णयविहाणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'छण्हमाव-लियाणं' एवं भणिदे अंतरकरणादो उवरिमावत्थाए वट्टमाणस्स खवगस्स छण्हमावलियाणमब्भंतरे जे बद्धा समयपबद्धा ते 'णियमसा' णिच्छयेणेव उदये असंसुद्धा भवंति। किं कारणं? अंतरकरणे कदे तत्तो परं छसु आवलियासु गदासु उदीरणा त्ति णियमदंसणादो। 'सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु' एवं भणिदे पुण असंछुद्धसमयपबद्धा सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु सव्वेसु चेवाणुभागभेदेसु चदुसंजलण-विसयेसु णियमेणावचिट्ठंति, ण एक्कम्हि वि ठिदिविसेसे अणुभागविसेसे च तेसिमवट्ठाणपडिसेहो अत्थि त्ति भणिदं होइ। जइ वि एत्थ बंधादो उवरिमसंतट्ठिदीसु अणुभागेसु च णिरुद्धसमय-पबद्धाणमवट्ठाणसंभवो णत्थि तो वि अप्पणो पाओग्ग-ट्ठिदि-अणुभागवियप्पे सव्वे घेत्तूण सव्वेसु ट्ठिदिअणुभागविसेसेसु णियमा तेसिमवट्ठाणं होइ त्ति सुत्ते भणिदं। ण च एवंविहो

---

§ ४०५. यह प्रथम भाष्यगाथा मूलगाथाके पहले अर्ध भागका आश्रय कर अन्तरकरणसे उपरिम अवस्थामें चारों संज्वलनोंके इतने समयप्रबद्ध उदोरणारूप क्रियासे रहित प्राप्त होते हैं और उनका स्थिति और अनुभागमें अवस्थान इस रूपसे होता है इस प्रकार इस अर्थ विशेषके निर्णयका विधान करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'छण्हं आवलियाणं' ऐसा कहनेपर अन्तरकरणके बाद उपरिम अवस्थामें विद्यमान क्षपकके छह आवलियोंके भीतर जो बद्ध समय-प्रबद्ध हैं वे 'णियमसा' निश्चयसे ही उदयमें असंक्षुब्ध (उदीरणासे रहित) रहते हैं, क्योंकि अन्तर-करण करनेपर उसके बाद छह आवलि काल जानेपर उदीरणा होती है ऐसा नियम देखा जाता है। 'सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु' ऐसा कहनेपर तो असंक्षुब्ध समयप्रबद्ध चार संज्वलन सम्बन्धी सब स्थितिविशेषोंमें और सब अनुभागके भेदोंमें नियमसे अवस्थित रहते हैं। एक भी स्थितिविशेषमें और अनुभागविशेषमें उनके अवस्थानका प्रतिषेध नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यद्यपि यहाँ-पर बन्धसे उपरिम सत्त्वरूप स्थितियोंमें और सत्त्वरूप अनुभागोंमें विवक्षित समयप्रबद्धोंका सर्वत्र अवस्थान सम्भव नहीं है, तो भी अपने बन्ध योग्य सब स्थिति और सब अनुभागके भेदोंको ग्रहण कर सब स्थितिविशेषोंमें और सब अनुभागविशेषोंमें उनका अवस्थान नियमसे पाया जाता है यह इस सूत्रमें कहा गया है। और इस प्रकारका विशेष निर्देश सूत्रमें नहीं है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि व्याख्यानसे उस प्रकारके विशेषका ज्ञान होता है।

विशेषार्थ—अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न करनेके बाद चारों संज्वलनोंका जो नवीन कर्म-बन्ध होता है वह सब स्थितियों और सब अनुभागविशेषोंमें पाया जाकर वह छह आवलि काल तक उदीरणाके अयोग्य रहता है यह इस कथनका तात्पर्य है। अब यहाँपर शंकाकारका कहना यह है कि इस जीवके प्रत्येक समयके नवीन बन्धमें जो स्थिति और अनुभाग प्राप्त होता है उससे सत्त्वस्थिति और सत्त्वानुभाग अधिक होता है, इसलिए नवीन बन्धके प्रदेशोंका उत्कर्षण सब सत्त्वस्थितियों और सब सत्त्वस्वरूप अनुभागोंमें न हो सकनेके कारण उनका सब स्थितियों और सब अनुभागोंमें पाया जाना कैसे सम्भव होगा? समाधान यह है कि चारों संज्वलनोंके नवीन बन्धकी उस कालमें जितनी स्थिति और अनुभाग प्राप्त होता है उस सीमा तक ही सब स्थिति विशेषोंमें और सब अनुभागोंमें नवक बन्धका उत्कर्षण होता है, इसलिए उस सीमा

विसेसणिद्देसो सुत्ते णत्थि त्ति आसंकणिज्जं, वक्खाणादो तहाविहविसेसपडिवत्तीदो।

§ ४०६. अथवा चउण्हं पि संजलणाणं सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु सव्वासु च संगहकिट्टीसु समयाविरोहेण तं पदेसग्गं छण्हमावलियाणमब्भंतरे जाव ण संकंतं ताव उदीरणापाओग्गं ण होदि त्ति जाणावणट्ठं गाहापच्छद्धो भणिदो।

§ ४०७. संपहि एदस्सेव गाहासुत्तत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

*** विहासा।**

§ ४०८. सुगमं।

*** जत्तो पाए अंतरं कदं तत्तो पाए समयपबद्धो छसु आवलियासु गदासु उदीरिज्जदि।**

§ ४०९. जदो प्पहुडि अंतरकरणं समाणिदं तदो प्पहुडि जो बद्धो समयपबद्धो सो णियमा छसु आवलियासु गदासु उदीरिज्जदि, णो हेट्ठा त्ति वुत्तं होइ। एवमेदम्हि णियमे संजादे छण्हमावलियाणं समयपबद्धा संछुद्धसरूवा होदूण एदम्हि विसए लब्भंति त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

तक ही नवक बन्धका उत्कर्षण द्वारा सद्भाव पाया जाता है ऐसा अर्थविशेष यहाँ व्याख्यानसे समझ लेना चाहिए जो उत्कर्षणके नियमको ध्यानमें रखकर व्याख्यान द्वारा स्पष्ट किया गया है।

§ ४०६. अथवा चारों ही संज्वलनोंकी सब स्थिति विशेषोंमें और सब संग्रह कृष्टियोंमें समयके अविरोधपूर्वक वह प्रदेशपुंज छह आवलियोंके भीतर जब तक संक्रान्त नहीं होता तब तक वह उदीरणाके प्रायोग्य नहीं होता इस बातका ज्ञान करानेके लिए गाथाका उत्तरार्ध कहा है।

विशेषार्थ—आनुपूर्वी संक्रमके कारण भी नवकबन्धकी छह आवलिके बाद उदीरणा होने रूप व्यवस्था यहाँ घटित कर लेनी चाहिए। वैसे परमार्थसे देखा जाय तो अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न होनेके प्रथम समयसे लेकर उदीरणा छह आवलिके बाद ही होती है ऐसा नियम है।

§ ४०७. अब इसी गाथाके सूत्रका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

*** अब इस प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ४०८. यह सूत्र सुगम है।

*** जहाँ जाकर अन्तरकरण क्रियाको सम्पन्न किया है वहाँसे लेकर बद्ध समयप्रबद्ध छह आवलि प्रमाण काल जानेपर उदीरित होता है।**

§ ४०९. जहाँ जाकर अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न हुई है वहाँसे लेकर जो समयप्रबद्ध बँधता है वह नियमसे छह आवलि प्रमाण काल जानेपर उदीरित होता है, इससे पूर्व नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इस नियमके हो जानेपर इस कारण छह आवलि सम्बन्धी समयप्रबद्ध संक्षुब्धस्वरूप होकर इस स्थानपर प्राप्त होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* अंतरादो कदादो तत्तो छसु आवलियासु गदासु तेण परं छण्हमावलियाणं समयपबद्धा उदये अछुद्धा भवंति।

§ ४१०. जदो एस णियमो तदो अंतरसमत्तिसमणंतरसमयप्पहुडि छसु आवलियासु वोलीणासु तत्तो परं सव्वत्थेव छण्हमावलियाणं जे समयपबद्धा ते णियमा उदये असंछुद्धा भवंति त्ति सुत्तत्थसंगहो। संपहि एदस्स भावत्थो वुच्चदे। तं जहा—अंतरकदपढमसमए आवलियमेत्ता णवकबंधसमयपबद्धा उदये अच्छुद्धा अत्थि। पुणो वि एत्तिया चेव अवट्ठिदा होदूण गच्छंति जाव अंतरकरणपढमसमयप्पहुडि आवलियमेत्तकालचरिमसमओ त्ति। तदो उवरिमेगेगसमयपबद्धो जहाकममहिओ होदूण विदियावलियमेत्तकाले वोलीणे तक्कालं दो आवलियमेत्ता समयपबद्धा उदये अच्छुद्धा भवंति। पुणो तत्तो प्पहुडि तेसिमुवरि एगेगो समयपबद्धो अहियो होदूण तदियावलियमेत्तकाले गदे तिण्हमावलियाणं समयपबद्धा अणुदीरिदा भवंति। पुणो वि तत्तो प्पहुडि चउत्थावलियमेत्तकाले समइच्छिदे ताधे चउण्हमावलियाणं समयपबद्धा उदीरणा पज्जायविमुहा लब्भंति। पुणो तत्तो प्पहुडि पंचमावलियमेत्तकाले समइक्कंते ताधे पंचावलियमेत्तसमयपबद्धा उदयम्मि अच्छुद्धा भवंति। पुणो तत्तो प्पहुडि आवलियमेत्तकाले वदिक्कंते छण्हमावलियाणं समयपबद्धा उदयम्मि असंछुद्धसरूवा लब्भंति। एत्तो परं सव्वत्थ छआवलियमेत्ता समयपबद्धा अवट्ठिदसरूवा उदए अच्छुद्धा भवंति। एदेण कारणेण अंतरकदपढमसमयप्पहुडि छसु आवलियासु गदासु तत्तो परं छण्हमावलियाणं समयपबद्धा णियमा उदए अछुद्धा भवंति त्ति सेससमयपबद्धा

---

* अन्तरकरण करनेके अनन्तर समयसे लेकर छह आवलियोंके व्यतीत होनेपर उसके बाद सर्वत्र ही छह आवलियों सम्बन्धी जो समयप्रबद्ध हैं वे उदयमें अक्षुब्ध होते हैं।

§ ४१०. यतः यह नियम है, इसलिए अन्तरकरण क्रियाके सम्पन्न करनेके अनन्तर समयसे लेकर छह आवलियोंके व्यतीत होनेपर वहाँसे आगे सर्वत्र ही छह आवलियोंसम्बन्धी जो समयप्रबद्ध हैं वे नियमसे उदयमें असंक्षुब्ध होते हैं यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस सूत्रका भावार्थ कहते हैं। वह जैसे—अन्तरकरण करनेके अनन्तर प्रथम समयमें एक आवलिप्रमाण नवकबन्ध समयप्रबद्ध उदयमें अक्षुब्ध होते हैं। फिर भी इतने ही समयप्रबद्ध अवस्थित होकर अन्तरकरण करनेके प्रथम समयसे लेकर एक आवलिप्रमाण कालके अन्तिम समय तक प्राप्त होते हैं। उससे आगे एक-एक समयप्रबद्ध क्रमसे अधिक होकर द्वितीय आवलिप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर उस कालमें दो आवलिप्रमाण समय प्रबद्ध उदयमें असंक्षुब्ध होते हैं। पुनः वहाँसे लेकर उनके ऊपर एक-एक समयप्रबद्ध अधिक होकर तीसरी आवलिप्रमाण कालके जानेपर तीन आवलियोंसम्बन्धी समयप्रबद्ध अनुदारित होते हैं। फिर भी वहाँसे लेकर चार आवलिप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर उस समय चार आवलियोंसम्बन्धी समयप्रबद्ध उदीरणापर्यायसे विमुख प्राप्त होते हैं। पुनः वहाँसे लेकर पाँच आवलिप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर उस समय पाँच आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध उदयमें अक्षुब्ध होते हैं। पुनः वहाँसे लेकर आवलिप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर छह आवलिसम्बन्धी समयप्रबद्ध उदयमें असंक्षुब्ध स्वरूप प्राप्त होते हैं। इससे आगे सर्वत्र छह आवलिप्रमाण समयप्रबद्ध यथास्थितिस्वरूप रहकर उदयमें अक्षुब्ध होते हैं। इस कारणसे अन्तरकरण करनेके बाद प्रथम समयसे लेकर छह आवलियोंके जानेपर उससे आगे छह आवलियोंसम्बन्धी समयप्रबद्ध नियमसे उदयमें अक्षुब्ध होते हैं। शेष सभी समयप्रबद्ध उदयमें संक्षुब्ध होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

सव्वे चेव उदये संछुद्धा भवंति त्ति भणिदं होदि।

§ ४११. एवमेदेण सुत्तेण समयपबद्धाणं संछुद्धासंछुद्धभावं णिरूविय संपहि भवबद्धाणं सव्वेसिमेव णियमेण उदये संछुद्धभावपदुप्पायणट्ठमुवरिमसुत्तमाह—

*** भवबद्धा पुण णियमा सव्वे उदये संछुद्धा भवंति।**

§ ४१२. सव्वे चेव भवबद्धा णियमा एदस्स खवगस्स उदये संछुद्धा भवंति। कुदो? एक्कस्स वि भवबद्धस्स उदये असंछुद्धसरूवस्स तक्कालमणुवलंभादो। एदस्स भावत्थो—एक्कम्मि भवम्मि बद्धसमयपबद्धाणब्भंतरे जइ वि एगस्स समयपबद्धस्स परमाणू उदये संछुद्धा तो वि सो भवबद्धो णिच्छयेण उदये संछुद्धो होदि त्ति एदेण कारणेण सव्वे भवबद्धा उदये संछुद्धा त्ति भणिदं। एसो च भवबद्धपडिबद्धो अत्थणिद्देसो जइ वि एदम्मि पढमभासगाहासुत्तम्मि णत्थि तो वि उवरि भण्णमाणचउत्थभासगाहावलंबणेण चुण्णिसुत्ते विहासिदो त्ति दट्ठव्वो, 'पुव्वेण परं वक्खाणिज्जदि, परेण वि पुव्वं वक्खाणिज्जदि' त्ति णायादो। एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता।

*** एत्तो विदियभासगाहा।**

§ ४१३. पढमभासगाहाविहासणाणंतरमेत्तो विदियभासगाहा समोदारेयव्वा त्ति वुत्तं होदि।

विशेषार्थ—(१) यहाँपर 'उदये असंछुद्धा'का अर्थ उदीरणास्वरूप नहीं होते तथा 'उदये संछुद्धा' का अर्थ उदीरणारूप होते हैं। इस प्रकार इस अर्थको ध्यानमें रखकर पूरे प्रकरणका स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए। (२) टीकामें जो 'अंतरकदपढमसमयप्पहुडि छसु' इत्यादि वचन कहा है सो उसका यह भाव है कि अन्तरकरण किया सम्पन्न करनेके बाद जब जो भी नवकबन्ध समयप्रबद्ध होता है वह सब छह आवलिकाल तक उदीरणारूप नहीं परिणमता यह अर्थ सर्वत्र घटित कर लेना चाहिए।

§ ४११. इस प्रकार इस सूत्र द्वारा समयप्रबद्धोंके संक्षुब्ध और असंक्षुब्ध भावका निरूपण करके अब सभी भवबद्धोंके उदयमें नियमसे संक्षुब्धभावका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** परन्तु सब भवबद्ध समयप्रबद्ध इस क्षपकके उदयमें नियमसे संक्षुब्ध होते हैं।**

§ ४१२. सभी भवबद्ध समयप्रबद्ध नियमसे इस क्षपकके उदयमें संक्षुब्ध होते हैं, क्योंकि इस क्षपकके एक भी भवबद्ध समयप्रबद्ध उदयमें असंक्षुब्धस्वरूप नहीं उपलब्ध होता। इसका भावार्थ—एक भवमें बद्ध समयप्रबद्धोंके अन्तर्गत यद्यपि एक समयप्रबद्धका परमाणु इस क्षपकके उदयमें संक्षुब्ध होता है, यही कारण है कि सब भवबद्ध समयप्रबद्ध इस क्षपकके उदयमें संक्षुब्ध होते हैं यह इसका तात्पर्य है। और यह भवबद्धसे सम्बन्ध रखनेवाला अर्थनिर्देश यद्यपि इस प्रथम भाष्य गाथासूत्रमें नहीं है तो भी आगे कही जानेवाली चौथी भाष्य गाथासूत्रका अवलम्बन लेकर चूर्णिसूत्रमें व्याख्यान किया गया है ऐसा यहाँ जानना चाहिए। आगे कहे जानेवाले अर्थका पहले व्याख्यान किया जाता है और पहले कहे जानेवाले अर्थका पीछे भी व्याख्यान किया जाता है ऐसा न्याय है। इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थ विभाषा समाप्त हुई।

*** अब इससे आगे दूसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हैं।**

§ ४१३. प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करनेके अनन्तर इससे आगे दूसरी भाष्यगाथाका अवतार करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(१४३) जा चावि बज्झमाणी आवलिया होदि पढमकिट्टीए।
पुव्वावलिया णियमा अणंतरा चदुसु किट्टीसु ॥

§ ४१४. एसा विदियभासगाहा कोहसंजलणणवकबंधपदेसग्गस्स संगहकिट्टीसु संकमो एदेण कमेण होदि त्ति जाणावणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'जा चावि बज्झमाणी' एवं भणिदे जा खलु बज्झमाणी आवलिया बंधावलिया त्ति वुत्तं होइ। तत्थ कम्मपदेसेसु बज्झमाणेसु तस्संबंधेण तिस्से वि उवयारेण तव्ववएसोववत्तीदो। सा णियमा कोहसंजलणपढमसंगहकिट्टीए होइ। कुदो ? अणदिक्कंतबंधावलियपदेसग्गस्स ओकड्डुण-परपयडिसंकमादिकिरियाणमप्पाओग्गत्तादो। 'पुव्वावलिया णियमा अणंतरा चदुसु किट्टीसु' एवं भणिदे तत्तो अणंतरोवरिमा जा विदियावलिया सा णियमा चदुसु किट्टीसु दट्ठव्वा। एदस्स भावत्थो—कोहपढमसंगहकिट्टीसरूवेण बद्धपदेसग्गं तत्थ बंधावलियमेत्तकालमच्छियूण पुणो विदियावलियपढमसमये बंधावलियादिक्कंमवसेण कोहस्स चेव बेसंगहकिट्टीए माणपढमसंगहकिट्टीए च संकामिज्जदि. तेण सा विदियावलिया कोहस्स तिसु वि संगहकिट्टीसु माणपढमसंगहकिट्टीए च णियमा समुवलब्भइ त्ति वुत्तं होइ। बंधावलियादिक्कंतसमये चेव सेसासेससंगहकिट्टीसु तं पदेसग्गं किण्ण संकामिज्जदे ? ण, आणुपुव्विसंकमवसेण किट्टीसु संकामिज्जमाणस्स णवकबंधपदेसग्गस्स अणंतरहेट्ठिमासु तिसु चेव संगहकीट्टीसु संकमणियम-

---

(१४३) जो बध्यमान आवलि है वह प्रथम कृष्टि अर्थात् क्रोध संज्वलनको प्रथम कृष्टिमें पायी जाती है। उसके अनन्तर जो पूर्व अर्थात् प्रथम आवलि है वह नियमसे चार कृष्टियोंमें पायी जाती है।

§ ४१४. यह दूसरी भाष्यगाथा क्रोधसंज्वलनके नवकबन्ध कर्मप्रदेशोंका संग्रह कृष्टियोंमें संक्रम इस क्रमसे होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'जा चावि बज्झमाणी' ऐसा कहनेपर जो नियमसे बध्यमान आवलि अर्थात् बन्धावलि है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। वहाँ कर्मप्रदेशोंके बंधते समय उसके सम्बन्धसे बध्यमान आवलिकी भी उपचारसे बन्धावलि संज्ञा बन जाती है। वह नियमसे क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें पायी जाती है, क्योंकि जबतक बन्धावलि अतिक्रान्त नहीं होती है तबतक उसका कर्मप्रदेशपुंज अपवर्तन, परप्रकृतिसंक्रम आदि क्रियाके अयोग्य होता है। 'पुव्वावलिया णियमा अणंतरा चदुसु किट्टीसु' ऐसा कहनेपर उससे अनन्तर उपरिम जो द्वितीय आवलि है वह नियमसे चार कृष्टियोंमें जाननी चाहिए। इसका भावार्थ—क्रोधसंज्वलनके प्रथम संग्रह कृष्टिस्वरूपसे बद्ध कर्मपुंज वहाँ बन्धावलिप्रमाण काल तक तदवस्थ रहकर पुनः द्वितीय आवलिके प्रथम समयमें बन्धावलिका अतिक्रम हो जानेके कारण क्रोधकी ही दो संग्रह कृष्टियोंमें और मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रामित होती है, इसलिए वह द्वितीय आवलि क्रोधकी तीनों ही संग्रहकृष्टियोंमें और मानको प्रथम संग्रहकृष्टिमें नियमसे पायी जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—बन्धावलिके अतिक्रान्त होते समय ही वह प्रदेशपुंज शेष समस्त संग्रह कृष्टियोंमें क्यों नहीं संक्रमित हो जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि आनुपूर्वी संक्रमके कारण कृष्टियोंमें संक्रम्यमाण नवकबन्ध प्रदेशपुंजके अनन्तर अधस्तन तीन संग्रह कृष्टियोंमें ही संक्रमका नियम देखा जाता है। इसलिए द्वितीय आवलि चारों ही संग्रह कृष्टियोंमें पाई जाती है यह सिद्ध हुआ।

दंसणादो। तदो विदियावलिया चदुसु चेव संगहकिट्टीसु होइ त्ति सिद्धं।

§ ४१५. संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो विहासागंथमुत्तर भणइ—

* विहासा।

§ ४१६. सुगमं।

* जं पदेसग्गं बज्झमाणयं कोधस्स तं पदेसग्गं सव्वं बंधावलियं कोहस्स पढमसंगहकीट्टीए दिस्सइ।

§ ४१७. कुदो ? कोहपढमसंगहकिट्टीसरूवेण बद्धणवकबंधपदेसग्गस्स बंधावलियमेत्तकालं तत्थेवावट्ठाणं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो।

* तदो आवलियादिक्कंतं तिसु वि कोहकिट्टीसु दीसइ माणस्स च पढमकिट्टीए।

§ ४१८. किं कारणं ? तत्थ बंधावलियाइक्कंतस्स तस्स पदेसग्गस्स वि विदियावलियपढमसमए पुव्वुत्तणियमवसेण संकममाणस्स कोहस्स तिसु संगहकिट्टीसु माणपढमसंगहकिट्टीए च समवट्ठाणस्स परिप्फुडमुवलंभादो।

विशेषार्थ—उक्त दूसरी भाष्यगाथामें बध्यमान आवलिसे बन्धावलिका ग्रहण किया गया है। इसका आशय यह है कि जो भी कर्म बँधता है वह अपने बन्ध समयसे लेकर एक आवलि काल तक अपकर्षण आदि सकल करणोंके अयोग्य रहता है। उसके बाद द्वितीय आवलिका काल प्रारम्भ होनेपर उस कर्मपुंजका अपकर्षण आदि कार्य होने लगता है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ४१५. अब इस भाष्यगाथाके इस प्रकारके अर्थको विभाषा करते हुए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ४१६. यह सूत्र सुगम है।

* क्रोध संज्वलनका जो प्रदेशपुंज बध्यमान है वह पूरा प्रदेशपुंज बन्धावलि काल तक क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें दिखाई देता है।

§ ४१७. क्योंकि क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टि स्वरूपसे बद्ध नवकबन्ध प्रदेशपुंजका बन्धावलि काल तक कहीं अवस्थानको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है।

* तदनन्तर बन्धावलिको व्यतीत करके अवस्थित वह नवकबन्ध कर्मपुंज क्रोधसंज्वलनकी तीनों संग्रहकृष्टियोंमें और मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें दिखाई देता है।

§ ४१८. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—वहाँ बन्धावलिको व्यतीत करके अवस्थित उसी प्रदेशपुंजका द्वितीय आवलिके प्रथम समयमें पूर्वोक्त नियमके कारण संक्रमण करते हुए क्रोधसंज्वलनको तीनों संग्रहकृष्टियोंमें और मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें अवस्थान स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है।

*** एवं विदियावलिया चदुसु किट्टीसु दीसइ ।**

§ ४१९. एदेण कारणेण विदियावलिया चदुसु किट्टीसु जादा त्ति वुत्तं होइ। एवमेत्ति-एण पबंधेण विदियभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि तदियभासगाहमणुच्चारिय विदिय-गाहत्थसंबंधेणेव तदत्थविहासणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** तदो जं पदेसग्गं कोहादो माणस्स पढमकिट्टीए गदं तं पदेसग्गं तदो आवलि-याए पुण्णाए माणस्स विदिय-तदियासु मायाए च पढमसंगहकिट्टीए संकमदि ।**

§ ४२०. एतदुक्तं भवदि—पुव्वणिरुद्धकोहसंजणपदेसग्गं माणस्स पढमसंगहकिट्टीए विदिया-वलियमेत्तकालमच्छिय पुणो तदियावलियपढमसमए समयाविरोहेण संकममाणं कुणमाणो तत्तो पहुडि आवलियमेत्तकालं पुव्वुत्तचदुसु संगहकिट्टीसु पुणो माणविदिय-तदियसंगहकिट्टीसु माया-पढमसंगहकिट्टीए च समुवलब्भइ, ण तत्तो अण्णासु किट्टीसु तत्थ संकमणसत्तीए तक्कालमणुव-लंभादो त्ति। संपहि इममेवत्थमुवसंहारमुहेण परूवेमाणो इदमाह—

*** एवं तदिया आवलिया सत्तसु किट्टीसु त्ति भण्णइ ।**

§ ४२१. एदेण कमेण तदिया आवलिया सत्तसु किट्टीसु त्ति उवरिमगाहासुत्तावयवे भण्णमाणो अत्थो सुसंबद्धो त्ति भणिदं होइ । संपहि चउत्थावलियाए तस्स पदेसग्गस्स पवुत्ति-विसेसावहारणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** इस प्रकार द्वितीय आवलि चारों संग्रहकृष्टियोंमें दिखाई देती है ।**

§ ४१९. इस कारण द्वितीय आवलि चारों संग्रहकृष्टियोंमें व्याप्त हो जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त करके अब तीसरी भाष्य गाथाकी उच्चारणा करके दूसरी भाष्यगाथाके सम्बन्धसे ही उसके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** इस प्रकार उक्त विधिसे जो प्रदेशपुंज क्रोधसंज्वलनसे मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त हुआ है वह प्रदेशपुंज तत्पश्चात् एक आवलि काल पूर्ण होनेपर मान-संज्वलनकी दूसरी और तीसरी तथा मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संक्रमित होता है ।**

§ ४२०. उक्त कथनका यह तात्पर्य है—पहले विवक्षित किया गया क्रोधसंज्वलनका प्रदेशपुंज मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें द्वितीय आवलि प्रमाण कालतक रहकर पुनः तीसरी आवलिके प्रथम समयमें समयके अविरोधपूर्वक संक्रमण करता हुआ वहांसे लेकर एक आवलि-प्रमाण काल तक पूर्वोक्त चारों संग्रह कृष्टियोंमें पुनः मानसंज्वलनकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंमें तथा मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें पाया जाता है। उनसे अतिरिक्त अन्य संग्रह कृष्टियोंमें उसके संक्रमण करनेकी शक्ति उस कालमें नहीं पाई जाती। अब इसी अर्थका उपसंहार द्वारा कथन करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इस प्रकार तीसरी आवलि सात संग्रह कृष्टियोंमें कही जाती है ।**

§ ४२१. इस क्रमसे तीसरी आवलि सात संग्रह कृष्टियोंमें पायी जाती है यह उपरिम गाथा-सूत्रके प्रथम पादमें कहा जानेवाला अर्थ सुसम्बद्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब चौथी आवलिमें उस प्रदेशपुंजकी प्रवृत्ति विशेषका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** जं कोहपदेसग्गं संछुब्भमाणयं मायाए पढमकिट्टीए संपत्तं तं पदेसग्गं तत्तो आवलियादिक्कंतं मायाए विदिय-तदियासु च किट्टीसु लोभस्स च पढमकिट्टीए संकमदि ।**

§ ४२२. जं तं पुव्वणिरुद्धं कोहसंजलणपदेसग्गं पुव्वुत्तपणालीए आगंतूण मायाए पढमसंगहकिट्टीए संकंतं तत्थ तदियावलियमेत्तकालमच्छियूण तदो चउत्थावलियपढमे समये अणंतरपरूविदणियमाणुल्लंघणेण संकामिज्जमाणं मायाए विदियतदियसंगहकिट्टीए लोभपढमसंगहकिट्टीए च संकमदि, तत्तो परं ताधे तहाविहसंकमणसत्तीए तत्थाणुवलंभादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। जदो एवं तदो चउत्थी आवलिया दससु किट्टीसु जादा त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एवं चउत्थी आवलिया दससु किट्टीसु त्ति भण्णइ ।**

§ ४२३. गयत्थमेदं सुत्तं । संपहि तस्सेव पदेसग्गस्स पंचमावलियाए पवुत्तिविसेसजाणावणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** जं कोहपदेसग्गं संछुब्भमाणं लोभस्स पढमकिट्टीए संपत्तं तदो आवलियादिक्कंतं लोभस्स विदिय-तदियासु किट्टीसु दीसइ ।**

§ ४२४. जं तं कोहसंजलणपदेसग्गं पुव्वणिरुद्धं पुव्वुत्तपरिवाडीए लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए संकामिदं तं तत्थ संकमणावलियमेत्तकालमच्छिय तदो पंचमावलियपढमसमए लोभस्स विदिय-

---

* जो क्रोधसंज्वलनका नवकबन्ध प्रदेशपुंज संक्रमित होकर मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें प्राप्त हुआ है वह प्रदेशपुंज तत्पश्चात् एक आवलिप्रमाण काल जाकर मायासंज्वलनकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंमें तथा लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है ।

§ ४२२. जो पूर्वमें विवक्षित क्रोधसंज्वलनका प्रदेशपुंज पूर्वोक्त प्रणालीसे आकर मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रान्त हुआ है वह वहीं तीसरी आवलिप्रमाण काल तक रहकर पश्चात् चौथी आवलिके प्रथम समयमें अनन्तर कहे गये नियमका उल्लंघन किये बिना संक्रमण करता हुआ मायासंज्वलनकी दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टिमें तथा लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमण करता है, क्योंकि उससे आगे उस समय उसमें उस प्रकारकी संक्रमणशक्तिका अभाव है। इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है । यतः ऐसा है, अतः चौथी आवलि दस संग्रह कृष्टियोंमें पायी जाती है इस प्रकार इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* इस प्रकार चौथी आवलि दस संग्रह कृष्टियोंमें कही जाती है ।

§ ४२३. यह सूत्र गतार्थ है। अब उसी नवप्रबन्ध प्रदेशपुंजके पाँचवीं आवलिमें प्रवृत्ति विशेषका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रका अवतार कहते हैं—

* जो क्रोध संज्वलनका नवकबन्ध प्रदेशपुंज संक्रमित होकर लोभसंज्वलनकी प्रथम कृष्टिको प्राप्त हुआ है वह तत्पश्चात् एक आवलिकालके बीतनेपर लोभसंज्वलनकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टियोंमें दिखाई देता है ।

§ ४२४. जो वह क्रोधसंज्वलनका नवकबन्ध प्रदेशपुंज पूर्वमें विवक्षित किया था वह पूर्वोक्त परिवृद्धिके द्वारा लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संक्रमित हुआ है वह वहाँ संक्रमणावलिप्रमाण काल तक रहकर पश्चात् पाँचवीं आवलिके प्रथम समयमें लोभसंज्वलनकी दूसरी और

तदियासु संगहकिट्टीसु ओकड्डणावसेण संकमदि त्ति भणिदं होदि। एवं च संकमो होदि त्ति कादूण पंचमावलियाए तं पदेसग्गं सव्वासु चेव संगहकिट्टीसु जादमिदमाह—

* एवं पंचमी आवलिया सव्वासु किट्टीसु त्ति भण्णइ।

§ ४२५. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं च विदियभासगाहाविहासावसरे चेव तदियभासगाहाए वि अत्थविहासणं कादूण संपहि तिस्से विहासाए विणा समुक्कित्तणामेत्तं चेव कायव्वमिदि पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* तदियाए वि भासगाहाए अत्थो एत्थेव परूविदो। णवरि समुक्कित्तणा कायव्वा।

§ ४२६. तदियभासगाहमणुच्चारिय तदत्थो चेव विदियभासगाहत्थपरूवणासंबंधेण विहासिदो। तदो तिस्से समुक्कित्तणा चेव एण्हिं कायव्वा त्ति वुत्तं होइ।

* तं जहा।

§ ४२७. सुगमं।

(१४४) तदिया सत्तसु किट्टीसु चउत्थी दससु होइ किट्टीसु।
तेण परं सेसाओ भवंति सव्वासु किट्टीसु ॥१९७॥

§ ४२८. एवं समुक्कित्तिदाए तदियभासगाहाए अत्थो पुव्वमेव विहासिदो त्ति ण पुणो परूविज्जदे, 'जाणिदजाणावणे फलाभावादो'। णवरि 'तेण परं सेसाओ' एवं भणिदे तत्तो

तीसरी संग्रह कृष्टियोंमें अपकर्षणके कारण संक्रमित होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार संक्रम होता है ऐसा करके पाँचवीं आवलिका वह प्रदेशपुंज सभी संग्रह कृष्टियोंमें हो जाता है इस बातको कहते हैं—

* इस प्रकार पाँचवीं आवलि सभी संग्रह कृष्टियोंमें कही जाती है।

§ ४२५. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषाके अवसरपर ही तीसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा करके अब उसकी विभाषाके बिना केवल समुत्कीर्तना ही करनी चाहिये इस प्रकार कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* तीसरी भाष्यगाथाका अर्थ भी यहींपर प्ररूपित कर दिया है। इतनी विशेषता है कि उसकी समुत्कीर्तना करनी चाहिये।

§ ४२६. तीसरी भाष्यगाथाकी उच्चारणा करके उसके अर्थको दूसरी भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणाके सम्बन्धसे विभाषा की, इसलिये उसकी समुत्कीर्तना ही इस समय करनी चाहिये यह यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* वह जैसे।

§ ४२७. यह सूत्र सुगम है।

(१४४) तीसरी आवलि सात संग्रह कृष्टियोंमें, चौथी आवलि दस संग्रह कृष्टियोंमें और उससे आगे शेष आवलियाँ सब संग्रह कृष्टियोंमें पायी जाती हैं ॥१९७॥

§ ४२८. इस प्रकार तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना की। अर्थकी विभाषा पहले ही कर आये हैं, इसलिये उसकी पुनः प्ररूपणा नहीं करते, क्योंकि जिसका ज्ञान करा दिया है उसका

चउत्थावलियादो परमुवरि सेसाओ पंचम-छट्ठ-सत्तमादि आवलियाओ णियमा सव्वासु किट्टीसु होंति, पंचमावलियपढमसमए चेव सेसकिट्टीसु समयाविरोहेण संकंतस्स कोहसंजलणपुव्वणिरुद्ध-पदेसग्गस्स बारससु वि संगहकिट्टीसु तदवत्थाए समवट्ठाणदंसणादो त्ति भणिदं होदि। एवं कोह-संजलणणवकबंधमहिकिच्च एसा सव्वा मग्गणा दोहि भासगाहाहि समागदा। माणादिसंजलणेसु वि जहासंभवमेसो अत्थो अणुगंतव्वो। एवमेदीए मग्गणाए कदाए तदो तदियभासगाहाए विहासा समत्ता भवदि।

* एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ ४२९. सुगमं।

(१४५) एदे समयपबद्धा अच्छुत्ता णियमसा इह भवम्मि।
सेसा भवबद्धा खलु संछुद्धा होंति बोद्धव्वा ॥१९८॥

§ ४३०. एसा चउत्थभासगाहा पढमभासगाहाणिद्दिट्ठस्सेवत्थस्स पुणो वि विसेसियूण परूवणट्ठमोइण्णा। संपहि एदिस्से गाहाए किंचि अवयवत्थपरामरसं कस्सामो। तं जहा—'एदे समयपबद्धा' एदे अणंतरपरूविदा छण्हमावलियाणं समयपबद्धा 'अच्छुत्ता' उदयट्ठिदीए असंछुद्धा भवंति। 'इह भवम्हि' एदम्मि वट्टमाणभवग्गहणे 'सेस-भवबद्धा खलु' एवं वट्टमाणभवग्गहणं मोत्तूण सेसासेसकम्मट्ठिदिअब्भंतरभवट्ठिदिगहणपबद्धा सव्वे चेव समयपबद्धा उदए संछुद्धा होंति त्ति जाणिदव्वा, तेसिमसंछुद्धभावेणावट्ठाणस्स कारणाणुवलंभादो। तदो समयपबद्धविवक्खाए

पुनः ज्ञान करानेका कोई फल नहीं है। इतनी विशेषता है कि 'तेण परं सेसाओ' ऐसा कहनेपर चौथी आवलिके आगे शेष पांचवीं, छठी और सातवीं आवलियां नियमसे सब कृष्टियोंमें पायी जाती हैं, क्योंकि पांचवीं आवलिके प्रथम समयमें ही शेष कृष्टियोंमें समयके अविरोधपूर्वक संक्रान्त हुए क्रोधसंज्वलनके पूर्व विवक्षित प्रदेश पुंजका बारह ही संग्रह कृष्टियोंमें उस अवस्थामें अवस्थान देखा जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार क्रोधसंज्वलनके नवकबन्धको अधिकृत करके यह सब मार्गणा दो भाष्यगाथाओं द्वारा की गयी है। मानादि संज्वलनोंके विषयमें भी क्रमसे यह अर्थ जान लेना चाहिये। इस प्रकार इस मार्गणाके किये जानेपर तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा समाप्त होती है।

* इससे आगे चौथी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ ४२९. यह सूत्र सुगम है।

(१४५) ये अनन्तर कहे गये समयप्रबद्ध इस भवमें इस क्षपकके नियमसे असंक्षुब्ध रहते हैं। किन्तु शेष भवबद्ध समयप्रबद्ध इस क्षपकके नियमसे संक्षुब्ध जानने चाहिये ॥१९८॥

§ ४३०. यह चौथी भाष्यगाथा प्रथम भाष्यगाथामें निर्दिष्ट किये गये अर्थका ही पुनरपि विशेषरूपसे कथन करनेके लिये अवतीर्ण हुई है। अब इस गाथाके किंचित् अवयवार्थका परामर्श करेंगे। वह जैसे—'एदे समयपबद्धा' ये अनन्तर कहे गये छह आवलियोंके समयप्रबद्ध 'अच्छुत्ता' उदय स्थितिमें असंक्षुब्ध रहते हैं। 'इह भवम्हि' इस वर्तमान भवग्रहणमें 'सेसभवबद्धा खलु' इस भवग्रहणको छोड़कर शेष समस्त कर्मस्थितिके भीतर भवग्रहणस्थितिमें बँधे हुए सभी समयप्रबद्ध उदयमें संक्षुब्ध होते हैं ऐसा जानना चाहिये, क्योंकि उनके असंक्षुब्धरूपसे अवस्थानका कोई कारण नहीं उपलब्ध होता। इसलिये समयप्रबद्धकी विवक्षामें ये संक्षुब्ध और असंक्षुब्ध रूपसे इस

संछुद्धासंछुद्धभावो लब्भदे। भवबद्धा पुण णियमा सव्वे चेव संछुद्धा बोद्धव्वा; ण तत्थ पयारंतरसंभवो त्ति एसो एदस्स भावत्थो। एवंविहो च एदिस्से गाहाए अत्थो पढमभासगाहाविहासावसरे चेव विहासिदो, तदो ण पुणो एण्हिं विहासियव्वो त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एदिस्से गाहाए अत्थो पढमभासगाहाए चेव परूविदो।**

§ ४३१. कुदो? तत्थ समयपबद्धाणं संछुद्धासंछुद्धभावगवेसणावसरे चेव भवबद्धपरूवणाए वि सवित्थरमणुमग्गिदत्तादो। एवं सत्तमीए मूलगाहाए अत्थविहासा समत्ता।

*** एत्तो अट्ठमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ ४३२. सत्तमूलगाहाविहासणाणंतरमेत्तो अट्ठमीए मूलगाहाए जहावसरपत्ता समुक्कित्तणा कायव्वा त्ति वुत्तं होइ।

(१४६) एगसमयपबद्धाणं सेसाणि च कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु।
भवसेसगाणि कदिसु च कदि कदि वा एगसमएण ॥१९९॥

§ ४३३. एसा अट्ठमी मूलगाहा अंतरकरणादो उवरिमवत्थाए वट्टमाणस्स खवगस्स समयपबद्धसेसाणि च भवबद्धसेसाणि च केत्तियमेत्ताणि कदिसु ठिदिविसेसेसु संभवंति त्ति एवंविहस्स अत्थविसेसस्स णिण्णयविहाणट्ठमोइण्णा। संपहि एदिस्से अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—'एगसमयपबद्धाणं' एवं भणिदे एगसमयम्मि जेत्तिया कम्मपरमाणू बद्धा, तेसिमेगसमयपबद्धो

क्षपकके पाये जाते हैं। परन्तु भवबद्ध सभी समयप्रबद्ध इस क्षपकके नियमसे संक्षुब्ध जानने चाहिये। उनमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है यह इसका भावार्थ है। और इस प्रकारके इस गाथाके इस अर्थकी प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषाके समय ही विभाषा कर आये हैं, इसलिये पुनः विभाषा नहीं करनी चाहिये। इस प्रकार प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस गाथासूत्रका अर्थ प्रथम भाष्यगाथामें ही प्ररूपित कर आये हैं।**

§ ४३१. क्योंकि उस गाथासूत्रमें समयप्रबद्धोंके संक्षुब्ध और असंक्षुब्धभावकी गवेषणाके समय ही भवबद्ध समयप्रबद्धोंकी प्ररूपणाका भी विस्तारके साथ अनुमार्गण कर आये हैं। इस प्रकार सातवीं मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई।

*** इससे आगे आठवीं मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ ४३२. सातवीं मूलगाथाकी विभाषा करनेके बाद आगे आठवीं मूलगाथाकी यथावसर प्राप्त समुत्कीर्तना करनी चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(१४६) कितने एक और नाना समयप्रबद्ध शेष तथा नाना भवबद्ध शेष कितने स्थितिविशेषों और अनुभाग विशेषोंमें पाये जाते हैं। इसी प्रकार एक और नाना कितने समयप्रबद्ध शेष और भवबद्ध शेष एक स्थिति विशेषमें पाये जाते हैं। तथा एक समयसम्बन्धी एक स्थितिविशेषमें नाना और एक कितने समयप्रबद्ध शेष और भवबद्ध शेष पाये जाते हैं ॥१९९॥

§ ४३३. यह आठवीं मूलगाथा अन्तरकरणसे उपरिम अवस्थामें विद्यमान क्षपकके कितने समयप्रबद्ध शेष और भवबद्ध शेष कितने स्थितिविशेषोंमें सम्भव हैं इस प्रकारके अर्थविशेषका निर्णय करनेके लिये अवतीर्ण हुई है। अब इसके अर्थकी प्ररूपणा करेंगे। वह जैसे—'एगसमयपबद्धाणं' ऐसा कहनेपर एक समयमें जितने कर्म परमाणु बँधते हैं उनकी एक समयप्रबद्ध संज्ञा है।

त्ति सण्णा। सो वुण समुदायप्पणाए एगो वि संतो सगावयवकम्मपदेसभेदप्पणाए बहुत्तमावण्णो त्ति बहुवयणणिद्देसो कओ।

§ ४३४. अथवा णाणासमयपबद्धाणेगसमयपबद्धावत्तीओ पडुच्च तस्स बहुत्तसंभवादो एसो बहुवयणंतणिद्देसो कओ दट्ठव्वो। तेसिं 'सेसाणि' त्ति वुत्ते कम्मट्ठिदिकालब्भंतरे वेदिदसेसाणं कम्मपदेसाणं से काले सुद्धं णिल्लेविज्जमाणसरूवाणं गहणं कायव्वं। तदो एगसमयपबद्धस्स वा णाणासमयपबद्धाणं वा सेसगाणि 'कदि' केत्तियमेत्ताणि 'कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु' केत्तियमेत्तेसु ट्ठिदिभेदेसु संभवंति त्ति गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसंबंधो। एत्थ 'कदि' सद्दो गाहापच्छद्धट्ठिदो अहिसंबंधेयव्वो। एत्थतण 'च' सद्देणावुत्तसमुच्चयट्ठेण अणुभागविसया पुच्छा सूचिदा दट्ठव्वा। तदो कम्मट्ठिदिअब्भंतरे बद्धणाणेगसमयपबद्धाणं वेदिदसेसकम्मपरमाणवो से काले णिरवसेसं णिल्लेविज्जमाणसरूवा कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु अणुभागविसेसेसु च केत्तियमेत्ता जहण्णुक्कस्सेण संभवंति त्ति एसो गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसमुच्चओ।

§ ४३५. 'भवसेसयाणि कदिसु च' एवं भणिदे एक्कम्मि भवग्गहणे जेत्तियो कम्मपदेसपिंडो संचिदो तस्स भवबद्धसण्णा। सो च पुव्वं व णाणेगभवबद्धसंगहणट्ठं बहुवयणेण णिद्दिट्ठो। तेण णाणेगभवबद्धाणं वेदिदसेसा कम्मपदेसा से काले णिरवसेसं णिल्लेविज्जमाणसरूवा कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु 'च' सद्दसूचिदाणुभागविसेसेसु केत्तियमेत्ता होंति त्ति गाहापच्छद्धे सुत्तत्थसंगहो।

परन्तु वह समुदायकी विवक्षामें एक होता हुआ भी अपने अवयवरूप कर्मप्रदेशोंको भेदविवक्षामें बहुत्वको प्राप्त हो जाता है, इसलिए उक्त पदमें बहुवचनका निर्देश किया है।

§ ४३४. अथवा नाना समयप्रबद्धोंके एक-एक समयप्रबद्धकी आवृत्तिकी अपेक्षा उसका बहुतपना सम्भव होनेसे सूत्रमें बहुवचनरूप निर्देश किया है ऐसा जानना चाहिये। उनके 'सेसाणि' ऐसा कहनेपर कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर वेदे जानेके बाद जो शेष बचे हैं और जो तदनन्तर समयमें केवल निर्लेपित भावको प्राप्त होनेवाले हैं उनका ग्रहण करना चाहिये। इसलिए एक समयप्रबद्धके अथवा नाना समयप्रबद्धोंके 'कदि' अर्थात् कितने शेष रहते हैं वे 'कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु' अर्थात् कितने स्थितिसम्बन्धी भेदोंमें सम्भव हैं यह इस सूत्रगाथाके पूर्वार्धमें अर्थके साथ सम्बन्ध है। यहाँ गाथाके उत्तरार्धमें स्थित 'कति' शब्दका सम्बन्ध कर लेना चाहिये। तथा इस गाथामें जो 'च' शब्द आया है वह अनुक्त अर्थका समुच्चय करनेवाला होनेसे उस द्वारा अनुभागविषयक पृच्छा सूचित की गयी जाननी चाहिये। इसलिये कर्मस्थिति कालके भीतर जो नाना समयप्रबद्ध और एक समयप्रबद्ध बन्धको प्राप्त हुए हैं तत्सम्बन्धी वेदे जानेसे शेष बचे कर्म परमाणु तदनन्तर समयमें निरवशेषरूपसे निर्लेपन भावको प्राप्त होते हुए कितने स्थितिविशेषोंमें और कितने अनुभागविशेषोंमें कितने कर्म परमाणु जघन्य और उत्कृष्ट रूपसे सम्भव हैं यह गाथाके पूर्वार्धमें सूत्रका समुच्चय रूप अर्थ है।

§ ४३५. 'भवसेसयाणि च कदिसु' ऐसा कहनेपर एक भवग्रहणमें जितने कर्मप्रदेशपिण्डका संचय किया है उसकी भवबद्ध संज्ञा है। और उसका भी पहलेके समान नाना भवबद्ध और एक भवबद्ध कर्म पुंजका संग्रह करनेके लिये बहुवचनरूपसे निर्देश किया है। इसलिये नाना भवबद्ध और एक भवबद्ध कर्मपुंजके वेदे जानेके बाद जो कर्मप्रदेश शेष बचे वे तदनन्तर समयमें पूरी तरहसे निर्लेपनभावको प्राप्त होते हुए कितने स्थितिविशेषोंमें और 'च' पदसे कितने अनुभाग विशेषोंमें होते हैं यह इस गाथाके उत्तरार्धका समुच्चयरूप अर्थ है।

§ ४३६. 'कदि कदि वा एगसमएण' एसो गाहासुत्तस्स चरिमावयवो। तत्थ एगो कदिसद्दो समयपबद्धसेसाणं भवबद्धसेसाणं च विसेसणभावेण पुव्वमेव संबंधिदो। संपहि 'कदि वा एगसमयेणे-त्ति' एदस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—एगणिसेगट्ठिदिमाधारं कादूण तत्थ णाणेगसमयपबद्धाणं भव-बद्धाणं च सेसयाणि केत्तियमेत्ताणि लब्भंति त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिण्णयविहाणट्ठमेदं भणिदं, एगसमयेण विसेसिदा एगगोवुच्छम्मि वट्टमाणा समयपबद्धाणं च वेदिदसेसकम्मपरमाणू कदि वा लब्भंति त्ति सुत्तत्थाहिसंबंधवसेण तत्थ तहाविहत्थस्स परिप्फुडमुवलंभादो। एत्थत्तण 'वा' सद्दो अणुत्तसमुच्चयट्ठो तिण्हं पुच्छाणं पयदोवजोगिसयलविसेसपरूवणाए सूचयभावेण तस्सावट्ठाणब्भुवगमादो। एवमेदीए मूलगाहाए तिण्णि पुच्छाओ णिद्दिट्ठाओ भवंति। तं जहा—

§ ४३७. णाणेगसमयपबद्धाणं सेसयाणि कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु केत्तियमेत्ताणि होंति त्ति एसो पढमो पुच्छाणिद्देसो। णाणेगभवबद्धाणं सेसयाणि कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु केत्तियमेत्ताणि होंति त्ति एसो बिदियो पुच्छाणिद्देसो। 'कदि वा एगसमयेणेत्ति' एदम्मि चरिमावयवे एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे वट्टमाणाणि केत्तियाणि णाणेगभवबद्धसमयपबद्धाणं सेसयाणि होंति त्ति तदिओ पुच्छाणिद्देसो त्ति। एत्थेव 'एगसमएणेत्ति' एदेण चरिमावयवेण समयपबद्धसेसभवबद्धसेसाणं लक्खणणिद्देसो वि सूचिदो त्ति घेत्तव्वो। एगसमयेण जम्हि वेदिदसेसगे पदेसपिंडे णिरवसेस-मोकड्डियूण उदये संछुद्धे पुणो णिरुद्धसमयपबद्धस्स भवबद्धस्स वा ण किंचि पदेसग्गमुव्वरदि तारिसं पदेसग्गं से काले णिल्लेवणपाओग्गं होदूणेण्हिमुवलब्भमाणसमयपबद्धसेसयं भवबद्धसेसयं

§ ४३६. 'कदि कदि वा एगसमएण' यह इस गाथासूत्रका अन्तिम चरण है। उसमें जो एक 'कति' शब्द आया है उसका समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेषके विशेषणरूपसे पहले ही सम्बन्ध सूचित कर आये हैं। अब 'कदि वा एगसमएण' इस पदका अर्थ कहते हैं। वह जैसे—एक निषेकसम्बन्धी स्थितिको आधार करके उसमें कितने नाना समयप्रबद्धशेष और एक समय-प्रबद्धशेष प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार कितने नाना भवबद्धशेष और एक भवबद्धशेष प्राप्त होते हैं इस अर्थविशेषका निर्णय करनेके लिये यह वचन कहा गया है, क्योंकि एक समयवाले एक गोपुच्छमें विद्यमान तथा समयप्रबद्धोंके वेदे जानेसे शेष बचे कर्म परमाणु कितने प्राप्त होते हैं इस प्रकार सूत्रार्थके सम्बन्धवश वहाँ उस प्रकारका अर्थ स्पष्ट रूपसे उपलब्ध होता है। इस चरण में आया हुआ 'वा' शब्द अनुक्त अर्थका समुच्चय करता हुआ तीन पृच्छाओं सम्बन्धी प्रकृतमें उपयोगी समस्त विशेषोंकी प्ररूपणाके सूचकरूपसे उसका अवस्थान स्वीकार किया गया है। इस प्रकार इस मूल गाथामें तीन पृच्छाएँ निर्दिष्ट की गई हैं। वह जैसे—

§ ४३७. नाना और एक समयप्रबद्धोंके शेष कितने स्थितिविशेषोंमें कितने होते हैं यह प्रथम पृच्छानिर्देश है। नाना भवों और एक भवमें बद्ध कर्मोंके शेष कितने स्थितिविशेषोंमें कितने होते हैं यह दूसरा पृच्छानिर्देश है। 'कदि वा एगसमएण' इस अन्तिम चरणमें एक स्थितिविशेषमें विद्यमान नाना और एक भवबद्ध और समयप्रबद्धोंके शेष कितने होते हैं यह तीसरा पृच्छानिर्देश है। तथा इसी गाथा सूत्रमें आये हुए 'एगसमएण' इस अन्तिम चरण द्वारा समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेषके लक्षणका निर्देश सूचित किया गया है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। एक समय द्वारा जिसका वेदन करनेके बाद शेष बचे हुए प्रदेशपिण्डको पूरा अपकर्षित करके उदयमें निक्षिप्त करनेपर पुनः विवक्षित समयप्रबद्धका या भवबद्धका किंचित् मात्र प्रदेशपुंज अवशिष्ट नहीं रहता उस प्रकारका प्रदेशपुंज तदनन्तर समयमें निर्लेपनके योग्य होकर इस समय उपलभ्यमान समयप्रबद्धशेष और

च वट्टव्वमिदि वक्कज्झाहारं कादूण सुत्तत्थे वक्खाणिज्जमाणे तहाविहस्स लक्खणणिद्देसस्स वि एत्थेव पडिबद्धत्तदंसणादो। एवमेदीए मूलगाहाए पुच्छामेत्तेण सूचिदाणमेदेसिं तिण्हमत्थविसेसाणं विहासणं कुणमाणो तत्थ पडिबद्धभासगाहाणमियत्तावहारणट्ठमिदमाह—

* एत्थ चत्तारि भासगाहाओ।

§ ४३८. एदम्मि मूलगाहासुत्ते विहासिज्जमाणे तत्थ इमाओ चत्तारि भासगाहाओ होंति त्ति वुत्तं होइ।

* तासिं समुक्कित्तणा।

§ ४३९. सुगमं।

(१४७) एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे भवसेसगसमयपबद्धसेसाणि।
णियमा अणुभागेसु य भवंति सेसा अणंतेसु ॥२००॥

§ ४४०. एसा पढमभासगाहा 'कदि वा एगसमयेणेत्ति' एवं मूलगाहाचरिमावयवमस्सियूण एगं ठिदिविसेसमाधारं कादूण तत्थ भवबद्धसेसगाणि समयपबद्धसेसयाणि च एत्तियमेत्ताणि होंति त्ति जाणावणट्ठं, पुणो तेसिं चेवाणुभागविसेसावहारणट्ठं च समोइण्णा। भव-समयपबद्धसेसाणं लक्खणविसेसणिद्देसं पि देसामासयभावेण एसा गाहा सूचेदि, सव्वेसिं गाहासुत्ताणं देसामासयभावेणावट्ठाणब्भुवगमादो। संपहि एदिस्से अवयवत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—

भवबद्धशेष कहलाता है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार इस वाक्यका अध्याहार करके सूत्रके अर्थका व्याख्यान करनेपर उस प्रकारके लक्षणका निर्देश भी इसीमें प्रतिबद्ध देखा जाता है। इस प्रकार इस मूल सूत्र गाथामें की गयी पृच्छासामान्यके द्वारा सूचित किये गये इन तीन अर्थ-विशेषोंका व्याख्यान करते हुए उन अर्थोंमें प्रतिबद्ध भाष्यगाथाओंकी संख्याका अवधारण करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* इस मूलगाथाके अर्थमें प्रवृत्त चार भाष्यगाथाएँ हैं।

§ ४३८. इस मूल गाथासूत्रके अर्थकी विभाषा करनेमें प्रवृत्त प्रकृतमें ये चार भाष्यगाथाएँ हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* अब उनकी समुत्कीर्तना करते हैं।

§ ४३९. यह सूत्र सुगम है।

(१४७) एक स्थितिविशेषमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष नियमसे होते हैं तथा अनन्त अनुभागोंमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष नियमसे होते हैं ॥२००॥

§ ४४०. यह प्रथम भाष्यगाथा 'कदि वा एगसमएण' इस प्रकार मूलगाथाके अन्तिम चरणका आश्रय करनेके साथ एक स्थितिविशेषको आधार बनाकर उसमें भवबद्धशेष और समय-प्रबद्धशेष इतने होते हैं इसका ज्ञान करानेके लिए तथा उन्हींके अनुभाग विशेषका अवधारण करनेके लिए आयी है। तथा भवबद्धशेषों और समयप्रबद्धशेषोंके लक्षणविशेषका निर्देश भी देशामर्षक रूपसे यह गाथा सूचित करती है, क्योंकि सभी गाथासूत्रोंका देशामर्षकभावसे अवस्थान स्वीकार किया गया है। अब इस भाष्यगाथाके अवयवोंकी अर्थप्ररूपणा करेंगे। वह जैसे—

§ ४४१. 'एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे' समयाहियउदयावलियादो उवरि अण्णदरम्हि ट्ठिदिविसेसे उदयविदियट्ठिदीए वा 'भवसेसगसमयपबद्धसेसाणि' केत्तियमेत्ताणि होंति त्ति पुच्छिदे भवसेसयसमयपबद्धसेसाणि बहूणि होंति त्ति तेसिं पमाणणिद्देसो कओ। 'भवसेसय-समयपबद्धसेसाणि' त्ति एदेण बहुवयणणिद्देसेण तेसिं बहुसंखाविसेसिदपमाणणिद्देसोववत्तीदो। जइ वि एदेण सामण्णणिद्देसेण तेसिं बहुत्तमेत्तं चेव जाणाविदं तो वि 'वक्खाणादो विसेसपडिवत्ती होइ' णायादो एक्कम्मि ठिदिविसेसे उक्कस्सेण असंखेज्जाणि भवबद्धसेसाणि समयपबद्धसेसाणि च होंति त्ति घेत्तव्वं। तदो एक्कम्हि ठिदिविसेसे एक्कस्स वा समयपबद्धस्स सेसयं जहण्णेण एगपरमाणुमादिं कादूण जावुक्कस्सेणाणंतपरमाणुपमाणं होदूण लब्भइ। एवं दो-तिण्णि आदि-कमेण गंतूण जावुक्कस्सेण पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमेत्ताणं वा समयपबद्धाणं सेसयाणि जहण्णुक्कस्सेणेयाणंतपरमाणुपमाणाणि होदूण लब्भंति। एवं भवबद्धसेसयाणं पि णेदव्वमिदि गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसमुच्चओ। 'णियमा अणुभागेसु च' एवं भणिदे ताणि भवबद्धसेसयाणि समयपबद्धसेसाणि च तम्हि ट्ठिदिविसेसे वट्टमाणाणि णिच्छयेणेव अणंतेसु अणुभागेसु होंति। किं कारणं? एयम्मि वि परमाणुम्मि जहण्णसत्तिपरिणदम्मि अणंताणंताणमविभागपडिच्छेदाण-मणुभागसण्णिदाणमुवलंभादो। संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अत्थं विहासेमाणो विहासागंथ-मुत्तरं भणइ—

* विहासा।

§ ४४२. गाहासुत्तणिद्दिट्ठत्थविवरणं विहासा णाम। सा एण्हिमवहारिज्जदि त्ति वुत्तं होइ।

---

§ ४४१. 'एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे' एक स्थितिविशेषमें अर्थात् एक समय अधिक उदयावलिसे ऊपर अन्यतर स्थितिविशेषमें या उदयके बाद दूसरी स्थितिमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष कितने होते हैं ऐसी पृच्छा करनेपर भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष बहुत होते हैं इस प्रकार उनके प्रमाणका निर्देश किया है, क्योंकि 'भवसेसय-समयपबद्धसेसाणि' इस प्रकार इस चरणमें किये गये बहुवचन निर्देशसे उनके बहुत संख्यायुक्त प्रमाणका निर्देश बन जाता है। यहाँ यद्यपि इस प्रकार किये गये सामान्य निर्देश द्वारा उनके बहुत्वसामान्यका ही ज्ञान होता है तो भी 'व्याख्यानसे विशेषकी प्रतिपत्ति होती है' इस न्यायके अनुसार एक स्थितिविशेषमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्ध-शेष असंख्यात होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। इस कारण एक स्थितिविशेषमें एक समय-प्रबद्धसम्बन्धी शेष जघन्यसे एक परमाणुसे लेकर उत्कृष्टसे अनन्त परमाणुप्रमाण तक होकर उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार दो, तीन आदिके क्रमसे जाकर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके शेष जघन्यसे एक परमाणुसे लेकर उत्कृष्टसे अनन्त परमाणुप्रमाण होकर उपलब्ध होते हैं। इसी प्रकार भवबद्धशेषोंका भी कथन करना चाहिए। इस प्रकार यह गाथाके पूर्वार्धसम्बन्धी सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। 'णियमा अणुभागेसु च' ऐसा कहनेपर वे भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष उसी स्थितिविशेषमें निश्चयसे अनन्त अनुभागोंमें पाये जाते हैं, क्योंकि जघन्य शक्तिरूपसे परिणत एक भी परमाणुमें अनुभागसंज्ञक अनन्तानन्त अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं। अब इस प्रकार इस गथाके अर्थकी विभाषा करते हुए आगे विभाषा ग्रन्थका कथन करते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ४४२. गाथासूत्रमें निर्दिष्ट किये गये अर्थका ब्योरेवार कथन करना विभाषा कहलाती

तत्थ ताव भवबद्धसेसस्स समयपबद्धसेसस्स च सरूवविसेसजाणावणट्ठं तल्लक्खणणिद्देसमेव सुत्तसूचिदं पुव्वं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* समयपबद्धसेसयं णाम किं ।

§ ४४३. एवं पुच्छंतस्सायमहिप्पाओ—समयपबद्धसेससरूवे जाणिदे पच्छा तव्विसय पमाणादिपरूवणा घडदे, णाण्णहा । तदो तस्सेव ताव सरूवणिद्देसो पुव्वमेत्थ कायव्वो । तम्हि कीरमाणे केरिसं तं समयपबद्धसेसयं णाम, ण तस्स सरूवमम्हे जाणामो त्ति । एवं भवबद्धसेसस्स वि पुच्छाणुगमो कायव्वो, सुत्तस्सेदस्स देसामासयभावेण पवुत्तिअब्भुवगमादो । संपहि एदिस्से पुच्छाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

* जं समयपबद्धस्स वेदिदसेसगं पदेसग्गं दिस्सइ, तम्मि अपरिसेसिदम्मि एगसमयेण उदयमागदम्मि तस्स समयपबद्धस्स अण्णो कम्मपदेसो वा णत्थि तं समयपबद्धसेसगं णाम ।

§ ४४४. एदस्स सुत्तस्स अत्थविवरणं कस्सामो । तं जहा—जं समयपबद्धस्स कम्मट्ठिदि-अब्भंतरे जहाकमं वेदिज्जमाणयस्स वेदिदसेसगं पदेसग्गं से काले णिल्लेवणाहिमुहं होदूण दीसइ तं समयपबद्धसेसयं णाम । संपहि एदस्सेव विसेसियूण परूवणट्ठमिदमाह—'तम्हि अपरिसेसिदम्हि उदयमागदम्हि' वेदिदसेसगे पदेसग्गे णिरवसेसमोकड्डियूण उदयम्मि संछुद्धे पुणो तस्स

है । उसका इस समय कथन करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उसमें सर्वप्रथम भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेषके स्वरूपविशेषका ज्ञान करानेके लिए पहले गाथासूत्र द्वारा सूचित हुए उनके लक्षणका निर्देश करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* समयप्रबद्धशेष किसे कहते हैं ?

§ ४४३. ऐसा पूछनेवालेका यह अभिप्राय है कि समयप्रबद्धशेषके प्रमाणका ज्ञान हो जानेपर बादमें उसका प्रमाण कितना है इत्यादि प्ररूपणा घटित होती है, अन्यथा नहीं, इसलिए सर्वप्रथम उसीके स्वरूपका निर्देश करना चाहिए । उसके स्वरूपका निर्देश करनेपर उस समयप्रबद्धशेषका स्वरूप किस प्रकारका है, क्योंकि उसके स्वरूपको हम नहीं जानते । इसी प्रकार भवबद्धशेषके विषयमें भी पृच्छाका निर्देश करना चाहिए, क्योंकि इस सूत्रकी देशामर्षकरूपसे प्रवृत्ति स्वीकार की गयी है । अब इस पृच्छाका निर्णयका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

* समयप्रबद्धका वेदन करनेके बाद जो प्रदेशपुंज दिखलाई देता है पूरे उसके एक समय द्वारा उदयमें आनेपर उस समयप्रबद्धका फिर कोई अन्य कर्मप्रदेश (उदयमें आनेके लिए) शेष नहीं रहता है उसे समयप्रबद्धशेष कहते हैं ।

§ ४४४. अब इस सूत्रके अर्थका स्पष्टीकरण करते हैं । वह जैसे—कर्मस्थितिके भीतर क्रमसे वेदन किये जानेवाले समयप्रबद्धका वेदन करनेके बाद जो प्रदेशपुंजशेष रहकर तदनन्तर समयमें निर्लेपनके अभिमुख होकर दिखाई देता है वह समयप्रबद्धशेष कहलता है । अब इसीका विशेष रूपसे कथन करनेके लिए सूत्रमें यह वचन कहा है—'तम्हि अपरिसेसदम्हि उदयमागदम्हि' अर्थात् वेदन करनेके बाद जो प्रदेशपुंज शेष रहता है पूरे उसका अपकर्षण करके

णिरुद्धसमयपबद्धस्स एक्को वा कम्मपदेसो अणेगा वा कम्मपदेसा पढमट्ठिदीए वा विदियट्ठिदीए वा णियमा ण संभवंति, किंतु तेणेव पदेसग्गेण उदिण्णेण तस्स समयपबद्धस्स णिरवसेसं णिल्लेवणा भविस्सदि तं तारिसं पदेसग्गं से काले उदयाहिमुहं होदूण एण्हिमुवलब्भमाणसरूवं समयपबद्धसेसय-मिदि वुत्तं होइ। उदयाहिमुहावत्थं मोत्तूण उदयसमये चेव वट्टमाणं तं पदेसग्गं समयपबद्धसेसयमिदि किण्ण घेप्पदे ? ण, तहा घेप्पमाणे एक्कम्हि चेव ट्ठिदिविसेसे समयपबद्धसेसस्सावट्ठाणप्पसंगादो। ण चेदमिच्छिज्जदे; अणेगेसु ठिदिविसेसेसु सांतरणिरंतरसरूवेण समयपबद्धसेसयमवचिट्ठदि त्ति उवरिमपरूवणाए विरोहप्पसंगादो। संपहि एदस्स सुत्तस्स भावत्थो वुच्चदे। तं जहा—कम्मट्ठिदि-अब्भंतरे बद्धो एगसमयपबद्धो समयाहियबंधावलियप्पहुडि उदीरिज्जमाणो पलिदोवमस्स असं-खेज्जदिभागमेत्तकालं णिरंतरमुदीरिज्जदि सो तस्स वेदगकालो णाम। तदो एगसमयमादिं कादूण आवुक्कस्सेण पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमेत्तमवेदगकालमुल्लंघियूण पुणो वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालं णिरंतरमुक्कस्सेण वेदिज्जदे। एवमेदेण कमेण वेदिज्जमाणस्स तस्स समयपबद्धस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरे सगुक्कस्सणिल्लेवणकालमेत्ते सेसे तत्तो पहुडि णिल्लेवण-पाओग्गभावेण वट्टमाणस्स वेदिदसेसग्गं पदेसग्गं केत्तियं पि पढमट्ठिदीए समयाहियउदयावलिय-वज्जाए णिरंतरं होदूणच्छणं लहदि, विदियट्ठिदीए च सव्वासु ट्ठिदीसु होदूणावट्ठाणं लहदि। अथवा तासु दोसु वि ट्ठिदीसु णिरंतरमहोदूण अण्णदरम्मि एगट्ठिदिविसेसम्मि चेव एग-दो-तिण्णि-

---

उदयमें निक्षिप्त करनेपर तत्पश्चात् उस विवक्षित समयप्रबद्धका एक भी कर्मप्रदेश अथवा अन्य बहुतसे कर्मप्रदेश प्रथम स्थितिमें और द्वितीय स्थितिमें नियमसे नहीं पाये जाते, किन्तु उसी प्रदेशपुंजके उदय होनेके बाद उस समयप्रबद्धका पूरा निर्लेपन हो जायेगा वह उस प्रकारका प्रदेश-पुंज तदनन्तर समयमें उदयके अभिमुख होकर इस समय उपलभ्यमान होता हुआ समयप्रबद्धशेष कहलाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—उदयकी अभिमुख अवस्थाको छोड़कर उदय समयमें विद्यमान वह प्रदेशपुंज सयमप्रबद्धशेष कहलाता है ऐसा क्यों नहीं ग्रहण करते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि ऐसा ग्रहण करनेपर एक ही स्थिति-विशेषमें समयप्रबद्ध शेषके अवस्थानका प्रसंग प्राप्त होता है। परन्तु यह इष्ट नहीं है, क्योंकि ऐसा स्वीकार करनेपर अनेक स्थिति-विशेषोंमें सान्तर और निरन्तर रूपसे समयप्रबद्धशेष अवस्थित रहता है इस उपरिम प्ररूपणाके साथ विरोधका प्रसंग प्राप्त होता है।

अब इस सूत्रका भावार्थ कहते हैं। वह जैसे—कर्मस्थितिके भीतर बन्धको प्राप्त हुआ एक समयप्रबद्ध एक समय अधिक बन्धावलिसे लेकर उदीरणाको प्राप्त होता हुआ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक निरन्तर उदीरित होता रहता है। वह उसका वेदककाल कहलाता है। इसके बाद एक समयसे लेकर उत्कृष्टरूपसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण अवेदक कालको उल्लंघन कर फिर भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक निरन्तर उत्कृष्टरूपसे वेदन करता है। इस प्रकार इस क्रमसे वेदे जानेवाले उस समय-प्रबद्धका कर्मस्थितिके भीतर अपना उत्कृष्ट निर्लेपन कालके शेष रहनेपर वहाँसे लेकर निर्लेपन प्रायोग्यरूपसे विद्यमान उस समयप्रबद्धका वेदे जानेसे शेष बचा प्रदेशपुंज कितना ही एक समय अधिक आवलिसे रहित प्रथम स्थितिमें निरन्तररूपसे अवस्थित रहता है और द्वितीय स्थिति-सम्बन्धी सब स्थितियोंमें अवस्थित रहता है। अथवा उन दोनों ही स्थितियोंमें निरन्तररूपसे

परमाणुआदिकमेण जावुक्कस्सेणाणंता परमाणू सेसयं होदूणच्छणं लहदि। पुणो एवं ट्ठिद-कम्मपरमाणू एगपरमाणुणा वि अपरिसेसो होदूण ओकड्डिय से काले उदयट्ठिदीए संछुहणपाओग्ग-भावेणेण्हिमुवलब्भमाणा तस्स समयपबद्धस्स सेसयमिदि भण्णंते, तत्तो परं णिरुद्धसमयपबद्धस्स एक्केण वि परमाणुणा विणा णिल्लेवणदंसणादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। एवमेदेण सुत्तेण समयपबद्धसेसस्स सरूवणिद्देसं कादूण संपहि भवबद्धसेसगस्स वि एवं चेव सरूवपरूवणा कायव्वा त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एवं चेव भवबद्धसेसयं।**

§ ४४५. जहा समयपबद्धसेसयं तहा चेव भवबद्धसेसयं पि दट्ठव्वं, से काले ओकड्डणवसेण उदयट्ठिदीए णिल्लेविज्जमाणत्तं पडि विसेसाणुवलंभादो त्ति वुत्तं होदि। णवरि समयपबद्धसेसयं णाम एगसमयपबद्धकम्मपरमाणू घेत्तूण भवदि। भवबद्धसेसयं पुण जहण्णदो वि अंतोमुहुत्त-मेत्ताणं समयपबद्धाणमेगभवपडिबद्धाणं कम्मपरमाणू जहासंभवमुवलब्भमाणे घेत्तूण होदि त्ति वत्तव्वं।

*** एदीए सण्णापरूवणाए पढमाए भासगाहाए विहासा।**

§ ४४६. एदीए अणंतरणिद्दिट्ठाए सण्णापरूवणाए णिण्णीदसरूवाणं समयपबद्धसेसाणं भव-बद्धसेसाणं च एगम्मि ट्ठिदिविसेसे वट्टमाणाणमियत्तावहारणट्ठं तदणुभागविसेसगवेसणट्ठं च पढम-भासगाहाए विहासा एण्हिमवयारिज्जदि त्ति वुत्तं होइ।

न रहकर अन्यतर एक स्थितिविशेषमें ही एक, दो या तीन परमाणु आदिके क्रमसे लेकर उत्कृष्ट-रूपसे अनन्त परमाणु शेष होकर अवस्थित रहते हैं। पुनः इस प्रकारसे अवस्थित परमाणुओंको, एक भी परमाणु शेष न रहे इस रूपसे, अपकर्षित करके तदनन्तर समयमें उदयस्थितिमें निक्षेपके योग्यरूपसे इस समय उपलभ्यमान होनेका नाम उस समयप्रबद्धका शेष कहा जाता है, क्योंकि उसके बाद विवक्षित समयप्रबद्धका एक भी परमाणुके बिना निर्लेपन देखा जाता है यह इस सूत्रका समुच्चय रूप अर्थ है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा समयप्रबद्धशेषके स्वरूपका निर्देश करके अब भवबद्धशेषका भी इसी प्रकार स्वरूप कथन करना चाहिए इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इसी प्रकार भवबद्धशेषके स्वरूपका कथन करना चाहिए।**

§ ४४५. जिस प्रकार समयप्रबद्धशेषका स्वरूप कहा उसी प्रकार भवबद्धशेषका स्वरूप भी जानना चाहिए, क्योंकि तदनन्तर समयमें अपकर्षणके वशसे उदयस्थितिमें निर्लेपित होनेवाले-के प्रति उससे इसमें विशेषता उपलब्ध नहीं होती यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इतनी विशेषता है कि एक समयप्रबद्धके परमाणुओंको ग्रहण करके समयप्रबद्धशेष होता है। परन्तु भवबद्धशेष एक भवसम्बन्धी जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण समयप्रबद्धोंके यथासम्भव उपलभ्यमान कर्मपरमाणुओं-को ग्रहण करके प्राप्त होता है ऐसा यहाँ कहना चाहिए।

*** अब इस संज्ञा प्ररूपणाके द्वारा प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।**

§ ४४६. अब अनन्तर पूर्व कही गयी इस संज्ञा प्ररूपणाके द्वारा जिनके स्वरूपका निर्णय कर लिया है ऐसे एक स्थितिविशेषमें विद्यमान समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेषके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए तथा उनके अनुभाग विशेषकी गवेषणा करनेके लिए इस समय प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा की जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* तं जहा ।

§ ४४७. सुगमं ।

*** एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे कदिण्हं समयपबद्धाणं सेसाणि होज्जासु ।**

§ ४४८. एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे णिरुद्धे किमेक्कस्स समयपबद्धस्स सेसयं होज्ज, आहो दोण्हं तिण्हमेवं गंतूण संखेज्जाणमसंखेज्जाणं वा त्ति पुच्छा एदेण कदा होइ । संपहि एवंविहाए पुच्छाए णिण्णयविहाणट्ठमुवरिमो विहासागंथो—

*** एक्कस्स वा समयपबद्धस्स दोण्हं वा तिण्हं वा एवं गंतूण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं ।**

§ ४४९. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे । तं जहा—एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे णिरुद्धे एगस्स समयपबद्धस्स एगपरमाणू सेसयं होदूण दीसइ । एवं दो-तिण्णिआदिकमेण जावुक्कस्सेण अणंता परमाणू एगसमयपबद्धपडिबद्धा सेसयं होदूण तम्हि ट्ठिदिविसेसे दीसंति । एवं दिट्ठसव्वपरमाणू घेत्तूण एक्कस्स वा समयपबद्धस्स सेसयं होज्जंति त्ति भणिदं । एवं दोण्हं वा समयपबद्धाणं सेसयाणि तम्हि ट्ठिदिविसेसे होदूण लब्भंति, तिण्हं वा समयपबद्धाणं सेसाणि तम्हि ट्ठिदिविसेसे लब्भंति । एवं गंतूण जावुक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं वा सयपबद्धाणं सेसयाणि तत्थेव होदूण दीसंति । तत्तो अब्भहियाणं समयपबद्धाणं सेसयाणि एक्कम्हि ट्ठिदि-

---

*** वह जैसे ।**

§ ४४७. यह सूत्र सुगम है ।

*** एक स्थितिविशेषमें कितने समयप्रबद्धोंके कर्म परमाणु शेष होते हैं ।**

§ ४४८. एक स्थितिविशेषके विवक्षित होनेपर क्या एक समयप्रबद्धके कर्मपरमाणु शेष रहते हैं या दो, तीनसे लेकर संख्यात या असंख्यात समयप्रबद्धोंके कर्म परमाणु शेष रहते हैं इस प्रकार इस सूत्र द्वारा यह पृच्छा की गयी है । अब इस प्रकार की पृच्छाका निर्णय करनेके लिए आगेका विभाषा ग्रन्थ आया है—

*** एक समयप्रबद्धके या दो या तीन से लेकर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणु शेष रहते हैं ।**

§ ४४९. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—एक स्थितिविशेषके विवक्षित होनेपर एक समयप्रबद्धका एक परमाणु शेष होकर दिखाई देता है । इसी प्रकार दो या तीनसे लेकर उत्कृष्टसे अनन्त परमाणु तक एक समयप्रबद्धसम्बन्धी परमाणु शेष होकर उस स्थितिविशेषमें दिखाई देते हैं । इस प्रकार दिखाई देनेवाले सब परमाणुओंको ग्रहण कर वे सब एक समयप्रबद्धके शेष होते हैं यह यहाँ कहा गया है । इसी प्रकार दो समयप्रबद्धोंके शेष कर्मपरमाणु उस स्थितिविशेषमें होकर प्राप्त होते हैं । अथवा तीन समयप्रबद्धोंके शेष कर्मपरमाणु उस स्थितिविशेषमें प्राप्त होते हैं । इस प्रकार जाकर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके शेष कर्मपरमाणु उस स्थितिविशेषमें होकर दिखाई देते हैं । किन्तु इससे अधिक समयप्रबद्धोंके शेष कर्म परमाणु एक स्थितिविशेषमें सम्भव नहीं हैं, क्योंकि नाना स्थिति और एक स्थितिको विषय करनेवाले उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपित होनेवाले

विसेसे ण संभवंति, एगसमयम्हि णिल्लेविज्जमाणाणं समयपबद्धाणं णाणेगट्ठिदिविसयाणमुक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं चेव संभवोवएसादो। तदो एगम्हि ट्ठिदिविसेसे णिरुद्धे एगसमयपबद्धसेसयमादिं कादूण जावुक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं सेसयाणि संभवंति त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। एवमेक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे समयपबद्धसेसाणं पमाणविणिण्णयं कादूण संपहि भवबद्धसेसाणं एगट्ठिदिविसेसमहिकिच्च पमाणाणुगमं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** भवबद्धसेसयाणि वि एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे एक्कस्स वा भवबद्धस्स दोण्हं वा तिण्हं वा एवं गंतूण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं भवबद्धाणं।**

§ ४५०. एदस्स वि सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे जहा समयपबद्धसेसयमहिकिच्च परूविदं तहा चेव वत्तव्वं। णवरि समयपबद्धसेसयं णाम एगसमयपबद्धमुवेक्खदे। भवबद्धसेसयं पुण एगभवविसयणाणासमयपबद्धाणं जहासंभवमुवलब्भमाणाणं सेसयाणि घेत्तूण भवदि त्ति एसो विसेसो जाणियव्वो। तदो एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि भवबद्धसेसयाणि होदूण एगट्ठिदिविसयसमयपबद्धसेसेहिंतो असंखेज्जगुणहीणाणि त्ति घेत्तव्वं।

समयप्रबद्ध एक समयमें सम्भव है ऐसा आगमका उपदेश है। इसलिए एक स्थितिविशेषके विवक्षित होनेपर उसमें एक समयप्रबद्धशेषसे लेकर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके शेष परमाणु सम्भव हैं यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इस प्रकार एक स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धशेषोंके प्रमाणका निर्णय करके अब भवबद्धशेषोंका एक स्थितिविशेषको अधिकृत करके प्रमाणका अनुगम करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** एक स्थितिविशेषमें भवबद्धशेष भी एक भवसम्बन्धी, दो भवसम्बन्धी, तीन भवसम्बन्धी या उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवसम्बन्धी होते हैं।**

§ ४५०. इस सूत्रका भी अर्थ कहनेपर जिस प्रकार समयप्रबद्धशेषको अधिकृतकर प्ररूपणा की है उसी प्रकार इसकी भी प्ररूपणा करनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि समयप्रबद्धशेष एक समयप्रबद्धकी अपेक्षासे निर्दिष्ट किया गया है। किन्तु भवबद्धशेष एक भवविषयक यथासम्भव उपलभ्यमान नाना समयप्रबद्धोंके शेषको ग्रहण कर निर्दिष्ट किया गया है इस प्रकार इन दोनोंमें इतना अन्तर जानना चाहिए। अतः एक स्थितिविशेषमें उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवबद्धशेष होकर वे एक स्थितिसम्बन्धी समयप्रबद्धशेषोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणे हीन होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ प्रकृतमें उपयोगी समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेषके अर्थको स्पष्ट करके एक स्थितिविशेषमें समयप्रबद्ध शेषका कमसे कम एक परमाणु पाया जाता है और अधिकसे अधिक अनन्त परमाणु पाये जाते हैं। तथा भवबद्धशेषकी विवक्षामें एक स्थितिविशेषमें कमसे कम एक भवसम्बन्धी और अधिकसे अधिक पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवोंसम्बन्धी शेष पाये जाते हैं ऐसा यहाँ समझना चाहिए। यहाँ समयप्रबद्धशेषमें एक समयप्रबद्धसम्बन्धी परमाणु विवक्षित हैं और भवबद्धशेषमें कमसे कम एक भवसे लेकर अधिकसे अधिक पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवोंसम्बन्धी समयप्रबद्धशेष विविक्षित हैं।

§ ४५१. एवमेत्तिएण पबंधेण भासगाहापुव्वद्धं विहासिय संपहि गाहापच्छद्धविहासणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** णियमा अणंतेसु अणुभागेसु भवबद्धसेसगं वा समयपबद्धसेसगं वा ।**

§ ४५२. कुदो ? एक्कम्मि वि परमाणुम्मि सेसभावेणोवलब्भमाणे तत्थाणंताणमविभागपडिच्छेदाणमणुभागसण्णिदाणमुवलंभादो । तदो वग्गणाओ फद्दयाणि किट्टीओ वा अस्सियूण णेदं भणिदं, किंतु सामण्णेण रसविसेसं पेक्खियूण भणिदमिदि दट्ठव्वं, अण्णहा एगपरमाणुम्मि सेसभावेण वट्टमाणे पयदणियमस्साणुववत्तीदो । एवमेत्तिएण पबंधेण पढमभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि विदियभासगाहाए अत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

*** एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ ४५३. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ ४५४. सुगमं ।

(१४८) ठ्ठिदिउत्तरसेढीए भवसेससमयपबद्धसेसाणि ।
एगुत्तरमेगादी उत्तरसेढी असंखेज्जा ॥२०१॥

§ ४५५. एसा विदियभासगाहा मूलगाहाए पुव्वपच्छद्धेसु पडिबद्धपुच्छाओ अस्सियूण णाणेगसमयपबद्धसेसयाणि भवबद्धसेसयाणि च जहण्णुक्कस्सेण एत्तियमेत्तेसु ट्ठिदिविसेसेसु होंति

---

§ ४५१. इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा भाष्यगाथाके पूर्वार्धकी विभाषा करके अब उक्त भाष्यगाथाके उत्तरार्धकी विभाषा करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** ये भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष नियमसे अनन्त अनुभागोंमें पाये जाते हैं ।**

§ ४५२. क्योंकि शेषरूपसे उपलभ्यमान एक भी परमाणुमें वहाँ अनुभाग संज्ञावाले अनन्त अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते हैं । अत: यह वर्गणाओं, स्पर्धकों और कृष्टियोंकी अपेक्षासे नहीं कहा गया है, किन्तु सामान्यसे रसविशेषको देखते हुए कहा गया है ऐसा यहाँ जानना चाहिए, अन्यथा शेषरूपसे विद्यमान परमाणुमें प्रकृत नियम नहीं बन सकता । इस प्रकार इतने प्रबन्धद्वारा प्रथम भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा समाप्त करके अब दूसरी भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके विभाषा ग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

*** इससे आगे दूसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।**

§ ४५३. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ ४५४. यह सूत्र सुगम है ।

(१४८) जो एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे असंख्यात स्थितिविशेषोंकी वृद्धिरूप उत्तरश्रेणि है उस स्थितिउत्तरश्रेणिमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष पाये जाते हैं ॥२३१॥

§ ४५५. यह दूसरी भाष्यगाथा मूलगाथाके पूर्वार्ध और उत्तरार्धमें प्रतिबद्ध पृच्छाओंका आश्रय लेकर नाना समयप्रबद्धशेष, एक समयप्रबद्धशेष और नाना तथा एक भवबद्धशेष जघन्य और

त्ति परूवणट्ठमोइण्णा। तं जहा—'ट्ठिदि उत्तरसेढीए' एवं भणिदे एगसमयपबद्धसेसयं जहण्णेण एगट्ठिदिविसेसम्मि होदूण लब्भइ, दोसु वि ट्ठिदिविसेसेसु होदूण लब्भइ, तिसु वि ट्ठिदिविसेसेसु होदूण लब्भइ। एवं गंतूण संखेज्जेसु असंखेज्जेसु वा ठिदिविसेसेसु होदूण लब्भइ। एवमेसा समयुत्तरकमेण ट्ठिदिविसेसाणं परिवड्ढी ट्ठिदिउत्तरसेढी णाम। एवमेगभवबद्धसेसयस्स वि ट्ठिदि-उत्तरसेढी अणुगंतव्वा। एवं चेव णाणासमयपबद्धसेसयाणं णाणाभवबद्धसेसयाणं च ट्ठिदिउत्तर-सेढीए अवट्ठाणं वत्तव्वं। एवमेदीए ट्ठिदिउत्तरसेढीए णाणेगभवबद्धसमयपबद्धसेसयाणि होंति त्ति वुत्तं होइ।

§ ४५६. संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठं गाहापच्छद्धणिद्देसो—'एगुत्तरमेगादी' एगादि-एगुत्तरकमेण जा ठिदीणं परिवड्ढी सा ठिदिउत्तरसेढी णाम। सा असंखेज्जासंखेज्जट्ठिदिविसेसपडि-बद्धा दट्ठव्वा त्ति वुत्तं होदि। तदो जहण्णेण एगट्ठिदिविसेसे एगसमयपबद्धसेसयं होदूण पुणो समयुत्तरवड्ढीए गंतूण उक्कस्सदो असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु एगसमयपबद्धसेसयमवट्ठाणं लहदि। एवमेगभवबद्धसेसयस्स वि एगादिएगुत्तरवड्ढिदेसु असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु अवट्ठाणसंभवो दट्ठव्वो त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

§ ४५७. एवं चेव णाणासमयपबद्धभवबद्धसेसयाणं पि ट्ठिदिउत्तरसेढीए असंखेज्जेसु ट्ठिदिवियप्पेसु अवट्ठाणक्कमो अणुगंतव्वो। णवरि णाणाभवसमयपबद्धसेसयाणि जहण्णो वि असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु जिणदिट्ठभावेण होदूण तदो ट्ठिदिउत्तरसेढीए गंतूण उक्कस्सेण वि

उत्कृष्टरूपसे इतने स्थितिविशेषोंमें होते हैं इस बातका प्ररूपण करनेके लिए अवतीर्ण हुई है। वह जैसे—'ट्ठिदिउत्तर-सेढीए' ऐसा कहनेपर एक समयप्रबद्धशेष जघन्यसे एक स्थितिविशेषमें प्राप्त होता है, दो स्थिति-विशेषोंमें प्राप्त होता है, तीन स्थितिविशेषोंमें भी प्राप्त होता है। इस प्रकार जाकर संख्यात और असंख्यात स्थितिविशेषोंमें प्राप्त होता है। इस प्रकार यह समयोत्तरके क्रमसे स्थितिविशेषोंकी परिवृद्धिका नाम स्थिति उत्तरश्रेणि है। इस प्रकार एक भवबद्धशेषकी भी स्थितिउत्तरश्रेणि जाननी चाहिए। तथा इसी प्रकार नाना समयप्रबद्धशेषों और नाना भवबद्धशेषोंका स्थितिउत्तर-श्रेणिमें अवस्थान कहना चाहिए। इस प्रकार इस स्थिति उत्तरश्रेणिमें नाना और एक भवबद्धशेष तथा नाना और एक समयप्रबद्ध शेष होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४५६. अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए गाथाके उत्तरार्धका निर्देश हुआ है—'एगुत्तरमेगादी' अर्थात् एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे जो स्थितियोंकी वृद्धि होती है उसका नाम स्थिति उत्तरश्रेणि है। उसे असंख्यातासंख्यात स्थितिविशेषोंसे सम्बद्ध जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिए जघन्यसे एक स्थितिविशेषमें एक समयप्रबद्धशेष होकर पुनः एक-एक समयकी वृद्धिके क्रमसे जाकर उत्कृष्टसे असंख्यात स्थितिविशेषोंमें एक समयप्रबद्ध-शेषका अवस्थान प्राप्त होता है। इसी प्रकार एक भवबद्धशेषका भी एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे असंख्यात स्थितिविशेषोंमें अवस्थान सम्भव है ऐसा जानना चाहिए, इस प्रकार यह इसका भावार्थ है।

§ ४५७. तथा इसी प्रकार नाना समयप्रबद्धशेष और नाना भवबद्धशेषोंका भी स्थिति उत्तरश्रेणिके द्वारा असंख्यात स्थितिविशेषोंमें अवस्थानका क्रम जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि नाना भवबद्धशेष और नाना समयप्रबद्धशेष जघन्यसे भी असंख्यात स्थितिविशेषोंमें

असंखेज्जेसु ट्ठिदिवियप्पेसु चिट्ठंति त्ति वत्तव्वं। एदस्स विसेसणिण्णयमुवरिमगाहासुत्तमस्सियूण कस्सामो। तदो एगसमयपबद्धसेसयमेगभवबद्धसेसयं च पहाणं कादूण एगादिएगुत्तरकमेण ठिदिउत्तरसेढो एदेण गाहासुत्तेण णिद्दिट्ठव्वा।

§ ४५८. संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाह—

* विहासा।

§ ४५९. सुगमं।

* तं जहा।

§ ४६०. सुगमं।

* **समयपबद्धसेसयमेक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे दोसु वा तीसु वा एगादिएगुत्तरमुक्कस्सेण विदियट्ठिदीए सव्वासु ट्ठिदीसु पढमट्ठिदीए च समयाहियउदयावलियं मोत्तूण सेसासु सव्वासु ठिदीसु णाणासमयपबद्धसेसाणं णाणेगभववद्धसेसयाणं च।**

जिनेन्द्रदेवके देखे अनुसार होकर आगे स्थितिउत्तरश्रेणिके द्वारा जाते हुए उत्कृष्टसे भी असंख्यात स्थितिविशेषोंमें अवस्थित रहते हैं ऐसा कथन करना चाहिए। इसलिए एक भवबद्धशेष और एक समयप्रबद्धशेषको प्रधान करके एकसे लेकर एक एक उत्तरके क्रमसे इस गाथासूत्र द्वारा स्थितिउत्तरश्रेणिका निर्देश किया गया है ऐसा जानना चहिए।

विशेषार्थ—उदयकालमें तदनन्तर समयका एक भवसबन्धी जो कर्मपुंज शेष रहता है वह एक भवबद्धशेष कहलाता है और इसी प्रकार उदयकालमें तदनन्तर समयका एक समयप्रबद्धसम्बन्धी जो कर्मपुंज शेष रहता है वह एक समयप्रबद्धशेष कहलाता है। ये दोनों जघन्यसे एक स्थितिसम्बन्धी शेष हो सकते हैं और अधिकसे अधिक असंख्यात स्थितिसम्बन्धी भी शेष हो सकते हैं। किन्तु एकसे अधिक भवोंमें बद्ध जो कर्मपुंज शेष रहता है और इसी प्रकार एकसे अधिक समयोंमें बद्ध जो कर्मपुंज उदयकालके तदनन्तर स्थितिमें शेष रहता है वह नियमसे असंख्यात स्थितिविशेषसम्बन्धी होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४५८. अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ४६९. यह सूत्र सुगम है।

* वह जैसे।

§ ४६०. यह सूत्र सुगम है।

* **एक समयप्रबद्धशेष एक स्थितिविशेषमें पाया जाता है अथवा दो स्थितिविशेषोंमें पाया जाता है, अथवा तीन स्थितिविशेषोंमें पाया जाता है। इस प्रकार एकसे लेकर एक एक उत्तरक्रमसे उत्कृष्टसे द्वितीय स्थितिसम्बन्धी सब स्थितियोंमें पाया जाता है। तथा प्रथम स्थितिसम्बन्धी एक समय अधिक एक आवलिको छोड़कर शेष सब स्थितियोंमें पाया जाता है। इसी प्रकार नाना समयप्रबद्धशेषोंको तथा एक भवबद्धशेष और नाना सभवप्रबद्धशेषोंको प्ररूपणा करनी चाहिए।**

§ ४६१. देसामासयभावेण एगसमयपबद्धसेसगमहिकिच्च विहासासुत्तमेदमोइण्णं। तं कथं ? एगसमयपबद्धसेसयं सेसासेसट्ठिदिपरिहारेण एक्कम्मि चेव ट्ठिदिविसेसे होदूण कदाइमुवलब्भइ, दोसु वि ट्ठिदिविसेसेसु होदूण लब्भइ। एवं तिण्णि-चत्तारिआदिकमेण एगादिएगुत्तरपरिवड्ढीए गंतूण उक्कस्सेण विदियट्ठिदीए सव्वासु ट्ठिदीसु वासपुधत्तपमाणासु होदूण णिरुद्धसमयपबद्धसेसयमुवलब्भदे। ण केवलं विदियट्ठिदीए चेव सव्वासु ट्ठिदीसु, किंतु अण्णदरसंजलणस्स पढमट्ठिदीए च समयाहियउदयावलियमेत्तीओ ट्ठिदीओ मोत्तूण सेसासु सव्वासु चेव ट्ठिदीसु णिरुद्धसमयपबद्धसेसयमवचिट्ठदि। किं पुण कारणं समयाहियउदयावलियाए परिवज्जणमेत्थ कीरदि त्ति वुत्ते वुच्चदे—ण ताव उदयट्ठिदीए समयपबद्धसेसयस्स संभवो, से काले उदये णिल्लेविज्जमाणसरूवस्स तस्स वट्टमाणउदयट्ठिदीए तक्कालमेव णिल्लेविज्जमाणसरूवाए संभवविरोहादो। णोदयावलियबाहिरेयट्ठिदीए वि तस्सावट्ठाणसंभवो अत्थि, तत्थतणपदेसग्गस्स से काले णियमा उदयावलियं पविसमाणस्स तदवत्थाए ओकड्डियूणुदये संछोहणासंभवादो। एवमुदयावलियब्भंतरसेसट्ठिदीसु वि तदसंभवणियमो वट्टव्वो।

§ ४६२. णवरि उदयट्ठिदीदो जा अणंतरविदियट्ठिदी तिस्से समयपबद्धसेसस्स संभवो अत्थि, से काले उदयभावेण णियमदो परिणममाणाए तिस्से समयपबद्धसेसस्स संभवे विरोहाणुवलंभादो। सुत्ते पुण एरिसो विसेसणिद्देसो ण कदो, वक्खाणदो चेव तारिसविसेसपडिवत्ती होदि

---

§ ४६१. देशामर्षकरूपसे एक समयप्रबद्धशेषको अधिकृत कर यह विभाषासूत्र अवतीर्ण हुआ है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—एक समयप्रबद्धशेष शेष समस्त स्थितियोंका परिहार करके कदाचित् एक ही स्थितिविशेषमें उपलब्ध होता है, दो स्थितिविशेषोंमें भी उपलब्ध होता है। इसी प्रकार तीन, चार आदिके क्रमसे एकको आदि करके एक-एककी वृद्धि द्वारा जाकर उत्कृष्टसे द्वितीय स्थितिसम्बन्धी वर्षपृथक्त्वप्रमाण सब स्थितियोंमें विवक्षित समयप्रबद्धशेष उपलब्ध होता है। केवल द्वितीय स्थितिसम्बन्धी ही सभी स्थितियोंमें नहीं उपलब्ध होता है, किन्तु किसी एक संज्वलनकी प्रथम स्थितिसम्बन्धी एक समय अधिक एक आवलि प्रमाण स्थितियोंको छोड़कर शेष सब स्थितियोंमें विवक्षित समयप्रबद्धशेष अवस्थित रहता है।

शंका—यहाँपर एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितियोंका निषेध करनेका क्या कारण है ?

समाधान—ऐसा प्रश्न करनेपर उत्तरस्वरूप कहते हैं—उदयस्थितिमें तो समयप्रबद्धशेषकी प्राप्ति सम्भव है नहीं, क्योंकि यह अनन्तर समयमें उदय द्वारा निर्लेप्यमानस्वरूप है, अतः उसका उसी समय निर्लेप्यमानस्वरूप वर्तमान उदय स्थितिमें सम्भव होनेमें विरोध आता है। उदयावलिके बाहर प्रथम स्थितिमें भी उसका अवस्थित रहना सम्भव नहीं है, क्योंकि उस स्थितिमें रहनेवाला प्रदेशपुंज अनन्तर समयमें नियमसे उदयावलिमें प्रवेश करनेवाला है, अतः उस अवस्थामें उसका अपकर्षण होकर उदयमें निक्षिप्त होना सम्भव नहीं है। इसी प्रकार उदयावलिके भीतर शेष स्थितियोंमें भी उसके असम्भव होनेका नियम जानना चाहिए।

§ ४६२ इतनी विशेषता है कि उदयस्थितिसे अनन्तर स्थित जो द्वितीय स्थिति है उसमें समयप्रबद्धशेष सम्भव है, क्योंकि अनन्तर समयमें उदयरूपसे नियमसे परिणमन करनेवाली उसमें समयप्रबद्धशेषका होना सम्भव है इसमें कोई विरोध नहीं उपलब्ध होता। परन्तु सूत्रमें इस प्रकारके

त्ति ओकड्डियूण उदये णिल्लेविज्जमाणस्सेव पदेसग्गस्स सेसभावेण सुत्ते विवक्खियत्तादो वा। एवमेगभवबद्धसेसयं पि णिरुद्धं कादूण एसो सव्वो वि सुत्तत्थो जोजेयव्वो। णाणासमयपबद्ध-सेसयाणं भवबद्धसेसयाणं च पादेक्कं णिरुंभणं कादूण एसो अत्थो समयाविरोहेणाणुगंतव्वो। एवं विदियभासगाहाए अत्थविहासा समत्ता।

* एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

§ ४६३. सुगमं।

(१४९) एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे सेसाणि ण जत्थ होंति सामण्णा।
आवलिगासंखेज्जदिभागो तहिं तारिसो समयो ॥२०२॥

§ ४६४. पढम-विदियभासगाहाहिं मूलगाहाए पुव्वपच्छद्धेसु विहासिदेसु पुणो किमट्ठमेसा तदिय-भासगाहा समोइण्णा त्ति पुच्छिदे वुच्चदे—ट्ठिदिउत्तरसेढीए भवसेसयसमयपबद्धसेसाणि चिट्ठमा-णाणि असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु चिट्ठंति त्ति विदियभासगाहाए परूविदं। तेसु च ट्ठिदिविसेसेसु णाणेय-समयपबद्धसेसाणं णाणाभवबद्धसेसाणं च किं णिरंतरसरूवेणेवावट्ठाणणियमो आहो सांतर-सरूवेणेत्ति ण एसो विसेसो तत्थ जाणाविदो। तदो तत्थ तेसिमवट्ठाणक्कमजाणावणट्ठं भवसमय-पबद्धसेसाणमाधाराणाधारभूदसामण्णासामण्णट्ठिदीणं सरूवविसेसजाणावणट्ठं च एसा तदिय-भासगाहा समोइण्णा।

विशेषका निर्देश नहीं किया गया है, व्याख्यानसे ही उस प्रकारके विशेषका ज्ञान होता है। अथवा अपकर्षण करके उदयमें निर्लेप्यमान प्रदेशपुंज ही शेषरूपसे सूत्रमें विवक्षित है। इसी प्रकार एक भवबद्धशेषको भी विवक्षित करके यह सब सूत्रका अर्थ योजित करना चाहिए। तथा नाना समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेषोंमेंसे प्रत्येकको विवक्षित करके आगमके अविरोधपूर्वक यह सब अर्थ कहना चाहिए। इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त हुई।

* यह तीसरी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना है।

§ ४६३. यह सूत्र सुगम है।

(१४९) जिस किसी एक स्थितिविशेषमें जो भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष सामान्य नहीं होते हैं वे असामान्य कहलाते हैं। वे असामान्य स्थितिविशेष परस्पर संलग्न होकर अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। और वे वर्षपृथक्त्व कालमें आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक निरन्तर पाये जाते हैं ॥२०२॥

§ ४६४. शंका—प्रथम और दूसरी भाष्यगाथाओं द्वारा मूल गाथाके पूर्वार्धके भाषित कर देनेपर पुनः यह तीसरी भाष्यगाथा किस लिए अवतीर्ण हुई है?

समाधान—ऐसी पृच्छा होनेपर आचार्य कहते हैं कि स्थिति उत्तरश्रेणिमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष अवस्थित रहते हुए असंख्यात स्थितिविशेषोंमें पाये जाते हैं यह दूसरी भाष्यगाथा द्वारा कहा गया है। किन्तु उन स्थितिविशेषोंमें नाना और एक समयप्रबद्धशेषोंका तथा नाना और एक भवबद्धशेषोंका निरन्तररूपसे रहनेका नियम है या सान्तररूपसे रहनेका नियम है इस प्रकार इस विशेषका उस दूसरी गाथामें ज्ञान नहीं कराया गया है, इसलिए उस क्षपकके उनके अवस्थानके क्रमका ज्ञान करानेके लिये भवबद्धशेषोंका आधारभूत और अनाधारभूत सामान्य और असामान्य स्थितियोंके स्वरूप विशेषका ज्ञान करानेके लिए यह तीसरी भाष्यगाथा अवतीर्ण हुई है।

§ ४६५. तं जहा—'एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे०' एवं भणिदे जम्हि अण्णदरट्ठिदिविसेसे समयपबद्धसेसयाणि ण संभवंति सा ट्ठिदी असामण्णसण्णिदा णादव्वा त्ति गाहापुव्वद्धे सुत्तत्थसंबंधो। तेण भवबद्धसेसयाणि समयपबद्धसेसयाणि च जिस्से ट्ठिदीए णिम्मूलदो ण संति सा ट्ठिदी असामण्णसण्णाए ववहारेयव्वा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। एदेणेव जम्हि ट्ठिदिविसेसे भवसमयपबद्धसेसयाणि अत्थि सा ट्ठिदी सामण्णसण्णाए ववहारेयव्वा त्ति एसो वि अत्थो सूचिदो दट्ठव्वो, दोण्हमेदासिमण्णोण्णसव्वपेक्खत्तादो भवसमयपबद्धसेसयाणमाहारभावेण समण्णिदाओ ट्ठिदीओ सामण्णट्ठिदीओ। तेसिमणाधारभूदाओ ट्ठिदीओ असामण्णाओ त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

§ ४६६. एवमेदेण गाहापुव्वद्धेण सामण्णासामण्णट्ठिदीणं सरूवपरूवणं कादूण संपहि असामण्णट्ठिदीओ णिरंतरमुक्कस्सेण एत्तियमेत्तीओ होंति त्ति जाणावणट्ठं गाहापच्छद्धमाह—'आवलियासंखेज्जदिभागो' आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ता 'तम्हि' खवगम्हि तम्हि वा वासपुधत्तमेत्तं व ट्ठिदिविसेसे 'तारिसा समया' भवसमयपबद्धसेसविरहिदा असामण्णट्ठिदिविसेसा णिरंतरसरूवेण लब्भंति, तत्तो अहिययराणमसामण्णट्ठिदीणं णिरंतरसरूवेण खवगसेढिम्मि संभवाणुवलंभादो त्ति भणिदं होदि।

§ ४६७. एसो उक्कस्सपक्खेण असामण्णट्ठिदीणं पमाणणिद्देसो सुत्ते कओ। तदो जहण्णेण एगा चेव असामण्णट्ठिदी एदस्स खवगस्स लब्भइ। एवं दो-तिण्णिआदिकमेण गंतूण उक्कस्सेण

---

§ ४६५. वह जैसे—'एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे' ऐसा कहनेपर जिस अन्यतर स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धशेष सम्भव नहीं हैं उस स्थितिको असामान्य संज्ञक जाननी चाहिए यह इस भाष्यगाथाके पूर्वार्धमें सूत्रार्थका सम्बन्ध है। इसलिए जिस स्थितिमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष पूरी तरहसे नहीं होते हैं वह स्थिति असामान्य संज्ञाके द्वारा व्यवहृत करनी चाहिए यह वहाँ सूत्रार्थका संग्रह है। तथा इसीसे जिस स्थितिमें भवबद्धशेष और समयबद्धशेष पाये जाते हैं उस स्थितिका सामान्य संज्ञारूपसे व्यवहार करना चाहिए। इस प्रकार इस भाष्यगाथाके पूर्वार्ध द्वारा यह अर्थ भी सूचित कर दिया गया जानना चाहिए। यहाँ इन दोनोंके परस्पर सापेक्ष होनेके कारण भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेषके आधाररूपसे समन्वित जितनी भी स्थितियाँ होती हैं वे सामान्य स्थितियाँ कहलती हैं और जो स्थितियाँ उन दोनोंकी आधार नहीं होती हैं वे असामान्य स्थितियाँ कहलाती हैं इस प्रकार यह इसका भावार्थ है।

§ ४६६. इस प्रकार इस गाथाका पूर्वार्ध द्वारा सामान्य और असामान्य स्थितियोंके स्वरूपका कथन करके अब असामान्य स्थितियाँ निरन्तर उत्कृष्टरूपसे इतनी होती हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए उक्त भाष्यगाथाके उत्तरार्धका कथन करते हैं—'आवलियासंखेज्जदिभागो' आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण 'तारिसा समया' भवबद्ध और समयप्रबद्धसे रहित आसामान्य स्थितिविशेष उस क्षपकके वर्षपृथक्त्व काल तक पुनः-पुनः निरन्तररूपसे पाये जाते हैं, क्योंकि उनसे अधिक असामान्य स्थितियाँ क्षपकश्रेणिमें निरन्तररूपसे उपलब्ध होना सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—यहाँ असामान्य स्थितियाँ एक बारमें लगातार अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण होकर भी अन्तरके साथके वर्षपृथक्त्व कालके भीतर आवलिके असंख्यातवें भाग वार प्राप्त हो जाती हैं यह इस कथनका तात्पर्य है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ४६७. यह उत्कृष्टपक्षके अवलम्बन द्वारा असामान्य स्थितियोंके प्रमाणका निर्देश सूत्रमें किया है। इसलिए जघन्यसे एक ही असामान्य स्थिति इस क्षपकके उपलब्ध होती है। इसी प्रकार

आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ असामण्णट्ठिदीओ लब्भंति त्ति घेत्तव्वं। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

* विहासा।

§ ४६८. सुगमं।

* सामण्णसण्णा ताव।

§ ४६९. सामण्णसण्णाए अविण्णादाए असामण्णसण्णा ण जाणिज्जदि त्ति कादूण पुव्वमेव ताव सामण्णसण्णाए परूवणं कस्सामो त्ति भणिदं होइ।

* एक्कम्हि ठिदिविसेसे जम्हि समयपबद्धसेसयमत्थि सा ट्ठिदी सामण्णा त्ति णादव्वा।

§ ४७०. जम्हि एक्कम्हि णिरुद्धट्ठिदिविसेसे समयपबद्धसेसयमेगपरमाणुमादिं कादूण जावुक्कस्सेणाणंता परमाणु त्ति दीसइ सा ठिदी सामण्णट्ठिदिसण्णं लहदि त्ति वुत्तं होइ। कुदो पुण एदस्स ट्ठिदिविसेसस्स सामण्णसण्णा जादा त्ति चे? ण, समयपबद्धासेसपरमाणूणमियरपरमाणूणं च साहारणभावेणावट्ठिदस्स तिस्से तव्ववएसाविरोहादो। भवबद्धसेसयं पि अस्सियूण सामण्णट्ठिदिसण्णा एवं चेव जोजेयव्वा, सुत्तस्सेदस्स देसामासयभावेणावट्ठिदत्तादो।

* जम्मि णत्थि सा ट्ठिदी असामण्णा त्ति णादव्वा।

दो, तीन आदिके क्रमसे जाकर उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण असामान्य स्थितियाँ इस क्षपकके उपलब्ध होती हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगे विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

* अब उक्त सूत्र गाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ४६८. यह सूत्र सुगम है।

* सर्वप्रथम सामान्य संज्ञाका स्वरूप कहते हैं।

§ ४६९. क्योंकि सामान्य संज्ञाके अविज्ञात रहनेपर असामान्य संज्ञाका ज्ञान नहीं होता ऐसा समझकर पहले ही सामान्य संज्ञाकी प्ररूपणा करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* जिस एक स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धशेष पाया जाता है वह स्थिति सामान्य संज्ञावाली है ऐसा जानना चाहिए।

§ ४७०. जिस विवक्षित एक स्थितिविशेषमें एक परमाणुसे लेकर उत्कृष्टसे अनन्त परमाणु तक समयप्रबद्धशेष दिखाई देता है वह स्थिति सामान्य स्थिति संज्ञाको प्राप्त होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—इस स्थितिविशेषकी सामान्य संज्ञा किस कारणसे हो गयी है?

समाधान—नहीं, क्योंकि समयप्रबद्धशेषके परमाणु तथा दूसरे परमाणु साधारणरूपसे उस स्थितिमें अवस्थित रहते हैं, इसलिए उसकी सामान्य संज्ञा है इसमें कोई विरोध नहीं पाया जाता। भवबद्धशेषका भी आलम्बन लेकर सामान्य स्थिति संज्ञाकी इसी प्रकार योजना करनी चाहिए, क्योंकि यह सूत्र देशामर्षकरूपसे अवस्थित है।

* जिसमें सामान्य स्थिति नहीं पायी जाती वह स्थिति असामान्य संज्ञावाली होती है ऐसा जानना चाहिए।

§ ४७१. सामण्णादो अण्णा असामण्णा त्ति गहणादो जम्हि ट्ठिदिविसेसे समयपबद्धसेसयं भवबद्धसेसयं वा णत्थि सा ट्ठिदी असामण्णा त्ति णिच्छेयव्वा, भव-समयपबद्धसेसयाणमणाहार-भावेणावट्ठिदाए तिस्से तव्ववएससिद्धीए णाइयत्तादो। एवं गाहापुव्वद्धमस्सियूण सामण्णा-सामण्णसण्णाणं परूवणं कादूण संपहि गाहापच्छद्धमस्सियूण असामण्णट्ठिदीओ जहण्णुक्कस्सेण णिरंतरमेत्तियमेत्तीओ होंति त्ति इममत्थविसेसं विहासेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एवमसामण्णाओ ट्ठिदीओ एक्का वा दो वा उक्कस्सेण अणुबद्धाओ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ।**

§ ४७२. एवं भणिदे अणंतरणिद्दिट्ठसरूवाओ असामण्णट्ठिदीओ एक्का वा दो वा होंति। एवमेगुत्तरवड्ढीए गंतूण उक्कस्सेणावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ अण्णोण्णाणुसंबंधाओ लब्भंति, ण तत्तो अहियाओ त्ति भणिदं होइ। विदियभासगाहाए अत्थे भण्णमाणे एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे सेसयं भवदि, दोसु वि ट्ठिदिविसेसेसु सेसयं भवदि। एवं रूवुत्तरकमेण गंतूण उक्कस्सेण सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु समयाहियउदयावलियवज्जेसु सेसयं होदि त्ति भणिदं। तत्थ एगट्ठिदिविसेसे सेसयं होदि त्ति भणंतेण सेसासेसट्ठिदीओ समयपबद्धसेससुण्णाओ असामण्ण-ट्ठिदिसण्णिदाओ होंति त्ति जाणाविदं, तेण कारणेण असामण्णट्ठिदीणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागमेत्तुक्कस्ससंखावहारणमिदं ण घडदे, वासपुधत्तमेत्तीणमसामण्णट्ठिदीणमुक्कस्सपक्खेणेत्थ

---

§ ४७१. सामान्यसे अन्य असामान्य कहलाती है ऐसा ग्रहण करनेसे जिस स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेष नहीं होते हैं वह स्थिति असामान्य कहलाती है ऐसा निश्चय करना चाहिए, क्योंकि भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेषके अनाधाररूपसे अवस्थित उसकी उक्त संज्ञाकी सिद्धि न्यायप्राप्त है। इस प्रकार उक्त सूत्रगाथाके पूर्वार्धका आलम्बन लेकर सामान्य और असामान्य संज्ञाओंकी प्ररूपणा करके अब उक्त गाथाके उत्तरार्धका आलम्बन लेकर असामान्य स्थितियाँ जघन्य और उत्कृष्टरूपसे इतनी होती हैं इस अर्थविशेषका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस प्रकार असामान्य स्थितियाँ एक अथवा दोसे लेकर उत्कृष्टसे परस्पर संलग्न होकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं।**

§ ४७२. उक्त सूत्रमें इस प्रकार कहनेपर अनन्तर पूर्व निर्दिष्ट स्वरूपवाली असामान्य स्थितियाँ एक अथवा दो होती हैं। इस प्रकार आगे एक-एककी वृद्धिरूपसे जाकर उत्कृष्टसे परस्पर संलग्न आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण उपलब्ध होती हैं, उनसे अधिक नहीं होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार दूसरी भाष्यगाथाके अर्थके कहनेपर एक स्थितिविशेषमें शेष प्राप्त होता है, दो स्थितिविशेषोंमें भी शेष प्राप्त होता है। इस प्रकार आगे एक-एकके क्रमसे जाकर उत्कृष्टसे एक समय अधिक उदयावलिसे रहित सब स्थितिविशेषोंमें शेष होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—इस क्षपकके एक स्थितिविशेषमें शेष होता है ऐसा कहते हुए आचार्यने, समय-प्रबद्धसम्बन्धी शेषसे शून्य असामान्य स्थिति संज्ञावाली शेष समस्त स्थितियाँ होती हैं, इस बात-का ज्ञान कराया है, इस कारण असामान्य स्थितियाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं इस प्रकार संख्याका अवधारण करना घटित नहीं होता, क्योंकि यहाँपर उत्कृष्ट रूपसे वर्षपृथक्त्व-प्रमाण असामान्य स्थितियाँ उपलब्ध होती हैं?

समुवलंभावो त्ति ? ण एस दोसो; एगसमयप्रबद्धसेसं पेक्खियूण तत्थ तहा परूविदत्तादो। एत्थ पुण णाणासमयपबद्धपडिबद्धसेसयाणि अस्सियूण उक्कस्सेणावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव असामण्णट्ठिदीओ होंति त्ति भणिदं तम्हा ण एत्थ को वि दोसावयारो त्ति सिद्धं।

§ ४७३. संपहि एदस्सेव असामण्णट्ठिदीणं जहण्णुक्कस्सपमाणणिद्देसस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** एक्केक्केण असामण्णाओ थोवाओ। दुगेण विसेसाहियाओ। तिगेण विसेसाहियाओ। आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणाओ।**

§ ४७४. एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे अण्णदरसंजलणपयडीए वासपुधत्तावच्छिण्णट्ठिदीए रचणं कादूण पुणो एत्थ जेत्तियाओ असामण्णट्ठिदीओ सांतरणिरंतरेणावट्ठिदाओ अत्थि ताओ सव्वाओ बुद्धीए पुध कादूण ठवेयव्वाओ। पुणो एत्थ 'एक्केक्केण असामण्णाओ थोवाओ' एवं भणिदे वासपुधत्तमेत्तट्ठिदीसु एक्केक्कसरूवेण जाओ ट्ठिदीओ असामण्णट्ठिदिसलागाओ ताओ थोवाओ त्ति वुत्तं होइ। 'दुगेण विसेसाहियाओ' एवं भणिदे णिरंतरं दो द्दो होदूण जाओ ट्ठिदीओ असामण्णट्ठिदीओ तासिं सलागाओ विसेसाहियाओ त्ति भणिदं होदि। केत्तियमेत्तो विसेसो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडमेत्तो। एत्थतणगुणहाणिअद्धाणस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागपमाणत्तादो। 'तिगेण विसे' एवं भणिदे तिण्णि तिण्ण होदूण जाओ

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि एक समयप्रबद्धशेषको देखकर वहांपर उस प्रकार कथन किया है। परन्तु यहांपर नाना समयप्रबद्धोंसे प्रतिबद्ध शेषोंका आलम्बन लेकर उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही असामान्य स्थितियां होती हैं यह कहा है, इसलिए यहांपर किसी प्रकारका दोष नहीं प्राप्त होता है यह सिद्ध हुआ।

§ ४७३. अब इसी असामान्य स्थितियोंके जघन्य और उत्कृष्ट प्रमाणके निर्देशको स्पष्ट करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** एक-एकरूपसे असामान्य स्थितियाँ थोड़ी हैं। दो-दोरूपसे वे विशेष अधिक हैं। तीन-तीनरूपसे वे विशेष अधिक हैं। इस प्रकार आवलिके असंख्यातवें भागपर यह क्रम दूना हो जाता है।**

§ ४७४. इस सूत्रके अर्थके कहनेपर किसी एक संज्वलन प्रकृतिकी वर्षपृथक्त्व कालप्रमाण स्थितिकी रचना करके पुनः इनमें जितनी असामान्य स्थितियां सान्तर और निरन्तररूपसे अवस्थित हैं उन सबको बुद्धि द्वारा पृथक्-पृथक् करके स्थापित करे। पुनः इनमें 'एक-एकरूपसे असामान्य स्थितियां थोड़ी हैं' ऐसा कहनेपर वर्षपृथक्त्वप्रमाण स्थितियोंमें एक-एकरूपसे जो असामान्य स्थितियां स्थित हैं वे थोड़ी हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'दो-दोरूपसे वे विशेष अधिक हैं' ऐसा कहनेपर निरन्तर दो-दो होकर जो असामान्य स्थितियां स्थित हैं उनकी शलाकाएँ विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करनेपर जो प्रमाण आता है उतना यहाँ विशेष अधिकका प्रमाण है, क्योंकि यहांपर वह गुणहानि अध्वान (लम्बाई) आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

ट्ठिदाओ[1] असामण्णट्ठिदीओ तासिं गहिदसलागाओ विसेसाहियाओ त्ति वुत्तं होइ। एत्थ वि विसेसपमाणं पुव्वं व वत्तव्वं। एवमेगादिएगुत्तरवड्ढीए ट्ठिदाणमसामण्णट्ठिदिवियप्पाणं गहिदसलागाओ विसेसाहियाओ होदूण गच्छंति जाव आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं गंतूण तदित्थवियप्पस्स ठविदसलागाओ दुगुणमेत्तीओ जादाओ त्ति एदमेगं दुगुणवड्ढिट्ठाणंतरं णाम। एवमेदं दुगुणवड्ढिअद्धाणमवट्ठिदं कादूण दुगुण-दुगुणमेत्तविसेसपडिबद्धाओ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तदुगुणवड्ढीओ णेदव्वाओ। तदो तम्मि उद्देसे सयलवियप्पाणमसंखेज्जदिभागभूदे आवलियाए असंखेज्जदिभागे जवमज्झं होदि त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

* आवलियाए असंखेज्जदिभागे जवमज्झं।

§ ४७५. आदीदोप्पहुडि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तगुणहाणिगब्भे आवलियाए असंखेज्जदिभागे गदे तदो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताणमसामण्णट्ठिदीणं ठविदसलागाओ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ घेत्तूण जवमज्झमेत्थ जादमिदि वुत्तं होइ। एत्तो उवरि जेणेव कमेण वड्ढिदाओ तेणेव कमेण हीयमाणाओ गच्छंति जाव जवमज्झादो उवरिमसंखेज्जाओ गुणहाणीओ गंतूण पढमवियप्पसलागाहिं समाणाओ होदूण पुणो वि हीयमाणाओ तत्तो असंखेज्जाओ गुणहाणीओ गंतूण चरिमवियप्पसलागपमाणं पत्ताओ त्ति चरिमवियप्पसलागाओ वि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव होदूण सव्वत्थोवाओ दट्ठव्वाओ। एत्थासेसासेसविगंतरपरिसुद्धी

'तीन-तीन करके असामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक हैं' ऐसा कहनेपर तीन-तीन होकर जो असामान्य स्थितियाँ अवस्थित हैं उनकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर भी विशेषका प्रमाण पहलेके समान कहना चाहिए। इस प्रकार एकसे लेकर आगे एक-एककी वृद्धि द्वारा स्थित असामान्य स्थितियोंके भेदोंकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ विशेष अधिक होकर तब तक जाती हैं जब जाकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर वहाँ स्थित भेदको प्राप्त शलाकाएँ दूनी हो जाती हैं। इस प्रकार यह एक द्विगुणवृद्धि स्थानान्तर है। इस प्रकार इस द्विगुणवृद्धिअध्वानको अवस्थित करके द्विगुण-द्विगुणप्रमाण विशेषोंसे सम्बद्ध आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धियाँ ले जानी चाहिए। अतः उस स्थानपर समस्त भेदोंके असंख्यातवें भागरूप आवलिके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* आवलिके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है।

§ ४७५. आदिसे लेकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणहानिके अन्तर्गत आवलिके असंख्यातवें भागके जानेपर वहाँसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण असामान्य स्थितियोंकी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थापित शलाकाओंको ग्रहण कर यहाँ यवमध्य हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इससे आगे जिस क्रमसे वृद्धि हुई है उसी क्रमसे इससे आगे जिस क्रमसे वे स्थितियाँ बढ़ी हैं उसी क्रमसे वे हीयमान होकर तब तक जाती हैं जब जाकर यवमध्यसे ऊपर असंख्यात गुणहानियाँ जाकर प्रथम भेदकी शलाकाओंके समान होकर फिर भी हीयमान होती हुई वहाँ असंख्यात गुणहानियाँ जाकर अन्तिम भेदसम्बन्धी शलाकाओंके प्रमाणको प्राप्त होती हैं। इस प्रकार अन्तिम भेदसम्बन्धी शलाकाएँ भी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होकर सबसे

१. आ. प्रतौ ट्ठिदीओ इति पाठः।

सुत्ताविरोहेण चिंतिय वत्तव्वा।

§ ४७६. अथवा 'एक्केक्केण असामण्णाओ थोवाओ' एवं भणिदे एक्केक्केण सामण्णेण अंतरिदाणमसामण्णट्ठिदीणं वियप्पसलागाओ थोवाओ त्ति भणिदं होइ। दोसु वि पासेसु एगेग-सामण्णट्ठिदी होदूण पुणो मज्झे एक्का वा, दो वा, बहुआ वा सामण्णट्ठिदीओ होदूण जाओ लब्भंति तासि सलागाओ संपिंडिय गहिदाओ थोवाओ त्ति भावत्थो।

§ ४७७ 'दुगेण विसेसाहिया' एवं भणिदे दोहिं दोहिं सामण्णाहिं अंतरिदाओ असामण्ण-ट्ठिदीओ केत्तियमेत्तीओ वि होदूण लब्भमाणाओ अत्थि, तासि सलागाओ सव्वत्थ संपिंडियूण गहिदाओ विसेसाहियाओ त्ति घेत्तव्वाओ। एत्थ विसेसपमाणमावलियाए असंखेज्जदिभागपडि-भागमिदि घेत्तव्वं। 'तिगेण विसेसाहिया' एवं भणिदे तीहिं तीहिं सामण्णाहिं अंतरिदाओ असामण्णट्ठीदीओ संपिंडिय गहिदवियप्पसलागाओ विसेसाहियाओ त्ति भणिदं होदि। एत्थ वि विसेसपमाणं पुव्वं व वत्तव्वं। एदमेदीए परूवणाए आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं गंतूण दुगुणवड्ढी होइ। एवंविहाओ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ दुगुणवड्ढीओ गंतूण तदित्थ-वियप्पसलागासु जवमज्झं होदि। तदो विसेसहीणकमेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं गंतूण दुगुणहाणी होदि। एवं दुगुणहाणीओ होदूण गच्छंति जाव चरिमवियप्पो त्ति।

§ ४७८. संपहि एदेणेव देसामासयसुत्तेण सामण्णट्ठिदीणं पि जवमज्झपरूवणा सूचिदा।

थोड़ी जाननी चाहिए। यहाँपर पूरी अशेष उपदेशान्तरकी शुद्धि सूत्रके अविरोधपूर्वक विचारकर कहनी चाहिए।

§ ४७६. अथवा 'एक-एक रूपसे असामान्य स्थितियाँ थोड़ी हैं' ऐसा कहनेपर एक-एक सामान्य स्थितिसे अन्तरित असामान्य स्थितियोंके भेदोंकी शलाकाएँ थोड़ी हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। दोनों ही पार्श्व भागोंमें एक-एक सामान्य स्थिति होकर पुनः मध्यमें एक अथवा दो अथवा बहुत सामान्य स्थितियाँ होकर जो प्राप्त होती हैं उनकी शलाकाएँ मिलाकर ग्रहण करने-पर वे थोड़ी होती हैं यह इसका भावार्थ है।

§ ४७७. 'दुगेण विसेसाहिया' ऐसा कहनेपर दो-दो सामान्य स्थितियोंसे अन्तरित असा-मान्य स्थितियाँ कितनी भी होकर प्राप्त होती हैं, उनकी शलाकाएँ पूरी मिलाकर ग्रहण करनेपर विशेष अधिक होती हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए। यहाँपर विशेषका प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागके प्रतिभागरूप ऐसा ग्रहण करना चाहिए। 'तिगेण विसेसाहिया' ऐसा कहनेपर तीन-तीन सामान्य स्थितियोंसे अन्तरित असामान्य स्थितियोंको मिलाकर ग्रहण की गयी भेदोंकी शलाकाएँ विशेष अधिक होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर भी विशेषका प्रमाण पहलेके समान कहना चाहिए। इस प्रकार इस प्ररूपणाके अनुसार आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर द्विगुणवृद्धि होती है। इस प्रकारकी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धियाँ जाकर वहाँ स्थित भेदोंकी शलाकाओंपर यवमध्य होता है। तत्पश्चात् विशेष हीनक्रमसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर द्विगुणहानि प्राप्त होती है। इस प्रकार अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक द्विगुणहानियाँ होकर जाती हैं।

§ ४७८. अब इसी देशामर्षक सूत्रके द्वारा सामान्य स्थितियोंकी भी यवमध्य प्ररूपणा

तस्स परूवणमिदाणि कस्सामो। तं जहा—'एक्केक्केण सामण्णाओ थोवाओ' एवं भणिदे अट्ठवस्स-मेत्तखवगपाओग्गट्ठिदीणं मज्झे दोसु वि पासेसु असामण्णट्ठिदीहिं अंतरिदाओ मज्झे एक्केक्काओ होदूणच्छिदसामण्णट्ठिदीओ णिवदिय गहिदाओ। आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण थोवाओ त्ति गहेयव्वाओ। 'दुगेण विसेसाहियाओ' एवं भणिदे दो दो सामण्णट्ठिदीओ होदूण पुणो केत्तियाहि मि असामण्णट्ठिदीहिं दोसु वि पासेसु णिरुद्धाओ वासपुधत्तमेत्तट्ठिदीसु सव्वत्थ णिवदिय गहिदाओ विसेसाहियाओ भण्णंति। केत्तियमेत्तो विसेसो ? हेट्ठिमवियप्पसलागाणमसंखे-ज्जदिभागमेत्तो। तस्स पडिभागो आवलियाए असंखेज्जदिभागो। एवं 'तिगेण विसेसाहियाओ' इच्चादिकमेण गंतूण आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणवड्ढिदाओ। एवं दुगुणवड्ढिदाओ दुगुण-वड्ढिदाओ जाव जवमज्झं आवलियाए असंखेज्जदिभागे च जवमज्झमेदं दट्ठव्वं। तत्तो परमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणमुवरि विसेसहाणीए गंतूण दुगुणहीणाओ। एवं दुगुणहीणा दुगुणहीणा जाव चरिमवियप्पो त्ति।

§ ४७९. अथवा 'एक्केक्केण असामण्णेण अंतरिदाओ सामण्णाओ थोवाओ' एवं भणिदे एक्केक्कअसामण्णट्ठिदीहिं दोसु वि पासेसु अंतरिदाओ सामण्णट्ठिदीओ मज्झे केत्तियाओ वि होदूण लब्भंति। तासिं गहिदसलागाओ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण थोवाओ भवंति। 'दुगेण अंतरिदाओ विसेसाहियाओ' एत्थ वि पुव्वं व वत्तव्वं। एवं जाव आवलियाए

सूचित की गयी है। अतः उसकी प्ररूपणा इस समय करेंगे। वह जैसे—'एक्केक्केण सामण्णाओ थोवाओ' ऐसा कहनेपर आठ वर्षप्रमाण क्षपकप्रायोग्य स्थितियोंके मध्यमें दोनों ही पार्श्वोंमें असामान्य स्थितियोंके द्वारा अन्तरित बीचमें एक-एक होकर स्थित सामान्य स्थितियाँ प्राप्त हुई ग्रहण की गयी हैं। वे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर सबसे थोड़ी होती हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए। 'दुगेण विसेसाहियाओ' ऐसा कहनेपर दो-दो सामान्य स्थितियाँ होकर पुनः कितनी ही असामान्य स्थितियों द्वारा दोनों ही पार्श्वोंमें निरुद्ध होकर वर्षपृथक्त्वमात्र स्थितियोंमें सर्वत्र प्राप्त हुई ग्रहण की गयी विशेष अधिक कही जाती हैं।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—अधस्तन भेदसम्बन्धी शलाकाओंके असंख्यातवें भागप्रमाण है। और उसका प्रतिभाग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

इसी प्रकार तीन-तीन रूपसे सामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक हैं। इत्यादि क्रमसे जाकर आवलिके असंख्यातवें भागमें द्विगुणवृद्धियाँ होती हैं। इस प्रकार यवमध्यके प्राप्त होने तक द्विगुण-वृद्धियाँ द्विगुणवृद्धियाँ होती हैं। वह यवमध्य आवलिके असंख्यातवें भागमें जानना चाहिए। उससे आगे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण तक आगे विशेष हीनरूपसे द्विगुणहानियाँ होती हैं। इस प्रकार अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक द्विगुणहानियाँ द्विगुणहानियाँ होती हैं।

§ ४७९. अथवा 'एक्केक्केण असामण्णेण अन्तरिदाओ सामण्णाओ थोवाओ' ऐसा कहनेपर एक-एक असामान्य स्थितियोंसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें अन्तरित सामान्य स्थितियाँ मध्यमें कितनी ही होकर प्राप्त होती हैं। उनकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण होकर सबसे थोड़ी होती हैं। 'दुगेण अंतरिदाओ विसेसाहियाओ' अर्थात् दो-दो असामान्य स्थितियोंसे दोनों ही पार्श्वभागोंमें अन्तरित होकर सामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक होती हैं। इस प्रकार यहाँपर भी पहलेके समान कथन करना चाहिए। इस प्रकार आवलिके असंख्यातवें

असंखेज्जदिभागेणंतरिदाओ दुगुणाओ त्ति। तदो आवलियाए असंखेज्जदिभागे जवमज्झं।

§ ४८०. जवमज्झस्सुवरि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं गंतूण दुगुणहाणी होदि। एवं णेदव्वं जाव चरिमवियप्पो त्ति। जवमज्झस्सुवरिमअद्धाणपमाणमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तमिह गहेयव्वं। किं कारणं? असामण्णट्ठिदीओ सव्वुक्कस्साओ वि णिरंतरमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ती चेव होंति त्ति भणिदत्तादो। एवमेदं परूविय संपहि जम्हि समयपबद्धसेसयमत्थि सा ट्ठिदी सामण्णा त्ति एदेणेव संबंधेण सामण्णट्ठिदिविसयाणं समयपबद्धसेसाणमेगादिएगुत्तरट्ठिदिविसेसेसु पडिबद्धाणमवट्ठाणक्कमजाणावणट्ठं विहासागंथमुत्तरमाढवेइ —

* समयपबद्धस्स एक्केक्कस्स सेसगमेक्किस्से ट्ठिदीए ते समयपबद्धा थोवा।

§ ४८१. एदस्सत्थो—जस्स वा तस्स वा एक्कस्स समयपबद्धस्स सेसगं सेसासेसगट्ठिदिपरिहारेणेक्किस्से चेव अण्णदरट्ठिदीए पडिबद्धमत्थि तस्सेगा सलागा घेत्तव्वा। पुणो अण्णस्स वि एक्कस्स समयपबद्धस्स सेसगमण्णदरम्मि एगट्ठिदिविसेसे पडिबद्धमत्थि, तस्स विदिया सलागा घेत्तव्वा। एवमेगेगट्ठिदिपडिबद्धसेससंबंधिणो जेत्तिया समयपबद्धा लब्भंति तेसिं सव्वेसिं पादेक्कमेक्केक्का सलागा घेत्तव्वा। एवं गहिदसलागाओ सव्वत्थोवाओ होंति, उवरिमवियप्पपडिबद्धसमयपबद्धसलागाणमेत्तो बहुत्तदंसणादो त्ति।

* जे दोसु ट्ठिदीसु ते समयपबद्धा विसेसाहिया।

भागप्रमाण अन्तरित द्विगुणवृद्धियाँ होती हैं। इसलिए वहाँ आवलिके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है।

§ ४८०. तत्पश्चात् यवमध्यके ऊपर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर द्विगुणहानि होती है। इस प्रकार अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। यहाँ यवमध्यके आगेके स्थानका प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि असामान्य स्थितियाँ सबसे उत्कृष्ट भी निरन्तर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं ऐसा कहा गया है। यहाँ इस प्रकारका कथन करके अब जिस स्थितिमें समयप्रबद्धशेष है वह सामान्य स्थिति है। इस प्रकार एकसे लेकर आगे एक-एक अधिकके क्रमसे स्थितिविशेषोंमें प्रतिबद्ध सामान्य स्थितिविषयक समयप्रबद्धशेषोंके अवस्थानके क्रमका ज्ञान करानेके लिए आगेके विभाषा ग्रन्थको प्रारम्भ करते हैं—

* एक-एक समयप्रबद्धके शेष एक-एक स्थितिमें होकर वे समयप्रबद्ध सबसे थोड़े हैं।

§ ४८१. इसका अर्थ—जिस किसी एक समयप्रबद्धका शेष शेष समस्त स्थितियोंको छोड़कर एक ही अन्यतर स्थितिमें प्रतिबद्ध है। उसकी एक शलाका ग्रहण करनी चाहिए। पुनः अन्य भी एक समयप्रबद्धका शेष अन्यतर एक स्थितिविशेषमें प्रतिबद्ध है। उसकी दूसरी शलाका ग्रहण करनी चाहिए। इस प्रकार एक-एक स्थितिविशेषमें प्रतिबद्ध शेषसम्बन्धी जितने समयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं उन सबमेंसे प्रत्येककी एक-एक शलाका ग्रहण करनी चाहिए। इस प्रकार ग्रहण की गयी शलाकाएँ सबसे थोड़ी होती हैं, क्योंकि उपरिम विकल्पोंसे प्रतिबद्ध समयप्रबद्धोंकी शलाकाएँ इनसे बहुत देखी जाती हैं।

* जो समयप्रबद्ध प्रत्येक दो-दो स्थितियोंमें प्रतिबद्ध हैं वे समयप्रबद्ध विशेष अधिक हैं।

§ ४८२. दोसु ट्ठिदिविसेसेसु सेसभावेण ट्ठिदा जे समयपबद्धा तेसिं गहिदसलागाओ पुव्विल्ल-सलागाहिंतो विसेसाहियाओ होंति त्ति वुत्तं होदि। विसेसपमाणमेत्थ हेट्ठिमसमयपबद्धसलागाण-मावलियाए असंखेज्जदिभागपडिभागियमिदि घेतव्वं; एत्थतणणिसेगभागहारस्स गुणहाणिअद्धाण-मेत्तस्स तप्पमाणत्तादो।

* आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणा।

§ ४८३. जे तिसु ट्ठिदिविसेसेसु सेसभावेण ट्ठिदा समयपबद्धा ते विसेसाहिया इच्चादि-कमेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्त-ट्ठिदिविसेसेसु सेसभावेणावट्ठिदा जे समयपबद्धा तेसिं गहिदसलागाओ पढमवियप्पसलागाहिंतो दुगुणमेत्तीओ होंति त्ति वुत्तं होइ।

§ ४८४. एत्तो उवरि पुणो वि विसेसाहियवड्ढीए णेदव्वं जाव पुव्विल्लदुगुणवड्ढिअद्धाणेण सरिसमद्धाणमुवरि गंतूण विदिया दुगुणवड्ढी समुप्पण्णा त्ति। एवमेदेण कमेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ दुगुणवड्ढीओ गंतूण तदित्थदुगुणवड्ढीए चरिमवियप्पे जवमज्झं समुप्पज्जदि त्ति इममत्थविसेसं जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

---

§ ४८२. दो स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे स्थित जो समयप्रबद्ध हैं उनकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ विशेषका प्रमाण अधस्तन समय-प्रबद्धोंकी शलाकाओंका आवलिके असंख्यातवें भागके प्रतिभागस्वरूप है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अर्थात् अधस्तन समयप्रबद्धोंकी शलाकाओंमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी शलाकाएँ यहाँ अधस्तन शलाकाओंसे विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका भाव है, क्योंकि यहाँका निषेकभागहार गुणहानिस्थानोंका जितना प्रमाण है तत्प्रमाण है।

* इस प्रकार क्रमसे जाते हुए आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविशेषोंमें शेष-रूपसे जो समयप्रबद्ध प्रतिबद्ध हैं उनकी शलाकाएँ दूनी हैं।

§ ४८३. तीन स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे स्थित जो समयप्रबद्ध हैं वे विशेष अधिक हैं इत्यादि क्रमसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान ऊपर जाकर आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे स्थित जो समयप्रबद्ध हैं उनमेंसे प्रत्येककी ग्रहण की गयी शला-काएँ प्रथम विकल्पकी शलाकाओंसे दूनी होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—एक-एक स्थितिविशेषमें शेषरूपसे प्रतिबद्ध जितने समयप्रबद्ध हैं वे सबसे थोड़े हैं। दो-दो स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे प्रतिबद्ध जितने समयप्रबद्ध हैं वे विशेष अधिक हैं। तीन-तीन स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे प्रतिबद्ध जितने समयप्रबद्ध हैं वे विशेष अधिक हैं। इस प्रकार क्रमसे जाते हुए आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे प्रतिबद्ध जो समयप्रबद्ध हैं वे प्रथम विकल्पकी अपेक्षा दूने हैं। यह एक द्विगुणवृद्धिस्थान है।

§ ४८४. इससे आगे फिर भी जब जाकर पहलेके द्विगुणवृद्धिस्थानके सदृश स्थान ऊपर जाकर दूसरी द्विगुणवृद्धि उत्पन्न होती है वहाँ तक विशेष अधिकके क्रमसे वृद्धिको ले जाना चाहिए। इस प्रकार इस आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धियाँ हो जानेपर वहाँके द्विगुणवृद्धिके अन्तिम भेदमें यवमध्य उत्पन्न होता है इस अर्थविशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* आवलियाए असंखेज्जदिभागे जवमज्झं ।

§ ४८५. आदीदोप्पहुडि आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं तप्पाओग्गासंखेज्जदुगुणवड्डि-गब्भं गंतूण तदित्थवियप्पपडिबद्धाणं समयपबद्धाणं ठविदसलागाओ जवमज्झसरूवेण वट्टव्वाओ त्ति भणिदं होइ । आदीदोप्पहुडि कमवड्डीए जाव एद्दूरं ताव आगंतूण एत्तो परं विसेसहीणसरूवेण उवरिमवियप्पसलागाणं गमणदंसणादो जवमज्झमेदं जादमिदि एसो एत्थ भावत्थो । संपहि एदस्सेव फुडीकरणट्ठमुवरिमं सुत्तमोइण्णं—

* तदो हायमाणट्ठाणाणि वासपुधत्तं ।

§ ४८६. एत्तो परमुवरिमवियप्पेसु समयपबद्धसलागाओ जहाकमं हीयमाणाओ गच्छंति जाव असंखेज्जगुणहाणिगब्भं वासपुधत्तमेत्तद्धाणं जवमज्झादो उवरि गंतूण चरिमवियप्पो समुप्पण्णो त्ति । तत्थ चरिमवियप्पे वासपुधत्तमेत्तट्ठिदीसु सेसभावेण ट्ठिदसमयपबद्धा सुट्ठु थोवा होदूण पयदजवमज्झपरूवणाए पज्जवसाणं होंति त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो । एत्थ जव-मज्झादो उवरिमद्धाणं वासपुधत्तमेत्तमेवेत्ति कुदो णव्वदे ? ण, विदियट्ठिदिपमाणस्स वासपुधत्तादो अहियपरस्साणुवलंभादो । एवं भवबद्धसेसयाणं पि एसा जवमज्झपरूवणा णिरवयवमणुगंतव्वा, विसेसाभावादो । एत्थ सव्वत्थ भवसेसयं समयपबद्धसेसयमिदि च वुत्ते एक्केक्कस्स समय-

---

* आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धिस्थानोंके अन्तिम भेदमें यवमध्य प्राप्त होता है ।

§ ४८५. प्रारम्भसे लेकर तत्प्रायोग्य द्विगुणवृद्धिस्थान गर्भ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर वहाँ सम्बन्धी विकल्पोंसे प्रतिबद्ध समयप्रबद्धोंकी स्थापित हुई शलाकाएँ यवमध्य-स्वरूप होती हैं ऐसा जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि प्रारम्भसे लेकर क्रम-वृद्धि द्वारा इतने दूर आकर इससे आगे विशेष हीनरूपसे उपरिम भेदोंकी शलाकाएँ प्राप्त होती हुईं देखी जानेसे यहाँ यवमध्य हो जाता है यह इस सूत्रका भावार्थ है । अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* उससे आगे हीयमान स्थान वर्षपृथक्त्वप्रमाण हैं ।

§ ४८६. इससे आगे-आगेके भेदोंमें समयप्रबद्ध शलाकाएँ क्रमसे हीयमान होकर तबतक जाती हैं जब जाकर यवमध्यसे ऊपर असंख्यात गुणहानिगर्भ वर्षपृथक्त्वप्रमाण स्थान जाकर अन्तिम विकल्प उत्पन्न हुआ है । वहाँ अन्तिम भेदमें वर्षपृथक्त्वप्रमाण स्थितियोंमें शेषरूपसे अवस्थित समयप्रबद्ध सबसे थोड़े होकर प्रकृत यवमध्यप्ररूपणाका अन्त होता है यह यहाँ इस सूत्रके साथ अर्थका सद्भावसूचक सम्बन्ध है ।

शंका—यहाँ यवमध्यसे उपरिम स्थान वर्षपृथक्त्वप्रमाण ही है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रकृतमें द्वितीय स्थितिका प्रमाण वर्षपृथक्त्वसे अधिक नहीं पाया जाता ।

इस प्रकार भवबद्धशेषोंकी यह यवमध्यप्ररूपणा भी पूरी तरहसे इसी प्रकार जाननी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें अन्य कोई विशेषता नहीं है । यहाँपर सर्वत्र भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष

पबद्धस्स भवबद्धस्स वा वेदिदसेसगा कम्मपदेसा से काले णिरवसेसमोकड्डुणाए उदयमागच्छंति त्ति पुव्विल्लसमये चेव अप्पप्पणो पडिबद्धउवरिमट्ठिदिविसेसेसु वट्टमाणा घेत्तव्वा । एवमेत्तिएण पबंधेण तदियभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि जहावसरपत्ताए चउत्थभासगाहाए विहासणं कुणमाणो उवरिमसुत्तपबंधमाढवेइ—

*** एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।**

§ ४८७. सुगमं ।

(१५०) एदेण अंतरेण दु अपच्छिमाए दु पच्छिमे समए ।
भवसमयसेसगाणि दु णियमा तम्हि उत्तरपदाणि ॥२०३॥

§ ४८८. तदियभासगाहाए जहा उत्थाणत्थपरूवणा कदा तहा चेव एदिस्से चउत्थभासगाहाए कायव्वा; विसेसाभावादो । णवरि तदियभासगाहा सामण्णट्ठिदीणमंतरभूदाओ असामण्णट्ठिदीओ पहाणभावेण परूवेइ । एसा पुण असामण्णट्ठिदीहि अंतरिदाणं सामण्णट्ठिदीणं पहाणभावेण परूवणं कुणदि त्ति एसो विसेसो जाणियव्वो ।

§ ४८९. संपहि एदिस्से चउत्थभासगाहाए अवयवत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—'एदेण अंतरेण दु' एदेणाणंतरपरूविदेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तुक्कस्संतरेण 'अपच्छिमाए दु' पुव्वुत्तावलियासंखेज्जदिभागमेत्तुक्कस्संतरस्स जा अपच्छिमा चरिमा असामण्णट्ठिदी तिस्से

ऐसा कहनेपर एक-एक समयप्रबद्धके और एक-एक भवबद्धके वेदे जानेके बाद जो शेष कर्मप्रदेश रहे वे अनन्तर समयमें पूरेके पूरे अपकर्षण द्वारा उदयको प्राप्त हो जाते हैं, इसलिए उदयसे पहलेके समयमें अपने-अपने सम्बन्धी उपरिम स्थितिविशेषोंमें विद्यमान ग्रहण करना चाहिए । इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा तीसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषाको समाप्त कर अब यथावसर प्राप्त चौथी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** इससे आगे चौथी भाष्यगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं ।**

§ ४८७. यह सूत्र सुगम है ।

(१५०) इस अनन्तर कहे गये आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरसे युक्त अन्तमें जो असामान्य स्थिति प्राप्त होती है उससे अनन्तर उपरिम स्थितिमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष नियमसे उस क्षपकके उत्तरपदरूप होते हैं ॥२०३॥

§ ४८८. तीसरी भाष्यगाथाके जिस प्रकार उत्थानरूप अर्थकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार इस चौथी भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उसकी प्ररूपणासे इसकी प्ररूपणामें कोई विशेषता नहीं है । इतनी विशेषता है कि तीसरी भाष्यगाथा सामान्य स्थितियोंसे अन्तरित असामान्य स्थितियोंकी प्रधानरूपसे प्ररूपणा करती है । परन्तु यह गाथा असामान्य स्थितियोंसे अन्तरित सामान्य स्थितियोंकी प्रधानरूपसे प्ररूपणा करती है यह विशेष इन दोनोंमें जानना चाहिए ।

§ ४८९. अब इस चौथी भाष्यगाथाकी प्ररूपणा करेंगे । वह जैसे—'एदेण अंतरेण दु' इस अनन्तर कहे गये आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरसे 'अपच्छिमाए दु' अर्थात् पूर्वोक्त आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तरकी जो 'अपश्चिम' अर्थात् अन्तिम असामान्य

पच्छिमे समए तदणंतरोवरिमट्ठिदीए 'भवसमयसेसाणि समयपबद्धसेसयाणि च णियमा' णिच्छयेणेव 'तम्हि' तम्हि खवगे 'तम्हि' वा अट्ठवस्समेत्तट्ठिदिसंतकम्मब्भंतरे 'उत्तरपदाणि' एगादिएगुत्तरकमेण परिवड्ढिदाणि एगादिएगुत्तरट्ठिदिविसेसेसु वा लद्धावट्ठाणाणि दट्ठव्वाणि त्ति सुत्तत्थसंबंधो।

§ ४९० संपहि एदस्स समुदायत्थे भण्णमाणे सामण्णठिदीणमंतरमसामण्णट्ठिदीओ भवंति। ताओ च जहण्णेण एक्को वा दो वा तिण्णि वा एवं गंतूण जावुक्कस्सेणावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ णिरंतरमुवलब्भंति त्ति पुव्वसुत्ते भणिदं। पुणो तासिमसामण्णट्ठिदीणं चरिमट्ठिदीदो जा उवरिमाणंतरट्ठिदी तम्मि समयपबद्धसेसयाणि भवबद्धसेसयाणि च णियमा होंति। होंताणि वि एगादिएगुत्तरपरिवड्ढीए जाव उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं भवबद्धाणं च सेसयाणि तम्मि ट्ठिदिविसेसे होदूण लब्भंति। ताणि च ण केवलमेक्कम्मि चेव ट्ठिदिविसेसे चिट्ठंति; किंतु एगादिएगुत्तरपरिवड्ढिदेसु ट्ठिदिविसेसेसु उक्कस्सेण वासपुधत्तावच्छिण्णपमाणेसु णिरंतरमवचिट्ठंति त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थपरमत्थो।

§ ४९१. संपहि एदस्सेव फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

* विहासा।

स्थिति है उसके 'पच्छिमे समए' अनन्तर उपरिम स्थितिमें 'भव-समयसेसाणि दु' भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेष 'णियमा तम्हि' नियमसे उस क्षपकके या 'तम्हि' आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मके भीतर 'उत्तरदाणि' एकसे लेकर आगे एक-एक अधिकके क्रमसे बढ़े हुए स्थान जानने चाहिए या एकसे लेकर आगे एक-एक अधिकके क्रमसे बढ़े हुए स्थितिविशेषोंमें उत्तरपद जानने चाहिए।

§ ४९०. अब इसके समुच्चयरूप अर्थके कहनेपर सामान्य स्थितियोंके अन्तरस्वरूप असामान्य स्थितियाँ होती हैं। और वे जघन्यसे एक अथवा दो अथवा तीन होती हैं। इस प्रकार एक-एक बढ़ाते हुए वे उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तररहित उपलब्ध होती हैं यह पूर्व सूत्रमें कह आये हैं। पुनः उन असामान्य स्थितियों-सम्बन्धी अन्तिम स्थितिसे उपरिम जो अनन्तर स्थिति है उसमें समयप्रबद्धशेष नियमसे होते हैं। होते हुए भी एकसे लेकर आगे एक-एककी वृद्धिसे युक्त वे उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धों और भवबद्धोंके शेष उस स्थितिविशेषमें होकर प्राप्त होते हैं। और वे केवल एक ही स्थितिविशेषमें नहीं पाये जाते, किन्तु एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे बढ़े हुए उत्कृष्टसे वर्षपृथक्त्वप्रमाण स्थितिविशेषोंमें निरन्तररूपसे अवस्थित रहते हैं इस प्रकार यह यहाँ इस सूत्रका परमार्थस्वरूप अर्थ है।

विशेषार्थ—आशय यह है कि असामान्य स्थितियोंके बीच-बीचमें सामान्य स्थितियाँ होती हैं। कहीं एक असामान्य स्थितिके अनन्तर एकादि सामान्य स्थितियाँ होती हैं। कहीं दो असामान्य स्थितियोंके अनन्तर एकादि सामान्य स्थितियाँ पायी जाती हैं। यहाँ एकादि सामान्य स्थितियोंके अन्तरस्वरूप स्थित असामान्य स्थितियाँ एकसे लेकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण तक हो सकती हैं और इसी प्रकार एकादि असामान्य स्थितियोंके बाद सामान्य स्थितियाँ भी उतनी ही हो सकती हैं।

§ ४९१. अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

* अब इस भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं।

§ ४९२. सुगमं।

*** समयपबद्धसेसयं जिस्से ट्ठिदीए णत्थि तदो विदियाए ट्ठिदीए ण होज्ज, तदियाए ठिदीए ण होज्ज, तदो चउत्थीए ण होज्ज। एवमुक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीसु ट्ठिदीसु ण होज्ज समयपबद्धसेसयं।**

§ ४९३. णाढवेयव्वमिदं सुत्तं, पुव्वसुत्तेणेव णिण्णीदत्थविसेसस्स पुणो परूवणाए फलविसेसाणुवलंभादो त्ति णासंकियव्वं, पुव्वुत्तमेवत्थस्स विसेसमणुसंभालिय पुणो एत्तो उवरि सामण्णट्ठिदीओ एदेण कमेण लब्भंति त्ति जाणावणट्ठं तप्परूवणे कीरमाणे दोसाणुवलंभादो। एवमेदं संभालिय पुणो एत्तियमेत्तमंतरमुल्लंघिय तत्तो परं णियमा समयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ ट्ठिदीओ होंति त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

*** आवलियाए असंखेज्जदिभागं गंतूण णियमा समयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ ट्ठिदीओ।**

§ ४९४. अंतरचरिमट्ठिदिमुल्लंघिय तत्तो परं समयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ ट्ठिदीओ एगादिएगुत्तरकमेण लब्भमाणाओ उक्कस्सेण वासपुधत्तमेत्तीओ होंति त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। संपहि एदासिं चेव एगाणेगसमयपबद्धसेसएहिं अविरहिदाणं ठिदीणं थोवबहुत्तगवेसणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

---

§ ४९२. यह सूत्र सुगम है।

*** जिस स्थितिमें समयप्रबद्धशेष नहीं है, उससे आगे दूसरी स्थितिमें वह न होवे, तीसरी स्थितिमें न होवे, उससे आगे चौथी स्थितिमें न होवें, इस प्रकार क्रमसे जाते हुए वह समयप्रबद्धशेष उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें नहीं होवें यह सम्भव है।**

§ ४९३. शंका—यह सूत्र आरम्भ नहीं करना चाहिए, क्योंकि पूर्व सूत्रके द्वारा ही इस सूत्रके अर्थविशेषका निर्णय किया जा चुका है, अतः इसकी पुनः प्ररूपणा करनेमें फलविशेष नहीं उपलब्ध होता?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि पहले कहे गये अर्थकी विशेष सम्हाल करके पुनः इससे आगे सामान्य स्थितियाँ इस क्रमसे पायी जाती हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए उसकी प्ररूपणा करनेमें कोई दोष नहीं पाया जाता।

इस प्रकार इस अर्थकी सम्हाल करके पुनः इतने मात्र अन्तरका उल्लंघन करके उससे आगे नियमसे समयप्रबद्धशेषसे युक्त स्थितियाँ होती हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** किन्तु उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियाँ जानेपर समयप्रबद्धशेषसे युक्त स्थितियाँ नियमसे होती हैं।**

§ ४९४. अन्तरकी अन्तिम स्थितियोंका उल्लंघन कर उससे आगे समयप्रबद्धशेषसे युक्त एकसे लेकर आगे एक-एकके क्रमसे बढ़कर प्राप्त होती हुई वे स्थितियाँ उत्कृष्टसे वर्षपृथक्त्वप्रमाण तक होती हैं इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इन्हीं एक और अनेक समयप्रबद्धोंसे युक्त स्थितियोंके अल्पबहुत्वका अनुसन्धान करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

* जाओ ताओ अविरहिदट्ठिदीओ ताओ एगसमयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ थोवाओ । अणेगाणं समयपबद्धाणं सेसएण अविरहिदाओ असंखेज्जगुणाओ । पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं सेसएण अविरहिदाओ असंखेज्जा भागा ।

§ ४९५. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—'जाओ ताओ अविरहिदट्ठिदीओ' एवं भणिदे जाओ अणंतरमेव णिद्दिट्ठाओ समयपबद्धसेसएणाविरहिदाओ सामण्णट्ठिदीओ तासिमेसा थोवबहुत्तपरिक्खा अहिकीरदि त्ति वुत्तं होइ । ताओ एगसमयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ थोवाओ एवं भणिदे वासपुधत्तमेत्तट्ठिदीसु जाओ एगसमयपबद्धसेसएणाविरहिदाओ ट्ठिदीओ आवलियाए असंखेज्जदिभागपमाणादो होदूण उवरिमवियप्पपडिबद्धट्ठिदिविसेसेहिंतो थोवाओ त्ति भणिदं होइ। 'अणेयाणं समयपबद्धाणं सेसएण अविरहिदाओ असंखेज्जगुणाओ' एवं भणिदे दो-तिण्णिआदि जाव संखेज्जाणमसंखेज्जाणं वा समयपबद्धाणं सेसयेणाविरहिदट्ठिदीओ हेट्ठिमरासि पेक्खियूणासंखेज्जगुणाओ त्ति णिद्दिट्ठं होइ । ण च तत्तो एदासिमसंखेज्जगुणत्तमसिद्धं; एयवियप्पपडिबद्धट्ठिदिविसेसेहिंतो अणेयवियप्पपडिबद्धाणमेदासिमसंखेज्जगुणत्तसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो । को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । 'पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं असंखेज्जाभागा' एवं भणिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ वासपुधत्तमेत्तीणं सयलसामण्णट्ठिदीणमसंखेज्जदिभागमेत्ता होंति । सेसासेसहेट्ठिमवियप्पपडिबद्धसामण्णट्ठिदीओ पुण आवलियाए असंखेज्जदिभागपमाणं होदूण सयलसामण्ण-

---

* जो समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ कह आये हैं वे एक समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ सबसे थोड़ी हैं । उनसे अनेक समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ असंख्यातगुणी हैं । उनमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं ।

§ ४९५. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—'जाओ ताओ अविरहिदट्ठिदीओ' ऐसा कहनेपर जो अनन्तर पूर्व ही समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त सामान्य स्थितियाँ कह आये हैं उनके यह अल्पबहुत्वकी परीक्षा प्रकृतमें अधिकृत है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । 'वे एक समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ थोड़ी हैं' ऐसा कहनेपर वर्षपृथक्त्वप्रमाण स्थितियोंमें जो एक समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ हैं वे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर आगेके विकल्पसे प्रतिबद्ध स्थितिविशेषोंकी अपेक्षा स्तोक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उनसे 'अनेक समयप्रबद्धशेषसे संयुक्त स्थितियाँ असंख्यातगुणी हैं' ऐसा कहनेपर दो, तीन आदि स्थितियोंसे लेकर क्रमसे संख्यात या असंख्यात समयप्रबद्धोंके शेषसे युक्त स्थितियाँ अधस्तन राशिको देखते हुए असंख्यातगुणी हैं ऐसा इस सूत्रमें निर्देश किया गया है । पहलेकी स्थितियोंसे इनका असंख्यातगुणापना असिद्ध नहीं है, क्योंकि एक विकल्पसे सम्बद्ध स्थितिविशेषोंकी अपेक्षा अनेक विकल्पोंसे सम्बद्ध इनके असंख्यातगुणपनेकी सिद्धि निर्बाधरूपसे उपलब्ध होती है ।

शंका—यहाँपर गुणकार क्या है ?

समाधान—यहाँपर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणकार है ।

'पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं० असंखेज्जाभागा' ऐसा कहनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके शेषोंसे संयुक्त स्थितियाँ वर्षपृथक्त्वमात्र समस्त सामान्य स्थितियोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण होती हैं । परन्तु शेष समस्त अधस्तन विकल्पोंसे प्रतिबद्ध

ट्ठिदीणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ होंति त्ति भणिदं होइ।

संपहि एत्थ एगसमयपबद्धसेसएण अविरहिदट्ठिदीहिंतो दोण्हं समयपबद्धाणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ विसेसाहियाओ भवंति। एवं तिण्णि-चत्तारि-आदिसमयपबद्धाणं सेसयेणाविरहिदट्ठिदीओ विसेसाहियकमेण णेदव्वाओ जाव आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ दुगुणाओ जादाओ त्ति एवमुवरि वि जाणियूण णेदव्वं। एवं च गमणसंभवे ताओ ट्ठिदीओ वियप्पेदूण अप्पाबहुअभेदमभणिय 'अणेयाणं समयपबद्धाणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ असंखेज्जगुणाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ असंखेज्जा भागा त्ति अव्वोगाढसरूवेण घेत्तूण तासिमप्पाबहुअं भणंतस्स चुण्णिसुत्तयारस्स को अहिप्पाओ त्ति पुच्छिदे भण्णदे—ठिदीओ थोवाओ, वासपुधत्तादो अब्भहियपमाणाणं तासिमेत्था संभवादो। समयपबद्धासेसवियप्पा पुण एगादि—एगुत्तरकमेण वड्ढमाणा पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्ता होंति त्ति ठिदिवियप्पेहिंतो असंखेज्जा अत्थि, तदो रूवुत्तरकमेण तेसिमेत्थ परूवणा ण संभवदि त्ति अव्वोगाढसरूवेण तेसिं जहासंभवमुवलब्भमाणाणमप्पाबहुअमेदमुवइट्ठं ति दट्ठव्वं। जहा समयपबद्धसेसयाणमेसा सव्वा परूवणा चउत्थभासगाहाणिबद्धा विहासिदा, तहा चेव भवबद्धसेसयाणं पि णिरवसेसमणुगंतव्वा, विसेसाभावादो। एवं मूलगाहाए चसद्दसूचिदो अत्थो तदिय-चउत्थभासगाहाहिं विहासिदो दट्ठव्वो। अथवा 'कदि वा एगसमयेणे त्ति' एवं मूलगाहापच्छिमपदं मोत्तूण सेसाणं मूलगाहाए सव्वपदाणमत्थो पढम-विदियभासगाहाहिं

सामान्य स्थितियाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर समस्त सामान्य स्थितियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—अब यहाँ एक समयप्रबद्धशेष संयुक्त स्थितियोंसे दो समयप्रबद्धोंके शेषोंसे संयुक्त स्थितियाँ विशेष अधिक होती हैं। इसी प्रकार तीन, चार आदि समयप्रबद्धोंके शेषोंसे संयुक्त स्थितियाँ विशेष अधिक क्रमसे लेकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके शेषोंसे संयुक्त स्थितियाँ दूनी होने तक ले जाना चाहिए। इसी प्रकार ऊपर भी जानकर ले जाना चाहिए। यहाँ इस प्रकार (आगे भी) गमन सम्भव होनेपर उन स्थितियोंको विकल्प करके अल्पबहुत्वके भेदका कथन न करके 'अणेयाणं समयपबद्धाणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ असंखेज्जगुणाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं सेसएहिं अविरहिदाओ ट्ठिदीओ असंखेज्जा भागा' इस प्रकार अव्यवगाढ़रूपसे ग्रहण कर उनका अल्पबहुत्व कहनेवाले चूर्णिसूत्रकारका क्या अभिप्राय रहा है?

समाधान—ऐसी पृच्छा होनेपर आचार्य समाधान करते हुए कहते हैं—स्थितियाँ थोड़ी हैं, क्योंकि वर्षपृथक्त्वसे अधिक प्रमाणवाली उनका यहाँ प्राप्त होना असम्भव है। परन्तु समयप्रबद्धोंके समस्त भेद एकसे लेकर आगे एक-एकके क्रमसे वृद्धिको प्राप्त होते हुए पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं, इसलिए वे स्थितियोंके भेदोंसे असंख्यातगुणे हैं, इस कारण आगे एक अधिकके क्रमसे उनकी यहाँ प्ररूपणा सम्भव नहीं है, अत: अव्यवगाढ़रूपसे यहाँ यथासम्भव उपलभ्यमान उनका यह अल्पबहुत्व कहा गया जानना चाहिए।

यहाँ जिस प्रकार चौथी भाष्यगाथामें निबद्ध समयप्रबद्धशेषोंकी यह पूरी प्ररूपणा विशेषरूपसे कही उसी प्रकार भवबद्धशेषोंकी भी पूरी प्ररूपणा जाननी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार मूल गाथामें आये हुए 'च' शब्दसे सूचित होनेवाले अर्थकी तीसरी और चौथी भाष्यगाथा द्वारा विभाषा की। अथवा 'कदि वा एगसमएण' इस प्रकार मूलगाथाके इस अन्तिम

विहासिदो। पुणो 'कदि वा एगसमएणेत्ति' एदस्स पच्छिमपदस्स अत्थो तदिय-चउत्थभासगाहाहिं विहासिदो त्ति वक्खाणेयव्वं। कदि वा सामण्णासामण्णाट्ठिदीओ एगसमयेण एगसंबंधेण णिरंतर-भावमुवगयाओ समुवलब्भंति त्ति पुच्छाहिसंबंधं कादूण वक्खाणे कीरमाणे तदिय-चउत्थभास-गाहाणमत्थस्स परिप्फुडमेव तत्थ पडिबद्धत्तदंसणादो। एवमेत्तिएण पबंधेण खवगसंबंधेण चउण्हं भासगाहाणमत्थविहासणं कादूण संपहि पयदमत्थमुवसंहरेमाणो इदमाह—

※ एसा सव्वा चदुहिं गाहाहिं खवगस्स परूवणा कदा।

§ ४९६. गयत्थमेदमुवसंहारवक्कं।

※ एदाओ चेव चत्तारि वि गाहाओ अभवसिद्धियपाओग्गे णेदव्वाओ।

§ ४९७. पुव्वमेदाओ चत्तारि भासगाहाओ भवसिद्धियपाओग्गविसए खवगसेढिसंबंधेण विहासिदाओ। पुणो एण्हिमेदाओ चेव चत्तारि वि भासगाहाओ अट्ठमीए मूलगाहाए अत्थविहासणे पडिबद्धाओ अभवसिद्धियपाओग्गविसये विहासियव्वाओ, अण्णहा तव्विसये भवबद्धसेसयाणं समय-पबद्धसेसयाणं च एत्तियमेत्ताणमेवविदएसु ट्ठिदिविसेसेसु एदेण कमेणावट्ठाणं होदि त्ति जाणावणोवा-याभावादो त्ति भणिदं होदि। को अभवसिद्धियपाओग्गविसयो णाम? भवसिद्धियाणमभवसिद्धियाणं च जत्थ ट्ठिदि-अणुभागबंधादिपरिणामा सरिसा होदूण पयट्टंति सो अभवसिद्धियपाओग्गविसयो त्ति

पदको छोड़कर मूलगाथाके शेष सब पदोंके अर्थकी प्रथम और दूसरी भाष्यगाथा द्वारा विभाषा की। पुनः 'कदि वा एगसमएण' इस प्रकार मूलगाथाके इस अन्तिम पदके अर्थकी तीसरी और चौथी भाष्यगाथा द्वारा विभाषा की ऐसा व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि कितनी सामान्य और असामान्य स्थितियाँ एक समयमें एकके सम्बन्धसे निरन्तरपनेको प्राप्त होकर उपलब्ध होती हैं ऐसी पृच्छाका सम्बन्ध करके व्याख्यान करनेपर तीसरी और चौथी भाष्यगाथाओंकी स्पष्टरूपसे ही वहाँ प्रतिबद्धता देखी जाती है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा क्षपकके सम्बन्धसे चार भाष्यगाथाओंके अर्थकी विभाषा करके अब प्रकृत अर्थका उपसंहार करते हुए इस सूत्रको कहते हैं।

※ चार भाष्यगाथाओं द्वारा क्षपककी यह सब प्ररूपणा की।

§ ४९६. यह उपसंहार करनेवाला वचन गतार्थ है।

※ ये चारों भाष्यगाथाएँ अभव्यसिद्धिक जीवोंके भी प्रायोग्य हैं, अतः उनकी अपेक्षा इनकी विभाषा करनी चाहिए।

§ ४९७. पूर्वमें ये चारों भाष्यगाथाएँ भव्यसिद्धिकप्रायोग्य जीवोंके विषयमें क्षपकश्रेणिके सम्बन्धसे विभाषित की गयीं। पुनः इस समय आठवीं मूलगाथाके अर्थकी विभाषा करनेमें प्रतिबद्ध ये ही चारों भाष्यगाथाएँ अभव्यसिद्धिक जीवोंके विषयमें विभाषा करने योग्य हैं, अन्यथा उनके विषयमें इतने भवबद्धशेषों और समयप्रबद्धशेषोंका इतने स्थितिविशेषोंमें इस क्रमसे अवस्थान होता है यह जाननेका कोई उपाय नहीं पाया जाता यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषय क्या है?

समाधान—जहाँ भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध आदिके योग्य परिणाम सदृश होकर प्रवृत्त होते हैं, वह अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषय है यह कहा जाता है।

भण्णदे। तदो एदम्मि अभवसिद्धियपाओग्ग विसयेभवसमयपबद्धसेसयाणं परूवणट्ठमिमाओ अणंतरणिद्दिट्ठाओ चत्तारि भासगाहाओ पुणो वि विहासियव्वाओ त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो।

※ तत्थ पुव्वं गमणिज्जा णिल्लेवणट्ठाणाणमुवदेसपरूवणा।

§ ४९८. तत्थ अभवसिद्धियपाओग्गविसये चदुण्हं भासगाहाणमत्थविहासणावसरे पुव्वं पढममेव ताव गमणिज्जा अणुगंतव्वा णिल्लेवणट्ठाणाणमुवदेसपरूवणा; तेसु अविण्णादेसु तण्णिबंधणभवसमयपबद्धसेसयाणं चदुहि भासगाहाहि विहासणोवायाभावादो त्ति वुत्तं होइ। तत्थ किं णिल्लेवणट्ठाणं णाम? एगसमये बद्धकम्मपरमाणवो बंधावलियमेत्तकाले वोलिदे पच्छा उदयं पविसमाणा केत्तियं पि कालं सांतर-णिरंतरसरूवेणुदयमागंतूण जम्हि समयम्हि सव्वे चेव णिस्सेसमुदयं कादूण गच्छंति तेसिं णिरुद्धभवसमयपबद्धपदेसाणं तण्णिल्लेवणट्ठाणमिदि भण्णदे; तत्थ तेसिं णिरवसेसभावेण णिल्लेवणदंसणादो। एवंविहणिल्लेवणट्ठाणमेक्कस्स समयपबद्धस्स भवबद्धस्स वा किमेयवियप्पं चेव होइ, आहो अणेयवियप्पमिदि णिण्णयकरणट्ठमेसा उवएसपरूवणा एत्थाढविज्जदे। सा पुण णिल्लेवणट्ठाणाणमुवदेसपरूवणा एत्थ दुविहा होदि त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

※ एत्थ दुविहो उवएसो।

इसलिए अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य इस विषयमें भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेषकी प्ररूपणा करनेके लिए इन अनन्तर पूर्व कही गयी चार भाष्यगाथाओंकी यहाँ फिर भी विभाषा करनी चाहिए यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

※ इस विषयमें सर्वप्रथम निर्लेपनस्थानोंके उपदेशकी प्ररूपणा जानने योग्य है।

४९८. 'तत्थ' अर्थात् अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें चार भाष्यगाथाओंके अर्थकी विभाषा करते समय 'पुव्वं' अर्थात् सर्वप्रथम निर्लेपनस्थानोंके उपदेशकी प्ररूपणा 'गमणिज्जा' अर्थात् जानने योग्य है, क्योंकि उनके अविज्ञात रहनेपर तन्निमित्तक भवबद्धशेष और समयप्रबद्धशेषोंकी विभाषा करनेका अन्य कोई उपाय नहीं पाया जाता यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यहाँ निर्लेपनस्थान किसे कहते हैं?

समाधान—एक समय द्वारा बन्धको प्राप्त हुए कर्मपरमाणु बन्धावलिकालके बीत जानेपर पश्चात् उदयमें प्रवेश करते हुए कितने ही काल तक सान्तर और निरन्तररूपसे उदयमें आकर जिस समय सभी उदयमें आकर निकल जाते हैं उन विवक्षित भवबद्धशेषों और समयप्रबद्धशेषोंका वह निर्लेपनस्थान कहलाता है, क्योंकि वहाँपर उन कर्मपरमाणुओंका पूरी तरहसे निर्लेपन देखा जाता है।

इस प्रकारका निर्लेपनस्थान एक समयप्रबद्धका या भवबद्धका क्या एक भेदरूप होता है या अनेक भेदरूप होता है इस बातका निर्णय करनेके लिए यह उपदेशकी प्ररूपणा यहाँपर आरम्भ की जाती है। परन्तु वह निर्लेपनस्थानके उपदेशकी प्ररूपणा यहाँ दो प्रकार की है इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

※ प्रकृतमें दो प्रकारका उपदेश पाया जाता है।

§ ४९९. एदम्मि णिल्लेवणट्ठाणाणं परूवणावहारणे दुविहो पुव्वाइरियाणमुवएसो दट्ठव्वो त्ति भणिदं होदि; पवाइज्जमाणापवाइज्जमाणभेदेण दोण्हमुवएसाणमेत्थ संभवदंसणादो।

* एक्केण उवदेसेण कम्मट्ठिदीए असंखेज्जा भागा णिल्लेवणट्ठाणाणि।

§ ५००. पुव्वुत्ताणं दोण्हमुवएसाणं मज्झे एक्केण ताव उवएसेण कम्मट्ठिदीए असंखेज्जभागमेत्ताणि एगसमयपबद्धस्स भवबद्धस्स वा णिल्लेवणट्ठाणाणि होंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो। संपहि कधमेत्तियमेत्ताणि एगसमयपबद्धस्स णिल्लेवणट्ठाणाणि जादाणि त्ति पुच्छाए णिण्णयं कस्सामो। तं जहा—जो समयपबद्धो णिरुद्धकम्मट्ठिदीए आदिसमयम्मि बद्धो, तस्स पदेसग्गं बंधसमयप्पहुडि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालं णिच्छयेण होदूण पुणो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालचरिमसमए णिस्सेसं होदूण गमणपाओग्गं होदि, हेट्ठिमकालब्भंतरे ओकड्डियूण वेदिज्जमाणस्स तस्स तम्मि उद्देसे णिरवसेसं णिल्लेवणे विरोहाणुवलंभादो। तदो एदमेगं णिरुद्धसमयपबद्धस्स णिल्लेवणट्ठाणं होदि।

§ ५०१. अधवा तत्तो उवरिमसमयम्मि वि तं पदेसग्गं णिस्सेसं होदूण गमणपाओग्गं होदि; हेट्ठिमओकड्डुणा परिणामाणं तहाविहणिल्लेवणट्ठाणुप्पत्तीए वि कारणभूदाणं संभवोवलंभादो। एवं समयुत्तरकमेण णिरुद्धसमयपबद्धस्स णिल्लेवणट्ठाणाणि बज्झंतरंगकारणसव्वपेक्खाणि होदूण गच्छंति जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति। तदो कम्मट्ठिदीए असंखेज्जभागमेत्ताणि णिल्लेवणट्ठाणाणि णिरुद्धसमयपबद्धस्स लद्धाणि होंति। एवं सव्वेसिं पि समयपबद्धाणमप्पणो कम्मट्ठिदीए असंखेज्जा भागा णिल्लेवणट्ठाणाणि होंति त्ति वत्तव्वं। एवं चेव भवबद्धाणं

---

§ ४९९. इस निर्लेपनस्थानोंकी प्ररूपणाके अवधारण करनेमें पूर्व आचार्योंका उपदेश दो प्रकारका जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि यहाँपर प्रवाह्यमान और अप्रवाह्यमानके भेदसे दो प्रकारके उपदेश सम्भव दिखाई देते हैं।

* एक उपदेशके अनुसार कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण निर्लेपनस्थान होते हैं।

§ ५००. पूर्वोक्त दोनों प्रकारके उपदेशोंमें एक उपदेशके अनुसार तो एक समयप्रबद्धके या भवबद्धके कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण निर्लेपनस्थान होते हैं यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। अब एक समयप्रबद्धके इतने निर्लेपनस्थान कैसे हो जाते हैं ऐसी पृच्छा होनेपर आगे उसका निर्णय करेंगे। वह जैसे—जो समयप्रबद्ध विवक्षित कर्मस्थितिके प्रथम समयमें बन्धको प्राप्त हुआ है उसका प्रदेशपुंज बन्धसमयसे लेकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक निश्चयसे रहकर पुनः पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके अन्तिम समयमें निश्शेष होकर गमनके योग्य होता है, मात्र अधस्तन कालके भीतर अपकर्षण होकर वेद्यमान उसके उस स्थानमें पूरी तरह निर्लेपनको प्राप्त होनेमें विरोध नहीं उपलब्ध होता। इसलिए वह एक विवक्षित समयप्रबद्धका निर्लेपनस्थान है।

§ ५०१. अथवा उससे अगले समयमें भी उसका प्रदेशपुंज निश्शेष होकर गमनके योग्य होता है, क्योंकि इससे पहले उस प्रकारके निर्लेपनस्थानकी उत्पत्तिमें कारणभूत अपकर्षणप्रायोग्य परिणाम सम्भव नहीं हैं। इस प्रकार एक-एक समय अधिकके क्रमसे विवक्षित समयप्रबद्धके बाह्य और आभ्यन्तर कारणसापेक्ष निर्लेपनस्थान होकर कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक जाते हैं। इसलिए विवक्षित समयप्रबद्धके निर्लेपनस्थान कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभाग प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार सभी समयप्रबद्धोंके अपनी-अपनी कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण निर्लेपनस्थान

पि णिल्लेवणट्ठाणाणमेसो पमाणाणुगमो कायव्वो; एदम्मि उवदेसे अवलंबिज्जमाणे पयारंतरासंभवादो। एसो च अपवाइज्जमाणोवएसो णाम बहुएहिं आइरिएहिं अणभिमयत्तादो। संपहि पवाइज्जंतोवएसमस्सियूण णिल्लेवणट्ठाणाणं पमाणविसेसावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** एक्केण उवएसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।**

§ ५०२. एक्केण उवएसेण पवाइज्जमाणेण उवएसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि णिल्लेवणट्ठाणाणि होंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो। कुदो पुण एदस्स उवएसस्स पवाइज्जमाणत्तमवगम्मदे? उवरिमचुण्णिसुत्तणिद्देसादो। एदस्स भावत्थो—कम्मट्ठिदीए आदिसमयम्मि जो बद्धो समयपबद्धो सो बंधसमयप्पहुडि जाव कम्मट्ठिदीए असंखेज्जा भागा गच्छंति ताव णिच्छयेण अच्छियूण तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकम्मट्ठिदिसेसे तम्हि सेसे अपरिसेसमुदयं कादूण सुद्धं णिल्लेविज्जदि, तेण तमेगं णिल्लेवणट्ठाणं जादं। अथवा तदुवरिमसमयम्मि णिस्सेसमुदयं कादूण गच्छदि त्ति तं विदियं णिल्लेवणट्ठाणं होइ। एवं समयुत्तरकमेण णिल्लेवणट्ठाणाणि गच्छंति जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमओ त्ति। तेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि णिल्लेवणट्ठाणाणि पवाइज्जमाणोवएसमस्सियूण लब्भंति त्ति घेत्तव्वं। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

*** जो पवाइज्जइ उवएसो तेण उवदेसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जाणि वग्गमूलाणि णिल्लेवणट्ठाणाणि।**

होते हैं ऐसा कहना चाहिए। इसी प्रकार भवबद्धोंके भी निर्लेपनस्थानोंका यह प्रमाणानुगम करना चाहिए, क्योंकि इस उपदेशका अवलम्बन करनेपर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। यह अप्रवाह्यमान उपदेश है, क्योंकि यह बहुत आचार्योंके द्वारा सम्मत नहीं है। अब प्रवाह्यमान उपदेशका आश्रय लेकर निर्लेपनस्थानोंके प्रमाणविशेषका अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एक उपदेशके अनुसार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थान होते हैं।**

§ ५०२. 'एक्केण उवएसेण' अर्थात् प्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थान होते हैं यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है।

शंका—यह उपदेश प्रवाह्यमान है यह कैसे जाना जाता है?

समाधान—आगे चूर्णिसूत्रके निर्देशसे जाना जाता है कि यह उपदेश प्रवाह्यमान है।

इस सूत्रका भावार्थ—कर्मस्थितिके प्रथम समयमें जो समयप्रबद्ध बँधता है वह बन्धसमयसे लेकर कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभाग जाने तक नियमसे अवस्थित रहकर पश्चात् पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कर्मस्थितिके शेष रहनेपर उस शेष समयमें पूरा उदयको प्राप्त होकर पूरी तरहसे निर्लेपनको प्राप्त हो जाता है। इस कारण वह इस प्रकार निर्लेपनस्थान हो जाता है। अथवा उससे अगले समयमें पूरी तरहसे उदयको प्राप्त हो जाता है, इसलिए वह दूसरा निर्लेपनस्थान हो जाता है। इस प्रकार एक-एक समय अधिकके क्रमसे निर्लेपनस्थान कर्मस्थितिके अन्तिम समय तक प्राप्त होते जाते हैं। इस कारण प्रवाह्यमान उपदेशके अनुसार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थान प्राप्त होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** जो प्रवाह्यमान उपदेश है उस उपदेशके अनुसार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थान होते हैं। जिनका प्रमाण असंख्यात वर्गमूलप्रमाण है।**

§ ५०३. जो पवाइज्जइ उवएसो सव्वाइरिएहिं अविसंवादसरूवेण वक्खाणिज्जदि तेण उवएसेण णिल्लेवणट्ठाणाणि पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्ताणि होंति। होंताणि वि ताणि असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलमसंखेज्जरूवेहिं पलिदोवमद्धच्छेदणएहितो असंखेज्जगुणहीणेहिं पलिदोवमे ओवट्टिदे भागलद्धम्मि तप्पमाणागमणदंसणादो। एवमेत्तिएण पबंधेण णिल्लेवणट्ठाणाणमुवएसभेदावलंबणेण पमाणविणिण्णयं कादूण तत्थ जो पवाइज्जमाणो उवएसो तं चेव घेत्तूण उवरिमं परूवणमाढवेमाणो पुव्वमेव ताव जहण्णणिल्लेवणट्ठाणप्पहुडि जावुक्कस्सणिल्लेवणट्ठाणाणि त्ति एदेसु णिल्लेवणट्ठाणेसु णिल्लेविदपुव्वाणं समयपबद्धाणमेगजीवसंबंधेण अदीदकालविसये णिल्लेवणकालप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधमाह—

*** अदीदे काले एगजीवस्स जहण्णए णिल्लेवणट्ठाणे णिल्लेविदपुव्वाणं समयपबद्धाणमेसो कालो थोवो।**

§ ५०४. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे—अदीदकाले एगजीवस्स जहण्णणिल्लेवणट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्सणिल्लेवणट्ठाणे त्ति ताव एदेसु णिल्लेवणट्ठाणेसु पादेक्कमणंताणंता णिल्लेवणवारा गदा। तत्थ जहण्णए णिल्लेवणट्ठाणे पुणो पुणो ठाइदूण समयपबद्धे णिल्लेवेमाणस्स तस्स जो कालो अणंतसमयावच्छिण्णपमाणो अदीदकालब्भंतरे सव्वत्थ जहासंभवमुच्चिणिदूण गहिदसरूवो सो सव्वत्थोवो त्ति वुत्तं होदि।

---

§ ५०३. जो उपदेश प्रवाहित हो रहा है अर्थात् सब आचार्योंके द्वारा अविसंवादीरूपसे व्याख्यान हो रहा है उस उपदेशके अनुसार निर्लेपनस्थान पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। ऐसा होते हुए भी वे असंख्यात पल्योपमके प्रथम वर्गमूलप्रमाण हैं। अर्थात् पल्योपमके अर्धच्छेदोंसे असंख्यातगुणे हीन असंख्यातसे पल्योपमके भाजित करनेपर जो भाग लब्ध आवे वे तत्प्रमाण हैं। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा उपदेशभेदका अवलम्बन लेकर निर्लेपनस्थानोंके प्रमाणका निर्णय करके उनमें जो प्रवाह्यमान उपदेश है उसे ग्रहण कर आगेके प्रबन्धका आरम्भ करते हुए सर्वप्रथम जघन्य निर्लेपनस्थानसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपनस्थानोंके प्राप्त होने तक इन निर्लेपनस्थानोंमें जिनका पहले निर्लेपन किया गया है ऐसे निर्लेपनस्थानोंके एक जीवके सम्बन्धसे अतीत कालविषयक निर्लेपनकालसम्बन्धी अल्पबहुत्वका प्ररूपण करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अतीत कालमें जघन्य निर्लेपनस्थानमें स्थित एक जीवका निर्लेपितपूर्व समयप्रबद्धों सम्बन्धी यह काल सबसे थोड़ा है।**

§ ५०४. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—अतीत कालमें एक जीवके जघन्य निर्लेपनस्थानसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपनस्थान तकके इन निर्लेपनस्थानोंमें प्रत्येकके अनन्तानन्त निर्लेपनवार व्यतीत हुए हैं। उनमें जघन्य निर्लेपनस्थानमें पुनः-पुनः स्थापित करके समयप्रबद्धोंका निर्लेपन करनेवालेका जो अनन्त समयप्रमाण काल अतीत कालके भीतर व्यतीत हुआ है, यथासम्भव एकत्रित करके ग्रहण किया गया वह काल सबसे थोड़ा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—जघन्यसे लेकर उत्कृष्ट तक जितने भी निर्लेपनस्थान हैं उनमेंसे जघन्य निर्लेपनस्थानको अतीत कालमें एक जीवने जितनी बार किया है तत्सम्बन्धी समयप्रबद्धोंका जो समुदित काल है वह सबसे थोड़ा है यह इस सूत्रका भाव है।

* समयुत्तरे विसेसाहिओ ।

§ ५०५. जहण्णणिल्लेवणट्ठाणादो समयुत्तरे विदियणिल्लेवणट्ठाणे अच्छिदूण णिल्लेविदपुव्वाणं समयपबद्धाणं एसो कालो अदीदकालविसये सव्वत्थ संकलिदसरूवो एगजीवपडिबद्धो पुव्वुत्तजहण्णट्ठाणपडिबद्धणिल्लेवणकालादो विसेसाहिओ । केत्तियमेत्तो विसेसो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडमेत्तो । असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणमेत्थतणमेगगुणहाणिट्ठाणंतरं विरलेयूण जहण्णट्ठाणणिल्लेवणकाले समखंडं कादूण दिण्णे तत्थेगरूवधरिदमेत्तेण तत्तो विदियणिल्लेवणट्ठाणपडिबद्धो एसो णिल्लेवणकालो विसेसाहिओ त्ति वुत्तं होइ ।

* पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ते दुगुणो ।

§ ५०६. एवं दुसमयुत्तरतिसमयुत्तरादिकमेण णिल्लेवणकालो अणंतरोवणिधाए विसेसाहिओ होदूण गच्छमाणो परंपरोवणिधाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तणिल्लेवणट्ठाणेसु गदेसु तदित्थणिल्लेवणकालो जहण्णट्ठाणणिल्लेवणकालादो दुगुणमेत्तो जादो; पुव्वुत्तगुणहाणिमेत्तविरलणाए सव्वरूवधरिदाणमेत्थ पवेसदंसणादो । पुणो वि एदेणेव कमेण उप्पण्णुप्पण्णदुगुणवड्ढिट्ठाणमवट्ठिदगुणहाणिविरलणाए खंडियूण तत्थेगेगखंडं विसेसाहियं कादूण णेदव्वं जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तदुगुणवड्ढीओ गंतूण तदित्थदुगुणवड्ढीए जवमज्झसरूवेण

---

* उससे अनन्तर समयसम्बन्धी निर्लेपनस्थानमें स्थित जीवका निर्लेपित पूर्व समयप्रबद्धोंका समुदित काल विशेष अधिक है ।

§ ५०५. जघन्य निर्लेपनस्थानसे अनन्तर समयवर्ती दूसरे निर्लेपनस्थानमें रहकर निर्लेपितपूर्व समयप्रबद्धोंका अतीत कालविषयक सर्वत्र संकलित हुआ यह काल पूर्वोक्त जघन्य स्थानसे सम्बन्ध रखनेवाले निर्लेपनकालसे विशेष अधिक है ।

शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है । अर्थात् असंख्यात पल्योपमोंके प्रथम वर्गमूलप्रमाण यहाँके एक गुणहानिस्थानान्तरको विरलित करके उसे जघन्य निर्लेपनस्थानके कालके समान खण्ड करके देयरूपसे देनेपर वहाँ जो काल एक अंकके प्रति प्राप्त हो उतना दूसरे निर्लेपनस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला यह निर्लेपनकाल विशेष अधिक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* इस विधिसे क्रमसे जाते हुए पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थानोंके जानेपर वहाँ अन्तिम निर्लेपनस्थानका प्राप्त हुआ काल दूना होता है ।

§ ५०६. इसी प्रकार दो समय अधिक, तीन समय अधिक आदिके क्रमसे निर्लेपनकाल अनन्तर उपनिधाकी अपेक्षा विशेष अधिक होकर जाता हुआ परम्परोपनिधाकी अपेक्षा पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निर्लेपनस्थानोंके जानेपर वहाँ प्राप्त निर्लेपनस्थानका काल जघन्य निर्लेपनस्थानके कालसे दूना हो जाता है, क्योंकि पूर्वोक्त गुणहानिप्रमाण विरलन करनेपर वहाँ समस्त अंकोंके प्रति प्राप्त कालका यहाँ प्रवेश देखा जाता है । आगे फिर भी इसी क्रमसे पुनः-पुनः उत्पन्न हुए द्विगुणवृद्धिस्थानको अवस्थित गुणहानिके विरलनके द्वारा खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डप्रमाण कालको विशेष अधिक करके तब तक ले जाना चाहिए जब जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धियाँ जाकर वहाँ प्राप्त हुई वृद्धिमें यवमध्यस्वरूपसे निर्लेपनकाल उत्पन्न

णिल्लेवणकालो समुप्पण्णो त्ति। एदं च जवमज्झट्ठाणमुप्पज्जमाणं णिल्लेवणट्ठाणसयलद्धाणस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव गंतूण समुप्पण्णमिदि जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

* ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं ।

§ ५०७. आदीदो प्पहुडि कमवड्ढीए जाव एद्दूरं ताव आगंतूण पुणो एत्तो उवरि कमहाणीए गमणं पेक्खिदूणेत्थ जवमज्झववएसो पयट्टाविदो। तदो णिल्लेवणट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे असंखेज्ज-दुगुणवड्ढिअद्धाणसमण्णिदे जवमज्झं होदूण पुणो जवमज्झणिल्लेवणट्ठाणकालादो उवरिमणिल्ले-वणट्ठाणकालो हायमाणो गच्छदि जाव हेट्ठिमद्धाणादो असंखेज्जगुणमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण उक्कस्सणिल्लेवणट्ठाणम्मि णिल्लेविदपुव्वाणं समयपबद्धाणं णिल्लेवणकालो पयदजवमज्झपरूव-णाए चरिमवियप्पो जादो त्ति। सव्वेसु च ट्ठाणेसु पादेक्कमदीदकालस्सासंखेज्जदिभागमेत्तो चेव णिल्लेवणकालो समुवलद्धो दट्ठव्वो। सेसासेसविसेसपरूवणा जाणिय कायव्वा। संपहि एत्थ जवमज्झादो हेट्ठिमोवरिमणाणागुणहाणिसलागाणं पमाणविसेसावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

* णाणादुगुणहाणिट्ठाणंतराणि पलिदोवमच्छेदणाणमसंखेज्जदिभागो ।

§ ५०८. एयगुणहाणिट्ठाणंतरेण असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणेण सयलणिल्ले-वणट्ठाणद्धाणे ओवट्टिदे णाणागुणहाणिसलागाओ आगच्छंति। तासिं च पमाणं पलिदोवमद्धछेद-णयाणमसंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होइ। कुदो एदमवगम्मदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। संपहि एवं

होता है। और यह यवमध्यस्थान उत्पन्न होता हुआ निर्लेपनस्थानसम्बन्धी स्थानोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ही जाकर उत्पन्न हुआ है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

* इस विधिसे निर्लेपनस्थानोंके असंख्यातवें भागपर यवमध्य होता है।

§ ५०७. प्रारम्भसे लेकर क्रमवृद्धिपूर्वक सर्वप्रथम यहाँ तक आकर पुनः इससे आगे क्रमसे होनेवाली हानिको देखकर यहाँ यवमध्य संज्ञा रखनी चाहिए। इसलिए निर्लेपनस्थानोंके असंख्यातवें भागमें असंख्यात द्विगुणवृद्धिस्थानोंसे युक्त मध्यमें यवमध्य होकर पुनः यवमध्य निर्लेपन-स्थानके कालसे उपरिम निर्लेपनकाल घटता हुआ तबतक जाता है जब जाकर अधस्तन स्थानसे असंख्यातगुणे स्थान आगे जाकर उत्कृष्ट निर्लेपनस्थानमें जिनका पहले निर्लेपन किया है ऐसे समयप्रबद्धोंका प्रकृत यवमध्य प्ररूपणाके अन्तिम विकल्परूप निर्लेपनकाल हो जाता है। इस प्रकार और सब स्थानोंमें प्रत्येक अतीत कालका असंख्यातवां भागप्रमाण हो निर्लेपनकाल उपलब्ध होता है ऐसा जानना चाहिए। शेष समस्त विशेषोंकी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिए। अब यहाँपर यवमध्यसे अधस्तन और उपरिम नाना गुणहानिशलाकाओंके प्रमाणविशेषका अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* नाना द्विगुणगुणहानिस्थानान्तर पल्योपमके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ ५०८. असंख्यात पल्योपमके प्रथम वर्गमूलोंके प्रमाणस्वरूप एक गुणहानिस्थानान्तरसे समस्त निर्लेपनस्थानोंके अध्वानके भाजित करनेपर नाना गुणहानिशलाकाएँ आ जाती हैं। उनका प्रमाण पल्योपमके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

परिच्छिण्णपमाणाहिं णाणागुणहाणिसलागाहिं णिल्लेवणट्ठाणसयलद्धाणे ओवट्टिदे एयगुणहाणिट्ठाणंतरपमाणमागच्छदि त्ति घेत्तव्वं।

* णाणागुणहाणिट्ठाणंतराणि थोवाणि।

§ ५०९. सुगमं।

* एयगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं।

§ ५१०. को गुणगारो ? असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि; हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्मि ओवट्टिदे तहाविहगुणगारसमुप्पत्तिदंसणादो। एसा सव्वा वि परूवणा समयपबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणि अस्सियूण परूविदा। एवं चेव भवबद्धाणं पि णिल्लेवणट्ठाणाणि पवाइज्जंतोवएसभेदमस्सियूण णेदव्वाणि विसेसाभावादो। णवरि समयपबद्धस्स जहण्णणिल्लेवणट्ठाणादो उवरि असंखेज्जाओ ट्ठिदीओ अब्भुस्सरियूण भवबद्धाणं जहण्णणिल्लेवणट्ठाणं होदि त्ति। तत्तो प्पहुडि पुव्वुत्ता जवमज्झपरूवणा कालविसया णेदव्वा; जम्हि चेव उद्देसे समयपबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं जवमज्झं जादं तम्हि चेव भवबद्धाणि णिल्लेवणट्ठाणाणं पि जवमज्झं होदि त्ति घेत्तव्वं। कुदो एदं परिच्छिज्जदे ? उवरि भण्णिस्समाणचुण्णिसुत्तादो। एवमेत्तिएण पबंधेण भवबद्ध-समयपबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं सरूवं जाणाविय संपहि एदेसु णिल्लेवणट्ठाणेसु णिल्लेविज्जमाणभव-समयपबद्ध-

---

अब इस प्रकार जिनका प्रमाण अवगत कर लिया है ऐसी नाना गुणहानिशलाकाओंके द्वारा निर्लेपनस्थानके सकल अध्वानके भाजित करनेपर एक गुणहानिस्थानान्तरका प्रमाण प्राप्त होता है यह ग्रहण करना चाहिए।

* नाना गुणहानिस्थानान्तर स्तोक हैं।

§ ५०९. यह सूत्र सुगम है।

* उनसे एक गुणहानिस्थानान्तर असंख्यातगुणे हैं।

§ ५१०. शंका—गुणकारका प्रमाण कितना है ?

समाधान—पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण गुणकारका प्रमाण है, क्योंकि अधस्तन राशिसे उपरिम राशिके भाजित करनेपर उस प्रकारके गुणकारकी उत्पत्ति देखी जाती है।

यह सब प्ररूपणा समयप्रबद्ध निर्लेपनस्थानोंका आलम्बन लेकर की है। इसी प्रकार भवबद्धोंके निर्लेपनस्थानोंकी भी प्ररूपणा प्रवाह्यमान उपदेशका अवलम्बन लेकर जाननी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई भेद नहीं है। इतनी विशेषता है कि समयप्रबद्धके जघन्य निर्लेपनस्थानसे ऊपर असंख्यात स्थितियोंको उत्सारित करके भवबद्धोंका जघन्य निर्लेपनस्थान होता है। पुनः उससे आगे कालविषयक पूर्वोक्त यवमध्यप्ररूपणा ले जानी चाहिए। जिस स्थानपर समयप्रबद्ध निर्लेपनस्थानोंका यवमध्य प्राप्त होता है उसी स्थानपर भवबद्ध निर्लेपनस्थानोंका भी यवमध्य प्राप्त होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—आगे कहे जानेवाले चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है।

इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा भवबद्ध और समयप्रबद्ध निर्लेपनस्थानोंके स्वरूपका ज्ञान कराकर अब इन निर्लेप्यमानस्थानोंमें निर्लेप्यमान भवबद्धशेषोंकी और समयप्रबद्धशेषोंकी चार

सेसयाणं चदुहिं भासगाहाहिं विसेसिऊण परूवणं कुणमाणो तत्थ ताव पढमभासगाहाए अत्थ-विहासणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

* एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे एक्कस्स वा समयपबद्धस्स सेसयं दोण्हं वा तिण्हं वा उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं ।

§ ५११. 'कदि वा एगसमयेणेत्ति' एदं मूलगाहाए चरिमावयवमस्सियूण अभवसिद्धिय-पाओग्गविसये पढमभासगाहाए अत्थविहासणे कोरणमाणे भवसिद्धियपाओग्गविसयपरूवणादो णत्थि किंचि णाणत्तमिदि एदेण सुत्तेण जाणाविदं; उहयत्थ वि एगट्ठिदिविसेसेसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धसेसाणमुक्कस्सपक्खेण संभवं पडि विसेसाभावादो ।

* एवं चेव भवबद्धसेसाणि ।

§ ५१२. जहा समयपबद्धसेसयाणि एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि तहा चेव भवबद्धसेसाणि वि होंति त्ति भणिदं होइ । सेसं सुगमं । एवमेत्तियेअत्थे विहासिदे तदो पढमभासगाहाए अत्थविहासा अभवसिद्धिपाओग्गविसये समप्पइ त्ति जाणावणट्ठमुवसंहारवक्कमाह—

* पढमाए गाहाए अत्थो समत्तो भवदि ।

§ ५१३. सुगमं । णवरि एत्थुद्देसे किंचि परूवणाविसेसं पढमभासगाहापडिबद्धमत्थि तमेत्थ

भाष्यगाथाओं द्वारा विशेषरूपसे प्ररूपणा करते हुए यहां सर्वप्रथम प्रथम भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

* एक स्थितिविशेषमें एक समयप्रबद्धका शेष पाया जाता है, दो या तीन समयप्रबद्धोंके शेष पाये जाते हैं । इस विधिसे उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके शेष पाये जाते हैं ।

§ ५११. मूलगाथाके 'कदि वा एगसमयेणेत्ति' इस अन्तिम चरणका आश्रय लेकर अभव्य-सिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें प्रथम भाष्यगाथाका अर्थ करनेपर भव्यसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयकी प्ररूपणासे कुछ भी भेद नहीं है यह इस सूत्र द्वारा ज्ञान कराया गया है, क्योंकि दोनों प्रकारके ही जीवोंके एक स्थितिविशेषमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धशेष उत्कृष्ट पक्षकी अपेक्षा भी सम्भव होनेके प्रति कोई भेद नहीं पाया जाता ।

* इसी प्रकार भवबद्धशेषोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

§ ५१२. जिस प्रकार एक स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धशेष उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण पाये जाते हैं उसी प्रकार भवबद्धशेष भी पाये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । शेष कथन सुगम है । इस प्रकार इतने अर्थकी विभाषा करनेपर अभव्यसिद्धिक जीवके विषयमें प्रथम भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त होती है । इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए उपसंहारस्वरूप सूत्रको कहते हैं ।

* प्रथम भाष्यगाथाका अर्थ समाप्त होता है ।

§ ५१३. यह सूत्र सुगम है । इतनी विशेषता है कि इस स्थानपर प्रथम भाष्यगाथासे

पुव्वावरपरामरसकुसलेहिं चिंतिय़ूण णेदव्वमिदि अत्थसमप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* जवमज्झं कायव्वं विस्सरिदं लिहिदुं ।

§ ५१४. एवं भणंतस्साहिप्पाओ—खवगपाओग्गपरूवणाए अभवसिद्धियपाओग्गपरूवणाए च पढमभासगाहाए अत्थपरूवणं कादूण पुणो तत्थ तेहिं भव-समयपबद्धसमयेहिं एगट्ठिदिविसय-पडिबद्धेहिं णाणाकालसंबंधेण एगादिएगुत्तरकमेण लब्भमाणेहिं समयाविरोहेण जवमज्झं पि कायव्वमत्थि । णवरि तमम्हेहिं लिहिदुं विस्सरिदं छदुमत्थभावेण । तदो तमेत्थ वक्खाणाइरिएहिं चिंतिय णेदव्वमिदि । कधं पुण पुव्वावरपरामरसकुसलस्स सुत्तयारस्स विस्सरणसंभवो त्ति णासंक-णिज्जं, अविस्सरिदसरूवं पि तं जवमज्झं सुबोहं ति कादूण विस्सरणणिभेण सिस्साणमत्थसमप्पणं कुणमाणस्स तद्दोसाणवयारादो । 'विचित्रा शैली सूत्रकाराणाम्' इति न्यायात् । तदो तमेत्थ परम-गुरुसंपदायबलेण वत्तइस्सामो । तं जहा—

एगट्ठिदिविसेसम्मि अदीदे काले एक्कस्स जीवस्स एगेगसमयपबद्धसेसयमच्छिय़ूण तेण सरूवेण जे णिल्लेविदा समयपबद्धा ते थोवा । तेसिं पादेक्कं गहिदसलागाओ अणंताओ होदूण थोवाओ त्ति भणिदं होदि । पुणो दोण्णि दोण्णि समयपबद्धसेसयाणि एगट्ठिदिविसेसे होदूण उदयं कादूण गदा जे समयपबद्धा ते विसेसाहिया । एत्थ विसेसपडिभागो पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-

---

सम्बन्ध रखनेवाला किंचित् प्ररूपणाविशेष है उसे यहाँपर पूर्वापर अर्थका परामर्श करनेमें कुशल जीवोंको विचारकर जान लेना चाहिए। इस प्रकार अर्थकी समाप्ति करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* यहाँपर यवमध्य करना चाहिए । उसे लिखनेका स्मरण नहीं रहा ।

§ ५१४. इस प्रकार कहनेवाले आचार्यका यह अभिप्राय है कि क्षपकके योग्य प्ररूपणामें और अभव्यसिद्धिक जीवोंके योग्य प्ररूपणामें प्रथम भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणा करके पुन: जहाँ एक स्थितिके विषयसे सम्बन्ध रखनेवाले नाना कालोंके सम्बन्धसे एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे प्राप्त होनेवाले भवबद्ध और समयप्रबद्धसम्बन्धी समयोंके द्वारा समयके अविरोधपूर्वक यवमध्य भी करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि छद्मस्थ होनेके कारण उसे लिखनेका हमें स्मरण नहीं रहा। इसलिए उसका यहाँपर व्याख्यानाचार्योंके द्वारा विचार करके कथन करना चाहिए।

शंका—पूर्वापर आगमका परामर्श करनेमें कुशल सूत्रकारका इसका विस्मरण होना कैसे सम्भव है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए क्योंकि वह यवमध्य अविस्मरणस्वरूप होकर भी सुबोध है, ऐसा समझकर मानो उसे भूल गये हों इस प्रकार शिष्योंको अर्थके समर्पण करनेमें कुशल आचार्यपर उक्त दोषका अवतार नहीं होता, अर्थात् उक्त दोष लागू नहीं होता, क्योंकि 'सूत्रकारोंके कथन करनेकी शैली विचित्र अर्थात् अनेक प्रकारकी होती है' ऐसा न्याय है। इसलिए उसका यहाँपर परम गुरुके सम्प्रदायके बलका अवलम्बन लेकर बतलावेंगे। वह जैसे—

अतीत कालविषयक एक स्थितिविशेषमें एक जीवके एक-एक समयप्रबद्धशेष होकर उस रूपसे जो समयप्रबद्ध निर्लेपित हुए हैं वे सबसे थोड़े हैं। उनमेंसे प्रत्येककी ग्रहण की गयी शलाकाएँ अनन्त होकर सबसे थोड़ी हैं यह कहा गया है। पुन: एक स्थितिविशेषमें दो-दो समय-प्रबद्ध उदयको प्राप्त कर जो समयप्रबद्ध गत हो गये वे विशेष अधिक हैं। यहाँपर विशेष लानेके

भागो। एवं तिण्णि-चत्तारिआदिकमेण गंतूण पुणो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसमयपबद्धसेसयाणि एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे अच्छिदूण उदयं कादूण जाणि गदाणि तेसिं गहिदसलागाओ दुगुणाओ। एवं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तदुगुणवड्ढीओ गंतूण तदो जवमज्झं होदि। तत्तो उवरि सव्वत्थ विसेसहीणकमेण गच्छंति जाव सव्वुक्कस्सपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसमयपबद्धसेससलागाहिं एगट्ठिदिविसयाहिं विसेसिदा समयपबद्धा चरिमवियप्पा होदूण पज्जवसिदा त्ति। एवं भवबद्धसेसयाणं पि णेदव्वं ति।

§ ५१५. अथवा एवमेत्थ जवमज्झं कायव्वमिदि अण्णे वक्खाणाइरिया भणंति। तं कधं? एगट्ठिदिविसेसे सेसभावेणच्छिदूण ओकड्डणाए उदयमागंतूण णिल्लेवणभावं गदसमयपबद्धा थोवा। जे दोसु ट्ठिदिविसेसेसु सेसभावेणच्छिदूण ओकड्डणावसेणुदयं कादूण णिल्लेविदा समयपबद्धा ते विसेसाहिया। एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीसु सेसभावेणच्छिदूण उदयं कादूण णिल्लेवणपज्जायं गदाणं सलागाओ दुगुणाओ भवंति। एवं गंतूण तदो जवमज्झं होदूण पुणो विसेसहाणीए गच्छंति जाव चरिमवियप्पो त्ति। ण समीचीणमेदं वक्खाणं, एगट्ठिदिविसयाणं समयपबद्धसेसयाणं जवमज्झपरूवणावसरे णाणाट्ठिदिविसयाणं तेसिं जवमज्झपरूवणाए असंबद्धत्तादो। एवंविहाए परूवणाए वट्टमाणादीदकालविसयाए विदियभासगाहासुत्ते णिबद्धत्तदंसणादो च। तम्हा पुव्वुत्तो चेव जवमज्झविसेसो एत्थ सुत्तसूचिदो त्ति घेत्तव्वं।

लिए प्रतिभाग पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार तीन, चार आदिके क्रमसे जाकर पुनः पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण जो समयप्रबद्धशेष एक स्थितिविशेषमें रहकर और उदयको प्राप्त होकर गत हो जाते हैं उनकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ दूनी होती हैं। इस प्रकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धियाँ जाकर यवमध्य होता है। पुनः इससे आगे सर्वत्र विशेष हीनके क्रमसे तब तक जाते हैं जब जाकर सबसे उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धशेष-सम्बन्धी शलाकाओंसे युक्त एक स्थितिविषयक समयप्रबद्ध अन्तिम विकल्परूपसे अन्तको प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार भवबद्धशेषोंका भी कथन करना चाहिए।

§ ५१५. अथवा इस प्रकार यहाँपर यवमध्य करना चाहिए ऐसा अन्य आचार्य व्याख्यान करते हैं। वह कैसे? एक स्थितिविशेषमें शेषरूपसे रहकर अपकर्षणके द्वारा उदयको प्राप्त होकर निर्लेपनभावको प्राप्त हुए समयप्रबद्ध सबसे थोड़े हैं। जो दो स्थितिविशेषोंमें शेषरूपसे रहकर अपकर्षणके वशसे उदयको प्राप्त होकर निर्लेपनभावको प्राप्त हुए समयप्रबद्ध हैं वे विशेष अधिक हैं। इस प्रकार जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें शेषरूपसे रहकर उदयको प्राप्त होकर निर्लेपनपर्यायको प्राप्त हुई शलाकाएँ दूनी होती हैं। इस प्रकार जाकर यवमध्य होकर पुनः विशेष हानिके क्रमसे अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक जाते हैं। किन्तु यह व्याख्यान समीचीन नहीं है, क्योंकि एक स्थितिविषयक समयप्रबद्धशेषोंके यवमध्यकी प्ररूपणाके अवसरपर नाना स्थितिविषयक उन समयप्रबद्धशेषोंकी प्ररूपणा करना असम्बद्ध है, क्योंकि वर्तमान, अतीत कालविषयक इस प्रकारकी प्ररूपणा दूसरे भाष्यगाथासूत्रमें निबद्ध देखी जाती है। इसलिए पूर्वोक्त यवमध्यविशेष ही यहाँपर सूत्रसूचित ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रथम भाष्यगाथामें एक स्थितिको आलम्बन बनाकर एक या एकसे अधिक समयप्रबद्धशेषोंकी अपेक्षा यवमध्य प्ररूपणा की गयी है। किन्तु व्याख्यानाचार्य एक या एकसे अधिक स्थितिविशेषोंको आलम्बन बना समयप्रबद्धशेषोंकी अपेक्षा यवमध्यप्ररूपणा इस भाष्यगाथाके

§ ५१६. संपहि जहावसरपत्ताए विदियभासगाहाए अत्थविहासणमभवसिद्धियपाओग्गविसये कुणमाणो उवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

✽ विदियाए भासगाहाए अत्थो जहावसरपत्तो ।

§ ५१७. विहासियव्वो त्ति वक्कसेसो । सेसं सुगमं ।

✽ तं जहा ।

§ ५१८. सुगमं ।

✽ समयपबद्धसेसयमेक्किस्से ट्ठिदीए होज्ज, दोसु तीसु वा । उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेसु ।

§ ५१९. गयत्थमेदं सुत्तं, भवसिद्धियपाओग्गविसयपरूवणाए विहासियत्तादो। णवरि भवसिद्धियपाओग्गविसये उक्कस्सेण वासपुधत्तमेत्तट्ठिदीसु समयपबद्धसेसयं जादं । एत्थ पुण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीसु समयपबद्धसेसयमुक्कस्सपक्खेण लब्भदि त्ति एसो एत्थतणो विसेसो सुत्तणिद्दिट्ठो दट्ठव्वो। एगसमयपबद्धसेसयं च पहाणीकरिय सुत्तमेदं पयट्टं । णाणासमयपबद्धसेसाणं पहाणत्ते जहण्णदो वि तेसिमेक्किस्से ट्ठिदीए अवट्ठाणासंभवादो । संपहि एदेसिं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिविसेसाणं णिल्लेवणट्ठाणेहिंतो थोवभावपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

आधारसे सूचित करते हैं । जो प्रकृत भाष्यगाथाकी अपेक्षा घटित नहीं होती ऐसा यहाँ टीकाकारका अभिप्राय समझना चाहिए । शेष कथन टीकासे ही स्पष्ट है ।

§ ५१६. अब यथावसरप्राप्त दूसरी भाष्यगाथाको अर्थविभाषा अभव्यसिद्धिकप्रायोग्य जीवोंके विषयमें करते हुए आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

✽ अब दूसरी भाष्यगाथाका अर्थ अवसरप्राप्त है ।

§ ५१७. 'उसकी विभाषा करनी चाहिए' इतना शेष वाक्य युक्त कर लेना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

✽ वह जैसे ।

§ ५१८. यह सूत्र सुगम है ।

✽ समयप्रबद्धशेष एक स्थितिमें हो सकता है, दो या तीन स्थितियोंमें हो सकता है । इस प्रकार एक-एक अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट पदकी अपेक्षा पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें हो सकता है ।

§ ५१९. यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि भवसिद्धिकप्रायोग्यविषयक प्ररूपणाके समय इसकी विभाषा कर आये हैं । इतनी विशेषता है कि भवसिद्धिकप्रायोग्य जीवोंके विषयमें उत्कृष्टसे वर्षपृथक्त्वप्रमाण स्थितियोंमें समयप्रबद्धशेष प्राप्त होता है । परन्तु यहाँपर अर्थात् अभव्योंमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें समयप्रबद्धशेष उत्कृष्ट पक्षकी अपेक्षा प्राप्त होता है इस प्रकार यह यहाँ सम्बन्धी विशेष सूत्रमें निर्दिष्ट जानना चाहिए । किन्तु एक समयप्रबद्धशेषको प्रधान करके यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है, क्योंकि नाना समयप्रबद्धशेषोंकी प्रधानतामें जघन्यसे भी उनका एक स्थितिमें अवस्थान असम्भव है । अब पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण इन स्थितिविशेषोंके निर्लेपनस्थानोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* णिल्लेवणट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे समयपबद्धसेसयाणि ।

§ ५२०. णाणेगसमयपबद्धसेसएहिं अविरहिदाओ सव्वाओ ट्ठिदीओ संपिडिदाओ णिल्लेवण-ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव, ण तत्तो अविरित्ताओ त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। संपधि एदेणेव संबंधेण एगादि-एगुत्तरेसु ट्ठिदिविसेसेसु लद्धावट्ठाणाणं णाणासमयपबद्धसेसयाणमणंतरपरं-परोवणिधाहिं सेढिपरूवणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* समयपबद्धसेसयाणि एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे जाणि ताणि थोवाणि ।

§ ५२१. पुव्वुत्तणिल्लेवणट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिविसेसेसु णाणेगसमयपबद्धसेसयेहिं अविरहिदेसु तत्थ एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे केत्तियाणि वि होदूण ट्ठिदाणि समयपबद्धसेसाणि अत्थि तेंसि गहिदसलागाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण सव्वत्थोवा त्ति वुत्तं होइ।

* दोसु ट्ठिदिविसेसेसु विसेसाहियाणि ।

§ ५२२. दोसु ट्ठिदिविसेसेसु जाणि सेसभावेण समवट्ठिदाणि तेंसि गहिदसलागाओ पुव्विल्ल-सलागाहिंतो विसेसाहियाओ भवंति। केत्तियमेत्तो विसेसो ? हेट्ठिमरासिस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो। तस्स को पडिभागो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो; एत्थतणएगदुगुणवड्डिअद्धाणस्स तप्पमाणत्तादो।

---

* निर्लेपनस्थानोंके असंख्यातवें भागमें समयप्रबद्धशेष होते हैं।

§ ५२०. नाना समयप्रबद्धशेष और एक समयप्रबद्धशेषसे रहित सब स्थितियाँ मिलाकर निर्लेपनस्थानके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होती हैं। उनसे अधिक नहीं होतीं यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इसी सम्बन्धसे एकसे लेकर एक-एक अधिकरूपसे स्थित स्थितिविशेषोंमें जिन्होंने अवस्थान प्राप्त कर लिया है ऐसे नाना समयप्रबद्धशेषोंकी अनन्तरोपनिधा और परम्परोप-निधाकी अपेक्षा श्रेणिकी प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* एक स्थितिविशेषमें जो समयप्रबद्धशेष पाये जाते हैं वे सबसे थोड़े हैं।

§ ५२१. पूर्वोक्त निर्लेपनस्थानोंके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविशेषोंमें नाना समय-प्रबद्धशेषों और एक समयप्रबद्धशेषसे युक्त स्थानोंमेंसे एक स्थितिविशेषमें जितने भी समयप्रबद्ध-शेष अवस्थित रहते हैं उनकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर सबसे थोड़ी होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* दो स्थितिविशेषोंमें पाये जानेवाले समयप्रबद्धशेष विशेष अधिक हैं।

§ ५२२. दो स्थितिविशेषोंमें जो समयप्रबद्ध शेषरूपसे अवस्थित हैं उनकी ग्रहण की गयी शलाकाएँ पहलेकी शलाकाओंकी अपेक्षा विशेष अधिक होती हैं।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—अधस्तन राशिका असंख्यातवाँ भाग है।

शंका—उसका प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—उसका प्रतिभाग पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि यहाँका द्विगुणवृद्धि अध्वान तत्प्रमाण है।

* तिसु ट्ठिदिविसेसेसु विसेसाहियाणि ।

§ ५२३. तिसु ट्ठिदिविसेसेसु होदूण जाणि समयपबद्धसेसयाणि समवट्ठिदाणि ताणि पुव्विल्लेहिंतो विसेसाहियाणि । विसेसपमाणमेत्थ वि पुव्वं व वत्तव्वं ।

* पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे जवमज्झं ।

§ ५२४. एवमणंतराणंतरादो अवट्ठिदेगेगविसेसवड्ढीए गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीओ आधारं कादूण ट्ठिदसमयपबद्धसेसयाणि घेत्तूण दुगुणवड्ढी होदि । एवंविहाणि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तदुगुणवड्ढिट्ठाणंतराणि गंतूण तदित्थगुणवड्ढीए चरिमवियप्पम्मि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिविसेसेसु वट्टमाणाणं समयपबद्धसेसाणं सलागाओ जवमज्झसरूवेण दट्ठव्वाओ । तदो जवमज्झादो उवरि विसेसहाणीए असंखेज्जगुणहाणीओ गंतूण चरिमवियप्पे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिविसेसेसु सव्वुक्कस्सेसु वट्टमाणाणं समयपबद्धसेसयाणं सलागाओ असंखेज्जगुणहीणाओ होदूण पयदपरूवणाए पज्जवसाणभावेण णिद्दिट्ठाओ । एत्थ जवमज्झादो हेट्ठिमोवरिमणाणागुणहाणिट्ठाणंतरसलागाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होंति । एयगुणहाणिट्ठाणंतरं पि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होइ । होंतं पि णाणागुणहाणिट्ठाणंतरसलागाहिंतो असंखेज्जगुणमेव होदि त्ति परूवणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

* णाणंतराणि थोवाणि ।

---

* तीन स्थितिविशेषोंमें पाये जानेवाले समयप्रबद्धशेष विशेष अधिक हैं ।

§ ५२३. तीन स्थितिविशेषोंमें रहकर जो स्थितिविशेष अवस्थित हैं वे पूर्वके स्थितिविशेषोंकी अपेक्षा विशेष अधिक हैं । यहाँपर विशेषका प्रमाण पहलेके समान कहना चाहिए ।

* इस विधिसे आगे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागमें समयप्रबद्धशेषोंका यवमध्य प्राप्त होता है ।

§ ५२४. इस प्रकार अनन्तर तदनन्तररूपसे स्थित एक-एक विशेषकी वृद्धि होनेपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण अध्वानमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंको आधार करके जो समयप्रबद्धशेष अवस्थित हैं उन्हें ग्रहण कर द्विगुणवृद्धि होती है । इस प्रकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धिस्थानान्तर जाकर वहाँ प्राप्त द्विगुणवृद्धिके अन्तिम भेदमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविशेषोंमें विद्यमान समयप्रबद्धशेषोंकी शलाकाएँ यवमध्यरूपसे जाननी चाहिए । तत्पश्चात् यवमध्यके ऊपर विशेष हानि द्वारा असंख्यात गुणहानियाँ जाकर अन्तिम भेदमें प्राप्त सबसे उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविशेषोंमें विद्यमान समयप्रबद्धशेषोंकी शलाकाएँ असंख्यात गुणहानिरूप होकर प्रकृत प्ररूपणामें पर्यवसानरूपसे निर्दिष्ट की गयी हैं । यहाँपर यवमध्यसे पहलेकी और आगेकी नाना गुणहानिस्थानान्तरशलाकाएँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं । और एक गुणहानिस्थानान्तर भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है । ऐसा होते हुए भी नाना गुणहानिशलाकाओंसे असंख्यातगुणा ही होता है इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

* नाना गुणहानिस्थानान्तर अल्प हैं ।

§ ५२५. कुदो ? पलिदोवमद्धच्छेदणयाणमसंखेज्जदिभागपमाणत्तादो।

*** एगंतरमसंखेज्जगुणं।**

§ ५२६. कुदो ? असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणत्तादो। एवं समयपबद्धसेसयाणि अस्सियूण विदियभासगाहाए अत्थपरूवणं काढूण संपहि भवबद्धसेसयेसु वि एसा चेव परूवणा णिरवसेसमणुगंतव्वा त्ति जाणावेमाणो इदमाह—

*** एवं भवबद्धसेसयाणि।**

§ ५२७. जहा समयपबद्धसेसयाणि ट्ठिदीओ आधारं कादूण भणिदाणि एवं चेव भवबद्धसेसयाणि वि णेदव्वाणि, पयदपरूवणाए उभयत्थ णाणत्तेण विणा पवुत्तिदंसणादो त्ति भणिदं होदि। एत्थ जवमज्झपरूवणा खवगपाओग्गपरूवणाए कीरमाणाए तदियभासगाहासुत्त-संबंधेण विहासिदो। एत्थ पुण अभवसिद्धियपाओग्गपरूवणाए विदियभासगाहाविहासणावसरे चेव विहासिदा। एवं विहासेमाणस्स सुत्तयारस्स को अहिप्पाओ त्ति चे ? वुच्चदे—एसो अत्थविसेसो दोसु वि गाहासुत्तेसु मुत्तकंठमणुवइट्ठो। किंतु अत्थसंबंधेण विहासिज्जदे, तदो तत्थ वा एत्थ वा विहासिदे दोसो णत्थि त्ति एदेणाहिप्पाएण विदियभासगाहासंबंधेणेवेत्थ पयदत्थविहासा आढत्ता। तदो ण पुव्वावरविरोहदोससंभवो त्ति। एवमेत्तिये अत्थे विहासिदे तदो विदियभासगाहाए अत्थविहासा समप्पइ त्ति जाणावणट्ठमुवसंहारवक्कमाह—

---

§ ५२५. क्योंकि वे पल्योपमके अर्धच्छेदोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

*** उनसे एक गुणहानिस्थानान्तर असंख्यातगुणा है।**

§ ५२६. क्योंकि वह असंख्यात पल्योपमोंके प्रथम वर्गमूलप्रमाण है। इस प्रकार समयप्रबद्ध-शेषोंका आश्रय लेकर दूसरी भाष्यगाथाके अर्थकी प्ररूपणा करके अब भवबद्धशेषोंमें भी यही प्ररूपणा पूरी जाननी चाहिए इस बातका ज्ञान कराते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इसी प्रकार भवबद्धशेषोंकी प्ररूपणा करनी चाहिए।**

§ ५२७. जिस प्रकार स्थितियोंको आधार करके समयप्रबद्धशेषोंकी प्ररूपणा की इसी प्रकार भवबद्धशेषोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि दोनों जगह भेद किये बिना प्रकृत प्ररूपणाकी प्रवृत्ति देखी जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर यवमध्यप्ररूपणा क्षपक-प्रायोग्य प्ररूपणाके करनेपर तीसरी भाष्यगाथासूत्रके सम्बन्धसे विभाषित की। परन्तु यहाँपर अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य प्ररूपणामें दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषाके समय ही कर आये हैं।

शंका—इस प्रकार विभाषा करनेवाले सूत्रकारका क्या अभिप्राय है ?

समाधान—आगे उसका समाधान करते हैं—यह अर्थविशेष दोनों ही गाथासूत्रोंमें स्पष्टरूपसे नहीं कहा गया है। किन्तु अर्थके सम्बन्धसे विभाषित किया जाता है, इसलिए उस भाष्यगाथामें या इस भाष्यगाथामें विभाषा करनेमें दोष नहीं है, इसलिए दूसरी भाष्यगाथाके सम्बन्धसे यहाँपर प्रकृत अर्थकी विभाषा आरम्भ की गयी है, इसलिए पूर्वापर विरोधरूप दोष सम्भव नहीं है। इस प्रकार इतने अर्थके विभाषित करनेपर दूसरी भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा समाप्त होती है इसका ज्ञान करानेके लिए उपसंहारवाक्यको कहते हैं—

* बिदियाए गाहाए अत्थो समत्तो भवदि ।

* तदियाए गाहाए अत्थो ।

§ ५२८. विदियभासगाहाविहासणाणंतरमेत्तो तदियाए भासगाहाए अत्थो विहासिज्जदे त्ति वुत्तं होइ ।

* असामण्णाओ ट्ठिदीओ एक्को वा दो वा तिण्णि वा एवमणुबद्धाओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ ५२९. जम्हि ट्ठिदिविसेसे समयपबद्धसेसयं वा भवबद्धसेसयं वा णत्थि सा ट्ठिदी असामण्णा त्ति भण्णदि । जत्थ पुण तदुभयं संभवइ सा सामण्णट्ठिदी णाम । तत्थ असामण्णट्ठिदीणं पमाणावहारणट्ठमेसा तदियभासगाहाए विहासा समोइण्णा । तं जहा—जहण्णेण उभयदो सामण्णट्ठिदीहिं णिरुद्धा एक्का चेव असामण्णट्ठिदी होदूण लब्भइ । एवं दो-तिण्णिआदिकमेण णिरंतरं गंतूण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ असामण्णट्ठिदीओ अण्णोण्णाणुगयाओ होंति, अभवसिद्धियपाओग्गविसये तहाविहसंभवस्स परिप्फुडमुवलंभादो । जहा खवगपाओग्गपरूवणाए असामण्णट्ठिदीणमप्पाबहुअमणंतरपरंपरोवणिधाहि भणिदं 'एक्केक्केण असामण्णाओ थोवाओ' इच्चादिकमेण तहा एत्थ वि असामण्णट्ठिदिसलागाहि जवमज्झगब्भमप्पाबहुअं णेदव्वं; अण्णहा तव्विसयणिण्णयाणुप्पत्तीदो । णवरि एत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तअसामण्णट्ठिदिसलागाहि दुगुणवड्ढी होदि । खवगसेढीए पुण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं

---

* दूसरी भाष्यगाथाका अर्थ समाप्त होता है ।

* अब तीसरी भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करते हैं ।

§ ५२८. दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषाके अनन्तर आगे तीसरी भाष्यगाथाका अर्थ विभाषित किया जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* असामान्य स्थितियाँ एक, दो अथवा तीन होती हैं । इस प्रकार क्रमसे एक-एक अधिक होकर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं ।

§ ५२९. जिस स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धशेष अथवा भवबद्धशेष नहीं होता वह स्थिति असामान्य कही जाती है । किन्तु जिस स्थितिविशेषमें सामान्य और असामान्य दोनों स्थितियाँ सम्भव हैं वह सामान्य स्थिति कहलाती है । उनमेंसे असामान्य स्थितियोंके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए यह तीसरी भाष्यगाथाकी विभाषा अवतीर्ण हुई है । वह जैसे—जघन्यसे दोनों ओरसे सामान्य स्थितियोंके द्वारा निरुद्ध एक ही असामान्य स्थिति होकर प्राप्त होती है । इसी प्रकार दो, तीन आदिके क्रमसे निरन्तर जाकर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण असामान्य स्थितियाँ एक-दूसरेसे सम्बद्ध होकर प्राप्त होती हैं, क्योंकि अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें उस प्रकारका होना सम्भव है यह स्पष्टरूपसे उपलब्ध होता है । जिस प्रकार क्षपकोंके योग्य प्ररूपणा करते समय असामान्य स्थितियोंका अल्पबहुत्व अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधाकी अपेक्षा 'एक-एककी अपेक्षा असामान्य स्थितियाँ सबसे थोड़ी होती हैं' इत्यादि क्रमसे पूर्वमें कह आये हैं उसी प्रकार यहाँपर भी असामान्य स्थितियोंकी शलाका द्वारा यवमध्यगर्भ अल्पबहुत्व जानना चाहिए, अन्यथा तद्विषयक निर्णय नहीं हो सकता । इतनी विशेषता है कि यहाँपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण असामान्य स्थितियोंकी शलाकाओंके द्वारा द्विगुणवृद्धि होती

गंतूण दुगुणवड्ढी जादा। तत्थ जवमज्झादो हेट्ठिमोवरिमद्धाणपमाणमावलियाए असंखेज्जदिभागो, एत्थ पुण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। एवं णाणागुणहाणिसलागाणं पि पमाणविसये भेदो वत्तव्वो। तदो तदियभासगाहाए अत्थविहासा समप्पदि त्ति जाणावेमाणो उवसंहारवक्कमुत्तरं भणइ—

* एवं तदियाए गाहाए अत्थो समत्तो।

* एत्तो चउत्थीए गाहा अत्थो।

§ ५३०. असामण्णट्ठिदीहिं अंतरिदाणं सामण्णट्ठिदीणमियत्तावहारणट्ठं चउत्थीए भासगाहाए अत्थो एण्हिमहिकीरदि त्ति वुत्तं होदि।

* सामण्णट्ठिदीओ एक्कंतरिदाओ थोवाओ।

§ ५३१. एवं भणिदे दोसु वि पासेसु एगेगअसामण्णट्ठिदी होदूण पुणो तासिं मज्झे जत्तियाओ सामण्णट्ठिदीओ अच्छिदाओ तासिं सव्वासिं पि एगा सलागा घेत्तव्वा। पुणो वि एवं चेव दोसु वि पासेसु एगेगा चेव असामण्णट्ठिदी होदूण पुणो तासिं मज्झे जत्तियाओ सामण्णट्ठिदीओ तासिं सव्वासिं विदिया सलागा गहेयव्वा। एवं सव्वत्थ लद्धसलागाओ घेत्तूण एक्कदो मेलाविदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ सलागाओ होंति। एदाओ थोवाओ, उवरिमवियप्पपडिबद्धसलागाणमेत्तो बहुत्तदंसणादो।

है। परन्तु क्षपकश्रेणिमें आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर द्विगुणवृद्धि प्राप्त होती है, क्योंकि वहाँपर यवमध्यसे अधस्तन और उपरिम स्थानोंका प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागरूप होता है। परन्तु यहाँपर वह पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। इसी प्रकार नाना गुणहानि शलाकाओंका भी प्रमाणविषयक भेदका कथन करना चाहिए। तत्पश्चात् तीसरी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त होती है इसका ज्ञान कराते हुए आगे उपसंहारसूत्रको कहते हैं—

* इस प्रकार तीसरी भाष्यगाथाका अर्थ समाप्त हुआ।

* आगे चौथी भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा करते हैं।

§ ५३०. असामान्य स्थितियोंसे अन्तरित सामान्य स्थितियोंके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए चौथी भाष्यगाथाका अर्थ इस समय अधिकृत है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* एक-एक असामान्य स्थितिसे अन्तरित सामान्य स्थितियाँ सबसे थोड़ी हैं।

§ ५३१. ऐसा कहनेपर दोनों ही पार्श्वोंमें एक-एक असामान्य स्थिति होकर पुनः उनके मध्यमें जितनी सामान्य स्थितियाँ अवस्थित हैं उन सबकी एक शलाका ग्रहण करनी चाहिए। फिर भी इसी प्रकार दोनों ही पार्श्वोंमें एक-एक असामान्य स्थिति होकर पुनः उनके मध्यमें जितनी सामान्य स्थितियाँ होती हैं उन सबकी दूसरी शलाका ग्रहण करनी चाहिए। इसी प्रकार सर्वत्र प्राप्त हुई शलाकाओंको ग्रहण कर एक साथ मिलानेपर वे सब पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं। ये सबसे थोड़ी होती हैं, क्योंकि उपरिम भेदोंसे सम्बन्ध रखनेवाली शलाकाएँ इनसे बहुत देखी जाती हैं।

* दुअंतरिदा विसेसाहिया ।

§ ५३२. एवं भणिदे दोहि दोहि असामण्णट्ठिदीहि अंतरिदाओ जाओ सामण्णट्ठिदीओ तासि सव्वत्थ गहिदसलागाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण पुव्विल्लसलागाहिंतो विसेसाहियाओ त्ति घेत्तव्वं। विसेसपमाणमेत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडं, एत्थतणगुणहाणिअद्धाणस्स तप्पमाणत्तादो।

* एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे जवमज्झं[1] ।

§ ५३३. ···मोत्तूण पुणो एक्क-दो-तिण्णि-चत्तारिआदिअसामण्णट्ठिदीहि दोसु वि पासेसु अंतरिदाणं मज्झे समुवलब्भमाणाणं सामण्णट्ठिदीणं सलागाओ घेत्तूण विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताहि असामण्णट्ठिदीहि अंतरिदाणं सामण्णट्ठिदीणं सलागाओ पढमवियप्पसलागाहिंतो दुगुणमेत्तीओ जादाओ त्ति। एवमेदेण कमेण असंखेज्जासु दुगुणवड्ढीसु गदासु तदो दोसु वि पासेसु पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागेहिंतो उवरिमट्ठिदीहि अंतरिदसामण्ण-ट्ठिदीणं सलागाओ घेत्तूण जवमज्झमुप्पज्जदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एत्थ जवमज्झादो हेट्ठा उवरि च पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव णाणागुणवड्ढि-हाणिसलागाओ होंति। एत्थ णाणागुणहाणिसलागाओ थोवाओ, एयगुणवड्ढिहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं होदि त्ति इममत्थ-विसेसं जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

---

* दो-दो असामान्य स्थितियोंसे अन्तरित सामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक होती हैं।

§ ५३२. ऐसा कहनेपर दो-दो असामान्य स्थितियोंसे अन्तरित जो सामान्य स्थितियाँ पायी जाती हैं, उनकी सर्वत्र ग्रहण की गयी शलाकाएँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर पूर्वकी शलाकाओंसे विशेष अधिक होती हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। यहाँपर विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागसे भाजित एक भागप्रमाण है, क्योंकि यहाँ सम्बन्धी गुणहानिअध्वान तत्प्रमाण है।

* इस प्रकार क्रमसे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागके अन्तमें यवमध्य होता है।

§ ५३३. ·········को छोड़कर पुनः एक, दो, तीन और चार आदि असामान्य स्थितियोंसे दोनों ही पार्श्व भागोंमें अन्तरित होकर मध्यमें समुपलभ्यमान सामान्य स्थितियोंकी शलाकाओंको ग्रहण कर तब तक ले जाना चाहिए जब जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण असामान्य स्थितियोंसे अन्तरित सामान्य स्थितियोंकी शलाकाएँ प्रथम विकल्पसम्बन्धी शलाकाओंसे दूनी हो जाती हैं। इस प्रकार इस क्रमसे असंख्यात द्विगुणवृद्धियोंके जानेपर तदनन्तर दोनों ही पार्श्व भागोंमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण उपरिम स्थितियोंसे अन्तरित सामान्य स्थिति-शलाकाओंको ग्रहण कर यवमध्य उत्पन्न होता है यह इस सूत्रका भावार्थ है। यहाँपर यवमध्यसे पहले और आगे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही नाना गुणहानिशलाकाएँ होती हैं। यहाँ नाना गुणहानिशलाकाएँ थोड़ी हैं। उनसे एक गुणहानिस्थानान्तर असंख्यातगुणा है इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

---

१. ता०-क प्रत्योः ·······मोत्तूण इति पाठः ।

* णाणागुणहाणिसलागाणि थोवाणि ।

§ ५३४. जवमज्झादो हेट्ठिमोवरिमणाणागुणहाणिसलागाओ संपिंडिदाओ थोवाओ त्ति भणिदं होइ ।

* एक्कंतरमसंखेज्जगुणं ।

§ ५३५. एयगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणमिदि वुत्तं होइ । कुदो एदस्स तत्तो असंखेज्ज-गुणत्तमवगम्मदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। ण च सुत्तमण्णहा होइ, विप्पडिसेहादो । एदं च सुत्तं देसामासयं तेण एगादिएगुत्तरकमेण वड्ढिदाहि सामण्णट्ठिदीहि अंतरिदाणमसामण्णट्ठिदीणं च समयाविरोहेण जवमज्झपरूवणा एत्थाणुगंतव्वा । ण च तदियगाहाए एरिसी परूवणा पडि-बद्धा त्ति आसंकणिज्जं, तत्थ एगादिएगुत्तरकमेण लब्भमाणाणमसामण्णट्ठिदिसलागाणं जवमज्झ-परूवणाए पहाणभावेण पडिबद्धत्तदंसणादो । पुणो एक्केक्कसरूवेण जाओ सामण्णट्ठिदीओ लब्भंति तासि सलागाओ थोवाओ। दुगेण विसेसाहिया, तिगेण विसेसाहिया। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे दुगुणाओ, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे जवमज्झमिदि एसा वि जवमज्झपरूवणा एत्थेव सुत्ते णिलीणा वक्खाणेयव्वा ।

* एदमक्खवगस्स णादव्वं ।

§ ५३६. एदमणंतरपरूविदं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं सामण्णट्ठिदीणमुक्क-

---

* नाना गुणहानिशलाकाएँ थोड़ी हैं ।

§ ५३४. यवमध्यसे अधस्तन और उपरिम नाना गुणहानिशलाकाएँ मिलकर थोड़ी हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* एक गुणहानिस्थानका अन्तर असंख्यातगुणा है ।

§ ५३५. एक गुणहानिस्थानका अन्तर असंख्यातगुणा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—यह नाना गुणहानिशलाकाओंसे असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है ।

उसमें भी यह सूत्र देशामर्षक है इस कारण एकसे लेकर एक-एकके क्रमसे बढ़ी हुई सामान्य स्थितियों और असामान्य स्थितियोंसे अन्तरित आगमके अविरोधपूर्वक यवमध्यप्ररूपणा यहाँपर जाननी चाहिए। इस प्रकारकी प्ररूपणा तीसरी गाथासे सम्बद्ध है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उसमें एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे प्राप्त होनेवाली असामान्य स्थितियोंकी शलाकासम्बन्धी यवमध्यप्ररूपणाकी प्रधानरूपसे प्रतिबद्धता देखी जाती है । पुनः एक-एकरूपसे जो सामान्य स्थितियाँ प्राप्त होती हैं उनकी शलाकाएँ थोड़ी हैं । दो-दोरूपसे प्राप्त होनेवाली सामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक हैं । तीन-तीनरूपसे प्राप्त होनेवाली सामान्य स्थितियाँ विशेष अधिक हैं । इस विधिसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेवाली शलाकाएँ दूनी हैं । पल्योपमके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है । इस प्रकार यह भी यवमध्य प्ररूपणा इसी सूत्रमें गर्भित है, अतः उसका व्याख्यान करना चाहिए ।

* यह प्ररूपणा अक्षपकके जाननी चाहिए ।

§ ५३६. यह अनन्तरपूर्व कहा गया पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण सामान्य स्थितियोंका

स्संतरमक्खवगस्स अभवसिद्धियपाओग्गविसये वट्टमाणस्स णादव्वमिदि वुत्तं होइ। खवगस्स पुण णेदमुक्कस्संतरं संभवइ, उक्कस्सेण वि तत्थावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीणं चेव असामण्णट्ठिदीणमंतरभावेण सामण्णट्ठिदीसु वि पवुत्तिदंसणादो त्ति इममत्थविसेसमुत्तरसुत्तेण णिद्दिसइ—

*** खवगस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागो अंतरं।**

§ ५३७. गतार्थमेतत्सूत्रम्।

*** इमस्स पुण सामण्णाणं ट्ठिदीणमंतरं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।**

§ ५३८. गयत्थमेदं पि सुत्तं; पुव्वुत्तस्सेवत्थस्स पुणो वि उवसंहारमुहेण परूवणादो। एवमेत्तिएण पबंधेण समयपबद्धसेसयाणि अस्सियूण चउत्थभासगाहाए अत्थविहासणं काढूण संपहि भवबद्धसेसयाणि वि अस्सियूण सामण्णासामण्णट्ठिदीणमेवं चेव पयदपरूवणा अणुगंतव्वा त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** जहा समयपबद्धसेसयाणि तहा भवबद्धसेसाणि कादव्वाणि।**

§ ५३९. सुगमं। संपहि खवगपाओग्गपरूवणाए भण्णमाणाए चउत्थगाहासुत्ते एगादिएगुत्तरकमेण असंखेज्जाओ असामण्णट्ठिदीओ उल्लंघियूण तदो अंतरचरिमट्ठिदीदो उवरिमाणंतरट्ठिदिप्पहुडि एगादिएगुत्तरवड्ढिदेसु असंखेज्जेसु ट्ठिदिविसेसेसु समयपबद्धसेसयाणि भवबद्धसेसयाणि

उत्कृष्ट अन्तर अभव्यसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें विद्यमान अक्षपकके जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। परन्तु क्षपकके यह उत्कृष्ट अन्तर सम्भव नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट अन्तर होवे तो भी वहाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही असामान्य स्थितियोंके अन्तररूपसे उसकी सामान्य स्थितियोंमें ही प्रवृत्ति देखी जाती है इस प्रकार इस अर्थविशेषको आगेके सूत्र द्वारा दिखलाते हैं—

*** क्षपकके यह उत्कृष्ट अन्तर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है।**

§ ५३७. यह सूत्र गतार्थ है।

*** परन्तु अक्षपकके सामान्य स्थितियोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है।**

§ ५३८. यह सूत्र भी गतार्थ है, क्योंकि इस द्वारा पूर्वोक्त अर्थकी ही पुनरपि उपसंहार करते हुए प्ररूपणा की गयी है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा समयप्रबद्धशेषोंका आलम्बन लेकर चौथी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा करके अब भवबद्धशेषोंका भी आश्रय करके सामान्य और असामान्य स्थितियोंकी इसी प्रकार प्रकृतप्ररूपणा जाननी चाहिए इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जिस प्रकार समयप्रबद्धशेषोंकी सामान्य और असामान्य स्थितियोंके आलम्बनसे प्ररूपणा की है उसी प्रकार भवबद्धशेषोंकी भी वह प्ररूपणा करनी चाहिए।**

§ ५३९. यह सूत्र सुगम है। अब क्षपकप्रायोग्य प्ररूपणाके कथनमें चौथी भाष्यगाथासूत्रमें एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे असंख्यात असामान्य स्थितियोंको उल्लंघन कर तत्पश्चात् अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिसे उपरिम अनन्तर स्थितिसे लेकर एकसे लेकर एक-एकके क्रमसे वृद्धि करनेपर असंख्यात स्थितिविशेषोंमें समयप्रबद्धशेष और भवबद्धशेष होते हैं इस प्रकार इस

च होंति त्ति एवंविहो अत्थो विहासिदो, गाहासुत्ते तहाविहत्थस्स परिप्फुडमेव पडिबद्धत्तदंसणादो। अण्णं च पुव्वुत्तमंतरमुल्लंघिय एगादिएगुत्तरकमेण लब्भमाणीसु सामण्णट्ठिदीसु जाओ ताओ एगसमयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ थोवाओ, अणेगाणं समयपबद्धाणं सेसएण अविरहिदाओ असंखेज्जगुणाओ इच्चादि परूवणा सुत्तसूचिदा तेण तत्थ वक्खाणिदा। एण्हि पुण अभवसिद्धियपाओग्गपरूवणाए तहाविहं सुत्तणिबद्धत्थपरूवणमुज्झियूण अण्णेण पयारेण चुण्णिसुत्ते परूवणंतरमाढत्तं, तदो कधं ण पुव्वावरविरोहदोसो पसज्जदि त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—खवगपाओग्गपरूवणाए जो अत्थो विहासिदो सो चेव एत्थ विहासेयव्वो; ण तत्थ पडिसेहो अत्थि। किंतु तहाविहत्थपरूवणा गाहासुत्तणिबद्धा सुबोहा त्ति तमुल्लंघियूण सुत्तस्स भावत्थभूदो एसो अत्थो विहासासुत्तयारेणेत्थ विहासिदो; सुगमत्थविहासणट्ठं गंथगउरवं मोत्तूण फलविसेसाणुवलंभादो त्ति। तदो जो खवगम्मि विहासिदो अत्थो सो एत्थ वि समयाविरोहेण जोजेयव्वो; एत्थ विहासिदो जो अत्थो सो खवगसंबंधेण विहासियव्वो त्ति एसो एत्थ सुत्ताहिप्पाओ। एत्तिओ पुण विसेसो—तत्थ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ असामण्णट्ठिदीओ उल्लंघियूण सामण्णट्ठिदीणं भवसमयपबद्धसेसएहिं अविरहिदाणमेगादिएगुत्तरकमेण उक्कस्सदो वासपुधत्तमेत्ताणं संभवो। एत्थ पुण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ असामण्णट्ठिदीओ उल्लंघियूण एगादिएगुत्तरकमेण भवसमयपबद्धसेसएहिं अविरहिदाओ सामण्णट्ठिदीओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ

प्रकारके अर्थकी विभाषा की, क्योंकि गाथासूत्रमें उस प्रकारके अर्थका स्पष्टरूपसे सम्बन्ध देखा जाता है।

शंका—दूसरी बात यह है कि पूर्वोक्त अन्तरको उल्लंघन करके एकसे लेकर एक-एकके अधिकके क्रमसे प्राप्त होनेवाली सामान्य स्थितियोंमें जो एक समयप्रबद्धशेषसे सहित स्थितियां हैं वे सबसे थोड़ी हैं। अनेक समयप्रबद्धशेषोंसे सहित स्थितियाँ उनसे असंख्यातगुणी हैं इत्यादि प्ररूपणा सूत्र सूचित है, इसलिए उसकी वहाँ प्ररूपणा की। परन्तु इस समय अभव्यसिद्धिक जीवोंके प्रायोग्य प्ररूपणामें उस प्रकारकी सूत्रनिबद्ध अर्थकी प्ररूपणाको छोड़कर अन्य प्रकारसे चूर्णिसूत्रमें प्ररूपणाविषयक अन्तर प्रारम्भ किया है, इसलिए पूर्वापरविरोध दोष कैसे प्राप्त नहीं होता ?

समाधान—अब यहाँ इस दोषका परिहार करते हैं—क्षपकप्रायोग्य प्ररूपणामें जिस अर्थकी विभाषा की है उसी अर्थकी यहाँ विभाषा करनी चाहिए, उसमें कोई प्रतिषेध नहीं है। किन्तु उस प्रकारके अर्थकी प्ररूपणा गाथासूत्रमें निबद्ध होकर सुगम है, इसलिए उसे उल्लंघन कर सूत्रके भावार्थरूपमें इस अर्थकी विभाषासूत्रकारने यहाँपर विभाषा की है, क्योंकि सुगम अर्थकी विभाषा करनेके लिए प्रयत्न करनेपर ग्रन्थ ही बढ़ता है, उसके सिवाय अन्य कोई फल नहीं उपलब्ध होता। इसलिए क्षपकके कथनके समय जिस अर्थकी विभाषा की है उसकी समयके अविरोधपूर्वक यहाँ भी योजना करनी चाहिए। और यहाँपर जिस अर्थकी विभाषा की है उसकी क्षपकके सम्बन्धसे भी विभाषा करनी चाहिए इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका अभिप्राय है। मात्र इतनी विशेषता है कि वहाँपर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंको उल्लंघन कर भवबद्धशेषों और समयप्रबद्धशेषोंसे युक्त सामान्य स्थितियाँ एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे उत्कृष्टरूपसे वर्षपृथक्त्वप्रमाण सम्भव हैं। परन्तु यहाँपर उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण असामान्य स्थितियोंको उल्लंघन कर एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे भवबद्धशेषों और समयप्रबद्धशेषोंसे युक्त सामान्य स्थितियाँ उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण सम्भव हैं

संभवंति त्ति । एवमेदीए सव्वमग्गणाए सवित्थरमणुमग्गिदाए तदो चउत्थीए भासगाहाए अत्थविहासा समप्पदि। तदो च अट्ठमीए मूलगाहाए अत्थविहासा अभवसिद्धियपाओग्गविसये समप्पदि त्ति जाणावणट्ठमुवसंहारवक्कमाह—

*** एवं चउत्थीए गाहाए अत्थो समत्तो भवदि ।**

*** अट्ठमीए मूलगाहाए विहासा समत्ता भवदि ।**

*** इमा अण्णा अभवसिद्धियपाओग्गे परूवणा ।**

§ ५४०. चदुहि भासगाहाहि अट्ठममूलगाहाए अत्थे भवाभवसिद्धियपाओग्गविसये सवित्थरं विहासिय समत्ते पुणो किमट्ठमेसा अण्णा परूवणा अभवसिद्धियपाओग्गविसये आढविज्जदे ? ण, पुव्वुत्तत्थस्सेव चूलियाभावेण तत्थेव सुत्तसूचिदविसेसंतरपदंसणट्ठमेदिस्से परूवणाए अवयारब्भुवगमादो । तं कधं ? अभवसिद्धियपाओग्गे णिल्लेवणट्ठाणाणं पमाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं होदि त्ति भणिदं । संपहि जत्थेव समयपबद्धाणं जहण्णणिल्लेवणट्ठाणं किं तत्थेव भवबद्धाणं जहण्णणिल्लेवणट्ठाणं होइ आहो ण होइ त्ति ण एसो विसेसो तत्थ जाणाविदो, एवमण्णो वि विसेसो तत्थ परूविदो अत्थि, तदो तप्परूवणट्ठमेत्तो उवरिमो चुण्णिसुत्तपबंधो समोइण्णो त्ति घेत्तव्वं ।

इस प्रकार इस विधिसे इस पूरी मार्गणाके विस्तारके साथ अनुसन्धान करनेपर इसके बाद चौथी भाष्यगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त होती है। और तदनन्तर अभवसिद्धिक जीवोंके प्रायोग्य विषयमें आठवीं मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त होती है इस बातका ज्ञान करानेके लिए उपसंहार वाक्यको कहते हैं—

*** इस प्रकार चौथी भाष्यगाथाका अर्थ समाप्त हुआ ।**

*** और इसके साथ आठवीं मूलगाथाकी विभाषा समाप्त होती है ।**

*** अब अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें यह अन्य प्ररूपणा की जाती है ।**

§ ५४०. शंका—चार भाष्यगाथाओं द्वारा आठवीं मूलगाथाके अर्थकी भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें विस्तारके साथ विभाषाके समाप्त होनेपर पुनः अभवसिद्धिक जीवोंके विषयमें यह अन्य प्ररूपणा किस लिए आरम्भ करते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि पूर्वोक्त अर्थका ही चूलिकारूपसे वहीं सूत्रमें सूचित हुए विशेष अन्तरके दिखलानेके लिए इस प्ररूपणाका अवतार स्वीकार किया जाता है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—अभवसिद्धिकके योग्य निर्लेपनस्थानोंका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है यह कहा गया है। अब जहाँपर समयप्रबद्धोंका जघन्य निर्लेपनस्थान होता है वहींपर क्या भवबद्धोंका जघन्य निर्लेपनस्थान होता है या नहीं होता है इस प्रकार इस विशेषका वहाँ ज्ञान नहीं कराया गया है। इसी प्रकार अन्य भी विशेष वहाँपर कहा गया है, इसलिए उसकी प्ररूपणा करनेके लिए यहाँ उपरिम चूर्णिसूत्रप्रबन्ध अवतीर्ण हुआ है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

* तं जहा ।

§ ५४१. सुगममेदं पयदपरूवणापबंधावयारावेक्खं पुच्छावक्कं ।

* भवबद्धाणं णिल्लेवणट्ठाणं जहण्णगं समयपबद्धस्स णिल्लेवणट्ठाणाणं जहण्णयादो असंखेज्जाओ ट्ठिदीओ अब्भुस्सरिदूण ।

§ ५४२. एदस्सत्थो वुच्चदे—जम्हि ट्ठिदिविसेसे समयपबद्धाणं जहण्णयं णिल्लेवणट्ठाणं जादं ण तम्हि चेव भवबद्धाणं जहण्णं णिल्लेवणट्ठाणं होइ। किंतु तत्तो उवरि असंखेज्जाओ ट्ठिदीओ अब्भुस्सरिदूण होदि त्ति दट्ठव्वं। तं जहा—तिरिक्खस्स मणुस्सस्स वा अंतोमुहुत्ताउगभवे उप्पज्जिदूण बंधमाणस्स जाव तमाउअं समप्पइ ताव तम्मि भवम्मि बद्धसमयपबद्धा अंतोमुहुत्तमेत्ता भवंति। तदो एत्तियमेत्तसमयपबद्धाणं समूहमेक्कदो कादूण गहिदे एगं भवबद्धयं णाम भण्णदे। पुणो तस्स भवस्स पढमसमयम्मि तप्पाओग्गजहण्णुववादजोगेण बद्धजहण्णपदेसपिंडो कम्मट्ठिदीए असंखेज्जेसु भागेसु समयाविरोहेणाइक्कंतेसु पुणो जम्मि समये णिस्सेसं गहिदूण गच्छदि तम्मि समये समयपबद्धस्स जहण्णणिल्लेवणट्ठाणं होइ। तम्मि चेव समए पढमसमयपबद्धेणूणमेगभवबद्धं दीसइ। तदो पढमसमयम्मि बद्धसमयपबद्धे णिल्लेविदे पुणो सेसा समयूणअंतोमुहुत्तमेत्ता समयपबद्धा जम्मि समए णिस्सेसा गलिदूण गच्छिहिंति तम्मि समए भवबद्धस्स जहण्णणिल्लेवणट्ठाणं भविस्सदि त्ति एदेण कारणेण दोण्हं पि जहण्णणिल्लेवणट्ठाणाणि एगत्थ ण जादाणि, समयपबद्धजहण्णणिल्लेवणट्ठाणादो उवरि अंतोमुहुत्तमेत्तीओ ट्ठिदीओ णिच्छएण अब्भुस्सरिदूण भवबद्धस्स जहण्ण-

---

* वह जैसे।

§ ५४१. प्रकृत प्ररूपणासम्बन्धी प्रबन्धके अवतारकी अपेक्षा करनेवाला यह पृच्छावाक्य सुगम है।

* भवबद्धोंका जघन्य निर्लेपनस्थान समयप्रबद्धके जघन्य निर्लेपनस्थानोंके असंख्यात स्थितियाँ आगे जाकर प्राप्त होता है।

§ ५४२. अब इसका अर्थ कहते हैं—जिस स्थितिविशेषमें समयप्रबद्धोंका जघन्य निर्लेपनस्थान उत्पन्न हुआ है उसी स्थितिविशेषमें भवबद्धोंका जघन्य निर्लेपनस्थान नहीं होता। किन्तु उससे ऊपर असंख्यात स्थितियाँ आगे जाकर वह होता है ऐसा जानना चाहिए। वह जैसे—अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आयुवाले भवमें उत्पन्न होकर बन्ध करनेवाले तिर्यंच या मनुष्यके जबतक वह आयु समाप्त होती है तबतक उस भवमें बाँधे गये समयप्रबद्ध अन्तर्मुहूर्तप्रमाण हो जाते हैं। इसलिए इयत्प्रमाण समयप्रबद्धोंके समूहको एकत्र करके ग्रहण करनेपर उसका नाम एक भवबद्ध कहलाता है। पुनः उस भवके प्रथम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य उपपाद योगसे बाँधा गया जघन्य प्रदेशपिण्ड, कर्मस्थितिके असंख्यात भागोंके समयके अविरोधपूर्वक उल्लंघन करनेपर, पुनः जिस समय निश्शेष होकर निर्जीर्ण होता है उस समय समयप्रबद्धका जघन्य निर्लेपनस्थान होता है। और उसी समय प्रथम समयप्रबद्धसे न्यून एक भवबद्ध दिखाई देता है। पश्चात् प्रथम समयसम्बन्धी समयप्रबद्धके निर्लेपित होनेपर शेष एक समय कम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण समयप्रबद्ध जिस समय पूरी तरहसे गलकर निकल जाते हैं उस समय भवबद्धका जघन्य निर्लेपनस्थान होगा। इस प्रकार इस कारणसे दोनोंके ही जघन्य निर्लेपनस्थान एक स्थितिमें नहीं प्राप्त होते हैं, क्योंकि

णिल्लेवणट्ठाणं होदि त्ति पडिवज्जेयव्वं। जम्हि चेव समए भवबद्धस्स पढमसमयपबद्धो णिल्लेविदो तम्हि चेव समए सेससमयपबद्धाणं अंतोमुहुत्ताणमक्कमेण णिल्लेवणा किण्ण जायदे ? ण, तेसिं जहण्णणिल्लेवणट्ठाणस्स समयुत्तरकमेणावट्ठिदस्स अक्कमवुत्तिविरोहादो। एसो अत्थो एगट्ठिदिविसेसे असंखेज्जाणि समयपबद्धसेसाणि अत्थि त्ति एदेण सह किण्ण विरुज्झदि त्ति भणिदे ण विरुज्झदे। तं कधं ? णिरुद्धेगसमयपबद्धस्स जहण्णणिल्लेवणट्ठाणब्भूदट्ठिदिविसेसे अण्णेगसमयपबद्धस्स कम्मट्ठिदीए समत्ताए तमेगं समयपबद्धसेसयं भवदि। पुणो तम्मि चेव ट्ठिदिविसेसे अण्णेगसमयपबद्धकम्मट्ठिदिदुचरिमसमये संजादे तत्थ तस्स णिल्लेवणसंभववसेण तमेगं समयपबद्धसेसयमुवलब्भदे। पुणो तम्मि चेव ट्ठिदिविसेसे कम्मट्ठिदितिचरिमसमयपत्तं पि समयपबद्धसेसयं तक्कालणिल्लेवणपाओग्गमत्थि। एवं गंतूण जाव जहण्णणिल्लेवणट्ठाणादो समयुत्तरट्ठिदिपत्तमवि कम्मट्ठिदिसमयपबद्धसेसयं तम्हि चेव ट्ठिदिविसेसे अत्थि त्ति वत्तव्वं। तेण एक्कम्मि ठिदिविसेसे असंखेज्जाणं समयपबद्धाणं सेसाणमत्थित्तोवएसेण णेदं विरुज्झदे; णिल्लेवणट्ठाणमेत्ताणं चेव समयपबद्धसेसाणं तत्थ सेचियभावेण संभवोवलंभादो। जइ वि एत्तियमेत्ताणमक्कमेण णिल्लेवणट्ठाणसंभवो णत्थि तो वि णियमा असंखेज्जाणं समयपबद्धाणं तप्पाओग्गाणं सेसयाणि तत्थ संभवंति

समयप्रबद्धके जघन्य निर्लेपनस्थानसे ऊपर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थितियाँ वास्तवमें आगे जाकर भवबद्धका जघन्य निर्लेपनस्थान होता है ऐसा निश्चय करना चाहिए।

शंका—जिस ही समय भवबद्धका प्रथम समयप्रबद्ध निर्लेपित हुआ उसी समय अन्तर्मुहूर्त-प्रमाण शेष समयप्रबद्धोंकी अक्रमसे निर्लेपना क्यों नहीं हो जाती ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उनका जघन्य निर्लेपनस्थान एक-एक समय अधिकके क्रमसे अवस्थित है, अतः उसकी अक्रमसे वृत्ति (प्राप्ति) होनेमें विरोध आता है।

शंका—यह अर्थ एक स्थितिविशेषमें असंख्यात समयप्रबद्धशेष पाये जाते हैं इस प्रकार इसके साथ विरोधको क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान—ऐसी शंका करनेपर कहते हैं कि विरोधको नहीं प्राप्त होता है।

शंका—सो कैसे ?

समाधान—विवक्षित एक समयप्रबद्धके जघन्य निर्लेपनस्थानभूत स्थितिविशेषमें अन्य एक समयप्रबद्धकी कर्मस्थितिके समाप्त होनेपर वह एक समयप्रबद्धशेष होता है। पुनः उसी स्थिति-विशेषमें अन्य एक समयप्रबद्धकी स्थितिके द्विचरम समय हो जानेपर वहाँपर उसका निर्लेपनस्थान प्राप्त होनेके योग्य होनेसे वह एक अन्य समयप्रबद्धशेष उपलब्ध होता है। पुनः उसी स्थिति-विशेषमें कर्मस्थितिका त्रिचरम समय प्राप्त हुआ, इसलिए समयप्रबद्धशेष उस समय निर्लेपनके योग्य होता है। इस प्रकार आगे तबतक जाना चाहिए जब जाकर उसी स्थितिविशेषमें जघन्य निर्लेपनस्थानसे क्रमसे एक-एक समय अधिक, कर्मस्थितिसम्बन्धी, समयप्रबद्धशेष पाया जाता है ऐसा कहना चाहिए। इस कारण एक स्थितिविशेषमें असंख्यात समयप्रबद्धशेषोंके अस्तित्वका उपदेश होनेसे यह कथन विरोधको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि जितने निर्लेपनस्थान हैं उतने ही समयप्रबद्धशेषोंका वहाँपर सिंचितरूपसे पाया जाना सम्भव है। यद्यपि इतने निर्लेपनस्थान वहाँपर अक्रमसे सम्भव नहीं हैं तो भी तत्प्रायोग्य असंख्यात समयप्रबद्ध शेषरूपसे वहाँपर सम्भव

त्ति णिच्छओ कायव्वो, उवरिमप्पाबहुअसुत्ताहिप्पायेण णिल्लेवणट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागमेत्ताणं चेव भवसमयपबद्धसेसयाणमेगसमयेण णिल्लेवणोवलंभादो त्ति ।

§ ५४३. संपहि एत्तोप्पहुडि भवबद्धाणं समयाविरोहेण णिल्लेविज्जमाणाणं पुव्वुत्तकालजवमज्झमदीदकालविसयमेगजीवविसेसिदं णेदव्वमिदि पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** तदो जवमज्झं कायव्वं ।**

§ ५४४. तदो अणंतरणिद्दिट्ठत्तादो भवबद्धपडिबद्धजहण्णणिल्लेवणट्ठाणादो आढविय भवबद्धाणं णिल्लेविज्जमाणाणं कालजवमज्झमणुगंतव्वं । समयपबद्धाणं पुण एत्तो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोसरियूण ट्ठिदजहण्णणिल्लेवणट्ठाणप्पहुडि पयदजवमज्झपरूवणा आढवेयव्वा त्ति सुत्तत्थसंगहो । एत्थ जवमज्झमिदि वुत्ते पुव्वुत्तकालजवमज्झस्सेव परामरसो, णाण्णस्सेत्ति कधमेदं परिच्छिज्जदे ? ण, अण्णस्स जवमज्झस्स एदम्मि विसये संभवाणुवलंभादो । संपहि जहा दोण्हमेदेसिं जवमज्झाणं भिण्णुद्देसे पारंभो किमेवं मज्झपदेसस्स वि भेदो अत्थि आहो णत्थि त्ति पुच्छाए णिण्णयकरणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** जम्हि चेव समयपबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं जवमज्झं तम्हि चेव भवबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं जवमज्झं ।**

हैं ऐसा निश्चय करना चाहिए, क्योंकि उपरिम चूर्णिसूत्रके अभिप्रायानुसार निर्लेपनस्थानोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ही भवबद्धशेषों और समयप्रबद्धशेषोंका एक समय द्वारा निर्लेपन प्राप्त होता है ।

§ ५४३. अब इससे आगे समयके अविरोधपूर्वक निर्लेप्यमान भवबद्धोंका एक जीवसम्बन्धी अतीत कालविषयक पूर्वोक्त काल यवमध्यको ले जाना चाहिए इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** तत्पश्चात् यवमध्यकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।**

§ ५४४. 'तदो' अर्थात् अनन्तर पूर्व निर्दिष्ट किये गये भवबद्धसम्बन्धी जघन्य निर्लेपनस्थानसे आरम्भ करके निर्लेप्यमान भवबद्धोंका काल यवमध्य जानना चाहिए । समयपबद्धोंका तो इससे नीचे (पूर्व) अन्तर्मुहूर्त सरककर स्थित जघन्य निर्लेपनस्थानसे लेकर प्रकृत यवमध्यकी प्ररूपणा आरम्भ करनी चाहिए यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है ।

शंका—इस सूत्रमें यवमध्य ऐसा कहनेपर पूर्वोक्त काल यवमध्यका ही परामर्श किया गया है, अन्यका नहीं इस प्रकार यह बात कैसे जानी जाती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्य यवमध्य इस विषयमें सम्भव नहीं है ।

अब जिस प्रकार इन दोनों यवमध्योंका भिन्न-भिन्न स्थानपर प्रारम्भ होता है उस प्रकार बीचके प्रदेशमें भी क्या भेद है या नहीं है ऐसी पृच्छा होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

जिस प्रदेशमें समयप्रबद्धोंके निर्लेपनस्थानोंका यवमध्य होता है उसी प्रदेशमें भवबद्धके निर्लेपनस्थानोंका यवमध्य होता है ।

§ ५४५. कुदो पुण दोण्हमेदेसिं भिण्णुद्देसेसु पारद्धाणमेक्कम्मि चेव उद्देसे मज्झसंभवो ? ण, एदम्हादो चेव सुत्तादो तहाविहसंभवागमादो। तदो समयपबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं जवमज्झस्स पढममेव पारंभो होदूण पुणो तत्तो अंतोमुहुत्तमेत्तणिल्लेवणट्ठाणाणि गंतूण तत्थ भवबद्धाणं जहण्ण-णिल्लेवणट्ठाणस्स पारंभो होदूण पुणो दोण्हं पि जवमज्झाणमुवरि समयाविरोहेण गच्छमाणाण-मेक्कम्मि चेव ट्ठिदिविसेसे मज्झपदेसो होदूण पुणो उवरि समाणट्ठाणाणि हेट्ठिमद्धाणादो असंखेज्ज-गुणमेत्ताणि गंतूण दोण्हं पि उक्कस्सणिल्लेवणट्ठाणविसए जुगवमेव परिसमत्ती होदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो।

अहवा एत्थ जवमज्झमिदि वुत्ते कालजवमज्झं पुव्वमेव परूविदमिदि तं मोत्तूण जहण्णणिल्लेवणट्ठाणप्पहुडि जावुक्कस्सणिल्लेवणट्ठाणेत्ति एदेसु ट्ठाणेसु णिल्लेविदपुव्वाणं समयपबद्धाणं भवबद्धाणं च अदीदकालविसयाओ सलागाओ घेत्तूण जवमज्झपरूवणा कायव्वा। तं जहा—जहण्णए णिल्लेवणट्ठाणे णिल्लेविदपुव्वा समयपबद्धा भवबद्धा वा थोवा समयुत्तरे विसेसाहिया। एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे दुगुणवड्ढिदा। तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमुवरिं गंतूण णिल्लेवणट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं। तत्तो विसेसहीणकमेण णेदव्वं जाव उक्कस्सणिल्लेवणट्ठाणेत्ति। णवरि सव्वणिल्लेवणट्ठाणेसु णिल्लेविदपुव्वा समयपबद्धा भवबद्धा च अणंतसंखाविसेसिदा चेव होंति; अदीदकालप्पणाए तदविरोहादो। संपहि अभवसिद्धिय-

---

शंका—इन दोनोंका यवमध्य भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें प्रारम्भ होता है, तो भी इनका एक ही प्रदेशमें मध्य कैसे सम्भव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि इसी सूत्रसे उनके उस प्रकारके सम्भव होनेका ज्ञान होता है।

§ ५४५. इस कारण समयप्रबद्धोंके निर्लेपनस्थानोंका यवमध्य पहले ही प्रारम्भ होकर पुनः उससे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण निर्लेपनस्थान जाकर वहाँपर भवबद्धोंके जघन्य निर्लेपनस्थानका प्रारम्भ होकर पुनः समयके अविरोधपूर्वक दोनोंके ही जाते हुए यवमध्योंके ऊपर एक ही स्थितिविशेषमें मध्यका प्रदेश होकर पुनः अधस्तन स्थानसे ऊपर असंख्यातगुणे समान स्थान जाकर दोनोंके ही उत्कृष्ट निर्लेपनस्थानविषयक एक साथ समाप्ति होती है इस प्रकार यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

अथवा यहाँपर यवमध्य ऐसा कहनेपर काल यवमध्यका कथन तो पहले ही कर आये हैं, इसलिए उसे छोड़कर जघन्य निर्लेपनस्थानसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपनस्थानके प्राप्त होने तक इन स्थानोंमें जिनका पूर्वमें निर्लेपन कर आये हैं ऐसे समयप्रबद्धों और भवबद्धोंकी अतीत कालविषयक शलाकाओंको ग्रहण कर यवमध्यप्ररूपणा करनी चाहिए। वह जैसे—जघन्य निर्लेपनस्थानमें पूर्वमें निर्लेपित किये गये समयप्रबद्ध अथवा भवबद्ध सबसे थोड़े होते हैं। उनसे एक समय अधिक पूर्वमें निर्लेपित किये गये वे दोनों विशेष अधिक होते हैं। इस प्रकार एक-एक अधिकके क्रमसे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागमें वे दोनों दूनी वृद्धिसे युक्त होते हैं। तदनन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ऊपर जाकर निर्लेपनस्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य प्राप्त होता है। तत्पश्चात् विशेष हीनक्रमसे लेकर उत्कृष्ट निर्लेपनस्थानके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पूर्वमें निर्लेपित किये गये समयप्रबद्ध और भवबद्ध अनन्त संख्यासे सहित ही होते हैं क्योंकि अतीत

पाओग्गविसये चेव परूवणंतरमाढवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** अदीदे काले जे समयपबद्धा एक्केण पदेसग्गेण णिल्लेविदा ते थोवा ।**

§ ५४६. अदीदकाले पुव्वुत्तणिल्लेवणट्ठाणेसु जत्थ वा तत्थ वा णिल्लेविज्जमाणा समयपबद्धा एक्केक्केण परमाणुणा सेसभूदेण णिल्लेविदा अणंता अत्थि ते सव्वे चेव एक्कदो मेलाविदा थोवा होंति; उवरिमवियप्पपडिबद्धाणमेत्तो बहुत्तदंसणादो ।

*** बेहिं पदेसेहिं विसेसाहिया ।**

§ ५४७. अदीदे काले दोहिं दोहिं कम्मपरमाणूहिं सेसभूदेहिं जे णिल्लेविदा समयपबद्धा ते पुव्विल्लेहिंतो विसेसाहिया त्ति वुत्तं होइ । केत्तियमेत्तो विसेसो ? हेट्ठिमवियप्पसलागाणमणंतिमभागमेत्तो । तस्स को पडिभागो ? अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणो, सिद्धाणमणंतभागो; एत्थतणएयगुणवड्ढिअद्धाणस्स तप्पमाणत्तोवएसादो ।

*** एवमणंतरोवणिधाए अणंताणि ट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।**

§ ५४८. एवं तीहिं पदेसेहिं णिल्लेविदा विसेसाहिया चदुहिं पदेसेहिं णिल्लेविदा विसेसाहिया इच्चादिकमेणाणंताणि ट्ठाणाणि विसेसाहियकमेण गंतूण तदो जहण्णट्ठाणं पेक्खियूण दुगुण-

---

कालकी मुख्यता करनेपर उनके इतने होनेमें कोई विरोध नहीं आता । अब अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें ही दूसरी प्ररूपणाका आरम्भ करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अतीत कालमें जो समयप्रबद्ध अन्तमें शेष रहे एक-एक परमाणुको लेकर निर्लेपित हुए हैं वे सबसे थोड़े हैं ।**

§ ५४६. अतीत कालमें पूर्वोक्त निर्लेपनस्थानोंमें जहाँ कहीं निर्लेप्यमान समयप्रबद्ध अन्तमें शेष रहे एक-एक परमाणुको लेकर निर्लेपित हुए हैं एक साथ मिलाये हुए वे सब सबसे थोड़े होते हैं, क्योंकि उपरिम भेदोंको प्राप्त समयप्रबद्ध इनसे अधिक देखे जाते हैं ।

*** अतीत कालमें जो समयप्रबद्ध अन्तमें शेष रहे दो-दो परमाणुओंको लेकर निर्लेपित हुए हैं वे विशेष अधिक होते हैं ।**

§ ५४७. अतीत कालमें अन्तमें शेष रहे दो-दो परमाणुओंको लेकर जो समयप्रबद्ध निर्लेपित हुए हैं वे पूर्वके समयप्रबद्धोंकी अपेक्षा विशेष अधिक होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—अधस्तन भेदकी शलाकाओंके अनन्तवें भागप्रमाण है ।

शंका—उसका प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण उसका प्रतिभाग है, क्योंकि यहाँके गुणहानिअध्वानके तत्प्रमाण होनेका उपदेश पाया जाता है ।

*** इस प्रकार एक-एक परमाणुकी वृद्धिके क्रमसे अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्त स्थान उत्तरोत्तर विशेष अधिक-विशेष अधिक हैं ।**

§ ५४८. इस प्रकार अन्तमें तीन-तीन परमाणुओंको लेकर निर्लेपित हुए समयप्रबद्ध विशेष अधिक हैं । अन्तमें चार-चार परमाणुओंको लेकर निर्लेपित हुए समयप्रबद्ध विशेष अधिक हैं इत्यादि क्रमसे अनन्त स्थान एकके बाद एक विशेष अधिकके क्रमसे जाते हुए तत्पश्चात् जघन्य स्थानको

वड्ढिट्ठाणंतरं तम्हि उद्देसे समुप्पज्जदि त्ति भणिदं होदि। पुणो वि तत्तो हेट्ठिमद्धाणमेत्तमुवरि गंतूण विदियं दुगुणवड्ढिट्ठाणमुप्पज्जदि। एवमेदेण कमेण असंखेज्जेसु दुगुणवड्ढिट्ठाणेसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपमाणेसु गदेसु तदित्थदुगुणवड्ढीए चरिमवियप्पे अणंतेहि परमाणूहि अभवसिद्धिएहितो अणंतगुणसिद्धाणंतभागमेत्तेहि णिल्लेविदाणं समयपबद्धाणं सलागाओ अदीदकालविसयाओ अणंताओ घेत्तूण तत्थ जवमज्झट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति इममत्थविसेसं पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* ठाणाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागे जवमज्झं।

§ ५४९. एगपरमाणुमादिं काढूण जावुक्कस्सेणाणंता परमाणु त्ति एगादिएगुत्तरकमेण वड्ढिदाणि अणंताणि ट्ठाणाणि एत्थत्थि, एगसमयपबद्धउक्कस्ससेसमेत्ताणं चेव ट्ठाणाणमेत्थ संभवोवलंभादो। उक्कस्ससेसयं पुण एगसमयपबद्धस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं होइ। पुणो एत्तियमेत्ताणं समयपबद्धसेसट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झट्ठाणमुप्पज्जदि, तप्पाओग्गपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागेण सयलट्ठाणद्धाणे ओवट्टिदे तत्थ भागलद्धमेत्ताणं ठाणाणं चरिमवियप्पे जवमज्झसमुप्पत्तिदंसणादो। पुणो जवमज्झादो उवरि विसेसहाणीए अणंताणि ट्ठाणाणि गंतूण दुगुणहाणी होइ। एवं णेदव्वं जाव हेट्ठिमद्धाणादो असंखेज्जगुणमद्धाणमुवरि गंतूण चरिमवियप्पो उक्कस्ससमयपबद्धसेसपडिबद्धो समुप्पण्णो त्ति। एदेण जवमज्झादो हेट्ठिमद्धाणं सयलट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागो उवरिमद्धाणमसंखेज्जा भागा त्ति जाणाविदं होदि।

देखते हुए उस स्थानमें द्विगुण वृद्धिस्थानान्तर उत्पन्न होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। फिर भी उससे अधस्तन स्थानोंका जितना प्रमाण है उतने स्थान ऊपर जाकर दूसरा द्विगुणवृद्धिप्रमाण-स्थान उत्पन्न होता है। इस प्रकार इस क्रमसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण असंख्यात द्विगुणवृद्धिस्थानोंके जानेपर वहांके द्विगुणवृद्धिस्थानके अन्तिम भेदमें अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण अनन्त परमाणुओंको लेकर निर्लेपित हुए समयप्रबद्धोंकी अतीत कालविषयक अनन्त शलाकाओंको ग्रहण कर वहां यवमध्यस्थान उत्पन्न होता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* स्थानोंके असंख्यातवें भागके प्रतिभागमें यवमध्य होता है।

§ ५४९. एक परमाणुसे लेकर उत्कृष्टसे अनन्त परमाणुओंके प्राप्त होने तक एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे बढ़े हुए अनन्त स्थान यहां होते हैं, क्योंकि एक समयप्रबद्धके उत्कृष्ट शेषप्रमाण ही स्थान यहां सम्भवरूपसे उपलब्ध होते हैं। परन्तु उत्कृष्ट शेष एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। पुनः इतने समयप्रबद्धशेष स्थानोंके असंख्यातवें भागमें यवमध्य-स्थान उत्पन्न होता है, क्योंकि तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागके प्रतिभागसे समस्त स्थानोंके आयामको भाजित करनेपर वहां लब्ध एक भागप्रमाण स्थानोंके अन्तिम भेदमें यवमध्य उत्पन्न होता है। पुनः यवमध्यसे ऊपर (आगे) विशेष हानिवश अनन्त स्थान जाकर द्विगुणहानि होती है। इस प्रकार अधस्तन आयामसे असंख्यातगुणे आयाम ऊपर (आगे) जाकर उत्कृष्ट समयप्रबद्धशेषसम्बन्धी अन्तिम भेद उत्पन्न होता है। इस प्रकार इस कारणसे यवमध्यसे अधस्तन (पूर्वका) आयाम समस्त स्थानोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है और उपरिम (आगेका) आयाम असंख्यात बहुभागप्रमाण होता है यह ज्ञान कराया गया है।

* णाणंतरं थोवं ।

§ ५५०. जवमज्झादो हेट्ठिमोवरिमसयलणाणागुणहाणिसलागाओ मिलिदूण थोवाओ त्ति वुत्तं होइ। तासिं च पमाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो त्ति उवरि सुत्तयारो सयमेव भणिहिदि। तदो सिद्धमेदासिं णाणंतरसलागाणं थोवत्तमिदि।

* एगंतरमणंतगुणं ।

§ ५५१. एयगुणहाणिट्ठाणंतरमणंतगुणमिदि वुत्तं होइ। पुव्वुत्तणाणागुणहाणिसलागाहिं सयलट्ठाणद्धाणे ओवट्टिदे अणंतसंखावच्छिण्णपमाणमेयगुणहाणिअद्धाणमुप्पज्जदि तम्हा तत्तो एदस्साणंतगुणत्तमसंविद्धं सिद्धं। संपहि एत्थ णाणागुणहाणिसलागाणं पमाणविसये णिण्णयुप्पायणट्ठमुवरिमसुत्तमाह—

* अंतराणि अंतरट्ठिदाए पलिदोवमच्छेदणाणं पि असंखेज्जदिभागो ।

§ ५५२. अंतराणि णाणागुणहाणिणाणंतराणि त्ति वुत्तं होइ। अंतरट्ठदाए एगेगगुणहाणिणाणंतरणिमित्तं ठविदसलागाओ त्ति तेसिं चेव सरूवणिद्देसो कदो दट्ठव्वो। पलिदोवमच्छेदणाणं पि असंखेज्जदिभागो' एदेण सुत्तावयवेण तेसिं पमाणपरिच्छेदो कदो दट्ठव्वो, पलिदोवमद्धच्छेदणयसलागाणं पि असंखेज्जदिभागमेत्तेण मुत्तकंठमेव तासिं पमाणावहारणादो तासिं पमाणावच्छेददंसणादो। जदो एवमेदाओ पलिदोवमच्छेदणाणं पि असंखेज्जदिभागो। तदो एदाहिंतो एयगुणहाणि-

---

* यहाँ इन स्थानोंकी नाना गुणहानिशलाकाएँ सबसे थोड़ी होती हैं।

§ ५५०. नानान्तर अर्थात् यवमध्यसे अधस्तन और उपरिम स्थानोंकी समस्त नाना गुणहानिशलाकाएँ मिलकर थोड़ी होती हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और वे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं यह बात आगे सूत्रकार स्वयं ही कहेंगे, इसलिए इन नानान्तर शलाकाओंका स्तोकपना सिद्ध हो जाता है।

* उनसे एकान्तर अर्थात् एक गुणहानिस्थान अनन्तगुणा है।

§ ५५१. एक गुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। पूर्वोक्त नाना गुणहानिशलाकाओंसे समस्त स्थानोंके आयामके भाजित करनेपर अनन्त संख्यासे युक्त प्रमाणवाला एक गुणहानिस्थान उत्पन्न होता है, इसलिए यहाँपर नाना गुणहानि शलाकाओंके प्रमाणके विषयमें निर्णय उत्पन्न करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* 'अन्तर' अर्थात् एक-एक गुणहानिस्थानान्तरके निमित्त स्थापित शलाकारूप 'अन्तराणि' अर्थात् नानागुणहानिस्थानान्तर पल्योपमसम्बन्धी अर्धच्छेदोंके भी असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ५५२. 'अंतराणि' पदसे नाना गुणहानिस्थानान्तर लिये गये हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'अंतरट्ठिदाए' पदसे एक-एक गुणहानिस्थानान्तरके निमित्त स्थापित की गयी शलाकाएँ की गयी हैं। इस प्रकार उक्त कथन द्वारा उन्हींके स्वरूपका निर्देश किया गया जानना चाहिए। 'पलिदोवमच्छेदणाणं असंखेज्जदिभागो' इस सूत्रवचन द्वारा उन्हींके प्रमाणका निर्णय किया गया जानना चाहिए, क्योंकि पल्योपमके अर्धच्छेदशलाकाओंके भी असंख्यातवें भाग द्वारा मुक्तकण्ठरूपसे उन्हींके प्रमाणका अवधारण किया गया है अर्थात् उन्हींके प्रमाण निर्णय देखा जाता है।

ट्ठाणंतरमणंतगुणमिदि ण एत्थ को वि वामोहो कायव्वोत्ति पुव्वुत्तमेवत्थमुवसंहारमुहेण परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** णाणंतराणि थोवाणि । एक्कंतरमणंतगुणं ।**

§ ५५३. गयत्थमेदं सुत्तं । एवं भवपबद्धसेसयाणं पि पयदजवमज्झपरूवणा णिरवयव-मणुगंतव्वा, विसेसाभावादो । एवमेदं परूविय पुणो भवसिद्धियपाओग्गे अभवसिद्धियपाओग्ग-विसये च साहारणभूदं परूवणंतरमाढवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** खवगस्स वा अक्खवगस्स वा समयपबद्धाणं वा भवबद्धाणं वा अणुसमय-णिल्लेवणकालो एगसमइओ बहुगो ।**

§ ५५४. अणुसमयणिल्लेवणकालो णाम समयपबद्धाणं वा भवपबद्धाणं वा णिरंतरणिल्लेवण-कालो । सो पुण जहण्णेण एगसमयमेत्तो होदि, दोसु वि पासेसु णिल्लेवणट्ठिदीणमुदयो होदूण मज्झे एगसमयं चेव भवसमय-पबद्धणिल्लेवणट्ठिदिवेदगभावेण परिणममाणस्स तदुवलंभादो । एवं दुसमइय-तिसमइयादिकमेण अणुसमयणिल्लेवणकालो अणुगंतव्वो जावुक्कस्सेणावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो अणुसमयणिल्लेवणकालो समुवलद्धो त्ति, खवगसेढीए संसारावत्थाए वा एत्तो अहिययराणुसमय-णिल्लेवणकालस्साणुवलंभादो । एवमेदे अणुसमयणिल्लेवणकालवियप्पे जहण्णकालप्पहुडि जावुक्क-स्सकालो त्ति समयुत्तरकमेण ठवेदूण एत्थ अणुसमयणिल्लेवणकालो 'एगसमओ बहुओ त्ति' वुत्ते

यत: इस प्रकार ये पल्योपमके अर्धच्छेदोंके भी असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, इसलिए इनसे एक गुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है इस प्रकार इस विषयमें किसी प्रकारका भी व्यामोह नहीं करना चाहिए । अब पूर्वोक्त अर्थको ही उपसंहार द्वारा प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** 'णाणंतराणि' अर्थात् नाना गुणहानिस्थानान्तर सबसे थोड़े हैं । तथा उनसे 'एक्कांतरं' अर्थात् एक गुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है ।**

§ ५५३. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार भवबद्धशेषोंकी भी प्रकृत यवमध्यप्ररूपणा समग्र-रूपसे करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । इस प्रकार इतना प्ररूपण करके पुन: भवसिद्धिक जीवोंके योग्य और अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य विषयमें साधनभूत दूसरी प्ररूपणाको आरम्भ करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** क्षपकके अथवा अक्षपकके समयप्रबद्धोंका अथवा भवबद्धोंका एक समयसम्बन्धी अनुसमय निर्लेपनकाल बहुत है ।**

§ ५५४. समयप्रबद्धोंका अथवा भवबद्धोंका जो निरन्तर होनेवाला निर्लेपनकाल है वह जघन्यसे एक समयप्रमाण होता है, क्योंकि दोनों ही पार्श्वभागोंमें निर्लेपनरूप स्थितियोंका उदय होकर मध्यमें एक समय तक ही भवबद्ध और समयप्रबद्धनिर्लेपन स्थितिरूपसे परिणमन करनेवाले-का वह काल पाया जाता है । इसी प्रकार दो समयवाले और तीन समयवालेके क्रमसे प्रत्येक समयमें निर्लेपनकाल तबतक जानना चाहिए जब जाकर उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रतिसमय निर्लेपनकाल उपलब्ध होता है इस प्रकार क्षपकश्रेणिमें अथवा संसार अवस्थामें इससे अधिकतर प्रतिसमय निर्लेपनकाल उपलब्ध नहीं होता । इस प्रकार इन निर्लेपनकालके भेदोंको जघन्य कालसे लेकर उत्कृष्ट कालके प्राप्त होने तक एक-एक अधिक समयके क्रमसे स्थापित करके

अक्खवगस्स ताव अदीदे काले दोसु वि फासेसु अणिल्लेवणट्ठिदीणमुदओ होदूण पुणो तासिं मज्झे एगा णिल्लेवणट्ठिदी होदूण उदयं लहदि। एवंविहणिल्लेवणट्ठिदीणमुदयकालस्स अदीदे काले सव्वत्थ गहिदसलागाओ अणंताओ होदूण उवरिमवियप्पपडिबद्धसलागाहिंतो बहुगीओ जादाओ। एवं खवगस्स वि वत्तव्वं। णवरि णाणाजीवावेक्खाए एस कालो घेत्तव्वो। एगजीवावेक्खाए वि एस कालो आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो होदूण सव्वबहुगो होदि त्ति घेत्तव्वं।

* दुसमइओ विसेसहीणो।

§ ५५५. 'खवगस्स वा अक्खवगस्स वा अणुसमयणिल्लेवणकालो' त्ति पुव्वसुत्तादो अणुवट्टदे। तेणेवमेत्थ सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो—खवगस्स वा अक्खवगस्स वा भवबद्धाणं वा समयपबद्धाणं वा अणुसमयणिल्लेवणकालो दुसमइओ पुव्वुत्तकालं पेक्खियूण विसेसहीणो होदि त्ति। किं कारणं ? दो-दोणिल्लेवणट्ठिदीणमंतरिदसरूवेण संजोगो अदीवदुल्लहो होइ तेण पुव्विल्लकालादो एसो कालो विसेसहीणो जादो। एत्थ विसेसहीणपमाणं हेट्ठिमरासिस्सासंखेज्जदिभागो। तस्स पडिभागो आवलियाए असंखेज्जदिभागो। एत्थ वि पुव्वं व खवगस्स अदीदकालविसये णाणाजीवप्पणाए एसो कालो अणंतो घेत्तव्वो। एगजीवप्पणाए आवलियाए असंखेज्जदिभागपमाणो त्ति वत्तव्वं। उवरिमपदेसु वि एसो अत्थो सव्वत्थ जोजेयव्वो।

यहाँपर अनुसमयसम्बन्धी निर्लेपनकाल 'एक समयसम्बन्धी बहुत है' ऐसा कहनेपर अक्षपकके तो अतीत कालमें दोनों ही पार्श्वभागोंमें अनिर्लेपनरूप स्थितियोंका उदय होकर पुन: उनके मध्यमें एक निर्लेपन स्थिति होकर उदयको प्राप्त होती है। इस प्रकार निर्लेपनरूप स्थितियोंके उदयकालकी अतीत कालमें सर्वत्र ग्रहण की गयी शलाकाएँ अनन्त होकर उपरिम भेदसे सम्बन्ध रखनेवाली शलाकाओंसे बहुत हो जाती हैं। इस प्रकार क्षपकके भी कथन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह काल नाना जीवोंकी अपेक्षा ग्रहण करना चाहिए। एक जीवकी अपेक्षा भी यह काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर सबसे अधिक होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

* दो समयवाला अनुसमय निर्लेपनकाल विशेष हीन है।

§ ५५५. क्षपकके अथवा अक्षपकके समयप्रबद्धोंका अथवा भवबद्धोंका 'अनुसमयवाला निर्लेपनकाल' इसकी पिछले सूत्रसे अनुवृत्ति होती है, इसलिए यहाँपर उस पदके साथ सूत्रके अर्थका सम्बन्ध कर लेना चाहिए—क्षपकके अथवा अक्षपकके भवबद्धोंका अथवा समयप्रबद्धोंका अनुसमय निर्लेपनकाल दो समयवाला पूर्वोक्त कालको देखते हुए विशेष हीन होता है।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि दो-दो निर्लेपन स्थितियोंका अन्तरितरूपसे संयोग अतीव दुर्लभ है। इसलिए पूर्वके कालसे यह काल विशेष हीन हो जाता है।

यहाँपर विशेष हीनका प्रमाण अधस्तन राशिका असंख्यातवाँ भाग है और उसका प्रतिभाग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यहाँपर भी पहलेके समान क्षपकके अतीत कालमें नाना जीवोंकी मुख्यतासे यह काल अनन्त ग्रहण करना चाहिए। तथा एक जीवकी मुख्यतासे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ऐसा कहना चाहिए। आगेके पदोंमें भी यह सर्वत्र योजित कर लेना चाहिए।

*** एवं गंतूण आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणहीणो ।**

§ ५५६. एवं तिसमइय-चदुसमइयादीणं पि अणुसमयणिल्लेवणकालाणं विसेसहीणभावो णेदव्वो जाव आवलियाए असंखेज्जभागमेत्तआवलियाए असंखेज्जदिभागिओ अणुसमयणिल्लेवण-कालो एगसमइयणिल्लेवणकालादो दुगुणहीणो जादो त्ति । एदमेगं गुणहाणिअद्धाणमेत्तो । उवरि पुणो वि विसेसहीणकमेण णेदव्वं जाव आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तसव्वुक्कस्साणुसमयणिल्लें-वणकालो त्ति । एत्थावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ गुणहाणीओ होंति त्ति घेत्तव्वं । संपहि एत्थतणचरिमवियप्पपडिबद्धो उक्कस्सओ अणुसमयणिल्लेवणकालो खवगाखवगेसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव; ण तत्तो अब्भहियपमाणो त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स फुडीकरणट्ठ-मुत्तरसुत्तावयारो—

*** उक्कस्सओ वि अणुसमयणिल्लेवणकालो आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।**

§ ५५७. खवगस्स वा अक्खवगस्स वा भव-समयपबद्धणिल्लेवणट्ठिदीणमुदयकालो णिरंतर-सरूवेण लब्भमाणो उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव होदि त्ति वुत्तं होइ । एत्थ सव्वत्थ 'अणुसमयणिल्लेवणकालो' त्ति वुत्ते भव-समयपबद्धसेसाणं चेव सुद्धाणमुदयकालो त्ति ण घेत्तव्वं; तहाविहसंभवाणुवलंभादो । किंतु तत्थ केत्तियाणं पि भव-समयपबद्धाणं णिल्लेवण-संभवं पेक्खियूण मिस्सोदयकालस्स वि अणुसमयणिल्लेवणकालत्तमेत्थ परूविदमिदि दट्ठव्वं । एदं च सुत्तं देसामासयं, तेण अणुसमयणिल्लेवणकालं वि घेत्तूण पयदप्पाबहुआणुगमो समया-

---

* इस प्रकार विशेष हीनके क्रमसे जाकर अनुसमय निर्लेपनकाल आवलिके असंख्यातवें भागमें द्विगुण हीन होता है ।

§ ५५६. इस प्रकार तीन समयवाले, चार समयवाले आदि भी अनुसमय निर्लेपन कालोंका उत्तरोत्तर विशेष हीनपना तबतक ले जाना चाहिए जब जाकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागिक अनुसमय निर्लेपनकाल एकसमयके निर्लेपनकालसे द्विगुण हीन हो जाता है । इस प्रकार यह एक गुणहानिस्थान मात्र होता है । आगे फिर भी विशेष हीनके क्रमसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण सबसे उत्कृष्ट अनुसमय निर्लेपनकालके प्राप्त होनेतक ले जाना चाहिए । यहांपर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणहानियां होती हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए । अब यहां सम्बन्धी अन्तिम विकल्पसे सम्बन्ध रखनेवाला अनुसमय निर्लेपनकाल क्षपक और अक्षपक दोनोंमें आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है उससे अधिक प्रमाणवाला नहीं । इस प्रकार इस अर्थविशेषको स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

* उत्कृष्ट भी अनुसमय निर्लेपनकाल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है ।

§ ५५७. क्षपकके अथवा अक्षपकके भवबद्ध और समयप्रबद्धोंकी निर्लेपन स्थितियोंका उदय-काल निरन्तररूपसे प्राप्त होता हुआ उत्कृष्टसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है यह इस कथनका तात्पर्य है । यहांपर सर्वत्र 'अनुसमय निर्लेपनकाल' ऐसा कहनेपर केवल भवबद्धोंका और केवल समयप्रबद्धोंका उदयकाल ऐसा नहीं ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उस प्रकार वह सम्भव नहीं पाया जाता । किन्तु वहांपर कितने ही भवबद्धों और समयप्रबद्धोंके निर्लेपनका सम्भव देखकर मिश्र उदयकालका भी अनुसमय निर्लेपन कालपना यहांपर कहा गया है ऐसा जानना चाहिए । अतः यह सूत्र देशामर्षक है इस कारण अनुसमय निर्लेपनकालको भी ग्रहणकर समयके

विरोहेणाणुगंतव्वो। संपहि एगादिएगुत्तरकमेण परिवड्ढिदाहिं अणिल्लेवणट्ठिदीहिं अंतरिदाणं णिल्लेवणट्ठिदीणमुदयेण णिल्लेविदपुव्वाणं भव-समयपबद्धाणमदीदकालविसये थोवबहुत्तमक्खवग-संबंधेण परूवेमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

* अक्खवगस्स एगसमइयेण अंतरेण णिल्लेविदा समयपबद्धा वा भवबद्धा वा थोवा।

§ ५५८. एदस्सत्थो वुच्चदे—अक्खवगस्स अदीदे काले णाणाकम्मट्ठिदिअब्भंतरे वा एगकम्मट्ठिदिअब्भंतरे वा दोसु वि पासेसु एगेगअणिल्लेवणट्ठिदि-अंतरं होदूण पुणो तासिं मज्झे जेत्तियाओ भवसमयपबद्धाणं णिल्लेवणट्ठिदीओ उदयमागदाओ अत्थि तासु लद्धसमयपबद्धाणं भवबद्धाणं च तत्थेव णिल्लेविदसरूवाणं सव्वत्थ उच्चिणिदूण गाहिदसलागाओ अणंताओ असंखेज्जाओ च होदूण सव्वत्थोवाओ भवंति; उवरिमवियप्पपडिबद्धभव-समयपबद्धसलागाणमेत्तो जहाकमं बहुत्तदंसणादो।

* दुसमएण अंतरेण णिल्लेविदा विसेसाहिया।

§ ५५९. दोसु वि पासेसु दो-द्दोअणिल्लेवणट्ठिदीओ होदूण पुणो तासिं मज्झे केत्तियाओ वि भव-समयपबद्धणिल्लेवणट्ठिदीओ उदयं कादूण गदाओ अदीदकालप्पणाए अणंताओ अत्थि। कम्मट्ठिदिविवक्खाए च असंखेज्जाओ। पुणो तासु णिल्लेविदसमयपबद्धाणं भवबद्धाणं च गहिद-सलागाओ हेट्ठिमवियप्पसलागाहिंतो विसेसाहियाओ होंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो। विसेसपमाणमेत्थ

अविरोधपूर्वक प्रकृत अल्पबहुत्वका अनुगम जानना चाहिए। अब एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे परिवर्धित अनिर्लेपन स्थितियोंसे अन्तरित निर्लेपन स्थितियोंका उदयसे निर्लेपितपूर्व भवबद्ध और समयप्रबद्धोंके अतीत कालसम्बन्धी अल्पबहुत्वको अक्षपकके सम्बन्धसे प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* अक्षपकके एक समयिक अन्तरसे निर्लेपित समयप्रबद्ध अथवा भवबद्ध सबसे थोड़े हैं।

§ ५५८. अक्षपकके अतीत कालमें नाना कर्मस्थितियोंके भीतर अथवा एक कर्मस्थितिके भीतर दोनों ही पार्श्वभागोंमें एक-एक अनिर्लेपनरूप स्थितिका अन्तर होकर पुनः उनके मध्यमें जितनी भवबद्धों और समयप्रबद्धोंकी निर्लेपनस्थितियाँ उदयको प्राप्त हुई हैं उनमें वहीं निर्लेपित स्वरूप प्राप्त हुए समयप्रबद्धों और भवबद्धोंकी सर्वत्र मिलाकर ग्रहण की गयी शलाकाएँ अनन्त और असंख्यात होकर सबसे थोड़ी होती हैं, क्योंकि उपरिम विकल्पोंसम्बन्धी भवबद्ध और समय-प्रबद्धोंकी शलाकाएँ आगे-आगे क्रमसे बहुत देखी जाती हैं।

* दो समयिक अन्तरसे निर्लेपित समयप्रबद्ध और भवबद्ध विशेष अधिक होते हैं।

§ ५५९. दोनों ही पार्श्वभागोंमें दो-दो अनिर्लेपनरूप स्थितियाँ होकर पुनः उनके मध्यमें कितनी ही भवसिद्ध और समयप्रबद्धसिद्ध निर्लेपन स्थितियाँ उदयको प्राप्त होकर अतीत कालकी मुख्यतामें अनन्त होती हैं और कर्मस्थितिकी मुख्यतामें असंख्यात होती हैं। पुनः उनमें जिनका निर्लेपन हो गया है ऐसे समयप्रबद्धों और भवबद्धोंकी ग्रहणकी गयी शलाकाएँ अधस्तन भेदोंकी शलाकाओंसे विशेष अधिक होती हैं यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। यहाँपर विशेषका प्रमाण अधस्तन शलाकाओंके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

हेट्ठिमसलागाणमसंखेज्जदिभागो। तस्स को पडिभागो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, एत्थतणगुणहाणिअद्धाणस्स तप्पमाणत्तोवएसादो। एवं तिसमयेण अंतरेण णिल्लेविदा विसेसाहिया, चदुसमइयणिल्लेविदा विसेसाहिया, इच्चादिकमेण गंतूण तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणे दुगुणवड्ढी होदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

* एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे दुगुणा।

§ ५६०. पुव्वुत्तभागहारमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण तदित्थवियप्पसलागाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तणंतरेण णिल्लेविज्जमाणाणं भवसमयपबद्धाणमदीदकालप्पणाए अणंताओ कम्मट्ठिदिविवक्खाए च असंखेज्जपमाणाओ होदूण दुगुणवड्ढिदाओ दट्ठव्वाओ त्ति वुत्तं होइ। एदमेगं दुगुणवड्ढिअद्धाणं। एवंविहेसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेसु दुगुणवड्ढिअद्धाणेसु गदेसु तत्थ सयलद्धाणस्स असंखेज्जदिभागे पयदवियप्पसलागाहि जवमज्झमुप्पज्जदि त्ति इममत्थविसेसं जाणवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं।

§ ५६१. एत्थतणसयलट्ठाणाणि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि एगादिएगुत्तरकमेण परिवड्ढिदाणमणिल्लेविदट्ठिदिसलागाणं तत्तो अहिययराणमणुवलंभादो। एवंविहस्स सयल-

---

शंका—उसका प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—पल्योपमका असंख्यातवां भाग प्रतिभाग है, क्योंकि यहांका गुणहानिअध्वान तत्प्रमाण है ऐसा आगमका उपदेश है।

इसी प्रकार तीन-तीन समयके अन्तरसे निर्लेपित वे विशेष अधिक हैं, चार-चार समयके अन्तरसे निर्लेपित वे विशेष अधिक हैं इत्यादि क्रमसे जाकर उसके बाद पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थानोंके प्राप्त होनेपर द्विगुण वृद्धि होती है। इस प्रकार इसका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

* इस प्रकार विशेष अधिकके क्रमसे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जानेपर वहाँ उनका प्रमाण दूना होता है।

§ ५६०. पूर्वोक्त भागहारप्रमाण स्थान ऊपर क्रमसे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तरसे निर्लेप्यमान भवबद्ध और समयप्रबद्धोंकी वहां प्राप्त हुई शलाकाएँ अतीत कालकी मुख्यतासे अनन्त और कर्मस्थितिकी विवक्षामें असंख्यातप्रमाण होकर दूनी वृद्धिको प्राप्त हुई जाननी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह एक दूना वृद्धिरूप स्थान है। इस प्रकार पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थानोंके व्यतीत होनेपर वहां समस्त स्थानोंके असंख्यातवें भागमें प्रकृत भेदरूप शलाकाओंके आश्रयसे यवमध्य उत्पन्न होता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* यहाँ जितने द्विगुण वृद्धिरूप स्थान प्राप्त होते हैं उनके असंख्यातवें भागमें यवमध्य होता है।

§ ५६१. यहाँ समस्त स्थान पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं क्योंकि एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे परिवर्धित अनिर्लेपित स्थितिसम्बन्धी शलाकाएँ उनसे अधिक नहीं पाई

द्धाणस्स असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणे तप्पाओग्गपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तंतरवियप्पेण अंतरिदाणं ठिदीणमुदयेण णिल्लेविदपुव्वाणं भवसमयपबद्धाणं सलागाओ पुव्वं व अणंताओ असंखेज्जाओ च होदूण जवमज्झभावेण समुप्पण्णाओ दट्ठव्वाओ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। एत्तो उवरिमेसु सयलट्ठाणद्धाणस्स असंखेज्जेसु भागेसु विसेसहाणीए असंखेज्जाओ गुणहाणीओ गंतूण सव्वुक्कस्स-णिल्लेवणंतरेण णिल्लेविदाणं भव-समयपबद्धाणं सलागाओ अणंताओ असंखेज्जाओ च घेत्तूण एत्थतणचरिमवियप्पो होदि त्ति घेत्तव्वं। एत्थ णाणागुणहाणिसलागाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। एयगुणहाणिट्ठाणंतरं पि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। णवरि णाणागुणहाणि-सलागाहिंतो एयगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं। संपहि एत्थतणचरिमवियप्पस्स फुडीकरणट्ठ-मुत्तरसुत्तावयारो—

*** उक्कस्सयं पि णिल्लेवणंतरं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।**

§ ५६२. कुदो? एत्तो अब्भहियाणमणिल्लेवणट्ठिदीणं णिरंतरसरूवेण सव्वत्थमणुवलंभादो। एदं पि सुत्तं देसामासयं तेण णिल्लेवणट्ठिदीहि मि एगादिएगुत्तरकमेण अंतरिदाणमणिल्लेवणट्ठिदीणं भव-समयपबद्धसलागाहि पयदजवमज्झपरूवणाविसेससंभवं जाणिय कायव्वो। जहा एसो अत्थो अक्खवगस्स मग्गिदो तहा चेव खवगस्स वि मग्गियव्वो। णवरि तत्थ उक्कस्सयं पि णिल्लेवणं-तरमावलियाए असंखेज्जदिभागो। एवमेदं समाणिय संपहि एगसमएण णिल्लेविज्जमाणाणं संभवसमयपबद्धाणं पमाणावहारणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

जातीं। अतः इस प्रकारके समस्त स्थानोंके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थानमें तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तरसम्बन्धी भेदोंसे अन्तरित स्थितियोंके उदयसे निर्लेपित पूर्व भवबद्ध और समयप्रबद्धोंकी शलाकाएँ पहलेके समान अनन्त और असंख्यात होकर यवमध्यरूपसे उत्पन्न हुई जाननी चाहिए। यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। आगे इससे उपरिम स्थानके असंख्यात बहुभागप्रमाण स्थानोंमें विशेषहानि द्वारा असंख्यात गुणहानियाँ जाकर सबसे उत्कृष्ट निर्लेपनके अन्तरसे निर्लेपित भवबद्ध और समयप्रबद्धोंकी अनन्त और असंख्यात स्थानोंको ग्रहण करके यहाँका अन्तिम भेद उत्पन्न होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। यहाँपर नाना गुणहानि शलाकाएँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा एक गुणहानि स्थानान्तर भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अब यहाँ अन्तिम विकल्पको स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** उत्कृष्ट भी निर्लेपनरूप स्थितिका अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।**

§ ५६२. क्योंकि इससे अधिक अनिर्लेपित स्थितियाँ निरन्तर सर्वत्र उपलब्ध नहीं होती हैं। यह सूत्र भी देशामर्षक है, इसलिए निर्लेपनरूप स्थितियोंसे एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे अन्तरित अनिर्लेपनरूप स्थितियोंकी भवबद्ध और समयप्रबद्ध शलाकाओंके द्वारा प्रकृत यव-मध्य प्ररूपणाविशेष सम्भव जानकर करना चाहिए। यहाँ जिस प्रकार यह अर्थ अक्षपककी अपेक्षा कहा है उसी प्रकार क्षपककी अपेक्षा भी जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि वहाँ पर उत्कृष्ट भी निर्लेपन अन्तर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। इस प्रकार इस कथनको समाप्त करके अब एक समयके द्वारा निर्लेप्यमान सम्भव समयप्रबद्धोंके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* एक्केण समयेण णिल्लेविज्जंति समयपबद्धा वा भवबद्धा वा एक्को वा, दो वा तिण्णि वा; उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ ५६३. एगादिएगुत्तरपरिवड्ढीए गंतूण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव समयपबद्धा भवबद्धा च एगसमएणणिल्लेविज्जमाणा होंति, णादिरित्ता त्ति भणिदं हो इ। एसा च परूवणा खवगस्स अक्खवगस्स च साहारणभूदा दट्ठव्वा, उभयत्थ वि उक्कस्सेण पलिदोव-मस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं भवसमयपबद्धाणमेगसमयेण णिल्लेवणसंभवं पडि विसेसाभावादो।

* एदेण वि जवमज्झं ।

§ ५६४. एदेण वि अणंतरसुत्तणिद्दिट्ठेण अत्थविसेसेण परिच्छिण्णसरूवाणमेयमेगादि-एगुत्तरकमेण एगसमयेण णिल्लेविज्जमाणाणं भवसमयपबद्धाणमदीदकालमस्सियूण जवमज्झ-परूवणा कायव्वा त्ति भणिदं होइ। संपहि जइ वि एदस्स जवमज्झस्स परूवणा सुगमा तो वि मंदबुद्धिसोदारजणाणुग्गहट्ठं तव्विवरणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो उवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

* एक्केक्केण णिल्लेविज्जंति ते थोवा ।

§ ५६५. एवं भणिदे अदीदे काले जे एगेगसमयपबद्धा भवबद्धा च होदूण णिल्लेविदा तेसिमदीदे काले सव्वत्थ उच्चिणिदूण गहिदसलागाओ अणंतसंखावच्छिण्णाओ होदूण उवरिम-वियप्पपडिबद्धसलागाहिंतो थोवाओ त्ति वुत्तं होइ।

---

* जो समयबद्ध या भवबद्ध एक समय द्वारा निर्लेपित किये जाते हैं वे एक होते हैं, अथवा दो होते हैं अथवा तीन होते हैं। इस प्रकार क्रमसे जाकर उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं ।

§ ५६३. एकसे लेकर एक-एक अधिक परिवर्धित क्रमसे जाकर एक समय द्वारा निर्लेप्यमान समयप्रबद्ध और भवबद्ध उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं, इनसे अधिक नहीं होते यह उक्त कथनका तात्पर्य है। किन्तु यह प्ररूपणा क्षपक और अक्षपकके समानरूपसे जाननी चाहिए, क्योंकि दोनों ही स्थानोंपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवबद्ध और समयप्रबद्धों-का निर्लेपन सम्भव होनेके प्रति विशेषताका अभाव है।

* इस अर्थविशेषके अनुसार भी यवमध्य होता है ।

§ ५६४. 'एदेण वि' अर्थात् इस अनन्तर सूत्र निर्दिष्ट अर्थविशेषके अनुसार भी एकसे लेकर एक-एक अधिकके क्रमसे परिच्छिन्न स्वरूप निर्लेप्यमान इन भवबद्ध और समयप्रबद्धोंकी अतीत-कालके आश्रयसे यवमध्य प्ररूपणा करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब यद्यपि इस यवमध्यकी प्ररूपणा सुगम है, तो भी मन्दबुद्धि श्रोताओंके अनुगृहके लिए उसका विवरण करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेके विभाषाग्रन्थका आरम्भ करते हैं—

* जो समयप्रबद्ध या भवबद्ध एक-एक करके निर्लेपित किये गये हैं वे सबसे थोड़े हैं ।

§ ५६५. ऐसा कहनेपर अतीत कालमें जो एक-एक समयप्रबद्ध और भवबद्ध निर्लेपित किये गये हैं उनकी अतीत कालमें सर्वत्र एकत्रित करके ग्रहण की गयी शलाकाएँ अनन्त संख्यारूप होकर आगेके भेदोंसे सम्बन्ध रखनेवाली शलाकाओंकी अपेक्षा थोड़ी होती हैं।

* दोण्णि णिल्लेविज्जंति विसेसाहिया ।

§ ५६६. जे दो-द्दो समयपबद्धा भवबद्धा वा एगसमएण णिल्लेविदा त्ति अदीदकाले सव्वत्थ जहासंभवमुच्चिणिदूण गहिदा पुव्विल्लेहिंतो विसेसाहिया त्ति वुत्तं होइ । विसेसपमाण-मेत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियं, एत्थतणगुणहाणिअद्धाणस्स तप्पमाणत्तादो ।

* तिण्णि णिल्लेविज्जंति विसेसाहिया ।

§ ५६७. जे तिण्णि-तिण्णि णिल्लेविदा भवबद्धा समयपबद्धा वा ते अदीदकाले सव्वत्थ समुच्चिदसरूवा अणंतरहेट्ठिमवियप्पसलागाहिंतो विसेसाहिया त्ति भणिदं होइ ।

* एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे दुगुणा ।

§ ५६८. एवमवट्ठिदेगेगविसेसपडिवड्ढीए[1] गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणे दुगुणवड्ढी समुप्पज्जदि त्ति वुत्तं होइ । एवं दुगुणवड्ढिदा दुगुणवड्ढिदा जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ दुगुणवड्ढीओ गंतूण तदित्थवियप्पे जवमज्झं समुप्पण्णं ति तत्तो उवरि विसेसहीणकमेण असंखेज्जाओ गुणहाणीओ गंतूण सव्वुक्कस्सपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्त-भवसमयपबद्धसलागाओ घेत्तूण पयदजवमज्झपरूवणाए चरिमवियप्पो होइ । एत्थ जवमज्झ-हेट्ठिमसयलद्धाणादो उवरिमसयलद्धाणमसंखेज्जगुणं, हेट्ठिमदुगुणवड्ढिसलागाहिंतो उवरिमदुगुण-

* जो समयप्रबद्ध या भवबद्ध दो-दो करके निर्लेपित किये गये हैं वे विशेष अधिक होते हैं ।

§ ५६६. जो दो-दो समयप्रबद्ध या भवबद्ध निर्लेपित किये गये हैं वे अतीतकालमें सर्वत्र यथासम्भव एकत्रित करके ग्रहण किये गये पहलेकी अपेक्षा विशेष अधिक होते हैं यह उक्त कथन-का तात्पर्य है । यहांपर विशेष भाग पल्योपमके असंख्यातवें भागके प्रतिभाग प्रमाण है, क्योंकि यहांका गुणहानि अध्वान तत्प्रमाण है ।

* जो समयप्रबद्ध या भवबद्ध तीन-तीन करके निर्लेपित किये गये हैं वे विशेष अधिक होते हैं ।

§ ५६७. जो भवबद्ध या समयपबद्ध तीन-तीन निर्लेपित किये गये हैं वे अतीत काल में सर्वत्र एकत्रित किये गये अनन्तर अधस्तन भेदोंकी शलाकाओंसे विशेष अधिक होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* इस प्रकार एक-एक अधिकके क्रमसे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागमें वे दूने हो गये हैं ।

§ ५६८. इस प्रकार अवस्थित एक-एक विशेषकी परिवृद्धिसे जाकर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थानके प्राप्त होनेपर दूनी वृद्धि उत्पन्न होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार द्विगुणवृद्धि-द्विगुणवृद्धि होती हुई पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण द्विगुणवृद्धियां जाकर वहां प्राप्त हुए विकल्पमें यवमध्य उत्पन्न होता है । पुनः उससे आगे विशेषहीनके क्रमसे असंख्यात द्विगुणहानियां जाकर सबसे उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवबद्ध और समयप्रबद्ध शलाकाओंको ग्रहण कर प्रकृत यवमध्य प्ररूपणामें अन्तिम विकल्प होता है । यहांपर यवमध्यके अधस्तन समस्त अध्वानसे उपरिम पूरा अध्वान असंख्यातगुणा होता है, क्योंकि अधस्तन द्विगुण-

१. ता. आ. प्रत्योः—पडिवत्तीए ।

हाणिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ त्ति एसो सव्वो वि अत्थविसेसो सुत्तणिलीणो वक्खाणेयव्वो। संपहि एत्थतणणाणागुणहाणिसलागाणमेयगुणहाणिट्ठाणंतरस्स च पमाणावहारणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* णाणंतराणि थोवाणि ।

§ ५६९. एत्थतणणाणागुणहाणिसलागाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होदूण थोवाओ त्ति वुत्तं होइ ।

* एक्कंतरछेदणाणि वि असंखेज्जगुणाणि ।

§ ५७०. एगगुणहाणिट्ठाणंतरस्स अद्धच्छेदणयसलागाओ वि पुव्विल्लणाणागुणहाणि-सलागाहिंतो असंखेज्जगुणाओ, तेणेयगुणहाणिट्ठाणंतरं णियमा असंखेज्जगुणं होदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एदं च एयगुणहाणिट्ठाणंतरं पलिदोवमपढमवग्गमूलस्सासंखेज्जदिभाग-मेत्तमेवेत्ति णिच्छेयव्वं, एत्थतणसयलट्ठाणाणं पलिदोवमपढमवग्गमूलं पेक्खिदूणासंखेज्जगुण-हीणत्तस्स उवरिमप्पाबहुअसुत्तबलेण परिणिच्छियत्तादो। संपहि एत्थ भणिदपदविसेसाणं केसिं पि थोवबहुत्तावहारणट्ठमुवरिमं पबंधमाढवेइ—

* अप्पाबहुअं ।

§ ५७१. अदीदपरूवणाविसयाणं केसिं पि पदाणमप्पाबहुअमिदाणिं कस्सामो त्ति भणिदं होइ ।

वृद्धि शलाकाओंसे उपरिम द्विगुणवृद्धि शलाकाएँ असंख्यातगुणी होती हैं। इस प्रकार यह पूरा ही अर्थविशेष सूत्रमें गर्भित है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए। अब यहाँपर नाना गुणहानि शलाकाओंके और एक गुणहानिस्थानान्तरके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* यहाँ नानान्तर अर्थात् नाना गुणहानिशलाकाएँ थोड़ी हैं।

§ ५६९. यहाँकी नाना गुणहानिशलाकाएँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर थोड़ी हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* एकान्तरछेद अर्थात् एक गुणहानिस्थानान्तरके अर्धच्छेद असंख्यातगुणे हैं।

§ ५७०. एक गुणहानिस्थानान्तरकी अर्धच्छेदशलाकाएँ भी पहलेकी नाना गुणहानिकी शलाकाओंकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हैं, इस कारण एक गुणहानिस्थानान्तर नियमसे असंख्यातगुणा है यह इस सूत्रका भावार्थ है। और यह एक गुणहानिस्थानान्तर पल्योपमके असंख्यातवें भाग-प्रमाण ही होता है ऐसा निश्चय करना चाहिए, क्योंकि यहाँके समस्त स्थान पल्योपमके प्रथम वर्गमूलको देखते हुए असंख्यातगुणे हीन हैं यह उपरिम सूत्रके बलसे निश्चित होता है। अब यहाँ-पर कहे गये कितने ही पदविशेषोंके अल्पबहुत्वका अवधारण करनेके लिए उपरिम प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* अब किन्हीं पदोंका अल्पबहुत्व कहते हैं।

§ ५७१. अब अतीत प्ररूपणाविषयक कितने ही पदोंका अल्पबहुत्व इस समय कहेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* सव्वत्थोवमणुसमयणिल्लेवणकंडयमुक्कस्सयं ।

§ ५७२. एत्थाणुसमयणिल्लेवणकंडयमिदि[1] भणिदे समयं पडि भवबद्धाणं समयपबद्धाणं च णिल्लेवणकालो गहेयव्वो। तस्साणुक्कस्सवियप्पपडिसेहट्ठमुक्कस्सविसेसणं कदं; तेण सव्वुक्कस्सयमणुसमयणिल्लेवणकंडयमावलियाए असंखेज्जदिभागपमाणं होदूण सव्वत्थोवमिदि सुत्तत्थो।

* जे एगसमएण णिल्लेविज्जंति भवबद्धा ते असंखेज्जगुणा।

§ ५७३. कुदो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपमाणत्तादो। णचेदमसिद्धं, एक्कम्मि ठिदिविसेसे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता भवबद्धा होदूण णिल्लेविज्जंति त्ति पुव्वमेव परूविदत्तादो।

* समयपबद्धा एगसमयेण णिल्लेविज्जंति असंखेज्जगुणा।

§ ५७४. एदे वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता चेव होंति, किंतु एगम्मि भवबद्धे णिल्लेविज्जमाणे असंखेज्जा समयपबद्धा णिल्लेविज्जमाणा लब्भंति, एगभवबद्धअब्भंतरे जहण्णदो वि अंतोमुहुत्तमेत्ताणं समयपबद्धाणं संभवोवलंभादो। तदो सिद्धमेदेसिं तत्तो असंखेज्ज-गुणत्तं। गुणगारपमाणमेत्थ अंतोमुहुत्तमेत्तमिदि घेत्तव्वं।

* समयपबद्धसेसएण विरहिदाओ णिरंतराओ ट्ठिदीओ असंखेज्जगुणाओ।

---

* उत्कृष्ट अनुसमय निर्लेपनकाण्डक सबसे अल्प है।

§ ५७२. यहाँपर अनुसमय निर्लेपनकाण्डक ऐसा कहनेपर उससे प्रतिसमयके भवबद्ध और समयप्रबद्धोंका निर्लेपनकाल ग्रहण करना चाहिए। उसके अनुत्कृष्ट भेदका निषेध करनेके लिए उत्कृष्ट विशेषण दिया है। इस कारण सबसे उत्कृष्ट अनुसमय निर्लेपनकाण्डक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर सबसे अल्प है यह इस सूत्रका अर्थ है।

* जो भवबद्ध एक समय द्वारा निर्लेपित किये जाते हैं वे असंख्यातगुणे हैं।

§ ५७३. क्योंकि ये पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। और यह कथन असिद्ध नहीं है, क्योंकि एक स्थितिविशेषमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण भवबद्ध होकर निर्लेपित किये जाते हैं यह पूर्व ही कह आये हैं—

* जो समयप्रबद्ध एक समय द्वारा निर्लेपित किये जाते हैं वे असंख्यातगुणे हैं।

§ ५७४. ये भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होते हैं, क्योंकि एक भवबद्धके निर्लेप्यमान होनेमें असंख्यात समयप्रबद्ध निर्लेप्यमान प्राप्त होते हैं, क्योंकि एक भवबद्धके भीतर जघन्यसे भी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण समयप्रबद्ध उपलब्ध होते हैं। इसलिए ये उनसे असंख्यातगुणे हैं यह सिद्ध हुआ। यहाँपर गुणकारका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

* समयप्रबद्ध शेषसे रहित निरन्तर स्थितियाँ असंख्यातगुणी हैं।

---

१. ताम्रपत्रप्रतौ प्रायोऽत्र खंडयमिदि इति पाठः।

§ ५७५. एदाओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव णिरंतरमसामण्णाओ ट्ठिदीओ अभवसिद्धियपाओग्गे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीओ होंति त्ति पुव्वमेव भणिदत्तादो। किंतु पुव्विल्लेहिंतो एदाओ असंखेज्जगुणाओ। कधमेदं परिच्छिज्जदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो।

* पलिदोवमवग्गमूलमसंखेज्जगुणं।

§ ५७६. किं कारणं ? असामण्णट्ठिदीणं णिरंतरमुवलब्भमाणाणं पलिदोवमपढमवग्गमूलासंखेज्जभागपमाणत्तादो। ण चेदमसिद्धं एवं ? एदम्हादो चेव सुत्तादो तस्स तहाभावपरिणिच्छयादो।

* णिसेगगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं।

§ ५७७. कुदो ? असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणत्तादो। णेदमसिद्धं; कम्मट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागाहिं कम्मट्ठिदीए भाजिदाए परिप्फुडमेवासंखेज्जपढमवग्गमूलमेत्तणिसेगगुणहाणिट्ठाणपमाणुप्पत्तिदंसणादो।

* भवबद्धाणं णिल्लेवणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।

§ ५७८. एदाणि वि असंखेज्जपढमवग्गमूलमेत्ताणि चेव। किंतु असंखेज्जणिसेयगुणहाणिगब्भाणि तदो असंखेज्जगुणाणि जादाणि।

* समयपबद्धाणं णिल्लेवणट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

---

§ ५७५. ये पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होती हैं, क्योंकि अभवसिद्धिक जीवोंके योग्य निरन्तर असामान्य स्थितियाँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं यह पहले ही कह आये हैं। किन्तु ये पूर्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणी हैं।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—यह इसी सूत्रसे जाना जाता है।

* पल्योपमका प्रथम वर्गमूल असंख्यातगुणा है।

§ ५७६. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि निरन्तर उपलब्ध होनेवाली असामान्य स्थितियाँ पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं। और इस प्रकार यह कथन असिद्ध नहीं है, क्योंकि इसी सूत्रसे उसके उस प्रकारके होनेका ज्ञान होता है।

* निषेकगुणहानिस्थानान्तर असंख्यातगुणा है।

§ ५७७. क्योंकि यह असंख्यात पल्योपमके प्रथम वर्गमूलप्रमाण है और यह कथन असिद्ध नहीं है, क्योंकि कर्मस्थितिसम्बन्धी नाना गुणहानिशलाकाओंके द्वारा कर्मस्थितिके भाजित करनेपर स्पष्ट ही असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण निषेकगुणहानिस्थानोंके प्रमाणकी उत्पत्ति देखी जाती है।

* भवबद्धोंके निर्लेपनस्थान असंख्यातगुणे हैं।

§ ५७८. ये भी असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण ही हैं। किन्तु इनमें असंख्यात निषेकगुणहानियाँ गर्भित हैं, इस कारण ये असंख्यातगुणे हो जाते हैं।

* समयप्रबद्धोंके निर्लेपनस्थान विशेष अधिक हैं।

§ ५७९. केत्तियमेत्तेण ? अंतोमुहुत्तमेत्तेण। किं कारणं ? समयपबद्धाणं जहण्णणिल्लेवणट्ठाणादो उवरि अंतोमुहुत्तमेत्तीओ ट्ठिदीओ अब्भुस्सरियूण भवबद्धाणं जहण्णणिल्लेवणट्ठाणसमुप्पत्तिदंसणादो।

*** समयपबद्धस्स कम्मट्ठिदीए अंतो अणुसमयअवेदगकालो असंखेज्जगुणो।**

§ ५८०. कम्मट्ठिदिआदिसमयप्पहुडि एगसमयपबद्धस्स पलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तणिरंतरवेदगकालमुल्लंघियूण पुणो उवरि जत्थ वा तत्थ वा पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो णिरुद्धसमयपबद्धस्स णिरंतरमवेदगकालो उक्कस्सेण असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणो कम्मट्ठिदीए अब्भंतरे लब्भइ; ओकड्डुक्कड्डुणावसेण णिरंतरमेत्तियमेत्ताणं णिरुद्धसमयपबद्धपडिबद्धगोवुच्छाणं सुण्णत्तदंसणादो। एसो च कालो असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तो होदूण हेट्ठिमरासीदो असंखेज्जगुणो त्ति घेत्तव्वो।

*** समयपबद्धस्स कम्मट्ठिदीए अंतो अणुसमयवेदगकालो असंखेज्जगुणो।**

§ ५८१. एवं भणिदे एगसमयम्मि बद्धो समयपबद्धो बंधावलियाविक्कंतपढमसमयप्पहुडि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालं णिरंतरमुदयमागच्छदि जाव णिरंतरवेदगकालचरिमसमओ त्ति। एसो कालो अणुसमयवेदगकालो त्ति भण्णदे। एसो च पुव्विल्लकालादो असंखेज्ज-

---

§ ५७९. शंका—कितने अधिक हैं ?

समाधान—अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अधिक हैं।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि समयप्रबद्धोंके जघन्य निर्लेपनस्थानसे ऊपर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितियाँ सरककर भवबद्धोंके जघन्य निर्लेपनस्थानोंकी उत्पत्ति देखी जाती है।

*** कर्मस्थितिके भीतर समयप्रबद्धका अनुसमय अवेदककाल असंख्यातगुणा है।**

§ ५८०. कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर एक समयप्रबद्धके पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण निरन्तर वेदककालका उल्लंघन कर ऊपर यहाँ अथवा वहाँ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण विवक्षित समयप्रबद्धका निरन्तर अवेदककाल उत्कृष्टसे असंख्यात पल्योपमके प्रथम वर्गमूलप्रमाण कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त होता है, क्योंकि उत्कर्षण और अपकर्षणके वशसे निरन्तर इयत्प्रमाण विवक्षित समयप्रबद्धसे सम्बद्ध गोपुच्छाओंका शून्यपना देखा जाता है। और यह काल असंख्यात पल्योपमके प्रथम वर्गमूलप्रमाण होकर अधस्तन राशिसे असंख्यातगुणा होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

*** समयप्रबद्धका कर्मस्थितिके भीतर अनुसमय वेदककाल असंख्यातगुणा है।**

§ ५८१. इस प्रकार कहनेपर एक समयमें बद्ध समयप्रबद्ध बन्धावलिके अनन्तर प्रथम समयसे लेकर पल्योपमके असंख्यातवें भागरूप कालप्रमाण निरन्तर वेदककालके अन्तिम समय तक निरन्तर उदयको प्राप्त होता है। इस कालको अनुसमय वेदककाल कहते हैं। और यह काल पिछले कालकी अपेक्षा असंख्यातगुणा है, क्योंकि दोनों कालोंके सामान्यसे असंख्यात पल्योपमके

गुणो, दोण्हमसंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्ताविसेसे वि परमागमोवएसबलेण तत्तो एदस्सा- संखेज्जगुणत्तसिद्धीदो ।

❀ सव्वो अवेदगकालो असंखेज्जगुणो ।

§ ५८२. एगसमयपबद्धस्स णिरंतर—वेदगावेदगकालेसु कम्मट्ठिदीए अब्भंतरे सुक्कंधयार- पक्खेसु व परियत्तमाणेसु तत्थ वेदगकालं मोत्तूण अवेदगकालो[1] चेव संपिंडिय गहिदे पयदकालो समुप्पज्जइ । एसो च पुव्विल्लादो अणुसमयवेदगकालादो असंखेज्जगुणो । णाणाकंडयसंकलण- सरूवस्सेदस्स एगखंडयसरूवादो तत्तो असंखेज्जगुणत्तसिद्धीए विरोहाभावादो ।

❀ सव्वो वेदगकालो असंखेज्जगुणो ।

§ ५८३. तस्सेव णिरुद्धसमयपबद्धस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरे वेदगकालो सव्वत्थ संपिंडिय गहिदो सव्वो वेदगकालो त्ति भण्णदे; वेदगकालकंडयाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं सव्वेसिमेव संपिंडियूण गहिदाणं समूहसिद्धत्तादो । एदस्स च पमाणं कम्मट्ठिदीए असंखेज्जा भागा भवंति, पुव्विल्लवेदगकालस्स सव्वस्सेव कम्मट्ठिदीए असंखेज्जदिभागपमाणत्तादो । तदो सिद्धमेदस्स तत्तो असंखेज्जगुणत्तं ।

❀ कम्मट्ठिदी विसेसाहिया ।

प्रथम वर्गमूलप्रमाण होनेपर भी परमागमके उपदेशके बलसे पूर्व कालकी अपेक्षा यह काल असंख्यातगुणा सिद्ध होता है ।

❀ सम्पूर्ण अवेदककाल असंख्यातगुणा है ।

§ ५८२. एक समयप्रबद्धके कर्मस्थितिके भीतर निरन्तर वेदककाल और अवेदककालोंके शुक्लपक्ष और कृष्णपक्षके समान परिवर्तमान होनेपर उनमेंसे वेदककालको छोड़कर अवेदककालको ही एकत्रित करके ग्रहण करनेपर प्रकृत काल उत्पन्न होता है । अतः यह काल पिछले अनुसमय वेदककालकी अपेक्षा असंख्यातगुणा है, क्योंकि यह नाना काण्डकोंके संकलनस्वरूप एक काण्डक- स्वरूप है, इसलिए इसके पिछले कालकी अपेक्षा असंख्यातगुणा सिद्ध होनेमें विरोधका अभाव है ।

❀ सम्पूर्ण वेदककाल असंख्यातगुणा है ।

§ ५८३. उसी विवक्षित समयप्रबद्धका कर्मस्थितिके भीतर जो पूरी स्थितिके भीतरका एकत्रित किया हुआ वेदककाल ग्रहण किया गया है वह सब वेदककाल कहलाता है, क्योंकि वह पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ग्रहण किये गये सभी वेदककाल काण्डकोंका एकत्रित समूहरूप सिद्ध होता है । अतः इसका प्रमाण कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण है, क्योंकि पिछला पूरा अवेदककाल कर्मस्थितिके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए यह काल पिछले कालकी अपेक्षा असंख्यातगुणा सिद्ध होता है ।

❀ कर्मस्थिति विशेष अधिक है ।

---

१. ताम्रप्रतौ—वेदककालो इति पाठः ।

§ ५८४. केत्तियमेत्तेण ? सगअसंखेज्जदिभागभूदसव्वावेदगकालमेत्तेण। कुदो ? वेदगावेदग-कालसमूहस्स कम्मट्ठिदिववएसारुहत्तादो। एवमेदम्मि चूलियप्पाबहुए समत्ते तदो अट्ठमीए मूल-गाहाए अत्थविहासा समत्ता भवदि।

*** णवमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।**

§ ५८५. अट्ठममूलगाहाविहासणाणंतरमेत्तो जहावसरपत्ताए णवममूलगाहाए समुक्कित्तणा कायव्वा त्ति वुत्तं होइ।

(१५१) किट्टीकदम्मि कम्मे ट्ठिदि-अणुभागेसु केसु सेसाणि।
कम्माणि पुव्वबद्धाणि बज्झमाणाणुदिण्णाणि ॥२०४॥

§ ५८६. किमट्ठमेसा णवमी मूलगाहा समोइण्णा त्ति चे ? वुच्चदे—णाणावरणादिकम्माणं किट्टिवेदगपढमसमए ठिदिअणुभागसंतकम्मपमाणावहारणट्ठं तेसिं चेव ट्ठिदि-अणुभागबंधोदयविसे-सावहारणट्ठं च गाहासुत्तमेदमोइण्णं; परिप्फुडमेवेत्थ तहाविहत्थणिद्देसदंसणादो।

तं जहा—'किट्टीकदम्मि कम्मे' पुव्वमकिट्टीसरूवेण मोहणीयाणुभागसंतकम्मे णिरवसेसं किट्टीसरूवेण परिणामिदम्मि किट्टीवेदगपढमसमये वट्टमाणस्स तस्स ट्ठिदिसंतादिपमाणगवेसणं कस्सामो त्ति वुत्तं होइ। 'ठिदि-अणुभागेसु० पुव्वबद्धाणि' एवं भणिदे ताधे पुव्वबद्धाणि कम्माणि

---

§ ५८४. शंका—कियत्प्रमाण अधिक है ?

समाधान—अपने असंख्यातवें भागप्रमाण समस्त अवेदककालप्रमाण अधिक है, क्योंकि वेदक और अवेदककालका समूह कर्मस्थिति संज्ञाके योग्य होता है। इस प्रकार इस चूलिकारूप अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर उसके अनन्तर आठवीं मूलगाथाकी अर्थविभाषा समाप्त होती है।

*** अब नौवीं मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करते हैं।**

§ ५८५. आठवीं मूलगाथाकी विभाषा करनेके अनन्तर यथावसरप्राप्त नौवीं मूलगाथाकी समुत्कीर्तना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

(१५१) मोहनीयकर्मके पूरे कृष्टिरूप किये जानेके बाद कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें पूर्वबद्ध ज्ञानावरणादि शेष कर्म किन स्थितियोंमें और किन अनुभागोंमें पाये जाते हैं। तथा बध्यमान और उदीर्ण ज्ञानावरणादि कर्म किन स्थितियोंमें और किन अनुभागोंमें पाये जाते हैं ॥२०४॥

§ ५८६. शंका—यह नवीं मूलगाथा किसलिए अवतीर्ण हुई है ?

समाधान—कहते हैं—कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थिति और अनुभागसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए तथा उन्हींके स्थिति और अनुभागसम्बन्धी बन्ध और उदयविशेषके अवधारण करनेके लिए यह गाथासूत्र अवतीर्ण हुआ है, क्योंकि इस गाथासूत्रमें उस प्रकारके अर्थका निर्देश स्पष्टरूपसे ही देखा जाता है।

वह जैसे—'किट्टीकदम्मि कम्मे' पहले अकृष्टिरूपसे अवस्थित मोहनीय कर्मसम्बन्धी अनुभागसत्कर्मके कृष्टिस्वरूपसे परिणमित होनेपर कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें स्थित हुए उसके स्थिति और सत्त्व आदिके प्रमाणका गवेषण करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'ठिदि अणुभागेसु'

णाणावरणीयादीणि केसु ट्ठिदि-अणुभागेसु सेसाणि, केत्तियं ठिदिअणुभागसंतकम्मं घादिय केत्तियेसु ट्ठिदि-अणुभागभेदेसु परिसेसिदाणि त्ति वुत्तं होइ। एदेण ट्ठिदि-अणुभागसंतकम्मपमाणविसया पुच्छा णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा।

'बज्झमाणाणुदिण्णाणि' एदेण वि सुत्तावयवेण बज्झमाणाणि कम्माणि उदिण्णाणि च कम्माणि केसु ट्ठिदि-अणुभागेसु वट्टंति त्ति ट्ठिदि-अणुभागबंधविसय-ट्ठिदि-अणुभागोदयविसया च पुच्छा णिद्दिट्ठा त्ति दट्ठव्वा। तदो तिण्हमेदासिं पुच्छाणं णिण्णयविहाणट्ठमेसा मूलगाहा समोइण्णा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। संपहि एदिस्से मूलगाहाए पुच्छामेत्तेण सूचिदत्थविहासणट्ठमेत्थ दो भासगाहाओ होंति त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

*** एदिस्से दो भासगाहाओ।**

§ ५८७. ठिदि-अणुभागसंतावहारणे पढमा भासगाहा, तेसिं चेव बंधावहारणे विदिया भासगाहा त्ति एवमेत्थ दो चेव भासगाहाओ होंति। तदिये अत्थे ट्ठिदि-अणुभागोदयपरूवणप्पये तदिया भासगाहा एत्थ किण्णोवइट्ठा त्ति णासंकणिज्जं, बंध-संतपरूवणादो चेव उदयपरूवणा वि जाणिज्जदि त्ति अहिप्पायेण तप्पडिबद्धगाहंतराणुवएसादो। एवमेत्थ दोण्हं भासगाहाणमत्थित्तं जाणाविय संपहि जहाकममेव तासिं समुक्कित्तणं कुणमाणो उवरिमं पबंधमाह—

पुव्वबद्धाणि' ऐसा कहनेपर उस समय पूर्वबद्ध ज्ञानावरणादि कर्म किन स्थितियोंमें और अनुभागोंमें शेष रहते हैं अर्थात् कितने स्थिति और अनुभागसत्कर्मका घात करके कितने स्थिति और अनुभागोंमें परिशेष रहते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस सूत्रवचन द्वारा स्थिति और अनुभागसत्कर्मकी प्रमाणविषयक पृच्छा निर्दिष्ट की गयी जाननी चाहिए।

'बज्झमाणाणुदिण्णाणि' इस गाथासूत्रके अन्तिम पाद द्वारा भी बंधनेवाले कर्म और उदीर्णकर्म किन स्थितियों और अनुभागोंमें रहते हैं इस प्रकार स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धविषयक तथा स्थितिउदय और अनुभागउदयविषयक पृच्छा निर्दिष्ट की गयी जाननी चाहिए। इसलिए इन तीनों पृच्छाओंका निर्णय करनेके लिए यह मूलगाथा अवतीर्ण हुई है, इस प्रकार यहाँपर इस सूत्रगाथाका यह समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस मूलगाथाके पृच्छा मात्रसे सूचित हुए अर्थकी विभाषा करनेके लिए यहाँपर दो भाष्यगाथाएँ हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस वचनको कहते हैं—

*** इस नौवीं मूल सूत्रगाथाकी दो भाष्यगाथाएँ हैं।**

§ ५८७. स्थिति और अनुभागसत्कर्मके अवधारण करनेमें प्रथम भाष्यगाथा है तथा उन्हींके बन्धके अवधारण करनेमें दूसरी भाष्यगाथा है इस प्रकार प्रकृतमें दो ही भाष्यगाथाएँ हैं।

शंका—स्थिति और अनुभागके उदयकी प्ररूपणा जिसमें मुख्यरूपसे की गयी है ऐसे तीसरे अर्थमें तीसरी भाष्यगाथा यहाँपर क्यों नहीं उपदिष्ट की गयी है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि स्थिति और अनुभागसम्बन्धी बन्ध और सत्त्वका प्ररूपण करनेसे ही उदयप्ररूपणाका भी ज्ञान हो जाता है इस अभिप्रायसे उदयसे सम्बन्ध रखनेवाली अन्य गाथाका उपदेश नहीं किया है। इस प्रकार यहाँपर दोनों भाष्यगाथाओंके अस्तित्वका ज्ञान कराकर अब यथाक्रमसे ही उनकी समुत्कीर्तना करते हुए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

* तासिं समुक्कित्तणा ।

§ ५८८. सुगमं ।

(१५२) किट्टीकदम्मि कम्मे णामागोदाणि वेदणीयं च ।
वस्सेसु असंखेज्जेसु सेसगा होंति संखेज्जा ॥२०५॥

§ ५८९. एसा पढमभासगाहा किट्टीवेदगपढमसमए सत्तण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठमोइण्णा । अणुभागसंतकम्मपमाणावहारणं पि देसामासयभावेणेत्थेव पडिबद्धमिदि घेत्तव्वं । संपहि एदिस्से अवयवत्थपरूवणा कीरदे । तं जहा—'किट्टीकदम्मि कम्मे०' एवं भणिदे पुव्वमकिट्टीसरूवे किट्टीभावेण णिरवसेसं परिणमिदम्मि मोहणीयाणुभागसंतकम्मे तदवत्थाए वट्टमाणस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स णामागोदाणि वेदणीयं च असंखेज्जेसु वस्सेसु संतकम्मसरूवेसु घादिदावसेसेसु वट्टंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो । 'सेसगा होंति संखेज्जा' एवं भणिदे सेसाणि घादिकम्माणि संखेज्जवस्सावच्छिण्णट्ठिदिसंतकम्मपमाणाणि दट्ठव्वाणि त्ति वुत्तं होइ । सव्वाणि च कम्माणि अणंतेसु अणुभागेसु समयाविरोहेण वट्टंति त्ति अणुसिद्धीदो अणुभागसंतकम्मणिद्देसो एत्थेव सुत्ते णिलीणो वक्खाणेयव्वो । संपहि एवंविहमेदिस्से गाहाए अवयवत्थं फुडीकरेमाणो उवरिमं विहासागंथमाढवेइ—

* विहासा ।

---

* अब उन दोनों भाष्यगाथाओंकी समुत्कीर्तना करते हैं ।

§ ५८८. यह सूत्र सुगम है ।

(१५२) मोहनीयकर्मके कृष्टिरूप किये जानेके बाद कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें नाम, गोत्र और वेदनीयकर्म असंख्यात वर्षप्रमाण सत्कर्म स्थितिरूप पाये जाते हैं तथा शेष कर्म संख्यात वर्षप्रमाण सत्कर्मस्थितिरूप पाये जाते हैं ॥२०५॥

§ ५८९. यह प्रथम भाष्यगाथा कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें सात कर्मोंके स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए अवतीर्ण हुई है । अनुभागसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण भी देशामर्षकरूपसे इसी भाष्यगाथामें प्रतिबद्ध है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । अब इसके अवयवार्थकी प्ररूपणा करते हैं । वह जैसे—'किट्टीकदम्मि कम्मे' ऐसा कहनेपर पहले जो कर्म अकृष्टिस्वरूप है उसके कृष्टिरूपसे पूरा परिणत होनेपर मोहनीय कर्मसम्बन्धी अनुभागसत्कर्मके उस अवस्थामें विद्यमान प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदकके नाम, गोत्र और वेदनीयकर्म घात करनेके बाद असंख्यात वर्ष स्थितिसत्कर्मरूप शेष रहते हैं यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है । 'सेसगा होंति संखेज्जा' ऐसा कहनेपर शेष चार घातिकर्म संख्यात वर्षरूप स्थितिसत्कर्मप्रमाण जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है । और सभी कर्म समयके अविरोधपूर्वक अनन्त अनुभागोंमें रहते हैं । यह अनुक्तसिद्ध होनेसे अनुभागसत्कर्मका निर्देश इसी सूत्रमें गर्भित है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए । अब इस भाष्यगाथाके इस प्रकारके अवयवार्थका स्पष्टीकरण करनेवाले आगेके विभाषाग्रन्थको आरम्भ करते हैं—

* अब इस प्रथम भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ५९०. सुगमं ।

* किट्टीकरणे णिट्ठिदे किट्टीणं पढमसमयवेदगस्स णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदि-संतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि ।

* मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठ वस्साणि ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ ५९१. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । एवं पढमभासगाहाए अत्थविहासणं समाणिय संपहि विदियभासगाहाए अवयारं कुणमाणो इदमाह—

* एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

§ ५९२. सुगमं ।

(१५३) किट्टीकदम्मि कम्मे सादं सुहणाममुच्चगोदं च ।
बंधदि च सदसहस्से ट्ठिदि-अणुभागे सुदुक्कस्सं ॥२०६॥

§ ५९३. एसा विदियभासगाहा अघादिकम्माणं ट्ठिदि-अणुभागबंधपमाणावहारणे मुत्तकंठमेव पडिबद्धा होदूण पुणो घादिकम्माणं पि ठिदिअणुभागबंधपमाणावहारणं देसामासयभावेण सूचेदि त्ति घेत्तव्वं । संपहि एदिस्से अवयवत्थपरूवणं कस्सामो । तं जहा—'किट्टीकदम्मि कम्मे०' पुव्वमकिट्टीसरूवे किट्टीसरूवेण णिस्सेसं परिणामिदम्मि मोहणीयाणुभागसंतकम्मे तदवत्थाए

---

§ ५९०. यह सूत्र सुगम है ।

* कृष्टिकरणके सम्पन्न होनेपर कृष्टियोंका प्रथम समयमें वेदन करनेवाले जीवके नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है ।

* मोहनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म आठ वर्षप्रमाण होता है ।

* शेष तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है ।

§ ५९१. ये तीनों सूत्र सुगम हैं । इस प्रकार प्रथम भाष्यगाथाके अर्थकी विभाषा समाप्त करके अब दूसरी भाष्यगाथाका अवतार करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

* अब आगे इस दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ५९२. यह सूत्र सुगम है ।

(१५३) मोहनीय कर्मके कृष्टिकरण कर दिये जानेपर सातावेदनीय, शुभ नाम और उच्चगोत्र कर्मोंकी शतसहस्र वर्षप्रमाण स्थितिको बाँधता है । तथा इन कर्मोंके अनुभागको आदेश उत्कृष्ट बाँधता है ॥२०६॥

§ ५९३. यह दूसरी भाष्यगाथा अघाति कर्मोंके स्थिति और अनुभागबन्धके प्रमाणका अवधारण करनेमें मुक्तकण्ठसे प्रतिबद्ध होकर पुनः घातिकर्मोंके स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धके प्रमाणके निर्णयको भी देशामर्षकभावसे सूचित करती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए । अब इसके अवयवार्थका प्ररूपण करेंगे । वह जैसे—'किट्टीकदम्मि कदे' पहले जो कर्म अकृष्टिरूपसे परिणत था उसके पूरी तरहसे कृष्टिरूपसे परिणत होनेपर मोहनीय कर्मके अनुभाग सत्कर्मके उस अवस्थामें

वट्टमाणो सादावेदणीयं सुभणामं जसगित्तिसण्णिदमुच्चागोदं च एवमेदासिं पयडीणं ट्ठिदिबंधं करेमाणो 'बंधदि च सदसहस्से ट्ठिदिं' संखेज्जवस्ससदसहस्सपमाणमेदासिं ट्ठिदिं बंधदि त्ति सुत्तत्थसंबंधो। एत्थतण 'च' सद्देण पुण तिण्हं घादिकम्माणं संखेज्जवस्ससहस्समेत्तो मोहणीयस्स च चत्तारिमासमेत्तो ट्ठिदिबंधो सूचिदो त्ति दट्ठव्वो। 'अणुभागे सुदुक्कस्सं' एदेण सुत्तावयवेण पुव्वुत्ताणं तिण्हमघादिकम्माणं पयडीणमादेसुक्कस्सो अणुभागबंधो जाणाविदो। 'तु' सद्दो विसेसणट्ठो होदूण पुव्वुत्ताणं पसत्थपयडीणमोघुक्कस्साणुभागबंधणिरायरणदुवारेणादेसुक्कस्साणुभागबंधसंभवं सूचेदि त्ति दट्ठव्वं, सुहुमसांपराइयचरिमसमये तासिमोघुक्कस्साणुभागबंधदंसणादो। 'तु' सद्देणेव घादिकम्माणं पि अणुभागबंधणिद्देसो सूचिदो त्ति घेत्तव्वो। अधवा ईसदुक्कस्सं सुदुक्कस्सं तप्पाओग्गुक्कस्समणुभागमेदेसिं सुहाणं कम्माणं बंधदि त्ति वक्खाणेयव्वं; ईषच्छब्दस्यादिलोपे उकारादेशे च कृते 'सुदुक्कस्स' निर्देशसिद्धेः।

वर्तमान सातावेदनीय, शुभनाम, यशःकीर्ति और उच्चगोत्र इस प्रकार इन प्रकृतियोंके स्थितिबन्धको करता हुआ 'बंधदि च सहसहस्से ट्ठिदिं' संख्यात शतसहस्र वर्षप्रमाण इन कर्मोंकी स्थितिको बांधता है यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। यहाँपर आये हुए 'च' शब्दसे तीन घातिकर्मोंकी संख्यात हजार वर्षप्रमाण और मोहनीयकर्मकी चार महाप्रमाण स्थितिको बाँधता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। 'अणुभागे सुदुक्कस्सं' इस सूत्रवचनके अनुसार पूर्वोक्त तीन अघाति कर्मोंके आदेश उत्कृष्ट अनुभागबन्धका ज्ञान कराया गया है। 'तु' शब्द विशेषणार्थक होकर प्रशस्त प्रकृतियोंके ओघ उत्कृष्ट अनुभागबन्धका निराकरण द्वारा आदेश उत्कृष्ट अनुभागबन्धके सम्भवको सूचित करता है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें उन प्रकृतियोंका ओघ उत्कृष्ट अनुभागबन्ध देखा जानेसे 'तु' शब्दके द्वारा ही घातिकर्मोंके भी अनुभागबन्धका निर्देश सूचित किया गया है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अथवा 'सुदुक्कस्सं' का अर्थ है 'ईसदुक्कस्सं' उसके अनुसार इसका अर्थ होता है कि इन शुभ कर्मोंके तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अनुभागको बांधता है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि 'ईषत्' शब्दके आदि अक्षर 'ई' का लोप करके 'उकार' का आदेश करनेपर 'सुदुक्कस्स' निर्देशकी सिद्धि होती है।

विशेषार्थ—'सुदुक्कस्सं' पदका रूपान्तर 'ईसुदुक्कस्सं' व्याकरणके नियमानुसार इस प्रकार हो गया है—'ईषत् + उत्कृष्ट' ये दो शब्द हैं। इनमेंसे 'ईषत्' पदके आदि अक्षर 'ई' का 'कीरइ पयाण काण वि अइमज्झंतवण्णसरलोवो' इस सूत्रके नियमानुसार लोप होकर 'षत्' शेष रहा। पुनः—

> वग्गे वग्गे आई अवट्ठिया दोण्णि जे वण्णा।
> ते णियय-णिययवग्गे तइअत्तणयं उवणमंति ॥

उक्त सूत्रके नियमानुसार 'ष' के स्थानमें 'स' और 'त्' के स्थानमें 'द्' हो जानेसे 'सद्' शब्द बन गया। पुनः

> एए छच्च समाणा दोण्णि अ संज्झक्खरा सरा अट्ठ।
> अण्णोण्णस्सविरोहा उवेंति सव्वे समाएसं ॥

इस सूत्रके नियमानुसार 'सद्' के 'स' में अवस्थित 'अ' के स्थानमें 'उ' आदेश हो जानेपर 'सुद्' रूप सिद्ध हुआ। पुनः 'सुद् + उक्कस्स = सुदुक्कस' पाठ निष्पन्न हो गया है। यहाँ इसी प्रकार प्राकृत व्याकरणके नियमानुसार 'उत्कृष्ट' पदके स्थानमें 'उक्कस्स' पद निष्पन्न हुआ है इतना और समझ लेना चाहिए।

§ ५९४. संपहि एदस्सेव सुत्तस्सत्थं फुडीकरणट्ठमुवरिमं विहासागंथमाह—

* विहासा ।

§ ५९५. सुगमं ।

* किट्टीणं पढमसमयवेदगस्स संजलणाणं ठिदिबंधो चत्तारि मासा ।

* णामागोदवेदणीयाणं तिण्हं चेव घादिकम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

* णामागोदवेदणीयाणमणुभागबंधो तस्समयउक्कस्सगो ।

§ ५९६. सुगमो च एसो विहासागंथो; तदो ण एत्थ किंचि वक्खाणेयव्वमत्थि; जाणिदजाणावणे गंथगउरवं मोत्तूण फलविसेसाणुवलंभादो । णवरि णामागोदवेदणीयाणमणुभागबंधो ओघुक्कस्सो ण होइ, किंतु तप्पाओग्गुक्कस्सो त्ति जाणावणट्ठं तस्समयउक्कस्सो त्ति णिद्देसो । तस्स समयस्स पाओग्गो उक्कस्सो तस्समयउक्कस्सो आदेसुक्कस्सो, तेसिमणुभागबंधो होदि त्ति वुत्तं होइ । ओघुक्कस्सो पुण एदेसिमणुभागबंधो कत्थ होदि त्ति वुत्ते सुहुमसांपराइयचरिमसमये भविस्सदि; तत्थ सव्वुक्कस्सविसोहीए बज्झमाणस्स तदणुभागस्स ओघुक्कस्सभावसिद्धीए णिप्पडिबंधमुवलंभादो । तिण्हं घादिकम्माणं मोहणीयस्स च अणुभागबंधो तप्पाओग्गजहण्णो होदि त्ति

§ ५९४. अब इसी सूत्रके अर्थका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके विभाषाग्रन्थको कहते हैं—

* अब इस दूसरी भाष्यगाथाकी विभाषा करते हैं ।

§ ५९५. यह सूत्र सुगम है ।

* कृष्टियोंका प्रथम समय वेदन करनेवालेके चारों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध चार मास होता है ।

* नाम, गोत्र और वेदनीय इन तीनों ही अघातिकर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्ष प्रमाण होता है ।

* नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मोंका अनुभागबन्ध उस समयके योग्य उत्कृष्ट होता है ।

§ ५९६. यह विभाषाग्रन्थ सुगम है । इसलिए इसमें कुछ भी व्याख्यान करने योग्य नहीं है, क्योंकि जिसको जान लिया गया है उसका पुनः ज्ञान करनेमें ग्रन्थकी गुरुताको छोड़कर अन्य कोई फलविशेष नहीं पाया जाता । इतनी विशेषता है कि नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मका अनुभागबन्ध ओघ उत्कृष्ट नहीं होता है, किन्तु तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट होता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'तस्समयउक्कस्सो' यह निर्देश किया है । 'तस्स समयस्स पाओग्गो उक्कस्सो तस्समयउक्कस्सो आदेसुक्कस्सो' उस समयके प्रायोग्य उत्कृष्ट अर्थात् आदेश उत्कृष्ट उन कर्मोंका अनुभागबन्ध होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । परन्तु इनका ओघ उत्कृष्ट अनुभागबन्ध कहाँ होता है ऐसी जिज्ञासा होनेपर यह कहा गया है कि सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें होगा, क्योंकि वहाँपर सबसे उत्कृष्ट विशुद्धिके कारण बन्धको प्राप्त होनेवाले उस अनुभागकी ओघ उत्कृष्टपनेकी सिद्धि बिना बाधाके उपलब्ध होती है । तीन घातिकर्मों और मोहनीयकर्मका अनुभागबन्ध

एसो वि अत्थो एत्थेव सुत्ते अंतब्भूदो त्ति वट्टव्वो। ट्ठिदि-अणुभागोदओ वि सव्वेसिं कम्माणं एत्थ समयाविरोहेणाणुगंतव्वो, सुत्तस्सेदस्स देसामासयभावेणावट्ठाणदंसणादो। तदो णवमीए मूलगाहाए अत्थविहासा समत्ता भवदि।

* एत्तो ताव दो मूलगाहाओ थवणिज्जाओ।

५९७. किट्टीकरणद्धाए पडिबद्धाओ एक्कारस मूलगाहा होंति त्ति पुव्वं सामण्णेण भणिदं। विसेसदो पुण एदाओ अणंतरविहासिदाओ णव चेव मूलगाहाओ किट्टीकरणद्धाए पडिबद्धाओ, एत्तो उवरिमाणं दोण्हं मूलगाहाणं किट्टीवेदगाए पडिबद्धत्तदंसणादो। पुव्वुत्तमूलगाहासु वि काओ वि किट्टीवेदगद्धाए पडिबद्धाओ अत्थि त्ति णासंकणिज्जं, तासिमुहयत्थ साहारणभावेण पयट्टाणं किट्टीकरणद्धासंबंधेणेव विहाणे विरोहाणुवलंभादो। तदो एत्तो उवरिमाओ दो मूलगाहाओ किट्टीवेदगद्धापडिबद्धाओ ताव थवणिज्जाओ काढूण किट्टीवेदगस्स परिभासत्थपरूवणमेव ताव सवित्थरं कस्सामो; पच्छा गाहासुत्तत्थविहासा भविस्सदि, गाहासुत्ताणं परिभासणत्थे अविहासिदे तेसिमवयवत्थपरामरसलक्खणस्स सुत्तफासस्स करणोवायाभावादो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवमेदासिं दोण्हं मूलगाहाणं थवणिज्जभावं काढूण किट्टीवेदगस्स परिभासत्थविहासणं कुणमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाह—

तत्प्रायोग्य जघन्य होता है इस प्रकार यह अर्थ भी इसी सूत्रमें अन्तर्भूत जानना चाहिए। तथा सभी कर्मोका स्थिति और अनुभागका उदय भी यहींपर समयके अविरोधपूर्वक जानना चाहिए, क्योंकि इस सूत्रका देशामर्षक भावसे अवस्थान देखा जाता है। इसके बाद नौवीं मूलगाथाकी अर्थ-विभाषा समाप्त होती है।

* इससे आगे अब सर्व प्रथम दो मूल गाथाओंको स्थगित करते हैं।

§ ५९६. कृष्टिकरणसे सम्बन्ध रखनेवाली ग्यारह मूलगाथाएँ हैं यह पहले सामान्यसे कह आये हैं। विशेषरूपसे तो अनन्तर पूर्व जिनकी विभाषा कर आये हैं ऐसी ये नो मूल गाथाएँ कृष्टि-करणके कालसे सम्बन्ध रखती हैं, इनसे आगेकी दो मूल गाथाएँ कृष्टिवेदकरूप अवस्थासे सम्बन्ध रखनेवाली देखी जाती हैं।

शंका—पूर्वोक्त मूल गाथाओंमें भी कितनी ही मूल गाथाएँ कृष्टिवेदक कालसे सम्बन्ध रखनेवाली हैं ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि वे दोनों ही विषयोंमें साधारण रूपसे प्रवृत्त हैं, इसलिए उनका मात्र कृष्टिकरण अद्धाके सम्बन्धसे विधान करनेमें कोई विरोध नहीं पाया जाता।

इसलिए इससे आगेकी दो मूल गाथाएँ कृष्टिवेदक कालसे सम्बद्ध हैं, अतः उन्हें स्थगित करके कृष्टिवेदककी परिभाषारूप प्ररूपणाको ही सर्वप्रथम विस्तारके साथ कहेंगे, बादमें गाथा-सूत्रके अर्थकी विभाषा होगी, क्योंकि गाथासूत्रोंके परिभाषारूप अर्थकी विभाषा नहीं करनेपर उनके अवयवरूप अर्थका परामर्श करना है लक्षण जिसका ऐसे सूत्रस्पर्शके करनेका दूसरा उपाय नहीं पाया जाता इस प्रकार यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार इन दो मूल गाथाओंको स्थगित करके कृष्टिवेदकके परिभाषारूप अर्थकी विभाषा करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* किट्टीवेदगस्स ताव परूवणा कायव्वा ।

§ ५९८. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ ५९९. सुगमं ।

* किट्टीणं पढमसमयवेदगस्स संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठ वस्साणि ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

* णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

* संजलणाणं ठिदिबंधो चत्तारि मासा ।

* सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

§ ६००. एदाणि सुत्ताणि किट्टीवेदगपढमसमये सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्म-ट्ठिदिबंधपमाणावहारणपडिबद्धाणि सुबोहाणि त्ति ण एत्थ वक्खाणायरो । ण चेदमेत्थासंकणिज्जं णवमीए मूलगाहाए दोहिं भासगाहाहिं एसो अत्थो णिद्दिट्ठो चेव, पुणो किमट्ठं परूविज्जदे ? पुणरुत्तदोसप्पसंगादो त्ति ? किं कारणं, पुव्वुत्तस्सेवत्थस्स मंदबुद्धिजणाणुग्गहट्ठं पुणो वि परूवणे कीरमाणे पुणरुत्तदोसाणवयारादो । एवमेदम्मि संधिविसेसे वट्टमाणस्स ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणं

---

* सर्वप्रथम कृष्टिवेदकको प्ररूपणा करनी चाहिए ।

§ ५९८. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ ५९९. यह सूत्र सुगम है ।

* कृष्टियोंका प्रथम समयमें वेदन करनेवाले क्षपकके संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म आठ वर्ष प्रमाण होता है ।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।

* नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मका स्थिति सत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है ।

* संज्वलनोंका स्थितिबन्ध चार मासप्रमाण होता है ।

* शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात वर्षप्रमाण होता है ।

§ ६००. ये सब सूत्र कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें सब कर्मोंके स्थितिसत्कर्म और स्थितिबन्धके प्रमाणके अवधारण करनेसे सम्बन्ध रखनेवाले हैं और सुबोध हैं, इसलिए यहाँ इनका व्याख्यान नहीं करते हैं ।

शंका—नौवीं मूलगाथाओं द्वारा यह अर्थ निर्दिष्ट किया ही गया है, फिर इसकी प्ररूपणा किस लिए की जाती है, क्योंकि पुनः प्ररूपणा करनेपर पुनरुक्त दोषका प्रसंग आता है ।

समाधान—यहाँ ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि यद्यपि यह अर्थ पूर्वोक्त ही है तो भी मन्दबुद्धि जनोंका अनुग्रह करनेके लिए फिर भी उस अर्थकी प्ररूपणा करनेपर पुनरुक्त दोषका अवतार नहीं होता ।

संभालिय संपहि एत्तो पाए संजलणाणं किट्टीगदाणुभागस्स अणुसमयोवट्टणा एवं पयट्टदि त्ति परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* किट्टीणं पढमसमयवेदगप्पहुडि मोहणीयस्स अणुभागाणमणुसमयोवट्टणा।

§ ६०१. एत्तो पुव्वमस्सकण्णकरणद्धाए किट्टीकरणद्धाए च अंतोमुहुत्तुक्कीरणकालपडिबद्धो अणुभागघादो संजलणपयडीणमस्सकण्णकरणायारेण पयट्टदि। एण्हिं पुणमोहणीयस्स कोहसंजलणादि-भेदेण चउव्विहस्स वि जे अणुभागा किट्टीसरूवा संगहकिट्टीभेदेण बारसधा पविहत्ता तेसिमणु-समयोवट्टणा समये समये अणंतगुणहाणीए घादो पयट्टदि, एत्थतणपरिणामाणं तहाविहाणुभाग-घादहेदुत्तादो।

§ ६०२ एदस्स भावत्थो—बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमेक्केक्किस्से किट्टीए अग्गकिट्टीप्पहुडि असंखेज्जदिभागं समयपबद्धाणमणुभागं मोत्तूण संजलणाणुभागसंतकम्मस्स अणुसमयोवट्टणा एत्थ संजादा त्ति। णाणावरणादिकम्माणं पुण पुव्वुत्तेणेव कमेण अंतोमुहुत्तिओ अणुभागघादो पयट्टदि, तहा चेव सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिघादो वि पयट्टदि त्ति ण एत्थ किंचि णाणत्तमत्थि। एवमेदेण सुत्तेण संजलणाणमणुभागसंतकम्मस्स अणुसमयोवट्टणाए पारंभं पदुप्पाइय संपहि तेसिमणु-भागबंधोदयाणं पि समयं पडि पवुत्तिविसेसजाणावणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

इस प्रकार इस सन्धिविशेषमें विद्यमान क्षपकके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्त्वके प्रमाणको सम्हाल करके अब इससे आगे प्रायः संज्वलनोंके कृष्टिगत अनुभागकी अनुसमय अपवर्तना इस प्रकार प्रवृत्त होती है इस बातका प्ररूपण करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* कृष्टियोंके वेदकके प्रथम समयसे लेकर मोहनीय कर्मके अनुभागोंकी अनुसमय अपवर्तना होती है।

§ ६०१. इससे पूर्व अश्वकर्णकरणके कालमें और कृष्टिकरणके कालमें अन्तर्मुहूर्त काल तक उत्कीरण कालसे सम्बन्ध रखनेवाला संज्वलन प्रकृतियोंका अनुभाग अश्वकर्णकरणके आकारसे प्रवृत्त होता है, परन्तु इस समय क्रोध संज्वलन आदिके भेदसे चार प्रकारके मोहनीय कर्मका जो भी अनुभाग कृष्टिस्वरूप होकर संग्रहकृष्टिके भेदसे बारह प्रकारसे विभक्त हो गया है उनकी अनु-समय अपवर्तना प्रत्येक समयमें अनन्तगुणहानिरूपसे घात होकर प्रवृत्त होती है, क्योंकि यहाँ सम्बन्धी परिणाम उस प्रकारके अनुभागघातके हेतु हैं।

§ ६०२. इसका भावार्थ—बारह ही संग्रह कृष्टियोंमेंसे एक-एक कृष्टिकी अग्रकृष्टिसे लेकर असंख्यातवें भागप्रमाण समयप्रबद्धोंके अनुभागको छोड़कर संज्वलनोंके अनुभागसत्कर्मकी अनुसमय अपवर्तना यहाँ प्रारम्भ हो गयी है। ज्ञानावरणादि कर्मोंका तो पूर्वोक्तरूपसे ही क्रमसे अन्तर्मुहूर्त-प्रमाणवाला अनुभागघात प्रवृत्त रहता है तथा उसी प्रकार सब कर्मोंका स्थितिघात भी प्रवृत्त रहता है। इस प्रकार इसमें किसी प्रकारका भेद नहीं है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा संज्वलनोंके अनुभागसत्कर्मके अनुभागकी अपवर्तनाके प्रारम्भका कथन करके अब उनके प्रतिसमय होनेवाले अनुभागबन्ध और अनुभागउदयकी भी प्रवृत्तिविशेषका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध प्रारम्भ करते हैं—

*** पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहकिट्टी उदये उक्कस्सिया बहुगी बंधे उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा।**

§ ६०३. कोहसंजलणस्स ताव पढमसंगहकिट्टीसरूवेण बंधोदया पयट्टमाणा हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभागं मोत्तूण मज्झिमकिट्टीसरूवेणेव पयट्टंति। एवं पयट्टमाणाणं बंधोदयाणमग्गट्ठिदीओ समये समये अणंतगुणहीणाओ वट्टंति। तत्थ 'पढमसमय० कोहकिट्टी उदये उक्कस्सिया बहुगी' एवं भणिदे उदयम्मि पविसमाणाओ अणंताओ मज्झिमकिट्टीओ अत्थि, तासु जावुक्कस्सकिट्टी सव्वुवरिमा सा बहुगी तिव्वाणुभागा त्ति वुत्तं होइ। 'बंधे उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा' एवं भणिदे बज्झमाणकिट्टीओ वि अणंताओ भवंति। पुणो तासु जा बज्झमाणकिट्टी सव्वुक्कस्सिया सा अणंतगुणहीणा। किं कारणं; उदयग्गकिट्टीदो अणंताओ किट्टीओ हेट्ठा ओसरियूणेदिस्से समवट्ठाणदंसणादो।

*** विदियसमये उदये उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा।**

§ ६०४. कुदो ? अणंतगुणविसोहिमाहप्पेण पढमसमयबंधग्गकिट्टीदो वि अणंतगुणहाणीए परिणमिय विदियसमए उदयुक्कस्सकिट्टीए पवुत्तिणियमदंसणादो।

*** बंधे उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा।**

*** प्रथम समयमें कृष्टिवेदक जीवके जो क्रोधकृष्टि उदयमें प्रवेश करती है वह उत्कृष्ट होकर बहुत (तीव्र) अनुभागवाली होती है।**

§ ६०३. सर्वप्रथम क्रोधसंज्वलनके प्रथम संग्रहकृष्टिरूपसे प्रवर्तमान बन्ध और उदय नीचे और ऊपर असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम कृष्टिरूपसे ही प्रवृत्त होते हैं। इस प्रकार प्रवर्तमान बन्ध और उदयोंकी अग्र स्थितियाँ प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी हीन होकर ही प्रवृत्त होती हैं। उनमें 'पढमसमय० कोहकिट्टी उदये उक्कस्सिया बहुगी' ऐसा कहनेपर उदयमें प्रवेश करनेवाली अनन्त मध्यम कृष्टियाँ होती हैं, उनमेंसे जो सबसे उपरिम उत्कृष्ट कृष्टि है वह बहुत अर्थात् तीव्र अनुभागवाली होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'बंधे उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा' इस प्रकार कहनेपर बध्यमान कृष्टियाँ भी अनन्त होती हैं। पुनः उनमें जो बध्यमान कृष्टि सबसे उत्कृष्ट है वह अनन्तगुणी हीन होती है।

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि उदयरूप अग्र कृष्टिसे अनन्त कृष्टियाँ नीचे सरककर इसका अवस्थान देखा जाता है।

*** दूसरे समयमें उदयमें प्रवेश करनेवाली उत्कृष्ट क्रोधकृष्टि अनन्तगुणहीन अनुभागवाली होती है।**

§ ६०४. क्योंकि पूर्व समयसे अनन्तगुणी विशुद्धिके माहात्म्यवश प्रथम समयमें बँधनेवाली कृष्टिसे भी अनन्तगुणहानिरूपसे परिणमन कर दूसरे समयमें उदयरूप उत्कृष्ट कृष्टिकी प्रवृत्ति देखी जाती है।

*** किन्तु बन्धमें क्रोधकृष्टि उत्कृष्ट होकर अनन्तगुणहीन अनुभागवाली होती है।**

§ ६०५. पढमसमयबंधुक्कस्सकिट्टीदो अणंतगुणहीणविदियसमयउदयुक्कस्सकिट्टीदो वि अणंतगुणहाणीए परिणमिय विदियसमये बंधुक्कस्सकिट्टी पयट्टदि त्ति भणिदं होइ। कुदो एवमिदि चे ? परिणामपाहम्मादो।

*** एवं सव्विस्से किट्टीवेदगद्धाए।**

§ ६०६. जहा पढम-विदियसमयेसु बंधोदयउक्कस्सकिट्टीणमप्पाबहुअकमो परूविदो एवं चेव सव्विस्से किट्टीवेदगद्धाए परूवेयव्वो; विसेसाभावादो त्ति भणिदं होइ। संपहि बंधोदयजहण्ण-किट्टीणं केरिसमप्पाबहुअं होदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** पढमसमये बंधे जहण्णिया किट्टी तिव्वाणुभागा।**

§ ६०७. कुदो ? उदयजहण्णकिट्टीदो उवरि अणंताओ किट्टीओ अब्भुस्सरिदूणेदिस्से पवुत्तिदंसणादो।

*** उदये जहण्णिया किट्टी अणंतगुणहीणा।**

§ ६०८. कुदो ? बंधजहण्णकिट्टीदो हेट्ठा अणंताओ किट्टीओ सयलकिट्टीअद्धाणस्सासंखेज्ज-भागमेत्तीओ ओसरियूणेदिस्से पवुत्तिअब्भुवगमादो। एदस्स भावत्थो— वेदिज्जमाणसयलकिट्टीणं हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभागं मोत्तूण मज्झिमबहुभागसरूवेणेव बंधो पयट्टदि। एवं च पयट्टमाण-

---

§ ६०५. प्रथम समयवर्ती बन्धविषयक उत्कृष्ट कृष्टिसे तथा दूसरे समयवर्ती अनन्तगुणी हीन उदय उत्कृष्ट कृष्टिसे भी अनन्तगुणहानिरूपसे परिणमन करके दूसरे समयमें बन्धोत्कृष्ट कृष्टि प्रवृत्त होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—ऐसा किस कारण होता है ?

समाधान—परिणामोंके माहात्म्यवश ऐसा होता है।

*** इसी प्रकार समस्त कृष्टिवेदक कालमें प्ररूपणा करनी चाहिए।**

§ ६०६. जिस प्रकार प्रथम और द्वितीय समयमें बन्ध और उदयरूप कृष्टियोंके अल्प-बहुत्वके क्रमकी प्ररूपणा की है इसी प्रकार समस्त कृष्टिवेदक कालमें प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उक्त कथनमें कोई भेद नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब बन्ध और उदयरूप जघन्य कृष्टियोंका किस प्रकारका अल्पबहुत्व होता है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** प्रथम समयके बन्धमें जघन्य कृष्टि तीव्र अनुभागवाली होती है।**

§ ६०७. क्योंकि उदयमें प्रवृत्त जघन्य कृष्टिसे ऊपर अनन्त कृष्टियाँ सरककर इस कृष्टिकी प्रवृत्ति देखी जाती है।

*** उदयमें जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी हीन होती है।**

§ ६०८. क्योंकि बन्ध जघन्य कृष्टिसे नीचे अनन्त कृष्टियाँ समस्त कृष्टि अध्वानके असंख्यातवें भागप्रमाण सरककर इसकी प्रवृत्ति देखी जाती है। इसका भावार्थ—वेद्यमान समस्त कृष्टियोंके अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम बहुभागस्वरूपसे ही बन्ध प्रवृत्त होता

बंधग्गकिट्टी उदयग्गकिट्टीदो अणंतगुणहीणा जादा। हेट्ठा पुण उदयजहण्णकिट्टीदो बंधजहण्णकिट्टी अणंतगुणा चेव, उवरि वि हेट्ठा बंधाणुभागस्स सुट्ठ ओवट्टणासंभवादो त्ति।

* विदियसमये बंधा (बद्धा) जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा।

§ ६०९. कुदो ? परिणामपाहम्मादो।

* उदये जहण्णिया अणंतगुणहीणा।

§ ६१०. परिणामविसेसमासेज्ज बंधजहण्णकिट्टीदो उदयजहण्णकिट्टीए पडिसमयमणंत-गुणहाणीए चेव पवुत्तिणियमदंसणादो।

* एवं सव्विस्से किट्टीवेदगद्धाए।

* समये समये णिव्वग्गणाओ जहण्णियाओ वि य।

§ ६११. जहा पढम-विदियसमयेसु बंधोदयजहण्णकिट्टीणमप्पाबहुअकमो परूविदो तहा चेव तदियादिसमएसु वि परूवेयव्वो, विसेसाभावादो त्ति वुत्तं होइ। एत्थ 'णिव्वग्गणाओ' त्ति वुत्ते बंधोदयजहण्णकिट्टीणमणंतगुणहाणीए ओसरणवियप्पा गहेयव्वा।

है। और इस प्रकार प्रवृत्त होनेवाली बन्धाग्रकृष्टि उदयाग्रकृष्टिसे अनन्तगुणी हीन हो गयी है। परन्तु नीचे उदय जघन्य कृष्टिसे बन्ध जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी ही होती है, क्योंकि ऊपर भी नीचे बन्धानुभागकी अच्छी तरह अपवर्तना सम्भव है।

* दूसरे समयमें बन्धको प्राप्त हुई जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी हीन होती है।

§ ६०९. क्योंकि परिणामविशेषके माहात्म्यसे ऐसा होता है।

* उदयमें जघन्य कृष्टि अनन्तगुणी हीन होती है।

§ ६१०. क्योंकि परिणामविशेषका आश्रय कर बन्ध जघन्य कृष्टिसे उदयरूप जघन्य कृष्टिका प्रतिसमय अनन्तगुणी हानिरूपसे ही प्रवृत्तिका नियम देखा जाता है।

* इसी प्रकार सम्पूर्ण कृष्टिवेदककालमें बन्ध और उदयकी अपेक्षा जघन्य कृष्टियोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिए।

* तथा प्रत्येक समयमें जघन्य निर्वर्गणाएँ इसी प्रकार जाननी चाहिए।

§ ६११. जिस प्रकार प्रथम और द्वितीय समयमें बन्ध और उदयरूप जघन्य कृष्टियोंके अल्पबहुत्वके क्रमका कथन किया है, उसी प्रकार तृतीय आदि समयोंमें भी कथन करना चाहिए, क्योंकि पूर्व कथनसे इस कथनमें कोई भेद नहीं है। यहाँ 'णिव्वग्गणाओ' ऐसा कहनेपर बन्ध और उदयसम्बन्धी जघन्य कृष्टियोंके अनन्तगुणी हानिरूपसे अपसरणके विकल्प ग्रहण करने चाहिए।

विशेषार्थ—जो क्रोधकषायके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा है उसके कृष्टिवेदककालमें कृष्टियोंका उदय और बन्ध किस क्रमसे प्रवृत्त होता है एतद्विषयक अल्पबहुत्वका प्रकृतमें प्ररूपण किया गया है। यह तो स्पष्ट ही है कि अनिवृत्तिकरणमें इस क्षपकके प्रत्येक समयमें परिणामों-विषयक विशुद्धि अनन्तगुणी बढ़ती जाती है और इस कारण मोहनीय कर्मके यथासम्भव अनुभाग-की प्रतिसमय अपवर्तना होती जाती है। इस कारण यहाँ क्रोधकषायकी अपेक्षा उदय और बन्धकी प्रवृत्ति किस प्रकार होती है, इसी तथ्यको स्पष्ट करनेके लिए प्रकृतमें उदय और बन्धकी

*** एसा कोहकिट्टीए परूवणा ।**

६१२. एसा सव्वा वि बंधोदयजहण्णुक्कस्सकिट्टीणं णिव्वग्गणपरूवणा कोहपढमसंगह-किट्टीए परूविदा, तत्थ बंधोदयाणं दोण्हं पि संभवादो त्ति वुत्तं होइ। संपहि माणादीणं पढमसंगह-किट्टीसु एण्हिमुदयसंबंधो णत्थि, बंधो चेव केवलं संभवइ। सो च हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभाग-परिहारेण मज्झिमबहुभागसरूवेण पयट्टमाणो पडिसमयमणंतगुणहाणीए दट्ठव्वो त्ति इममत्थविसेसं जाणावेमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

अपेक्षा क्रोधकषायके अनुभागके अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए प्रथम बात तो यह स्पष्ट की गयी है कि क्रोधसंज्वलनकी जो तीन संग्रह कृष्टियाँ हैं उनमेंसे प्रथम संग्रह कृष्टिरूपसे बन्ध और उदय प्रवृत्त होते हुए अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम कृष्टिरूपसे ही प्रवृत्त होते हैं। और इस प्रकार जो मध्यम कृष्टियाँ उदयमें प्रवेश करती हैं उनमें जो सबसे उपरिम उत्कृष्ट क्रोधकृष्टि है वह अनन्तगुणी हीन होकर तीव्र अनुभागवाली होती है तथा जो बध्यमान अनन्त कृष्टियाँ हैं उनमें जो बध्यमान सबसे उत्कृष्ट कृष्टि है वह पूर्वोक्तसे अनन्तगुणो हीन होती है, क्योंकि उदयको प्राप्त होनेवाली अग्र कृष्टिसे अनन्त कृष्टियाँ नीचे सरककर इसका अवस्थान प्राप्त होता है। प्रथम समयमें जो अग्रकृष्टि बन्धको प्राप्त होती है उससे दूसरे समयमें विशुद्धिके माहात्म्यवश उदयरूपसे परिणत उत्कृष्ट कृष्टि अनन्तगुणी हानिरूप अनुभागवाली होती है। तथा इसी समय बध्यमान उत्कृष्ट कृष्टि भी उदय कृष्टिकी अपेक्षा अनन्तगुणी हानिरूप परिणम कर प्राप्त होती है। अल्पबहुत्वका यह क्रम इसी विधिसे कृष्टिवेदकके अन्तिम समय तक जानना चाहिए। आगे इन बन्धरूप और उदयको प्राप्त होनेवाली कृष्टियोंके अनुभागकी तीव्रता और मन्दताका निरूपण करते हुए बतलाया है कि प्रथम समयमें बन्धको प्राप्त होनेवाली कृष्टियोंमें जो सबसे जघन्य कृष्टि बँधती है वह आगे उदय और बन्धको प्राप्त होनेवाली कृष्टियोंकी तुलनामें तीव्र अनुभागवाली होती है। उससे उसी समय उदयको प्राप्त होनेवाली जो जघन्य कृष्टि होती है उसका अनुभाग अनन्तगुणा हीन होता है। दूसरे समयमें इसकी अपेक्षा बन्धको प्राप्त होनेवाली जघन्य कृष्टि अनन्तगुणे हीन अनुभागवाली होती है तथा उससे उसी समय उदयको प्राप्त होनेवाली जघन्य कृष्टि अनन्तगुणे हीन अनुभागवाली होती है। इस प्रकार अनुभागको तीव्रता-मन्दताकी अपेक्षा यह अल्पबहुत्व आगे भी इसी प्रकार हृदयंगम करना चाहिए। समय-समयमें बन्ध और उदयरूप कृष्टियोंके अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणी हानिरूपसे जो अपसरण विकल्परूप निर्वर्गणाएँ प्राप्त होती हैं उन्हें भी इसी विधिसे जान लेना चाहिए।

*** यह सब क्रोधसंज्वलनसम्बन्धी प्रथम संग्रह कृष्टिकी प्ररूपणा है।**

§ ६१२. यह सब बन्ध और उदयरूप जघन्य और उत्कृष्ट कृष्टियोंकी निर्वर्गणा प्ररूपणा क्रोधसंज्वलन कृष्टिकी अपेक्षा की गयी है, क्योंकि उसमें बन्ध और उदय दोनोंकी ही प्ररूपणा सम्भव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब मानसंज्वलन आदिकी प्रथम संग्रह कृष्टियोंका इस समय उदयका सम्बन्ध नहीं है, केवल बन्ध ही सम्भव है और वह अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम बहुभागरूपसे प्रवृत्त होता हुआ प्रतिसमय अनन्त गुणहानि-रूपसे ही जानना चाहिए इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** किट्टीणं पढमसमये वेदगस्स माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए किट्टीणमसंखेज्जा भागा बज्झंति ।**

§ ६१३. सुगमं ।

*** सेसाओ संगहकिट्टीओ ण बज्झंति ।**

§ ६१४. एदं पि सुगमं ।

*** एवं मायाए ।**

*** एवं लोभस्स वि ।**

§ ६१५. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि । एवमेत्तिएण पबंधेण किट्टीवेदगपढमसमये किट्टीगदाणुभागस्स बंधोदयविसयं पवुत्तिविसेसं णिरूविय संपहि तत्थेव किट्टीगदाणुभागसंतकम्मस्स[1] जा पुव्वं परूविदा अणुसमयोवट्टणा सा एदेण सरूवेण पयट्टदि त्ति फुडीकरेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** किट्टीणं पढमसमयवेदगो बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमग्गकिट्टिमादिं कादूण एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए असंखेज्जदिभागं विणासेदि ।**

§ ६१६. अणंतगुणविसोहीए वड्ढमाणो एसो पढमसमयकिट्टीवेदगो बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमुवरिमभागे उक्कस्सकिट्टिमादिं कादूण अणंताओ किट्टीओ एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ ओवट्टणाघादेणेगसमयेण विणासेदि, तेत्तियमेत्तीणं किट्टीणं सत्तीओ

*** कृष्टियोंका प्रथम समयमें वेदन करनेवाले क्षपकके मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टि सम्बन्धी कृष्टियोंका असंख्यात बहुभाग बँधता है ।**

§ ६१३. यह सूत्र सुगम है ।

*** यहाँ शेष दो संग्रह कृष्टियाँ नहीं बँधती हैं ।**

§ ६१४. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** इसी प्रकार मायासंज्वलनकी अपेक्षा जानना चाहिए ।**

*** तथा इसी प्रकार लोभसंज्वलनकी अपेक्षा भी जानना चाहिए ।**

§ ६१५. ये दोनों सूत्र भी सुगम हैं । इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें कृष्टिगत अनुभागका बन्ध और उदयविषयक प्रवृत्तिविशेषका निरूपण करके अब वहींपर कृष्टिगत अनुभागसत्कर्मकी जो पहले अनुसमय अपवर्तना कह आये हैं वह इस रूपसे प्रवृत्त होती है इस बातका स्पष्टीकरण करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** कृष्टियोंका प्रथम समयमें वेदन करनेवाला जीव बारहों संग्रहकृष्टियोंको अग्र कृष्टिसे लेकर एक-एक संग्रह कृष्टिके असंख्यातवें भागका विनाश करता है ।**

§ ६१६. अनन्तगुणी विशुद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होनेवाला यह प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदक जीव बारहों संग्रह कृष्टियोंके उपरिम भागमें उत्कृष्ट कृष्टिसे लेकर एक-एक संग्रह कृष्टिकी असंख्यातवें

---

१. आ. प्रतौ किट्टीतदाणुभाग– इति पाठः ।

ओवट्टावेयूण[1] हेट्ठिमकिट्टीसरूवेणेव ठवेदि त्ति वुत्तं होइ। एवं विदियादिसमयेसु वि ओवट्टणाघादो एसो अणुगंतव्वो। णवरि पढमसमयविणासिदकिट्टीहिंतो विदियादिसमयेसु विणासिज्जमाणकिट्टीओ असंखेज्जगुणहीणकमेण दट्ठव्वाओ; उवरि चुण्णिसुत्ते तहाविहपरूवणोवलंभादो। एवमेसो किट्टीणमणुसमयोवट्टणं कुणमाणो किट्टीवेदगपढमसमये चेव आढविय किट्टीकरणद्धाए पुव्वणिव्वत्तिद-किट्टीणं हेट्ठा तदंतरालेसु च अण्णाओ अपुव्वकिट्टीओ एदेण विहाणेण णिव्वत्तेदि त्ति पदुप्पायणफलो उवरिमसमयपबंधो—

*** कोहस्स पढमसंगहकिट्टिं मोत्तूण सेसाणमेक्कारसण्हं संगहकिट्टीणं अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि।**

§ ६१७. वेदिज्जमाणकोहपढमसंगहकिट्टीवज्जाणं सेसाणमेक्कारसण्णं संगहकिट्टीणं संबंधिणीओ अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ एसो पढमसमयकिट्टीवेदओ णिव्वत्तेदुमाढवेदि त्ति भणिदं होदि। कोहपढमसंगहकिट्टीए परिवज्जणमेत्थ ण कायव्वं, तत्थ वि बंधेण अपुव्वाणं किट्टीणं णिव्वत्तिज्जमाणाणं संभवोवलंभादो त्ति चे? सच्चमेवं, किंतु कोधपढमसंगहकिट्टीए बंधेणेवापुव्वाओ किट्टीओ अंतरेसु णिव्वत्तिज्जंति। सेसाणं पुण संगहकिट्टीणं संकामिज्जमाणपदे-सग्गेण जहासंभवं बज्झमाणपदेसग्गेण च अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति त्ति एदस्स विसेसस्स

भागप्रमाण अनन्त संग्रह कृष्टियोंका अपवर्तनाघात द्वारा एक समयमें विनाश करता है। तत्प्रमाण कृष्टियोंकी शक्तिकी अपवर्तना करके अधस्तनकृष्टिरूपसे उन्हें स्थापित करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोंमें भी यह अपवर्तनाघात जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि प्रथम समयमें विनश्यमान कृष्टियोंकी अपेक्षा असंख्यात गुणहीनक्रमसे जानना चाहिए, क्योंकि आगे चूर्णिसूत्रमें उस प्रकारसे प्ररूपणा उपलब्ध होती है। इस प्रकार यह कृष्टियों-की अनुसमय अपवर्तना करता हुआ कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें ही आरम्भ करके कृष्टिकरण कालमें पहले निष्पन्न की गयी कृष्टियोंके नीचे और उनके अन्तरालोंमें अन्य अपूर्व कृष्टियोंको इस विधिसे निष्पन्न करता है इस प्रकारके कथनके फलस्वरूप आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिको छोड़कर शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंको अन्य अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है।**

§ ६१७. क्रोधसंज्वलनकी वेद्यमान प्रथम संग्रह कृष्टिसे रहित शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंसे सम्बन्ध रखनेवाली अन्य अपूर्व कृष्टियोंको यह कृष्टिवेदक जीव प्रथम समयमें निष्पन्न करनेके लिए आरम्भ करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका निषेध यहाँपर नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसमें भी बन्धसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियाँ उत्पन्न होती हुई उपलब्ध होती हैं?

समाधान—यह कथन सत्य है, किन्तु क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके अन्तरालोंमें बन्धसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है। परन्तु शेष संग्रह कृष्टियोंकी संक्रम्यमाण प्रदेशके अग्रभागसे और यथासम्भव बध्यमान प्रदेशके अग्रभागसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है। इस

---

१. आ. प्रतौ वड्ढावेयूण इति पाठः।

पदंसणट्ठं 'कोहस्स पढमसंगहकिट्टिं मोत्तूणे त्ति' वुत्तं।

* ताओ अपुव्वाओ किट्टीओ कदमादो पदेसग्गादो णिव्वत्तेदि।

§ ६१८. तासिमपुव्वाणं णिव्वत्तिज्जमाणीणं किट्टीणं कदमादो पदेसग्गादो णिव्वत्ती होदि, किं बज्झमाणियादो आहो संकामिज्जमाणयादो, उदाहो तदुभयादो त्ति पुच्छा एदेण कदा होइ। संपहि एदिस्से पुच्छाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

* बज्झमाणयादो च संकामिज्जमाणयादो च पदेसग्गादो णिव्वत्तेदि।

§ ६१९. चउण्हं पढमसंगहकिट्टीणं बंधसंभवादो। तत्थ बज्झमाणएण पदेसग्गेण अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि। पुणो कोहपढमसंगहकिट्टिं मोत्तूण सेसाणमेक्कारसण्हं संगहकिट्टीणं संकामिज्जमाणयादो च पदेसग्गादो अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। एदस्स भावत्थो—कोहपढमसंगहकिट्टीए बज्झमाणपदेसग्गादो चेव अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि, तत्थ पयारंतरासंभवादो। माण-माया-लोभाणं तिसु पढमसंगहकिट्टीसु बज्झमाणयादो संकामिज्जमाणयादो च पदेसग्गादो अपुव्वकिट्टीओ णिव्वत्तेदि, उहयहा वि तत्थ तप्पवुत्तीए विरोहाभावादो। सेससंगहकिट्टीसु संकामिज्जमाणयादो चेव पदेसग्गादो अपुव्वकिट्टीणं णिव्वत्ती, तत्थ बज्झमाणपदेसग्गासंभवादो त्ति। एत्थ 'संकामिज्जमाणयादो' त्ति वुत्ते ओकड्डुणासंकमदव्वस्स सव्वत्थ गहणं कायव्वं। एवमेदेण दुविहेण पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणीसु अपुव्वकिट्टीसु किं बज्झमाण-

---

प्रकार इस विशेषके दिखलानेके लिए चूर्णिसूत्रमें 'कोहस्स पढमसंगहकिट्टिं मोत्तूण' क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिको छोड़कर यह वचन कहा है।

* उन अपूर्व कृष्टियोंको किस प्रदेशके अग्रभागसे निष्पन्न करता है।

§ ६१८. निष्पन्न होनेवाली उन अपूर्व कृष्टियोंको किस प्रदेशके अग्रभागसे निष्पन्न करता है? क्या बध्यमान कृष्टिसे या संक्रम्यमाण कृष्टिसे, या दोनोंसे; इस प्रकार यह पृच्छा इस सूत्र द्वारा की गयी है। अब इस पृच्छाका समाधान करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

* बध्यमान प्रदेशके अग्रभागसे और संक्रम्यमाण प्रदेशके अग्रभागसे उन अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है।

§ ६१९. क्योंकि प्रथम संग्रह कृष्टियोंका बन्ध सम्भव है। वहाँ बध्यमान प्रदेशाग्रसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है। पुनः क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिको छोड़कर शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके संक्रम्यमाण प्रदेशके अग्रभागसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इसका भावार्थ—क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिके बध्यमान प्रदेशके अग्रभागसे ही अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है, क्योंकि वहाँपर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। तथा मान, माया और लोभसंज्वलनकी तीन प्रथम संग्रह कृष्टियोंमें बध्यमान और संक्रम्यमाण प्रदेशके अग्रभागसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है, क्योंकि उनमें दोनों प्रकारसे ही उसकी प्रवृत्ति होनेमें विरोधका अभाव है। शेष संग्रह कृष्टियोंमें संक्रम्यमाण प्रदेशके अग्रभागसे ही अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति होती है, क्योंकि उनमें बध्यमान प्रदेशाग्रका होना असम्भव है। यहाँपर 'संकामिज्जमाणयादो' ऐसा कहनेपर यहाँ सर्वत्र अपकर्षण संक्रम द्रव्यका ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार इस दो प्रकारके प्रदेशपुंजमेंसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंमें क्या बध्यमान प्रदेश-

पदेसग्गादो णिव्वत्तिज्जमाणकिट्टीओ बहुगीओ, आहो संकामिज्जमाणयादो त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** बज्झमाणियादो थोवाओ णिव्वत्तेदि ।**

§ ६२०. कुदो ? एगसमयपबद्धमेत्तदव्वेण णिव्वत्तिज्जमाणाणं तासिं थोवभावसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो ।

*** संकामिज्जमाणयादो असंखेज्जगुणाओ ।**

§ ६२१. कुदो ? दिवड्ढगुणहाणीणमसंखेज्जदिभागमेत्तसमयपबद्धेहिं एदासिं णिव्वत्तिदंसणादो । ण चेदमसिद्धं, तिगुणोकड्डणभागहारेण दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धेसु ओवट्टिदेसु संकामिज्जमाणदव्वस्सागमणदंसणादो । तदो दव्वमाहप्पमस्सियूण सिद्धमेदासिमसंखेज्जगुणत्तं । गुणगारो च पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो । एवमेदासिं थोवबहुत्तं पदुप्पाइय संपहि बज्झमाणेण पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणाणं किट्टीणं सेससंगहकिट्टीपरिहारेण चदुसु चेव पढमसंगहकिट्टीसु संभवविसेसावहारणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** जाओ ताओ बज्झमाणयादो पदेसग्गादो णिव्वत्तिज्जंति ताओ चदुसु पढमसंगह किट्टीसु ।**

पुंजमेंसे निष्पन्न होनेवाली कृष्टियाँ बहुत होती हैं या संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजमेंसे निष्पन्न होनेवाली कृष्टियाँ बहुत होती हैं ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

*** बध्यमान प्रदेशपुंजमेंसे स्तोक अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है ।**

§ ६२०. क्योंकि एक समयप्रबद्धमात्र द्रव्यसे निष्पन्न होनेवाली उन अपूर्व कृष्टियोंके स्तोकपनेकी सिद्धि निर्बाधरूपसे पायी जाती है ।

*** तथा संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजमेंसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियाँ असंख्यातगुणी होती हैं ।**

§ ६२१. क्योंकि डेढ़ गुणहानियोंके असंख्यातवें भागमात्र समयप्रबद्धोंसे इन अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति देखी जाती है । और यह कथन असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि तिगुणे अपकर्षण भागहारसे डेढ़ गुणहानिमात्र समयप्रबद्धोंके भाजित करनेपर संक्रम्यमाण द्रव्यका आना देखा जाता है । इसलिए द्रव्यकी अधिकताका आलम्बन लेनेपर इन अपूर्व कृष्टियोंका असंख्यातगुणपना सिद्ध हो जाता है । यहाँपर गुणकार पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है । इस प्रकार इनके अल्पबहुत्वका कथन करके अब बध्यमान प्रदेशपुंजसे निष्पन्न होनेवाली कृष्टियाँ शेष संग्रह कृष्टियोंको छोड़कर चार ही प्रथम संग्रह कृष्टियोंमें सम्भव हैं इस विशेषका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** जो वे अपूर्व कृष्टियाँ बध्यमान प्रदेशपुंजमेंसे निष्पन्न की जाती हैं वे चारों प्रथम संग्रहकृष्टियोंमें पायी जाती हैं ।**

§ ६२२. बज्झमाणपदेसग्गणिव्वत्तिज्जमाणतदिय-चदुसु चेव पढमसंगहकिट्टीसु संभवो, णाण्णत्थे त्ति वुत्तं होदि। कुदो एस णियमो चे ? ण, तत्तो अण्णासिमेदम्मि विसये बंधसंभवाणुवलंभादो। संपहि तासिं बज्झमाणपदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं कदमम्मि ओगासे णिव्वत्ती होदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* ताओ कदमम्मि ओगासे ?

§ ६२३. किं ताव सगपदेसग्गमुवलंभादो, आहो तदवयवकिट्टीणं अंतरंतरेसु त्ति पुच्छिदं होदि। संपहि एदिस्से पुच्छाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

* एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए किट्टीअंतरेसु।

§ ६२४. संगहकिट्टीणमंतरेसु ताव बज्झमाणपदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं णत्थि संभवो, चदुण्हं पढमसंगहकिट्टीणं मज्झिमकिट्टीसरूवेण पयट्टमाणणवकबंधाणुभागस्स तत्तो हेट्ठा पवुत्तिविरोहादो। तदो एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अवयवकिट्टीणमंतरेसु बज्झमाणपदेसग्गेणापुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि त्ति सिद्धं। संपहि किमविसेसेण एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए सव्वकिट्टीअंतरेसु तासिं संभवो आहो अत्थि को वि विसेससंभवो त्ति आसंकाए पुच्छासुत्तमाह—

---

§ ६२२. क्योंकि वे बध्यमान प्रदेशपुंजसे निष्पन्न होनेवाली प्रथम संग्रह कृष्टियोंमें सम्भव हैं, अन्य कृष्टियोंमें नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यह नियम किस कारणसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उन चारोंको छोड़कर अन्य संग्रह कृष्टियोंका इस स्थानमें बन्ध सम्भव नहीं उपलब्ध होता।

अब बध्यमान प्रदेशपुंजमेंसे निष्पन्न होनेवाली उन अपूर्व कृष्टियोंकी किस अवकाश (अन्तराल) में निष्पत्ति होती है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* उन अपूर्व कृष्टियोंको किस अवकाश (अन्तराल) में निष्पन्न करता है ?

§ ६२३. क्या जहाँसे अपना प्रदेशपुंज उपलब्ध होता है वहींसे निष्पन्न करता है या उनकी अवयव कृष्टियोंके उत्तरोत्तर अन्तरालोंमें निष्पन्न करता है इस प्रकार यह पृच्छा की गयी है। अब इस पृच्छाके निर्णयका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

* एक-एक संग्रहकृष्टिके अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उन अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है।

§ ६२४. संग्रह कृष्टियोंके अन्तरालोंमें तो बध्यमान प्रदेशपुंजमेंसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंको निष्पत्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि चारों प्रथम संग्रह कृष्टियोंके मध्यम कृष्टिरूपसे प्रवर्तमान नवकबन्धसम्बन्धी अनुभागका उससे नीचे प्रवृत्ति होनेमें विरोध आता है। इसलिए एक-एक संग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें बध्यमान प्रदेश-पुंजमेंसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है यह सिद्ध हुआ। अब क्या अविशेषरूपसे एक-एक संग्रह कृष्टिकी सब अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उनका प्राप्त होना सम्भव है या कोई विशेष सम्भव है ऐसी आशंका होनेपर पृच्छसूत्र कहते हैं—

* किं सव्वेसु किट्टीअंतरेसु आहो ण सव्वेसु ?

§ ६२५. सुगमं ।

* ण सव्वेसु ।

§ ६२६. ण सव्वेसु किट्टीअंतरेसु तासिमत्थि संभवो, किंतु पडिणियदकिट्टीअंतरेसु चेव तासिमुप्पत्ती होइ त्ति भणिदं होदि। एवं सो वुण जइ ण सव्वेसु किट्टीअंतरेसु तो कदमेसु किट्टीअंतरेसु तासिमुप्पत्तिविसओ त्ति भण्णमाणो पुणो वि पुच्छाणिद्देसमाह—

* जइ ण सव्वेसु, कदमेसु अंतरेसु अपुव्वाओ णिव्वत्तयदि ।

§ ६२७. केत्तियमेत्ताणि किट्टीअंतराणि मोत्तूण पुणो केत्तिएसु किट्टीअंतरेसु ताओ अपुव्वाओ किट्टीओ बज्झमाणपदेससंबंधिणीओ णिव्वत्तेदि त्ति पुच्छा कदा होइ ।

* उवसंदरिसणा ।

§ ६२८. एत्तियाणि किट्टीअंतराणि उल्लंघियूण पुणो एत्तियमेत्तेसु किट्टीअंतरेसु तासिं णिव्वत्ती होदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स फुडीकरणमुवसंदरिसणा णाम । तमिदाणिं परूवइस्सामो त्ति वुत्तं होइ ।

---

* क्या सब अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उन अपूर्व कृष्टियोंकी रचना करता है या सभी अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उनकी रचना नहीं करता है ?

§ ६२५. यह सूत्र सुगम है ।

* सब अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उन अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति नहीं करता।

§ ६२६. सब अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उन अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति करना सम्भव नहीं है; किन्तु प्रतिनियत अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें ही उनकी निष्पत्ति होती है यह उक्त सूत्र द्वारा कहा गया है । इस प्रकार वह यदि सब अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उनकी निष्पत्ति नहीं होती तो कितने कृष्टियोंके अन्तरालोंमें वे निष्पत्तिका विषय होती हैं, ऐसा कहनेवाला फिर भी पृच्छाका निर्देश करता है—

* यदि सब अवयव कृष्टियोंमें उन्हें निष्पन्न नहीं करता है तो कितनी अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंमें उन अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है ।

§ ६२७. कितने अवयव कृष्टियोंसम्बन्धी अन्तरालोंको छोड़कर पुनः कितने अवयव कृष्टियोंसम्बन्धी अन्तरालोंमें बध्यमान प्रदेशपुंजसम्बन्धी उन अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है यहाँ यह पृच्छा की गयी है ।

* आगे उसी विषयको स्पष्ट करते हैं ।

§ ६२८. इयत्प्रमाण अवयव कृष्टियोंके अन्तरालोंका उल्लंघन कर पुनः इयत्प्रमाण अवयव कृष्टि-अन्तरालोंमें उन अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति होती है इस प्रकार इस अर्थविशेषका स्पष्टीकरण करनेका नाम उपसंदर्शिना है । आगे इस समय उसकी प्ररूपणा करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* बज्झमाणियाणं जं पढमं किट्टीअंतरं तत्थ णत्थि ।

§ ६२९. बज्झमाणसंगहकिट्टीणं हेट्टिमोवरिमासंखेज्जदिभागविसयाणं किट्टीणमंतरेसु ताव बंधेण अपुव्वकिट्टी ण णिव्वत्तिज्जदि, तदाधारेण बंधपवुत्तीए असंभवादो। तदो बज्झमाणमज्झिम-किट्टीसरूवेण तदंतरेसु च णवकबंधपदेसग्गेण किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति । तत्थ वि बज्झमाणियाणं जं पढमं किट्टीअंतरं तत्थ णत्थि अपुव्वाओ किट्टीओ । कुदो ? साहावियादो ।

* एवमसंखेज्जाणि किट्टीअंतराणि अधिच्छिदूण ।

§ ६३०. एवमेदेण कमेण असंखेज्जाणि किट्टीअंतराणि समुल्लंघियूण तदित्थकिट्टीअंतरे अपुव्वकिट्टीए संभवो त्ति भणिदं होदि । संपहि एदस्स चेव अद्धाणस्स फुडीकरणट्ठमिदमाह—

* किट्टीअंतराणि अंतरट्ठदाए असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि ।

§ ६३१. एदाणि किट्टीअंतराणि बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीए अंतरभावेण पयट्ट-माणाणि केत्तियमेत्ताणि त्ति पुच्छिदे असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलाणि त्ति तेसिं पमाणणिद्देसो कदो। बज्झमाणजहण्णकिट्टिप्पहुडि जाव असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तकिट्टीओ गच्छंति ताव[1] णवकबंधकिट्टीपदेसग्गं पुव्वकिट्टीसु चेव सरिसधणियसरूवेण परिणमिय पुणो तदणंतरोवरिम-

* बध्यमान कृष्टियोंसम्बन्धी जो प्रथम अवयव कृष्टि-अन्तर है उसमें उन अपूर्व कृष्टियोंकी निष्पत्ति नहीं करता है ।

§ ६२९. नीचे और ऊपर असंख्यातवें भागप्रमाण बध्यमान संग्रह कृष्टियोंके कृष्टि अन्तरालोंमें तो बन्धरूपसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न नहीं करता है, क्योंकि उस रूपसे बन्धकी प्रवृत्ति होना सम्भव नहीं है । इसलिए बध्यमान मध्यम कृष्टियोंके रूपसे और उनके अन्तरालोंमें नवकबन्ध प्रदेशपुंजमेंसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न किया जाता है। उसमें भी बध्यमान कृष्टियोंका जो प्रथम कृष्टि अन्तर है उसमें अपूर्व कृष्टियाँ नहीं पायी जातीं, क्योंकि ऐसा स्वभाव है।

* इस प्रकार असंख्यात कृष्टि अन्तरालोंको उल्लंघन कर—

§ ६३०. इस प्रकार इस क्रमसे असंख्यात कृष्टि अन्तरालोंको उल्लंघन कर वहाँ प्राप्त होनेवाले कृष्टि-अन्तरालमें अपूर्व कृष्टिकी उत्पत्ति होती है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है। अब इसी स्थानको स्पष्ट करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* विवक्षित कृष्टि अन्तरालको प्राप्त करनेके लिए जो कृष्टि-अन्तराल होते हैं वे पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण होते हैं।

§ ६३१. बन्धसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टिके लिए अन्तररूपसे प्रवृत्त होनेवाले ये कृष्टि-अन्तराल कितने होते हैं ऐसा पूछनेपर वे पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण होते हैं इस प्रकार उनके प्रमाणका निर्देश किया है। बध्यमान जघन्य कृष्टिसे लेकर पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण कृष्टियाँ जबतक व्यतीत होती हैं तब जाकर नवकबन्धरूप कृष्टिका प्रदेशपुंज पूर्व कृष्टियोंमें ही सदृश धनरूपसे परिणमन करके पुनः तदनन्तर उपरिम कृष्टि अन्तरालमें

१. ता. आ. प्रत्योः जाव इति पाठः ।

किट्टीअंतरे अपुव्वकिट्टीआयारेण परिणमिदुं लहदि, ण तत्थ पडिसेहो अत्थि त्ति भावत्थो। संपहि इममेवत्थमुवसंहारमुहेण पदंसेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

✻ एत्तियाणि किट्टीअंतराणि गंतूण अपुव्वा किट्टी णिव्वत्तिज्जदि ।

§ ६३२. गयत्थमेदं सुत्तं। एत्तो उवरि पुणो वि एत्तियमद्धाणं गंतूण विदिया अपुव्वकिट्टी णिव्वत्तिज्जदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

✻ पुणो वि एत्तियाणि किट्टीअंतराणि गंतूण अपुव्वा किट्टी णिव्वत्तिज्जदि ।

§ ६३३. गयत्थमेदं पि सुत्तं। एवमेदमवट्ठिदमद्धाणमंतरं कादूण णेदव्वं जाव सयलकिट्टी-अद्धाणस्स असंखेज्जदिभागमेत्तीणं बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीणं चरिमकिट्टी बंधगद्धा-किट्टीदो हेट्ठा असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तद्धाणमोसरिदूण समुप्पण्णा त्ति एसो एत्थतण-चरिमवियप्पो। संपहि एदस्सद्धाणस्स सुत्तणिद्दिट्ठस्स फुडीकरणं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढ-गुणहाणितिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं जइ एगसंगहकिट्टीए सयलावयवकिट्टीओ लब्भंति तो एगसमयपबद्धमेत्तणवकबंधपदेसग्गस्स केत्तियमेत्तीओ अपुव्वकिट्टीओ लहामो त्ति तेरासियं कादूण ०|-$\frac{१२}{३}$-|९|० पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्व-किट्टीणं पमाणं पुव्वकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्तमागच्छदि $\frac{९}{४}$।

अपूर्व कृष्टिके आकारसे परिणमनको प्राप्त करता है, वहाँ ऐसा होनेमें कोई प्रतिषेध नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इसी अर्थको उपसंहार द्वारा दिखलाते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

✻ इतने कृष्टि-अन्तरालोंको बिताकर अपूर्व कृष्टिको निष्पन्न करता है।

§ ६३२. यह सूत्र गतार्थ है। इससे आगे पुनरपि इतना स्थान जाकर दूसरी अपूर्व कृष्टि-को निष्पन्न करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र अवतीर्ण हुआ है—

✻ फिर भी इतने कृष्टि-अन्तरालोंको उल्लंघन कर अपूर्व कृष्टिको निष्पन्न करता है।

§ ६३३. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार इस अवस्थित स्थानरूप अन्तरालको प्राप्त करके जब जाकर समस्त कृष्टि-स्थानके असंख्यातवें भागप्रमाण बन्धसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियों-का अन्तिम कृष्टि बन्धक काल, विवक्षित कृष्टिसे पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूल स्थान पीछे सरकनेपर उत्पन्न होता है। इस प्रकार यह यहाँ सम्बन्धी अन्तिम विकल्प है। अब सूत्रनिर्दिष्ट इस स्थानको स्पष्ट करते हैं। वह जैसे—डेढ़ गुणहानिके त्रिभागमात्र समयप्रबद्धोंको यदि एक संग्रह कृष्टिसम्बन्धी समस्त अवयव कृष्टियाँ प्राप्त होती हैं तो एक समयप्रबद्धप्रमाण नवकबन्ध-सम्बन्धी प्रदेशपुंजमें कितनी अपूर्व कृष्टियाँ प्राप्त करेंगे, इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे गुणित इच्छाराशिको प्रमाणराशिसे भाजित करनेपर बन्धसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंका प्रमाण पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ($\frac{९}{४}$) प्राप्त होता है।

उदाहरण—डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्ध १२, त्रिभागप्रमाण समयप्रबद्ध ४, एक संग्रह कृष्टिको अवयव कृष्टियाँ ९।

यदि त्रिभागप्रमाण समयप्रबद्ध ४ को ९ अवयव कृष्टियाँ बनती हैं तो एक समयप्रबद्ध-सम्बन्धी नवकबन्धकी कितनी अपूर्व कृष्टियाँ बनेंगी, इस प्रकार इस विधिसे ९ × १ = ९,

पुणो एत्तीयमेत्तीणमपुव्वकिट्टीणं जइ सयलकिट्टीअद्धाणं लब्भइ, तो एक्किस्से अपुव्वकिट्टीए केत्तियमद्धाणं लभामो त्ति $\frac{९}{४}$ | ९ | १ पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए दिवड्ढगुणहाणितिभागमेत्तमेक्किस्से अपुव्वकिट्टीए लद्धद्धाणं होदि । तं च एदं ४ । तदो सिद्धमसंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तमद्धाणमुल्लंघियूण एक्का अपुव्वकिट्टी बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणिया लब्भदि त्ति एसा च परूवणा कोह-माण-माया-लोहसंजलणाणं पढमसंगहकिट्टीओ पादेक्कं णिरुंभियूण जोजेयव्वा । णवरि कोहसंजलणपढमसंगहकिट्टीए तेरसगुणमेगकिट्टीदव्वं ठविय तेरासियं कायव्वं । एवमेदं परूविय संपहि बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणीसु पुव्वापुव्वकिट्टीसु णवकबंधपदेसग्गस्स णिसेगक्कमपदंसणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

*** बज्झमाणयस्स पदेसग्गस्स णिसेगसेढिपरूवणं वत्तइस्सामो ।**

§ ६३४. सुगमं ।

*** तत्थ जहण्णियाए किट्टीए बज्झमाणियाए बहुअं ।**

*** विदियाए किट्टीए विसेसहीणमणंतभागेण ।**

---

९ ÷ ४ = $\frac{९}{४}$ त्रैराशिक करनेपर $\frac{९}{४}$ अपूर्व कृष्टियाँ प्राप्त हुईं । यहाँ फलराशि ९ है, इच्छाराशि १ है और प्रमाणराशि ४ है । अतएव फलराशि ९ से इच्छाराशि १ को गुणित कर प्रमाणराशि ४ का भाग देकर $\frac{९}{४}$ अपूर्व कृष्टियाँ प्राप्त की गयी हैं ।

पुनः इयत्प्रमाण ($\frac{९}{४}$) अपूर्व कृष्टियोंका यदि समस्त कृष्टिस्थान (९) प्राप्त होता है तो एक अपूर्व कृष्टिका कितना स्थान प्राप्त करेंगे इस प्रकार फलराशि (९) से गुणित इच्छाराशि (१) में प्रमाणराशि ($\frac{९}{४}$) का भाग देनेपर डेढ़ गुणहानि (१२) का त्रिभागमात्र एक अपूर्व कृष्टिका लब्धस्थान (४) प्राप्त होता है । और वह यह है—(४) ।

उदाहरण—अपूर्व कृष्टियाँ $\frac{९}{४}$ प्रमाणराशि, सकल कृष्टि अध्वान ९ फलराशि, इच्छाराशि १, अतः ९ × १ = ९; ९ ÷ $\frac{९}{४}$ = ४ अपूर्व कृष्टिका लब्धस्थान । यहाँ त्रैराशिकके नियमानुसार फलराशि ९ से इच्छाराशि १ का गुणा किया गया है और लब्ध ९ में प्रमाणराशि $\frac{९}{४}$ का भाग देकर लब्ध अपूर्व कृष्टि अध्वान ४ प्राप्त किया गया है ।

इसलिए पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण स्थानोंको उल्लंघन कर बन्धसे निष्पन्न होनेवाली एक अपूर्व कृष्टि प्राप्त होती है । और इस प्रकार यह प्ररूपणा क्रोध, मान, माया और लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टियोंमेंसे प्रत्येकको विवक्षित कर योजित कर लेनी चाहिए । इतनी विशेषता है कि क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके तेरहगुणे एक कृष्टि द्रव्यको स्थापित करके बन्धसे निष्पन्न होनेवाली पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंमें नवकबन्धके प्रदेशपुंजके निषेक क्रमको दिखलानेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अब बध्यमान प्रदेशपुंजके निषेकोंसम्बन्धी श्रेणिप्ररूपणाको बतलावेंगे ।**

§ ६३४. यह सूत्र सुगम है ।

*** वहाँ बध्यमान जघन्य कृष्टिमें बहुत प्रदेशपुंज देता है ।**

*** दूसरी कृष्टिमें अनन्तवाँ भाग विशेष हीन देता है ।**

* तदियाए विसेसहीणमणंतभागेण ।

* चउत्थीए विसेसहीणं ।

* एवमणंतरोवणिधाए ताव विसेसहीणं जाव अपुव्वकिट्टिमपत्तो त्ति ।

§ ६३५. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे । तं जहा—चउण्हं पढमसंगहकिट्टीणं हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभागं मोत्तूण सेसासेसमज्झिमकिट्टीसरूवेण पयट्टमाणो णवकबंधाणुभागो पुव्वकिट्टीसरूवो वि अत्थि, अपुव्वकिट्टीसरूवो वि । तत्थ पुव्वकिट्टीसु णिसिंचमाणपदेसग्गं णवकबंधसमयपबद्धस्साणंतिमभागमेत्तं होदि । सेसा अणंता भागा अपुव्वकिट्टिसरूवेण णिसिंचंति । तदो णवकबंधसमयपबद्धस्साणंतभागे पुध ठविय तदणंतिमभागं घेत्तूण पुव्वकिट्टीसु बंधजहण्णमादिं कादूण णिसिंचमाणो तत्थ जा बंधजहण्णकिट्टी तिस्से उवरि बहुअं पदेसग्गं देदि । णवकबंधसमयपबद्धस्साणंतिमभागे किट्टीअद्धाणेण खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तदव्वमणंतभागब्भहियं कादूण णिरुद्धजहण्णकिट्टीए णिसिंचदि त्ति वुत्तं होदि । तत्तो विदियाए किट्टीए विसेसहीणं देदि । केत्तियमेत्तेण ? अणंतिमभागमेत्तेण । बंधजहण्णकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गं णिसेयभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तेण विसेसहीणं कादूण विदियकिट्टीए पदेसग्गमेसो णिसिंचदि । अण्णहा गोवुच्छायाराणुप्पत्तीदो त्ति भावत्थो । एवमेदेण कमेण तदियचउत्थादिकिट्टीसु वि अणंतभागहीणं कादूण णेदव्वं जाव असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि उल्लंघियूण तम्मि अंतरे णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीदो

---

* तीसरी कृष्टिमें अनन्तवाँ भाग विशेष हीन देता है ।

* चौथी कृष्टिमें विशेष हीन देता है ।

* इस प्रकार अनन्तरोपनिधाकी विधिके अनुसार श्रेणिरूपसे अपूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर विशेष हीन-विशेष हीन प्रदेशपुंज देता है ।

§ ६३५. अब इसका अर्थ कहते हैं । वह जैसे—चारों प्रथम संग्रह कृष्टियोंके नीचे और ऊपर असंख्यातवें भागको छोड़कर शेष समस्त मध्यम कृष्टिरूपसे प्रवर्तमान नवकबन्धसम्बन्धी अनुभाग पूर्व कृष्टिस्वरूप भी होता है और अपूर्व कृष्टिस्वरूप भी होता है । उसमें पूर्व कृष्टियोंमें सिंचित होनेवाला प्रदेशपुंज नवकबन्धसम्बन्धी समयप्रबद्धके अनन्तवें भागप्रमाण होता है । शेष अनन्त बहुभागको अपूर्व कृष्टिरूपसे सिंचित करता है । इसलिए नवकबन्ध समयप्रबद्धके अनन्त बहुभागको पृथक् स्थापित कर तथा उसके अनन्तवें भागको ग्रहण कर पूर्व कृष्टियोंमें बन्धसम्बन्धी जघन्य कृष्टिसे लेकर सिंचन करता हुआ जो बन्धसम्बन्धी जघन्य कृष्टि है उसमें बहुत प्रदेशपुंजको देता है । तथा नवकबन्ध-समयप्रबद्धके अनन्तवें भागके कृष्टि अध्वानके द्वारा खण्डित करनेपर वहाँ जो एक भागमात्र द्रव्यको अनन्तवाँ भाग अधिक करके विवक्षित जघन्य कृष्टिमें सिंचित करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । पुनः उससे विशेष हीन दूसरी कृष्टिमें देता है ।

शंका—कियत्प्रमाण हीन देता है ?

समाधान—अनन्तवाँ भाग हीन देता है । अर्थात् बन्ध जघन्य कृष्टिमें सिंचित किये गये द्रव्यको निषेकभागहारसे खण्डित करके दूसरी कृष्टिमें प्रदेशपंजको वह सींचता है, अन्यथा गोपुच्छाकारकी उत्पत्ति नहीं हो सकती यह इसका भावार्थ है ।

इस प्रकार इस क्रमसे तीसरी और चौथी आदि कृष्टियोंमें उत्तरोत्तर अनन्त भागहीन-अनन्त भागहीन करके पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलोंको उल्लंघन कर उस अन्तरालमें

हेट्ठिमाणंतरकिट्टि त्ति, एदम्मि अद्धाणे अणंतभागहाणिं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। पुणो एदम्मि अंतरे दोण्हं पुव्वकिट्टीणमंतराले णिव्वत्तिज्जमाणपढमापुव्वकिट्टीए केरिसो पदेसणिसेगो होदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

* अपुव्वाए किट्टीए अणंतगुणं।

§ ६३६. किं कारणं? पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदाणंतभागमेत्तदव्वे अपुव्वकिट्टीअद्धाणेण खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तदव्वस्स हेट्ठिमाणंतरपुव्वकिट्टीए णिवदिददव्वादो अणंतगुणस्स तत्थ णिक्खेवदंसणादो। एदस्स दव्वस्स ओवट्टणं ठविय सिस्साणमेत्थ अत्थपडिबोहो कायव्वो।

* अपुव्वादो किट्टीदो जा अणंतरकिट्टी तत्थ अणंतगुणहीणं।

§ ६३७. एत्थ वि कारणमणंतरपरूविदमेव दट्ठव्वं। तदो पुव्वापुव्वकिट्टीसु एयगोवुच्छासंपायणट्ठं हेट्ठिमोवरिमपुव्वकिट्टीसयलदव्वादो अणंतभागेणहीणमहियं च कादूण णिसिंचमाणस्स मज्झिमापुव्वकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गमणंतगुणं जादमिदि एसो एदस्स भावत्थो। संपहि एत्तो उवरि सव्वत्थ अणंतरोवणिधाए अणंतभागहीणं पदेसणिक्खेवं कुणमाणो गच्छदि जाव असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण ट्ठिदविदियापुव्वकिट्टीए समणंतरहेट्ठिमपुव्वकिट्टि त्ति, एदम्मि अद्धाणे अणंतभागहीणपदेसणिक्खेवं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो त्ति इममत्थविसेसं पदुप्पायेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टिसे अधस्तन अनन्तर कृष्टिके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए, क्योंकि इस अध्वानमें अनन्त भागहानिको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। पुन: इस अन्तरालमें दो पूर्व कृष्टियोंके अन्तरालमें निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टिमें प्रदेशनिषेक किस प्रकारका होता है ऐसी आशंका होनेपर नि:शंक करनेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

* अपूर्व कृष्टिमें अनन्तगुणे प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है।

§ ६३६. शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—पहले निकालकर पृथक् रखे हुए अनन्त बहुभागमात्र द्रव्यको अपूर्व कृष्टिके अध्वानसे भाजित करनेपर वहाँ प्राप्त एक खण्डमात्र द्रव्य जो कि अधस्तन अनन्तर पूर्व कृष्टिमें निक्षिप्त द्रव्यसे अनन्तगुणा है—उसका उस अपूर्व जघन्य कृष्टिमें निक्षेप देखा जाता है। इस द्रव्यकी अपवर्तना स्थापित करके यहाँ शिष्योंको अर्थका प्रतिबोध कराना चाहिए।

* अपूर्व कृष्टिसे जो अनन्तर कृष्टि है उसमें अनन्तगुणे हीन द्रव्यको निक्षिप्त करता है।

§ ६३७. यहाँपर भी अनन्तर कहा हुआ ही कारण जानना चाहिए। अत: पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंमें एक गोपुच्छाका सम्पादन करनेके लिए अधस्तन और उपरिम पूर्व कृष्टियोंके समस्त द्रव्यसे अनन्तवें भागहीन द्रव्यको अधिक करके सिंचित करते हुए मध्यम अपूर्व कृष्टिमें निक्षिप्त प्रदेशपुंज अनन्तगुणा हो जाता है इस प्रकार यह इसका भावार्थ है। अब इससे आगे सर्वत्र अनन्तरोपनिधाके क्रमसे अनन्त भागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता हुआ पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण अध्वान (स्थान) ऊपर जाकर स्थित दूसरी अपूर्व कृष्टिके समानान्तर अधस्तन अपूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तकके इस अध्वानमें अनन्त भागहीन प्रदेशोंके निक्षेपको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है इस प्रकार इस अर्थविशेषका प्रतिपादन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* तदो पुणो अणंतभागहीणं ।

§ ६३८. सुगमं । संपहि एत्तो परमपुव्वकिट्टीसरूवेणाणंतगुणं पदेसग्गं णिसिंचिय पुणो तदुवरिमपुव्वकिट्टीए अणंतगुणहीणं णिसिंचदि । तत्तो परमणंतभागहीणं जाव अण्णमपुव्वकिट्टी ण पत्ता त्ति । पुणो अपुव्वकिट्टीए पुव्वं वा अणंतगुणं, तदो अणंतगुणहीणो, तत्तो परमणंतभागहीण-मिदि एदेण कमेण उवरि सव्वत्थ णेदव्वमिदि जाणावणफलो उवरिमसुत्तारंभो—

* एवं सेसासु सव्वासु ।

§ ६३९. गयत्थमेदं सुत्तं । एवमेत्तिएण सुत्तपबंधेण बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणीणमपुव्वकिट्टीणं सरूवविणिण्णयं कादूण संपहि संकामिज्जमाणेण पदेसग्गेण कोहपढमसंगहकिट्टिं मोत्तूण सेसाण-मेक्कारसण्हं संगहकिट्टीणमवयवभावेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं परूवणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* जाओ संकामिज्जमाणियादो पदेसग्गादो अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति ताओ दुसु ओगासेसु ।

§ ६४०. एत्थ संकामिज्जमाणपदेसग्गमिदि वुत्ते ओकड्डणासंकमेण संकामिज्जमाणदव्वस्स गहणं कायव्वं; तस्सेव दव्वस्स संगहकिट्टीणं साहारणभावेण पहाणभावोवलंभादो । तेण *संकामिज्जमाणएण पदेसग्गेण जाओ अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति, ताओ दोसु ओगासेसु*

---

* तदनन्तर पुनः पूर्व कृष्टिमें अनन्त भागहीन प्रदेशपुंज निक्षिप्त करता है ।

§ ६३८. यह सूत्र सुगम है । अब इससे आगे अपूर्व कृष्टिरूपसे अनन्तगुणे प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करके पुन: उससे आगेकी पूर्व कृष्टिमें अनन्त गुणहीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है । पुन: उससे आगे जबतक अन्य अपूर्व कृष्टि नहीं प्राप्त होती तबतक अनन्त भागहीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है । पुन: अपूर्व कृष्टिमें पहलेके समान अनन्तगुणा प्रदेशपुंज निक्षिप्त करके तदनन्तर पूर्व कृष्टिमें अनन्तगुणा हीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है । फिर उससे आगे अनन्तभागहीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है । इस प्रकार इस क्रमसे आगे सर्वत्र ले जाना चाहिए इस प्रकारका ज्ञान कराना है फल जिसका ऐसे आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

* इसी प्रकार बध्यमान सब कृष्टियोंमें जानना चाहिए ।

§ ६३९. यह सूत्र गतार्थ है । इस प्रकार इतने सूत्र प्रबन्ध द्वारा बन्धसे निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टियोंके स्वरूपका निर्णय करके अब संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिको छोड़कर शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके अवयवरूपसे निष्पद्यमान अपूर्व कृष्टियोंका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं वे दो अवकाशों (अन्तरालों) में निपजती हैं ।

§ ६४०. यहाँपर 'संकामिज्जमाणपदेसग्गं' ऐसा कहनेपर अपकर्षण संक्रमके द्वारा संक्रम्यमाण द्रव्यका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उसी द्रव्यकी संग्रह कृष्टियोंके साधारणपनेसे प्रधानता पायी जाती है । इसलिए संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजके द्वारा जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं वे

णिव्वत्तिज्जंति त्ति सुत्तत्थसंबंधो। संपहि के ते दुवे ओगासा त्ति आसंकिय पुच्छावक्कमाह—

* तं जहा।

§ ६४१. सुगमं।

* किट्टीअंतरेसु च संगहकिट्टीअंतरेसु च।

§ ६४२. कोहपढमसंगहकिट्टिं मोत्तूण सेसाणमेक्कारसण्हं संगहकिट्टीणं हेट्ठा तासिमसंखेज्जदिभागपमाणेण जाओ णिव्वत्तिज्जंति अपुव्वकिट्टीओ ताओ संगहकिट्टीअंतरेसु त्ति भणंति। तासिं चेव एक्कारसण्हं संगहकिट्टीणं किट्टीअंतरेसु पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं गंतूण अंतरंतरे जाओ अपुव्वकिट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति ताओ किट्टीअंतरेसु त्ति वुच्चंति। वेदिज्जमाणकोहपढमसंगहकिट्टीए हेट्ठा किट्टीअंतरेसु वा सगपदेसग्गमोकड्डियूण अपुव्वकिट्टीओ किण्ण कीरंति? ण, विणासिज्जमाणाए तिस्से तहाविहसंभवाणुवलंभादो। तम्हा तप्परिहारेण सेसाणमेक्कारसण्हमेव संगहकिट्टीणं संबंधेण संकामिज्जमाणयेण पदेसग्गेण अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि त्ति भणिदं।

* जाओ संगहकिट्टीअंतरेसु ताओ थोवाओ।

§ ६४३. एदाओ पुव्वकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्ताओ होदूण थोवाओ त्ति भणिदाओ। किं

दो अन्तरालोंमें निपजती है ऐसा इस सूत्रके साथ अर्थका सम्बन्ध है। अब वे दो अन्तराल कौन हैं ऐसी आशंका करके पृच्छावाक्य कहते हैं—

* वह जैसे।

§ ६४१. यह सूत्र सुगम है।

*** वे संक्रम्यमाण अपूर्व कृष्टियाँ कृष्टि-अन्तरालोंमें और संग्रह कृष्टि-अन्तरालोंमें निपजती है।**

§ ६४२. क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिको छोड़कर शेष ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके नीचे उनके असंख्यातवें भागप्रमाण जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं वे संग्रह कृष्टियोंके अन्तरालोंमें कही जाती हैं। और उन्हीं ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके कृष्टि-अन्तरालोंमें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर प्रत्येक अन्तरमें अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं वे कृष्टि-अन्तरालोंमें कही जाती हैं।

शंका—वेद्यमान क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके नीचे अथवा कृष्टि-अन्तरालोंमें अपने प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके अपूर्व कृष्टियोंको क्यों नहीं करता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि विनश्यमान उसमें उस प्रकारसे सम्भव नहीं है। इसलिए उसके परिहार द्वारा शेष ग्यारहों संग्रह कृष्टियोंके सम्बन्धसे संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे अपूर्व कृष्टियोंको निपजाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** संग्रह कृष्टियोंके अन्तरालोंमें जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं वे थोड़ी होती हैं।**

§ ६४३. ये पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर थोड़ी कही गयी हैं।

कारणं ? ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तदव्वादो चेव संगहकिट्टीणं हेट्ठा अपुव्वकिट्टीणं णिव्वत्तणादो ।

*** जाओ किट्टीअंतरेसु ताओ असंखेज्जगुणाओ ।**

§ ६४४. एदाओ वि पुव्वकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव, किंतु दव्वविसेसेण पुव्विल्ल-किट्टीहिंतो असंखेज्जगुणाओ जादाओ; ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जासंखेज्जभागमेत्तदव्वं घेत्तूण किट्टीअंतरेसु अपुव्वकिट्टीणं णिव्वत्तणोवलंभादो ।

*** जाओ संगहकिट्टीअंतरेसु तासिं जहा किट्टीकरणे अपुव्वाणं णिव्वत्तिज्ज-माणियाणं किट्टीणं विधी, तहा कायव्वो ।**

§ ६४५. तत्थ ताव जाओ संगहकिट्टीओ अंतरेसु ओकड्डिज्जमाणपदेसग्गेणापुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति परूवणाए जो किट्टीकरणे अपुव्वाणं णिव्वत्तिज्जमाणाणं किट्टीणं विधी पुव्वपरूविदो सो चेव णिरवसेसमेत्थाणुगंतव्वो; दिज्जमाणपदेसग्गस्स उट्टकूडसेढीआगारेण णिसेगपरूवणं पडि तत्तो भेदाणुवलंभादो । एदं च उट्टकूडसेढिसामण्णावेक्खाए विसेसो णत्थि त्ति भणिदं । अत्थदो पुण जोइज्जमाणे तेण विधिणा सरिसो विधी एत्थ ण होदि; थोवयरविसेससंभ-वादो । तं कधं ? किट्टीकरणद्धाए पढमसमयम्मि किट्टीसरूवेण परिणदपदेसपिंडादो विदिय-समयम्मि किट्टीसु णिसिच्चमाणपदेसपिंडो असंखेज्जगुणो भवदि । तदियसमये तासु णिसिच्चमाण-

---

शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यसे ही संग्रह कृष्टियोंके नीचे अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं ।

*** कृष्टि-अन्तरालोंमें जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं वे असंख्यातगुणी हैं ।**

§ ६४४. ये अपूर्व कृष्टियाँ भी पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होती हैं, किन्तु द्रव्यविशेषके कारण ये पूर्व कृष्टियोंसे असंख्यातगुणी हो जाती हैं, क्योंकि अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यातासंख्यातवें भागमात्र द्रव्यको ग्रहण कर कृष्टि-अन्तरालोंमें अपूर्व कृष्टियोंका उत्पन्न होना पाया जाता है ।

*** संग्रह कृष्टि-अन्तरालोंमें जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं उनकी कृष्टिकरणमें निष्पद्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी जो विधि कही गयी है वही विधि यहाँ करनी चाहिए ।**

§ ६४५. वहाँ जो संग्रह कृष्टियाँ हैं उनके अन्तरालोंमें अपकृष्यमाण प्रदेशपुंजसे जो अपूर्व कृष्टियाँ निपजती हैं, कृष्टिकरणकी प्ररूपणाके समय निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी जो विधि पहले कह आये हैं वही पूरी यहाँ जाननी चाहिए, क्योंकि उष्ट्रकूटश्रेणिके आकारसे निषेकप्ररूपणाके प्रति उससे इसमें भेद नहीं पाया जाता । और यह उष्ट्रकूटश्रेणि सामान्यकी अपेक्षा भेदरूप नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । विशेषरूपसे देखनेपर तो उस विधिके सदृश यह विधि नहीं है, क्योंकि उससे इसमें थोड़ा भेद सम्भव है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—कृष्टिकरणकालके प्रथम समयमें कृष्टिरूपसे परिणत प्रदेशपुंजसे दूसरे समयमें कृष्टियोंमें सींचा जानेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होता है । तीसरे समयमें उनमें सींचा जाने-

पदेसपिंडो असंखेज्जगुणो। एवं समयं पडि विसोहिमाहप्पेण किट्टीसु णिसिंचमाणपदेसपिंडो असंखेज्जगुणो होदूण गच्छदि जाव किट्टीकरणद्धाए चरिमसमओ त्ति।

एवं होदि त्ति कट्टु तत्थ वट्टमाणसमयम्मि णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीणं चरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो पुव्विल्लसमयम्मि कदपुव्वकिट्टीणं जहण्णकिट्टीए णिसिंचमाणपदेसग्गमसंखेज्जभागहीणं होइ, तत्थ पुव्वावट्ठिददव्वमेत्तेण परिहीणत्तदंसणादो। तत्तो अणंतभागहाणीए जहाकमं गंतूण पुणो पुव्विल्लसमयम्मि कदसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टिम्मि णिसित्तपदेसग्गादो वट्टमाणसमयम्मि विदियसंगहकिट्टीए हेट्ठा कीरमाणापुव्वजहण्णकिट्टीए दिज्जमाणपदेसपिंडमसंखेज्जभागुत्तरं होइ। पुणो सेसापुव्वकिट्टीसु अणंतभागहीणं चेव होदूण णिवददि। एवमुवरि वि णेदव्वं। दिस्समाणपदेसग्गं पुण सव्वत्थाणंतभागहीणं चेव होदूण चिट्ठदि। एवमेसो कमो किट्टीकरणद्धाए विदियसमयप्पहुडि जाव तिस्से चेव चरिमसमयो त्ति ताव परूविदो।

§ ६४६. किट्टीवेदगद्धाए पुण एसो विधी ण होदि। किं कारणं? किट्टीवेदगद्धाए अपुव्वकिट्टीसु णिसिंचमाणपदेसग्गं पुव्वकिट्टीपदेसपिंडस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होइ। तेण किट्टीवेदगद्धाए पढमसमये णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीणं चरिमकिट्टीए णिवदिदे पदेसग्गादो पुव्वकिट्टीणं जहण्णकिट्टीए पढमाणं पदेसग्गमसंखेज्जगुणहीणं होइ, अण्णहा पुव्वापुव्वकिट्टीणं संधीसु एयगोवुच्छभावाणुप्पत्तीदो। तदो एवंविहविसेससंभवपदंसणट्ठमेत्थ सेढिपरूवणं कस्सामो। तं जहा—

वाला प्रदेशपुंज उससे असंख्यातगुणा है। इस प्रकार प्रत्येक समयमें विशुद्धिके माहात्म्यवश कृष्टियोंमें सींचा जानेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होकर कृष्टिकरणकालके अन्तिम समय तक जाता है।

इस प्रकार होता है ऐसा करके वहाँ वर्तमान समयमें निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त किये गये प्रदेशपुंजसे पिछले समयमें की गयी पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें निक्षिप्यमान प्रदेशपुंज असंख्यातभागहीन होता है क्योंकि उसमें पूर्वके अवस्थित द्रव्यमात्रसे हीनता देखी जाती है। पुनः वहाँसे अनन्त भागहानिके क्रमसे यथाक्रम जाकर पुनः पिछले समयमें की गयी संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त किये गये प्रदेशपुंजसे वर्तमान समयमें दूसरी संग्रह कृष्टिके नीचे की जानेवाली अपूर्व जघन्य कृष्टिमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातवाँ भाग अधिक होता है। पुनः शेष अपूर्व कृष्टियोंमें अनन्तभागहीन ही होकर पतित होता है। इसी प्रकार आगे भी ले जाना चाहिए। परन्तु दृश्यमान प्रदेशपुंज सर्वत्र अनन्तभागहीन होकर ही अवस्थित रहता है। इस प्रकार यह क्रम कृष्टिकरणकालके दूसरे समयसे लेकर उसीके अन्तिम समय तक कहा गया है।

§ ६४६. परन्तु कृष्टिवेदककालमें यह विधि नहीं होती है, क्योंकि कृष्टिवेदककालमें अपूर्व कृष्टियोंमें सिंचित होनेवाला प्रदेशपुंज पूर्व कृष्टियोंके प्रदेशपुंजका असंख्यातवाँ भागमात्र ही होता है। इस कारण कृष्टिवेदककालके प्रथम समयमें निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिमें पतित होनेपर प्रदेशपुंजसे पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें पतित होनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन होता है, अन्यथा पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंकी सन्धियोंमें एक गोपुच्छापनेकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। इसलिए इस प्रकारके विशेषकी सम्भावनाको दिखलानेके लिए यहाँपर श्रेणिप्ररूपणा करेंगे। वह जैसे—

§ ६४७. पुव्वाणुपुव्वीए जा लोभस्स पढमसंगहकिट्टी तिस्से हेट्ठा पढमसमयकिट्टीवेदगो अपुव्वाओ किट्टीओ ओकड्डिज्जमाणेण पदेसग्गेण णिव्वत्तेमाणो तत्थ जा जहण्णिया किट्टी तिस्से बहुगं पदेसग्गं देदि। तत्तो अणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमकिट्टि त्ति। तदो अपुव्वकिट्टीणं चरिमकिट्टीए पदिदपदेसग्गादो लोभपढमसंगहकिट्टीए पुव्वकिट्टीणं जा जहण्णिया किट्टी तत्थ असंखेज्जगुणहीणं देदि। तत्तो विदियाए पुव्वकिट्टीए अणंतभागहीणं देदि। एवं णेदव्वं जाव पढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टी त्ति।

§ ६४८. पुणो तिस्से संगहकिट्टीए चरिमकिट्टिम्मि पदिदपदेसग्गादो विदियसंगहकिट्टीए हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणियाणमपुव्वकिट्टीणं जहण्णियाए किट्टीए असंखेज्जगुणं देदि। एत्थ कारणं सुगमं। तदो उवरि अणंतभागहीणं णिसिंचदि जाव अपुव्वाणं चरिमकिट्टी त्ति। पुणो अपुव्वाणं चरिमकिट्टीए णिसित्तपदेसग्गादो पुव्वणिव्वत्तिदाणं विदियसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणं जा जहण्णकिट्टी तिस्से पदेसपिंडमसंखेज्जगुणं देदि। तत्तो उवरिमाए पदमाणं[1] पदेसपिंडमणंतभागहीणं होदूण गच्छदि। णवरि किट्टीअंतरेसु णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीणं संधीसु पदेसविण्णासभेदो जाणियव्वो। एवमेसो भणिदविधी उवरि वि जाणियूण णेदव्वो।

§ ६४९. एवं किट्टीवेदगविदियादिसमएसु वि णिसेगपरूवणमेदमणुगंतव्वं। सुत्ते पुण एवंविहो विसेससंभवो ण विवक्खिओ, एक्कारसण्हं संगहकिट्टीणं हेट्ठा पादेक्कं पुव्वकिट्टीण-मसंखेज्जदिभागमेत्तदव्वमोकड्डियूण पुव्वकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ अपुव्वकिट्टीओ करेमाणो

§ ६४७. पूर्वानुपूर्वीकी अपेक्षा जो लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टि है उससे नीचे प्रथम समयमें कृष्टिवेदक जीव अपकृष्यमाण प्रदेशपुंजसे अपूर्व कृष्टियोंका निपजाता हुआ वहाँ जो जघन्य कृष्टि है उसमें बहुत प्रदेशपुंजको देता है। उसके बाद अन्तिम अपूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर अनन्तगुणे हीन प्रदेशपुंजको देता है। तत्पश्चात् अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिके प्रदेशपुंजसे लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें जो पूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टि होती है उसमें असंख्यातगुणा हीन प्रदेशपुंज देता है। उससे दूसरी पूर्व कृष्टिमें अनन्तभागहीन प्रदेशपुंज देता है। इस प्रकार प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टि तक ले जाना चाहिए।

§ ६४८. पुनः उस संग्रह कृष्टिकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे दूसरी संग्रह कृष्टिके नीचे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी जघन्य कृष्टिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है। यहाँ कारणका निर्देश सुगम है। उससे ऊपर अनन्तभागहीन प्रदेशपुंजका अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक सिंचन करता है। पुनः अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे दूसरी संग्रह कृष्टिकी पहले निष्पन्न हुई अन्तर कृष्टियोंकी जो जघन्य कृष्टि है उसमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है। उससे ऊपर कृष्टियोंमें पतित होनेवाला प्रदेशपिण्ड अनन्तभागहीन होकर जाता है। इतनी विशेषता है कि कृष्टि-अन्तरालोंमें निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी सन्धियोंमें प्रदेशोंके विन्यासमें फरकको जान लेना चाहिए। इस प्रकार यह कही गयी विधि आगे भी जानकर ले जाना चाहिए।

§ ६४९. इस प्रकार कृष्टिवेदकके द्वितीयादि समयोंमें भी यह निषेकप्ररूपणा जाननी चाहिए। परन्तु सूत्रमें इस प्रकारका विशेष सम्भव विवक्षित नहीं है, किन्तु ग्यारह संग्रह कृष्टियोंके

1. ता. प्रतौ उवरि पमाणं इति पाठः।

किट्टीकारगोव्व उट्टकूडसेढीए तत्थ पदेसविण्णासमेसो करेदि त्ति एत्तियं चेव पेक्खियूण भणिदत्तादो। संपहि जाओ किट्टीओ अंतरेसु संकामिज्जमाणयेण पदेसग्गेण अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति तासिं परूवणा केरिसी होदि त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

※ जाओ किट्टीअंतरेसु तासिं जहा बज्झमाणयेण पदेसग्गेण अपुव्वाणं णिव्वत्तिज्जमाणियाणं किट्टीणं विधी तहा कायव्वो।

§ ६५०. जहा बज्झमाणयेण पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणाओ अपुव्वकिट्टीओ असंखेज्जाणि किट्टीअंतराणि गंतूण णिव्वत्तिज्जंति, एवमेदाओ वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणि किट्टीअंतराणि समुल्लंघियूण णिव्वत्तिज्जंति; तत्थ दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणा वि तहा चेव अणुगंतव्वा; विसेसाभावादो त्ति भणिदं होदि। संपहि एत्थतणविसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

※ णवरि थोवदरगाणि किट्टीअंतराणि गंतूण संछुब्भमाणपदेसग्गेण अपुव्वा किट्टी णिव्वत्तिज्जमाणिगा दिस्सदि।

§ ६५१. तत्थ असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि समुल्लंघियूण एगा अपुव्वकिट्टी बंधेण णिव्वत्तिज्जदि त्ति पदुप्पाइदं, एत्थ पुण पलिदोवमवग्गमूलादो वि असंखेज्जगुणहीणाणि थोवयराणि चेव किट्टीअंतराणि गंतूण संकामिज्जमाणयेण पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणा अपुव्वा

नीचे अलग-अलग पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यका अपकर्षण करके पूर्व कृष्टियोंके असंख्यातवें भागमात्र अपूर्व कृष्टियोंको करनेवाले कृष्टिकारकके समान उष्ट्रकूटश्रेणिरूपसे उनमें प्रदेशविन्यासको यह करता है, मात्र इतना ही देखकर यह कहा है। अब जिन कृष्टियोंके अन्तरालोंमें संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे अपूर्व कृष्टियोंको निष्पन्न करता है उनकी प्ररूपणा किस प्रकारकी होती है ऐसी आशंका होनेपर निर्णयका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

※ जो अपूर्व कृष्टियाँ कृष्टि-अन्तरालोंमें निष्पन्न की जाती हैं उनकी बध्यमान प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी जिस प्रकारकी विधि की गयी है उस प्रकारका विधान यहाँ करना चाहिए।

§ ६५०. जिस प्रकारके बध्यमान प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियाँ असंख्यात कृष्टि-अन्तराल जाकर निष्पन्न की जाती हैं इस प्रकार ये कृष्टियाँ भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टि-अन्तरालोंको उल्लंघन कर निष्पन्न की जाती हैं तथा वहाँ दीयमान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा भी उसी प्रकार जाननी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब यहाँपर प्राप्त होनेवाले विशेषका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

※ इतनी विशेषता है कि स्तोकतर कृष्टि-अन्तराल जाकर संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे अपूर्व कृष्टि निर्वर्त्यमान होती हुई दिखाई देती है।

§ ६५१. वहाँ पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलोंको उल्लंघन कर एक अपूर्व कृष्टि बन्धसे निष्पन्न होती है ऐसा कहा गया है। परन्तु यहाँपर पल्योपमके प्रथम वर्गमूलसे भी असंख्यातगुण हीन स्तोकतर कृष्टि-अन्तर जाकर ही संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व

किट्टी दट्ठव्वा त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। तत्थ दिवड्डगुणहाणि तिभागमेत्तद्धाणं गंतूण एक्किस्से अपुव्वकिट्टीए णिव्वत्तिदंसणादो। एत्थ पुण ओकड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तद्धाणं गंतूण एक्केक्काए अपुव्वकिट्टीए णिव्वत्तिदंसणादो। तं जहा—

§ ६५२. एगसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स, दिवड्डगुणहाणिमेत्तगुणगारं ठवेयूण एदस्स हेट्ठा तिण्णि रूवाणि भागहारत्तेण ठवेयव्वाणि। एवं ठविदे जस्स वा तस्स वा एगकसायस्स एगसंगह-किट्टीपदेसग्गमागच्छदि। संपहि एवंविहदव्वस्स जदि सयलकिट्टीअद्धाणं लब्भइ तो एगसमय-पबद्धमेत्तणवकबंधदव्वस्स केत्तियाओ अपुव्वकिट्टीओ लहामो त्ति तेरासियं कादूण पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए $\frac{१२}{३}$ | ९ | १ दिवड्डगुणहाणितिभागेण एगसंगहकिट्टीअद्धाणं खंडेयूणेगखंडमेत्तीओ अपुव्वकिट्टीओ बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणाओ आगच्छंति। एदासिं तेरासिय-विहाणेणद्धाणं साहेयव्वं; तस्सेसा ठवणा $\frac{९}{४}$ | ९ | १ एवं ठविय तेरासियकमेणोवट्टेदूण साहि-दद्धाणमेत्तियं होइ ४। एदं च असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणमिदि घेत्तव्वं; दिवड्डगुणहाणि-तिभागपमाणत्तादो।

§ ६५३. संपहि ओकड्डियूण गहिदपदेसग्गमस्सियूण भण्णमाणे एगसमयपबद्धं ठविय पुणो

कृष्टि जाननी चाहिए इस प्रकार यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। वहाँ डेढ़ गुणहानिके त्रिभागप्रमाण स्थान जाकर एक अपूर्व कृष्टिकी निष्पत्ति देखी जाती है। परन्तु यहाँपर अपकर्षण-भागहारप्रमाण स्थान जाकर एक-एक अपूर्व कृष्टिकी निष्पत्ति देखी जाती है। वह जैसे—

§ ६५२. एक समयप्रबद्धको स्थापित करके पुन: इसका डेढ़ गुणहानिप्रमाण गुणकार स्थापित करके इसके नीचे तीन अंक भागहाररूपसे स्थापित करने चाहिए। इस प्रकार स्थापित करनेपर जिस किसी एक कषायकी एक संग्रह कृष्टिका प्रदेशपुंज आ जाता है। अब इस प्रकारके द्रव्यका यदि समस्त कृष्टि-स्थान (आयाम) प्राप्त होता है तो एक समयप्रबद्धमात्र नवकबन्धके द्रव्यमें कितनी अपूर्व कृष्टियाँ प्राप्त करेंगे इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर डेढ़ गुणहानिके त्रिभाग १२ ÷ ३ = ४, से एक संग्रह कृष्टिके अध्वान ९ को खण्डित करके एक खण्डप्रमाण $\frac{९}{४}$ अपूर्व कृष्टियाँ बन्धसे निर्वर्त्यमान होकर प्राप्त होती हैं। यहाँ इनका त्रैराशिक विधिसे अध्वान साधकर ले आना चाहिए। उसकी यह स्थापना है—$\frac{९}{४}$, ९, १। इस प्रकार स्थापित करके त्रैराशिकक्रमसे अपवर्तन करके साधित हुआ अध्वान इतना होता है—४। और यह पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यह डेढ़ गुणहानिके त्रिभागप्रमाण है।

उदाहरण—अंकसंदृष्टिके अनुसार डेढ़ गुणहानि = १२, संग्रह कृष्टि अध्वान ९, डेढ़ गुणहानि-का त्रिभाग ४।

यहाँ एक संग्रह कृष्टिके अध्वान ९ में डेढ़ गुणहानिके त्रिभागसे भाजित करनेपर एक संग्रह कृष्टि अध्वानके भीतर $\frac{९}{४}$ प्रमाण अपूर्व कृष्टियाँ प्राप्त हुईं। पुन: यहाँ एक अपूर्व कृष्टिका अध्वान प्राप्त करनेपर एक संग्रह कृष्टिके अध्वान ९ में अपूर्व कृष्टियों $\frac{९}{४}$ का भाग देनेपर $\frac{९}{१} \div \frac{९}{४} = ४$ एक अपूर्व कृष्टिका अध्वान प्राप्त हुआ। अर्थसंदृष्टिकी अपेक्षा देखनेपर यह पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण प्राप्त होता है ऐसा प्रकृतमें समझना चाहिए।

§ ६५३. अब अपकर्षण करके ग्रहण किये गये प्रदेशपुंजका आश्रय करके कथन करनेपर

एदस्स दिवड्ढगुणहाणिगुणगारं ठवेयूण पुणो एदस्स हेट्ठा भागहारो तिगुणोकड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तो ठवेयव्वो। एवं ठविदे एक्किस्से संगहकिट्टीए ओकड्डियूण गहिदसयलपदेसपिंडो आगच्छदि। संपहि एदेण दव्वेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं पमाणमिच्छामो त्ति एयसंगहकिट्टीए सयलपदेसग्गस्स जइ सयलकिट्टीओ लब्भंति, तो ओकड्डियूण गहिददव्वस्स केत्तियमेत्तीओ अपुव्वकिट्टीओ लहामो त्ति तेरासियं कादूण गहेयव्वं। तस्स संदिट्ठी ०१२/३ | ९ | ०१२/३६

एवं तेरासियं कादूण पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए लद्धपमाणमोकड्डुक्कड्डुणभागहारेण एगसंगहकिट्टीअद्धाणे खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तं होदि ९/६। पुणो एदेण सयलकिट्टीअद्धाणे तेरासियविहाणेणोवट्टिदे लद्धमोकड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तमेक्किस्से अपुव्वकिट्टीए लब्भमाणकिट्टीअंतरद्धाणमागच्छदि। तस्स संदिट्ठी ६। तदो थोवयराणि चेव किट्टीअंतराणि गंतूण संकामिज्जमाणपदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणा अपुव्वकिट्टी दीसइ त्ति सुत्ते भणिदं।

§ ६५४. संपहि एदस्सेवद्धाणस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** ताणि किट्टीअंतराणि पगणणादो पलिदोवमवग्गमूलस्स असंखेज्जदिभागो।**

§ ६५५. कुदो? पलिदोवमपढमवग्गमूलादो असंखेज्जगुणहीणस्स ओकड्डुक्कड्डुणभागहारस्स पयदद्धाणत्तेणाणंतरमेव साहियत्तादो। संपहि एवंविहद्धाणे संकामिज्जमाणपदेसग्गेण किट्टीअंतरेसु णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणा बंधेण णिव्वत्तिज्जमाणा

एक समयप्रबद्धको स्थापित करके पुनः इसके डेढ़ गुणहानिरूप गुणकारको स्थापित करके पुनः इसके नीचे तिगुने अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण भागहारको स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करनेपर एक संग्रह कृष्टिका अपकर्षण करके ग्रहण किया गया सम्पूर्ण प्रदेशपिण्ड आता है। अब इस द्रव्यसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंके प्रमाणको लाना चाहते हैं, इसलिए एक संग्रह कृष्टिके समस्त प्रदेशपिण्डको यदि समस्त कृष्टियाँ प्राप्त होती हैं तो अपकर्षण करके ग्रहण किये गये द्रव्यमें कितनी अपूर्व कृष्टियोंको प्राप्त करेंगे इस प्रकार त्रैराशिक करके उन्हें ग्रहण करना चाहिए। उनकी यह संदृष्टि है—०१२/३ ९ ० १२/३६। इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके उसमें प्रमाणराशिसे भाजित करनेपर जो प्रमाण लब्ध आता है वह अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे एक संग्रह कृष्टिके अध्वानके खण्डित करनेपर वहाँ प्राप्त हुआ एक खण्डप्रमाण होता है ६/६। पुनः इससे समस्त कृष्टि-अध्वानको त्रैराशिक विधिसे भाजित करनेपर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण एक अपूर्व कृष्टिका प्राप्यमाण कृष्टि-अन्तररूप अध्वान लब्ध आता है। उसकी संदृष्टि ६। इसलिए स्तोकतर कृष्टि-अन्तराल जाकर ही संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टि दिखाई देती है ऐसा सूत्रमें कहा है।

§ ६५४. अब इसी अध्वानको स्पष्ट करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** वे कृष्टि-अन्तर प्रगणनाके अनुसार पल्योपमके प्रथम वर्गमूलके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।**

§ ६५५. क्योंकि पल्योपमके प्रथम वर्गमूलसे असंख्यातगुणा हीन अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण प्रकृत अध्वान है यह अनन्तर पूर्व ही साधित कर आये हैं। अब इस प्रकारके अध्वानमें संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे कृष्टि-अन्तरालोंमें निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंमें दीयमान प्रदेशपुंजकी

पुव्वकिट्टीणं भणिदविहाणेण णेदव्वा। णवरि संगहकिट्टीए हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीसु पुव्वुत्तेण कमेण पदेसणिसेगं कादूण तदो अपुव्वाणं चरिमकिट्टीदो पुव्वजहण्णकिट्टीए असंखेज्जगुणहीणं पदेसग्गं णिसिंचदि। तत्तो अणंतभागहीणं जाव ओकड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तद्धाणमुवरि चडिदूण ट्ठिदतदित्थपुव्वकिट्टि त्ति। तदो तत्थ किट्टीअंतरे णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीए असंखेज्जगुणं, तदो असंखेज्जगुणहीणं, तत्तो परमणंतभागहीणमिच्चादिकमेण संधीओ जाणियूण णेदव्वं जाव णिरुद्धसंगहकिट्टीए समत्ता त्ति। एत्तो उवरिमसंगहकिट्टीसु वि एदेणेव विहाणेण सेढिपरूवणा कायव्वा।

§ ६५६. अधवा संतकम्मस्स असंखेज्जदिभागभूदणवकबंधपदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं जहा अणंतगुणहीण-अणंतगुणहीणकमेण सेढिपरूवणा सुत्तणिबद्धाकया एवमेत्थ चिराणसंतकम्मादो असंखेज्जगुणहीणसंकामिज्जमाणपदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणाणमपुव्वकिट्टीणं दुविहाणं पि संधीसु अणंतगुणहीणाहियकमेण सेढिपरूवणा णिव्वामोहमणुगंतव्वा; एदस्सेवत्थस्स सुत्ताणुसारित्तेण पहाणभावोवलंभादो। एवमेसा किट्टीवेदगस्स पढमसमये सव्वा परूवणा विदियादिसमयेसु वि एवं चेव वत्तव्वा; विसेसाभावादो। संपहि किट्टीवेदगपढमसमयप्पहुडि समये समये विणासिज्जमाणाणं किट्टीणं थोवबहुत्तपरूवणट्ठमुवरिमपबंधमाढवेइ—

*** पढमसमयकिट्टीवेदगस्स जा कोहपढमसंगहकिट्टी तिस्से असंखेज्जदिभागो विणासिज्जदि।**

श्रेणिप्ररूपणाको बन्धसे निर्वर्त्यमान पूर्व कृष्टियोंकी कही गयी विधिके अनुसार ले जाना चाहिए। इतनी विशेषता है कि संग्रह कृष्टिके नीचे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंमें पूर्वोक्त क्रमके अनुसार प्रदेशनिषेक करके वहाँसे अपूर्व कृष्टियोंकी अन्तिम कृष्टिसे पूर्व जघन्य कृष्टिमें असंख्यातगुणे हीन प्रदेशपुंजको सींचता है। पुनः वहाँसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारमात्र अध्वान ऊपर चढ़कर वहाँपर स्थित हुई पूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक असंख्यात भागहीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। तत्पश्चात् वहाँ कृष्टि-अन्तरालमें निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। तत्पश्चात् असंख्यातगुणे हीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। तत्पश्चात् अनन्त भागहीन प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है। इस प्रकार इत्यादि क्रमसे सन्धियोंको जानकर विवक्षित संग्रह कृष्टिकी समाप्ति तक ले जाना चाहिए। इससे उपरिम संग्रह कृष्टियोंमें भी इसी विधानके अनुसार श्रेणिप्ररूपणा करनी चाहिए।

§ ६५६. अथवा सत्कर्मके असंख्यातवें भागप्रमाण नवकबन्धके प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी जिस प्रकार अनन्तगुणहीन-अनन्तगुणहीनके क्रमसे सूत्रमें निबद्ध श्रेणिप्ररूपणा की उसी प्रकार यहाँ चिरकालीन सत्कर्मसे असंख्यातगुणहीन संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी दोनोंकी ही सन्धियोंमें अनन्तगुणहीन अधिकके क्रमसे श्रेणिप्ररूपणा व्यामोहको छोड़कर करनी चाहिए, क्योंकि सूत्रके अनुसार यही अर्थ प्रधानरूपसे उपलब्ध होता है। इस प्रकार कृष्टिवेदकके प्रथम समयकी यह सम्पूर्ण प्ररूपणा द्वितीयादि समयोंमें भी इसी प्रकार कहनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई भेद नहीं है। अब कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर प्रत्येक समयमें विनश्यमान कृष्टियोंके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें जो क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टि है उसका असंख्यातवाँ भाग विनष्ट होता है।**

§ ६५७. विसोहिपाहम्मेण णिरुद्धसंगहकिट्टीए अग्गकिट्टिप्पहुडि असंखेज्जदिभागमेत्तकिट्टीओ अणुसमयोवट्टणाघादेण विणासेदि त्ति वुत्तं होदि। एदाओ च पढमसमये विणासिज्जमाणकिट्टीओ उवरिमासेससमएसु विणासिज्जमाणकिट्टीहिंतो बहुगीओ त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

* किट्टीओ जाओ पढमसमये विणासिज्जंति ताओ बहुगीओ।

§ ६५८. कुदो ? सयलकिट्टीणमसंखेज्जदिभागपमाणत्तादो।

* जाओ विदियसमये विणासिज्जंति ताओ असंखेज्जगुणहीणाओ।

§ ६५९. जइ वि विदियसमये अणंतगुणविसोहीए वट्टदि तो वि पढमसमये विणासिज्जमाण-किट्टीहिंतो असंखेज्जगुणहीणाओ चेव किट्टीओ तम्मि समये विणासेदि, घादिदसेसाणुभागघादहेदूणं विसोहीणमेत्थतणीणं तहा चेव पवुत्तिणियमदंसणादो। एवं तदियादि समयेसु वि एसो चेव अणुसमयोवट्टणाकमो णेदव्वो त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

* एवं ताव दुचरिमसमयअविणट्ठकोहपढमसंगहकिट्टि त्ति।

§ ६६०. एवमसंखेज्जगुणहीणकमेण ताव किट्टीओ सगकिट्टीवेदगकालब्भंतरे विणासेमाणो गच्छदि जाव सगविणासणद्धादुचरिमसमओ त्ति; चरिमसमए अविणट्ठकोहपढमसंगहकिट्टीणवक-बंधुच्छिट्ठावलियवज्जाणमणुप्पादाणुच्छेदसरूवेण विणासदंसणादो। संपहि किट्टीवेदगपढमसमय-

---

§ ६५७. विशुद्धिके माहात्म्यवश विवक्षित संग्रह कृष्टिकी अग्र कृष्टिसे लेकर असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोंको अनुसमय अपवर्तनाघात द्वारा विनष्ट करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और प्रथम समयमें विनश्यमान ये कृष्टियाँ अगले समयोंमें विनश्यमान कृष्टियोंसे बहुत हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* जो कृष्टियाँ प्रथम समयमें विनाशको प्राप्त होती हैं वे बहुत हैं।

§ ६५८. क्योंकि वे समस्त कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

* जो कृष्टियाँ प्रथम समयमें विनाशको प्राप्त होती हैं वे असंख्यातगुणी हीन हैं।

§ ६५९. यद्यपि दूसरे समयमें यह क्षपक अनन्तगुणी विशुद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होता है तो भी प्रथम समयमें विनश्यमान कृष्टियोंसे असंख्यातगुणी हीन कृष्टियोंको ही उस समयमें विनष्ट करता है, क्योंकि घात होनेसे शेष रहे अनुभागघातके हेतुरूप यहाँ सम्बन्धी विशुद्धियोंका उसी प्रकारसे ही प्रवृत्तिका नियम देखा जाता है। इसी प्रकार तृतीय आदि समयोंमें भी इसी प्रकार अनुसमय अपवर्तनाका क्रम जानना चाहिए इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* इसी प्रकार यह क्रम अविनष्ट क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिके द्विचरम समय तक जानना चाहिए।

§ ६६०. इस प्रकार असंख्यातगुणहीन क्रमसे कृष्टियोंको अपने वेदक कालके भीतर विनष्ट करता हुआ अपने विनाश करनेके कालके द्विचरम समय तक जाता है, क्योंकि चरम समयमें विनाशको नहीं प्राप्त हुए क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिसम्बन्धी नवकबन्ध उच्छिष्टावलिके सिवाय शेषका अनुत्पादानुच्छेदस्वरूपसे विनाश देखा जाता है। अब कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे

प्पहुडि जाव णिरुद्धपढमसंगहकिट्टीए विणासणकालदुचरिमसमओ त्ति ताव विणासिदासेसकिट्टीओ संपिडिदाओ केत्तियमेत्तीओ होंति त्ति आसंकाए तप्पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** एदेण सव्वेण तिचरिमसमयमेत्तीओ सव्वकिट्टीसु पढम-विदियसमयवेदगस्स कोधस्स पढमकिट्टीए अबज्झमाणियाणं किट्टीणमसंखेज्जदिभागो।**

§ ६६१. पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहपढमसंगहकिट्टीए हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जभागमेत्ता किट्टीओ अबज्झमाणियाओ णाम। पुणो तत्थ उवरिमाबज्झमाणकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्तीओ चेव किट्टीओ एदेण सव्वेण वि कालेण विणासिदाओ दट्ठव्वाओ, दोण्हमेदासिं किट्टीणमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्ताविसेसे वि एत्तो तासिमसंखेज्जगुणत्तसिद्धीए परमागमुज्जोवबलेण परिच्छिण्णत्तादो। जहा कोहपढमसंगहकिट्टीमहिकिच्च एसो किट्टीविणासणकमो परूविदो, तहा चेव सेससंगहकिट्टीणं समये समये अणुगंतव्वो; किट्टीवेदगपढमसमयप्पहुडि जाव अप्पप्पणो वेदगकालदुचरिमसमओ त्ति सव्वासिं संगहकिट्टीणमवेदगकालस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकिट्टीओ अणुसमयोवट्टणाघादेण घादेमाणस्स तदविरोहाभावादो। एवमेदेण विहाणेण कोहपढमसंगहकिट्टीवेदगत्तमणुभूय तिस्से चरिमसमयवेदगभावेण पयट्टमाणस्स तदवत्थाए जो परूवणाभेदो तण्णिद्देसकरणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

लेकर विवक्षित प्रथम संग्रह कृष्टिके विनाश होनेके द्विचरम समय तक विनष्ट हुई अशेष कृष्टियाँ मिलाकर कितनी होती हैं ऐसी अशंका होनेपर उनके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इस सब कालके द्वारा जो त्रिचरम समयमात्र कृष्टियाँ विनाशको प्राप्त होती हैं वे सम्पूर्ण कृष्टियोंमें प्रथम समय वेदकके और द्वितीय समय वेदकके क्रोधसंज्वलनकी प्रथम कृष्टिसम्बन्धी अबध्यमान कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं।**

§ ६६१. प्रथम समयसम्बन्धी कृष्टिवेदकके क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके नीचे और ऊपर असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियाँ अबध्यमान होती हैं। पुनः उनमें उपरिम अबध्यमान कृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियाँ ही इस सब कालके द्वारा विनष्ट होती हुई जाननी चाहिए, क्योंकि इन दोनों प्रकारकी कृष्टियोंमें आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाणकी अपेक्षा विशेषता न होनेपर भी इनसे उनके असंख्यातगुणेपनेकी सिद्धि परमागमरूप उद्योतके बलसे जानी जाती है। जिस प्रकार क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिको अधिकृत कर यह कृष्टियोंके विनाश होनेका क्रम कहा है उसी प्रकार शेष संग्रह कृष्टियोंका प्रत्येक समयमें जानना चाहिए, क्योंकि कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर अपने-अपने वेदककालके द्विचरम समय तक सम्पूर्ण संग्रह कृष्टियोंके अवेदक कालके असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियोंका अनुसमय अपवर्तनाघातके द्वारा घात करते हुए वैसे होनेमें विरोधका अभाव है। इस प्रकार इस विधानसे क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदनका अनुभव करके उसका अन्तिम समयमें वेदन करनेमें प्रवृत्त हुए क्षपकके उस अवस्थामें जो प्ररूपणाभेद है उसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपकके जो प्रथम स्थिति होती है उस प्रथम स्थितिके एक समय अधिक एक आवलि शेष रहनेपर इस समय जो विधि होती है उस विधिको बतलावेंगे।**

*** कोहस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए सेसाए एदम्हि समये जो विही तं विहिं वत्तइस्सामो ।**

§ ६६२. पढमसमयकिट्टीवेदगो कोहसंजलणपढमसंगहकिट्टीए अवयवकिट्टीओ ओकड्डियूण पढमट्ठिदिं कुणमाणो तत्तोप्पहुडि जो कोहवेदगद्धा तिस्से सादिरेयतिभागमेत्तमावलियब्भहियं काढूण पढमट्ठिदिं करेदि । एवं णिक्खित्ता जा कोहपढमट्ठिदी कोहपढमकिट्टिं वेदेमाणस्स पढमट्ठिदी सा कमेण वेदिज्जमाणा जाधे समयाहियावलियमेत्ता परिसेसा ताधे कोहपढमसंगहकिट्टीए चरिमसमयवेदगो जायदे । एदम्मि अवत्थंतरे वट्टमाणस्सेदस्स जो परूवणाभेदो तमिदाणिं वत्तइस्सामो त्ति भणिदं होइ ।

*** तं जहा ।**

§ ६६३. सुगमं ।

*** ताधे चेव कोहस्स जहण्णगो ट्ठिदिउदीरगो ।**

§ ६६४. समयाहियावलियमेत्तणिरुद्धपढमट्ठिदीए चरिमट्ठिदिमोकड्डियूण उदये संछुहमाणस्स तस्स तम्मि समये कोहसंजलणस्स जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा जादा त्ति एसो एदस्स भावत्थो । ण च एत्थ विदियट्ठिदीए उदीरणासंभवो, हेट्ठा चेव आवलिय-पडिआवलियसेसपढमट्ठिदीए वट्टमाणस्स आगाल पडिआगालवोच्छेदवसेण तहाविहसंभवाणुवलंभादो ।

*** कोहपढमकिट्टीए चरिमसमयवेदगो जादो ।**

---

§ ६६२. प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदक जीव क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टियोंका अपवर्तन करके प्रथम स्थितिको करता हुआ वहाँसे लेकर जो क्रोध-वेदककाल है उसकी एक आवलि अधिक कालको साधिक त्रिभागमात्र करके प्रथम स्थिति करता है । इस प्रकार निक्षिप्त हुई जो क्रोधकी प्रथम स्थिति है अर्थात् क्रोधकी प्रथम कृष्टिका वेदन करनेवाले की प्रथम स्थिति है वह क्रमसे वेदनमें आती हुई जिस समय एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण शेष रहती है उस समय क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है । और इस अवस्थाके मध्य विद्यमान इसकी प्ररूपणामें जो भेद होता है उसे इस समय बतलावेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** वह जैसे ।**

§ ६६३. यह सूत्र सुगम है ।

*** उसी समय यह क्षपक क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्थिति उदीरक होता है ।**

§ ६६४. एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण विवक्षित प्रथम स्थितिकी अन्तिम स्थितिका अपकर्षण करके उदयमें निक्षिप्त करनेवाले उस क्षपकके उस समय क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थिति उदीरणा होती है यह इस सूत्रका भावार्थ है । किन्तु यहाँपर द्वितीय स्थितिकी उदीरणा सम्भव नहीं है, क्योंकि इसके पहले ही आवलि और प्रत्यावलिप्रमाण प्रथम स्थितिमें विद्यमान इस क्षपकके आगाल और प्रत्यगालकी व्युच्छित्ति हो जानेके कारण उस प्रकारका होना सम्भव नहीं है ।

*** तथा उस समय क्रोधकी प्रथम कृष्टिका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है ।**

§ ६६५. से कालप्पहुडि कोहविदियसंगहकिट्टीवेदगभावेण परिणमणदंसणादो त्ति वुत्तं होइ [२]

*** जा पुव्वपवत्ता संजलणाणुभागसंतकम्मस्स अणुसमयमोवट्टणा सा तहा चेव [३]**

§ ६६६. किट्टीवेदगपढमसमयप्पहुडि जा पुव्वपवत्ता चदुसंजलणाणुभागस्स अणुसमयोवट्टणा सा तहा चेव एण्हिं पि पयट्टदे, ण तत्थ किंचि णाणत्तमत्थि त्ति भणिदं होदि। एत्थ सुत्तसमत्तीए तिण्हमंकविण्णासो कदो, तदिओ एसो परूवणाभेदो एत्थ जाणेयव्वो त्ति पदुप्पायणट्ठं।

*** चदुसंजलणाणं ट्ठिदिबंधो बे मासा, चत्तालीसं च दिवसा अंतोमुहुत्तूणा [४]**

§ ६६७. पुव्वं किट्टीवेदगपढमसमये संपुण्णचत्तारिमासमेत्तो एदेसिं ट्ठिदिबंधो, तत्तो जहाकमं संखेज्जसहस्समेत्तेहिं ठिदिबंधोसरणेहिं ओहट्टियूण एण्हिमंतोमुहुत्तूणचत्तालीसदिवसाहियबे-मासमेत्तो संवुत्तो त्ति वुत्तं होइ। एत्थ चत्तारिमासमेत्तपुव्वुत्तसंधिविसयट्ठिदिबंधादो परिहीणासेसट्ठिदिपमाणं वीसदिवसा अंतोमुहुत्तब्भहिया त्ति दट्ठव्वं; तिण्हं कोहसंगहकिट्टीणं वेदगकालेण जदि दोण्हं मासाणं परिहाणी लब्भदि, तो एक्किस्से पढमसंगहकिट्टीए वेदगकालम्मि केत्तियं ठिदिबंधपरिहाणिं पेच्छामो त्ति तेरासियकमेण पयदट्ठिदिबंधपरिहाणी साहेयव्वा। तदो चउत्थमेदमावासयमिहावगंतव्वमिदि सिद्धं।

*** संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं छ वस्साणि अट्ठ च मासा अंतोमुहुत्तूणा [५]**

---

§ ६६५. तथा तदनन्तर समयसे लेकर क्रोधकी द्वितीय संग्रह कृष्टिके वेदकरूपसे परिणमन देखा जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। २।

*** संज्वलनचतुष्कके अनुभागसत्कर्मकी जो अनुसमय अपवर्तना पहले प्रवृत्त हुई थी वह उसी प्रकारसे प्रवृत्त रहती है। ३।**

§ ६६६. कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर चारों संज्वलनोंके अनुभागकी जो अनुसमय अपवर्तना पहले प्रवृत्त हुई थी वह इस समय भी उसी प्रकार प्रवृत्त रहती है। उसमें कुछ भी नानापना (भेद) नहीं होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर सूत्रकी समाप्तिमें तीन अंकका विन्यास किया है, उससे यह तीसरा प्ररूपणाभेद है ऐसा जानना चाहिए इस प्रकार—

*** चारों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध दो महीना और अन्तर्मुहूर्त कम चालीस दिनप्रमाण होता है। ४।**

§ ६६७. पहले कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें इन कर्मोंका सम्पूर्ण चार माहप्रमाण जो स्थितिबन्ध होता था, उससे संख्यात हजार स्थितिबन्धापसरणोंके द्वारा घटकर इस समय वह अन्तर्मुहूर्त कम चालीस दिन अधिक दो माहप्रमाण हो गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर चार माहप्रमाण पूर्वोक्त सन्धिविषयक स्थितिबन्धसे घटी हुई सम्पूर्ण स्थितिका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त अधिक बीस दिन होता है ऐसा जानना चाहिए। तीन क्रोधसम्बन्धी संग्रह कृष्टियोंकी स्थिति यदि वेदककालके द्वारा दो महीना कम होती है तो एक प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदककालमें स्थितिबन्धकी कितनी हानि देखेंगे इस प्रकार त्रैराशिकक्रमसे प्रकृत स्थितिबन्धकी हानि साध लेना चाहिए। इसलिए यह चौथा आवश्यक यहाँ जानना चाहिए यह सिद्ध हुआ।

*** चारों संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म छह वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम आठ महीना होता है। ५।**

§ ६६८. किट्टीवेदगपढमसमये अट्ठवस्समेत्तमेदेसिं ठिदिसंतकम्मं होदूण तत्तो कमेण परिहाइदूण एदम्मि समये छवस्साणि अंतोमुहुत्तूणट्ठमासब्भहियाणि होदूण परिसिद्धमिदि वुत्तं होदि। एत्थ अट्ठवस्समेत्तपुव्विल्लट्ठिदिसंतादो परिहीणा सेसट्ठिदिप्पमाणमंतोमुहुत्ताहियचत्तारिमासेहिं सादिरेयवस्समेत्तमिदि घेत्तव्वं। तिण्हं संगहकिट्टीणं वेदगकालब्भंतरे जदि चदुण्हं वस्साणं परिहाणी लब्भदि, तो पढमसंगहकिट्टीवेदगकालम्मि केत्तियं लभामो त्ति तेरासियं कादूण सादिरेयतिभागब्भहियएगवस्समेत्तट्ठिदिसंतपरिहाणी सिस्साणमेत्थ दरिसेयव्वा।

* तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो दस वस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि [६]

§ ६६९. पुव्विल्लसंधिविसये संखेज्जवस्ससहस्समेत्तो तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो तत्तो संखेज्जगुणहाणीए जहाकमं परिहाइदूण अंतोमुहुत्तूणदसवस्सपमाणो एदम्मि समये संजादो त्ति वुत्तं होइ।

* घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्साणि [७]

§ ६७०. पुव्वुत्तसंधीए संखेज्जवस्ससहस्समेत्तमेदेसिं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जेहिं ट्ठिदिखंडयसहस्सेहिं संखेज्जगुणहाणीए तत्तो सुट्ठु ओहट्टिदूण तप्पाओग्गसंखेज्जवस्सपमाणेणेण्हिं पयट्टदि त्ति भणिदं होइ।

* सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि [८]

§ ६७१. किं कारणं? अघादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मस्स असंखेज्जगुणहाणीए जहाकम-

---

§ ६६८. कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें इन कर्मोंका स्थितिसत्कर्म आठ वर्षप्रमाण होकर उससे क्रमसे घटकर इस समय छह वर्ष अन्तर्मुहूर्त कम आठ माह अधिक होकर निश्चित होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर आठ वर्षप्रमाण पहलेके स्थितिसत्कर्मसे घटी हुई समस्त स्थितिका प्रमाण सान्तर्मुहूर्त चार माह अधिक एक वर्षप्रमाण होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। तीन संग्रह कृष्टियोंकी यदि वेदककालके भीतर चार वर्षप्रमाण स्थितिकी हानि प्राप्त होती है तो प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदककालमें कितनी स्थिति प्राप्त करेंगे इस प्रकार त्रैराशिक करके साधिक तृतीय भाग अधिक एक वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मकी हानि शिष्योंको यहाँपर दिखलानी चाहिए।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम दस वर्षप्रमाण होता है।६।

§ ६६९. पिछली सन्धिमें तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता था, उससे संख्यात गुणहानि द्वारा क्रमसे घटकर इस समय अन्तर्मुहूर्त कम दस वर्षप्रमाण हो गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात वर्षप्रमाण होता है।७।

§ ६७०. पूर्वोक्त सन्धिमें इन कर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता था वह संख्यात हजार स्थितिकाण्डकों द्वारा संख्यात गुणहानि होकर उससे पर्याप्त घटकर इस समय तत्प्रायोग्य संख्यात वर्षप्रमाण प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* शेष कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है।८।

§ ६७१. शंका—इसका क्या कारण है?

समाधान—अघाति कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात गुणहानि द्वारा क्रमसे घटता हुआ भी

मोवट्टिज्जमाणस्स वि एदम्मि विसये असंखेज्जवस्सपमाणेणेवावट्ठाणणियमदंसणादो। ठिदिबंधो पुण एदेसिं तक्कालभाविओ संखेज्जवस्ससहस्समेत्तो सुगमो त्ति ण तण्णिद्देसो सुत्तयारेण कदो। एवं कोहपढमसंगहकिट्टीए चरिमसमयवेदगभावमणुपालिय एत्तो से काले कोहसंजलणविदियसंगहकिट्टीए वेदगभावेण परिणममाणस्स परूवणापबंधमुवरिमचुण्णिसुत्ताणुसारेण वक्खाणयिस्सामो।

*** से काले कोहस्स विदियकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण कोहस्स पढमट्ठिदिं करेदि।**

§ ६७२. पुव्विल्लपढमट्ठिदीए उच्छिट्ठावलियमेत्तसेसाए पढमसंगहकिट्टीवेदगद्धा समप्पदि। ताधे चेव कोहस्स विदियसंगहकिट्टीदो पदेसग्गं विदियट्ठिदीए समवट्ठिदमोकड्डियूण उदयादिगुणसेढीए सगवेदगद्धादो आवलियब्भहियं कादूण पढमट्ठिदिमेसो कुणदि त्ति वुत्तं होइ। एवमोकड्डियूण विदियसंगहकिट्टीए पढमट्ठिदिमुप्पाएमाणस्स तम्मि समये कोहपढमसंगहकिट्टीए किमवसिट्ठं किं वा विणट्ठमिदि आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** ताधे कोधस्स पढमसंगहकिट्टीए संतकम्मं दो आवलियबंधा दुसमयूणा सेसा, जं च उदयावलियं पविट्ठं तं च सेसं।**

§ ६७३. पढमकिट्टीए[1] दुसमयूणदोआवलियमेत्तणवकबंधपदेसग्गमुच्छिट्ठावलियं च मोत्तूण सेसासेसकोहपढमसंगहकिट्टीपदेसग्गं तक्कालमेव विदियसंगहकिट्टीए उवरि संकंतमिदि भणिदं

इस स्थानपर उसके असंख्यात वर्षप्रमाणरूपसे अवस्थानका नियम देखा जाता है। परन्तु इन कर्मोंका तत्काल भावी स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता हुआ सुगम है, इसलिए सूत्रकारने उसका निर्देश नहीं किया है। इस प्रकार प्रथम संग्रह कृष्टिक अन्तिम समयमें वेदकभावका अनुपालन करके इससे तदनन्तर समयमें क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिके वेदकभावसे परिणमन करते हुए प्ररूपणाप्रबन्धका उपरिम चूर्णिसूत्रके अनुसार व्याख्यान करेंगे।

*** तदनन्तर समयमें क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिके प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके क्रोधकी प्रथम स्थिति करता है।**

§ ६७२. पहलेके प्रथम स्थितिके उच्छिष्टावलिमात्र शेष रहनेपर प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदककाल समाप्त होता है। तथा उसी समय क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे, द्वितीय स्थितिमें स्थित प्रदेशपुंजको अपकर्षित कर उदयादि गुणश्रेणिरूपसे अपने वेदककालसे एक आवलि अधिक करके यह क्षपक जीव प्रथम स्थितिको करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार अपकर्षण करके दूसरी संग्रह कृष्टिकी प्रथम स्थितिको उत्पन्न करनेवाले इस क्षपक जीवके उस समय क्रोधसंज्वलनकी प्रथम स्थितिका क्या कुछ भाग अवशिष्ट रहता है या पूरा विनष्ट हो जाता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णयका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** उस समय क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका सत्कर्म दो समय कम दो आवलिप्रमाण बन्ध शेष रहता है और जो उदयावलि प्रविष्ट द्रव्य है वह शेष रहता है।**

§ ६७३. प्रथम कृष्टिके दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्धसम्बन्धी प्रदेशपुंज और उच्छिष्टावलिको छोड़कर क्रोधसंज्वलनको प्रथम संग्रह कृष्टिका शेष रहा समस्त प्रदेशपुंज तत्काल

---

१. ता प्रतौ पढमकिट्टीए इति पाठः सूत्रांशरूपेणोपलभ्यते।

होदि। संपहि कोहविदियसंगहकिट्टीदो तेरसगुणायामा होदूण ट्ठिदपढमसंगहकिट्टी विदियसंगह-किट्टीए हेट्ठा अणंतगुणहाणीए परिणमिय तिस्से चेव अपुव्वकिट्टी होदूण पयट्टदि त्ति घेत्तव्वं। ताधे सेससंगहकिट्टीणं पुध पुध जोइज्जमाणाणमायामादो एदिस्से आयामो चोद्दसगुणमेत्तो होदि त्ति दट्ठव्वो, पढमसंगहकिट्टीदव्वपडिग्गहमाहप्पेण तत्थ तहाभावोववत्तीए बाहाणुवलंभादो। णवक-बंधुच्छिट्ठावलियपदेसग्गं च जहाकममेव विदियसंगहकिट्टीए समयाविरोहेण संकमदि त्ति घेत्तव्वं।

*** ताधे कोहस्स विदियकिट्टीवेदगो।**

§ ६७४ सुगमं। संपहि एवं कोहविदियसंगहकिट्टीवेदगभावेण परिणदस्स पढमसमयप्पहुडि जाव सगवेदगकालचरिमसमओ त्ति ताव परूवणाणुगमे कीरमाणे जो कोहपढमसंगहकिट्टीवेदगस्स

ही दूसरी संग्रह कृष्टिके ऊपर संक्रान्त हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब क्रोधसंज्वलन-की दूसरी संग्रह कृष्टिसे तेरहगुणे आयामवाली होकर स्थित हुई प्रथम संग्रह कृष्टि दूसरी संग्रह कृष्टिके नीचे अनन्तगुणी हानिरूपसे परिणमकर उसीकी अपूर्व कृष्टि होकर प्रवृत्त होती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। उस समय पृथक्-पृथक् योज्यमान शेष संग्रह कृष्टियोंके आयामसे इसका आयाम चौदह गुणा होता है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि प्रथम संग्रह कृष्टिके द्रव्यको ग्रहण करनेसे जो अधिकता आ जाती है उस कारण उसमें उस रूपसे व्यवस्था बननेमें कोई बाधा नहीं पायी जाती। नवकबन्ध और उच्छिष्टावलिका प्रदेशपुंज क्रमसे दूसरी संग्रह कृष्टिमें समयके अविरोधपूर्वक संक्रमित होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रतिसमय जो कर्मबन्ध होता है उसका उत्तरोत्तर विभाग करनेपर जो चारित्रमोहनीयको द्रव्य प्राप्त होता है उसमेंसे साधिक आधा द्रव्य तो कषायसम्बन्धी द्रव्य है और कुछ कम आधा द्रव्य नोकषायसम्बन्धी है। उदाहरणार्थ अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा चारित्रमोहनीय-का कुल द्रव्य ४९ मान लेनेपर असंख्यातवाँ भाग अधिक आधा २५ कषायसम्बन्धी द्रव्य होता है। शेष असंख्यातवाँ भागहीन आधा २४ नोकषायसम्बन्धी द्रव्य होता है। यहाँ चारों संज्वलनों-की संग्रह कृष्टियाँ १२ हैं, अतः कषायसम्बन्धी पूरे द्रव्यको इन १२ संग्रह कृष्टियोंमें विभाजित करनेपर क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिको साधिक २ अंकप्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है। इसी विधिसे शेष ११ संग्रह कृष्टियोंमेंसे प्रत्येकको भी साधिक २ अंकप्रमाण द्रव्य प्राप्त हुआ। पुनः नोकषायके समस्त द्रव्यके क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होनेपर उसका कुल प्रमाण साधिक २+२४=२६ अंकप्रमाण प्राप्त होता है। जो कि इसीकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे साधिक १३ गुणा अधिक है। पुनः क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके कुल द्रव्य साधिक २६ में द्वितीय संग्रह कृष्टिके २ अंकप्रमाण द्रव्यके मिलानेपर २६+२=२८ होता है जिसे क्रोधसंज्वलनकी तीसरी संग्रहकृष्टि आदिकी तुलनामें देखनेपर साधिक १४ भाग अधिक होता है। यही मूल टीकामें स्पष्ट किया गया है।

*** उस समय क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदक होता है।**

§ ६७४. यह सूत्र सुगम है। अब इस प्रकार क्रोधसंज्वलनकी द्वितीय संग्रह कृष्टिके वेदकभावसे परिणत हुए क्षपकके प्रथम समयसे लेकर अपने वेदन करनेके अन्तिम समय तककी प्ररूपणाका अनुगम करनेपर क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिके वेदककी जो विधि कह आये हैं

विधी परूविदो, सो चेव णिरवसेसमेत्थ कायव्वो, णत्थि किंचि णाणत्तमिदि अत्थसमप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** जो कोहस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणस्स विधी सो चेव कोहस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स विधी कायव्वो।**

§ ६७५. जहा कोहपढमसंगहकिट्टीमहिकिच्च पुव्वुत्तासेसपरूवणा बंधोदयजहण्णुक्कस्स णिव्वग्गणादिकरणपडिबद्धा सवित्थरमणुमग्गिदा तहा चेव एत्थ वि परूवेयव्वा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। संपहि को सो पुव्वुत्तो विधी, कदमेसु वा आवासएसु पडिबद्धो त्ति आसंकाए पुव्वुत्तस्सेव अत्थविसेसस्स संभालणट्ठमुत्तरं पबंधमाह—

*** तं जहा।**

§ ६७६ सुगममेदं पुच्छावक्कं।

*** उदिण्णाणं किट्टीणं बज्झमाणीणं किट्टीणं विणासिज्जमाणीणं अपुव्वाणं णिव्वत्तिज्जमाणियाणं बज्झमाणेण च पदेसग्गेण संछुब्भमाणेण च पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जयाणियाणं।**

§ ६७७. एदेसिं सव्वेसिं आवासयाणं पढमसंगहकिट्टीपरूवणाए जो विधी परूविदो सो चेव

वही पूरी यहाँपर करनी चाहिए। उससे इसमें कुछ भेद नहीं है इस प्रकार इस अर्थका समर्पण करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* जो क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले जीवकी विधि प्ररूपित कर आये हैं वही विधि क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवकी करनी चाहिए।

§ ६७५. जिस प्रकार क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिको अधिकृत करके बन्ध, उदय, जघन्य और उत्कृष्ट निर्वर्गणा आदि करणसे सम्बन्ध रखनेवाली पूर्वोक्त सम्पूर्ण प्ररूपणा विस्तारके साथ कर आये हैं उसी प्रकार यहाँपर भी कहनी चाहिए यह इस सूत्रका भावार्थ है। अब वह पूर्वोक्त विधि क्या है अथवा कितने आवश्यकोंमें वह प्रतिबद्ध है ऐसी आशंका होनेपर पूर्वोक्त अर्थविशेषकी ही सम्हाल करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

* वह जैसे।

§ ६७६. यह पृच्छावाक्य सुगम है।

* उदीर्ण कृष्टियोंकी, बध्यमान कृष्टियोंकी, विनश्यमान कृष्टियोंकी, बध्यमान प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी और संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टियोंकी विधिको प्रथम संग्रह कृष्टिके समान करना चाहिए।

§ ६७७. इन सब आवश्यकोंकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी प्ररूपणाके समय जो विधि प्ररूपित कर आये हैं वह सभी विधि पूरी यहाँ जानना चाहिए, क्योंकि उसकी प्ररूपणासे इसकी प्ररूपणामें

णिरवसेसमणुगंतव्वो; विसेसाभावादो त्ति वुत्तं होइ। संपहि एत्थुद्देसे किट्टीसु पदेससंकमो कथं पयट्टदि त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिण्णयकरणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

*** एत्थ संकममाणयस्स पदेसग्गस्स विधिं वत्तइस्सामो।**

§ ६७८. कदमादो संगहकिट्टीदो पदेसग्गं कत्थ संकमदि, किमविसेसेण सव्वं सव्वत्थ संकमदि, आहो अत्थि को वि विसेसणियमो त्ति एदस्स णिण्णयविहाणट्ठमेत्तो किट्टीसु संकममाणस्स पदेसग्गस्स णिक्खवणमेत्थ कस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं।

*** तं जहा।**

§ ६७९. सुगमं।

*** कोधविदियकिट्टीदो पदेसग्गं कोहतदियं च माणपढमं च गच्छदि।**

§ ६८०. कोधस्स विदियसंगहकिट्टीदो पदेसग्गं कोधतदियसंगहकिट्टीए माणपढमसंगहकिट्टीए च संकमदि, ण सेसासु। कुदो? एदम्मि विसये आणुपुव्वीसंकमवसेण संकममाणस्स तप्पवुत्तायण-त्तप्पसंगादो। कुदो? तदो कोहविदियकिट्टी अप्पणो तदियकिट्टीए ओकड्डुणावसेण संकमदि, माणपढम-संगहकिट्टीए च अधापवत्तसंकमेण संकमदि त्ति घेत्तव्वं।

*** कोहस्स तदियादो किट्टीदो माणस्स पढमं चेव गच्छदि।**

कोई भेद नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस स्थलपर कृष्टियोंमें प्रदेशोंका संक्रम किस प्रकार प्रवृत्त होता है इस प्रकार इस अर्थविशेषका निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** आगे यहाँ संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजकी विधिको बतलावेंगे।**

§ ६७८. किस संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज किस संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है, क्या सामान्य-से सब सबमें संक्रमित होता है या कोई विशेष नियम है, इस प्रकार इस बातके निर्णयका कथन करनेके लिए आगे कृष्टियोंमें संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजके निष्क्रमणको यहाँपर बतलावेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है।

*** वह जैसे।**

§ ६७९. यह सूत्र सुगम है।

*** क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज क्रोधसंज्वलनकी तीसरी संग्रहकृष्टिमें और मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें प्राप्त होता है।**

§ ६८०. क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज क्रोधसंज्वलनकी तीसरी संग्रह-कृष्टिमें और मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होता है शेषमें नहीं, क्योंकि रसस्थानपर आनुपूर्वी संक्रमके कारण संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजकी उसी प्रकारसे व्यवस्थाका प्रसंग प्राप्त होता है, क्योंकि इस कारण क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टि अपकर्षणके कारण अपनी तीसरी संग्रह कृष्टिमें और अधःप्रवृत्त संक्रमके कारण मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें संक्रमित होती है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

*** क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिको ही प्राप्त होता है।**

§ ६८१. कोहतदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं सेसासेससंगहकिट्टीपरिहारेण माणस्स पढमसंगहकिट्टीए चेव संकमदि त्ति घेत्तव्वं, तत्थ पयारंतरासंभवादो। एसो च अधापवत्तसंकमो बज्झमाणकिट्टीसरूवेण बज्झमाणाबज्झमाणकिट्टीणमधापवत्तेणेव संकंतिणियमदंसणादो।

*** माणस्स पढमादो किट्टीदो माणस्स विदियं तदियं मायाए पढमं च गच्छदि।**

§ ६८२. एत्थ वि अप्पणो विदिय-तदियसंगहकिट्टीसु ओकड्डणासंकमो, मायाए पढमसंगहकिट्टीए अधापवत्तसंकमो त्ति णिच्छेयव्वं। सेसं सुगमं।

माणस्स विदियकिट्टीदो माणस्स तदियं च मायाए पढमं च गच्छदि।

*** माणस्स तदियकिट्टीदो मायाए पढमं गच्छदि।**

*** मायाए पढमादो पदेसग्गं मायाए विदियं तदियं च लोभस्स पढमकिट्टिं च गच्छदि।**

*** मायाए विदियादो किट्टीदो पदेसग्गं मायाए तदियं लोभस्स पढमं च गच्छदि।**

*** मायाए तदियादो किट्टीदो पदेसग्गं लोभस्स पढमं गच्छदि।**

---

§ ६८१. क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज शेष समस्त संग्रह कृष्टियोंका परिहार करके मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें ही संक्रमित होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उसमें दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है। और यह अध:प्रवृत्त संक्रम है, क्योंकि बध्यमान और अबध्यमान कृष्टियोंके अध:प्रवृत्त संक्रमरूपसे ही संक्रमका नियम देखा जाता है।

*** मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज मानकी दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टिको तथा मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है।**

§ ६८२. यहाँ पर भी अपनी दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टियोंमें अपकर्षण संक्रम और मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें अध:प्रवृत्त संक्रम प्रवृत्त होता है ऐसा निश्चय करना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

*** मानकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज मानकी तीसरी संग्रहकृष्टिको और मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है।**

*** मानकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है।**

*** मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज मायाकी दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टिको और लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है।**

*** मायाकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिको और लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है।**

*** मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है।**

*** लोभस्स पढमादो किट्टीदो पदेसग्गं लोभस्स विदियं च तदियं च गच्छदि ।**

*** लोभस्स विदियादो पदेसग्गं लोभस्स तदियं गच्छदि ।**

§ ६८३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि त्ति ण एत्थ किंचि वक्खाणेयव्वमत्थि । कोहपढमसंगहकिट्टीवेदगद्धाए वि एसा संकमपरिवाडी अणुगंतव्वा । णवरि कोहपढमसंगहकिट्टीदो पदेसग्गमप्पणो विदिय-तदियसंगहकिट्टीओ च गच्छदि माणपढमं च, तमादिं कादूण संगहकिट्टीणं जहा णिद्दिट्ठाए परिवाडीए संकमणियमदंसणादो । एसो अत्थविसेसो संकामिज्जमाणेण पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणकिट्टीणं साहणट्ठं परूविदो दट्ठव्वो । संपहि कोहविदियसंगहकिट्टिं वेदेमाणो किं सव्वेसिं कसायाणं विदियसंगहकिट्टीओ चेव बंधदि आहो कोहस्स विदियसंगहकिट्टिसेसाणं च पढमसंगहकिट्टिमेव बंधदि त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणं कुणमाणो पुच्छावक्कमाह—

*** जहा कोहस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणो चदुण्हं कसायाणं पढमकिट्टीओ बंधदि किमेवं चेव कोधस्स विदियकिट्टिं वेदेमाणो चदुण्हं कसायाणं विदियकिट्टीओ बंधदि आहो ण; वत्तव्वं ।**

§ ६८४ जहा कोहस्स पढमसंगहकिट्टिं वेदेमाणो णियमा चदुण्हं कसायाणं पढमसंगहकिट्टीओ चेव बंधदि किमेवं चेव कोहविदियसंगहकिट्टिं वेदेमाणो एसो चदुण्हं कसायाणं विदियसंगहकिट्टिं

*** लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज लोभकी दूसरी और तीसरी संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है ।**

*** लोभकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे प्रदेशपुंज लोभकी तीसरी संग्रहकृष्टिको प्राप्त होता है ।**

§ ६८३. ये सूत्र सुगम हैं, इसलिए यहांपर कुछ व्याख्यान करने योग्य नहीं है । क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपकको भी यही संक्रम विषयक परिपाटी जाननी चाहिए । इतनी विशेषता है कि क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे प्रदेशपुंज क्रोधकी दूसरी और तीसरी संग्रह कृष्टिको तथा मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिको प्राप्त होता है, क्योंकि उससे लेकर संग्रह कृष्टियोंके यथानिर्दिष्ट परिपाटीके अनुसार संक्रमका नियम देखा जाता है । यह अर्थ विशेष संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे निर्वर्त्यमान कृष्टियोंका साधन करनेके लिए प्ररूपित किया हुआ जानना चाहिए । अब क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाला क्षपक जीव क्या सभी कषायोंकी दूसरी संग्रह कृष्टियोंको ही बांधता है या क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टियोंके अतिरिक्त शेष कषायोंकी प्रथम संग्रह कृष्टिको ही बांधता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णयका विधान करते हुए पृच्छा वाक्यको कहते हैं—

*** जिस प्रकार क्रोधको प्रथम संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाला क्षपक जीव चारों कषायोंको प्रथम संग्रह कृष्टियोंको बांधता है क्या इसी प्रकार क्रोधको दूसरो संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाला क्षपक जीव चारों कषायोंकी दूसरी संग्रह कृष्टिको बांधता है या नहीं बांधता है, कहिए ?**

§ ६८४. जिस प्रकार क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवाला क्षपक जीव नियमसे चारों कषायोंकी प्रथम संग्रह कृष्टियोंको ही बांधता है क्या इसी प्रकार क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवाला यह क्षपक जीव चारों कषायोंको दूसरी संग्रह कृष्टियोंको ही बांधता है

चेव बंधदि त्ति णियमो, उदाहो ण तहा, वत्तव्वमिदि एदेण पुच्छा कदा होइ। संपहि एदस्सेव पुच्छाणिद्देसस्स फुडीकरणट्ठमिदमाह—

*** किय खु।**

§ ६८५. कथं खलु स्यात्, को न्वत्र निर्णय इति पूर्वोक्तस्यैव प्रश्नस्य स्फुटीकरणपरमेतद्वाक्यम्।

*** समासलक्खणं भणिस्सामो।**

§ ६८६ लक्ष्यतेऽनेनेति लक्षणं निर्णयविधानमित्यर्थः, तत्संक्षेपत एव व्याकरिष्याम इत्युक्तं भवति।

*** जस्स जं किट्टिं वेदयदि तस्स कसायस्स तं किट्टिं बंधदि, सेसाणं कसायाणं पढमकिट्टीओ बंधदि।**

§ ६८७. जस्स कसायस्स जं किट्टिं वेदयदि पढमं विदियं तदियं वा, तस्स तमेव बंधदि, सेसाणं पुण कसायाणमेण्हिमवेदिज्जमाणाणं पढमसंगहकिट्टीओ चेव बंधदि; तत्थ पयारंतरासंभवादो त्ति वुत्तं होइ। तदो कोहविदियकिट्टिं वेदेमाणो एसो कोहस्स विदियकिट्टिं बंधदि, माण-माया-लोभाणं पुण पढमसंगहकिट्टीओ चेव बंधदि। एवमुवरिमकिट्टीओ वि वेदेमाणस्स पयदत्थजोजणा कायव्वा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। संपहि कोहविदियकिट्टीवेदगस्स पढमसमये दिस्स-

---

यह नियम है या उक्त प्रकारका नियम नहीं है, यह कहना चाहिए इस प्रकार इस सूत्र द्वारा पृच्छा की गयी है। अब इसी पृच्छाके निर्देशको स्पष्ट करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

*** इस विषयमें किस प्रकार है?**

§ ६८५. इस विषयमें किस प्रकार है—इस विषयमें क्या निर्णय है इस प्रकार पूर्वोक्त प्रश्नका ही स्पष्टीकरणपरक यह वाक्य है।

*** आगे संक्षेपमें इसका लक्षण कहेंगे।**

§ ६८६. जिस द्वारा कोई भी वस्तु लक्षित की जाती है वह लक्षण कहलाता है, विवक्षित वस्तुके निर्णयका विधान करना यह इसका भावार्थ है, उसका संक्षेपमें ही व्याख्यान करेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** जिस कषायकी जिस संग्रह कृष्टिका वेदन करता है उस कषायकी उस संग्रह कृष्टिका बन्ध करता है तथा शेष कषायोंकी प्रथम संग्रहकृष्टिका बन्ध करता है।**

§ ६८७. जिस कषायकी प्रथम, द्वितीय या तृतीय जिस संग्रहकृष्टिका वेदन करता है उस कषायको उसी संग्रह कृष्टिका बन्ध करता है, किन्तु जिन कषायोंका इस समय वेदन नहीं करता उन कषायोंकी तो प्रथम संग्रह कृष्टियोंको ही बाँधता है, क्योंकि उनमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इसलिए क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करता हुआ यह क्षपक जीव क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिको बाँधता है, परन्तु मान, माया और लोभकी प्रथम संग्रह कृष्टियोंको ही बाँधता है। इसी प्रकार उपरिम कृष्टियोंका भी वेदन करनेवाले इस जीवके प्रकृत अर्थकी योजना कर लेनी चाहिए यह इस सूत्रका भावार्थ है। अब क्रोध संज्वलनकी दूसरी कृष्टि-

माणाणमेक्कारसण्हं संगहकिट्टीणमंतरकिट्टीसु कदमाओ थोवाओ कदमाओ च बहुगोओ त्ति एदस्स अत्थविसेसस्स णिद्धारणट्ठमुवरिमपबंधमाढवेदि—

* कोधविदियकिट्टीए पढमसमये वेदगस्स एक्कारससु संगहकिट्टीसु अंतरकिट्टीण-मप्पाबहुअं वत्तइस्सामो ।

§ ६८८. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ ६८९. सुगमं ।

* सव्वत्थोवाओ माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ ।

§ ६९०. एत्थ पढमसंगहकिट्टि त्ति भणिदे वेदगपढमसंगहकिट्टीए गहणं कायव्वं, किट्टिवेदगेण पयदत्तादो । तदो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए अवयवकिट्टीओ अभवसिद्धिएहि अणंतगुण-सिद्धाणंत-भागमेत्तीओ होदूण सव्वत्थोवाओ जादाओ, कुदो एदासिं थोवभावो परिच्छिज्जदे ? थोवयरदव्वेण णिव्वत्तिदत्तादो ।

* विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

§ ६९१. कुदो ? दव्वविसेसादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडि-भागिओ, सत्थाणविसेसस्स पुव्वं तहाभावेण समत्थियत्तादो ।

वेदकके प्रथम समयमें दृश्यमान ग्यारह संग्रह कृष्टियोंकी अन्तर कृष्टियोंमें कौन-सी या कितनी कृष्टियाँ थोड़ी हैं और कितनी कृष्टियाँ बहुत हैं इस प्रकार इस अर्थविशेषका निर्धारण करनेके लिए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* क्रोध संज्वलनकी दूसरी कृष्टिके प्रथम समयमें वेदकको ग्यारह संग्रह कृष्टियोंमें अन्तर कृष्टियोंके अल्पबहुत्वको बतलावेंगे।

§ ६८८. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ ६८९. यह सूत्र सुगम है ।

* मान संज्वलनकी प्रथम समयमें संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ सबसे थोड़ी हैं ।

§ ६९०. यहाँ सूत्रमें 'पढमसंगहकिट्टीए' ऐसा कहनेपर वेदककी प्रथम संग्रह कृष्टिका ग्रहण करना चाहिए. क्योंकि कृष्टिवेदक प्रकृत है । अतः मान संज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अवयव कृष्टियाँ अभव्योंसे अनन्तगुणो या सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण होकर सबसे थोड़ी हो गयी हैं ।

शंका—इनका स्तोकपना कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि इनकी स्तोकतर द्रव्यसे रचना हुई है।

* दूसरे समयमें संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

§ ६९१. क्योंकि इनमें द्रव्यविशेषका निक्षेप हुआ है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—विशेषका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागके प्रतिभागरूप है, क्योंकि स्वस्थान विशेषका पहले उसीरूपमें समर्थन कर आये हैं।

* तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

§ ६९२. एत्थ वि विसेसपमाणं पुव्वं व वत्तव्वं ।

* कोहस्स तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

§ ६९३. कुदो ? दव्वविसेसादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडमेत्तो, परत्थाणविसेसस्स दव्वविसेसाणुसारेण तहाभावेण दंसणादो । एवमुवरिमपदेसु वि परत्थाणविसेसो एवं चेव वत्तव्वो ।

* मायाए पढमाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

* विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

* तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

* लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

* विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

* तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।

§ ६९४. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

* कोहस्स विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ संखेज्जगुणाओ ।

§ ६९५. को एत्थ गुणगारो ? चोद्दसरूवाणि । तं जहा—मायातदियसंगहकिट्टीए दव्वं

---

* तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

§ ६९२. यहाँपर भी विशेषका प्रमाण पहलेके समान कहना चाहिए ।

* क्रोध संज्वलनकी तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

§ ६९३. क्योंकि इसमें द्रव्यविशेष पाया जाता है ।

शंका—विशेषका प्रमाण कितना है ?

समाधान—आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित एक भागप्रमाण है, क्योंकि परस्थान-विशेष द्रव्यविशेषके अनुसार उसी प्रकारसे देखा जाता है । इस प्रकार उपरिम पदोंमें भी पर-स्थानविशेष इसी प्रकारसे कहना चाहिए ।

* मायासंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

* दूसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

* तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

* लोभसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

* दूसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

* तीसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।

§ ६९४. ये सूत्र सुगम हैं ।

* क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिकी अन्तर कृष्टियाँ संख्यातगुणी हैं ।

§ ६९५. शंका—यहाँपर गुणकार क्या है ?

समाधान—चौदह संख्या गुणकार है । वह जैसे—माया संज्वलनकी तीसरी संग्रह कृष्टिका

मोहणीयसयलदव्वस्स चउवीसभागमेत्तं होइ। कोहविदियसंगहकिट्टीए वि अप्पणो मूलदव्वं मोहणीयसयलदव्वं पेक्खियिय चउवीसभागमेत्तं चेव भवदि। पुणो एदस्सुवरि कोहपढमसंगहकिट्टीए तेरसचउवीसभागमेत्तदव्वं च पविट्ठमत्थि; दव्वाणुसारेणेव अंतरकिट्टीणमायामो होदि त्ति एदेण कारणेण हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्मि ओवट्टिदे चोद्दसरूवमेत्तगुणगारसमुप्पत्ती ण विरुज्झदे।

§ ६९६. जहा अंतरकिट्टीणमेदमप्पाबहुअमणुमग्गिदं एवं तत्थतणपदेसपिंडस्स वि थोवबहुत्ताणुगमो कायव्वो त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** पदेसग्गस्स वि एवं चेव अप्पाबहुअं।**

§ ६९७. 'कायव्वं' इदि वक्कसेसो एत्थ कायव्वो। सेसं सुगमं। एवमेदेण विहाणेण कोहविदियसंगहकिट्टिं वेदेमाणस्स पढमट्ठिदी कमेण परिहीयमाणा जाधे आवलिय-पडिआवलियमेत्तीओ सेसा ताधे जो परूवणाभेदो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

द्रव्य मोहनीयके समस्त द्रव्यके चौबीसवें भागप्रमाण होता है। क्रोधसंज्वलनको दूसरो संग्रह कृष्टिका अपना मूल द्रव्य भी मोहनीयके समस्त द्रव्यको देखते हुए चौबीसवें भागप्रमाण ही होता है। पुनः इसके ऊपर क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें तेरह बटे चौबीस भागप्रमाण द्रव्य प्रविष्ट है, क्योंकि द्रव्यके अनुसार ही अन्तर कृष्टियोंका आयाम होता है। इस कारण अधस्तन राशिसे उपरिम राशिके भाजित करनेपर चौदह संख्याप्रमाण गुणकारकी उत्पत्ति विरोधको प्राप्त नहीं होती।

विशेषार्थ—यह तो हम पहले ही सूचित कर आये हैं कि अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा मोहनीयका समस्त द्रव्य ४९ अंकप्रमाण कल्पित करनेपर नौ नोकषायोंको जितना द्रव्य मिलता है उससे कुछ अधिक द्रव्य अनन्तानुबन्धी आदि चारों कषायोंको मिलता है, इस नियमके अनुसार नौ नोकषायोंका कुल द्रव्य २४ अंकप्रमाण और कषायोंका समस्त द्रव्य २५ अंकप्रमाण मान लेनेपर मोहनीयका समस्त द्रव्य ४९ अंकप्रमाण प्राप्त हो जाता है। पुनः कषायोंके द्रव्यको १२ संग्रह कृष्टियोंमें विभक्त करनेपर प्रत्येक संग्रह कृष्टिको साधिक दोभागप्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है। चूँकि क्षपणाकालमें नोकषायोंके द्रव्यका कषायोंमें संक्रमित होनेपर क्रोधसंज्वलनकी प्रथम संग्रह कृष्टिका कुल द्रव्य २४ + २ = २६ अंकप्रमाण होता है जो क्रोधसंज्वलनकी द्वितीय संग्रह कृष्टिकी अपेक्षा समस्त द्रव्यके १३ भागप्रमाण होता है। पुनः इसमें क्रोधकी द्वितीय संग्रह कृष्टिका द्रव्य प्रविष्ट होनेपर वह १४ भागप्रमाण हो जाता है। कारण स्पष्ट है। इसी प्रकार आगे भी सब संग्रह कृष्टियोंके द्रव्यके प्रविष्ट होनेपर अन्तमें पूरे, द्रव्यका प्रमाण आ जाता है। इसी तथ्यको यहाँ स्पष्ट किया गया है ऐसा समझना चाहिए।

§ ६९६. जिस प्रकार अन्तर कृष्टियोंके भेदोंके अल्पबहुत्वका अनुगम किया उसी प्रकार उनमें अवस्थित प्रदेशपिण्डका अनुगम करना चाहिए इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** अन्तर कृष्टियोंके प्रदेशपुंजका भी इसी प्रकार अल्पबहुत्व करना चाहिए।**

§ ६९७. सूत्रमें 'कायव्वं' यह वाक्य शेष है। आशय यह है कि 'अल्पबहुत्व करना चाहिए' ऐसा अर्थ कर लेना। शेष कथन सुगम है। इस प्रकार इस विधिसे क्रोधसंज्वलनकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपकके प्रथम स्थिति क्रमसे हीन होती हुई जब आवलि और प्रतिआवलिप्रमाण शेष रहती है उस समय जो प्ररूपणा भेद होता है उसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

* कोहस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिय-पडिआवलियाए सेसाए आगाल-पडिआगालो वोच्छिण्णो।

§ ६९८. जइ वि एत्थ किट्टीकरणद्धपारंभप्पहुडि मोहणीयस्स उक्कड्डणाभावेण पढमट्ठिदीदो विदियट्ठिदिम्मि पदेससंचारो णत्थि तो वि विदियट्ठिदीदो पढमट्ठिदीए ओकड्डिज्जमाणपदेसग्गस्स एण्हिमणागमणं पेक्खियूणागालपडिआगालवोच्छेदो णिद्दिट्ठो। एवमागालपडिआगालवोच्छेदं कादूण पुणो वि समयूणावलियमेत्तकाले गालिदे पढमट्ठिदी समयाहियावलियमेत्ती सेसा होदि ताधे कोहसंजलणस्स जहण्णिया ट्ठिदिउदीरणा, ताधे चेव विदियसंगहकिट्टीए चरिमसमयवेदगभावेण परिणमदि त्ति जाणावणफलो उत्तरसुत्तारंभो

* तिस्से चेव पढमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए सेसाए ताहे कोहस्स विदियकिट्टीए चरिमसमयवेदगो।

§ ६९९. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं च कोहविदियसंगहकिट्टीए चरिमसमयवेदगभावेण पयट्टमाणस्स तक्कालभाविओ जो परूवणाभेदो तण्णिद्धारणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* ताधे संजलणाणं ट्ठिदिबंधो बेमासा वीसं च दिवसा देसूणा।

§ ७००. एत्थ पुव्वुत्तसंधिविसयट्ठिदिबंधादो ट्ठिदिबंधपरिहाणी पुव्वं व तेरासियकमेणाणेयव्वा।

---

* क्रोधसंज्वलनकी दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवालेके जो प्रथम स्थिति होती है उस प्रथम स्थितिकी आवलि और प्रतिआवलिके शेष रहनेपर आगाल और प्रतिआगालको व्युच्छित्ति हो जाती है।

§ ६९८. यद्यपि यहाँपर कृष्टिकरण कालके प्रारम्भ होनेसे लेकर मोहनीय कर्मका प्रथम स्थितिमेंसे उत्कर्षण होकर द्वितीय स्थितिमें प्रदेश संचार नहीं होता तो भी द्वितीय स्थितिमेंसे प्रथम स्थितिमें अपकृष्यमाण प्रदेशपुंजका नहीं आना देखकर इस समय आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति कही है। इस प्रकार आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति करके फिर भी एक समय कम आवलि प्रमाण कालके गालित होनेपर प्रथम स्थिति एक समय अधिक आवलिप्रमाण शेष रहती है। उस समय क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थिति उदीरणा होती है तथा उसी समय दूसरी संग्रह कृष्टिका अन्तिम समयमें वेदकरूपसे परिणमन होता है इस बातके ज्ञान करानेके फलस्वरूप आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

* उसी प्रथम स्थितिके एक समय अधिक एक आवलिमात्र शेष रहनेपर उस समय क्षपक जीव क्रोधकी द्वितीय संग्रह कृष्टिका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है।

§ ६९९. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिका अन्तिम समयमें वेदकरूपसे प्रवर्तमान क्षपकके तत्कालभावी जो प्ररूपणाभेद है उसका निर्धारण करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* उस समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध दो महीना और कुछ कम बीस दिन होता है।

§ ७००. यहाँपर पूर्वोक्त सन्धिविषयक स्थितिबन्धसे स्थितिबन्धकी हानि पहलेके समान त्रैराशिक क्रमसे ले आनी चाहिए।

*** तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो वासपुधत्तं ।**

§ ७०१. पढमसंगहकिट्टीवेदगस्स चरिमसमये दसवस्ससहस्समेत्तो होंतो तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो तत्तो कमेण परिहाइदूण एण्हिं तिण्हं वस्साणमुवरि जिणदिट्ठभावेण पयट्टदि त्ति वुत्तं होइ ।

*** सेसाणं कम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।**

§ ७०२ सुगममेदं सुत्तं ।

*** संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं पंच वस्साणि चत्तारि मासा अंतोमुहुत्तूणा ।**

§ ७०३. एत्थ पुव्विल्लसंधिविसयट्ठिदिसंतकम्मादो अट्ठमासाहियछवस्सपमाणादो ठिदिसंतपरिहाणीसु ससत्तिभागेगवस्समेत्ता तेरासियकमेण साहेयव्वा ।

*** तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।**

§ ७०४. सुगमं ।

*** णामागोदवेदणीयाणं ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि ।**

§ ७०५. सुगममेदं पि सुत्तं । एवं कोहकिट्टीवेदगद्धाए विदियतिभागे विदियसंगहकिट्टीवेदगत्तमणुभूय तदद्धाए परिसमत्ताए तदो से काले तदियसंगहकिट्टीवेदगभावेण परिणममाणो तिस्से पदेसग्गं बिदियट्ठिदीदो ओकड्डियूण पढमट्ठिदिमुदयादिगुणसेढीए सगवेदगद्धादो आवलियब्भहियं कादूण णिसिंचदि त्ति पदुप्पाएमाणो इदमाह—

*** तदो से काले कोहस्स तदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि ।**

*** तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध वर्षपृथक्त्वप्रमाण होता है ।**

§ ७०१. प्रथम संग्रह कृष्टि वेदकके अन्तिम समयमें दस हजार वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता हुआ इस समय तीन घातिकर्मोंका आगे जैसा जिनदेवने देखा है उसके अनुसार प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।**

§ ७०२. यह सूत्र सुगम है ।

*** संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म पाँच वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम चार माहप्रमाण होता है ।**

§ ७४३. यहाँपर पहलेके सन्धिविषयक आठ माह अधिक छह वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे स्थितिसत्कर्मकी हानि तीन भाग अधिक एक वर्षप्रमाण त्रैराशिक विधिसे साध ले आनी चाहिए ।

*** तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण है ।**

§ ७०४. यह सूत्र सुगम है ।

*** नाम गोत्र और वेदनीय कर्मका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण है ।**

§ ७०५. यह सूत्र भी सुगम है । इस प्रकार क्रोध कृष्टि वेदक कालके दूसरे त्रिभागमें दूसरी संग्रह कृष्टिकी वेदकताका अनुभव करके उसके कालके समाप्त हो जानेपर उसके बाद अनन्तर समयमें तीसरी संग्रहकृष्टिके वेदकरूपसे परिणमन करनेवाला क्षपक जीव उसके प्रदेशपुंजको दूसरी स्थितिमेंसे अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको उदयादि गुणश्रेणीरूपसे अपने वेदक कालसे एक आवलि अधिक करके सिंचन करता है इस बातका कथन करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** उसके बाद अनन्तर समयमें क्रोधकी तीसरी कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है ।**

§ ७०६. सुगममेदं सुत्तं। णवरि एदम्मि समये विदियसंगहकिट्टीए दुसमयूणदोआवलियमेत्तणवकबंधुच्छिट्ठावलियवज्जं सव्वमेव पदेसग्गं तदियसंगहकिट्टीसरूवेण परिणमिय सगसरूवेण णट्ठमिदि दट्ठव्वं, तदियसंगहकिट्टी च सगपुव्विल्लायामादो पण्णारसगुणमेत्तायामा विदियसंगहकिट्टीदव्वपदिच्छण्णमाहप्पेण संजादा त्ति दट्ठव्वा। एवं च कोहतदियसंगहकिट्टीवेदगभावेण परिणदस्स पढमसमये तिस्से तदियसंगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा वेदिज्जंति, तिस्से चेव असंखेज्जा भागा बज्झंति त्ति इममत्थविसेसं फुडीकरेमाणो सुत्तणिद्देसमुत्तरं कुणइ—

*** ताधे कोहस्स तदियसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणमसंखेज्जा भागा उदिण्णा।**

*** तासिं चेव असंखेज्जा भागा बज्झंति।**

§ ७०७. सुगममेदं सुत्तद्दयं। णवरि उदिण्णाहिंतो विसेसहीणाओ बज्झमाणियाओ होंति त्ति एसो विसेसणिद्देसो पुव्वुत्तबंधोदयणिव्वग्गणापरूवणादो अणुगंतव्वो; सव्वासिं चेव वेदिज्जमाणकिट्टीणं साहारणभावेण तिस्से पयट्टत्तादो।

*** जो विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स विधी सो चेव विधी तदियकिट्टिं वेदयमाणस्स वि कायव्वो।**

§ ७०८. विदियसंगहकिट्टिं वेदयमाणस्स जो विधी पुव्वं परूविदो सो चेव णिरवसेसमेत्थ

---

§ ७०६. *यह सूत्र सुगम है।* इतनी विशेषता है कि इस समय दूसरी संग्रहकृष्टिके दो समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्ध उच्छिष्टावलिको छोड़कर सम्पूर्ण ही प्रदेशपुंजको तीसरी संग्रहकृष्टिरूपसे परिणमाकर अपने रूपसे नष्ट कर देता है ऐसा जानना चाहिए तथा तीसरी संग्रहकृष्टि अपने पहिलेके आयामसे पन्द्रहगुणी आयामवाली दूसरी संग्रहकृष्टिके प्राप्त हुए माहात्म्यवश हो जाती है ऐसा जानना चाहिए, इस प्रकार क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिके वेदकभावसे परिणत हुए क्षपक जीवके प्रथम समयमें उस तीसरी संग्रहकृष्टिका असंख्यात बहुभाग प्रदेशपुंज वेदा जाता है और उसीका असंख्यात बहुभाग प्रदेशपुंज बंधता है इस प्रकार इस अर्थविशेषको स्पष्ट करते हुए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

*** उस समय क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिकी अन्तरकृष्टियोंका असंख्यात बहुभाग उदीर्ण हो जाता है।**

*** तथा उन्हींका असंख्यात बहुभाग बांधता है।**

§ ७०७. ये दोनों सूत्र सुगम हैं। इतनी विशेषता है कि उदीर्ण हुए प्रदेशपुंजसे बंधनेवाले प्रदेशपुंज विशेष हीन होते हैं। यहाँ 'विशेष' का निर्देश पूर्वोक्त बन्ध और उदय निर्वर्गणाकी प्ररूपणासे जान लेना चाहिए, क्योंकि सभी वेदी जानेवाली कृष्टियोंके साधारणरूपसे उसकी प्रवृत्ति होती है।

*** दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवालेकी जो विधि है वही विधि तीसरी संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवालेकी भी करनी चाहिए।**

§ ७०८. दूसरी संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके जो विधि पहिले कह आये हैं

वि कायव्वो, विसेसाभावादो त्ति भणिदं होदि। एवमेदेण विहाणेण कोहतदियकिट्टिं वेदेमाणस्स पढमट्ठिदीए कमेण परिहीयमाणाए जाधे आवलिय-पडिआवलियाओ सेसाओ ताधे आगाल-पडिआगालवोच्छेदं कादूण तदो पुणो वि समयूणावलियं गालिय समयाहियावलियमेत्तपढमट्ठिदि धरेदूणावट्ठिदस्स तम्मि समये कोधवेदगद्धा समप्पदि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** तदियकिट्टिं वेदेमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलियाए समयाहियाए सेसाए चरिमसमयकोधवेदगो।**

§ ७०९. गयत्थमेदं सुत्तं।

*** जहण्णगो ठिदिउदीरगो।**

§ ७१०. ताधे कोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिउदीरगो च होदि, किं कारणं? एविकस्से चेव ट्ठिदीए तत्थुदीरणदंसणादो। संपहि एत्थेव संधिविसये सव्वकम्माणं ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणा-वहारणट्ठमुत्तरसुत्तकलावमाह—

*** ताधे ट्ठिदिबंधो संजलणाणं दोमासा पडिवुण्णा।**

§ ७११. पुव्वुत्तसंधिविसयट्ठिदिबंधादो अंतोमुहुत्तूणवीसदिवसमेत्तट्ठिदिबंधपरिहाणीए कमेण जादाए संपुण्णबेमासमेत्तट्ठिदिबंधसिद्धीए णिव्विसंवादमेत्थ समुवलंभादो।

वही पूरी विधि यहाँपर भी करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई भेद नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इस विधिसे क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके प्रथम स्थितिके क्रमसे हीन होनेपर जिस समय आवलि और प्रत्यावलि शेष रह जाती है उस समय आगाल और प्रत्यागालकी व्युच्छित्ति करके तदनन्तर फिर भी एक समय कम एक आवलिप्रमाण कालको गलाकर एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिको रखकर अवस्थित हुए क्षपक जीवके उस समय क्रोधका वेदककाल समाप्त होता है ऐसा कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** तीसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवकी जो प्रथम स्थिति है उस प्रथम स्थितिके एक समय अधिक आवलिप्रमाण शेष रहनेपर वह क्षपक जीव अन्तिम समयवर्ती क्रोध संज्वलन-का वेदक होता है।**

§ ७०९. यह सूत्र गतार्थ है।

*** तथा उसी समय जघन्य स्थितिका उदीरक होता है।**

§ ७१०. उस समय क्रोध संज्वलनकी जघन्य स्थितिका उदीरक होता है, क्योंकि वहाँपर एक ही स्थितिकी उदीरणा देखी जाती है। अब यहीं सन्धिके विषयमें सभी कर्मोंका स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रसमूहको कहते हैं—

*** उस समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध पूरा दो माहप्रमाण होता है।**

§ ७११. पूर्वोक्त सन्धिविषयक स्थितिबन्धसे अन्तर्मुहूर्त कम बीस दिवसप्रमाण स्थिति-बन्धकी क्रमसे हानि होनेपर सम्पूर्ण दो माहप्रमाण स्थितिबन्धकी सिद्धि विसंवादरहित होकर यहाँपर उपलब्ध हो जाती है।

*** संतकम्मं चत्तारि वस्साणि पुण्णाणि ।**

§ ७१२. एत्थ सतिभागवस्समेत्तट्ठिदिसंतपरिहाणीए पुव्वं व तेरासियकमेणाणयणं कादूण पयदट्ठिदिसंतपमाणसिद्धी परूवेयव्वा । एत्थ सेसकम्माणं ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणपरिक्खा सुगमा त्ति णाढत्ता । एवमेत्तिएण परूवणापबंधेण कोहवेदगद्धं समाणिय संपहि एत्तो से काले जहावसरपत्तं माणपढमसंगहकिट्टिमोकड्डियूण पढमट्ठिदिविण्णासमेदेण विहाणेण कादूण वेदेदि त्ति पदुप्पाएमाणो उवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

*** से काले माणस्स पढमकिट्टिमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि ।**

§ ७१३. एत्थ कारगतदियसंगहकिट्टी चेव वेदगपढमसंगहकिट्टीभावेण[1] णिद्दिट्ठा दट्ठव्वा । सेसं सुगमं । संपहि एदिस्से पढमट्ठिदीए पमाणावहारणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** जा एत्थ सव्वमाणवेदगद्धा तिस्से वेदगद्धाए तिभागमेत्ता पढमट्ठिदी ।**

§ ७१४. कोहकिट्टीवेदगद्धादो विसेसहीणा अंतोमुहुत्तमेत्ती । एत्थतणसव्वमाणवेदगद्धा होदि । पुणो एदिस्से तिभागमेत्ती पढमसंगहकिट्टीवेदगद्धा होदि । तत्तो आवलियब्भहिया होदूण कीरमाणी एसा पढमट्ठिदी सव्वमाणवेदगद्धाए तिभागमेत्ती होदि त्ति णिद्दिट्ठा । जइ वि

*** उसी समय संज्वलनोंका स्थिति सत्कर्म पूरा चार वर्षप्रमाण होता है ।**

§ ७१२. यहांपर तृतीय भाग अधिक वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मकी हानि होनेपर पहिलेके समान त्रैराशिक क्रमसे लाकर प्रकृतस्थितिसत्कर्मके प्रमाणकी सिद्धि प्ररूपित कर लेनी चाहिए । यहांपर शेष कर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणकी परीक्षा सुगम है, इसलिए उनका आरम्भ नहीं किया है । इस प्रकार इतने प्ररूपणासम्बन्धी प्रबन्ध द्वारा क्रोधके वेदक कालको *समाप्त करके अब* इसके बाद तदनन्तर समयमें यथावसर प्राप्त मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिका अपकर्षण करके और प्रथम स्थितिकी रचना इस विधिसे करके वेदन करता है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धका आरम्भ करते हैं—

*** तदनन्तर समयमें मानकी प्रथम कृष्टिका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है ।**

§ ७१३. यहांपर कारककी तीसरी संग्रहकृष्टि ही वेदककी प्रथम संग्रहकृष्टिरूपसे निर्दिष्ट की गयी है । शेष कथन सुगम है । अब इस प्रथम स्थितिके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** यहांपर मानवेदकका जो सम्पूर्ण काल है उस वेदककालके तृतीय भागप्रमाण प्रथम स्थिति होती है ।**

§ ७१४. क्रोधके वेदक कालसे वह प्रथम स्थितिविशेष हीन होती है । यहांपर मानका सम्पूर्ण वेदककाल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है । पुनः इसका तृतीय भागप्रमाण प्रथम संग्रहकृष्टिका वेदककाल होता है । इसलिए एक आवलिसे अधिक होकर की जानेवाली यह प्रथम स्थिति सम्पूर्ण मान-

---

१. ता. प्रतौ किट्टीवेदगभावेण इति पाठः ।

माणवेदगद्धाए सादिरेयतिभागमेत्ती एसा पढमट्ठिदी तो वि[1] विसेसाहियत्तमजोएदूण तत्तिभागमेत्ती एसा पढमट्ठिदी होदि त्ति सुत्ते भणिदं[2]।

※ तदो माणस्स पढमकिट्टिं वेदेमाणो तिस्से पढमकिट्टीए अंतरकिट्टीण-मसंखेज्जे भागे वेदयदि ।

§ ७१५. सुगममेदं सुत्तं ।

※ तदो उदिण्णाहिंतो विसेसहीणाओ बंधदि ।

§ ७१६. कुदो ? वेदिज्जमाणकिट्टीणं हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदिभागविसयकिट्टीओ मोत्तूण सेसमज्झिमबहुभागसरूवेण बंधस्स पवुत्तिदंसणादो। संपहि एदम्मि चेव माणवेदगपढमसमए कोहतदियसंगहकिट्टीए णवकबंधमुच्छिट्ठावलियं च मोत्तूण सेसासेसचिराणसंतकम्मदव्वं माणपढम-संगहकिट्टीसरूवेण परिणमइ, आणुपुव्वीसंकमणियमवसेण संकमंतस्स तस्स तदविरोहादो। एवं च कोहादो आगंतूण माणसरूवेण परिणमिय ट्ठिदि-पदेससंतकम्मं जाव संकमणावलियादिक्कंतं ण होइ ताव उदयादिकिरियाणं णागच्छदि त्ति णिच्छेयव्वं। कोहपदेसबंधो माणसरूवेण परिणममाणो किं माणपढमसंगहकिट्टीए उवरिमभागे तिस्से चेव अपुव्वकिट्टीओ होदूण चेट्ठदि आहो तिस्से हेट्ठा णिव्वत्तिज्जमाणापुव्वकिट्टीसरूवेण परिणमदि, किं वा पुव्वकिट्टीसु चेव सरिसधणियसरूवेण

वेदककालके त्रिभागप्रमाण होती है यह निर्देश किया है। यद्यपि मानवेदकालके साधिक तृतीय भागप्रमाण यह प्रथम स्थिति है तो भी विशेष अधिकको न गिनकर यह प्रथम स्थिति तृतीय भागप्रमाण होती है यह सूत्रमें कहा गया है।

※ तदनन्तर मानकी प्रथम कृष्टिका वेदन करनेवाला क्षपक जीव उस मानकी प्रथम कृष्टिकी अन्तरकृष्टियोंके असंख्यात बहुभागका वेदन करता है।

§ ७१५. यह सूत्र सुगम है।

※ तथा उदीर्ण हुई कृष्टियोंसे विशेष हीन कृष्टियोंका बन्ध करता है।

§ ७१६. क्योंकि वेदी जानेवाली कृष्टियोंके अधस्तन और उपरिम असंख्यातवें भागविषयक कृष्टियोंको छोड़कर शेष मध्यम बहुभागरूपसे ही बन्धकी प्रवृत्ति देखी जाती है। अब मानवेदकके इसी प्रथम समयमें क्रोधकी तृतीय संग्रहकृष्टिके नवकबन्ध और उच्छिष्टावलिको छोड़कर शेष समस्त पुराना सत्कर्म द्रव्य मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिरूपसे परिणमन करता है, क्योंकि आनुपूर्वी-संक्रमके नियमके कारण उस संक्रम करनेवाले कर्मका उस तरहसे प्रवृत्त होनेमें विरोधका अभाव है। और इस प्रकार क्रोधमेंसे आकर तथा मानरूपसे परिणमन करके स्थिति और प्रदेशसत्कर्मकी जबतक संक्रमणावलि समाप्त नहीं होती है तबतक वह द्रव्य उदयादि क्रियाओंको नहीं प्राप्त होता है ऐसा निश्चय करना चाहिए।

शंका—क्रोधकषायका प्रदेशबन्ध मानरूपसे परिणमन करता हुआ क्या मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके उपरिम भागमें उसीको अपूर्व कृष्टियाँ होकर अवस्थित रहता है या उसकी नीचे

१. आ॰ प्रतौ ट्ठिदि सा तो वि इति पाठः।

२. आ॰ प्रतौ सुत्ते णिद्दिट्ठं भणिदं इति पाठः।

विहंजिदूण णिवददि त्ति पुच्छिदे ण ताव माणपढमसंगहकिट्टीए उवरिमभागे अपुव्वकिट्टीओ होदूण परिणमदि। किं कारणं ? जेण 'वेदिज्जमाणपढमसंगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा बज्झंति' त्ति भणिदं तेण कारणेण पुव्विल्लाए माणपढमसंगहकिट्टीए उवरि अपुव्वकिट्टीसरूवं होदूण णो चिट्ठदि; तहा संते कोहवेदगचरिमसमयम्मि दिट्ठमाणउक्कस्सबंधकिट्टीदो पढमसमयमाणवेदगस्स बंधे उक्कस्समाणकिट्टीए अणंतगुणाए होदव्वं। ण चेदमिच्छिज्जदे; समयं पडि संजलणाणुभागबंधोदयाणमणंतगुणहाणिपरिणामं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो। तदो तिस्से पुव्वकिट्टीसु सरिसधणियसरूवेण तत्तो हेट्ठा च अपुव्वकिट्टीसरूवेण कोहपदेसग्गस्स परिणामो होदि त्ति घेत्तव्वं। तत्थ वि पुव्वकिट्टीसरूवेण थोवयरं चेव दव्वं परिणमइ अपुव्वकिट्टीसरूवेणेव बहुअं दव्वं परिणमइ, कोहतदियसंगहकिट्टीआयामस्स अविणट्ठसरूवेणेव माणपढमसंगहकिट्टीए हेट्ठा अपुव्वकिट्टीआयारेण परिणमियूण समयाविरोहेणावट्ठाणणियमदंसणादो। अदो चेव पुव्विल्लसमये माणपढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीहितो संपहियमाणपढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टिअद्धाणं सोलसगुणमेत्तं होदूण चिट्ठदि त्ति वट्ठव्वं। एस विही उवरि वि जत्थ संभवइ तत्थ जोजेयव्वो।

७१७. एवं च सोलसगुणमेत्तायामं पत्तमाणपढमसंगहकिट्टीए हेट्ठा उवरि च असंखेज्जदिभागं मोत्तूण पुणो मज्झिमकिट्टीसरूवेण असंखेज्जे भागे उदीरेदि। उदिण्णाणं पि हेट्ठिमोवरिमासंखेज्जदि-

---

निष्पन्न होनेवाली अपूर्व कृष्टिरूपसे परिणमन करता है या क्या पूर्व कृष्टियोंमें ही सदृश धनरूपसे विभक्त होकर पतित होता है ?

समाधान—ऐसी पृच्छा होनेपर कहते हैं कि मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके उपरिम भागमें अपूर्व कृष्टियां होकर तो परिणमन नहीं करता है। क्योंकि जिस कारण 'वेदी जानेवाली मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके असंख्यात बहुभागरूपसे बँधती है' ऐसा कहा है उस कारण पहिलेकी मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिके ऊपर अपूर्व कृष्टिस्वरूप होकर स्थित नहीं होती है, क्योंकि वैसा होनेपर क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें दिखनेवाली उत्कृष्ट बन्धकृष्टिसे प्रथम समयवर्ती मानवेदकके बन्धमें उत्कृष्ट मानकृष्टिको अनन्तगुणी होनी चाहिए, परन्तु यह इष्ट नहीं है, क्योंकि प्रत्येक समयमें संज्वलन कषायोंका अनुभागबन्ध और अनुभागउदयके अनन्तगुणहानिरूप परिणामको छोड़कर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। इसलिए उसकी पूर्व कृष्टियोंमें सदृश धनरूपसे और उसके नीचे अपूर्व कृष्टिरूपसे क्रोधके प्रदेशपुंजका परिणाम होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। उसमें भी पूर्वकृष्टिरूपसे स्तोकतर ही द्रव्य परिणमन करता है तथा अपूर्वकृष्टिरूपसे बहुत द्रव्य परिणमन करता है, क्योंकि क्रोधकी तृतीय संग्रहकृष्टिसम्बन्धी आयामके अविनष्ट स्वरूपसे ही मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिके नीचे अपूर्वकृष्टिके आकारसे परिणमन करके समयके अविरोधपूर्वक, अवस्थानका नियम देखा जाता है और इसीलिए पहिले समयमें मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तरकृष्टियोंसे वर्तमान मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तरकृष्टियोंका आयाम सोलहगुणा हो जाता है ऐसा जानना चाहिए। यही विधि ऊपर भी जहाँ सम्भव है वहाँ योजित कर लेनी चाहिए।

§ ७१७. और इस प्रकार सोलहगुणी प्रमाण आयामको प्राप्त मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिके नीचे और ऊपर असंख्यातवें भागको छोड़कर मध्यम कृष्टिरूपसे असंख्यात बहुभागको उदीरित करता है। उदीरित किये गये असंख्यात बहुभागके भी नीचे और ऊपर असंख्यात बहुभागको

भागं मोत्तूण सेसमज्झिमकिट्टीसरूवेण असंखेज्जे भागे बंधदि त्ति एसो एदस्स सुत्तद्दयस्स समुदायत्थो। णवरि संकमणावलियमेत्तकालं पुव्वकिट्टीणं चेव पदेसग्गमोकड्डियूण सोलसगुणकिट्टीणमसंखेज्जा-भागसरूवेण[1] वेदेदि तदणुसारेणेव च बंधदि त्ति घेत्तव्वं। संपहि सेसकसायेसु अणुभागबंधपवुत्ती केरिसो होदि त्ति आसकाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** सेसाणं कसायाणं पढमसंगहकिट्टीओ बंधदि।**

§ ७१८. सुगमं।

*** जेणेव विहिणा कोधस्स पढमकिट्टी वेदिदा तेणेव विधिणा माणस्स पढम-किट्टिं वेदयदि।**

§ ७१९. समये समये अग्गकिट्टिप्पहुडि उवरिमासंखेज्जभागविसयाओ किट्टीओ अणुसमय-ओवट्टणाघादेण घादेमाणो णवकबंधपदेसग्गेण संकामिज्जमाणपदेसग्गेण च किट्टीअंतरेसु संगह-किट्टीअंतरेसु च जहासंभवमपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेमाणो अणुसमयमणंतगुणहाणीए बंधोदय-जहण्णुक्कस्सणिव्वग्गणाओ च कुणमाणो जहा कोहपढमसंगहकिट्टीए वेदगो जादो तहा चेव माण-पढमसंगहकिट्टिमेण्हि वेदेदि, ण एत्थ किंचि णाणत्तमत्थि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

छोड़कर शेष मध्यम कृष्टिरूपसे असंख्यात बहुभागको बांधता है। इस प्रकार इन दो सूत्रोंका यह समुच्चयरूप अर्थ है। इतनी विशेषता है कि संक्रमणावलिप्रमाण काल तक पूर्व कृष्टियोंके ही प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके सोलहगुणी प्रमाण कृष्टियोंके असंख्यात बहुभागरूपसे वेदन करता है और उसके अनुसार ही बन्ध करता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। अब शेष कषायोंमें अनुभागबन्धकी प्रवृत्ति कैसी होती है ऐसी आशंका होनेपर निर्णय करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** शेष कषायोंकी प्रथम संग्रहकृष्टियोंको बाँधता है।**

§ ७१८. यह सूत्र सुगम है।

*** जिस ही विधिसे क्रोधकी प्रथम कृष्टिका वेदन किया है उसी विधिसे मानकी प्रथम कृष्टिका वेदन करता है।**

§ ७१९. प्रत्येक समयमें अग्र कृष्टिसे लेकर उपरिम असंख्यात भागविषयक कृष्टियोंका अनुसमय अपवर्तनाघातके द्वारा घात करता हुआ तथा नवकबंध प्रदेशपुंजरूपसे और संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजरूपसे कृष्टियोंके अन्तरालोंमें और संग्रहकृष्टियोंके अन्तरालोंमें यथासम्भव अपूर्व-कृष्टियोंकी रचना करता हुआ अनुसमय अनन्तगुणहानिरूपसे बन्ध और उदयरूप जघन्य और उत्कृष्ट निर्वर्गणाओंको करता हुआ जिस प्रकार क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिका वेदक हुआ था उसी प्रकार मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिका इस समय वेदन करता है, इसमें कुछ भी नानापन (भेद) नहीं है यह यहाँपर सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

---

१. ता. प्रतौ मसंखेज्जभागसरूवेण इति पाठः

* किट्टीविणासणे बज्झमाणयेण संकामिज्जमाणयेण च पदेसग्गेण अपुव्वाणं किट्टीणं करणे किट्टीणं बंधोदयणिव्वग्गणकरणे एदेसु करणेसु णत्थि णाणत्तं, अण्णेसु च अभणिदेसु।

§ ७२०. 'किट्टीविणासणे णत्थि णाणत्तं' एवं भणिदे समयं पडि णिरुद्धसंगहकिट्टीए अग्गग्गादो असंखेज्जदिभागं खंडेदि त्ति तेण तत्थ विसेसो णत्थि त्ति भणिदं होदि। एवं सुत्ताणुसारेण णेदव्वं। णवरि 'अण्णेसु च अभणिदेसु' एवं वुत्ते जाणि अण्णाणि अभणिदाणि करणाणि तेसु वि करणेसु णत्थि विसेसो, कोहपढमसंगहकिट्टीए बंधसंतकम्मपदेसेहिं णिसेगादिपरूवणाओ जाओ भणिदाओ तासिं पि परूवणे एत्थ कीरमाणे सो चेव भंगो, ण तत्थ को वि विसेससंभवो त्ति भणिदं होदि। एवमेदेण विहाणेण माणपढमसंगहकिट्टिं वेदेमाणस्स कमेण पढमट्ठिदीए ज्झीयमाणाए समयाहियावलियमेत्तपढमट्ठिदिं धरेदूणावट्ठिदस्स तक्कालभाविओ जो परूवणाविसेसो तमुवरिमसुत्ताणुसारेण वत्तइस्सामो—

* एदेण कमेण माणपढमकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए जाधे समयाहियावलियसेसा ताधे तिण्हं संजलणाणं ठिदिबंधो मासो वीसं च दिवसा अंतोमुहुत्तूणा।

§ ७२१. पुव्वुत्तकोहवेदगचरिमसमयविसयट्ठिदिबंधो दोमासमेत्तो जादो। तत्तो जहाकमं परिहाइदूणेण्हिं संजलणाणं ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तूणवीसदिवसाहियमासमेत्तो माणपढमसंगहकिट्टी-

---

* कृष्टियोंके विनाश करनेमें तथा बध्यमान और संक्रमाण प्रदेशपुंजरूपसे अपूर्व कृष्टियोंके करनेमें तथा कृष्टियोंके बन्ध और उदयरूप निर्वर्गणाकरणमें इन करणोंमें कोई भेद नहीं है तथा जो करण यहाँ नहीं कहे गये हैं उन करणोंमें भी कोई भेद नहीं है।

§ ७२०. 'कृष्टियोंके विनाश करनेमें कोई भेद नहीं है' ऐसा कहनेपर प्रत्येक समयमें विवक्षित संग्रहकृष्टिके अग्रभागसे असंख्यातवें भागका खण्डन करता है इस रूपसे उसमें कोई भेद नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार सूत्रके अनुसार कथन कर लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि 'अण्णेसु च अभणिदेसु' ऐसा कहनेपर जो अन्य करण नहीं कहे गये हैं, उन करणोंमें भी कोई विशेष नहीं है, क्योंकि क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिके बन्ध और सत्कर्मप्रदेशोंकी अपेक्षा जो निषेकादि प्ररूपणाएँ कह आये हैं उनकी भी प्ररूपणा यहाँपर करनेपर वह उसी प्रकार होती है उसमें कोई विशेष सम्भव नहीं है यह सूत्रका तात्पर्य है। इस विधिसे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवाले जीवकी क्रमसे प्रथम स्थितिके क्षीण होनेपर तथा एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिको रखकर अवस्थित हुए उसके उस कालमें जो प्ररूपणाभेद होता है उसे उपरिम सूत्रके अनुसार बतलावेंगे—

* इस क्रमसे मानकी प्रथम कृष्टिका वेदन करते हुए जो प्रथम स्थिति होती है उस प्रथम स्थितिका जब एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल शेष रहता है तब इन संज्वलनोंका स्थितिबन्ध एक माह और अन्तर्मुहूर्त कम बीस दिनप्रमाण होता है।

§ ७२१. पूर्वोक्त क्रोधकषायका वेदन करते हुए अन्तिम समयमें जो स्थितिबन्ध दो माहप्रमाण था वह उससे क्रमसे घटकर इस समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त कम बीस दिन

वेदगचरिमसमये जादो त्ति वुत्तं होदि। एत्थ ट्ठिदिबंधपरिहाणिपमाणमंतोमुहुत्ताहियदसदिवसमेत्तं तेरासियकमेण साहेयव्वं। जइ एवं, दसदिवसमेत्तो चेव ट्ठिदिबंधपरिहाणी होदु, अंतोमुहुत्ताहियत्तमेत्थ कत्तो समुवलद्धमिदि णासंकणिज्जं, अद्धाविसेसमस्सियूण तदुवलद्धीए विरोहाभावादो।

*** संतकम्मं तिण्णि वस्साणि चत्तारि मासा च अंतोमुहुत्तूणा।**

§ ७२२. कोहवेदगचरिमसंधीए चत्तारि वस्समेत्तं संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं जादं, तत्तो जहाकममंतोमुहुत्ताहियअट्ठमासमेत्तट्ठिदिसंतपरिहाणीए जादाओ अंतोमुहुत्तूणचत्तारिमाससमहियाणि तिण्णि वस्साणि तिण्हं संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्ममेण्हिं संजादमिदि एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। एवमेदीए परूवणाए माणपढमसंगहकिट्टीवेदगद्धमणुपालिय पुणो जहावसरपत्ताए माणविदियसंगहकिट्टीए पढमट्ठिदिसमुप्पायणपुरस्सरं वेदगभावेण परिणमदि त्ति परूवणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

*** से काले माणस्स विदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि।**

§ ७२३. सुगमं। णवरि उदयादिगुणसेढिसरूवेण पढमट्ठिदिमेसो णिक्खिवमाणो सगवेदगकालादो आवलियब्भहियं कादूण पढमट्ठिदिविण्णासं कुणदि त्ति घेत्तव्वं।

*** तेणेव विहिणा संपत्तो माणस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से समयाहियावलियसेसा त्ति।**

अधिक एक माहप्रमाण मानसंज्वलनकी प्रथम संग्रहकृष्टिका वेदन करनेके अन्तिम समयमें हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँपर स्थितिबन्धकी हानिका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त अधिक दस दिन मात्र त्रैराशिक क्रमसे साध लेना चाहिए।

शंका—यदि ऐसा है तो अन्तर्मुहूर्त अधिक यहाँपर किस कारणसे उपलब्ध होता है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करना चाहिए क्योंकि कालविशेषका आश्रय लेकर उसकी उपलब्धि होनेमें विरोध नहीं पाया जाता।

*** उन कर्मोंका सत्कर्म तीन वर्ष और अन्तर्मुहूर्त कम चार माहप्रमाण होता है।**

§ ७२२. क्रोधवेदककी अन्तिम सन्धिमें संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म चार वर्षप्रमाण था, उससे यथाक्रम अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ माह स्थितिसत्कर्मकी हानि होनेपर अन्तर्मुहूर्त कम चार माह अधिक तीन वर्ष तीन संज्वलनोंका स्थितिसत्कर्म इस समय हो गया है यह इस सूत्रका भावार्थ है। इस प्रकार इस प्ररूपणा द्वारा मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिके वेदक कालका पालन करके पुनः यथावसर प्राप्त मानकी द्वितीय संग्रहकृष्टिकी प्रथम स्थितिके उत्पादनपूर्वक वेदकरूपसे क्षपक जीव परिणमता है इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** तदनन्तर समयमें मानकी द्वितीय कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।**

§ ७२३. यह सूत्र सुगम है। इतनी विशेषता है कि उदयादि गुणश्रेणीरूपसे प्रथम स्थितिकी यह क्षपक जीव रचना करता हुआ अपने वेदककालसे एक आवलि अधिक करके प्रथम स्थितिकी रचना करता है।

*** उसी विधिसे मानकी दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपककी जो मानकी प्रथम स्थिति है उसमें एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल शेष प्राप्त होता है।**

§ ७२४. माणपढमसंगहकिट्टिमहिकिच्च पुव्वं परूविदो जो विही तेणेव विहिणा अणूणाहियेण संजुत्तो एसो सगकिट्टीवेदगद्धाए चरिमसमयसंपत्तो। ताधे अप्पणो पढमट्ठिदी समयाहियावलियमेत्ती, सेसासेसपढमट्ठिदीए सगवेदगकालब्भंतरे णिज्जिण्णत्तादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थविणिण्णओ। संपहि एदम्मि उद्देसे वट्टमाणस्सेदस्स तिण्हं संजलणाणं ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

* ताधे संजलणाणं ट्ठिदिबंधो मासो दस च दिवसा देसूणा।

§ ७२५. पुव्वुत्तसंधिविसयट्ठिदिबंधादो जहाकममंतोमुहुत्ताहियदसदिवसपरिहाणिवसेण पयदट्ठिदिबंधसिद्धीए णिव्विसंवादमुवलंभादो।

* संतकम्मं दो वस्साणि अट्ठ च मासा देसूणा।

§ ७२६. एत्थ वि ट्ठिदिसंतपरिहाणी सादिरेयअट्ठमासमेत्ता तेरासियकमेण साहेयव्वा। सेसं सुगमं।

* से काले माणतदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि।

* तेणेव विहिणा संपत्तो माणस्स तदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से आवलिया समयाहियमेत्ती सेसा त्ति।

* ताधे माणस्स चरिमसमयवेदगो।

---

§ ७२४. मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिको अधिकृत करके पहले जो विधि कह आये हैं न्यूनाधिकतासे रहित उसी विधिसे संयुक्त होकर यह क्षपक जीव अपनी कृष्टिवेदक कालके अन्तिम समयको प्राप्त होता है। उस समय अपनी प्रथम स्थिति एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण शेष रहती है, क्योंकि शेष सम्पूर्ण प्रथम स्थिति अपने वेदककालके भीतर ही निर्जीर्ण हो जाती है यहांपर यह सूत्रार्थका निर्णय है। अब इस स्थानपर विद्यमान इस क्षपक जीवके तीन संज्वलनोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* इस समय संज्वलनोंका स्थितिबन्ध एक माह और कुछ कम दस दिवसप्रमाण होता है।

§ ७२५. पूर्वोक्त सन्धिविषयक स्थितिबन्धके यथाक्रम अन्तर्मुहूर्त अधिक दस दिवसकी हानिवश प्रकृत स्थितिबन्धकी सिद्धि विसंवादरहित होकर पायी जाती है।

* उन कर्मोंका सत्कर्म दो वर्ष कुछ कम आठ माहप्रमाण होता है।

§ ७२६. यहांपर भी स्थितिसत्कर्मकी हानि साधिक आठ माहप्रमाण त्रैराशिक क्रमसे साध लेनी चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* तदनन्तर समयमें मानकी तृतीय कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।

* तथा उसी विधिसे मानकी तृतीय कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके जो प्रथम स्थिति प्राप्त होती है उसके एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल जब शेष रहता है।

* तब मानका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है।

* ताधे तिण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो मासो पडिवुण्णो ।

* संतकम्मं बे वस्साणि पडिवुण्णाणि ।

§ ७२७. एत्थ माणवेदगद्धाए परिहीणासेसट्ठिदिसंतकम्मपमाणं बेवस्समेत्तमिदि वट्ठव्वं। अवसेसं सुगमं ।

* तदो से काले मायाए पढमकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि ।

* तेणेव विहिणा संपत्तो मायापढमकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से समयाहियावलिया सेसा त्ति ।

* ताधे ठिदिबंधो दोण्हं संजलणाणं पणुवीसं दिवसा देसूणा ।

* ट्ठिदिसंतकम्मं वस्समट्ठ च मासा देसूणा ।

* से काले मायाए विदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि ।

* सो वि मायाए विदियकिटटीवेदगो तेणेव विहिणा संपत्तो मायाए विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिया समयाहिया सेसा त्ति।

* ताधे ट्ठिदिबंधो बीसं दिवसा देसूणा ।

---

* उस समय तीन संज्वलनोंका स्थितिबन्ध पूरा एक माहप्रमाण होता है ।

* तथा उनका स्थितिसत्कर्म पूरा दो वर्षप्रमाण होता है ।

§ ७२७. यहाँपर मानवेदककालसे हीन समस्त स्थितिसत्कर्मका प्रमाण दो वर्षप्रमाण होता है ऐसा जानना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

* तदनन्तर समयमें मायासंज्वलनकी प्रथम कृष्टिके प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है ।

* तथा उसी विधिसे मायाकी प्रथम कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके जो प्रथम स्थिति है उसका जब एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है ।

* तब दो संज्वलनोंका स्थितिबन्ध कुछ कम पच्चीस दिवस प्रमाण होता है ।

* तथा स्थितिसत्कर्म एक वर्ष और कुछ कम आठ माहप्रमाण होता है ।

* तदनन्तर समयमें मायासंज्वलनकी द्वितीय कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।

* मायाकी दूसरी कृष्टिका वेदक वह जीव भी उसी विधिसे मायाकी दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपककी जो प्रथम स्थिति है उस प्रथम स्थितिका जब एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है।

* तब उसका स्थितिबन्ध कुछ कम बीस दिवसप्रमाण होता है ।

* ट्ठिदिसंतकम्मं सोलस मासा देसूणा ।

* से काले मायाए तदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि ।

* तेणेव विहिणा संपत्तो मायाए तदियकिट्टिं वेदगस्स पढमट्ठिदीए समयाहियावलिया सेसा त्ति ।

* ताधे मायाए चरिमसमयवेदगो ।

* ताधे दोण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो अद्धमासो पडिवुण्णो ।

* ठिदिसंतकम्ममेक्कं वस्सं पडिवुण्णं ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो मासपुधत्तं ।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि ।

* इदरेसिं कम्माणं ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जाणि वस्साणि ।

§ ७२८. सुगमो च एसो सव्वो सुत्तपबंधो त्ति ण एत्थ वक्खाणायरो, सुगमत्थपरूवणाए गंथगउरवं मोत्तूण फलविसेसाणुवलंभादो। णवरि मायावेदगस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं तिसु चरिमसंधीसु संजलणाणं ठिदिबंधपरिहाणी ट्ठिदिसंतपरिहाणी च तेरासियकमेणाणेयव्वा। सव्वासु च

---

* तथा स्थितिसत्कर्म कुछ कम सोलह माहप्रमाण होता है ।

* तदनन्तर समयमें मायाकी तीसरी कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।

* तथा उसी विधिसे मायाकी तीसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके प्रथम स्थितिमें जब एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है ।

* तब वह मायाका अन्तिम समयवर्ती वेदक होता है ।

* उसमें दोनों संज्वलनोंका स्थितिबन्ध पूरा आधा माहप्रमाण होता है ।

* तथा स्थितिसत्कर्म पूरा एक माहप्रमाण होता है ।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध एक माह पृथक्त्वप्रमाण होता है ।

* तथा उन्हीं तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है ।

* तथा इतर कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है ।[1]

§ ७२८. यह समस्त सूत्र सुगम है, इसलिए यहांपर हमने व्याख्यान नहीं किया है। क्योंकि सुगम अर्थकी प्ररूपणा करनेमें ग्रन्थकी गुरुताको छोड़कर कोई फलविशेष नहीं पाया जाता है। इतनी विशेषता है कि मायावेदकको तीनों संग्रहकृष्टियोंकी तीनों अन्तिम सन्धियोंमें संज्वलनोंकी स्थितिबन्धकी हानि और स्थितिसत्कर्मकी हानि त्रैराशिक क्रमसे ले आनी चाहिए

---

१. यहाँ इतर कर्मोंका स्थितिबन्ध संख्यात वर्ष प्रमाण होता है इस आशयका सूत्र मूलमें नहीं आया है। मात्र कसायपाहुडसूत्रमें ब्रेकेटमें इसका निर्देश किया गया है। देखो पृ. ८६१ ।

संधीसु णाणावरणादिकम्माणं ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणाणुगमो सुगमो त्ति ण परूविदो। एदम्मि पुण मायावेदगचरिमसंधीए तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो वासपुधत्तमेत्ता, दोपुव्वुत्त-संधिविसयट्ठिदिबंधादो जहाकममोवट्टिदूण मासपुधत्तमेत्तो संवुत्तो। अघादिकम्माणं पि तप्पाओग्गसंखेज्जवस्सपमाणो जइ वि सुत्ते मुत्तकंठमणुवइट्ठो तो वि देसामासयभावेण सूचिदो दट्ठव्वो। उभयेसिं पि कम्माणं ट्ठिदिसंतपमाणपरिक्खा सुत्तणिद्दिट्ठा सुगमा। एवमेत्तिएण परूवणा-पबंधेण मायावेदगद्धमणुपालिय से काले लोभवेदगभावेण परिणममाणस्स जो परूवणापबंधो तण्णिण्णयकरणट्ठमुवरिमपबंधमाह—

*** तदो से काले लोभस्स पढमकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि।**

§ ७२९. मायासंजलणस्स तिण्हं संगहकिट्टीणं वेदगद्धासु जहाकमं परिसमत्तासु तदणंतर-समये लोभसंजलणकिट्टीओ वेदेदुमाढवेमाणो पुव्वमेव ताव पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण सगवेदगकालादो आवलियब्भहियं काद्रूण उदयादिगुणसेढिकमेण पढमट्ठिदिमेसो करेदि त्ति वुत्तं होदि। एसो पढमट्ठिदी सयलवेदगद्धाए सादिरेयतिभागमेत्ती बादरलोभवेदगद्धाए च सादिरेयदु-भागमेत्ता त्ति घेत्तव्वा। एवमेदीए पढमट्ठिदीए लोभसंजलणपढमसंगहकिट्टिं वेदेमाणस्स सव्वावासयेसु पुव्वुत्तो चेव विधी णिरवसेसमणुगंतव्वो त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

तथा सब सन्धियोंमें ज्ञानावरणादि कर्मोंके स्थितिसत्कर्मोंके प्रमाणका अनुगम सुगम है, इसलिए उनका यहाँ प्ररूपण नहीं किया है। परन्तु इस मायावेदकके अन्तिम सन्धिमें तीन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध वर्षपृथक्त्वप्रमाण है जो दो पूर्वोक्त सन्धि-विषयक स्थितिबन्धसे क्रमसे घटकर मास-पृथक्त्वप्रमाण हो गया है तथा अघाति कर्मोंका भी तत्प्रायोग्य संख्यात वर्षप्रमाण यद्यपि सूत्रमें मुक्तकण्ठ नहीं कहा गया है तो भी देशामर्षकरूपसे सूचित किया गया जान लेना चाहिए। दोनों ही कर्मोंके स्थितिसत्कर्मके प्रमाणकी परीक्षा सूत्रनिर्दिष्ट और सुगम है इस प्रकार इतने प्ररूपणा प्रबन्धके द्वारा मायावेदक कालका पालन करके तदनन्तर समयमें लोभवेदक कालरूपसे परिणमन करनेवाले क्षपक जीवका जो प्ररूपणाप्रबन्ध है उसका निर्णय करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** उसके बाद अनन्तर समयमें लोभकी प्रथम कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।**

§ ७२९. मायासंज्वलनकी तीनों संग्रहकृष्टियोंके वेदककालोंके क्रमसे समाप्त होनेपर तदनन्तर समयमें लोभसंज्वलनकी कृष्टियोंका वेदन करनेके लिए आरम्भ करता हुआ पहले ही सर्व-प्रथम प्रथम संग्रहकृष्टिके प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके तथा अपने वेदक कालसे एक आवलि अधिक करके उदयादि गुणश्रेणीरूपसे यह क्षपक जीव प्रथम स्थितिको करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यह प्रथम स्थिति सम्पूर्ण वेदक कालके साधिक तीसरे भागप्रमाण होती है और बादर लोभवेदक कालके साधिक द्वितीय भागप्रमाण होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार इस प्रथम स्थितिको लोभसंज्वलनसम्बन्धी प्रथम सग्रहकृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके सभी आवासकोंमें पूरी पूर्वोक्त विधि ही जाननी चाहिए इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* तेणेव विहिणा संपत्तो लोभस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणस्स पढमट्ठिदीए समयाहियावलिया सेसा त्ति ।

§ ७३०. तेणेव पुव्वुत्तेण विहिणा एदिस्से संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणमसंखेज्जे भागे वेदेमाणो उदिण्णाहितो विसेसहीणाओ बंधमाणो समये समये बंधोदयजहण्णुक्कस्सणिव्वग्गणाओ च तहा चेव कुणमाणो संताणुभागस्स अणुसमयोवट्टणाघादं च तहा चेवाणुपालेमाणो अपुव्वाओ च किट्टीओ बज्झमाणसंकामिज्जमाणपदेसग्गसंबंधिणीओ किट्टीअंतरेसु संगहकिट्टीणं च हेट्ठा जहासंभवं पुव्वभंगेणेव णिव्वत्तेमाणो एसो अप्पणो वेदिज्जमाणपढमट्ठिदीए तमुद्देसं संपत्तो जम्मि उद्देसे वट्टमाणस्स णिरुद्धपढमट्ठिदीए वेदिदसेसा समयाहियावलिया सेसा त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स समुदायत्थो। संपहि एदम्मि संधिविसेसे वट्टमाणस्स सव्वेसिं कम्माणं ठिदिबंधादिपमाणावहारणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* ताधे लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तं ।

§ ७३१. पुव्विल्लमायावेदगचरिमसंधिविसये ट्ठिदिबंधादो जहाकमं परिहाइदूण अंतोमुहुत्तपमाणो लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो एदम्मि विसये संवुत्तो त्ति भणिदं होदि ।

* ट्ठिदिसंतकम्मं पि अंतोमुहुत्तं ।

§ ७३२. पुव्विल्लसंधिविसये संपुण्णवस्समेत्तं लोभसंजलणट्ठिदिसंतकम्मं तत्तो कमेण परिहाइ-

---

* उसी विधिसे लोभसंज्वलनकी प्रथम कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके जब प्रथम स्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है ।

§ ७३०. उसी पूर्वोक्त विधिसे इस संग्रहकृष्टिकी अंतरकृष्टियोंके असंख्यात बहुभागका वेदन करनेवाला और उदीर्ण अंतरकृष्टियोंसे विशेष हीन अंतरकृष्टियोंको बांधनेवाला तथा समय-समयमें बंध और उदयरूप जघन्य और उत्कृष्ट निर्वर्गणाओंको उसी प्रकार करनेवाला और सत्कर्मोंके अनुभागका अनुसमय अपवर्तना घातको उसी प्रकार पालन करनेवाला तथा बध्यमान और संक्रम्यमान प्रदेशपुंजसम्बन्धी अपूर्व कृष्टियोंको कृष्टि-अन्तरालोंमे तथा संग्रहकृष्टियोंके नीचे यथासम्भव पूर्व विधिके अनुसार ही रचता हुआ यह क्षपक जीव अपनी वेदी जानेवाली प्रथम स्थितिके उस स्थानको प्राप्त होता है जिस स्थानपर विद्यमान उसके विवक्षित प्रथम स्थितिके वेदी जानेसे शेष एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थिति शेष रहती है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। अब इस सन्धिविशेषमें विद्यमान इस क्षपक जीवके सब कर्मोंके स्थितिबन्धादि प्रमाणोंका अवधारण करनेके लिए उपरिम सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* उस समय लोभ संज्वलनका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है ।

§ ७३१. पूर्वोक्त मायावेदककी अन्तिम सन्धिविषयक स्थितिबन्धसे यथाक्रम घटकर इस स्थानपर लोभ संज्वलनका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्तप्रमाण हो गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* तथा उसका स्थितिसत्कर्म भी अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है ।

§ ७३२. पूर्वोक्त सन्धिमें लोभ संज्वलनका स्थितिसत्कर्म सम्पूर्ण वर्षप्रमाण रहा था।

दूण अंतोमुहुत्तपमाणेणेदम्मि विसये पयट्ठदि त्ति वुत्तं होइ। णवरि एत्थतणट्ठिदिबंधादो ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जगुणमिदि दट्ठव्वं।

*** तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो दिवसपुधत्तं।**

§ ७३३. पुव्विल्लसंधिविसये मासपुधत्तमेत्तो घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो तत्तो कमेण परिहीयमाणो दिवसपुधत्तमेत्तो एत्थ जादो त्ति वुत्तं होइ।

*** सेसाणं कम्माणं वासपुधत्तं।**

§ ७३४. पुव्विल्लसंधिविसये तप्पाओग्गसंखेज्जवस्सपमाणो होंतो तिण्हमघादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो वासपुधत्तमेत्तो एण्हि संजादो त्ति भणिदं होदि।

*** घादिकम्माणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।**

§ ७३५. सुगमं।

*** सेसाणं कम्माणं असंखेज्जाणि वस्साणि।**

§ ७३६. सुगममेदं पि सुत्तं।

*** तत्तो से काले लोभस्स बिदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि।**

पुनः उससे यथाक्रम घटकर इस स्थानमें वह अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्रवृत्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इतनी विशेषता है कि यहाँके स्थितिबन्धसे स्थितिसत्कर्म संख्यातगुणा होता है ऐसा जानना चाहिए।

*** इन घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध दिवसपृथक्त्वप्रमाण होता है।**

§ ७३३. पूर्वोक्त सन्धिमें घातिकर्मोंका स्थितिबन्ध मासपृथक्त्वप्रमाण था उससे क्रमसे घटकर इस स्थानपर दिवसपृथक्त्वप्रमाण हो गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** तथा शेष कर्मोंका स्थितिबन्ध वर्षपृथक्त्वप्रमाण होता है।**

§ ७३४. पूर्वोक्त सन्धिमें तत्प्रायोग्य संख्यात वर्षप्रमाण होकर तीनों अघातिकर्मोंका स्थितिबन्ध इस समय वर्षपृथक्त्वप्रमाण हो गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है।**

§ ७३५. यह सूत्र सुगम है।

*** तथा शेष कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है।**

§ ७३६. यह सूत्र भी सुगम है।

*** तदनन्तर लोभकी दूसरी कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके प्रथम स्थितिको करता है।**

§ ७३७. लोभवेदगद्धाए पढमतिभागे पढमसंगहकिट्टिमणंतरपरूविदेण कमेण वेदिदूण तदो से काले तिस्से चेव बिदिय-तिभागपढमसमये वट्टमाणो विदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण सगवेदगकालादो आवलियब्भहियं कादूण उदयादिगुणसेढीए लोभविदियसंगहकिट्टीए पढमट्ठिदिं समुप्पाएदि त्ति वुत्तं होइ। एवं च पढमट्ठिदिं कादूण विदियसंगहकिट्टिं वेदेमाणो तप्पढमसमये चेव सुहुमसांपराइयकिट्टीओ कादुमाढवेदि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** ताधे चेव लोभस्स विदियकिट्टीदो च तदियकिट्टीदो च पदेसग्गमोकड्डियूण सुहुमसांपराइयकिट्टीओ णाम करेदि।**

§ ७३८. तम्मि चेव लोभवेदगद्धा विदियतिभागपढमसमये लोभविदियसंगहकिट्टिं वेदेमाणो लोभविदियं च तदियसंगहकिट्टीहिंतो पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डियूण सुहुमसांपराइयकिट्टीओ णाम करेदि, विदियतिभागम्मि सुहुमसांपराइयकिट्टीओ अकुणमाणस्स तदियतिभागे सुहुमकिट्टीवेदगभावेण परिणममाणाणुववत्तीदो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसमुच्चओ। ण च तदियवारकिट्टीवेदगद्धाए सुहुमसांपराइयकिट्टीणं कारगत्तमासंकणिज्जं; सुहुमकिट्टीपरिणामेण विणा सगसरूवेणेव तिस्से उदयपरिणामाणुवलंभादो। सुहुमसांपराइयकिट्टीणं किं लक्खणमिदि चे बादरसांपराइयकिट्टीहिंतो अणंतगुणहाणीए परिणमिय लोभसंजलणाणुभागस्सावट्ठाणं सुहुमसांपराइयकिट्टीणं लक्खणमवहारे-

---

§ ७३७. लोभ संज्वलन वेदककालके प्रथम तीसरे भागमें प्रथम संग्रहकृष्टिका अनन्तर कहे गये क्रमके अनुसार वेदन करके उसके बाद तदनन्तर समयमें उसीके दूसरे त्रिभागके प्रथम समयमें विद्यमान यह क्षपक जीव दूसरी संग्रह कृष्टिके प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके तथा उसे अपने वेदक कालसे एक आवलि अधिक करके उदयादि गुणश्रेणीरूपसे लोभकी द्वितीय संग्रह-कृष्टिकी प्रथम स्थितिको उत्पन्न करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और इस प्रकार प्रथम स्थिति करके दूसरी संग्रह कृष्टिको वेदन करनेवाला वह क्षपक जीव उसके प्रथम समयमें ही सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको करनेके लिए आरम्भ करता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** तथा उसी समय लोभ संज्वलनकी दूसरी कृष्टिमेंसे और तीसरी कृष्टिमेंसे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके सूक्ष्मसाम्परायिक नामक कृष्टियोंको करता है।**

§ ७३८. उसी लोभ वेदक कालके दूसरे त्रिभागके प्रथम समयमें लोभकी दूसरी संग्रह कृष्टिका वेदन करनेवाला जीव लोभकी द्वितीय संग्रहकृष्टिका और तृतीय संग्रहकृष्टिमें-से प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके सूक्ष्मसाम्परायिक नामवाली कृष्टियोंको करता है, क्योंकि द्वितीय त्रिभागमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको नहीं करनेवाले जीवके तृतीय त्रिभागमें सूक्ष्म कृष्टियोंके वेदकरूपसे परिणमनकी उत्पत्ति होती है यह सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। यहाँपर तीसरी बार कृष्टिके वेदक कालमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके कारकपनेकी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि सूक्ष्मकृष्टियोंके परिणामके बिना अपने रूपसे ही उसके उदयका परिणाम नहीं उपलब्ध होता।

शंका—सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका क्या लक्षण है?

यव्वं सव्वजण्णबादरकिट्टीदो वि हेट्ठा सुट्ठु अणंतगुणहाणीए ओहट्टिदूण सव्वुक्कस्ससुहुमसांपराइय-किट्टीए समवट्ठाणणियमदंसणादो।

§ ७३९. संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

*** तासिं सुहुमसांपराइयकिट्टीणं कम्हि ट्ठाणं।**

§ ७४०. किं विदिय-तदियबादरसांपराइयकमेण हेट्ठा पादेक्कमेदाहिमवट्ठाणं होदि आहो तदियसंगहकिट्टीदो हेट्ठा चेव तदवट्ठाणणियमो त्ति पुच्छा कदा होदि।

*** तासिं ट्ठाणं लोभस्स तदियाए संगहकिट्टीए हेट्ठदो।**

§ ७४१. तासिं सुहुमसांपराइयकिट्टीणं ठाणमवट्ठाणं णियमा तदियबादरसांपराइयकिट्टीए हेट्ठा दट्ठव्वं; तत्तो अणंतगुणहाणीए अपरिणदाए सुहुमसांपराइयकिट्टित्तविरोहादो त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। संपहि एवमवहारिदट्ठाणविसेसाणं सुहुमसांपराइयकिट्टीणं परूवणाणुगमे कीरमाणे तत्थ ताव सुहुमसांपराइयकिट्टीणमायामविसेसस्स पदुप्पायणट्ठं तल्लक्खणविसेसावहारणट्ठं च सुत्तपबंधमुत्तरमाढवेइ—

*** जारिसी कोहस्स पढमसंगहकिट्टी तारिसी एसा सुहुमसांपराइयकिट्टी।**

समाधान—बादरसाम्परायिक कृष्टियोंसे अनन्तगुणहानिरूपसे परिणमनकर लोभ संज्वलनके अनुभागके अवस्थानको सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका लक्षण जानना चाहिए, क्योंकि सबसे जघन्य बादर कृष्टिसे भी नीचे अच्छी तरह अनन्तगुणहानिरूपसे घटकर सर्वोत्कृष्ट सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिके अवस्थानका नियम देखा जाता है।

७३९. अब इसी अर्थके स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका कहाँ स्थान है?**

§ ७४०. क्या द्वितीय तृतीय बादर साम्परायिकके क्रमसे प्रत्येक इनके नीचे अवस्थान है या तृतीय संग्रहकृष्टिसे नीचे ही उनके अवस्थानका नियम है, उक्त सूत्र द्वारा यह पृच्छा की गयी है।

*** उन सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका लोभकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे नीचे स्थान है।**

§ ७४१. उन सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका स्थान अर्थात् अवस्थान नियमसे तीसरी बादरसाम्परायिक कृष्टिसे नीचे जानना चाहिए, क्योंकि उससे अनन्तगुणहानिरूपसे परिणत नहीं होनेपर सूक्ष्मसाम्परायिककृष्टिपनेका विरोध आता है यह इस सूत्रका भावार्थ है। अब इस प्रकार जिनके उत्थानविशेषोंका अवधारण किया है ऐसी सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंकी प्ररूपणाका अनुभव करनेपर वहाँपर सर्वप्रथम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके आयामविशेषका कथन करनेके लिए और उनके लक्षणविशेषका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** जिस प्रकारकी क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि है उसी प्रकारकी यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि होती है।**

§ ७४२. एवं भणंतस्साहिप्पाओ—जहाकोहस्स पढमसंगहकिट्टी सगायामेण सेससंगहकिट्टीण-मायामं पेक्खियूण दव्वमाहप्पेण संखेज्जगुणा जादा एवमेसा वि सुहुमसांपराइयकिट्टी कोहपढम-संगहकिट्टिं मोत्तूण सेसासेससंगहकिट्टीणं किट्टीकरणद्धाए समुवलद्धायामादो संखेज्जगुणायामा वट्टव्वा, सयलस्सेव मोहणीयदव्वस्साहारभावेणेदिस्से परिणमिस्समाणत्तादो त्ति।

§ ७४३ अथवा, 'जारिसी कोहस्स पढमसंगहकिट्टी' एवं भणिदे जारिसलक्खणा कोहपढम-संगहकिट्टी अपुव्वफद्दयाणं हेट्ठा अणंतगुणहीणा होदूण कदा, तारिसलक्खणा चेव एसा सुहुमसांप-राइयकिट्टी लोभस्स तदियबादरसांपराइयकिट्टीदो हेट्ठा अणंतगुणहीणा होदूण कीरदि त्ति भणिदं होदि।

अहवा जहा कोहपढमसंगहकिट्टी जहण्णकिट्टिप्पहुडि जाव उक्कस्सकिट्टि त्ति ताव अणंतगुणा होदूण गदा तहा चेव एसा सुहुमसांपराइयकिट्टी वि अप्पणो जहण्णकिट्टिप्पहुडि जाव सगुक्कस्सकिट्टी त्ति ताव अणंतगुणा होदूण गच्छदि त्ति भणिदं होदि। जइ एवं किट्टीलक्खणेण बारसण्हं संगह-किट्टीणमण्णदरकिट्टीए एसा सुहुमसांपराइयकिट्टी सरिसा त्ति अभणिदूण जारिसी कोहस्स पढम-संगहकिट्टी तारिसी एसा सुहुमसांपराइयकिट्टी त्ति विसेसियूण भणंतस्स को अभिप्पाओ त्ति णासंकणिज्जं, जस्स वा तस्स वा कसायस्स जाए वा ताए वा किट्टीए एसा सुहुमसांपराइयकिट्टी सरिसा त्ति भण्णमाणे सम्ममत्थपडिबोहो आयामविसेसणिच्छओ च ण होदि त्ति कादूण तत्थ सुहुप्पबोहजणणट्ठं पढमकसायस्स पढमसंगहकिट्टिं चेव घेत्तूण सुत्ते तहा णिद्दिट्ठत्तादो। संपहि

---

§ ७४२. इस प्रकार कहनेवालेका अभिप्राय है कि जिस प्रकारकी अपने आयामसे क्रोधकी प्रथम संग्रह कृष्टि शेष संग्रह कृष्टियोंके आयामको देखते हुए द्रव्यके माहात्म्यवश संख्यातगुणी हो जाती है उसी प्रकार यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि भी क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिको छोड़कर शेष समस्त संग्रहकृष्टियोंके कृष्टिकरण कालके प्राप्त होनेवाले आयामसे संख्यातगुणे आयामवाली जाननी चाहिए, क्योंकि पूरे ही मोहनीयके द्रव्यके आधाररूपसे इसका परिणमन होता है।

§ ७४३. अथवा 'क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि जिस प्रकारकी होती है' ऐसा कहनेपर क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि जिस लक्षणवाली होकर अपूर्व स्पर्धकोंके नीचे अनन्तगुणी हीन होकर की गयी है, उसी प्रकारके लक्षणवाली यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि लोभकी तीसरी बादर साम्परायिक कृष्टिसे नीचे अनन्तगुणी हीन होकर की गयी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—अथवा जिस प्रकार क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि जघन्य कृष्टिसे लेकर उत्कृष्ट कृष्टि तक अनन्तगुणी हीन होकर गयी है उसी प्रकार यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि भी अपनी जघन्य कृष्टिसे लेकर अपनी उत्कृष्ट कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्तगुणी हीन होकर गयी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यद्यपि ऐसा है तो भी यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिके लक्षणकी अपेक्षा बारह संग्रह कृष्टियोंमें-से अन्यतर कृष्टिके सदृश होती है ऐसा न कहकर जैसी क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि होती है वैसी यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि है ऐसा विशेषरूपसे कहनेवाले आचार्यका क्या अभिप्राय है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि जिस किसी कषायकी जिस किसी कृष्टिके साथ यह सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि सदृश होती है ऐसा कथन करनेपर सम्यक् प्रकारसे अर्थका ज्ञान और आयामविशेषका निश्चय नहीं होता है ऐसा समझकर सुखपूर्वक ज्ञान करनेके लिए प्रथम कषायकी प्रथम संग्रहकृष्टिको ही ग्रहण करके सूत्रमें उस प्रकारसे निर्देश किया है।

पुणो वि एदिस्से चेव सुहुमसांपराइयकिट्टीए आयामविसेसजणिदमाहप्पपदंसणट्ठमुवरिममप्पाबहुअ-पबंधमाढवेइ —

*** कोहस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ थोवाओ ।**

§ ७४४. कोहपढमसंगहकिट्टीए जाओ अवयवकिट्टीओ ताओ उवरिमपदावेक्खाए थोवाओ त्ति भणिदं होदि । एदासिमायामपमाणं केत्तियमिदि भणिदे तेरसखंडमेत्तमिदि भणामो । ताणि तेरस खंडाणि कधमुप्पण्णाणि त्ति पुच्छिदे मोहणीयसयलपदेसपिंडस्स अट्ठमभागमेत्तं दव्वं कोहसंजलणो लहइ । पुणो एवमट्ठमभागदव्वमप्पणो तिसु वि संगहकिट्टीसु समयाविरोहेण विहंजिदूण चिट्ठदि त्ति पढमसंगहकिट्टीए मूलदव्वं मोहणीयसयलदव्वावेक्खाए चउवीसभागमेत्तं होदि । संपहि णोकसायदव्वं पि सव्वं तीए चेव समुवलद्धमिदि तेण सह तेरस-चउवीसभागा जादा । तेसिमेसा ठवणा $\frac{१३}{२४}$ । जदो एवं दव्वविसेसो, तदो तदणुसारेणेव पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीअद्धाणं पि तेरस-चउवीसभागमेत्तं चेव होदि त्ति सिद्धं ।

*** कोहे संछुब्भमाणस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ ।**

§ ७४५. तेरस-चउवीसभागमेत्तायामकोहपढमसंगहकिट्टी जाधे कोहविदियसंगहकिट्टीए उवरि पक्खित्ता होदि ताधे तिस्से अंतरकिट्टीआयामो चोद्दस-चउवीसभागमेत्तो होदि । पुणो विदियसंगहकिट्टिम्मि तदियसंगहकिट्टीए उवरि संपक्खित्ताए तिस्से आयामो पण्णारसचउवीस-

---

अब फिर भी इसी सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिके आयामविशेषरूप उत्पन्न हुए माहात्म्यको दिखलानेके लिए आगेके अल्पबहुत्वप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तरकृष्टियाँ सबसे थोड़ी हैं ।**

§ ७४४. क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी जो अवयव कृष्टियाँ हैं वे उपरिम कृष्टियोंकी अपेक्षा थोड़ी हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इनके आयामका प्रमाण कितना है ऐसा कहनेपर वह तेरह खण्ड (भाग) प्रमाण है ऐसा हम कहते हैं ।

शंका—वे तेरह खण्ड कैसे उत्पन्न होते हैं ?

समाधान—ऐसी पृच्छा होनेपर उत्तर देते हैं—मोहनीयके सम्पूर्ण प्रदेशपिण्डका आठवें भागप्रमाण द्रव्यको संज्वलन प्राप्त करता है । पुनः इस आठवाँ भागप्रमाण द्रव्य अपनी तीनों ही संग्रह कृष्टियोंमें समयके अविरोधपूर्वक विभक्त हो करके अवस्थित रहता है इस प्रकार प्रथम संग्रहकृष्टिका मूल द्रव्य मोहनोय कर्मके समस्त द्रव्यकी अपेक्षा चौबीस भागप्रमाण होता है । अब नोकषायका भी समस्त द्रव्य उसीमें उपलब्ध हो गया है, इसलिए उसके साथ क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिका सम्पूर्ण द्रव्य $\frac{१३}{२४}$ (तेरह बटे चौबीस) भागप्रमाण हो गया है । उसकी यह स्थापना—$\frac{१३}{२४}$ है, चूंकि द्रव्यविशेष इस प्रकार है, इसलिए उसके अनुसार ही प्रथम संग्रह कृष्टिकी अन्तर-कृष्टियोंका आयाम भी $\frac{१३}{२४}$ भागप्रमाण ही होता है यह सिद्ध हुआ ।

*** क्रोधमें संक्रमित होनेवाली प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तरकृष्टियाँ विशेष अधिक हैं ।**

§ ७४५. $\frac{१३}{२४}$ भागप्रमाण आयामवाली क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टि जब क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिके ऊपर प्रक्षिप्त होती है तब उसको अन्तरकृष्टियोंका आयाम $\frac{१४}{२४}$ भागप्रमाण होता है । पुनः दूसरी संग्रह कृष्टिके तीसरी संग्रहकृष्टिके ऊपर प्रक्षिप्त होनेपर उसका आयाम $\frac{१५}{२४}$ भाग-

भागमेत्तो होदि। पुणो कोहतदियसंगहकिट्टीए माणपढमसंगहकिट्टिम्मि पक्खित्ताए सोलसचउवीस-भागा होंति। एवं होदि त्ति कादूण तेरस-चउवीसभागमेत्तायामकोहपढमसंगहकिट्टीदो सोलस-चउवीसभागमेत्तायामा माणपढमसंगहकिट्टी विसेसाहिया जादा; तिण्हं चउवीसभागाणं पुव्वमसंताण-मेत्थपरिप्फुडमेव पदेसदंसणादो—१६/२४।

*** माणे संछुद्धे मायाए पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ।**

§ ७४६. इमाओ एगूणवीसखंडमेत्तायामाओ भवंति, पुव्विल्लायामम्मि माणविदिय-तदिय-संगहकिट्टीआयामेहिं सह अप्पणो मूलायामस्स जहाकममेव पवेसदंसणादो। तेण कारणेणेदाओ विसेसाहियाओ जादाओ १९/२४।

*** मायाए संछुद्धाए लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ।**

§ ७४७. एदाओ बावीसखंडमेत्तिओ भवंति, पुव्विल्लायामम्मि पुव्वमसंताणं तिण्हं खंडाण-मेत्थ पविट्ठाणमुवलंभादो। तेण कारणेण मायापढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणमायामो विसेसाहिओ जादो २२/२४।

*** सुहुमसांपराइयकिट्टीओ जाओ पढमसमये कदाओ ताओ विसेसाहियाओ।**

§ ७४८. एदाणि चउवीसखंडाणि भवंति। तेण कारणेण लोभपढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीण-

---

प्रमाण होता है। पुन: क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिके मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें प्रक्षिप्त होनेपर उसका आयाम १६/२४ भाग प्रमाण होता है। इस प्रकार होता है ऐसा समझकर १३/२४ भागप्रमाण आयामवाली क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिसे १६/२४ भागप्रमाण आयामवाली मानकी प्रथम संग्रहकृष्टि विशेष अधिक हो गयी है। यहाँपर पहिले असत्स्वरूप ३/२४ भागका स्पष्टरूपसे प्रवेश देखा जाता है—१६/२४।

*** मानके मायामें संक्रमित होनेपर उसकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तरकृष्टियाँ विशेष अधिक हैं।**

§ ७४६. ये १९/२४ भागप्रमाण आयामवाली होती हैं, क्योंकि पहिलेके आयाममें मानकी दूसरी व तीसरी संग्रहकृष्टियोंके आयामके साथ यहाँपर अपने मूल आयामका क्रमानुसार ही प्रवेश देखा जाता है। इस कारण ये विशेष अधिक हो गयी हैं—१९/२४।

*** मायाकी लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संक्रमित होनेपर उसकी अन्तरकृष्टियाँ विशेष अधिक हैं।**

§ ७४७. ये बावीस (२२) भागप्रमाण होती हैं, क्योंकि पहिले असत्स्वरूप प्रविष्ट तीन भाग यहां पहिलेके आयाममें उपलब्ध होते हैं इस कारण मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिकी अन्तर-कृष्टियोंका आयाम विशेष अधिक हो गया है—२२/२४।

*** जो सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियाँ प्रथम समयमें की गयी हैं वे विशेष अधिक हैं।**

§ ७४८. ये २४ (चौबीस) भागप्रमाण होती हैं। इस कारण लोभ संज्वलनकी प्रथम

मेक्कारसभागमेत्तो विसेसो एत्थ दट्ठव्वो। संपहि एदस्सेव विसेसाहियभावस्स फुडीकरणट्ठमुत्तर-सुत्तावयारो—

✻ एसो विसेसो अणंतराणंतरेण संखेज्जदिभागो।

§ ७४९. सुगमं। एवमेदेणायामविसेसेण परिच्छिण्णपमाणाणं सुहुमसांपराइयकिट्टीणमंतो-मुहुत्तकालमेदेणप्पाबहुअविहाणेण सरूवणिव्वत्ती होदि त्ति जाणावणफलो उत्तरसुत्तणिद्देसो—

✻ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ जाओ पढमसमये कदाओ ताओ बहुगाओ।

§ ७५०. सुगमं।

✻ विदियसमये अपुव्वाओ कीरंति असंखेज्जगुणहीणाओ।

§ ७५१. सुगमं।

✻ अणंतरवोणिधाए सव्विस्से सुहुमसांपराइयकिट्टीकरणद्धाए अपुव्वाओ सुहुम-सांपराइयकिट्टीओ असंखेज्जगुणहीणाए सढीए कीरंति।

§ ७५२. सुगममेदं पि सुत्तं। एवमंतोमुहुत्तमेत्तकालमसंखेज्जगुणहीणाए सेढीए अपुव्वा-पुव्वाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीए णिव्वत्तेमाणो सुहुमसांपराइयकिट्टीकरणद्धाए पढमसमयप्पहुडि पडिसमयमणंतगुणाए विसोहीए वड्ढमाणो असंखेज्जगुणमसंखेज्जगुणं पदेसग्गमोकड्डियूण तत्थ णिसिंचदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

कृष्टिकी अन्तरकृष्टियां ग्यारह (११) भागप्रमाण अधिक इसमें जानना चाहिए। अब इसी विशेष अधिकपनेका स्पष्टीकरण करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

✻ यह विशेष अनन्तर-अनन्तर विधिसे संख्यातवां भाग है।

§ ७४९. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार इस आयामविशेषके द्वारा ज्ञात प्रमाणवाली सूक्ष्म-साम्परायिक कृष्टियोंकी अन्तर्मुहूर्त काल तक इस अल्पबहुत्व विधिसे स्वरूप निष्पत्ति होती है यह ज्ञान करानेके फलस्वरूप आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

✻ जो सूक्ष्म साम्परायिक कृष्टियां प्रथम समयमें की गयी हैं वे बहुत होती हैं।

§ ७५०. यह सूत्र सुगम है।

✻ दूसरे समयमें जो अपूर्व कृष्टियां की जाती हैं वे असंख्यातगुणी हीन होती हैं।

§ ७५१. यह सूत्र सुगम है।

✻ इस प्रकार अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा समस्त सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकरण कालमें अपूर्व सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियां असंख्यातगुणहीन श्रेणीरूपसे की जाती हैं।

§ ७५२. यह सूत्र भी सुगम है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक असंख्यातगुणहीन श्रेणी-रूपसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकी अपूर्व-अपूर्व कृष्टियोंकी रचना करता हुआ सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकरण कालके प्रथम समयसे लेकर प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी विशुद्धिके द्वारा विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ असंख्यातगुणे-असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके उसमें सिंचन करता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* सुहुमसांपराइयकिट्टीसु पढमसमये पदेसग्गं दिज्जदि तं थोवं ।

§ ७५३. सुगमं ।

* विदियसमये असंखेज्जगुणं ।

§ ७५४. सुगमं ।

* एवं जाव चरिमसमयादो त्ति असंखेज्जगुणं ।

§ ७५५. सुगममेदं पि सुत्तं । एवं च ओकड्डिज्जमाणपदेसग्गस्स सुहुमसांपराइयकिट्टीसु णिसेगविसेसजाणावणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* सुहुमसांपराइयकिट्टीसु पढमसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो ।

§ ७५६. सुगमं ।

* तं जहा ।

§ ७५७. सुगमं ।

* जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गं बहुअं । विदियाए विसेसहीणमणंतभागेण । तदियाए विसेसहीणं । एवमणंतरोवणिधाए गंतूण चरिमाए सुहुमसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गं विसेसहीणं ।

---

* प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें जो प्रदेशपुंज दिया जाता है वह थोड़ा है ।

§ ७५३. यह सूत्र सुगम है ।

* दूसरे समयमें असंख्यातगुणा प्रदेशपुंज दिया जाता है ।

§ ७५४. यह सूत्र सुगम है ।

* इस प्रकार अन्तिम समयके प्राप्त होने तक प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणा प्रदेशपुंज दिया जाता है ।

§ ७५५. यह सूत्र भी सुगम है । इस प्रकार अपवर्त्यमान प्रदेशपुंजके सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें निषेकविशेषका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें प्रथम समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणाको बतलावेंगे ।

§ ७५६. यह सूत्र सुगम है ।

* वह जैसे ।

§ ७५७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य कृष्टिमें प्रदेशपुंज बहुत हैं । दूसरी कृष्टिमें अनन्तवें भाग विशेष हीन हैं । तीसरी कृष्टिमें विशेष हीन हैं । इस प्रकार अनन्तरोपनिधाके क्रमसे जाकर अन्तिम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें प्रदेशपुंज विशेष हीन हैं ।

§ ७५८. सुगममेदं पि सुत्तं। एवं च सुहुमसांपराइयकिट्टीसु णिसित्तासेसदव्वं तक्कालोकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जभागमेत्तमिदि घेत्तव्वं। संपहि एत्तो उवरि बादरकिट्टीसु सेसमसंखेज्जदिभागमेत्तदव्वमेदेण कमेण णिसिंचदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** चरिमादो सुहुमसांपराइयकिट्टीदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए दिज्जमाणगं पदेसग्गमसंखेज्जगुणहीणं।**

§ ७५९. चरिमाए सुहुमसांपराइयकिट्टीए अणंतरपरूविदबहुभागदव्वं सुहुमसांपराइयकिट्टीअद्धाणेण खंडिदेयखंडं चडिदद्धाणद्धामेत्तविसेसेहि परिहीणं कादूण णिसिंचदि। पुणो सेसमसंखेज्जदिभागमेत्तदव्वं बादरकिट्टीअद्धाणेण खंडिदेयखंडमेत्तं विसेसाहियं कादूण जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए णिसिंचदि। सरिसं च बादरसुहुमसांपराइयकिट्टीणमद्धाणमणंतरपरूविदेण णायेण। एदेण कारणेण चरिमादो सुहुमसांपराइयकिट्टीदो उवरि जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए णिसिंचमाणदव्वं पयारंतरपरिहारेणासंखेज्जगुणहीणमिदि होदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो।

*** तदो विसेसहीणं।**

§ ७६०. एत्तो उवरि सव्वत्थेव विसेसहीणं णिसिंचदि अणंतभागेण जाव चरिमबादरसांपराइयकिट्टि त्ति। एवं सुहुमसांपराइयकिट्टीकारयस्स पढमसमये दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढि-

---

§ ७५८. यह सूत्र भी सुगम है। इस प्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें निक्षिप्त हुआ सम्पूर्ण द्रव्य तत्काल अपकर्षित हुए समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अब इसके आगे बादर कृष्टियोंमें शेष असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको इस क्रमसे सींचता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र अवतीर्ण हुआ है—

*** अन्तिम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिसे जघन्य बादर साम्परायिक कृष्टिमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन है।**

§ ७५९. अन्तिम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिके अनन्तर पूर्व कहे गये बहुभाग द्रव्यको सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिके काल द्वारा एक भागप्रमाण द्रव्यको जितने स्थान आगे गये हैं उतने कालप्रमाण विशेषोंके द्वारा हीन करके सिंचन करता है। पुनः शेष असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको बादर कृष्टिके आयाम द्वारा भाजित करके एक भागप्रमाण द्रव्यको विशेष अधिक करके जघन्य बादर साम्परायिक कृष्टिमें सींचता है और इस प्रकार अनन्तर कहे गये न्यायके अनुसार बादर सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका आयाम समान होता है इस कारण अन्तिम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिसे ऊपर जघन्य बादर सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें सींचा जानेवाला द्रव्य अन्य प्रकारसे सम्भव न होनेके कारण संख्यातगुणा हीन है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

*** उससे आगे सर्वत्र उत्तरोत्तर विशेष हीन द्रव्यका सिंचन करता है।**

§ ७६०. इससे आगे सर्वत्र ही अन्तिम बादर साम्परायिक कृष्टिके प्राप्त होने तक उत्तरोत्तर अनन्तभागहीनके क्रमसे विशेष हीन द्रव्यका सिंचन करता है। इस प्रकार सूक्ष्म-

परूवणं कादूण संपहि एत्तो विदियसमये जो पवुत्तिविसेसो सुहुमसांपराइयकिट्टीकरणपडिबद्धो तण्णिण्णयकरणट्ठमुवरिमो सुत्तपबधो—

* सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगो विदियसमये अपुव्वाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ करेदि असंखेज्जगुणहीणाओ ।

* ताओ दोसु ठाणेसु करेदि ।

* तं तहा—

* पढसमये कदाणं हेट्ठा च अंतरे च ।

* हेट्ठा थोवाओ ।

* अंतरेसु असंखेज्जगुणाओ ।

§ ७६१. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । एवं विदियसमये सुहुमसांपराइयकिट्टीओ णिव्वत्तेमाणस्स पुव्वापुव्वसुहुमसांपराइयकिट्टीसु बादरसांपराइयकिट्टीसु च तक्कालोकड्डिदपदेसग्गस्स केरिसो सेढिपरूवणा होदि त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाढवेइ—

* विदियसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणा ।

§ ७६२. सुगमं ।

साम्परायिक कृष्टिकारकके प्रथम समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणीप्ररूपणा करके अब इससे दूसरे समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकारकसे सम्बन्ध रखनेवाली जो प्रवृत्तिविशेष होती है उसका निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकारक क्षपक जीव दूसरे समयमें असंख्यातगुणी होन अपूर्व सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको करता है ।

* उन कृष्टियोंको दो स्थानोंमें करता है ।

* वह जैसे ।

* प्रथम समयमें की गयी कृष्टियोंके नीचे करता है, अन्तरालमें करता है ।

* नीचे थोड़ी कृष्टियोंको करता है ।

* तथा अन्तरालोंमें असंख्यातगुणी कृष्टियोंको करता है ।

§ ७६१. ये सूत्र सुगम हैं । इस प्रकार दूसरे समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंकी रचना करनेवाले क्षपक जीवके पूर्व और अपूर्व सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें तथा बादरसाम्परायिक कृष्टियोंमें तत्काल अपकर्षित होनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा कैसी होती है ऐसी आशंकाके निर्णयका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

* अब दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा कहते हैं ।

§ ७६२. यह सूत्र सुगम है ।

* जा विदियसमये जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तिस्से पदेसग्गं दिज्जदि बहुअं।

§ ७६३. पढमसमयोकड्डिददव्वादो असंखेज्जगुणं पदेसग्गमोकड्डियूण विदियसमये पुव्वापुव्वकिट्टीसु जहापविभागं णिसिंचमाणो तत्थ जा विदियसमये जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तक्कालमेव णिव्वत्तिज्जमाणा तिस्से बहुअं पदेसग्गं णिसिंचदि त्ति सुत्तत्थो। सेसं सुगमं।

* विदियाए किट्टीए अणंतभागहीणं।

§ ७६४. सुगमं।

* एवं गंतूण पढमसमये जा जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तत्थ असंखेज्जदिभागहीणं।

§ ७६५. एत्थ कारणं जहा किट्टीकरणद्धाए पुव्वापुव्वकिट्टीणं संधिविसये परूविदं तहा चेव परूवेयव्वं; विसेसाभावादो।

* तत्तो अणंतभागहीणं जाव अपुव्वं णिव्वत्तिज्जमाणगं ण पावदि।

७६६. तत्तो परमणंतराणंतरादो अणंतभागहीणं कादूण णिक्खिवमाणो गच्छदि जाव ओकड्डणभागहारमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण तम्मि उद्देसे किट्टी अंतरे णिव्वत्तिज्जमाणमपुव्वकिट्टी-

---

* जो दूसरे समयमें जघन्य सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि है उसमें बहुत प्रदेशपुंज दिया जाता है।

§ ७६३. प्रथम समयमें अपकर्षित हुए द्रव्यसे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके दूसरे समयमें पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंमें यथाविभाग सिंचन करता हुआ क्षपक जीव वहाँ जो दूसरे समयमें जघन्य सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि उसी समय निर्वर्त्यमान कृष्टि है उसमें बहुत प्रदेशपुंजको सिंचित करता है यह इस सूत्रका अर्थ है। शेष कथन सुगम है।

* दूसरी कृष्टिमें अनन्तभागहीन प्रदेशपुंजका सिंचन करता है।

§ ७६४. यह सूत्र सुगम है।

* इस प्रकार जाकर प्रथम समयमें जो जघन्य सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि है उसमें असंख्यातवें भागहीन द्रव्यको सींचता है।

§ ७६५. यहाँपर कृष्टिकरण कालसम्बन्धी पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंकी सन्धियोंमें जिस प्रकार कारणका कथन किया है उसी प्रकार प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

* उसके आगे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टिके प्राप्त होने तक अनन्तभागहीन द्रव्यका सिंचन करता है।

§ ७६६. उससे आगे अनन्तर-अनन्तर क्रमसे अनन्तभागहीन करके सिंचन करता हुआ यह क्षपक जीव तबतक जाता है जब जाकर अपकर्षणभागहारप्रमाण अध्वान ऊपर जाकर उस स्थानपर कृष्टि अंतरालमें निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टिको प्राप्त करके तदनन्तर अधस्तन पूर्व कृष्टि

पावेदूण तदणंतरहेट्ठिमपुव्वकिट्टिं पत्तो त्ति एदम्मि अद्धाणे अणंतभागहाणिं मोत्तूण पयारंतरा-संभवाणुवलंभादो। पुणो एदम्मि संधिविसये जो परूवणाविसेसो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** अपुव्वाए णिव्वत्तिज्जमाणिगाए किट्टीए असंखेज्जदिभागुत्तरं।**

§ ७६७. जहा किट्टीकरणद्धाए पुव्वकिट्टीणं चरिमादो अपुव्वकिट्टीए णिसिंचमाणपदेसग्गस्स कारणं भणिदं तहा चेव एत्थ वि वत्तव्वं, विसेसाभावादो। एत्तो उवरि पुव्वकिट्टीए असंखेज्जदि-भागहीणं पदेसणिसेगं कुणदि, तत्थ पुव्वावट्ठिदपदेसग्गस्स परिहाणीए विणा दोण्हमेयगोवुच्छा-याराणुप्पत्तीदो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** पुव्वणिव्वत्तिदं पडिवज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागहीणं।**

§ ७६८. सुगमं। एवमुवरि वि जत्थ जत्थ पुव्वापुव्वकिट्टीणं संधिविसयो होदि तत्थ तत्थ एसो चेव अत्थो परूवेयव्वो। संपहि एत्तो उवरि पुव्वकिट्टीसु अणंतभागहीणो चेव पदेसविण्णासो सव्वत्थ वट्टव्वो, तत्थ पयारंतरासंभवादो त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** परं परं पडिवज्जमाणगस्स अणंतभागहीणं।**

§ ७६९. पुव्वकिट्टीदो अपुव्वकिट्टिमपुव्वकिट्टीदो च पुव्वकिट्टिं पडिवज्जमाणस्स संधि-विसये अणंतरपरूविदो असंखेज्जदिभागुत्तरो असंखेज्जदिभागहीणो च पदेसणिसेगो होदि। पुणो

प्राप्त नहीं हो जाती, क्योंकि इस स्थानमें अनन्त भागहानिको छोड़कर प्रकारान्तर सम्भव नहीं है। पुनः इस सन्धिमें जो प्ररूपणा भेद है उसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

*** आगे निर्वर्त्यमान अपूर्व कृष्टिमें असंख्यातभाग अधिक प्रदेशपुंजका सिंचन करता है।**

§ ७६७. जिस प्रकार कृष्टिकरण कालमें पूर्व कृष्टियोंसे लेकर अपूर्व कृष्टिके अन्तिम समय तक सींचे जानेवाले प्रदेशपुंजके कारणका कथन किया है उसी प्रकार यहां भी कथन करना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। इससे आगे पूर्व कृष्टिमें असंख्यातवें भागहीन प्रदेश-पुंजको देता है, क्योंकि उसमें पहलेसे अवस्थित प्रदेशपुंजकी हानिके बिना दोनों कृष्टियोंकी एक गोपुच्छाकारकी उत्पत्ति हो नहीं सकती है इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

*** पहले निर्वर्तित कृष्टिमें प्रतिपद्यमान प्रदेशपुंजका असंख्यातवां भागहीन प्रदेशपुंज दिया जाता है।**

§ ७६८. यह सूत्र सुगम है। इस प्रकार आगे भी जहां-जहां पूर्व और अपूर्व कृष्टियोंका सन्धि-विषयक स्थान होता है वहां-वहां इसी अर्थका कथन करना चाहिए। अब इससे आगे पूर्व कृष्टियोंमें अनन्त भागहीन ही प्रदेशपुंजको सर्वत्र जानना चाहिए, क्योंकि वहां पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है इस बातका कथन करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** इससे आगे उत्तरोत्तर प्रतिपद्यमान कृष्टिसम्बन्धी सन्धिमें अनन्तभागहीन द्रव्य प्रदेश-पुंज दिया जाता है।**

§ ७६९. पूर्व कृष्टिसे अपूर्व कृष्टिको और अपूर्व कृष्टिसे पूर्व कृष्टिको प्राप्त होनेवालेकी सन्धिमें अनन्तर कहा गया असंख्यातवां भाग अधिक और असंख्यातवां भागहीन प्रदेशनिषेक

इमं विसयं मोत्तूण सेसेसु सव्वेसु ट्ठाणेसु पुव्वकिट्टीदो पुव्वकिट्टिं पडिवज्जमाणस्स अणंतभागहीणो चेव पदेसविण्णासो दट्ठव्वो, तत्थ संभवंतराणुवलंभादो त्ति वुत्तं होइ। एवमेदेण बीजपदेण संधीओ जाणिदूण णेदव्वं जाव चरिमसमयसुहुमसांपराइयकिट्टि त्ति। चरिमादो सुहुमसांपराइयकिट्टीदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए दिज्जमाणपदेसग्गमसंखेज्जगुणहीणं होदि। कारणं पुव्वं व वत्तव्वं। एवमेसो कमो ताव णेदव्वो जाव चरिमसमयबादरसांपराइयो त्ति। संपहि इममेव अत्थविसेसं फुडीकरेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** जो विदियसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स विधी सो चेव विधी सेसेसु वि समयेसु जाव चरिमसमयबादरसांपराइयो त्ति।**

§ ७७०. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमेत्तिएण पबंधेण सुहुमसांपराइयकिट्टीसु दिज्जमाणयस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं समाणिय संपहि तत्थेव पढमसमयप्पहुडि दिस्समाणपदेसग्गमेदेण सरूवेण चिट्ठदि त्ति जाणावणट्ठमुवरिमं पबंधमाढवेइ—

*** सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगस्स किट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं।**

§ ७७१. सुगमं।

*** तं जहा।**

§ ७७२. सुगमं।

होता है, पुनः इस विषयको छोड़कर शेष सम्पूर्ण स्थानोंमें पूर्व कृष्टिसे पूर्व कृष्टिको प्राप्त होनेवाले अनन्तभागहीन ही प्रदेशपुंजविन्यास जानना चाहिए, क्योंकि वहांपर दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार इस बीज पदके द्वारा सन्धियोंको जानकर अन्तिम समयवर्ती कृष्टिके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए। पुनः अन्तिम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिसे जघन्य बादरसाम्परायिक कृष्टिमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन होता है। कारणका कथन पहलेके समान करना चाहिए। इस प्रकार यह क्रम बादरसाम्परायिकके अन्तिम समय तक जानना चाहिए। अब इसी अर्थविशेषको स्पष्ट करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** जो दूसरे समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी विधि है वही विधि बादरसाम्परायिकके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक सब समयोंमें जाननी चाहिए।**

§ ७७० यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा सूक्ष्मसाम्परायिकसम्बन्धी कृष्टियोंमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब वहींपर प्रथम समयसे लेकर दिखनेवाला प्रदेशपुंज इस रूपसे अवस्थित रहता है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** आगे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकारकके कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करते हैं।**

§ ७७१. यह सूत्र सुगम है।

*** वह जैसे।**

§ ७७२. यह सूत्र सुगम है।

*** जहण्णियाए सुहुमसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गं बहुगं तत्तो अणंतभागहीणं जाव चरिमसुहुमसांपराइयकिट्टि त्ति ।**

§ ७७३. सुगमं ।

*** तदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं ।**

§ ७७४. किं कारणं ? बादरकिट्टीहिंतो पदेसग्गस्स संखेज्जदिभागं चेव ओकड्डियूण सुहुमकिट्टीओ णिव्वत्तेमाणस्स तत्थ दिस्समाणयपदेसग्गादो बादरकिट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्सासंखेज्जगुणत्तसिद्धीए बाहाणुवलंभादो । एत्तो उवरि बादरसांपराइयकिट्टीसु अणंतरोवणिधाए विसेसहीणमणंतभागेण दिस्समाणपदेसग्गं दट्ठव्वं; तत्थ पयारंतरासंभवादो । एसा च दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणा सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगस्स पढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमयबादरसांपराइओ त्ति ताव अप्पडिसिद्धा दट्ठव्वा त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** एसा सेढिपरूवणा जाव चरिमसमयबादरसांपराइओ त्ति ।**

§ ७७५. गयत्थमेदं सुत्तं । संपहि सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणं पविट्ठस्स पढमसमये सुहुमकिट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढीपरूवणा केरिसी होदि त्ति जादासंकस्स सिस्सस्स णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

*** पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स वि किट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्स सा चेव सेढिपरूवणा ।**

*** जघन्य सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें दिखनेवाला प्रदेशपुंज बहुत है उससे आगे सूक्ष्मसाम्परायिककी अन्तिम कृष्टिके प्राप्त होने तक दिखनेवाला प्रदेशपुंज अनन्त भागहीन होता है ।**

§ ७७३. यह सूत्र सुगम है ।

*** तदनन्तर जघन्य बादर साम्परायिककृष्टिमें दिखनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा हीन है ।**

§ ७७४. क्योंकि बादर कृष्टिसे प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका ही अपकर्षण करके सूक्ष्म साम्परायिक कृष्टियोंकी रचना करनेवालेके वहाँ दिखनेवाले प्रदेशपुंजसे बादर कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजके असंख्यातगुणेकी सिद्धिमें बाधा नहीं पायी जाती । इसके आगे बादरसाम्परायिक कृष्टियोंमें अनन्तरोपनिधाकी अपेक्षा अनन्तभागरूपसे विशेष हीन दिखनेवाला प्रदेशपुंज जानना चाहिए, क्योंकि उसमें दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है । और वह दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा सूक्ष्मसाम्परायिकके अन्तिम समय तक बिना रुकावटके जाननी चाहिये इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** वह श्रेणीप्ररूपणा बादरसाम्परायिकके अन्तिम समय तक जाननी चाहिए ।**

§ ७७५. यह सूत्र गतार्थ है । अब सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें प्रवेश करनेवाले जीवके प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा कैसी होती है ऐसी जिसे आशंका हुई है ऐसे शिष्यको आशंकारहित करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

*** प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके भी कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी वही श्रेणिप्ररूपणा होती है ।**

§ ७७६. जा एसा चरिमसमयबादरसांपराइयमवहिं कादूण सुहुमकिट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणा अणंतरमेव परूविदा सा चेव पढमसमये सुहुमसांपराइयस्स वि वत्तव्वा, विसेसाभावादो त्ति वुत्तं होइ। णवरि तत्थ बादरसांपराइयकिट्टीणं पि संभवो अत्थि त्ति तासु दिस्समाणपदेसग्गमसंखेज्जगुणं होदूण भिण्णगोवुच्छायारेण णिद्दिट्ठं. एत्थ पुण बादरसांपराइयकिट्टीसु समवट्ठिदपदेसग्गं सव्वमेव णवकबंधुच्छिट्ठावलियवज्जं सुहुमसांपराइयकिट्टीसरूवेण परिणमिय एयगोवुच्छायारेण वट्टव्वमिदि एदस्स विसेसस्स जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

*** णवरि सेचीयादो जदि बादरसांपराइयकिट्टीओ धरेदि तत्थ पदेसग्गं विसेसहीणं होज्ज।**

§ ७७७. सेचीयादो सेचीयसंभवमस्सियूण जइ किह वि एसो पढमसमयसुहुमसांपराइओ बादरसांपराइयकिट्टीओ धरेदि तो तत्थ दिस्समाणपदेसग्गं विसेसहीणमेव होज्ज त्ति सुत्तत्थसंबंधो। एवं च भणंतस्सायमहिप्पाओ—अणियट्टिकरणचरिमसमए बादरकिट्टीसु दीसमाणपदेसपिंडो सुहुमसांपराइयकिट्टीसु दीसमाणपदेसपिडादो[1] असंखेज्जगुणमेत्तो अत्थि। पुणो से काले पढमसमयसुहुमसांपराइयभावे वट्टमाणस्स बादरकिट्टीगदं सव्वमेव पदेसग्गं सुहुमकिट्टीसरूवेणेव परिणमियूण चिट्ठदि। एवं च सुहुमकिट्टीसरूवेण परिणदपदेससंतकम्मं बादरकिट्टीसरूवेण तदवत्थाए णत्थि

§ ७७६ अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिकको मर्यादा करके सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी जो यह श्रेणिप्ररूपणा अनन्तरपूर्व ही कह आये हैं वही श्रेणिप्ररूपणा सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम समयमें भी करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इतनी विशेषता है कि वहाँपर बादरसाम्परायिक कृष्टियोंका भी सम्भव है, इसलिए उनमें दिखनेवाला प्रदेशपुंज असंख्यातगुणा होकर भिन्न गोपुच्छाकाररूपसे निर्दिष्ट किया गया है, परन्तु यहाँपर बादरसाम्परायिक कृष्टियोंमें अवस्थित हुआ पूरा ही प्रदेशपुंज नवकबन्ध उच्छिष्टावलिको छोड़कर सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिरूपसे परिणमनकर एक गोपुच्छाकाररूपसे होता है ऐसा जानना चाहिए, इस प्रकार इस विशेषका ज्ञान करानेके लिये आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

*** इतनी विशेषता है कि सेचीयरूपसे यदि बादरसाम्परायिक कृष्टियोंको धरता है तो वहाँपर प्रदेशपुंज विशेष हीन होता है।**

§ ७७७. सेचीयरूपसे अर्थात् सेचीय सम्भवका आश्रय करके यदि किसी प्रकार यह प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक जीव बादरसाम्परायिक कृष्टियोंको धरता है तो वहाँपर दिखनेवाला प्रदेशपुंज विशेष हीन ही होता यह इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। और इस प्रकार कहनेवाले आचार्यका अभिप्राय है—अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें बादर कृष्टियोंमें दिखनेवाला प्रदेशपिण्ड सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपिण्डसे असंख्यातगुणा होता है। पुनः तदनन्तर समयमें प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक भावमें विद्यमान क्षपक जीवके बादर कृष्टिगत समस्त प्रदेशपुंज सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिरूपसे ही परिणमकर अवस्थित रहता है। और इस प्रकार सूक्ष्म कृष्टिरूपसे परिणत हुआ प्रदेशसत्कर्म उस अवस्थामें बादरकृष्टिरूपसे नहीं ही है। वहाँपर यद्यपि सूक्ष्म

१. ता. प्रतौ दीसमाणपदेसपिंडो इति पाठः।

चेव, तत्थ जइ वि पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स बादरकिट्टीणमच्चंताभावो चेव तो वि सेचीय-संभवमस्सियूण तासिमत्थित्तं बुद्धीए परिकप्पिय तव्विसया सेढिपरूवणा किह वि पयट्टाविज्जदि। तो वि तत्थ दिस्समाणपदेसग्गं सुहुमकिट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गादो विसेसहीणमेव होज्ज, ण तत्तो असंखेज्जगुणं, एयगोवुच्छसरूवेण तक्कालमेव किट्टीगदसयलदव्वस्स परिणामणियमदंसणादो त्ति। तम्हा संभवसच्चमस्सियूण पयट्टत्तादो ण सुत्तमेदमसंभवदोसदूसियमिदि पडिवज्जेयव्वं। एवमेत्तिएण पबंधेण सुहुमसांपराइयकिट्टीकारयस्स तत्थ दिज्जमाणदिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि सुहुमसांपराइयकिट्टीओ णिव्वत्तेमाणस्स तदवत्थाए लोभविदिय-तदियबादरसांपराइयकिट्टीहिंतो पदेससंतकम्मस्स पवुत्तिविसेसावहारणट्ठमुवरिमप्पाबहुअपबंधमाढवेइ—

*** सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु लोभस्स चरिमादो बादरसांपराइयकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं थोवं।**

§ ७७८. सुहुमसांपराइयकिट्टीओ करेमाणो लोभस्स विदिय-तदियसांपराइयकिट्टीहिंतो पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डणासंकमेण सुहुमसांपराइयकिट्टीसु संकामेदि। एवं च संकामेमाणस्स तत्थ चरिमादो बादरसांपराइयकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीसु जं पदेसग्गमोकड्डणावसेण संकमदि तं थोवमिदि वुत्तं होइ।

*** लोभस्स विदियकिट्टीदो चरिमबादरसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं।**

साम्परायिकके प्रथम समयमें बादर कृष्टियोंका अत्यन्त अभाव ही है तो भी सेचीय सम्भवका आश्रय करके बुद्धिमें उनके अस्तित्वकी परिकल्पना करके तद्विषयक श्रेणिप्ररूपणा कथमपि प्रवर्त करायी गयी है तो भी वहाँपर दिखनेवाला प्रदेशपुंज सूक्ष्म कृष्टियोंमें दिखनेवाले प्रदेशपुंजसे विशेष हीन ही होवे, उससे असंख्यातगुणा नहीं होवे, क्योंकि एक गोपुच्छारूपसे उसी समय कृष्टिगत समस्त द्रव्यके परिणामका नियम देखा जाता है। इसलिये सम्भव सत्यका आश्रय लेकर इस सूत्रके प्रवर्त होनेसे यह सूत्र असम्भव दोषसे दूषित नहीं होता यह निश्चय करना चाहिए। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकारकके उस अवस्थामें दिये जानेवाले और दिखनेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको निर्वर्त्यमान क्षपक जीवके उस अवस्थामें लोभकी दूसरी और तीसरी बादर साम्परायिक कृष्टियोंमें-से प्रदेश सत्कर्मकी प्रवृत्तिविशेषका अवधारण करनेके लिए अल्पबहुत्व प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये जानेपर लोभकी अन्तिम बादर साम्परायिक कृष्टिसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें स्तोक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।**

§ ७७८ सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंको करनेवाला क्षपक जीव लोभकी दूसरी व तीसरी साम्परायिक कृष्टियोंमें-से प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागको अपकर्षण संक्रम द्वारा सूक्ष्म साम्परायिक कृष्टियोंमें संक्रमित करता है। और इस प्रकार संक्रम करनेवाले क्षपकके वहाँपर अन्तिम बादर साम्परायिक कृष्टिसे सूक्ष्म साम्परायिक कृष्टियोंमें जो प्रदेशपुंज अपकर्षणवश संक्रमित होता है वह थोड़ा है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** लोभकी दूसरी कृष्टिसे अन्तिम बादर साम्परायिक कृष्टिमें संख्यातगुणे प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।**

§ ७७९. किं कारणं ? लोभतदियसंगहकिट्टीपदेसादो विदियसंगहकिट्टीपदेसग्गस्स संखेज्जगुणत्तादो।

* लोभस्स विदियकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं।

§ ७८०. लोभस्स तदियसंगहकिट्टीआयामादो सुहुमसांपराइयकिट्टीआयामो संखेज्जगुणो भवदि, एदेण कारणेण संखेज्जगुणायामाणुसारेण तत्थ संकामिज्जमाणपदेसग्गं पि संखेज्जगुणमेवेत्ति णिच्छेयव्वं, पडिग्गहमाहप्पाणुसारेणेव पडिग्गेज्झसंकममाणदव्वस्स पवुत्तिअब्भुवगमादो। संपहि एदस्सेव सुहुमसांपराइयकिट्टीविसयस्स पदेससंकमप्पाबहुअस्स फुडीकरणट्ठमेत्थ संबंधागयं बादरसांपराइयकिट्टीविसयं पदेससंकमप्पाबहुअं बादरकिट्टीवेदगपढमसमयप्पहुडि परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरमाढवेइ—

* पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहस्स विदियकिट्टीदो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं थोवं।

§ ७८१. किट्टीकरणद्धाए णिट्ठिदाए से काले कोहपढमसंगहकिट्टीमोकड्डियूण वेदेमाणो पढमसमयकिट्टीवेदगो णाम। तस्स कोहविदियसंगहकिट्टीदो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए जं पदेसग्गमधापवत्तसंकमेण संकमदि तं सव्वत्थोवं, एत्तो अण्णस्स संकमदव्वस्स थोवयरस्स पयदविसये संभवाणुवलंभादो।

---

§ ७७९. क्योंकि लोभकी तृतीय संग्रहकृष्टिके प्रदेशपुंजसे दूसरी संग्रहकृष्टिका प्रदेशपुंज संख्यातगुणा है।

* लोभकी दूसरी कृष्टिसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिमें संख्यातगुणे प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

§ ७८० क्योंकि लोभकी तीसरी संग्रहकृष्टिके आयामसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिका आयाम संख्यातगुणा होता है, इस कारण संख्यातगुणे आयामके अनुसार उसमें संक्रामित होनेवाला प्रदेशपुंज भी संख्यातगुणा ही होता है ऐसा निश्चय करना चाहिए, क्योंकि प्रतिग्रहके माहात्म्यके अनुसार ही प्रतिग्रह्य संक्रममाण द्रव्यकी प्रवृत्ति स्वीकार की गयी है। अब इसी सूक्ष्म साम्परायिक कृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्वका स्पष्टीकरण करनेके लिए यहाँपर सम्बन्धवश प्राप्त बादरसाम्परायिक कृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्वका बादर कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर प्ररूपणा करते हुए आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

*. कृष्टिवेदकके प्रथम समयमें क्रोधकी दूसरी कृष्टिसे मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें अल्प प्रदेशपुंजको संक्रमण करता है।

§ ७८१. कृष्टिकरणकालके समाप्त होनेपर तदनन्तर समयमें क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिका अपकर्षण करके वेदन करनेवाला जीव प्रथम समयवर्ती कृष्टिवेदक कहलाता है। क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें जो प्रदेशपुंज अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा संक्रमित होता है वह सबसे स्तोक है, क्योंकि प्रकृत विषयमें इससे अन्य संक्रम द्रव्य स्तोकतर नहीं उपलब्ध होता।

*** कोहस्स तदियकिट्टीदो माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं।**

§ ७८२. एत्थ कारणं वुच्चदे—जा अणुभागेण थोवा संगहकिट्टी तिस्से पदेसग्गं बहुअं होइ, बहुगादो च पदेसादो संकामिज्जमाणपदेसग्गं पि बहुअं चेव होदि त्ति एदेण कारणेण पुव्विल्ल-संकमदव्वादो एदं संकमदव्वं विसेसाहियं जादं। केत्तियमेत्तो विसेसो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेयखंडमेत्तो।

*** माणस्स पढमादो किट्टीदो मायाए पढमकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं।**

§ ७८३. एत्थ चोदओ भणइ—किट्टीकरणद्धाए एक्कारस मूलगाहा पडिबद्धाओ। तत्थ जा तदियमूलगाहा सा तिण्णि अत्थे भणइ। तत्थ जो पढमो अत्थो तम्मि विहासिज्जमाणे बारसण्हं संगहकिट्टीणं पदेसग्गेण अप्पाबहुअं भणिदं। तं कधं ? माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं थोवं। विदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। तदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं, कोहस्स विदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं, तस्सेव तदियसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। पुणो माया-लोभाणं तिण्हं संगहकिट्टीणं पदेसग्गं जहाकममेव विसेसाहियं होदूण णिवदिदं। एत्थ पुण पदेससंकमे भण्णमाणे माणतदियकिट्टीपदेसादो विसेसाहियभावेण ट्ठिदकोहविदियसंगह-किट्टीदो माणपढमसंगहकिट्टीए अधापवत्तसंकमेण संकममाणपदेसग्गं थोवं भणिदं। तत्तो माण-

---

*** क्रोधकी तीसरी कृष्टिसे मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।**

§ ७८२. यहांपर कारणका कथन करते हैं—जो अनुभागकी अपेक्षा स्तोक संग्रहकृष्टि है उसका प्रदेशपुंज बहुत होता है, और बहुत प्रदेशोंसे संक्रम्यमाण प्रदेशपुंज भी बहुत ही होता है। इस कारण पहलेके संक्रम द्रव्यसे यह संक्रम द्रव्य विशेष अधिक हो गया है।

शंका—कियन्मात्र विशेष अधिक हो गया है ?

समाधान—पल्योपमके असंख्यातवें भागसे भाजित करनेपर जो एक भागप्रमाण प्रदेश-पुंज प्राप्त होता है तन्मात्र विशेष अधिक हो गया है।

*** मानकी प्रथम कृष्टिसे मायाकी प्रथम कृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।**

§ ७८३. शंका—यहांपर शंकाकार कहता है—कृष्टिकरणकालमें ग्यारह मूल गाथायें प्रति-बद्ध हैं। उनमें जो तीसरी मूलगाथा है वह तीन अर्थोंका कथन करती है। उनमें जो प्रथम अर्थ है उसका विशेष व्याख्यान करनेपर वहांपर बारह संग्रह कृष्टियोंका प्रदेशपुंजकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कह आये हैं। वह कैसे ? इसका उत्तर करते हुए कहा है—'मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें स्तोक प्रदेश-पुंज होता है। दूसरी संग्रह कृष्टिमें उससे विशेष अधिक प्रदेशपुंज होता है। उसोकी तीसरी संग्रह कृष्टिमें उससे विशेष अधिक प्रदेशपुंज होता है। क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिमें उससे विशेष अधिक प्रदेशपुंज होता है। तीसरी संग्रहकृष्टिमें उससे विशेष अधिक प्रदेशपुंज होता है। पुनः माया और लोभ-की तीनों संग्रह कृष्टियोंका प्रदेशपुंज यथाक्रम विशेष अधिक हो करके प्राप्त होता है। परन्तु यहांपर प्रदेशसंक्रमका कथन करनेपर मानकी तीसरी कृष्टिके प्रदेशपुंजसे विशेष अधिकरूपसे स्थित क्रोधकी दूसरी संग्रह कृष्टिसे मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा संक्रमित होनेवाला प्रदेश-

पढमसंगहकिट्टीए कोहतदियसंगहकिट्टीदो अधापवत्तसंकमेणेव संकममाणपदेसग्गं विसेसाहियमिदि भणिदूण पुणो एदस्सुवरि माणस्स पढमसंगहकिट्टीदो मायाए पढमसंगहकिट्टीए अधापवत्तसंकमेण संकममाणयं पदेसग्गं विसेसाहियमिदि णिद्दिट्ठं। एदं च ण समंजसं; थोवपदेसपिंडादो बहुदयरं संकामेदि बहुगादो च थोवयरं संकामेदि त्ति एवंविहत्थस्स जुत्तिविरुद्धत्तादो त्ति ?

एत्थ परिहारो वुच्चदे – एसो पदेससंकमो कत्थ वि आधारपधाणो, कत्थ वि आधेयपहाणो, कत्थ वि तदुभयपहाणो होदूण पयट्टदे। एत्थ वुण आहारपहाणत्तविवक्खाए पडिग्गहदव्वाणुसारेण संकमपवुत्ती जेणावलंबिदो तेण कोहतदियसंगहकिट्टीपदेससंकमस्स पडिग्गहभूदमाणपढमसंगहकिट्टिपदेसग्गादो माणपढमसंगहकिट्टिपदेससंकमस्स पडिग्गहभावेण ट्ठिदमायापढमसंगहकिट्टीपदेसग्गस्स विसेसाहियत्तादो तदाधारभूदपदेससंकमो विसेसाहियो जादो। विसेसपमाणमेत्थ पडिग्गहदव्वाणुसारेण आवलियाए असंखेज्जदिभागपडिभागियमिदि गहेयव्वं।

*** माणस्स विदियादो संगहकिट्टीदो मायाए पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं।**

पुंज थोड़ा कहा गया है। पुनः उसके बाद मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें क्रोधकी तीसरी संग्रह कृष्टिसे अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा संक्रमित होनेवाला प्रदेशपुंज विशेष अधिक है ऐसा कहकर पुनः इसके ऊपर मानकी प्रथम संग्रह कृष्टिसे मायाकी प्रथम संग्रह कृष्टिमें अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा संक्रमित होनेवाला प्रदेशपुंज विशेष अधिक है' ऐसा निर्देश किया गया है। परन्तु यह ठीक नहीं है, क्योंकि 'स्तोक प्रदेशपिण्डसे बहुत अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है और बहुत प्रदेश पुंजसे स्तोकतर प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है 'इस प्रकारका अर्थ युक्तिविरुद्ध है'।

समाधान—अब इस शंकाका परिहार करते हैं—यह प्रदेशसंक्रम कहींपर आधारप्रधान, कहींपर आधेयप्रधान और कहींपर तदुभयप्रधान होकर प्रवृत्त होता है, परन्तु यहाँपर आधारप्रधानकी विवक्षामें प्रतिग्रह द्रव्यके अनुसार यतः संक्रमकी प्रवृत्तिका अवलम्ब लिया गया है, इस कारण क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिके प्रदेशसंक्रमका प्रतिग्रहभूत मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिके प्रदेशपुंजसे तथा मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिके प्रदेशसंक्रमका प्रतिग्रहरूपसे स्थित मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिके प्रदेशपुंजके विशेष अधिक होनेसे उसका आधारभूत प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक हो जाता है। यहाँपर विशेषका प्रमाण प्रतिग्रह द्रव्यके अनुसार आवलिके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

विशेषार्थ—कृष्टिकरणकालके प्रसंगसे जो तीसरी मूलगाथा १६९ है उसके तीन अर्थोंमेंसे प्रथम अर्थके व्याख्यानके प्रसंगसे भाष्यगाथा (११७—१७०) में १२ संग्रहकृष्टियोंके प्रदेशसंक्रमके अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए वहाँ जो क्रम स्वीकार किया गया है उससे यहाँ स्वीकार किये गये प्रदेशक्रममें जो अन्तर है उसको लक्ष्यमें रखकर जो समाधान किया गया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि यहाँ न तो आधेयप्रधान संक्रम विवक्षित है और न ही तदुभयप्रधान संक्रम विवक्षित है। किन्तु आधारप्रधान प्रदेशसंक्रम यहाँपर विवक्षित है। इसी कारण पूर्व कथनसे इस कथनमें थोड़ा अन्तर हो गया है।

*** मानकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।**

✻ माणस्स तदियादो संगहकिट्टीदो मायाए पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं ।

✻ मायाए पढमसंगहकिट्टीदो लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं ।

✻ मायाए विदियादो संगहकिट्टीदो लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं ।

✻ मायाए तदियादो संगहकिट्टीदो लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ ७८४. एत्थ सव्वत्थ संतकम्माणुसारेणेव विसेसाहियत्तं जादमिदि वट्ठव्वं । सेसं सुगमं ।

✻ लोभस्स पढमकिट्टीदो लोभस्स चेव विदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ ७८५. एत्थ वि संतकम्माणुसारेणेव विसेसाहियत्तं जादमिदि घेत्तव्वं । एत्थ चोदओ भणइ—कोहविदियसंगहकिट्टिप्पहुडि हेट्ठा णिवदिदासेससंकमदव्वमधापवत्तसंकमेणेव गहिदं; तत्थ पयारंतरासंभवादो । एसो पुण ओकड्डणासंकमो, तदो पुव्विल्लसंकमदव्वादो असंखेज्जगुणेणदेण

✻ मानकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

✻ मायाकी प्रथम संग्रहकृष्टिसे लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

✻ मायाकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

✻ मायाकी तीसरी संग्रहकृष्टिसे लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

§ ७८४. यहाँ सर्वत्र सत्कर्मके अनुसार ही विशेष अधिकपना हो जाता है ऐसा जानना चाहिए। शेष कथन सुगम है।

✻ लोभकी प्रथम कृष्टिसे लोभकी ही दूसरी संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।

§ ७८५. यहाँपर भी सत्कर्मके अनुसार ही विशेष अधिकपना हो गया है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

शंका—यहाँपर शंकाकार कहता है—क्रोधकी दूसरी संग्रहकृष्टिसे लेकर नीचे पतित होनेवाला सम्पूर्ण संक्रम द्रव्य अधःप्रवृत्त संक्रमके क्रमसे ही ग्रहण किया जाता है, क्योंकि वहाँपर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। परन्तु यह अपकर्षण संक्रम है, इसलिए पहिलेके संक्रम द्रव्यसे यह असंख्यातगुणा होना चाहिए, क्योंकि अधःप्रवृत्त भागहारसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार सर्वत्र असंख्यातगुणा होता है। ऐसा उपदेश है ?

होदव्वं, अधापवत्तभागहारादो ओकड्डुक्कड्डुणभागहारस्स सव्वत्थासंखेज्जगुणहीणत्तोवएसादो त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—सच्चमेदं, भागहारविसेसे जोइज्जमाणे तहा चेव होदि त्ति। किंतु भागहारविसेसो एत्थ णत्थि, परिणाममाहप्पमस्सियूण अधापवत्तभागहारस्स ओकड्डुणभागहाराणुसारेणेव एदम्मि विसये पवुत्तिणियमावलंबणादो। ण चेदमसिद्धं, एदम्हादो चेव सुत्तादो पयदत्थसिद्धिसमवलंबणादो। ण च सव्वत्थेव ओकड्डुक्कड्डुणभागहारादो अधापवत्तभागहारस्सासंखेज्जगुणत्तणियमो अत्थि, अववादविसयमेदं मोत्तूणण्णत्थ तस्स तहाभावाब्भुवगमादो। तम्हा एदम्मि विसये अधापवत्तसंकमादो ओकड्डुणसंकमस्स भागहारविसेसो णत्थि त्ति सिद्धमेदस्स दव्वविसेसमस्सियूण विसेसाहियत्तं।

*** लोभस्स चेव पढमसंगहकिट्टीदो तस्स चेव तदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं।**

§ ७८६. एसो वि ओकड्डुणसंकमो चेव। किंतु पुव्विल्लपडिग्गहादो संपहियपडिग्गहो विसेसाहिओ, तेण तव्विसयसंकमो वि विसेसाहिओ जादो।

*** कोहस्स पढमसंगहकिट्टीदो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं।**

§ ७८७ लोभपढमसंगहकिट्टीपदेससंतकम्मादो कोहपढमसंगहकिट्टीए पदेससंतकम्मं तेरसगुणं होइ, तेण तत्तो संकामिज्जमाणपदेसग्गं पि संखेज्जगुणं चेव जादं। सेसं सुगमं।

समाधान—यहांपर उक्त शंकाका परिहार करते हैं—यह सच है, भागहार विशेषके देखनेपर उसी प्रकार है। किन्तु यहांपर भागहार विशेष नहीं है, क्योंकि परिणामके माहात्म्यका आश्रय करके अधःप्रवृत्त भागहारकी अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके अनुसार ही इस विषयमें प्रवृत्तिके नियमका अवलम्बन लिया गया है। और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि इसी सूत्रसे प्रकृत अर्थकी सिद्धिका अवलम्बन हो जाता है परन्तु सर्वत्र ही अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे अधःप्रवृत्त भागहारके असंख्यातगुणेपनेका नियम नहीं है, क्योंकि इस अपवादके विषयको छोड़कर अन्यत्र उसे उसी प्रकारसे स्वीकार किया गया है। इसलिए इस विषयमें अधःप्रवृत्त संक्रमसे अपकर्षण संक्रमकी अपेक्षा भागहार विशेष नहीं है। इसलिए इसके द्रव्यविशेषका आश्रय करके विशेषाधिकपना सिद्ध हो जाता है।

*** लोभकी ही प्रथम संग्रहकृष्टिसे उसीकी तीसरी संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेशपुंजको संक्रमित करता है।**

§ ७८६. यह भी अपकर्षण संक्रम ही है। किन्तु पहिलेके प्रतिग्रहसे साम्प्रतिक प्रतिग्रह विशेष अधिक है। इसलिए उसको विषय करनेवाला संक्रम भी विशेष अधिक हो जाता है।

*** क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिसे मानकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें संख्यातगुणे प्रदेशपुंजको संक्रम करता है।**

§ ७८७. लोभकी प्रथम संग्रहकृष्टिके प्रदेश सत्कर्मसे क्रोधकी प्रथम संग्रहकृष्टिमें प्रदेश सत्कर्म तेरहगुणा है, इसलिए उससे संक्रामत होनेवाला प्रदेशपुंज भी संख्यातगुणा ही हो जाता है। शेष कथन सुगम है।

* कोहस्स चेव पढमसंगहकिट्टीदो कोहस्स चेव तदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं ।

§ ७८८. पुव्विल्लपडिग्गहादो एसो पडिग्गहो विसेसाहिओ, तेण कारणेण संकमदव्वमेदं विसेसाहियमिदि णिद्दिट्ठं ।

* कोहस्स पढमकिट्टीदो कोहस्स चेव विदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं ।

§ ७८९. उदीरिज्जमाणकिट्टीदो तदणंतरहेट्ठिमकिट्टीए गच्छमाणपदेसग्गं सव्वेहिंतो बहुगं होदि, तदायारेण तस्स सव्वस्सेव पच्चासण्णकालेण परिणमणणियमदंसणादो । तेण पुव्विल्ल-पडिग्गहादो जइ वि एसो पडिग्गहो विसेसहीणो तो वि एत्थतणसंकमदव्वं संखेज्जगुणमेवेत्ति घेत्तव्वं ।

* एसो पदेससंकमो अइक्कंतो वि उक्खेदिदो सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु आसओ त्ति कादूण ।

§ ७९०. एदस्सत्थो वुच्चदे—एसो पदेससंकमो बादरकिट्टीविसयो 'अइक्कंतो वि उक्खे-दिदो' अइक्कंतावसरो वि संतो पुणरुक्खिविदूण भणिदो । किमट्ठमेवं भणिज्जदि त्ति चे ? 'सुहुम-सांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु आसओ त्ति कादूण' सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु जो पदेस-संकमो पदिदो तस्स कारणभूदो त्ति कादूण अइक्कंतावसरो वि होंतो एसो पदेससंकमो पुणरुच्चइदूण भणिदो त्ति वुत्तं होइ । कधमेसो बादरकिट्टीविसयो पदेससंकमो सुहुमसांपराइय-

---

* क्रोधकी ही प्रथम संग्रहकृष्टिसे क्रोधकी ही तीसरी संग्रहकृष्टिमें विशेष अधिक प्रदेश-पुंजको संक्रम करता है ।

§ ७८८. पहलेके प्रतिग्रहसे यह प्रतिग्रह विशेष अधिक है । इस कारण यह संक्रम द्रव्य विशेष अधिक है ऐसा निर्देश किया है ।

* क्रोधकी प्रथम कृष्टिसे क्रोधकी ही दूसरी संग्रह कृष्टिमें संख्यातगुणे प्रदेशपुंजको संक्रम करता है ।

§ ७८९. उदीयमान कृष्टिसे तदनन्तर अधस्तन कृष्टिमें संक्रमित होनेवाला प्रदेशपुंज सबसे अधिक होता है, क्योंकि तदाकार-रूपसे उस सबके ही प्रत्यासन्न कालके साथ परिणमनका नियम देखा जाता है । इस कारण पहलेके प्रतिग्रहसे यद्यपि यह प्रतिग्रह विशेष हीन है तो भी यहाँका संक्रम द्रव्य संख्यातगुणा ही है ऐसा ग्रहण करना चाहिए ।

* यह प्रदेशसंक्रम यद्यपि अतिक्रान्त हो गया है तो भी सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंका आश्रयभूत है ऐसा समझकर पुनः उठाकर कहा गया है ।

§ ७९०. अब इसका अर्थ कहते हैं—बादरकृष्टिका विषयभूत यह प्रदेशसंक्रम यद्यपि 'अइक्कंतो वि उक्खेदि दो' अतिक्रान्त अवसरको प्राप्त होता हुआ भी पुनः उठाकर कहा गया है ।

शंका—ऐसा किस लिए कहा जाता है ?

समाधान—सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये जानेमें आश्रयभूत है ऐसा समझकर अर्थात् सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये जानेमें जो प्रदेशसंक्रम प्राप्त होता है उसका कारणभूत है ऐसा

किट्टीविसयस्स पदेससंकमस्स आसयभूदो त्ति चे ? वुच्चदे—सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु तव्विसयस्स पदेससंकमस्स गुणगारो भणिदो; लोभबिदियबादरसांपराइयकिट्टीदो तस्सेव चरिमबादरसांपराइयकिट्टीए संकममाणपदेसग्गादो सुहुमकिट्टीसु संकममाणं पदेसग्गं संखेज्जगुणं होदि त्ति। एवंविहो च पदेससंकमगुणगारो ण केवलमिदाणिं चेव पयट्टदे, किंतु पुव्वं पि बादरकिट्टीविसये संखेज्जगुणपदेसग्गादो पच्चासत्तिविसेसमस्सियूण संखेज्जगुणो चेव पदेससंकमो जहासंभवं पयट्टमाणो तदणुसारेणेव एत्थ वि तहा पयट्टो त्ति एवंविहत्थविसेसजाणावणदुवारेण सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु एस पदेससंकमो आसयभूदो जादो।

§ ७९१ अण्णं च पुव्वमेदोए पणालीए जहाकममागंतूण लोभविदियबादरसांपराइयकिट्टीसरूवेण परिणमिय पुणो तत्तो सुहुमसांपराइयकिट्टीसरूवेण परिणममाणो पदेसपिंडो एवं परिणमदि त्ति जाणावणमुहेण एसो बादरकिट्टीविसयो पदेससंकमो सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु आसयभूदो जादो, अण्णहा पयददव्वमाहप्पविणिण्णयोवायाभावादो।

§ ७९२. अधवा पुव्वं बादरकिट्टीविसयस्स पदेससंकमस्स आणुपुव्वीविसेसो चेव कोहविदियकिट्टीवेदगावसरे भणिदो, ण पुणो तत्थ तव्विसयत्थोवबहुत्तपरिक्खा आढत्ता, तदो तत्थ परूवणाजोग्गो एसो पदेससंकमप्पाबहुअविही अइक्कंतावसरो वि एण्हिमुवक्खेविदो सुहुमसांपराइयकिट्टीसु

समझकर अतिक्रान्त अवसरको प्राप्त होता हुआ भी यह प्रदेशसंक्रम पुनः उठाकर कहा गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यह बादरकृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रमका आश्रयभूत कैसे है ?

समाधान—कहते हैं—सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये जानेमें तद्विषयक प्रदेशसंक्रमका गुणकार कहा। लोभकी दूसरी बादरसाम्परायिक कृष्टिसे उसीकी अन्तिम बादरसाम्परायिक कृष्टिमें संक्रम्यमाण प्रदेशपुंजसे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें संक्रमित होनेवाला प्रदेशपुंज संख्यातगुणा होता है। और इस प्रकारका प्रदेशसंक्रमका गुणकार केवल इसी समय नहीं प्रवृत्त हुआ है, किन्तु पहले भी बादर कृष्टिके विषयमें संख्यातगुणे प्रदेशपुंजसे प्रत्यासत्तिविशेषका आश्रय करके संख्यातगुणा ही प्रदेससंक्रम यथासम्भव प्रवर्तमान होता हुआ उसके अनुसार ही यहाँपर भी उस प्रकारसे प्रवृत्त हुआ है, इस प्रकार इस अर्थविशेषका ज्ञान करानेके द्वारा सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये जानेमें यह प्रदेशसंक्रम आश्रयभूत हो गया है।

§ ७९१. दूसरी बात यह है कि पहले इस प्रणाली द्वारा क्रमसे आकर लोभकी दूसरी बादरसाम्परायिक कृष्टिरूपसे परिणमन करके पुनः उससे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिरूपसे परिणमन करनेवाला प्रदेशपिण्ड इस प्रकार परिणमन करता है, इस प्रकारका ज्ञान करानेके द्वारा यह बादरकृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रम सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये जानेमें आश्रयभूत हो गया है, क्योंकि अन्यथा प्रकृति द्रव्यके माहात्म्यके निर्णयके उपायका अभाव है।

§ ७९२. अथवा पहले बादरकृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रमका आनुपूर्वीविशेष ही क्रोधकी दूसरी कृष्टिवेदकके अवसरपर कह आये हैं, परन्तु वहाँपर तद्विषयक अल्पबहुत्वकी परीक्षा आरम्भ नहीं की गयी है, इसलिये वहाँपर प्ररूपणाके योग्य यह प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्वकी विधि अतिक्रान्तरूप अवसरवाली होकर भी इस समय उसकी प्ररूपणा अपेक्षित है। सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंके किये

कीरमाणीसु किं कारणं पुव्वपरूविदत्थविसये विसेसणिण्णयहेउत्तेणासयभूदो त्ति काद्रूण, तम्हा सुहुमसांपराइयकिट्टीविसयपदेससंकमपरूवणापसंगेण बादरसांपराइयकिट्टीविसओ वि पदेससंकमप्पाबहुअविही परूविदो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। एवमेदं पदेससंकमप्पाबहुवविहिं जाणाविय संपहि सुहुमसांपराइयकिट्टीकरणद्धाविसयं परूवणाविसेसं पुणो वि परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरमाढवेइ—

※ सुहुमसांपराइयकिट्टीसु पढमसमये दिज्जदि पदेसग्गं थोवं।

※ बिदियसमये असंखेज्जगुणं जाव चरिमसमयादो त्ति ताव असंखेज्जगुणं।

§ ७९३ समये समये अणंतगुणवड्ढिवड्ढीहिं परिणामेहिं वड्ढमाणो एसो पडिसमयमसंखेज्जगुणं पदेसग्गमोकड्डियूण जाव बादरसांपराइयचरिमसमयो त्ति ताव सुहुमसांपराइयकिट्टीसरूवेण परिणमेदि त्ति भणिदं होदि।

※ एदेण कमेण लोभस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिया समयाहिया सेसा त्ति तम्हि समये चरिमसमयबादरसांपराइओ।

§ ७९४. गयत्थमेदं सुत्तं। एवं चरिमसमयबादरसांपराइयभावे वट्टमाणस्स तक्कालभाविओ जो परूवणाविसेसो तण्णिण्णयकरणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

जानेमें पहले कहे गये अर्थके विषयमें किस कारणसे विशेष निर्णयमें हेतुरूपसे आश्रयभूत है ऐसा समझकर उससे सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रमकी प्ररूपणाके प्रसंगसे बादर साम्परायिक कृष्टिविषयक प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्वविधि कही गयी है यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इस प्रकार इस प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्व विधिका ज्ञान कराकर अब सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिकरण कालविषयक प्ररूपणाविशेषका फिर भी प्ररूपण करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

※ प्रथम समयसम्बन्धी सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें अल्प प्रदेशपुंजको देता है।

※ दूसरे समयसम्बन्धी सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें अन्तिम समयके प्राप्त होने तक असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है।

§ ७९३. समय-समयमें अनन्तगुणवृद्धिरूप परिणामोंके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होता हुआ वह क्षपक जीव प्रतिसमय असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके बादर साम्परायिकके अन्तिम समय तक सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टिरूपसे परिणमाता है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है।

※ इस क्रमसे लोभकी दूसरी कृष्टिका वेदन करनेवाले क्षपक जीवके उसकी जो प्रथम स्थिति होती है उसकी एक समय अधिक जब एक आवलि शेष रह जाती है उस समय जीव अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिक होता है।

§ ७९४. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिकभावमें विद्यमान इस क्षपक जीवके तत्काल होनेवाला जो प्ररूपणा भेद है उसका निर्णय करनेके लिये आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

* तम्हि चेव समये लोभस्स चरिमसमयबादरसांपराइयकिट्टी संछुब्भमाणा संछुद्धा ।

§ ७९५. तम्हि चेवाणियट्टिचरिमसमये लोभस्स चरिमबादरसांपराइयकिट्टी पुव्वमेवाढविय जहाकमं संछुब्भमाणा णिरवसेसं सुहुमसांपराइयकिट्टीसु संसुद्धा त्ति वुत्तं होइ । एदं च उप्पादाणुच्छेदमस्सियूण परूविदं, अण्णहा से काले पढमसमयसुहुमसांपराइयभावे वट्टमाणस्स णिरुद्धबादरसांपराइयकिट्टीए सुहुमकिट्टीसु णिरवसेसं संछोहयभावदंसणादो । ण केवलं तदियबादरसांपराइयकिट्टी चेव ताधे सुहुमसांपराइयकिट्टीसु संछुद्धा, किंतु लोभविदियबादरसांपराइयकिट्टीए वि णवकबंधुच्छिट्ठावलियवज्जं सव्वमेव पदेसग्गं तत्थ संछुद्धमिदि जाणावेमाणो इदमाह—

* लोभस्स विदियकिट्टीए वि दोआवलियबंधे समयूणे मोत्तूण उदयावलियपविट्ठं च मोत्तूण सेसाओ बिदियकिट्टीए अंतरकिट्टीओ संछुब्भमाणीओ[२] संछुद्धाओ ।

§ ७९६. गयत्थमेदं सुत्तं । संपहि एत्थेव समये सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदिबंध-ट्ठिदिसंतकम्मपमाणावहारणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

* तम्हि चेव लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तं ।

§ ७९७. अणियट्टि०चरिमसमयजहण्णट्ठिदिबंधस्स लोभसंजलणविसयस्स तप्पमाणत्ताण-

---

* उसी समय लोभकी अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिककृष्टि संक्रमणको प्राप्त होती हुई संक्रमित हो जाती है ।

§ ७९५. अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें लोभकी अन्तिम बादरसाम्परायिककृष्टि पहले ही आरम्भ होकर क्रमसे संक्रमित होती हुई पूरी सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंमें संक्रमित हो जाती है । यह उक्त कथनका तात्पर्य है । किन्तु यह कथन उत्पादानुच्छेदका आश्रय लेकर कहा है, अन्यथा तदनन्तर समयमें प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकभावमें विद्यमान इस क्षपक जीवके विवक्षित बादरसाम्परायिककृष्टिके सूक्ष्मकृष्टियोंमें पूरा संक्रमणभाव देखा जाता है । केवल तीसरी बादरसाम्परायिककृष्टि ही उस समय सूक्ष्मसाम्परायिककृष्टियोंमें संक्रमित नहीं हुई है, किन्तु लोभकी दूसरी बादर साम्परायिककृष्टिके भी नवकबन्ध और उच्छिष्टावलिको छोड़कर पूरा ही प्रदेशपुंज उसमें संक्रमित हुआ है इस बातका ज्ञान कराते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

* लोभकी दूसरी कृष्टिके भी एक समय कम दो आवलिप्रमाण नवकबन्धको छोड़कर और उदयावलिमें प्रविष्ट हुए द्रव्यको छोड़कर शेष सब दूसरी कृष्टिकी अन्तरकृष्टियाँ संक्रम्यमाण होती हुई संक्रमित हो जाती हैं ।

§ ७९६. यह सूत्र गतार्थ है । अब इसी समयमें सब कर्मोंके स्थितिबन्ध और स्थितिसत्कर्मके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* उसी समय लोभ संज्वलनका स्थितिबन्ध अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है ।

§ ७९७. अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयमें लोभ संज्वलनविषयक जघन्य स्थितिबन्धके

इवक्कमादो एत्थेव मोहणीयस्स बंधवोच्छेदो दट्ठव्वो, एत्तो उवरि तब्बंधकारणपरिणामाण-मसंभवादो।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो अहोरत्तस्स अंतो।

§ ७९८ पुव्विल्लसंधिविसये दिवसपुधत्तमेत्तो एदेसिं ट्ठिदिबंधो तत्तो जहाकमं परिहाइदूण अहोरत्तस्संतो मुहुत्तपुधत्तिओ होदूण पयट्टदि त्ति वुत्तं होइ।

* णामागोदवेदणीयाणं बादरसांपराइयस्स जो चरिमो ट्ठिदिबंधो सो संखेज्जेहिं वस्ससहस्सेहिं हाइदूण वस्सस्स अंतो जादो।

§ ७९९. सुगममेदं सुत्तं।

* चरिमसमयबादरसांपराइयस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममंतोमुहुत्तं।

* तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि।

* णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि।

§ ८०० एदाणि सुत्ताणि। सुगमाणि एवमणियट्टिकरणद्धं समाणिय संपहि एत्तो से काले जहावसरपत्तं सुहुमसांपराइयगुणट्ठाणं पडिवज्जमाणस्स जो परूवणापबंधो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तर-सुत्तारंभो—

* से काले पढमसमयसुहुमसांपराइयो जादो।

तत्प्रमाणपनेका अतिक्रम न होनेके कारण यहींपर मोहनीयकी बन्धव्युच्छित्ति जाननी चाहिए, क्योंकि इसके आगे उसके बन्धके कारणभूत परिणामोंका होना असम्भव है।

* तीन घातिया कर्मोंका स्थितिबन्ध कुछ कम दिन-रात प्रमाण होता है।

§ ७९८. पूर्वोक्त सन्धिस्थानमें दिवसप्रथक्त्वप्रमाण कर्मोंका स्थितिबन्ध होता था पुनः उससे क्रमशः घटकर कुछ कम दिनरातके भीतर मुहूर्तप्रथक्त्वप्रमाण होकर प्रवृत्त रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* नाम, गोत्र और वेदनीयकर्मोंका बादरसाम्परायिक क्षपक जीवके जो अन्तिम स्थिति-बन्ध होता है वह संख्यात हजार वर्षसे घटकर एक वर्षके भीतर हो जाता है।

§ ७९९. यह सूत्र सुगम है।

* अन्तिम समयवर्ती बादरसाम्परायिक क्षपक जीवके मोहनीयकर्मका स्थितिसत्कर्म अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है।

* तीन घातिकर्मोंका स्थितिसत्कर्म संख्यात हजार वर्षप्रमाण होता है।

* नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मोंका स्थितिसत्कर्म असंख्यात वर्षप्रमाण होता है।

§ ८००. ये सूत्र सुगम हैं। इस प्रकार अनिवृत्तिकरणके कालको समाप्त करके अब इसके आगे तदनन्तर समयमें यथावसर प्राप्त सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानको प्राप्त होनेवाले क्षपक जीवके-का जो प्ररूपणाप्रबन्ध है उसका निर्देश करनेके लिए आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

* तदनन्तर समयमें यह क्षपक जीव प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिक हो जाता है।

§ ८०१. बादरकिट्टीवेदगद्धासमत्तिसमणंतरमेव सुहुमकिट्टीओ ओकड्डियूण वेदेमाणो ताधे पढमसमयसुहुमसांपराइयभावेणेसो परिणदो त्ति वुत्तं होइ।

*** ताधे चेव सुहुमसांपराइयकिट्टीणं जाओ ट्ठिदीओ तदो ट्ठिदिखंडयमागाइदं।**

§ ८०२. तम्मि चेव सुहुमसांपराइयपढमसमए लोभसंजलणसुहुमकिट्टीणं जाओ ट्ठिदीओ अंतोमुहुत्तपमाणाओ तत्तो संखेज्जदिभागमेत्तं ट्ठिदिखंडयं गहेदुमाढत्तमिदं वुत्तं होइ। मोहणीयाणुभागस्स किट्टीगदस्स जा अणुसमयोवट्टणा पुव्वपरूविदा सा तहा चेव पयट्टदि त्ति दट्ठव्वा, तत्थ णाणत्ताभावादो। णाणावरणादिकम्माणं पि ट्ठिदि-अणुभागघादा पुव्वं व पयट्टंति त्ति ण तत्थ वि परूवणाभेदो आढत्तो। संपहि तत्थतणपदेसग्गमोकड्डियूण कधं णिसिंचदि त्ति आसंकाए णिण्णयविहाणट्ठमुवरिमसुत्तारंभो—

*** तदो पदेसग्गमोकड्डियूण उदये थोवं दिण्णं।**

§ ८०३. सुहुमसांपराइयकिट्टीणमुक्कीरिज्जमाणाणुक्कीरिज्जमाणट्ठिदीहिंतो पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डियूण पुणो ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जे भागे पुध ट्ठविय तदसंखेज्जदिभागमेत्तपदेसग्गं गुणसेढीए णिसिंचमाणो उदयट्ठिदीए थोवयरमेव पदेसग्गमसंखेज्जसमयपबद्धपमाणं णिसिंचदि त्ति वुत्तं होदि।

---

§ ८०१. बादरकृष्टियोंके वेदककालके समाप्त होनेके समनन्तर ही सूक्ष्मसाम्परायिककृष्टियोंको अपकर्षित करके वेदन करता हुआ यह क्षपक जीव उस समय प्रथम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकभावसे परिणत हो जाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** उसी समय सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंकी जो स्थितियाँ हैं उनमेंसे स्थितिकाण्डकको ग्रहण करता है।**

§ ८०२. उसी सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम समयमें लोभ संज्वलनसम्बन्धी सूक्ष्मकृष्टियोंकी अन्तर्मुहूर्त प्रमाण जो स्थितियाँ हैं उनमेंसे संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकको ग्रहण करनेके लिए आरम्भ करता है। कृष्टिगत मोहनीयके अनुभागकी जो अनुसमय अपवर्तना पहले कह आये हैं वह उसी प्रकार प्रवृत्त रहती है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि उसमें नानापनेका अभाव है। इसी प्रकार ज्ञानावरणादि कर्मोंका भी स्थितिघात और अनुभागघात पहलेके समान प्रवृत्त रहता है, उसमें भी प्ररूपणाभेद नहीं आरम्भ होता है। अब वहाँसम्बन्धी प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके किस प्रकार सिंचन करता है ऐसी आशंका होनेपर निर्णयका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

*** उसके बाद प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके उदयमें अल्प द्रव्य दिया गया है।**

§ ८०३. सूक्ष्मसाम्परायिककृष्टियोंकी उत्कीर्यमाण और अनुत्कीर्यमाण स्थितियोंमेंसे प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके पुनः अपकर्षित समस्त द्रव्यके असंख्यात बहुभागप्रमाण प्रदेशपुंजको पृथक् स्थापित करके उसके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रदेशपुंजको गुणश्रेणिरूपसे सिंचन करता हुआ उदय स्थितिमें स्तोकतर ही असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण प्रदेशपुंजका सिंचन करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* अंतोमुहुत्तद्धमेत्तमसंखेज्जगुणाए सेढीए देदि ।

§ ८०४. उदयट्ठिदीए णिसित्तपदेसपिंडादो असंखेज्जगुणं पदेसग्गं तत्तो अणंतरोवरिमट्ठिदीए णिसिंचदि । तत्तो वि असंखेज्जगुणं पदेसग्गं तदुवरि ट्ठिदीए णिसिंचदि । एवमणंतराणंतरादो असंखेज्जगुणं पदेसग्गं णिसिंचमाणो गच्छदि जाव अंतोमुहुत्तमेत्तद्धाणमुवरि गंतूणेत्थतणगुणसेढिसीसयं जादं त्ति । एदं च गुणसेढिअद्धाणमेत्थतणसयलंतरायामस्स संखेज्जदिभागमेत्तमिदि घेत्तव्वं । संपहि एदस्सेव गुणसेढिणिक्खेवायामस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तणिद्देसो—

* गुणसेढिणिक्खेवो सुहुमसांपराइयद्धादो विसेसुत्तरो ।

§ ८०५. सुहुमसांपराइयद्धा अंतोमुहुत्तमेत्ती होदि । तत्तो विसेसुत्तरो एसो गुणसेढिणिक्खेवायामो दट्ठव्वो, तत्तो संखेज्जभागब्भहियत्तेणेदस्स गुणसेढिणिक्खेवायामस्स पवुत्तिदंसणादो । णाणावरणादिकम्माणं पि तक्कालभाविओ गलिदगुणसेढिणिक्खेवायामो सुहुमसांपराइयद्धादो विसेसुत्तरो होदूण पयट्टमाणो एत्तो अंतोमुहुत्तद्धाणमुवरि चडिदूण वट्ठदि त्ति दट्ठव्वो; खीणकसायद्धाणं पि पि बोलेयूण तस्सावट्ठाणणियमदंसणादो । एवमेदम्मि अद्धाणे ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागं गुणसेढीए णिक्खिविय पुणो सेसबहुभागदव्वमेत्तो उवरिमासु ट्ठिदीसु णिसिंचमाणो कधं णिसिंचदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

* गुणसेढीसीसगादो जा अणंतरट्ठिदी तत्थ असंखेज्जगुणं ।

---

* उसे अन्तर्मुहूर्तकाल तक असंख्यातगुणे श्रेणीरूपसे देता है ।

§ ८०४ उदयस्थितिमें निक्षिप्त किये गये प्रदेशपुंजसे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको उससे अनन्तर उपरिम स्थितिमें सींचता है । फिर उससे भी असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको उससे ऊपरकी स्थितिमें सिंचन करता है । इस प्रकार अनन्तर अनन्तररूपसे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका सिंचन करता हुआ तबतक जाता है जब अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयाम ऊपर जाकर यहाँसम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्ष प्राप्त हो जाता है, परन्तु यह गुणश्रेणि आयाम यहाँसम्बन्धी समस्त अन्तर आयामके संख्यातवें भागप्रमाण होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अब इसी गुणश्रेणिनिक्षेपके आयामको स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

* वह गुणश्रेणिनिक्षेप सूक्ष्मसाम्परायिकके कालसे विशेष अधिक होता है ।

§ ८०५. सूक्ष्मसाम्परायिककाल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण होता है, अतः उससे विशेष अधिक यह गुणश्रेणिनिक्षेपका आयाम जानना चाहिए, क्योंकि उससे इस गुणश्रेणि निक्षेपके आयामकी संख्यातवें भाग अधिक प्रवृत्ति देखी जाती है । ज्ञानावरणादि कर्मोंका भी तत्कालभावी गलित गुणश्रेणि निक्षेपसम्बन्धी आयाम सूक्ष्मसाम्परायिकके कालसे विशेष अधिक प्रवृत्त होता हुआ इससे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयाम ऊपर जाकर अवस्थित रहता है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि क्षीणकषायके कालको बिताकर उसके अवस्थानका नियम देखा जाता है। इस प्रकार इस आयाममें अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागको गुणश्रेणिमें निक्षिप्त करके पुनः शेष बहुभागप्रमाण द्रव्यको इससे ऊपरकी स्थितियोंमें सिंचन करता हुआ किस प्रकार सिंचन करता है ऐसी आशंकाके होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रको आरम्भ करते हैं—

* गुणश्रेणि-शीर्षसे जो तदनन्तर स्थिति है उसमें असंख्यातगुणे द्रव्यको देता है ।

§ ८०६ अंतरद्धाणस्स संखेज्जदिभागे चेव पयदगुणसेढीसीसगे [संजादे तत्तो अणंतरोवरिमा जा अणंतरट्ठिदी तत्थ गुणसेढिसीसये णिसित्तपदेसग्गादो असंखेज्जगुणं पदेसग्गं णिसिंचदि त्ति भणिदं होदि। ण चेदस्स दव्वस्स गुणसेढिसीसयदव्वादो असंखेज्जगुणत्तमसिद्धं, ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जेसु भागेसु तप्पाओग्गसंखेज्जरूवेहिं खंडिदेसु तत्थेयखंडं विदियट्ठिदीए णिवददि त्ति पुध ट्ठविय तत्थतणसंखेज्जे भागे घेत्तूण अंतरट्ठिदीसु समयाविरोहेण णिसिंचमाणस्स परिप्फुडमेव पयददव्वस्स गुणसेढिसीसयदव्वादो असंखेज्जगुणत्तसिद्धिदंसणादो। एत्तो परमंतरट्ठिदीसु अणंतराणंतरादो एगेगगोवुच्छविसेसहाणीए पदेसविण्णासं कुणदि जाव अंतरचरिमट्ठिदि त्ति इममत्थविसेसं पदुप्पाएमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** तत्तो विसेसहीणं ताव जाव पुव्वसमये अंतरमासी तस्स अंतरस्स चरिमादो अंतरट्ठिदिदो त्ति।**

§ ८०७. कुदो ? अंतरट्ठिदीसु ओकड्डिदसयलदव्वस्स संखेज्जे भागे घेत्तूण सत्थाणे एयगोवुच्छायारेण णिसिंचमाणस्स पयारंतरासंभवादो। तम्हा एवंविहेण पदेसविण्णासेण अंतरमावूरेदि त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। एवमंतरट्ठिदीसु पदेसविण्णासं कादूण पुणो एत्तो परं विदियट्ठिदीए जा आदिट्ठिदी तत्थ केरिसं पदेसविण्णासं कुणदि त्ति आसंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

---

§ ८०६. अन्तरके आयामके संख्यातवें भागमें ही प्रकृत गुणश्रेणिशीर्षके हो जानेपर उससे अनन्तर जो उपरिम अनन्तर स्थिति है वहाँ गुणश्रेणिशीर्षमें निक्षिप्त किये गये प्रदेशपुंजसे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका सिंचन करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। और यह द्रव्य गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यसे असंख्यातगुणा है, यह बात असिद्ध नहीं है, क्योंकि अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यात भागोंमें तत्प्रायोग्य असंख्यातरूपोंके द्वारा भाजित करनेपर उनमें-से एक भागप्रमाण द्रव्य दूसरी स्थितिमें पतित होता है इस प्रकार इस द्रव्यको पृथक् स्थापित करके वहाँसम्बन्धी संख्यात बहुभाग द्रव्यको ग्रहण करके अन्तरस्थितियोंमें समयके अविरोधपूर्वक सिंचन करनेवाले क्षपक जीवके स्पष्ट ही प्रकृत द्रव्यकी गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यसे असंख्यातगुणपनेकी सिद्धि देखी जाती है। इससे आगे अन्तरसम्बन्धी स्थितियोंमें अनन्तर-अनन्तर क्रमसे एक-एक गोपुच्छा विशेषकी हानि द्वारा अन्तरकी अन्तिम स्थितिके प्राप्त होनेतक प्रदेशोंकी रचना करता है, इस प्रकार इस अर्थ विशेषका कथन करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** उसके आगे, पूर्व समयमें जो अन्तर था उस अन्तरको अन्तिम अन्तरस्थितिके प्राप्त होनेतक एक-एक विशेषहीन द्रव्यको देता है।**

§ ८०७. क्योंकि अन्तरसम्बन्धी स्थितियोंमें अपकर्षित हुए समस्त द्रव्यके संख्यात बहुभागको ग्रहण करके स्वस्थानमें एक गोपुच्छाकाररूपसे सिंचन करनेवाले क्षपक जीवके अन्य प्रकार सम्भव नहीं है; इसलिए इस प्रकारके प्रदेशविन्यासके द्वारा अन्तरको भरता है यह यहाँपर इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है। इस प्रकार अन्तरसम्बन्धी स्थितियोंमें प्रदेशविन्यास करके पुनः इससे आगे द्वितीय स्थितिमें जो आदि स्थिति है उसमें किस प्रकारके प्रदेशविन्यासको करता है ऐसी आशंका होनेपर निःशंक करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

* चरिमादो अंतरट्ठिदीदो पुव्वसमये जा विदियट्ठिदी तिस्से आदिट्ठिदीए दिज्जमाणगं पदेसग्गं संखेज्जगुणहीणं।

§ ८०८. कुदो? अंतरट्ठिदीसु पुव्वुत्तदव्वस्स संखेज्जे भागे णिसिंचियूण पुणो सेसस्संखेज्जदिभागमेत्तदव्वमंतरायामादो संखेज्जगुणविदियट्ठिदीए जहापविभागं णिसिंचमाणस्स परिप्फुडमेवेदम्मि संधिविसये दिज्जमाणपदेसग्गस्स संखेज्जगुणहीणत्तदंसणादो। एत्थ जइ वि सुहुमसांपराइयकिट्टीणं ट्ठिदी अंतरापूरणवसेण एक्का चेवे[1] जादा तो वि अणियट्टिचरिमसमयावेक्खाए पढम-विदियट्ठिदिभेदं कादूण अंतरचरिमट्ठिदी विदियट्ठिदी आदिट्ठिदी च घेत्तव्वा त्ति जाणावणट्ठं दोसु वि एदेसु सुत्तेसु पुव्वसमयणिद्देसो कओ दट्ठव्वो। जइ वि एत्थ अंतरट्ठिदीसु ओकड्डिददसयलदव्वस्स संखेज्जदिभागमेत्तमेव दव्वं णिसिंचदि, विदियट्ठिदीए च संखेज्जे भागे णिसिंचदि त्ति घेप्पइ तो वि पयदत्थसिद्धीए णत्थि पडिबंधो; अंतरायामादो विदियट्ठिदिआयामस्सासंखेज्जगुणत्तमस्सियूण तस्स सिद्धीए बाहाणुवलंभादो। एवमेदम्मि संधिविसये संखेज्जगुणहीणं पदेसणिसेगं कादूण संपहि एत्तो उवरिमेसु ट्ठिदिविसेसेसु पदेसणिसेगमेवं कुणदि त्ति पदुप्पायणट्ठ मुत्तरसुत्तमोइण्णं—

* तत्तो विसेसहीणं।

§ ८०९. एत्तो परमेगेगगोवुच्छविसेसहाणीए विसेसहीणं पदेसणिक्खेवं कुणमाणो गच्छदि जाव सुहुमसांपराइयकिट्टीणमुक्कस्सट्ठिदीदो समयाहियावलियमेत्तं हेट्ठा ओसरियूण ट्ठिदत्तदित्थट्ठिदि

---

* अन्तिम अन्तरसम्बन्धी स्थितिसे पूर्व समयमें जो द्वितीय स्थिति है उसकी आदि स्थितिमें जो प्रदेशपुंज दिया जाता है वह संख्यातगुणा हीन होता है।

§ ८०८. क्योंकि अन्तरसम्बन्धी स्थितियोंमें पूर्वोक्त द्रव्यके संख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यको सिंचन करके पुनः शेष असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको अन्तर आयामसे संख्यातगुणी द्वितीय स्थितिमें विभागके अनुसार सिंचन करनेवाले क्षपक जीवके स्पष्ट ही इस सन्धिस्थानमें दिया जानेवाला प्रदेशपुंज संख्यातगुणा हीन देखा जाता है। यहाँपर यद्यपि सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंकी स्थिति अन्तरके भर देनेके कारण एक ही हो गयी है तो भी अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समयकी अपेक्षा प्रथम और द्वितीय स्थितिका भेद करके अन्तरकी अन्तिम स्थिति और द्वितीय स्थितिकी आदि स्थिति ग्रहण करनी चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए इन दोनों ही सूत्रोंमें पूर्व समयका निर्देश किया गया जानना चाहिए। यद्यपि यहाँपर अन्तरस्थितियोंमें अपकर्षित समस्त द्रव्यके संख्यातवें भागप्रमाण ही द्रव्यका सिंचन करता है और द्वितीय स्थितिमें संख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यका सिंचन करता है ऐसा ग्रहण करते हैं तो भी प्रकृत अर्थकी सिद्धिमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है, क्योंकि अन्तरके आयामसे द्वितीय स्थितिके आयामके असंख्यातगुणपनेका आश्रय करके उसकी सिद्धिमें कोई बाधा नहीं पायी जाती। इस प्रकार इस सन्धिस्थानमें संख्यातगुणहीन प्रदेशनिषेकको करके अब इससे उपरिम स्थितिविशेषोंमें प्रदेशनिषेकको इस प्रकार करता है इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* उससे आगे विशेषहीन द्रव्यको देता है।

§ ८०९. इसके आगे एक-एक गोपुच्छाविशेषकी हानिद्वारा विशेषहीन प्रदेशनिक्षेप करता हुआ सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थिति

---

१. आ प्रतौ एक्को चेव इति पाठः।

त्ति; तत्तो परमइच्छावणाविसये णिक्खेवासंभवादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो। एवमेत्तिएण पबंधेण सुहुमसांपराइय-पढमसमए दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं समाणिय संपहि इममेवत्थमुवसंहरेमाणसुत्तमुत्तरं भणइ—

*** पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स जमोकड्डिज्जदि पदेसग्गं तमेदीए सेढीए णिक्खिवदि।**

§ ८१०. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि विदियादिसमयेसु वि एसो चेव ओकड्डिज्जमाणपदेसग्गस्स णिसेगविण्णासक्कमो अणुगंतव्वो त्ति जाणावणट्ठमुवरिमं पबंधमाह—

*** विदियसमए वि एवं चेव। तदियसमये वि एवं चेव। एस कमो ओकड्डिदूण णिसिंचमाणगस्स पदेसग्गस्स ताव जाव सुहुमसांपराइयस्स पढमट्ठिदिखंडयं णिल्लेविदं ति।**

§ ८११. तं जहा—विदियसमये ताव पढमसमयोकड्डिददव्वादो असंखेज्जगुणं पदेसग्गमोकड्डियूण णिसिंचमाणो उदये थोवं देदि, तत्तो विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं, एवं ताव असंखेज्जगुणं जाव पढमसमयगुणसेढिसीसयादो उवरिमाणंतरट्ठिदि त्ति। कुदो? एदम्मि विसये मोहणीयस्सावट्ठिदगुणसेढिणिक्खेवदंसणादो। तदो गुणसेढिसीसयादो उवरिमाणंतरट्ठिदीए वि एक्किस्से ट्ठिदीए गुणसेढिपयत्तेण विणा वि दव्वमाहप्पेणासंखेज्जगुणं पदेसग्गं णिक्खिवदि। तत्तो विसेसहीणं जाव भूदपुव्वणयविसईकदा अंतरचरिमट्ठिदि त्ति। तत्तो विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिम्मि

नीचे सरककर स्थित हुई वहाँ की स्थितिके प्राप्त होनेतक जाता है, क्योंकि उससे आगे अतिस्थापनारूप स्थितियोंमें निक्षेप होना असम्भव है यह इस सूत्रका यहाँपर समीचीन अर्थ है। इस प्रकार इस प्रबन्ध द्वारा सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम समयमें दिये जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा सम्पन्न करके अब इसी अर्थका उपसंहार करते हुए आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** सूक्ष्मसाम्परायिकसे प्रथम समयमें जिस प्रदेशपुंजका अपकर्षण करता है उसका इस श्रेणिके क्रमसे निक्षेप करता है।**

§ ८१० यह सूत्र गतार्थ है। अब द्वितीय आदि समयोंमें भी अपकर्षित किये जानेवाले प्रदेशपुंजके निषेक विन्यासका यही क्रम जानना चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** दूसरे समयमें भी इसी क्रमसे निक्षेप करता है। तीसरे समयमें भी इसी क्रमसे निक्षेप करता है। इसी प्रकार अपकर्षण करके सींचे जानेवाले प्रदेशपुंजका सूक्ष्मसाम्परायिकके प्रथम स्थितिकाण्डकके निर्लेपित होनेतक यही क्रम चलता रहता है।**

§ ८११. वह जैसे—सर्वप्रथम दूसरे समयमें प्रथम समयके अपकर्षित द्रव्यसे असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका अपकर्षण करके सिंचन करता हुआ उदयमें स्तोक प्रदेशपुंजको देता है, उससे आगे दूसरी स्थितिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है, इस प्रकार प्रथम समयसम्बन्धी गुणश्रेणि शीर्षसे उपरिम अनन्तर स्थितिके प्राप्त होनेतक असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है, क्योंकि इस स्थानपर मोहनीयका अवस्थित गुणश्रेणिनिक्षेप देखा जाता है। उसके आगे गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अन्तरस्थितिसम्बन्धी भी एक स्थितिमें गुणश्रेणिके प्रवृत्त होनेके बिना भी द्रव्यके माहात्म्यवश असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका निक्षेप करता है। उससे आगे भूतपूर्वनयके विषयभूत अन्तरकी अन्तिम स्थितिके

पुव्वं व संखेज्जगुणहीणं पदेसपिंडं णिसिंचदि। तत्तो परं विसेसहीणं जाव अप्पणो उक्कीरिदपदेस-मावलियमेत्तकालेण अपत्तो त्ति। एवं तदियादिसमएसु वि एसा सेढिपरूवणा णिव्वामोहमणुगंतव्वा जाव पढमट्ठिदिखंडयदुचरिमसमओ त्ति।

§ ८१२. संपहि पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए णिवदमाणाए जो पदेसविण्णासक्कमो तस्स किंचि फुडीकरणं वत्तइस्सामो। तं जहा—विदियट्ठिदिसयलदव्वस्स संखेज्जदिभागमेत्तं चरिमफालिदव्वं घेत्तूण उदये पदेसग्गं थोवं देदि। विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं देदि। एवमंतोमुहुत्तकालमसंखेज्जगुणाए सेढीए णिक्खिवमाणो गच्छदि जाव गुणसेढिसीसये त्ति। एदं च गुणसेढीए णिवदिदासेसदव्वं चरिमफालीदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं चेव दट्ठव्वं। तदो गुणसेढिसीसयादो उवरिमाणंतरा जा एगा ट्ठिदी तत्थासंखेज्जगुणं देदि। तदो उवरि विसेसहीणं णिक्खिवमाणो गच्छदि जाव अंतरचरिमट्ठिदिं भूदपुव्वणयविसयीकयं संपत्तो त्ति। गुणसेढिसीसयादो उवरि एदम्मि अंतरद्धाणे णिवदिदसयलदव्वं चरिमफालीदव्वस्स संखेज्जदिभागमेत्तमिदि घेत्तव्वं। पुणो अंतरचरिमट्ठिदीदो जा विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदी तिस्से पदेसग्गं संखेज्जगुणहीणं देदि। तदो उवरिमासु सव्वासु ट्ठिदीसु विसेसहीणं देदि असंखेज्जदिभागमेत्तेण।

§ ८१३. संपहि एत्थ विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिम्मि संखेज्जगुणहीणं पदेसणिसेगं कुणदि त्ति एदस्स कारणमित्थमणुगंतव्वं। तं जहा—पढमट्ठिदिखंडयस्स दुचरिमफाली जाव णिवददि ताव

प्राप्त होनेतक विशेषहीन द्रव्य देता है। उससे आगे दूसरी स्थितिसम्बन्धी आदिकी स्थितिमें पहलेके समान संख्यातगुणहीन प्रदेशपिण्डका सिंचन करता है। उससे आगे अपने उत्कीरित किये गये स्थान तक एक आवलि प्रमाणकालके द्वारा नहीं प्राप्त होता हुआ विशेष हीन प्रदेश-पिण्डका सिंचन करता है। इसी प्रकार तीसरे आदि समयोंमें भी यह श्रेणिप्ररूपणा व्यामोह रहित होकर प्रथम स्थितिकाण्डकके द्विचरम समयके प्राप्त होने तक जान लेनी चाहिए।

§ ८१२. अब प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन होते समय जो प्रदेश विन्यास-का क्रम है उसे किंचिद् स्पष्ट करनेके लिए बतलायेंगे। वह जैसे—द्वितीय स्थितिके समस्त द्रव्यके संख्यातवें भागप्रमाण अन्तिम फालिसम्बन्धी द्रव्यको ग्रहण करके उदयमें स्तोक प्रदेशपुंजको देता है। दूसरी स्थितिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तकालतक असंख्यातगुणित श्रेणिद्वारा निक्षेप करता हुआ गुणश्रेणिशीर्षके अन्तिम समयतक जाता है। और यह गुणश्रेणिमें पतित हुआ समस्त द्रव्य अन्तिम फालिसम्बन्धी द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है ऐसा जानना चाहिए। उसके बाद गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अनन्तर जो एक स्थिति है उसमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको देता है। उससे ऊपर विशेष हीन प्रदेशपुंजका निक्षेप करता हुआ भूतपूर्व नयकी विषय की गयी अन्तरकी अन्तिम स्थितिको प्राप्त होनेतक जाता है। गुणश्रेणिशीर्षसे ऊपर अन्तरसम्बन्धी इस आयाममें पतित हुआ समस्त द्रव्य अन्तिम फालिसम्बन्धी द्रव्यके संख्यातवें भागप्रमाण होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। पुनः अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिसे द्वितीय स्थितिकी जो आदि स्थिति है उसमें संख्यातगुणहीन प्रदेशपुंजको देता है उससे उपरिम समस्त स्थितियोंमें असंख्यातवें भागप्रमाण विशेषहीन प्रदेशपुंज देता है।

§ ८१३. अब यहाँ पर दूसरी स्थितिकी आदि स्थितिमें संख्यातगुणहीन प्रदेशोंका निक्षेप करता है इसका कारण इस प्रकार जानना चाहिए। वह जैसे—प्रथम स्थितिकाण्डककी द्विचरम

समयं पडि ओकड्डियूण संछुहमाणदव्वं विदियट्ठिदिसयलपदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होदि, ओकड्डुणभागहारेण खंडिदेयखंडपमाणत्तादो। तेण गुणसेढिं मोत्तूण उवरिमअंतरट्ठिदीसु णिसित्त-पदेसपिंडमेयगोवुच्छासरूवं होदूण तत्थावट्ठिदं[1] दट्ठव्वं। विदियट्ठिदीए वि पढमणिसेगप्पहुडि उवरिमसव्वट्ठिदीसु पदेसग्गमेयगोवुच्छायारेण अंतरचरिमट्ठिदीए णिसित्तदव्वादो असंखेज्जगुणं होदूण चिट्ठदि। कारणं—जाव दुचरिमफाली णिवददि ताव समयं पडि ओकड्डियूण अंतरट्ठिदीसु णिसिंचमाणपदेसपिंडं विदियट्ठिदिसयलपदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होदि। होंतं पि तक्कालोकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं संखेज्जदिभागमेत्तं वा होदि। तेण कारणेण अंतरट्ठिदीसु विदियट्ठिदीए च भिण्णगोवुच्छाओ तत्थ जादाओ।

§ ८१४. संपहि पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए णिवदिदाए दोण्हमेयगोवुच्छासेढी जायदि त्ति पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीदव्वस्स संखेज्जदिभागमेत्तो पदेसपिंडो अंतरट्ठिदीसु तक्काले णिवददि त्ति घेत्तव्वं। पुणो तिस्से चरिमफालीए पदेसपिंडस्सासंखेज्जा भागा पढमट्ठिदिखंड-यायामेणूणविदियट्ठिदीए अवयवट्ठिदीसु पढमट्ठिदिखंडयादो संखेज्जगुणासु णिवदंति। तक्काले चरिमफालीए एगेगट्ठिदिपदेसग्गस्स संखेज्जदिभागमेत्तो पदेसपिंडो एक्केक्कट्ठिदिविसेसम्मि णिवददि। अंतरट्ठिदीसु पुण पादेक्कमेत्तो संखेज्जगुणमेत्तो पदेसपिंडो णिवददि, अण्णहा दोण्हमेय-

फालिके प्राप्त होनेतक प्रत्येक समयमें अपकर्षित होकर संक्रमित हुआ जो द्रव्य पतित होता है वह द्वितीय स्थितिसम्बन्धी समस्त प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है, क्योंकि वह अपकर्षण भागहारके द्वारा भाजित करनेपर एक भाग प्रमाण है। इस कारण गुणश्रेणिको छोड़कर उपरिम अनन्तर स्थितियोंमें निक्षिप्त हुआ प्रदेशपिण्ड एक गोपुच्छास्वरूप होकर वहाँ अवस्थित जानना चाहिए। द्वितीय स्थितिमें भी प्रथम निषेकसे लेकर उपरिम सब स्थितियोंमें प्रदेशपुंज एक गोपुच्छाकाररूपसे अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिमें निक्षिप्त हुए द्रव्यसे असंख्यात-गुणा होकर अवस्थित होता है। इसका कारण—जबतक द्विचरम फालिका पतन होता है तबतक प्रत्येक समयमें अपकर्षित होकर अन्तरस्थितियोंमें सिंचित होनेवाला प्रदेशपिण्ड द्वितीय स्थिति-सम्बन्धी समस्त प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। ऐसा होता हुआ भी तत्काल अपकर्षित समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अथवा संख्यातवें भागप्रमाण होता है। इस कारण अन्तर-स्थितियोंमें और द्वितीय स्थितिमें वहाँ अलग-अलग गोपुच्छायें हो जाती हैं।

§ ८१४. अब प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका पतन होनेपर दोनोंकी एक गोपुच्छा श्रेणि हो जाती है, इसलिए प्रथम स्थितिकाण्डकसम्बन्धी अन्तिम फालिके द्रव्यका संख्यातवें भागप्रमाण प्रदेशपिण्ड अन्तरस्थितियोंमें तत्काल पतित होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। पुनः उस अन्तिम फालिके प्रदेशपिण्डका असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्य प्रथम स्थितिकाण्डकके आयामसे कम द्वितीय स्थितिकी प्रथम स्थितिकाण्डकसे संख्यातगुणी अवयव स्थितियोंमें पतित होता है। उस समय अन्तिम फालिकी एक-एक स्थितिसम्बन्धो प्रदेशपुंजका संख्यातवाँ भागप्रमाण प्रदेशपिण्ड एक-एक स्थितिविशेषमें पतित होता है। परन्तु अन्तर स्थितियोंमें से प्रत्येक स्थितिमें इससे संख्यातगुणा प्रदेशपिण्ड पतित होता है, अन्यथा दोनोंकी एक गोपुच्छारूपसे उत्पत्ति नहीं

१. आ० प्रतौ तत्थावट्ठिददव्वं इति पाठः।

गोवुच्छभावाणुप्पत्तीदो। तेण कारणेण अंतरचरिमट्ठिदिम्मि णिसित्तपदेसादो विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिम्मि णिसिंचमाणपदेसपिंडो संखेज्जगुणहीणो जादो।

§ ८१५. अथवा अंतरचरिमट्ठिदिम्मि णिसित्तपदेसपिंडादो विदियट्ठिदिपढमणिसेगम्मि णिसिंचमाणदव्वं संखेज्जगुणहीणं होदि त्ति एदस्स कारणमेवं वा वत्तव्वं। तं कधं? अंतरट्ठिदीहि पढमट्ठिदिखंडयायामे भागे हिदे भागलद्धं संखेज्जरूवाणि विरलिय पढमट्ठिदिखंडयायामं समखंडं कादूण दिण्णे तत्थेक्केक्कस्स रूवस्स अंतरायामपमाणं पावदि। पुणो एत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण तक्कालियगुणसेढिसीसयादो उवरिमअंतरट्ठिदीसु ठविदे अंतरट्ठिदिपदेसग्गं विदियट्ठिदिपदेसग्गं च दो वि थोरुच्चयेण एयगोवुच्छाणि जादाणि। पुणो तत्थ विदियरूवधरिदमेगखंडं घेत्तूण संखेज्ज-फालीओ कादव्वाओ। ताओ केत्तियाओ त्ति भणिदे अंतरट्ठिदिआयामेण गुणसेढि मोत्तूण सेससव्व-ट्ठिदीसु भाजिदासु भागलद्धमेत्तीओ फालीओ कादव्वाओ। एवं च कादूण तत्थेगफालिं घेत्तूण अंतरट्ठिदीसु पुव्वं ट्ठविदखंडस्स पासे ट्ठविय पुणो सेसफालीओ जहाकमं विदियट्ठिदीए ठवेदव्वाओ। एवं सेसरूवधरिदखंडाणि वि कादूण समयाविरोहेण ढोएदव्वाणि। एवं कादूण जोइदे अंतरचरिम-ट्ठिदीए पविददव्वादो विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदिम्मि णिवदिदपदेसग्गं संखेज्जगुणहीणं होदि त्ति णिच्छओ कायव्वो। एवमेत्तिएण पबंधेण पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालिमवहिं कादूण सुहुमसांपराइयेणोकड्डियूण णिसिंचमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि विदियादो ट्ठिदिखंडयादो ओकड्डियूण

हो सकती। इस कारण अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपिण्डसे द्वितीय स्थिति सम्बन्धी आदि स्थितिमें निःसिचमान प्रदेशपिण्ड संख्यातगुणा हीन हो जाता है।

§ ८१५. अथवा अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपिण्डसे द्वितीय स्थिति-के प्रथम निषेकमें निसिच्यमान द्रव्य संख्यातगुणा हीन होता है इस प्रकार इसका कारण इस प्रकार कहना चाहिए।

शंका—वह कैसे?

समाधान—अन्तरस्थितियोंके द्वारा प्रथमस्थितिकाण्डकके आयाममें भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उससम्बन्धी संख्यात अंकोंको विरलित करके विरलित प्रत्येक अंकके प्रति प्रथम स्थितिकाण्डकके आयामको समान खण्ड करके देयरूपसे देनेपर वहाँ एक-एक अंकके प्रति अन्तरा-यामका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः यहाँ पर एक अंकके प्रति प्राप्त आयामको ग्रहण करके उस समयके गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अन्तर स्थितियोंमें स्थापित कर देनेपर अन्तरस्थितिसम्बन्धी प्रदेशपुंज और द्वितीय स्थितिसम्बन्धी प्रदेशपुंज दोनों ही एकरूप होकर एक गोपुच्छारूप हो जाते हैं। पुनः वहाँ पर द्वितीय अंकके प्रति प्राप्त एक खण्डको ग्रहण करके उसकी संख्यात फालियां करनी चाहिए। वे कितनी होती हैं ऐसा पूछनेपर गुणश्रेणिको छोड़कर अन्तर-स्थितिके आयाम द्वारा शेष सब स्थितियोंको भाजित करनेपर जो भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण फालियाँ करनी चाहिए। और ऐसा करके तथा वहाँ एक फालिको ग्रहण करके अन्तरस्थितियोंमें पहलेके स्थापित खण्डके पास स्थापित करके पुनः शेष फालियोंको यथाक्रम द्वितीय स्थितिमें स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार शेष अंकोंके प्रति प्राप्त खण्डोंको भी करके समयके अविरोध-पूर्वक स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार करके देखनेपर अन्तरसम्बन्धी अन्तिम स्थितिमें पतित द्रव्यसे द्वितीय स्थितिसम्बन्धी आदि स्थितिमें पतित प्रदेशपुंज संख्यातगुणा हीन होता है ऐसा निश्चय करना चाहिए। इस प्रकार इतने प्रबन्ध द्वारा प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिकी मर्यादा करके सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा अपकर्षित करके सींचे जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा

णिसिच्चमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणा केरिसो होदि त्ति आसंकाए तण्णिण्णयविहाणट्ठमुवरिमं पबंधमाढवेइ—

*** बिदियादो ठिदिखंडयादो ओकड्डियूण पदेसग्गमुदये दिज्जदि तं थोवं ।**

§ ८१६. पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए णिवदिदाए पुणो से काले विदियट्ठिदिखंडयमागाए-माणो पढमट्ठिदिखंडयादो विसेसहीणायामेण खंडयमागाएदि । एवमागाइदपढमसमये तत्तो पदेसग्गस्सासंखेज्जदिभागमोकड्डियूण उदयादिगुणसेढीए णिक्खिवमाणो उदयट्ठिदीए ताव थोवयरं पदेसग्गं णिसिंचदि, तस्स थोवभावेण विणा उवरिमट्ठिदीसु णिसिंचमाणपदेसग्गस्स गुणसेढिआया-रेण समवट्ठाणाणुववत्तीदो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो ।

*** तदो दिज्जदि असंखेज्जगुणाए सेढीए ताव जाव गुणसेढिसीसयादो उवरि-माणंतरा एक्का ट्ठिदि त्ति ।**

८१७. तदो उदये णिसित्तपदेसग्गादो असंखेज्जगुणं पदेसग्गं तत्तो अणंतरोवरिमाए विदि-याए ट्ठिदीए णिसिंचदि । एवमसंखेज्जगुणाए सेढीए णिसिंचमाणो ताव गच्छदि जाव अंतोमुहुत्त-मुवरिं गंतूण अवट्ठिदगुणसेढिसीसयं पत्तो त्ति; ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तदव्वमेदम्मि अद्धाणे गुणसेढिआयारेण णिसिंचमाणस्स परिप्फुडमेव तहाभावदंसणादो । पुणो गुणसेढिसीसयादो

करके अब द्वितीय स्थितिकाण्डकसे अपकर्षित करके सींचे जानेवाले प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा कैसी होती है ऐसी आशंका होनेपर उसके निर्णयका कथन करनेके लिए आगेके प्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** द्वितीय स्थितिकाण्डकसे अपकर्षित करके उदयमें जितना प्रदेशपुंज देता है वह सबसे थोड़ा है ।**

§ ८१६. प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतित होनेपर पुनः तदनन्तर समयमें द्वितीय स्थितिकाण्डकको ग्रहण करता हुआ प्रथम स्थितिकाण्डकसे विशेष हीन आयामके द्वारा उस काण्डकको ग्रहण करता है । इस प्रकार ग्रहण किये जानेके प्रथम समयमें उसमेंसे प्रदेशपुंजके असंख्यातवें भागका अपकर्षण करके उदयादि गुणश्रेणिरूपसे निक्षेप करता हुआ सर्वप्रथम उदय-स्थितिमें स्तोकतर प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है, क्योंकि उसके स्तोकपनेके बिना उपरिम-स्थितियोंमें सींचे जानेवाले प्रदेशपुंजका गुणश्रेणिके आकारसे सम्यक् अवस्थान नहीं बन सकता, यही यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है ।

*** उसके बाद गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अनन्तर एक स्थितिके प्राप्त होनेतक असंख्यात गुणश्रेणिरूपसे प्रदेशपुंजको देता है ।**

§ ८१७. उसके बाद उदयमें निक्षिप्त हुए प्रदेशपुंजसे उपरिम अनन्तर द्वितीय स्थितिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजको निक्षिप्त करता है । इस प्रकार असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे अन्तर्मुहूर्त ऊपर जाकर अवस्थित गुणश्रेणिशीर्षके प्राप्त होने तक सिंचन करता हुआ जाता है, क्योंकि अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको इस आयाममें गुणश्रेणि आकारके द्वारा सिंचन करनेवाले क्षपक जीवके स्पष्ट ही उस प्रकारका काम होता हुआ देखा जाता है । पुनः गुणश्रेणिशीर्षसे उपरिम अनन्तर एक स्थितिमें असंख्यातगुणे प्रदेशपुंजका सिंचन करता है, क्योंकि

उवरिमाणंतराए एक्कस्से ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं पदेसग्गं णिसिंचदि। गुणसेढिपयत्तेण विणा वि दव्वमाहप्पमस्सियूण तत्थ णिसिंचमाणपदेसग्गस्स तहाभावोवलंभादो।

* तदो विसेसहीणं।

§ ८१८. किं कारणं ? तत्तोप्पहुडि ओकड्डिदसयलदव्वस्सासंखेज्जे भागे एयगोवुच्छायारेण णिसिंचमाणस्स पयारंतरासंभवादो। एत्तो बिदियादिसमयेसु वि एसा चेव सेढिपरूवणा जाव णिरुद्धट्ठिदिखंडयं समत्तं त्ति। एवमुवरिमट्ठिदिखंडएसु वि एसो चेव दिज्जमाणपदेसग्गस्स णिसेगविण्णासक्कमो अणुगंतव्वो जाव दु चरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालि त्ति। णवरि सव्वट्ठिदिखंडएसु जाव चरिमफाली ण णिवददि ताव ओकड्डिज्जमाणदव्वं सयलदव्वस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं चेव होदि। चरिमफालीए णिवदमाणाए पुण ट्ठिदिखंडयादो आगच्छमाणदव्वं सयलदव्वस्स संखेज्जदिभागमेत्तं चेव होदि त्ति घेत्तव्वं। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुवरिमभप्पणा सुत्तमाह—

* एत्तो पाए सुहुमसांपराइयस्स जाव मोहणीयस्स ट्ठिदिघादो ताव एस कमो।

§ ८१९. गयत्थमेदं सुत्तं। णवरि चरिमट्ठिदिखंडयविसये को वि विसेससंभवो अत्थि तस्स फुणीकरणट्ठमुवरि कस्सामो। एदमेत्तिएण सुत्तपबंधेण सुहुमसांपराइयपढमसमयप्पहुडि दिज्जमाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं कादूण संपहि तत्थेव दिस्समाणपदेसग्गस्स केरिसमवट्ठाणं होदि त्ति आसंकाए णिण्णयकरणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

प्रवृत्त हुए बिना भी द्रव्यके माहात्म्यका आश्रय करके उसमें सींचे जानेवाले प्रदेशपुंजका उस प्रकारका कार्य होता हुआ उपलब्ध होता है।

* उसके बाद विशेषहीन द्रव्य होता है।

§ ८१८. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि उससे लेकर अपकर्षित हुए समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागमें एक गोपुच्छाके आकारसे सिंचन करनेवाले क्षपक जीवके प्रकारान्तर सम्भव नहीं है।

इससे द्वितीयादि समयोंमें भी विवक्षित स्थितिकाण्डकके समाप्त होनेपर यही श्रेणिप्ररूपणा होती है, इस प्रकार उपरिम स्थितिकाण्डकोंमें भी यही दीप्यमान प्रदेशपुंजके निषेक विन्यासका क्रम अन्तिमस्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके प्राप्त होने तक जानलेना चाहिए। इतनी विशेषता है सब स्थितिकाण्डकोंमें जबतक अन्तिमफालि पतित नहीं होती है तबतक अपकर्षित होनेवाला द्रव्य समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही होता है। किन्तु अन्तिमफालिके पतित होनेपर पुनः स्थितिकाण्डकसे आनेवाला द्रव्य समस्त द्रव्यके संख्यातवें भागप्रमाण ही होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए अगले अर्पणासूत्रको कहते हैं—

* **यहाँसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके जबतक मोहनीय कर्मका स्थितिघात होता है तबतक यही क्रम प्रवृत्त रहता है।**

§ ८१९. यह सूत्र गतार्थ है। इतनी विशेषता है कि अन्तिम स्थितिकाण्डकके विषयमें जो कुछ भी विशेष सम्भव है उसको स्पष्ट करने के लिए आगे कहेंगे। इसप्रकार इतने सूत्र प्रबन्ध द्वारा सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके प्रथम समयसे लेकर दिप्ययान प्रदेशपुंजकी श्रेणिप्ररूपणा करके अब वहींपर दीप्ययान प्रदेशपुंजका किस प्रकारका अवस्थान होता है ऐसा आशंकाका निर्णय करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स जं दिस्सदि पदेसग्गं तस्य सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो ।**

§ ८२०. सुगमं ।

*** तं जहा ।**

§ ८२१. सुगमं ।

*** पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स उदये दिस्सदि पदेसग्गं थोवं । बिदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जणं दीसदि । एवं ताव जाव गुणसेढिसीसयं ति गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ट्ठिदी त्ति ।**

§ ८२२. किं कारणं; एदम्मि अद्धाणे दिज्जमाणस्सेव दिस्समाणस्स वि पदेसग्गस्स असंखेज्जगुणाए सेढीए समवट्ठाणदंसणादो ।

*** तत्तो विसेसहीणं ताव जाव चरिमअंतरट्ठिदि त्ति।**

§ ८२३. दिज्जमाणपदेसग्गस्साणुसारेणेवत्थ दिस्समाणपदेसग्गस्स वि विसेसहाणीए समवट्ठाणस्स परिप्फुडमुवलंभादो ।

*** तत्तो असंखेज्जगुणं ।**

§ ८२४. सुगमं ।

*** तत्तो विसेसहीणं ।**

*** प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके जो प्रदेशपुंज दिखाई देता है उसकी श्रेणिप्ररूपणाको बतलायेंगे ।**

§ ८२०. यह सूत्र सुगम है ।

*** वह जैसे ।**

§ ८२१. यह सूत्र सुगम है ।

*** प्रथम समयमें सूक्ष्मसाम्परायिक क्षपकके उदयमें स्तोक प्रदेशपुंज दिखाई देता है। दूसरी स्थितिमें असंख्यातगुणा प्रदेशपुंज दिखाई देता है। इसी प्रकार गुणश्रेणिशीर्ष और गुणश्रेणिशीर्षसे अन्य एक स्थितिके प्राप्त होनेतक यही क्रम चालू रहता है ।**

§ ८२२. शंका—इसका क्या कारण है ?

समाधान—इस स्थानपर दीप्यमान प्रदेशपुंजके समान ही दीखनेवाले प्रदेशपुंजका भी असंख्यात गुणश्रेणिरूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

*** उसके आगे अन्तिम अन्तरस्थितिके प्राप्त होने तक विशेष हीन द्रव्य दिखाई देता है ।**

§ ८२३. दीप्यमान प्रदेशपुंजके अनुसार ही दीखनेवाले प्रदेशपुंजका भी विशेष हानिरूपसे अवस्थान स्पष्ट उपलब्ध होता है ।

*** उससे आगे असंख्यातगुणा प्रदेशपुंज दिखाई देता है ।**

§ ८२४. यह सूत्र सुगम है ।

*** उससे आगे विशेष हीन प्रदेशपुंज दिखाई देता है ।**

परिसिट्ठाणि

१५ चारित्तमोहक्खवणा-अत्थाहियारो
सुत्तगाहा-चुण्णसुत्ताणि

[1]एत्तो से काले प्पहुडि किट्टीकरणद्धा । छसु कम्मेसु संतेसु संच्छुद्धेसु जा कोधवेदगद्धा तिस्से कोधवेदगद्धाए तिण्णि भागा । जो तत्थ पढमतिभागो अस्सकण्णकरणद्धा, विदियो तिभागो किट्टीकरणद्धा, तदियतिभागो किट्टीवेदगद्धा । [2]अस्सकण्णकरणे णिट्ठिदे तदो से काले अण्णो ट्ठिदिबंधो । [3]अण्णमणुभाग-खंडयमस्सकण्णकरणेणेव आगाइदं । अण्णं ट्ठिदिखंडयं चदुण्हं घादिकम्माणं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । णामा-गोदवेदणीयाणमसंखेज्जा भागा । [4]पढमसमयकिट्टीकारगो कोधादो पुव्वफद्दएहिंतो च अपुव्वफद्दएहिंतो च पदेसग्गमोकड्डियूण कोहकिट्टीओ करेदि । माणादो ओकड्डियूण माणकिट्टीओ करेदि । मायादो ओकड्डियूण मायकिट्टीओ करेदि । लोभादो ओकड्डियूण लोभकिट्टीओ करेदि । एदाओ सव्वाओ वि चउव्विहाओ किट्टीओ एयफद्दयवग्गणाणमणंतभागो पगणणादो ।

[5]पढमसमीए णिव्वत्तिदाणं किट्टीणं तिव्वमंददाए अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो ।[6] तं जहा । लोहस्स जहण्णिया किट्टी थोवा। विदया किट्टी अणंतगुणा। एवमणंतगुणाए सेढीए जाव पढमाए संगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति । [7]तदो विियाए संगहकिट्टीए जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा । एस गुणगारो वारसण्हं पि संगहकिट्टीणं सत्थाणगुणगारेहिं अणंतगुणो । विदियाए संगहकिट्टीए सो चेव कमो जो पढमाए संगहकिट्टीए । [8]तदो पुण विदियाए च तदियाए च संगहकिट्टीणमंतरं तारिसं चेव । एवमेदाओ लोभस्स तिण्णि संगहकिट्टीओ । लोभस्स तदियाए संगहकिट्टीए जा चरिमा किट्टी तदो मायाए जहण्णकिट्टी अणंतगुणा । मायाए वि तेणेव कमेण तिण्णि संगहकिट्टीओ ।

[9]मायाए जा तदिया संगहकिट्टी तिस्से चरिमादो किट्टीदो माणस्स जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा । माणस्स वि तेणेव कमेण तिण्णि संगहकिट्टीओ । माणस्स जा तदिया संगहकिट्टी तिस्से चेरिमादो किट्टीदो कोहस्स जहण्णिया किट्टी अणंतगुणा । कोहस्स वि तेणेव कमेण तिण्णि संगहकिट्टिओ । कोधस्स तदियाए संगहकिट्टीए जा चरिमकिट्टी तदो लोभस्स अपुव्वफद्दयाणमादिवग्गणा अणंतगुणा ।

[10]*किट्टीअंतराणमप्पाबहुअं* वत्तइस्सामो । [11]अप्पाबहुअस्स लहुआलावसंखेवपदत्थसण्णाणिक्खेवो ताव कायव्वो । तं जहा । एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अणंताओ किट्टीओ । तासिं *अंतराणि वि अणंताणि । तेसि-*मंतराणं सण्णा किट्टी-अंतराइ णाम । संगहकिट्टीए च संगहकिट्टीए च अंतराणि एक्कारस । तेसिं सण्णा संगहकिट्टीअंतराइ णाम । [12]एदीए णामसण्णाए किट्टीअंतराणं संगहकिट्टीअंतराणं च अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो। तं जहा । लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए जहण्णयं किट्टीअंतरं थोवं । [13]विदियं किट्टीअंतरमणंतगुणं । एवमणंत-राणंतरेण गंतूण चरिमकिट्टीअंतरमणंतगुणं । लोभस्स चेव विदियाए संगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतर-मणंतगुणं ।

---

१. पृ० १ । २. पृ० २ । ३. पृ० ३ । ४. पृ० ४ । ५. पृ० ५ । ६. पृ० ६ । ७. पृ० ७ । ८. पृ० ८ । ९. पृ० ९ । १०. पृ० १० । ११. पृ० ११ । १२. पृ० १२ । १३. पृ० १३ ।

[1]एवमणंतराणंतरेण जाव चरिमादो त्ति अणंतगुणं । लोभस्स चेव तदियाए संगहकिट्टीए पढमकिट्टी-अंतरमणंतगुणं । एवमणंतराणंतरेण गंतूण चरिमकिट्टीअंतरमणंतगुणं । एत्तो मायाए पढमसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं । [2]एवमणंतराणंतरेण मायाए वि तिण्हं संगहकिट्टीणं किट्टीअंतराणि जहाकमेण अणंतगुणाए सेढीए णेदव्वाणि । एत्तो माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं । माणस्स वि तिण्हं संगहकिट्टीणमंतराणि जहाकमेण अणंतगुणाए सेढीए णेदव्वाणि । एत्तो कोधस्स पढमसंगहकिट्टीए पढमकिट्टीअंतरमणंतगुणं । कोहस्स वि तिण्हं संगहकिट्टीणमंतराणि जहाकमेण जाव चरिमादो अंतरादो त्ति अणंतगुणाए सेढीए णेदव्वाणि । [3]तदो लोभस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । [4]विदियसंगहकिट्टी-अंतरमणंतगुणं । तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । [5]लोभस्स मायाए च अंतरमणंतगुणं । मायाए पढमसंगह—किट्टीअंतरमणंतगुणं । विदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । मायाए माणस्स च अंतरमणंतगुणं ।

[6]माणस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । बिदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । तदियसंगहकिट्टी-अंतरमणंतगुणं । माणस्स च कोहस्स च अंतरमणंतगुणं । कोहस्स पढमसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । विदिय-संगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । तदियसंगहकिट्टीअंतरमणंतगुणं । [7]कोधस्स चरिमादो किट्टीदो लोभस्स अपुव्व-फद्दयाणमादिवग्गणाए अंतरमणंतगुणं । पढमसमए किट्टीसु पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो । तं जहा ।

लोभस्स जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गं बहुअं । [8]विदियाए किट्टीए विसेसहीणं । एवमणंतरोवणिधाए विसेसहीणमणंतभागेण जाव कोहस्स चरिमकिट्टि त्ति । [9]परंपरोवणिधाए जहण्णियादो लोभकिट्टीदो उक्कस्सियाए कोधकिट्टीए पदेसग्गं विसेसहीणमणंतभागेण । [10]विदियसमए अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ करेदि पढमसमये णिव्वत्तिदकिट्टीणमसंखेज्जदिभागमेत्ताओ । [11]एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए हेट्ठा अपुव्वाओ किट्टीओ करेदि । [12]विदियसमए दिज्जमाणस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो । तं जहा । लोभस्स जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गं बहुअं दिज्जदि ।

[13]विदियाए किट्टीए विसेसहीणमणंतभागेण । ताव अणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमादो त्ति । तदो पढमसमए णिव्वत्तिदाणं जहण्णियाए किट्टीए विसेसहीणमसंखेज्जदिभागेण । [14]तदो विदियाए अणंत-भागहीणं । तेण परं पढमसमयणिव्वत्तिदासु लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए किट्टीसु अणंताराणंतरेण अणंतभाग-हीणं दिज्जमाणगं जाव पढमसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति । [15]लोभस्स चेव विदियसमए विदियसंगह-किट्टीए तिस्से जहण्णियाए किट्टीए दिज्जमाणगं विसेसाहियमसंखेज्जदिभागेण । [16]तेण परमणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमादो त्ति । तदो पढमसमयणिव्वत्तिदाणं जहण्णियाए किट्टीए विसेसहीणमसंखेज्जदि-भागेण । तेण परं विसेसहीणमणंतभागेण जाव विदियसंगहकिट्टीए चरिमकिट्टि त्ति । तदो जहा विदियसंगह-किट्टीए विधी तहा चेव तदियसंगहकिट्टीए विधी च । [17]तदो लोभस्स चरिमादो किट्टीदो मायाए जा विदियसमए जहण्णिया किट्टी तिस्से दिज्जदि पदेसग्गं विसेसाहियमसंखेज्जदिभागेण । तदो पुण अणंतभागहीणं जाव अपुव्वाणं चरिमादो त्ति । एवं जम्हि जम्हि अपुव्वाणं जहण्णिया किट्टी तम्हि तम्हि विसेसाहिय-मसंखेज्जदिभागेण अपुव्वाणं चरिमादो असंखेज्जदिभागहीणं । [18]एदेण कमेण विदियसमए णिक्खिवमाणगस्स पदेसग्गस्स बारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागहीणं । एक्कारससु किट्टिट्ठाणेसु असंखेज्जदिभागुत्तरं दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स । [19]सेसेसु किट्टिट्ठाणेसु अणंतभागहीणं दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स । विदिय-समए दिज्जमाणयस्स पदेसग्गस्स एसा उट्टकूडसेढी । [20]जं पुण विदियसमए दीसदि किट्टीसु पदेसग्गं

---

१. पृ० १४ । २. पृ० १५ । ३. पृ० १६ । ४. पृ० १७ । ५. पृ० २० । ६. पृ० २१ । ७. पृ० २२ । ८. पृ० २२. । ९. पृ० २४ । १०. पृ० २५ । ११. पृ० २६ । १२. पृ० २७ । १३. पृ० २८ । १४. पृ० २९ । १५. पृ० ३० । १६. पृ० ३१ । १७. पृ० ३२ । १८. पृ० ३३ । १९. पृ० ३४ । २०. पृ. ३५ ।

तं जहण्णियाए बहुअं, सेसासु सव्वासु अणंतरोवणिधाए अणंतभागहीणं। जहा विदियसमए किट्टीसु पदेसग्गं तहा सव्विस्से किट्टीकरणद्धाए दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स तेवीसमुट्टकूडाणि।

[1]दिस्समाणयं सव्वम्हि अणंतभागहीणं। जं पदेसग्गं सव्वसमासेण पढमसमए किट्टीसु दिज्जदि तं थोवं। विदियसए असंखेज्जगुणं। तदियसमये असंखेज्जगुणं। एवं जाव चरिमादो त्ति असंखेज्जगुणं। किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा अंतोमुहुत्तब्भहिया। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। तम्हि चेव किट्टीकरणद्धाए चरिमसमए मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि हाइदूण अट्ठवस्सिगमंतोमुहुत्तब्भहियं जादं। तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामा—गोद-वेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। किट्ठीओ करेंतो पुव्वफद्दयाणि अपुव्वफद्दयाणि च वेदेदि, किट्टीओ ण वेदयदि। [2]किट्टीकरणद्धा णिट्ठायदि पढमट्ठिदीए आवलियाए सेसाए। से काले किट्टीओ पवेसेदि। [3]ताधे संजलणाणं ट्ठिदिबंधो चत्तारि मासा। ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठवस्साणि। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो ट्ठिदिसंतकम्मं च संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। [4]णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। अनुभागसंतकम्मं कोहसंजलणस्स जं संतकम्मं समयूणाए उदयावलियाए छट्ठिदल्लिगाए तं सव्वघादी। संजलणाणं जे दोआवलियबंधा दुसमयूणा ते देसघादी। तं पुण फद्दयगदं। सेसं किट्टीगदं। [5]तम्हि चेव पढमसमए कोहस्स पढमसंगहकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि।[6] ताहे कोहस्स पढमाए संगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा उदिण्णा। एदिस्से चेव कोहस्स पढमाए संगहकिट्टीए असंखेज्जा भागा वज्झंति। [7]सेसाओ दोसंगहकिट्टीओ ण वज्झंति ण वेदिज्जंति। [8]पढमाए संगहकिट्टीए हेट्ठदो जाओ किट्टीओ ण वज्झंति ण वेदिज्जंति ताओ थोवाओ। जाओ किट्टीओ वेदिज्जंति ण बज्झंति ताओ विसेसाहियाओ। तिस्से चेव पढमाए संगहकिट्टीए उवरि जाओ किट्टीओ ण वज्झंति ण वेदिज्जंति ताओ विसेसाहियाओ।

[10]उवरि जाओ वेदिज्जंति ण बज्झंति ताओ विसेसाहियाओ। मज्झे जाओ किट्टीओ वज्झंति च वेदिज्जंति च [9]ताओ असंखेज्जगुणाओ। किट्टीवेदगद्धा ताव थवणिज्जा। किट्टीकरणद्धाए ताव सुत्तफासो। [11]तत्थ एक्कारस मूलगाहाओ। पढमाए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।

(१०९) केवदिया किट्टीओ कम्हि कसायम्हि कदि च किट्टीओ।
किट्टीए किं करणं लक्खणमध किं च किट्टीए॥१६२॥

[12]एदिस्से गाहाए चत्तारि अत्था। [13]तिण्णि भासगाहाओ। पढमभासगाहा वेसु अत्थेसु णिबद्धा। तिस्से समुक्कित्तणा।

(११०) बारस णव छ तिण्णि य किट्टीओ होंति अध व अणंताओ।
एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग अधवा अणंताओ॥१६३॥

[14]विहासा। जइ कोहेण उवट्ठायदि तदो बारस संगहकिट्टीओ होंति।[15] माणेण उवट्ठिदस्स णव संगहकिट्टीओ। मायाए उवट्ठिदस्स छ संगहकिट्टीओ। लोभेण उवट्ठिदस्स तिण्णि संगहकिट्टीओ। एवं बारस णव छ तिण्णि च। [16]एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अणंताओ किट्टीओ त्ति एदेण कारणेण 'अधवा अणंताओ' त्ति। केवडियाओ किट्टीओ त्ति अत्थो समत्तो। कम्हि कसायम्हि कदि च किट्टीओ त्ति एदं सुत्तं। एक्केक्कम्हि कसाये तिग तिग अधवा अणंताओ त्ति विहासा। [17]एक्केक्कम्हि कसाये तिण्णि तिण्णि संगहकिट्टीओ त्ति एवं

---

१. पृ० ३६। २. पृ० ३७। ३. पृ० ३८। ४. पृ० ३९। ५. पृ० ४०। ६. पृ० ४१। ७. पृ० ४३। ८. पृ० ४४। ९. पृ० ४५। १०. पृ० ४६। ११. पृ. ४७। १२. पृ० ४८। १३. पृ० ४९। १४. पृ० ५०। १५. पृ० ५१। १६. पृ० ५३। १७. पृ० ५३।

[1]तिग तिग। एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए अणंताओ किट्टीओ। त्ति एदेण 'अधवा अणंताओ' जादा। [2]किट्टीए किं करणं त्ति एत्थ एक्का भासगाहा। तिस्से समुक्कित्तणा।

(१११) किट्टी करेदि णियमा ओवट्टेंतो ठिदी य अणुभागे।
वड्ढेंतो किट्टीए अकारगो होदि बोद्धव्वो ॥१६४॥

[3]विहासा। जहा। जो किट्टीकारगो सो पदेसग्गं ठिदीहिं वा अणुभागेहिं वा ओकड्डुवि, ण उक्कड्डुदि। खवगो किट्टीकरणप्पहुडि जाव संकमो ताव ओकड्डुगो पदेसगस्स ण उक्कड्डुगो। [4]उवसामगो पुण पढमसमय-कारगमादिं कादूण जाव चरिमसमयसकसायो ताव ओकड्डुगो, ण पुण उक्कड्डुगो। [5]पडिवदमाणगो पुण पढम-समयसकसायप्पहुडि ओकड्डुगो वि उक्कड्डुगो वि। [6]"लक्खणमध किं च किट्टीए" त्ति एत्थ एक्का भासगाहा। तिस्से समुक्कित्तणा।

(११२) गुणसेढि अणंतगुणा लोभादी कोधपच्छिमपदादो।
कम्मस्स य अणुभागे किट्टीए लक्खणं एदं ॥१६५॥

[7]विहासा। लोभस्स जहण्णिया किट्टी अणुभागेहिं थोवा। विदियकिट्टी अणुभागेहिं अणंतगुणा। तदिया किट्टी अणुभागेहिं अणंतगुणा। एवमणंतराणंतरेण सव्वत्थ अणंतगुणा जाव कोधस्स चरिमकिट्टि त्ति। उक्कस्सिया वि किट्टी आदिफद्दयआदिवग्गणाए अणंतभागो।

[8]एवं किट्टीसु थोवो अणुभागो। किसं कम्मं कदं जम्हा तम्हा किट्टी। एदं लक्खणं। एत्तो विदिय-मूलगाहा। तं जहा।

(११३) कदिसु च अणुभागेसु च ट्ठिदीसु वा केत्तियासु का किट्टी।
सव्वासु वा ट्ठिदीसु च आहो सव्वासु पत्तेयं ॥१६६॥

[9]एदिस्से वे भासगाहाओ। [10]मूलगाहापुरिमद्धे एक्का भासगाहा। तिस्से समुक्कित्तणा।

(११४) किट्टी च ट्ठिदिविसेसेसु असंखेज्जेसु णियमसा होदि।
णियमा अणुभागेसु च होदि हु किट्टी अणंतेसु ॥१६७॥

[11]विहासा। कोधस्स पढमसंगहकिट्टिं वेदेंतस्स तिस्से संगहकिट्टीए एक्केक्का किट्टी विदियट्ठिदीसु। सव्वासु पढमट्ठिदीसु च उदयवज्जासु एक्केक्का किट्टी सव्वासु ट्ठिदीसु। [12]उदयट्ठिदीए पुण वेदिज्जमाणि-याए संगहकिट्टीए जाओ किट्टीओ तासिमसंखेज्जा भागा। सेसाणमवेदिज्जमाणिगाणं संगहकिट्टीणमेक्केक्का किट्टी सव्वासु विदियट्ठिदीसु, पढमट्ठिदीसु णत्थि। [13]एक्केक्का किट्टी अणुभागेसु अणंतेसु। जेसु पुण एक्का ण तेसु विदिया। [14]विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

(११५) सव्वाओ किट्टीओ विदियट्ठिदीए दु होंति सव्विस्से।
जं किट्टिं वेदयदे तिस्से अंसो च पढमाए ॥१६७॥

[15]एदिस्से विहासा वुत्ता चेव पढमभासगाहाए। [16]एत्तो तदियाए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।

(११६) किट्टी च पदेसग्गेणणुभागग्गेण का च कालेण।
अधिगा समा व हीणा गुणेण किं वा विसेसेण ॥१६८॥

[17]एदिस्से तिण्णि अत्था। किट्टी च पदेसग्गेणेत्ति पढमो अत्थो। एदम्मि पंच भासगाहाओ। [18]अणुभा-गग्गेणेत्ति विदियो अत्थो। एत्थ एक्का भासगाहा। का च कालेणेत्ति तदिओ अत्थो। एत्थ छतब्भासगाहाओ। पढमे अत्थे भासगाहाणं समुक्कित्तणा।

१. पृ० ५३। २. पृ० ५४। ३ पृ० ५५। ४. पृ० ५६। ५. पृ० ५७। ६. पृ० ५८। ७. पृ० ६१। ८. पृ० ६२। ९. पृ० ६३। १०. पृ० ६४। ११. पृ० ६५। १२. पृ० ६६। १३. पृ० ६७। १४. पृ० ६८ १५. पृ० ६९। १६. पृ० ७०। १७. पृ० ७१। १८. पृ० ७२।

(११७)—[1]विदियादो पुण पढमा संखेज्जगुणा भवे पदेसग्गे।
विदियादो पुण तदिया कमेण सेसा विसेसहिया ॥१७०॥

[2]विहासा। तं जहा। कोहस्स विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं थोवं। पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं संखेज्जगुणं तेरसगुणमेत्तं। [3]माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं थोवं। [4]विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। विसेसो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागो। [5]कोहस्स विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। मायाए पढमसंगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। [6]विदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। तदियाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं विसेसाहियं। [7]कोहस्स पढमाए संगहकिट्टीए पदेसग्गं संखेज्जगुणं। विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा। तं जहा।

(११८) विदियादो पुण पढमा संखेज्जगुणा दु वग्गणग्गेण।
विदियादो पुण तदिया कमेण सेसा विसेसहिया ॥१७१॥

[8]विहासा। जहा पदेसग्गेण विहासिदं तहा वग्गणग्गेण विहासिदव्वं। [9]एत्तो तदियाए भासगाहाए *समुक्कित्तणा। तं जहा।*

(११९) जा हीणा अणुभागेणहिया सा वग्गणा पदेसग्गे।
भागेणणंतिमेण दु अधिगा हीणा च बोद्धव्वा ॥१७२॥

[10]विहासा। तं जहा। जहण्णियाए वग्गणाए पदेसग्गं बहुअं। [11]विदियाए वग्गणाए पदेसग्गं विसेसहीणमणंतभागेण। एवमणंतराणंतरेण विसेसहीणं सव्वत्थ। एत्तो चउत्थी भासगाहा।

(१२०) [12]कोधादिवग्गणादो सुध्दं कोधस्स उत्तरपदं तु।
सेसो अणंतभागो णियमा तिस्से पदेसग्गे ॥१७३॥

[13]विहासा। एदीए गाहाए परंपरोवणिधाए सेढीए भणिदं होदि। कोहस्स जहण्णियादो वग्गणादो उक्कस्सियाए वग्गणाए पदेसग्गं विसेसहीणमणंतभागेण। एत्तो पंचमीए भासगाहाए समुक्कित्तणा। [14]तं जहा।

(१२१) एसो कमो च कोधे माणे णियमा च होदि मायाए।
लोभम्हि च किट्टीए पत्तेगं होदि बोद्धव्वो ॥१७४॥

विहासा। जहा कोहे चउत्थीए गाहाए विहासा तहा माण-माया-लोभाणं पि णेदव्वा।
माणादिवग्गणादो सुद्धं माणस्स उत्तरपदं तु।
सेसो अणंतभागो णियमा तिस्से पदेसग्गे॥

[15]एवं चेव मायादिवग्गणादो०। लोभादिवग्गणादो०। मूलगाहाए विदियपदमणुभागग्गेणेत्ति। एत्थ एक्का भासगाहा। तं जहा।

(१२२) पढमा च अणंतगुणा विदियादो णियमसा दु अणुभागो।
तदियादो पुण विदिया कमेण सेसा गुणेणहिया ॥१७५॥

[16]विहासा। संगहकिट्टि पडुच्च कोहस्स तदियाए संगहकिट्टीए अणुभागो थोवो। [17]विदियाए संगहकिट्टीए अणुभागो अणंतगुणो। पढमाए संगहकिट्टीए अणुभागो अणंतगुणो। एवं माण-माया-लोभाणं पि। [18]मूलगाहाए तदियपदं 'का च कालणेत्ति। एत्थ छब्भासगाहाओ। [19]तासिं समुक्कित्तणा च विहासा च।

१. पृ० ७३। २. पृ० ७४। ३. पृ० ७७। ४. पृ० ७८। ५. पृ० ७९। ६. पृ० ८०। ७. पृ० ८१। ८. पृ० ८२। ९. पृ० ८३। १०. पृ० ८४। ११. पृ० ८५। १२. पृ० ८६। १३. पृ० ८७। १४. पृ० ८८। १५. पृ० ८९। १६. पृ० ९०। १७. पृ० ९१। १८. पृ० ९२। १९. पृ० ९३।

(१२३) पढमसमयकिट्टीणं कलो वस्सं व दो व चत्तारि ।
अट्ठ च वस्साणि ट्ठिदी विदियट्ठिदीए समा होदि ।।१७६।।

[1]विहासा । [2]जदि कोधेण उवट्ठिदो किट्टीओ वेदेदि तदो तस्स पढमसमए वेदगस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठवस्साणि । [3]माणेण उवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स ट्ठिदिसंतकम्मं चत्तारि वस्साणि । मायाए उवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स वेवस्साणि मोहणीयस्स ट्ठिसिसंतकम्मं । [4]लोभेण उवट्ठिदस्स पढमसमयकिट्टीवेदगस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममेक्कं वस्सं । [5]एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१२४) जं किट्टिं वेदयदे जवमज्झं सांतरं दुसु ट्ठिदीसु ।
पढमा जं गुणसेढी उत्तरसेढी य विदिया दु ।।१७७।।

[6]विहासा । जहा । जं किट्टिं वेदयदे तिस्से उदयट्ठिदीए पदेसग्गं थोवं । विदियाए ट्ठिदीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं । एवमसंखेज्जगुणं जाव पढमट्ठिदीए चरिमट्ठिदि त्ति । तदो विदियट्ठिदीए जा आदिट्ठिदी तिस्से असंखेज्जगुणं । [7]तदो सव्वत्थ विसेसहीणं । जवमज्झं पढमट्ठिदीए चरिमट्ठिदीए च विदियट्ठिदीए आदिट्ठिदीए च । [8]एदं तं जवमज्झं सांतरं दुसु ट्ठिदीसु । एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१२५) विदियट्ठिदिआदिपदा सुद्धं पुण होदि उत्तरपदं तु ।
सेसो असंखेज्जदिमो भागो तिस्से पदेसग्गे ।।१७८।।

[9]विहासा । विदियाए ट्ठिदीए उक्कसियाए पदेसग्गं तिस्से चेव जहण्णियादो ट्ठिदीदो सुद्धं सुद्धसेसं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागियं । [10]एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१२६) उदयादि या ट्ठिदीओ णिरंतरं तासु होइ गुणसेढी ।
उदयादिपदेसग्गं गुणेण गणणादियंतेण ।।१७९।।

[11]विहासा । उदयट्ठिदिपदेसग्गं थोवं । विदियाए ट्ठिदीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं । [12]एवं सव्विस्से पढमट्ठिदीए । एत्तो पंचमीए भासगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१२७) उदयादिसु ट्ठिदीसु य जं कम्मं णियमसा दु तं हरस्सं ।
पविसदि ट्ठिदिक्खएण दु गुणेण गणणादियंतेण ।।१८०।।

[13]विहासा । तं जहा । जं अस्सि समए उदिण्णं पदेसग्गं तं थोवं । से काले ट्ठिदिक्खएण उदयं पविसदि पदेसग्गं तमसंखेज्जगुणं । [14]एवं सव्वत्थ किट्टीवेदगद्धाए । एत्तो छट्ठीए भासगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१२८) [15]वेदगकालो किट्टीय पच्छिमाए दु णियमसा हरस्सो ।
संखेज्जदिभागेण दु सेसग्गाणं कमेणधिगो ।।१८१।।

[16]विहासा । पच्छिमकिट्टीमंतोमुहुत्तं वेदयदि, तिस्से वेदगकालो थोवो । एक्कारसमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । दसमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । [17]णवमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । अट्ठमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । सत्तमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । छट्ठीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । पंचमीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । चउत्थीए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । तदियाए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । विदियाए किट्टीए वेदगकालो सिसेसाहिओ । पढमाए किट्टीए वेदगकालो विसेसाहिओ । विसेसो संखेज्जदिभागो । [18]एत्तो चउत्थीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१२९) कदिसु गदिसु भवेसु य ट्ठिदि-अणुभागेसु वा कसाएसु ।
कम्माणि पुव्वबद्धाणि कदिसु किट्टीसु च ट्ठिदीसु ।।१८२।।

---

१. पृ० ९४ । २. पृ० ९५ । ३. पृ० ९६ । ४. पृ० ९७ । ५. पृ० ९८ । ६. पृ० १०० । ७. पृ० १०१ । ८. पृ० १०२ । ९. पृ० १०३ । १०. पृ० १०४ । ११. पृ० १०५ । १२. पृ०१०६ । १३. पृ० १०७ । १४. पृ० १०८ । १५. पृ० १०९ १६. पृ० १११ । १७. पृ० ११२ । १८. पृ० ११३ ।

[1]एदीस्से तिण्णि भासगाहो । तं जहा ।

(१३०) दोसु गदीसु अभज्जाणि दोसु भज्जाणि पुव्वबद्धाणि ।
एइंदियकाएसु च पंचसु भज्जा ण च तसेसु ।।१८३।।

[2]विहासा । एदस्स खवगस्स दुगदिसमज्जिदं कम्मं णियमा अत्थि । तं जहा—तिरिक्खगदिसमज्जिदं च मणुसगदिसमज्जिदं च । [3]देवगदिसमज्जिदं च णिरयगदिसमज्जिदं च भजियव्वं । [4]पुढविकाइय-आउकाइय-तेउकाइय-वाउकाइय-वणप्फदिकाइएसु तत्तो एक्केक्केण काएण समज्जिदं भजियव्वं । [5]तसकाइयं समज्जिदं णियमा अत्थि । [6]एत्तो एक्केक्काए गदीए कायेहिं च समज्जिदल्लग्गस्स जहण्णुक्कस्सपदेसग्गस्स पमाणाणुगमो च अप्पाबहुअं च कायव्वं । [7]एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१३१) [8]एइंदियभवग्गहणेहिं असंखज्जेहिं णियमसा बद्ध ।
एगादेगुत्तरियं संखेज्जेहिं य तसभवेहिं ।।१८४।।

[9]एदिस्से गाहाए विहासा चेव कायव्वा । [10]एत्तो तदियाए भासागाहाए समुक्कित्तणा ।।

(१३२) उक्कस्सयअणुभागे ट्ठिदिउक्कस्साणि पुव्वबद्धाणि ।
भजियव्वाणि अभज्जाणि होंति णियमा कसाएसु ।।१८५।।

[11]विहासा । उक्कस्सट्ठिदिबद्धाणि उक्कस्सअणुभागबद्धाणि च भजिदव्वाणि । कोह-माण-माया-लोभोवजुत्तेहिं बद्धाणि अभजियव्वाणि । [12]एत्तो पंचमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१३३) पज्जत्तापज्जेत्तेण तधा त्थी-पुण्णवुंसयमिस्सेण ।
सम्मत्ते मिच्छत्ते केण व जोगोवजोगेण ।।१८६।।

[13]एत्थ चत्तारि भासगाहाओ । तं जहा ।

(१३४) पज्जत्तापज्जत्ते मिच्छत्त णवुंसए च सम्मत्ते ।
कम्माणि अभज्जाणि दु थी पुरिसे मिस्सगे भज्जा ।।१८७।।

[14]विहासा । पज्जत्तेण अपज्जत्तेण मिच्छाइट्ठिणा सम्माइट्ठिणा णवुंसयवेदेण च एवंभावभूदेण बद्धाणि णियमा अत्थि । इत्थीए पुरिसेण सम्मामिच्छाइट्ठिणा च एवंभावभूदेण बद्धाणि भज्जाणि । [15]एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१३५) ओरालिये सरीरे ओरालियमिस्सए च जोगे दु ।
चदुविधमण-वचिजोगे च अभज्जगा सेसगे भज्जा ।।१८८।।

विहासा । [16]ओरालिएण ओरालियमिस्सएण चउव्विहेण मणजोगेण चउव्विहेण वचिजोगेण बद्धाणि अभज्जाणि । सेसजोगेसु बद्धाणि भज्जाणि । एत्तो तदियभासगाहा । तं जहा ।

(१३६) अध सुद-मदिउवजोगे होंति अभज्जाणि पुव्वबद्धाणि ।
भज्जाणि च पच्चक्खेसु दोसु छदुमत्थणाणेसु ।।१८९।।

[17]विहासा । सुदणाणे अण्णाणे मदिणाणे अण्णाणे एदेसु चदुसु उवजोगेसु पुव्वबद्धाणि णियमा अत्थि । ओहिणाणे अण्णाणे मणपज्जवणाणे एदेसु तिसु उवजोगेसु पुव्वबद्धाणि भजियव्वाणि । एत्थो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१३७) [18]कम्माणि अभज्जाणि दु अणगार-अचक्खुदंसणुवजोगे ।
अध ओहिदंसणे पुण उवजोगे होंति भज्जाणि ।।१९०।।

---

१. पृ० ११५ । २. पृ० ११८ । ३. पृ० ११९ । ४. पृ० १२० । ५. पृ० १२१ । ६. पृ० १२२ । ७. पृ० १२३ । ८. पृ० १२४ । ९. पृ० १२५ । १०. पृ० १२६ । ११. पृ० १२७ । १२. पृ० १२८ । १३. पृ० १२९ । १४. पृ० १३१ । १५. पृ० १३२ । १६. पृ० १३३ । १७. पृ० १३४ । १८. पृ० १३५ ।

विहासा एसा । [1]एत्तो छट्टी मूलगाहा ।

(१३८) किं लेस्साए बद्धाणि केसु कम्मेसु वट्टमाणेण ।
सादेण असादेण च लिंगेण च कम्हि खेतम्हि ॥१९१॥

[2]एदिस्से दो भासगाहाओ । तासिं समुक्कित्तणा ।

(१३९) लेस्सा साद असादे च अभज्जा कम्म सिप्प लिंगे च ।
खेत्तम्हि च भज्जाणि दु समाविभागे अभज्जाणि ॥१९२॥

[3]विहासा । तं जहा । छसु लेस्सासु सादेण असादेण च बद्धाणि अभज्जाणि । कम्म सिप्पेसु भज्जाणि । कम्माणि जहा – अंगारकम्मं वण्णकम्मं पव्वदकम्ममेदेसु कम्मेसु भज्जाणि । [4]सव्वलिंगेसु च भज्जाणि । [5]खेतम्हि सिया अधोलोगिगं सिया उड्ढलोगिगं णियमा तिरियलोगिगं । अधोलोगमुड्ढलोगिगं च सुद्धं णत्थि । [6]ओसप्पिणीए च उस्सप्पिणीए च सुद्धं णत्थि । एत्तो विदियाए भासगाए समुक्कित्तणा ।

(१४०) एदाणि पुव्वबद्धाणि होंति सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु ।
सव्वेसु चाणुभागेसु णियमसा सव्वकिट्टीसु ॥१९३॥

[7]विहासा । जाणि अभज्जाणि पुव्वबद्धाणि ताणि णियमा सव्वेसु ट्ठिदिविसेसेसु णियमा सव्वासु किट्टीसु । [8]एत्तो सत्तमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१४१) एगसमयपबद्धा पुण अच्छुत्ता केत्तिगा कहिं ट्ठिदीसु ।
भवबद्धा अच्छुत्ता ट्ठिदीसु कहिं केत्तिया होंति ॥१९४॥

[9]एदिस्से चत्तारि भासगाहाओ । तासिं समुक्कित्तणा ।

(१४२) छण्हमावलियाणं अच्छुत्ता णियमसा समयपबद्धा ।
सव्वेसु ट्ठिदिविसेसाणुभागेसु च चउण्हं पि ॥१९५॥

[10]विहासा । जत्तो पाए अंतरं कदं तत्तो पाए समयपबद्धो छसु आवलियासु गदासु उदीरिज्जदि । [11]अंतरादो कदादो तत्तो छसु आवलियासु गदासु तेण परं छण्हमावलियाणं समयपबद्धा उदये अच्छुद्धा भवंति । [12]भवबद्धा पुण णियमा सव्वे उदये संछुद्धा भवंति । एत्तो विदियभासगाहा ।

(१४३) [13]जा चावि बज्झमाणी आवलिया होदि पढमकिट्टीए ।
पुव्वावलिया णियमा अणंतरा चदुसु किट्टीसु ॥

[14]विहासा । जं पदेसग्गं बज्झमाणयं कोधस्स तं पदेसग्गं सव्वं बंधावलियं कोहस्स पढमसंगहकिट्टीए दिस्सइ । तदो आवलियादिक्कंतं तिसु वि कोहकिट्टीसु दीसइ माणस्स च पढमकिट्टीए । [15]एवं विदियावलिया चदुसु किट्टीसु दीसइ । तदो जं पदेसग्गं कोहादो माणस्स पढमकिट्टीए गदं तं पदेसग्गं तदो आवलियाए पुण्णाए माणस्स विदिय-तदियासु मायाए च पढमसंगहकिट्टीए संकमदि । एवं तदिया आवलिया सत्तसु किट्टीसु त्ति भण्णइ । [16]जं कोहपदेसग्गं संछुब्भमाणयं मायाए पढमकिट्टीए संपत्तं तं पदेसग्गं तत्तो आवलियादिक्कंतं मायाए विदिय-तदियासु च किट्टीसु लोभस्स च पढमकिट्टीए संकमदि । एवं चउत्थी आवलिया दससु किट्टीसु त्ति भण्णइ । जं कोहपदेसग्गं संछुब्भमाणं लोभस्स पढमकिट्टीए संपत्तं तदो आवलियादिक्कंतं लोभस्स विदिय-तदियासु किट्टीसु दीसइ । [17]एवं पंचमी आवलिया सव्वासु किट्टीसु त्ति भण्णइ । तदियाए वि भासगाहाए अत्थो एत्थेव परूविदो । णवरि समुक्कित्तणा कायव्वा । तं जहा ।

(१४४) तदिया सत्तसु किट्टीसु चउत्थी दससु होइ किट्टीसु ।
तेण परं सेसाओ भवंति सव्वासु किट्टीसु ॥१९७॥

---

१. पृ० १३६ । २. पृ० १३७ । ३. पृ० १४० । ४. पृ० १४१ । ५. पृ० १४२ । ६. पृ० १४३ । ७. १४५ । ८. पृ० १४६ । ९. पृ० १४८ । १०. पृ० १५० । ११. पृ० १५१ । १२. पृ० १५२ । १३. पृ१५३ । १४. पृ० १५४ । १५. पृ० १५५ । १६. पृ० १५६ । १७. पृ० १५७ ।

[1]एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१४५) एदे समयपबद्धा अच्छुत्ता णियमसा इह भवम्मि ।
सेसा भवबद्धा खलु संछुद्धा होंति बोद्धव्वा ।।१९८।।

[2]एदिस्से गाहाए अत्थो पढमभासगाहाए चेव परूविदो । एत्तो अट्ठमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१४६) एगसमयपबद्धाणं सेसाणि च कदिसु ट्ठिदिविसेसेसु ।
भवसेसगाणि कदिसु च कदि कदि वा एगसमएण ।।१९९।।

[3]एत्थ चत्तारि भासगाहाओ । तासिं समुक्कित्तणा ।

(१४७) एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे भवसेसगसमयपबद्धसेसाणि ।
णियमा अणुभागेसु य भवंति सेसा अणंतेसु ।।२००।।

[4]विहासा । [5]समयपबद्धसेसयं णाम किं । जं समयपबद्धस्स वेदिदसेसगं पदेसग्गं दिस्सइ तम्मि अपरिसेसिदम्मि एगसमयेण उदयमागदम्मि तस्स समयपबद्धस्स अण्णो कम्मपदेसो वा णत्थि तं समयपबद्धसेसगं णाम । [6]एवं चेव भवबद्धसेसयं । एदीए सण्णापरूवणाए पढमाए भासगाहाए विहासा । [7]तं जहा । एक्कस्हि ट्ठिदिविसेसे कदिण्हं समयपबद्धाणं सेसाणि होज्जासु ? एक्कस्स वा समयपबद्धस्स दोण्हं वा तिण्हं वा, एवं गंतूण उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं । [8]भवबद्धसेसयाणि वि एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे एक्कस्स वा भवबद्धस्स दोण्हं वा तिण्हं वा, एवं गंतूण उक्कसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं भवबद्धाणं ।

[9]णियमा अणंतेसु अणुभागेसु भवबद्धसेसगं वा समयपबद्धसेसगं वा । एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा । तं जहा ।

(१४८) ट्ठिदिउत्तरसेढीए भवसेससमयपबद्धसेसाणि ।
एगुत्तरमेगादी उत्तरसेढो असंखेज्जा ।।२०१।।

[10]विहासा । तं जहा । समयपबद्धसेसयमेक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे दोसु वा तीसु वा एगादिएगुत्तरमुक्कस्सेण विदियट्ठिदीए सव्वासु ट्ठिदीसु पढमट्ठिदीए च समयाहियउदयावलियं मोत्तूण सेसासु सव्वासु ठिदीसु णाणासमयपबद्धसेसाणं णाणेगभवबद्धसेसयाणं च । [11]एत्तो तदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१४९) एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे सेसाणि ण जत्थ होंति सामण्णा ।
आवलिगासंखेज्जदिभागो तहिं तारिसो समयो ।।२०२।।

[12]विहासा । सामण्णसण्णा ताव । एक्कम्मि ठिदिविसेसे जम्हि समयपबद्धसेसयमत्थि सा ट्ठिदी सामण्णा त्ति णादव्वा । जम्मि णत्थि सा ट्ठिदी असामण्णा त्ति णादव्वा । [13]एवमसामण्णाओ ट्ठिदीओ एक्का वा दो वा उक्कस्सेण अणुबद्धाओ आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीओ । [14]एक्केक्केण असामण्णाओ थोवाओ । दुगेण विसेसाहियाओ । तिगेण विसेसाहियाओ । आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणाओ । [15]आवलियाए असंखेज्जदिभागे जवमज्झं । [16]समयपबद्धस्स एक्केक्कस्स सेसगमेक्किस्से ट्ठिदीए ते समयपबद्धा थोवा । जे दोसु ट्ठिदीसु ते समयपबद्धा विसेसाहिया । [17]आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणा । [18]आवलियाए असंखेज्जदिभागे जवमज्झं । तदो हीयमाणट्ठाणाणि वासपुधत्तं । [19]एत्तो चउत्थीए भासगाहाए समुक्कित्तणा ।

(१५०) एदेण अंतरेण दु अपच्छिमाए दु पच्छिमे समए ।
भवसमयसेसगाणि दु णियमा तम्हि उत्तरपदाणि ।।२०३।।

१. पृ० १५८ । २. पृ० १५९ । ३. पृ० १६२ । ४. पृ० १६३ । ५. १६४ । ६. पृ० १६६ । ७. पृ० १६७ । ८. पृ० १६८ । ९. पृ० १६९ । १०. पृ० १७१ । ११. पृ० १७३ । १२. पृ० १७५ । १३. पृ० १७६ । १४. पृ० १७७ । १५. पृ० १७८ । १६. पृ० १८१ । १७. पृ० १८२ । १८. पृ० १८३ । १९. पृ० १८४ ।

[1]विहासा। [2]समयपबद्धसेसयं जिस्से ट्ठिदीए णत्थि तदो विदियाए ट्ठिदीए ण होज्ज, तदियाए ठिदीए ण होज्ज, तदो चउत्थीए ण होज्ज। एवमुक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तीसु ट्ठिदीसु ण होज्ज समयपबद्धसेसयं। आवलियाए असंखेज्जदिभागं गंतूण णियमा समयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ ट्ठिदीओ। [3]जाओ ताओ अविरहिदट्ठिदीओ ताओ एगसमयपबद्धसेसएण अविरहिदाओ थोवाओ। अणेगाणं समयपबद्धाणं सेसएण अविरहिदाओ असंखेज्जगुणाओ। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं सेसएण अविरहिदाओ असंखेज्जा भागा। [4]एसा सव्वा चदुहिं गाहाहिं खवगस्स परूवणा कदा। एदाओ चेव चत्तारि वि गाहाओ अभवसिद्धियपाओग्गे णेदव्वाओ। [5]तत्थ पुव्वं गमणिज्जा णिल्लेवणट्ठाणाणमुवदेसपरूवणा। एत्थ दुविहो उवएसो। [6]एक्केण उवदेसेण कम्मट्ठिदीए असंखेज्जा भागा णिल्लेवणट्ठाणाणि। [7]एक्केण उवएसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। जो पवाइज्जइ उवएसो तेण उवदेसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जाणि वग्गमूलाणि णिल्लेवणट्ठाणाणि। [8]अदीदे काले एगजीवस्स जहण्णए णिल्लेवणट्ठाणे णिल्लेविदपुव्वाणं समयपबद्धाणमेसो कालो थोवो। [9]समयुत्तरे विसेसाहिओ। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ते दुगुणो। [10]ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं। [11]णाणागुणहाणिट्ठाणंतराणि थोवाणि। एयगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं। [12]एकम्हि ट्ठिदिविसेसे एक्कस्स वा समयपबद्धस्स सेसयं दोण्हं वा तिण्हं वा उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं समयपबद्धाणं। एवं चेव भवबद्धसेसाणि। पढमाए गाहाए अत्थो समत्तो भवदि। [13]जवमज्झं कायव्वं विस्सरिदं लिहिदुं।

[14]विदियाए भासगाहाए अत्थो जहावसरपत्तो। तं जहा। समयपबद्धसेसयमेक्किस्से ट्ठिदीए होज्ज, दोसु तीसु वा। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेसु। [15]णिल्लेवणट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे समयपबद्धसेसयाणि। समयपबद्धसेसयाणि एक्कम्हि ट्ठिदिविसेसे जाणि ताणि थोवाणि। दोसु ट्ठिदिविसेसेसु विसेसाहियाणि। [16]तिसु ट्ठिदिविसेसेसु विसेसाहियाणि। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे जवमज्झं। णाणंतराणि थोवाणि। [17]एयमंतरमसंखेज्जगुणं। एवं भवबद्धसेसयाणि। [18]विदियाए गाहाए अत्थो समत्तो भवदि।

तदियाए गाहाए अत्थो। असामण्णाओ ट्ठिदीओ एक्को वा दो वा तिण्णि वा एवमणुबद्धाओ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। [19]एवं तदियाए गाहाए अत्थो समत्तो। एत्तो चउत्थीए गाहाए अत्थो। सामण्णट्ठिदीओ एक्कंतरिदाओ थोवाओ। [20]दुअंतरिदा विसेसाहिया। एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे जवमज्झं। [21]णाणागुणहाणिसलागाणि थोवाणि। एक्कंतरमसंखेज्जगुणं। एदमक्खवगस्स णादव्वं। [22]खवगस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागो अंतरं। इमस्स पुण सामण्णाणं ट्ठिदीणमंतरं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। जहा समयपबद्धसेसयाणि तहा भवबद्धसेसाणि कादव्वाणि। [23]एवं चउत्थीए गाहाए अत्थो समत्तो भवदि। अट्ठमीए मूलगाहाए विहासा समत्ता भवदि।

इमा अण्णा अभवसिद्धियपाओग्गे परूवणा। [24]तं जहा। भवबद्धाणं णिल्लेवणट्ठाणं जहण्णगं समयपबद्धस्स णिल्लेवणट्ठाणाणं जहण्णयादो असंखेज्जाओ ट्ठिदीओ अब्भुस्सरिदूण। [25]तदो जवमज्झं कायव्वं। जम्हि चेव समयपबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं जवमज्झं तम्हि चेव भवबद्धणिल्लेवणट्ठाणाणं जवमज्झं। [26]अदीदे काले जे समयपबद्धा एक्केण पदेसग्गेण णिल्लेविदा ते थोवा। बेहिं पदेसेहिं विसेसाहिया। एवमणंतरोवणिधाए अणंताणि ट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [27]ठाणाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपडिभागे जवमज्झं।

---

१. पृ० १८५। २. पृ० १८६। ३. पृ० १८७। ४. पृ० १८९। ५. पृ० १९०। ६. पृ० १९१। ७. पृ० १९२। ८. पृ० १९३। ९. पृ० १९४। १०. पृ० १९५। ११. पृ० १९६। १२. पृ० १९७। १३. पृ० १९८। १४. पृ० २००। १५. पृ० २०१। १६. पृ० २०२। १७. पृ० २०३। १८. पृ० २०४। १९. पृ० २०५। २०. पृ० २०६। २१. पृ० २०७। २२. २०८। २३. पृ० २१०। २४. पृ० २११। २५. पृ० २१३। २६. पृ० २१५। २७. पृ० २१६।

[1]णाणंतरं थोवं। एगंतरमणंतगुणं। अंतराणि अंतरट्ठिदाए पलिदोवमच्छेदणाणं पि असंखेज्जदिभागो। [2]णाणंतराणि थोवाणि। एकांतरमणंतगुणं। खवगस्स वा अक्खवगस्स वा समयपबद्धाणं वा भवबद्धाणं वा अणुसमयणिल्लेवणकालो एगसमइओ बहुगो।

[3]दुसमइओ विसेसहीणो। [4]एवं गंतूण आवलियाए असंखेज्जदिभागे दुगुणहीणो। उक्कस्सओ वि अणुसमयणिल्लेवणकालो आवलियाए असंखेज्जदिभागो। [5]अक्खवगस्स एगसमइयेण अंतरेण णिल्लेविदा समयपबद्धा वा भवबद्धा वा थोवा। दुसमएण अंतरेण णिल्लेविदा विसेसाहिया। [6]एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे दुगुणा। ट्ठाणाणमसंखेज्जदिभागे जवमज्झं। [7]उक्कस्सयं पि णिल्लेवणंतरं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। [8]एक्केण समयेण णिल्लेविज्जंति समयपबद्धा वा भवबद्धा वा एक्को वा, दो वा, तिण्णि वा; उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। एदेण वि जवमज्झं। एक्केक्केण णिल्लेविज्जति ते थोवा। [9]दोण्णि णिल्लेविज्जंति विसेसाहिया। तिण्णि णिल्लेविज्जंति विसेसाहिया। एवं गंतूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागे दुगुणा। [10]णाणंतराणि थोवाणि। एक्कंतरछेदणाणि वि असंखेज्जगुणाणि। अप्पाबहुअं। [11]सव्वथोवमणुसमयणिल्लेवणकंडयमुक्कस्सयं। जे एगसमएण णिल्लेविज्जंति भवबद्धा ते असंखेज्जगुणा। समयपबद्धा एगसमयेण णिल्लेविज्जंति असंखेज्जगुणा। समयपबद्धसेसएण विरहिदाओ णिरंतराओ ट्ठिदीओ असंखेज्जगुणाओ। [12]पलिदोवमवग्गमूलमसंखेज्जगुणं। णिसेगगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं। भवबद्धाणं णिल्लेवणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। समयपबद्धाणं णिल्लेवणट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [13]समयपबद्धस्स कम्मट्ठिदीए अंतो अणुसमयअवेदगकालो असंखेज्जगुणो। समयपबद्धस्स कम्मट्ठिदीए अंतो अणुसमयवेदगकालो असंखेज्जगुणो।

[14]सव्वो अवेदगकालो असंखेज्जगुणो। सव्वो वेदगकालो असंखेज्जगुणो। कम्मट्ठिदी विसेसाहिया। [15]णवमीए मूलगाहाए समुक्कित्तणा।

(१५१) किट्टीकदम्मि कम्मे ट्ठिदि-अणुभागेसु केसु सेसाणि।
कम्माणि पुव्वबद्धाणि बज्झमाणाणुदिण्णाणि ॥२०४॥

[16]एदिस्से दो भासगाहाओ। [17]तासिं समुक्कित्तणा।

(१५२) किट्टीकदम्मि कम्मे णामागोदाणि वेदणीयं च।
वस्सेसु असंखेज्जेसु सेसगा होंति संखेज्जा ॥२०५॥

विहासा। [18]किट्टीकरणे णिट्ठिदे किट्टीणं पढमसमयवेदगस्स णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि। मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठवस्साणि। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। एत्तो विदियाए भासगाहाए समुक्कित्तणा।

(१५३) किट्टीकदम्मि कम्मे सादं सुहणाममुच्चगोदं च।
बंधदि च सदसहस्से ट्ठिदिअणुभागे सुदुक्कस्सं ॥२०६॥

[19]विहासा। किट्टीणं पढमसमयवेदगस्स संजलणाणं ठिदिबंधो चत्तारि मासा। णामागोदवेदणीयाणं तिण्णं चेव घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामागोदवेदणीयाणमणुभागबंधो तस्समयउक्कस्सगो। [20]एत्तो ताव दो मूलगाहाओ थवणिज्जाओ। [21]किट्टीवेदगस्स ताव परूवणा कायव्वा। तं जहा। किट्टीणं पढमसमयवेदगस्स संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्ममट्ठ वस्साणि। तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामागोदवेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। संजलणाणं ठिदिबंधो चत्तारि मासा। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। [22]किट्टीणं पढमसमयवेदगप्पहुडि मोहणीयस्स अणुभागाणमणुसमयोवट्टणा। [23]पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहकिट्टी

---

१. पृ० २१७। २. पृ० २१८। ३. पृ० २१९। ४. पृ० २२०। ५. पृ० २२१। ६. पृ० २२२। ७. पृ० २२३। ८. पृ० २२४। ९. पृ० २२५। १०. पृ० २२६। ११. पृ० २२७। १२. पृ० २२८। १३. पृ० २२९। १४. पृ० २३०। १५. पृ० २३१। १६. पृ० २३२। १७. पृ० २३३। १८. पृ० २३४। १९. पृ० २३६। २०. पृ० २३७। २१. पृ० २३८। २२. पृ० २३९। २३. पृ० २४०।

उदये उक्कस्सिया बहुगी । बंधे उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा । बिदियसमये उदये उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा । बंधे उक्कस्सिया अणंतगुणहीणा । [1]एवं सव्विस्से किट्टीवेदगद्धाए ।

पढमसमये बंधे जहण्णिया किट्टी तिव्वाणुभागा । उदये जहण्णिया किट्टी अणंतगुणहीणा । [2]विदिय-समये बंधा (वद्धा) जहण्णिया किट्टी अणंतगुणहीणा उदये जहण्णिया अणंतगुणहीणा । एवं सव्विस्से किट्टीवेद-गद्धाए । समये समये णिव्वग्गणाओ जहण्णियाओ वि य । [3]एसा कोहकिट्टीए परूवणा । [4]किट्टीणं पढमसमये वेदगस्स माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए किट्टीणमसंखेज्जा भागा बज्झंति । सेसाओ संगहकिट्टीओ ण बज्झंति । एवं मायाए । एवं लोभस्स वि । किट्टीणं पढमसमयवेदगो बारसण्हं पि संगहकिट्टीणमग्ग-किट्टिमादिं कादूण एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए असंखेज्जदिभागं विणासेदि । [5]कोहस्स पढमसंगहकिट्टिं मोत्तूण सेसाणमेक्कारसण्हं संगहकिट्टीणं अण्णाओ अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तेदि । [6]ताओ अपुव्वाओ किट्टीओ कदमादो पदेसग्गादो णिव्वत्तेदि । बज्झमाणयादो च संकामिज्जमाणयादो च पदेसग्गादो णिव्वत्तेदि । [7]बज्झमाणियादो थोवाओ णिव्वत्तेदि । संकामिज्जमाणयादो असंखेज्जगुणाओ । जाओ ताओ बज्झमाणयादो पदेसग्गादो णिव्वत्तिज्जंति ताओ चदुसु पढमसंगहकिट्टीसु । [8]ताओ कदमम्मि ओगासे ? एक्केक्किस्से संगहकिट्टीए किट्टीअंतरेसु । [9]किं सव्वेसु किट्टीअंतरेसु आहो ण सव्वेसु ? ण सव्वेसु । जइ ण सव्वेसु कदमेसु अंतरेसु अपुव्वाओ णिव्वत्तयदि । उवसंदरिसणा । [10]बज्झमणियाणं जं पढमं किट्टीअंतरं तत्थ णत्थि । एवं असंखेज्जाणि किट्टीअंतराणि अविच्छिदूण । किट्टीअंतराणि अंतरट्ठदाए असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि । [11]एत्तियाणि किट्टीअंतराणि गंतूण अपुव्वा किट्टी णिव्वत्तिज्जदि । पुणो वि एत्तियाणि किट्टीअंतराणि गंतूण अपुव्वा किट्टी णिव्वत्तिज्जदि । [12]बज्झमाणयस्स पदेसग्गस्स णिसेगसेढिपरूवणं वत्तइस्सामो । तत्थ जहण्णियाए किट्टीए बज्झमाणियाए बहुअं । विदियाए किट्टीए विसेसहीणमणंतभागेण ।

[13]तदियाए विसेसहीणमणंतभागेण । चउत्थीए विसेसहीणं । एवमणंतरोवणिधाए ताव विसेसहीणं जाव अपुव्वकिट्टिमपत्तो त्ति । [14]अपुव्वाए किट्टीए अणंतगुणं । अपुव्वादो किट्टीदो जा अणंतरकिट्टी तत्थ अणंतगुणहीणं । [15]तदो पुणो अणंतभागहीणं । एवं सेसासु सव्वासु । जाओ संकामिज्जमाणियादो पदेसग्गादो अपुव्वाओ किट्टीओ णिव्वत्तिज्जंति ताओ दुसु ओगासेसु । [16]तं जहा । किट्टीअंतरेसु च संगहकिट्टीअंतरेसु च । जाओ संगहकिट्टीअंतरेसु ताओ थोवाओ । [17]जाओ किट्टीअंतरेसु ताओ-असंखेज्जगुणाओ । जाओ संगहकिट्टीअंतरेसु तासि जहा किट्टीकरणे अपुव्वाणं णिव्वत्तिज्जमाणियाणं किट्टीणं विधी तहा कायव्वो । [18]जाओ किट्टीअंतरेसु तासि जहा बज्झमाणयेण पदेसग्गेण अपुव्वाणं णिव्वत्ति ज्जमाणियाणं किट्टीणं विधी तहा कायव्वो । णवरि थोवदरगाणि किट्टीअंतराणि गंतूण संछुब्भमाणपदेसग्गेण अपुव्वा किट्टी णिव्वत्तिज्जमाणिगा दिस्सदि । [19]ताणि किट्टीअंतराणि पगणणादो पलिदोवमवग्गमूलस्स असंखेज्जदिभागो । [20]पढमसमयकिट्टीवेदगस्स जा कोहपढमसंगहकिट्टी तिस्से असंखेज्जदिभागो विणासिज्जदि । [21]किट्टीओ जाओ पढमसमये विणासिज्जंति ताओ बहुगीओ । जाओ विदियसमये विणासिज्जंति ताओ असंखेज्जगुणहीणाओ । एवं ताव दुचरिमसमयअविणट्ठकोहपढमसंगपकिट्टि त्ति । [22]एदेण सव्वेण तिचरिमसमयमेत्तीओ सव्वकिट्टीसु पढमविदियसमयवेदगस्स कोधस्स पढमकिट्टीए अबज्झ-माणियाणं किट्टीणमसंखेज्जदिभागो । [23]कोहस्स पढमकिट्टिं वेददयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए सेसाए एदम्हि समये जो विही तं विहिं वत्तइस्सामो ।

१. पृ० २४१ । २. पृ० २४२ । ३. पृ० २४३ । ४. पृ० २४४ । ५. पृ० २४५ । ६. पृ० २४६ । ७. पृ० २४७ । ८. पृ० २४८ । ९. पृ० २४९ । १०. पृ० २५० । ११. पृ० २५१ । १२. पृ० २५२ । १३. पृ० २५३ । १४. पृ० २५४ । १५. पृ० २५५ । १६. पृ० २५६ । १७. पृ० २५७ । १८. पृ०२६० । १९. पृ० २६२ । २०. पृ० २६३ । २१. पृ० २६४ । २२. पृ० २६५ । २३. पृ० २६६ ।

तं जहा। ताधे चेव कोहस्स जहण्णगो ट्ठिदिउदीरगो। कोहपढमकिट्टीए चरिमसमयवेदगो जादो। [1]जा पुव्वपवत्ता संजलणाणुभागसंतकम्मस्स अणुसमयमोवट्टणा सा तहा चेव [३]। चदुसंजलणाणं ट्ठिदिबंधो वे मासा, चत्तालीसं च दिवसा अंतोमुहुत्तूणा [४]। संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं छ वस्साणि अट्ठ च मासा अंतोमुहुत्तूणा [५]। [2]तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो दसवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि [६]। घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्साणि [७]। सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि [८]। [3]से काले कोहस्स विदियकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण कोहस्स पढमट्ठिदिं करेदि। ताधे कोधस्स पढमसंगहकिट्टीए संतकम्मं दो आवलियबंधा दुसमयूणा सेसा, जं च उदयावलियं पविट्ठं तं च सेसं।[4] ताधे कोहस्स विदियकिट्टीवेदगो।[5] जो कोहस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणस्स विधी सो चेव कोहस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स विधी कायव्वो। तं जहा। उदिण्णाणं किट्टीणं बज्झमाणीणं किट्टीणं विणासिज्जमाणीणं अपुव्वाणं णिव्वत्तिज्जमाणियाणँ बज्झमाणेण च पदेसग्गेण संछुब्भमाणेण च पदेसग्गेण णिव्वत्तिज्जमाणियाणं। [6]एत्थ संकममाणयस्स पदेसग्गस्स विधिं वत्तइस्सामो। तं जहा। कोधविदियकिट्टीदो पदेसग्गं कोहतदियं च माणपढमं च गच्छदि। कोहस्स तदियादो किट्टीदो माणस्स पढमं चेव गच्छदि।[7] माणस्स पढमादो किट्टीदो माणस्स विदियं तदियं मायाए पढमं च गच्छदि। माणस्स विदियकिट्टीदो माणस्स तदियं च मायाए पढमं च गच्छदि। माणस्स तदियकिट्टीदो मायाए पढमं गच्छदि। मायाए पढमादो पदेसग्गं मायाए विदियं तदियं च लोभस्स पढमकिट्टिं च गच्छदि। मायाए विदियादो किट्टीदो पदेसग्गं मायाए तदियं लोभस्स पढमं च गच्छदि। मायाए तदियादो किट्टीदो पदेसग्गं लोभस्स पढमं गच्छदि।[8] लोभस्स पढमादो किट्टीदो पदेसग्गं लोभस्स विदियं च तदियं च गच्छदि। लोभस्स विदियादो पदेसग्गं लोभस्स तदियं गच्छदि।

जहा कोहस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणो चदुण्हं कसायाणं पढमकिट्टीओ बंधदि। किमेवं चेव कोधस्स विदियकिट्टिं वेदेमाणो चदुण्हं कसायाणं विदियकिट्टीओ बंधदि, आहो ण, वत्तव्वं।[9] किध खु। समासलक्खणं भणिस्सामो। जस्स जं किट्टिं वेदयदि तस्स कसायस्स तं किट्टिं बंधदि, सेसाणं कसायाणं पढमकिट्टीओ बंधदि।

[10]कोधविदियकिट्टीए पढमसमए वेदगस्स एक्कारससु संगहकिट्टीसु अंतरकिट्टीणमप्पाबहुवं वत्तइस्सामो। तं जहा। सव्वत्थोवाओ माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ। विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। [11]तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। कोहस्स तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। मायाए पढमाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। तदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। कोहस्स विदियाए संगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ संखेज्जगुणाओ। [12]पदेसग्गस्स वि एवं चेव अप्पाबहुअं।

[13]कोहस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिय-पडिआवलियाए सेसाए आगालपडिआगालो वोच्छिण्णो। तिस्से चेव पढमट्ठिदीए समयाहियाए आवलियाए सेसाए ताहे कोहस्स विदियकिट्टीए चरिमसमयवेदगो। ताधे संजलणाणं ट्ठिदिबंधो वे मासा बीसं च दिवसा देसूणा। [14]तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो वासपुधत्तं। सेसाणं कम्माणं ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। संजलणाणं ट्ठिदिसंतकम्मं पंच वस्साणि चत्तारि मासा अंतोमुहुत्तूणा। तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामागोदवेदणीयाणं ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि।

---

१. पृ० २६७। २. पृ० २६८। ३. पृ० २६९। ४. पृ० २७०। ५. पृ० २७१। ६. पृ० २७२। ७. पृ० २७३। ८. पृ० २७४। ९. पृ० २७५। १०. पृ० २७६। ११. पृ० २७७। १२. पृ० २७८। १३. पृ० २७९। १४. पृ० २८०।

तदो से काले कोहस्स तदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । [1]ताधे कोहस्स तदियसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीणमसंखेज्जा भागा उदिण्णा । तासिं चेव असंखेज्जा भागा बज्झंति । जो विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स विधी सो चेव विधी तदियकिट्टिं वेदयमाणस्स वि कायव्वो ।

[2]तदियकिट्टिं वेदेमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलियाए समयाहियाए सेसाए चरिमसमयकोधवेदगो । जहण्णगो ठिदिउदीरगो । ताधे ट्ठिदिबंधो संजलणाणं दो मासा पडिवुण्णा । [3]संतकम्मं चत्तारि वस्साणि पुण्णाणि ।

से काले माणस्स पढमकिट्टिमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । जा एत्थ सव्वमाणवेदगद्धा तिस्से वेदगद्धाए तिभागमेत्ता पडमट्ठिदी । [4]तदो माणस्स पढमकिट्टिं वेदेमाणो तिस्से पढमकिट्टीए अंतरकिट्टीणमसंखेज्जे भागे वेदयदि । तदो उदिण्णाहिंतो विसेसहीणाओ बंधदि । [5]सेसाणं कसायाणं पढमसंगहकिट्टीओ बंधदि । जेणेव विहिणा कोधस्स पढमकिट्टी वेदिदा, तेणेव विधिणा माणस्स पढमकिट्टिं वेदयदि । [6]किट्टीविणासणे बज्झमाणएण संकामिज्जमाणएण च पदेसग्गेण अपुव्वाणं किट्टीणं करणे किट्टीणं बंधोदयणिव्वग्गणकरणे एदेसु करणेसु णत्थि णाणत्तं, अण्णेसु च अभणिदेसु । एदेण कमेण माणपढमकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए जाधे समयाहियावलिया सेसा ताधे तिण्हं संजलणाणं ठिदिबंधो मासो वीसं च दिवसा अंतोमुहुत्तूणा । [7]संतकम्मं तिण्णि वस्साणि चत्तारि मासा च अंतोमुहुत्तूणा ।

से काले माणस्स विदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । तेणेव विहिणा संपत्तो माणस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से समयाहियावलियसेसा त्ति । [8]ताधे संजलणाणं ट्ठिदिबंधो मासो[9] दस च दिवसा देसूणा । संतकम्मं दो वस्साणि अट्ठ च मासा देसूणा ।

से काले माणतदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । तेणेव विहिणा संपत्तो माणस्स तदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्सेआवलिया समयहियाभेत्ती सेसा त्ति । ताधे माणस्स चरिमसमयवेदगो । ताधे तिण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो मासो पडिपुण्णो । संतकम्मं वे वस्साणि पडिपुण्णाणि ।

तदो से काले मायाए पढमकिट्टीए पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । तेणेव विहिणा संपत्तो मायापढमकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से समयाहियावलिया सेसा त्ति । ताधे ठिदिबंधो दोण्हं संजलणाणं पणुवीसं दिवसा देसूणा । ट्ठिदिसंतकम्मं वस्समट्ठ च मासा देसूणा ।

से काले मायाए विदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । सो वि मायाए विदियकिट्टीवेदगो तेणेव विहिणा संपत्तो मायाए विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिया समयाहिया सेसा त्ति । ताधे ट्ठिदिबंधो वीसं दिवसा देसूणा । [10]ट्ठिदिसंतकम्मं सोलस मासा देसूणा ।

से काले मायाए तदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । तेणेव विहिणा संपत्तो मायाए तदियकिट्टिं वेदगस्स पढमट्ठिदीए समयाहियावलिया सेसा त्ति । ताधे मायाए चरिमसमयवेदगो । ताधे दोण्हं संजलणाणं ट्ठिदिबंधो अद्धमासो पडिवुण्णो । ट्ठिदिसंतकम्ममेक्कं वस्सं पडिवुण्णं । तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो मासपुधत्तं । तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि । इदरेसिं कम्माणं [ट्ठिदिबंधो संखेज्जाणि वस्साणि ।] ट्ठिदिसंतकम्मं असंखेज्जाणि वस्साणि ।

[11]तदो से काले लोभस्स पढमकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि । [12]तेणेव विहिणा संपत्तो लोभस्स पढमकिट्टिं वेदयमाणस्स पढमट्ठिदीए समयाहियावलिया सेसा त्ति । ताधे लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तं । ट्ठिदिसंतकम्मं पि अंतोमुहुत्तं । [13]तिण्हं घादिकम्माणं ठिदिबंधो दिवसपुधत्तं । सेसाणं कम्माणं

१. पृ० २८१ । २. पृ० २८२ । ३. पृ० २८३ । ४. पृ० २८४ । ५. पृ० २८६ । ६. पृ० २८७ । ७. पृ० २८८ । ८. पृ० २८९ । ९. पृ० २९० । १०. पृ० २९१ । ११. पृ० २९२ । १२. पृ० २९३ । १३. पृ० २९४ ।

वासपुधत्तं। घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। सेसाणं कम्माणं असंखेज्जाणि वस्साणि।

तत्तो से काले लोभस्स विदियकिट्टीदो पदेसग्गमोकड्डियूण पढमट्ठिदिं करेदि। ताधे चेव लोभस्स विदियकिट्टीदो च तदियकिट्टीदो च पदेसग्गमोकड्डियूण सुहुमसांपराइयकिट्टीओ णाम करेदि। [1]तासिं सुहुमसांपराइयकिट्टीणं कम्हि ट्ठाणं? तासिं ट्ठाणं लोभस्स तदियाए संगहकिट्टीए हेट्ठदो।

जारिसी कोहस्स पढमसंगहकिट्टी, तारिसी एसा सुहुमसांपराइयकिट्टी। [2]कोहस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ थोवाओ। कोहे संछुद्धे माणस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। [3]माणे संछुद्धे मायाए पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। मायाए संछुद्धाए लोभस्स पढमसंगहकिट्टीए अंतरकिट्टीओ विसेसाहियाओ। सुहुमसांपराइयकिट्टीओ जाओ पढमसमये कदाओ ताओ विसेसाहियाओ। [4]एसो विसेसो अणंतराणंतरेण संखेज्जदिभागो।

सुहुमसांपराइयकिट्टीओ जाओ पढमसमये कदाओ ताओ बहुगाओ। विदियसमए अपुव्वाओ कीरंति असंखेज्जगुणहीणाओ। अणंतरोवणिधाए सव्विस्से सुहुमसांपराइयकिट्टीकरणद्धाए अपुव्वाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ असंखेज्जगुणहीणाए सेढीए कीरंति। [5]सुहुमसांपराइयकिट्टीसु जं पढमसमये पदेसग्गं दिज्जदि तं थोवं। विदियसमये असंखेज्जगुणं। एवं जाव चरिमसमयादो त्ति असंखेज्जगुणं।

सुहुमसांपराइयकिट्टीसु पढमसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा। जहण्णियाए किट्टीए पदेसग्गं बहुअं। विदियाए विसेसहीणमणंतभागेण। तदियाए विसेसहीणं। [6]एवमणंतरोवणिधाए गंतूण चरिमाए सुहुसतांपराइयकिट्टीए पदेसग्गं विसेसहीणं। चरिमादो सुहुमसांपराइयकिट्टीदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए दिज्जमाणगं पदेसग्गमसंखेज्जगुणहीणं। तदो विसेसहीणं। [7]सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगो विदियसमये अपुव्वाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ करेदि असंखेज्जगुणहीणाओ। ताओ दोसु ट्ठाणेसु करेदि। तं जहा। पढमसमये कदाणं हेट्ठा च अंतरे च। हेट्ठा थोवाओ। अंतरेसु असंखेज्जगुणाओ।

[8]विदियसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स सेढिपरूवणा। जा विदियसमए जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तिस्से पदेसग्गं दिज्जदि बहुअं। विदियाए किट्टीए अणंतभागहीणं। एवं गंतूण पढमसमये जा जहण्णिया सुहुमसांपराइयकिट्टी तत्थ असंखेज्जदिभागहीणं। तत्तो अणंतभागहीणं जाव अपुव्वं णिव्वत्तिज्जमाणगं ण पावदि। [9]अपुव्वाए णिव्वत्तिज्जमाणिगाए किट्टीए असंखेज्जदिभामुत्तरं। पुव्वणिव्वत्तिदं पडिवज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स असंखेज्जदिभागहीण। परं परं पडिवज्जमाणगस्स अणंतभागहीणं। [10]जो विदियसमये दिज्जमाणगस्स पदेसग्गस्स विधी सो चेव विधी सेसेसु वि समएसु जाव चरिमसमयबादरसांपराइयो त्ति।

सुहुमसांपराइयकिट्टीकारगस्स किट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्स सेढिपरूवणं। तं जहा। [11]जहण्णियाए सुहुमसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गं बहुगं। तत्तो अणंतभागहीणं जाव चरिमसुहुमसांपराइयकिट्टि त्ति। तदो जहण्णियाए बादरसांपराइयकिट्टीए पदेसग्गमसंखेज्जगुणं। एसा सेढिपरूवणा जाव चरिमसमयबादरसांपराइओ त्ति। पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स वि किट्टीसु दिस्समाणपदेसग्गस्स सा चेव सेढिपरूवणा। [12]णवरि सेचीयादो जदि बादरसांपराइयकिट्टीओ धरेदि तत्थ पदेसग्गं विसेसहीणं होज्ज। [13]सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु लोभस्स चरिमादो बादरसांपराइयकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं थोवं। लोभस्स विदियकिट्टीदो चरिमबादरसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं। [14]लोभस्स विदियकिट्टीदो सुहुमसांपराइयकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं।

---

१. पृ० २९६। २. पृ० २९८। ३. पृ० २९९। ४. पृ० ३००। ५. पृ० ३०१। ६. पृ० ३०२। ७. पृ० ३०३। ८. पृ० ३०४। ९. पृ० ३०५। १०. पृ० ३०६। ११. पृ० ३०७। १२. पृ० ३०८। १३. पृ० ३०९। १४. पृ० ३१०।

पढमसमयकिट्टीवेदगस्स कोहस्स विदियकिट्टीदो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं थोवं। [1]कोहस्स तदियकिट्टीदो माणस्स पढमाए संगहकिट्टीए संकमदिपदेसग्गं विसेसाहियं। माणस्स पढमादो संगहकिट्टीदो मायाए पढमकिट्टीए संकमणदि पदेसग्गं विसेसाहियं। [2]माणस्स विदियादो संगहकिट्टीदो मायाए पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। [3]माणस्स तदियादो संगहकिट्टीदो मायाए पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। मायाए पढमसंगहकिट्टीदो लोभस्स पढममाए संगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। मायाए विदियादो संगहकिट्टीदो लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीय संकमढि पदेसग्गं विसेसाहियं। मायाए तदियादो संगहकिट्टीदो लोभस्स पढमाए संगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। लोभस्स पढमकिट्टीदो लोभस्स चेव विदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। लोभस्स चेव पढमसंगहकिट्टीदो तस्स चेव [4]तदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। कोहस्स पढमसंगहकिट्टीदो माणस्स पढमसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं। कोहस्स चेव पढमसंगहकिट्टीदो[5] कोहस्स चेव तदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं विसेसाहियं। कोहस्स पढमसंगहकिट्टीदो कोहस्स चेव विदियसंगहकिट्टीए संकमदि पदेसग्गं संखेज्जगुणं। एसो पदेससंकमो अइक्कंतो वि उक्खेदिदो सुहुमसांपराइयकिट्टीसु कीरमाणीसु आसओ त्ति कादूण।

[6]सुहुमसांपराइयकिट्टीसु पढमसमये दिज्जदि पदेसग्गं थोवं। विदियसमये असंखेज्जगुणं जाव चरिमसमयादो त्ति ताव असंखेज्जगुणं। एदेण कमेण लोहस्स विदियकिट्टि वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी [7]तिस्से पढमट्ठिदीए आवलिया समयाहिया सेसा त्ति तम्हि समये चरिमसमयबादरसांपराइओ। तम्हि चेव समये लोभस्स चरिमसमयबादरसांपराइयकिट्टी संछुब्भमाणा संछुद्धा। लोभस्स विदियकिट्टीए वि दोआवलियबंधे समयूणे मोत्तूण उदयावलियपविट्ठं च मोत्तूण सेसाओ विदियकिट्टीए अंतरकिट्टीओ संछुब्भमाणीओ संछुद्धाओ।

तम्हि चेव लोभसंजलणस्स ट्ठिदिबंधो अंतोमुहुत्तं। [8]तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिबंधो अहोरत्तस्स अंतो। णामा-गोद-वेदणीयाणं बादरसांपराइयस्स जो चरिमो ट्ठिदिबंधो सो संखेज्जेहिं वस्ससहस्सेहिं हाइदूण वस्सस्स अंतो जादो। चरिमसमयबादरसांपराइयस्स मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्ममंतोमुहुत्तं। तिण्हं घादिकम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मं संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। णामा-गोद-वेदणीयाणं ट्ठिदिसंतकम्ममसंखेज्जाणि वस्साणि।

से काले पढमसमयसुहुमसांपराइयो जादो। [9]ताधे चेव सुहुमसांपराइयकिट्टीणं जाओ ट्ठिदीओ तदो ट्ठिदिखंडयमागाइदं। तदो पदेसग्गमोकड्डियूण उदये थोवं दिण्णं। [10]अंतोमुहुत्तद्धमेत्तमसंखेज्जगुणाए सेढीए। गुणसेढिणिक्खेवो सुहुमसांपराइयद्धादो विसेसुत्तरो। गुणसेढिसीसगादो जा अणंतरट्ठिदी तत्थ असंखेज्जगुणं। [11]तत्तो विसेसहीणं ताव जाव पुव्वसमये अंतरमासी, तस्स अंतरस्स चरिमादो अंतरट्ठिदीदो त्ति। [12]चरिमादो अंतरट्ठिदीदो पुव्वसमये जा विदियट्ठिदी तिस्से आदिट्ठिदीए दिज्जमाणगं पदेसग्गं संखेज्जगुणहीणं। तत्तो विसेसहीणं।

[13]पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स जमोकड्डिज्जदि पदेसग्गं तमेदीए सेढीए णिक्खिवदि। विदियसमए वि एवं चेव। तदियसमए वि एवं चेव। एस कमो ओकड्डिदूण णिसिंचमाणगस्स पदेसग्गस्स ताव जाव सुहुमसांपराइयस्स पढमट्ठिदिखंडयं णिस्सेविदं ति। [14]विदियादो ठिदिखंडयादो ओकड्डियूण जं पदेसग्गमुदये दिज्जदि तं थोवं। तदो दिज्जदि असंखेज्जगुणाए सेढीए ताव जाव गुणसेढिसीसयादो उपरिमाणंतरा एक्का ट्ठिदि त्ति। तदो विसेसहीणं। एत्तो पाए सुहुमसांपराइयस्स जाव मोहणीयस्स ट्ठिदिवादो ताव एस कमो।

---

१. पृ० ३११। २. पृ० ३१२। ३. पृ० ३१३। ४. पृ० ३१४। ५. पृ० ३१५। ६. पृ० ३१७। ७. पृ० ३१८। ८. पृ० ३१९। ९. पृ० ३२०। १०. पृ० ३२१। ११. पृ० ३२२। १२. पृ० ३२३। १३. पृ० ३२४। १४. पृ० ३२५।

पडमसमयसुहुमसांपराइयस्स जं दिस्सदि पदेसग्गं तस्स सेढिपरूपणं वत्तइस्सामो। तं जहा। पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स उदये दिस्सदि पदेसग्गं थोवं। विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं दीसदि। एवं ताव जाव गुणसेढिसीसयं त्ति। गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ट्ठिदि त्ति। तत्तो विसेसहीणं ताव जाव चरिमअंतरट्ठिदि त्ति। तत्तो असंखेज्जगुणं। तत्तो विसेसहीणं। एस कमो ताव जाव सुहुमसांपराइयस्स पढमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयअणिल्लेविदं त्ति। पढमे ट्ठिदिखंडए णिल्लेविदे जं उदये पदेसग्गं दिस्सदि तं थोवं। विदियाए ट्ठिदीए असंखेज्जगुणं। एवं ताव जाव गुणसेढिसीसयं। गुणसेढिसीसयादो अण्णा च एक्का ट्ठिदि त्ति असंखेज्जगुणं दिस्सदि। तत्तो विसेसहीणं जाव उक्कस्सिया मोहणीयस्स ट्ठिदि त्ति।

सुहुमसांपराइयस्स पढमट्ठिदिखंडए पढमसमयणिल्लेविदे गुणसेढिं मोत्तूण केण कारणेण सेसिगासु ट्ठिदीसु एयगोवुच्छा सेढी जादा त्ति ? एदस्स साहणट्ठमिमाणि अप्पाबहुअपदाणि। तं जहा। सव्वत्थोवा सुहुमसांपराइयद्धा। पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स मोहणीयस्स गुणसेढिणिक्खेवो विसेसाहिओ। अंतरट्ठिदीओ संखेज्जगुणाओ। सुहुमसांपराइयस्स पढमट्ठिदिखंडयं मोहणीये संखेज्जगुणं। पढमसमयसुहुमसांपराइयस्स मोहणीयस्स ट्ठिसंतकम्मं संखेज्जगुणं। लोभस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए जाव तिण्णि आवलियाओ सेसाओ ताव लोभस्स विदियकिट्टीदो लोभस्स तदियकिट्टीए संछुब्भदि पदेसग्गं, तेण परं ण संछुब्भदि; सव्वं सुहुमसांपराइयकिट्टीसु संछुब्भदि। लोभस्स विदियकिट्टिं वेदयमाणस्स जा पढमट्ठिदी तिस्से पढमट्ठिदीए आवलियाए समयाहियाए सेसाए ताधे जा लोभस्स तदियकिट्टी सा सव्वा णिरवयवा सुहुमसांपराइयकिट्टीसु संकंता। जा विदियकिट्टी तिस्से दो आवलिया मोत्तूण समयूणं उदयावलियपविट्ठं च सेसं सव्वं सुहुमसांपराइयकिट्टीसु संकंतं। ताधे चरिमसमयबादरसांपराइओ मोहणीयस्स चरिमसमयबंधगो।

से काले पढमसमयसुहुमसांपराइओ। ताधे सुहुमसांपराइयकिट्टीणमसंखेज्जा भागा उदिण्णा। हेट्ठा अणुदिण्णाओ थोवाओ। उवरि अणुदिण्णाओ विसेसाहिओ। मज्झे उदिण्णाओ सुहुमसांपराइयकिट्टीओ असंखेज्जगुणाओ। सुहुमसांपराइयस्स खेज्जेसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु गदेसु जमपच्छिमं ट्ठिदिखंडयं मोहणीयस्स तम्हि ट्ठिदिखंडये उक्कीरमाणे जो मोहणीयस्स गुणसेढिणिक्खेवो तस्स गुणसेढिणिक्खेवस्स अग्गग्गादो संखेज्जदिभागो आगाइदो। तम्हि ट्ठिदिखंडाए उक्किण्णे तदो प्पहुडि मोहणीयस्स णत्थि ट्ठिदिघादो। जत्तियं सुहुमसांपराइयद्धाए सेसं तत्तियं मोहणीयस्स ट्ठिदिसंतकम्मं सेसं। एत्तिगे।

२ ऐतिहासिक नामसूची

		पृ०		पृ०
अ	अण्णाइरिय	२५	सुत्तयार	१९८
व	वक्खाणाइरिय	१९९	सुत्तयार	३०५
			सूत्रकार	१९८

३ ग्रन्थनामोल्लेख

च	चुण्णिसुत्त	१९२	चूलिया	२१०
	चुण्णिपुत्त	२१०	पवाइज्जमाण उवदेस	१९३

४ न्यायोक्ति

वक्खाणदो विसेसपडिवत्ती होइ	१६५	विचित्रा शैली सूत्रकाराणां इति न्यायात्	१९८

५ उपदेशभेद

१ अण्णे पुण आइरिया किट्टीसु फद्दएसु च एसा चेव गोपुच्छा होदि त्ति भणंति २५

२ तत्थ पुव्वं भमणिज्जा णिल्लेवट्ठाणाणमुवदेस परूवणा १९०

एक्केण उवदेसेण कम्मट्ठिदीए असंखेज्जा भागा १९०

णिल्लेवणट्ठाणाणि १९१

एक्केण उवदेसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागो १९१

३ जो पवाइज्जइ उवएसो तेण उवदेसेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जाणि णिल्लेवणट्ठाणाणि १९२

४ अथवा एवमेत्थ जवमज्झं कायव्यमिदि अण्णे वक्खाणारिया भणंति १९९

""ण समीचीनामेदं वक्खाणं, एगट्ठिदिविसयाणं समयपवद्धसेसयाणं जवमज्झपरूवणावसरे णाणाट्ठिदिविसयाणं तेसिं जवमज्झपरूवणाए असंबद्धत्तादो । १९९

६ मूलगाथा चूर्णिसूत्रगत शब्दसूची

इस सूचीमें जो पारिभाषिक शब्द अनेक बार आये हैं उन्हें अधिकसे अधिक चार बार तक संगृहीत किया है तथा इसमें संख्यावाची, कालविशेषको सूचित करनेवाले और कर्मपर्यायवाची शब्दोंको संगृहीत किया गया है।

अ	अकारग	५४	अणुसमयणिल्लेवण	२१९, २१०
	अक्खवग	२१८, २२१	,, ,, (काण्डक)	२२७
	अगारकम्म	१४०	अणुसमयोवट्टण	२३९
	अचक्खुदंसाण	१३५	अणंतर	१५३
	अच्छुत्त	१४६, १४८, १५१	अणंतरोपणिधा	३५, २५३
	अणगार	१३५	अण्णाण	१३४
	अणुबद्ध	१७६, २०४	अंतर	१५०, १५१, १८४, २०८
	अणुभाग	६७	अत्थ	४८, ५२, ५३
	अणुभागग्ग	७०, ७२, ८९	अत्यसण्णा	११

अधोलोगिग १४२
अपच्छिम १८४
अपज्जत्त १२८, १२९, १३१
अपुव्व २५, २८, ३२, ३३
अपुव्वकिट्टी २८७
अपुव्वफद्दय ४, ९, ३७
अवज्झमाणिय २६५
अभज्ज ११५, १२६, १२९, १३३
अभज्जय १३२
अभवसिद्धियपाओग्ग १८९, २१०
अविरहिद १८६, १८७
अविरहिदट्ठिदि १८७
असाद १३६, १४०
असामण्ण १७५, १७६
अंगारकम्म १४०
अंस ६८
अस्सकण्णकरण
अस्सकण्णकरणद्धा १
आ आउकाइय १२०
आदिट्ठिदि १०१
आदिपद १०२
आदिफद्दय ६१
आदिवग्गणा ९, २२, ६१, ८५
आवलिय १४८
इ इत्थी १३१
उ उक्कड्डग ५५, ५६, ५७
उक्खेदिद ३१५
उट्टकडसेढि ३४, ३५
उड्ढलोगिग १४२
उत्तरपद ८६, ८८
उत्तरसेढि ९८, १६९
उदयट्ठिदि ६६, १००, १०५
उवजोग १२८, १३४
उवट्ठिद ५१, ९५, ९६
उवदेस १९०, १९१, १९२
उवदेसपरूवणा १९०
उवसामग ५६
उवसंदरिसणो
उवसंदरिसणा २४९
उस्सप्पिणी १४३
ए एइंदिय १११
एइंदियभवग्गहण १२४
एगतर २०३, २०७, २१७
एगंतरछेदण २२६
एयगुणहाणिट्ठाणंतर
ओ ओकड्डण ५५, ५६, ५७
ओगास २४८, २५५
ओरालिय १३३
ओरालियमिस्स १३२, १३३
ओरालिय सरीर १३२
ओसप्पिणी १४३
ओहिणाण १३४
ओहिदंसण १३५
क करण ४७, ५४, १८७
कम्म ६२, १३६, १३७, १४०
कसाय १२६
काय ११५, १२०, १२२
किट्टी ५, ६, ३७, ५८, ५९, ६२
किट्टीअंतर १०, ११, १२
किट्टीकरण ४, ५५
किट्टीकरणद्धा
किट्टीवेदग ९६, ९७, २३८
किट्टीकरणद्धा १४६, २४१
किट्टीलक्खण ५८
किध २७५
किस ६२
कोधपच्छिमपद ५६
कोह १२७
कोहकिट्टी ४
ख खवग १५, १८९, २०८
खु २७५
खेत्त १३६, १३७
ग गदि ११३, ११५, २२५
गणणादियंत १०४, १०६
गाहा ११५, ११४, २०४
गुणसेढि ५८, ९८, १०४

गुणसेढिणिक्खेव

गुणसेढिसीसय ३२८

च चरिमकिट्टी ७, ८, २३

चरिमकिट्टीअंतर १३

चरिमट्ठिदि १०१

छ छट्ठिदल्लिग ४०

छदुमत्थणाण १३३

ज जवमज्झ ९८, १०१, १०२

जहण्णकिट्टी

जोग १२८, १३२

ट ट्ठिदिउत्तरसेढि १६९

ट्ठिदिउदीरणा २६६

ट्ठिदिक्खय १०७

ण णवुंसय १२८, १२९

णवुंसयवेद १३१

णाणागुणहाणिट्ठाणंतर १९६

णाणागुणहाणिसलागा २०७

णाणागुणहाणिट्ठाणंतर १९५

णाणंतर २०२, २०७, २१७

णिक्खेव ११

णिरयगदि ११९

णिल्लेवणट्ठाण २०१, २११

णिल्लेवणंतर २२३

णिल्लेविद २१५, २२१

णिव्वग्गणकरण २८७

णिव्वत्तिज्जमाणिय २५७, २७१

णिसेगसेढिपरूवणा २५२

त तस ११५

तसकाइय १२१

तसभव १२४

तिरिक्खगदि ११८

तिरियलोगिग १४२

तिव्वमंददा ५

त्थी १२८

तेउकाइय १२०

तेरसगुणमेत्त ७४

थ थी १२९

द दिज्जमाणय २९, ३०, ३६

दिज्जमाणय २७, ३३

देवगदि ११९

प पदेसग्ग ७०

पच्चक्ख १३३

पच्छिम १०९, १८४

पच्छिमकिट्टी १११

पच्छिमपद ५८

पज्जत्त १२८, १२९, १३१

पडिआवलिय २७९

पडिवदमाणग ५७

पढमकिट्टि १५३

पढमकिट्टीअंतर १३, १४

पढमट्ठिदि ४१, ६५, ६६

पदेसग्ग २२, २७, ३३, ७७

परंपरोवणिधा ८७

पलिदोवमच्छेदण १९५

पव्वदकम्म १४०

पाऐ १५०

पुढविकाइय १२०

पुव्वफद्दय ४, ३७

पुव्वबद्ध ११३, ११५, १२६

पुरिस १२९, १३१

पुव्वालविया १५३

पुं १२८

ब बज्झमाणय २४६, २५०, २५२

बज्झमाणिय २४७, २५०

बज्झमाणी २७१

बादरसांपराइयकिट्टी ३०८, ३०९

भ भज्ज ११५, १२९, १३२

भव १५८

भवबद्ध १४६, १५२, १६५

भवबद्धसेस ९७

भवबद्धसेसग १६९

भवबद्धसेसण १६६, १६८, २०३

भवसेसग १५९, १६२

भवसेसय १६९

भासगाहा ४९, ५८, ६३, ६८

म मणजोग १३२, १३३
मणपज्जवणाण ३४
मणुसगदि ११८
मदिउवजोग १३३
मदिणाण १३४
माण १२७
माणकिट्टी ४
मायकिट्टी ४
माया १२७
मिच्छत्त १२८, १२९
मिच्छाइट्ठि
मिस्सग १२९
ल लक्खण ४७, ४८
लहुआलाव ११
लिंग १३६, १३७
लेस्सा १३६, १३७, १४०
लोभ १२७
लोभकिट्टी ४
व वग्गणग्ग ८१, ८२
वग्गणा ८३, ८५, ८६
वचिजोग १३२, १३३
वणप्फदिकाइय १२०
वण्णकम्म १४०
वाउकाइय १२०
विणासिज्जमाणी २७१
विदियट्ठिदिय ६५, ६८, १०१
विस्सरिद १९८
विहासा ५०, ५१, ५५, ६१
विहासगंथ
विहासिद ८२
वेदगकाल १०९, १११, ११२
वेदिदसेसग १६४
वण्णकम्म १४०
स सण्णपरूवणा १६६
समज्जिद १२०, १२१
समज्जिदलग्ग १२२
समयपबद्ध १४६, १४८, १५०
समयपबद्धसेस १६९
समयपबद्धसेसग १६२
समयपबद्धसेसय १६४, १७१
समाविभाग १७३
समासलक्खण २७५
समुक्कित्तणा ५८, ६४, ८३
सम्मत्त १२८, १२९
सम्माइट्ठि १३१
सम्मामिच्छाइट्ठि १३१
सव्वलिंग १४१
सव्वसमास ३६
साद १३६, १३७, १४०
सामण्ण १७३, १७५
सासणसम्मादिट्ठि २०५, २०८
सामण्णसण्णा १७५
सिप्प १३७, १४१
सुत्तफास ४६
सुदउवजोग १३३, १३४
सुद्ध ८६, ८८, १०२, १०३
सुद्धसेस १७, १०३
सेचीय ३०८
सेढि १५, ८७
सेढिपरूवण २७
सेस ७३
सेसग १८१
सेसय १८७
संकामिज्जमाणय २४६, २४७
संखेवपद ११
संगहकिट्टी ६, ७, ९, २७८
संगहकिट्टीअंतर १५
संछुद्ध १५२, १५८
संछुद्धमाणय १५६

७. जयधवलाटीकागत विशेष शब्दसूची

अ अणुभाग ८३
अणुभागग्ग ९०
अधापवत्तसंकम २७२, २७३
अपुव्वकिट्टी २५, २६
अभवसिद्धियपाओग्ग १८९
अवंतरकिट्टी ६५
अवयवकिट्टी ६२
असामण्ण १७४, १७७

	असामण्णट्ठिदि	१८९	त०	तापसादिवेस	१४७
	अंतर	२१७	प	परत्थाणगुणगार	७, १९
आ	आणुपुव्विसंकम	१५३, १७२		पवाइज्जमाण	१९२, १९३
उ	उक्कड्डग	४०	फ	फद्दयलक्खण	५९
	उक्कड्डणा	५०	ब	बादरकिट्टी	४
	उच्छिट्ठावलि	४०	भ	भवबद्धसेस	१६२, १६६
	उट्टकूडसरिसी	३४		भासगाहा	४९
	उवसंदरिसणा	२७८	म	मूलगाहा	४९
ओ	ओकड्डणा	२७२	ल	लहुआलाव	११
	ओकड्डमाण	५४, ५६	व	वग्ग	१४१
	ओवट्टणाघाद	२४४		वग्गणा	५९
क	कदिसद्द	१६१	स	सत्थाणगुणगार	७, १६, १९
	कम्मट्ठिदिमेत्त	११९		समयबद्धसेस	१६३, १६४
	कालजवमज्झ	२१४		समासलक्खण	२७५
	किट्टीअंतर	११		सव्वघादि	४०
	किट्टीकरणद्धा	१		सामण्ण	१७४
	किट्टीगुणगार	१७		सामण्णट्ठिदि	२०४
	किट्टीलक्खण	५८, ६०, ६२		सिया	११७
ग	गुणसेढिसीसग	३२२		सुद्ध	९३
	जवमज्झ	१७८, १८३, १९०		संगहकिट्टीअंतर	११, २५६
ट	ट्ठिदिउत्तरसेढि	१७०		संगहकिट्टीगुणगार	७
ण	णिग्गंथलिंग	१३८		संधिविसय	३२३
	णिल्लेवणट्ठाण	१९०		संधिविसेस	३१

●

शुद्धिपत्र

पृ०	पं०	अशुद्धि	शुद्धि
१५	२	सेडीए	सेढीए
१८	३	पविसमाणगुणगारो	पविसमाणगुणगारो
,,	८	तन्स	तस्स
,,	,,	अणंतणत्त-	अणंतगुणत्त-
१९	१३	णदेण	णेदेण
३९	१०	सतकम्ममट्ठ बस्साणि	संतकम्ममट्ठ बस्साणि
४०	७	उच्छिट्ठा-	उच्छिट्टा-
७०	९	भागग्गण	भागग्गेण
७९	३	पदसग्गं	पदेसग्गं
८९	१३	(१३२)	(१२२)
९८	६	(१३४)	(१२४)
१०२	१०	(१३५)	(१२५)
१०४	११	(१३६)	(१२६)
१०६	१०	कर्म्म	कम्मं
१०६	१०	(१९०)	(१८०)
१०८	९	मासगाहाए	भासगाहाए
१३३	१४	॥२३१॥	॥२०१
१७३	२६	भागप्रमाण काल तक निरन्तर	भागप्रमाण
१८९	८	गाहाआ	गाहाओ
२०५	६	गाहा	गाहाए
,,	९	थोवाआ	थोवाओ
२३५	१२	महाप्रमाण	माहप्रमाण
२४७	१४	संगह किट्टीसु	संगहकिट्टीसु
२७१	१३	णिवत्तिज्जयाणियाणं	णिव्वत्तिज्जमाणियाणं
२७५	३	किय	किथ
२८७	१७	संक्रमाण	संक्रम्यमाण
३०१	१	किट्टीसु पढम-	किट्टीसु जं पढम-
३२१	१२	पि	×
३२२	१०	अंतट्ठिदिसु	अंतरट्ठिदीसु
३२३	६	चेवज ादा	चेव जादा
३२५	७	कालम खे-	कालमसंखे-

सूचना—यहाँ जितना भी शुद्ध पाठ यहाँ दिया गया है उसे देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमें संशोधन-सम्बन्धी दोष नहीं के बराबर हुआ है। किन्तु प्रेस की असावधानी अधिक है। प्रूफ जिस प्रकारका दिया गया है उतनी मुद्रणमें सावधानी नहीं बरती गई है। मात्राओंकी अशुद्धि बहुत है। हिन्दी अनुवादोंमें तो इन मात्राओंका मुद्रित न होना पद-पदपर दृष्टिगोचर होता है।